३ मार्च, १९३९ को अनशनसे पूर्व आहार लेते हुए

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

६९

(१ मार्च से १५ जुलाई, १९३९)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमें संगृहीत चार महीनों (१ मार्च से १५ जुलाई, १९३९ तक)की सामग्रीका सम्बन्ध दो मुख्य प्रश्नोसे है। इनमें से एक तो था रियासतोंकी प्रजाकी सुधारोकी माँगका प्रश्न। जब देशी नरेशोने प्रस्तावित भारतीय संघमें शामिल होने की यत्किंचित तत्परता दिखाई तो गांधीजी को उनसे और साथ ही अधीश्वरी सत्तासे भी नरमीके साथ ही, किन्तु स्पष्ट शब्दोमें, कहना पड़ा कि प्रान्तोंमें उत्तरदायी शासन हो और रियासतोमें निरकुश तन्त्र कायम रहे, ये दोनो बातें साथ-साथ नही चल सकती। दूसरा प्रश्न था कांग्रेसके नेतृत्व-संकटका, जिसके मूलमें सुभाष बाबू और गांधीजी के परस्पर विरोधी दृष्टिकोण थे। एक ओर सुभाष बाबू ब्रिटिश सरकारके विरुद्ध संघर्ष छेड़ने को अधीर हो रहे थे तो दूसरी ओर गांधीजी की मान्यता थी कि काग्रेसको "राष्ट्रव्यापी सत्याग्रह आरम्भ करने का वाहन" बनाने के लिए पहले उसे सुदृढ और शुद्ध करना आवश्यक है (पृ० ३९२)।

रियासतोंकी राजनीतिमे गांधीजी व्यक्तिगत रूपसे राजकोटके सुधार-आन्दोलनके कारण पड़े। काठियावाड़की इसी नन्ही-सी रियासतमें कर्मचन्द गाधी कभी दीवान थे और यही मोहनदास तथा कस्तूरबाके जीवनके प्रारम्भिक वर्ष व्यतीत हुए थे। वल्लभभाई पटेलके नेतृत्वमें चलनेवाला यह आन्दोलन, प्रकटत: सफलतापूर्वक समाप्त हो चुका था, क्योकि ठाकुर साहब दस सदस्योंकी एक समिति गठित करने पर सहमत हो गये थे, जिनमेंसे सात वल्लभभाई पटेलकी सिफारिश पर नियुक्त किये जानेवाले थे और शेप तीन सरकारी सदस्यो को स्वयं ठाकुर साहब मनोनीत करनेवाले थे। किन्तु ठाकुर साहब इस समझौतेपर कायम नही रह सके। उन्होंने साफ कह दिया कि वे वल्लभभाईकी सिफारिशों को मानने को बाध्य नही हैं, और मुसलमानो, हरिजनों तथा भायातों को प्रतिनिधित्व देने के बहाने, वल्लभभाईसे कोई परामर्श किये बिना, अपनी मर्जीसे समितिके चार सदस्य मनोनीत कर दिये। समझौतेके इस तरह तोड़े जाने के खिलाफ व्यापक क्षोभ फैला और सविनय अवज्ञा आरम्भ हो गई, जिसमें कस्तूरबा और मणिबहन पटेल गिरफ्तार कर ली गईं। दमन तथा कैदियोंके साथ किये जानेवाले दुर्व्यवहारके समाचार गांधीजी तक पहुँचे तो ठाकुर साहबको इस वचन-भंगका मार्जन करने के लिए समझाने के निमित्त २५ फरवरीको वे राजकोट रवाना हो गये (खण्ड ६८)। उन्होंने वल्लभभाईसे सविनय अवज्ञा स्थगित करने को कहा और स्वय शान्ति स्थापित करने के कार्यमें जुट गये।

२८ फरवरीको राजकोट पहुँचने पर गाधीजी ने अविलम्ब जेलोंमें जाकर कैदियों से मुलाकात की, और स्वयं छान-बीन करके पता लगाया कि रियासतके अधिकारियों ने कितनी कठोरतासे दमन-चक्र चलाया था। उन्होंने "महसूस किया कि अगर मैंने

सत्याग्रहको जारी रहने दिया तो मनुष्यकी नीचतम वृत्तियोंको खुलकर खेलने का मौका मिल जायेगा" (पृ० ३८), और फलतः एक दुर्निवार "आन्तरिक प्रेरणा" के वशीभूत होकर (पृ० ११) ठाकुर साहबको एक अन्तिम चेतावनी (पृ० २-५) भेजने के पश्चात् अनिश्चित कालका उपवास करने का निश्चय कर लिया। ३ मार्चको उपवास आरम्भ करने के चन्द मिनट बाद गांधीजी को ठाकुर धर्मेन्द्रसिंहका जो पत्र मिला वह "आगमें घी डालने-जैसा" था (पृ० १५)। किन्तु, प्यारेलालके शब्दोंमें, उपवास के आरम्भके साथ गांधीजी "अपने अखण्ड शान्ति-लोकमें पहुँच गये और उस दिन तीसरे पहर वे देर तक निश्चिन्त होकर सोये।" तथापि जिस निर्णयने उन्हें "एक अवर्णनीय शान्ति और आध्यात्मिक आनन्द" प्रदान किया था (पृ० ३४), उससे उनके साथी कार्यकर्त्ता और मित्र बड़े उद्विग्न हुए। रवीन्द्रनाथ ठाकुर, राजगोपालाचारी, एन्ड्रयूज, अब्दुल गफ्फार खाँ, अमृतकौर, मीराबहन आदि अनेक लोगोंने उनसे आग्रह किया कि वे स्वयंपर दया करें और उपवास तोड़ दें, किन्तु "ईश्वरके नाम पर" आरम्भ किये गये अपने व्रतको छोड़ने के लिए तैयार न थे (पृ० १७)। अगली सुबह गांधीजी ने रेजीडेंट ई० सी० गिब्सनके नाम एक पत्र लिखाया, जिसमें उनसे वाइसराय लॉर्ड लिनलिथगोको यह सन्देश भेजने का अनुरोध किया कि "ठाकुर साहब द्वारा दिये गये वचनका पालन कराने के लिए अधीश्वरी सत्ताको अविलम्ब हस्तक्षेप करना चहिए" (पृ० २५)। ७ मार्चको प्राप्त वाइसरायके उत्तरमें यह सुझाव दिया गया कि वल्लभभाई पटेलके नाम ठाकुर साहबके "पत्रको ध्यानमें रखते हुए समितिका गठन किस तरहसे किया जाना चाहिए", इसका निर्णय भारतके मुख्य न्यायाधीश सर मॉरिस ग्वायरको सौंप दिया जाये (परिशिष्ट ३)। गांधीजी को यह सन्देश "उपवास तोड़ने" का पर्याप्त आधार प्रस्तुत करता प्रतीत हुआ (पृ० ३६), और "ठाकुर साहब द्वारा कैदियोंकी रिहाईके लिए अविलम्ब आदेश जारी" किये जाने का आश्वासन प्राप्त होने पर (पृ० ३६) ७ मार्चको दिनके २ बजे उन्होंने सचमुच उपवास तोड़ दिया।

गांधीजी ने एक लम्बा वक्तव्य लिखाया, जिसमें उन्होंने इस 'उत्तम अन्त' का श्रेय करोड़ोंकी प्रार्थनाको देते हुए यह स्वीकार किया कि "राजनीतिक दृष्टिसे तो इस समझौतेका श्रेय वाइसराय" को ही था (पृ० ३७)। राजकोटसे कुछ दिनोंके लिए विदा लेते हुए गांधीजी ने लोगोंको नागरिकोंके रूपमें अपने कर्त्तव्यका पालन करने की सलाह दी और इस बातके लिए आश्वस्त रहने को कहा कि "जनताके स्वराज्य" में "जिस समय अधिकारोंकी आवश्यकता होती है, वे कर्त्तव्य-पालनके साथ उसके पास अपने-आप दौड़े आते हैं" (पृ० ५८)। गांधीजी को लग रहा था कि "जो स्वतन्त्रता आनेवाली है वह बड़ी अवास्तविक-सी चीज होगी" (पृ० ७३), और इस अवास्तविकताके निवारणके लिए वाइसरायसे मिलने जाते हुए वे चाहते थे कि सच्चे उत्तरदायी शासनकी प्राप्तिके लिए प्रत्येक स्त्री-पुरुषको इसी कर्त्तव्योन्मुख पद्धतिपर प्रशिक्षित किया जाना चाहिए (पृ० ५९)। तीन सप्ताहके दिल्ली प्रवासके बाद ९ अप्रैल को गांधीजी राजकोट लौटे तो उनकी नैतिक स्थिति

और भी सुदृढ़ हो चुकी थी, क्योंकि मॉरिस ग्वायरने अपने पंच-फैसलेमें उनके इस मन्तव्यकी पुष्टि की थी कि ठाकुर साहब वल्लभभाई पटेल द्वारा सुझाये सात नामोंको स्वीकार करने को बाध्य थे। इसके अतिरिक्त वाइसरायने उन्हें यह आश्वासन भी लिख भेजा कि "ठाकुर साहबके कार्योंके बारेमें . . . जो जिम्मेदारी मैंने ली है उसे . . . पूरा करूँगा . . ." (पृ० १२७)।

किन्तु ठाकुर साहब और उनके सलाहकार वीरावालाकी योजना कुछ और थी। मुसलमानो, भायातों और दलित वर्गोंके प्रतिनिधियोंको समितिमें शामिल करने के प्रश्न पर गाधीजी के साथ असहयोग करके उन्होने मार्गमें अनन्त बाधाएँ उपस्थित कर दी। बात यह थी कि ठाकुर साहब २६ दिसम्बर, १९३८ की अधिसूचनाका उल्लंघन करके इन तीनो वर्गोंके प्रतिनिधियोंके नाम पहले ही घोषित कर चुके थे। ठाकुर साहबको सिर्फ तीन सरकारी सदस्योंको मनोनीत करने का अधिकार था, किन्तु उनके द्वारा सुझाये गये चार गैर-सरकारी सदस्योंके नाम भी गाधीजी स्वीकार करने को तैयार थे, बशर्ते कि समितिमें वल्लभभाईकी सिफारिश पर लिये जानेवाले सदस्योंके बहुमतका सिद्धान्त अक्षुण्ण रहे। इसके लिए गाधीजी ने सदस्योंकी संख्या दससे बढ़ाकर चौदह कर देने और सरदारकी सिफारिशपर नियुक्त किये जानेवाले सदस्योकी संख्या सातके बजाय आठ कर देने का सुझाव दिया (पृ० १३८-९)। मगर ठाकुर साहबने सुझाव नामंजूर कर दिया। अब गाधीजी ने मुसलमानो और भायातोंके चारमें से तीन प्रतिनिधियोंको इस शर्तपर समितिमें स्थान देने का प्रस्ताव किया कि वे सरदारके सुझाव पर नियुक्त शेष सदस्योंके साथ मिलकर एक टीमकी तरह काम करना स्वीकार कर ले। मगर यह प्रस्ताव भी नामंजूर कर दिया गया, और उल्टे मुसलमानों और भायातों दोनोंने गांधीजी पर वचन-भंगका आरोप लगाया (पृ० १५५-८ और १९०-२)। १६ अप्रैलकी प्रार्थना-सभामें भायातोने उनके विरुद्ध अत्यन्त अशोभन प्रदर्शन किया, जिससे उनके मनको गहरी व्यथा पहुँची। २० अप्रैलको गिब्सनसे मुलाकातके दौरान गाधीजी ने एक बड़ा "उदारतापूर्ण प्रस्ताव" रखा, यद्यपि बादमें उन्होंने स्वीकार किया कि वह प्रस्ताव हताश मनकी उपज था, क्योंकि "राजकोटमें अदृश्य शक्तियोसे लड़ते-लड़ते" वे थक गये थे (पृ० १७९)। प्रस्ताव यह था कि राजकोट राजकीय प्रजा परिषद् प्रस्तावित समितिसे बिलकुल अलग हो जाये और सभी सदस्य ठाकुर साहब ही मनोनीत करे, किन्तु यदि इस समिति द्वारा तैयार किया गया सविधान २६ दिसम्बरकी अधिसूचनाकी शर्तोको पूरा नही करता हो तो वल्लभभाई द्वारा चुने सात सदस्य विमत व्यक्त करनेवाली रिपोर्ट पेश कर सकते हैं, जिसपर अन्तिम निर्णय भारतके मुख्य न्यायाधीशका होगा। यह वचन देनेसे पहले गांधीजी ने अपने सहयोगियोंसे भी परामर्श नही किया। "स्थिति जिस घोर निराशाजनक रूपसे अवास्तविक हो गई थी उससे निकलने का" उन्हे "कोई रास्ता ही नही दिखाई दे रहा था" (पृ० १८०)।

ठाकुर साहबने इस प्रस्तावको भी अस्वीकार कर दिया। गांधी सेवा संघके अधिवेशनमें भाग लेने वृन्दावन (बिहार) प्रस्थान करने से पूर्व परिषद्के कार्यकर्त्ताओंके समक्ष बोलते हुए गांधीजी ने अपनी पराजय स्वीकार की, और "अपने हृदय-मन्थन

के परिणामस्वरूप" उन्होंने "जो शोध की" उसके बाद इस पराजयका कारण अपनी नैतिक त्रुटियोंको माना (पृ० १८५)। वीरावालाके मनमें उन्होंने परिषद्के लोगोंके प्रति घोर तिरस्कारका भाव देखा था। किन्तु विशुद्ध अहिंसापर आधारित सच्चे सत्याग्रहका "परिणाम तिरस्कार कैसे हो सकता" था? (पृ० १८६) इसलिए उन्होंने कार्यकर्त्ताओंसे अनुरोध किया कि उन्हें सारे कटु वचनों और तिरस्कारको "धैर्यपूर्वक, शान्तिपूर्वक सहन करने के लिए . . . तैयार होना चाहिए", और वीरावालासे कहना चाहिए कि हम गांधीजी और वाइसरायको सभी दायित्वोंसे मुक्त करते हैं, और "हमें तो आपको बीचमें डालकर २६-दिसम्बरकी विज्ञप्ति पर राज्यसे अमल . . . कराना है" (पृ० १८७)।

२४ अप्रैलको बम्बई जाते हुए रेलगाड़ीमें से गांधीजी ने एक वक्तव्य जारी करके बताया कि उनका "उदारतापूर्ण प्रस्ताव" सुनकर वीरवालाने किस प्रकार पलटकर कहा था: "लेकिन ... रिपोर्टसे असन्तुष्ट होने पर ... आप यह चाहते हैं कि रिपोर्ट और उससे असहमति — दोनोंकी माननीय मुख्य न्यायाधीश द्वारा जाँच हो। ... ठाकुर साहब और उनके सलाहकार पर आप पूरा-पूरा विश्वास क्यों नही करते?" इन शब्दोंको सुनकर गांधीजी के मनमें सहसा यह बात कौंध गई कि "मै अहिंसाका उपयोग ठीक तरह नही कर पाया हूँ" (पृ० १९१) और वीरावालासे उन्होने कहा: "मै हार गया हूँ। ईश्वर करे, आप जीत जायें" (पृ० १९३)।

गांधी सेवा संघके अधिवेशनसे लौटकर राजकोट आने पर गांधीजी ने अपने साथी कार्यकर्त्ताओंको अपनी "नई रोशनी" का रहस्य समझाते हुए कहा: "मेरी कानूनी स्थिति सही थी। परन्तु अहिंसा कानूनी अधिकारोंके सहारे नही चलती। ... मुझे अपना रास्ता असीम धीरज रखकर ही काटना होगा। यह कोई जादूका खेल नही है . . . दरबार वीरावालामें परिवर्तन लाने के लिए सत्याग्रहके प्रत्येक साधन का उपयोग करने और उसे पूरी तरह काममें लाने का मैंने दृढ निश्चय कर लिया है" (पृ० २७८-९)। गांधीजी को महसूस हो गया था कि अपनी नैतिक दुर्बलताके ही कारण वे अधीश्वरी सत्ताके हस्तक्षेपके लिए अनुरोध करने और सत्याग्रहीके लिए अशोभनीय "बाहरी मदद" लेनेको प्रेरित हुए थे, और इसलिए अब वे पंच-निर्णयका त्याग कर देना चाहते थे (पृ० २९०-१)। १७ मईको सुबह ६ बजे उन्होंने यह महत्त्वपूर्ण निर्णय" ले लिया। इसी दिन समाचारपत्रोंको दिये गये अपने वक्तव्यमें उन्होंने "अपनी कमजोर मनःस्थितिमें ... वाइसराय" और मुख्य न्यायाधीशको "अनावश्यक कष्ट देने" के लिए उनसे क्षमा माँगी और स्वीकार किया कि अपने अन्य सहयोगियोंकी भाँति मै भी वीरावालाके "सम्बन्धमें बुरे विचार रखता था।" अपनेको "दुहरी चाल खेलने का गुनहगार" बताते हुए उन्होंने कहा: "विश्वास प्राप्त करने का एकमात्र साधन विश्वास करना है। ... भूल-स्वीकार और पश्चात्तापसे अहिंसाकी सार्वभौम शक्तिमें मेरी श्रद्धा और भी ज्वलन्त हो गई है" (पृ० २९४-५)।

गांधीजी को अब लग रहा था कि वीरावालाको "बरतरफ करके पंच-निर्णय प्राप्त" करके उन्होंने उन्हें चोट पहुँचाई थी और उसका मार्जन करने के लिए "अपने

शील-सम्मानको बचाकर उनके कहे अनुसार सब-कुछ करना" उनका कर्त्तव्य था। शीघ्र ही उन्हें इस अपमान-मार्जनका अवसर भी मिल गया। उन्हें राजकोट दरबारमें उपस्थित होने का निमन्त्रण प्राप्त हुआ, जिसे उन्होंने बेझिझक स्वीकार कर लिया क्योंकि "पापका प्रायश्चित करनेवाला हिसाब नही लगाता; वह तो अपने दग्ध हृदयका सार उँड़ेल देता है।" दरबारमें उपस्थित होकर गाधीजी ने मात्र 'बाइबिल' के इस आदेशका ही पालन किया था कि "जो तुझसे एक मील चलने को कहे उसके साथ तू दो मील जा" (पृ० ३११-२)। किन्तु जिस शील-धर्मकी गाधीजी ने शिक्षा दी और जिसका आचरण करने का स्वयं प्रयत्न किया उसका अर्थ यह नही था कि शेष लोग अपने सामान्य धर्मसे मुक्त हो गये। उनका विचार था कि उनका त्याग "वाइसरायकी इस जिम्मेवारीको दूना कर देता है कि वे यह देखें कि राजकोट सरकारकी घोषणा नं० ५० का चीफ जस्टिसकी व्याख्याके अनुसार पालन होता है या नही।" उन्हें विश्वास था कि उनके इस आध्यात्मिक कृत्यसे वास्तविक ध्येयको कोई क्षति नही पहुँचेगी, क्योकि "अत्यन्त आध्यात्मिक कार्य सच्चे अर्थोमें अतिशय व्यावहारिक भी होता है" (पृ० ४०८-९)।

कुछ मित्रोंकी शिकायत थी कि त्रिपुरीके महत्त्वपूर्ण कांग्रेस अधिवेशनमें शरीक होनेके बजाय राजकोटके मामलेमें इस तरह व्यस्त होकर गाधीजी ने "कोई पूर्व-सूचना दिये बिना राष्ट्रके जीवनको अस्त-व्यस्त कर डाला।" उत्तरमें गाधीजी ने कहा कि त्रिपुरीमें तो युद्धकी तैयारी ही हो रही थी, लेकिन "राजकोटमें एक झडप हो गई थी" (पृ० १३०-१), और फिर "त्रिपुरीमें तो ऐसे नेता मौजूद है जो उतने ही साहसी, आत्मत्यागी और लगनवाले है जितना कि मैं" (पृ० ४०)। किन्तु वास्तविकता यह थी कि इन नेताओमें तीव्र आपसी मतभेद था, और फलत॰ कांग्रेस-नीतिकी भावी दिशाके प्रश्नको लेकर त्रिपुरीमें एक गम्भीर नेतृत्व-संकट उत्पन्न हो गया। बहुत-से लोगोने अध्यक्ष-पद पर सुभाषचन्द्र बोसके चुनावका मतलब यह लगाया कि गाधीजी के मार्ग-दर्शनमें कांग्रेस अबतक जिस नीतिका अनुसरण करती रही है, उसे अस्वीकार कर दिया गया है। इस भ्रमका निवारण करने के लिए पण्डित गोविन्द वल्लभ पन्तने एक प्रस्ताव पेश किया, जिसमें पुरानी कार्य-समितिमें विश्वास व्यक्त किया गया था और अध्यक्षसे नई कार्य-समितिका गठन "गाधीजी की इच्छानुसार" करने का अनुरोध किया गया था। किन्तु सुभाष बोसके साथ पुरानी कार्य-समिति तथा गांधीजी के मतभेद इतने गहरे थे कि गाधीजी को उन्हें मिटाना असम्भव प्रतीत हुआ, और इसलिए उन्होने सुभाष बोसको सलाह दी कि वे अपनी मर्जीकी कार्य-समिति बनाकर अपने कार्यक्रमपर महासमितिकी स्वीकृति माँगे, और यदि स्वीकृति न मिले तो त्यागपत्र दे दें (पृ० १०७-९)। २९ अप्रैल, १९३९ को महासमितिकी कलकत्तामें हुई बैठकमें सुभाष बाबूने त्यागपत्र दे दिया, और ३ मई को कांग्रेसके अन्दर फारवर्ड ब्लाक नामक एक नये सगठनकी स्थापना कर दी।

गांधीजी और सुभाष बोसके मतभेदका कारण सुभाष बाबूका यह आग्रह था कि ब्रिटिश सरकारको छह महीनेमें भारतको अपना प्राप्य देनेकी अन्तिम चेतावनी

दे दी जाये और यदि वह इस अवधिमें माँग पूरी न करे तो जन-आन्दोलन छेड दिया जाये। गाधीजी को देशमें अहिंसक जनान्दोलनके लिए उपयुक्त वातावरण दिखाई नही दे रहा था (पृ० १०७-८, १४१ और ३०४)। उनका विचार था कि "यदि आज अहिंसाके नामपर कोई सामूहिक आन्दोलन शुरू कर दिया गया तो... कांग्रेस वदनाम हो जायेगी, काग्रेसके स्वराज्य-प्राप्तिके संघर्षके लिए खतरा पैदा हो जायेगा" (पृ० ४२४)। अपने पहलेके सविनय अवज्ञा-आन्दोलनोंके वारेमें भी उन्होंने स्वीकार किया कि उन्हे "शुरू करते वक्त मैंने आवश्यकतासे अधिक विश्वास तथा जल्दवाजीसे काम लिया..." (पृ० ११४), और "लोगोंके केवल शारीरिक हिंसासे दूर रहने से ही सन्तोष" मानकर "आत्मवंचना की..." (पृ० ३४०)। रियासतोंकी प्रजाके संघर्षके प्रति भी गांधीजी के रुखमें ऐसी ही सावधानी देखने को मिलती है। त्रावणकोर, जयपुर, मेवाड़ और अन्य रियासतोंमें गाधीजी ने सविनय अवज्ञा स्थगित करने की सलाह दी, क्योंकि कार्यकर्त्ताओने "तैयारीके नीरस नियमो का पालन करने में" तथा जो मंजिलें "धीरे-धीरे मेहनत करते रहने से ही पार की जा सकती हैं", उन्हें पार करने में शिथिलता वरती थी (पृ० ११४-५)। एक और भी वहुत महत्वपूर्ण कारण यह था कि वे "मानव-स्वभावको क्रूर बना जाने से बचाना" चाहते थे। उन्हें इतनी ही चिन्ता "लोगोंकी सम्भावित हिंसाको, चाहे उसका जो कारण हो या उसे जो भी भड़काये," रोकने की थी (पृ० ३५१)। सविनय अवज्ञाके स्थगनकी इस सामान्य नीतिके साथ दो शर्तें जुड़ी हुई थी। एक तो यह कि सदाशयीसे-सदाशयी "व्यक्ति या व्यक्तियोके शासन" के स्थान पर, चाहे जितना धीरे-धीरे हो, "कानूनका शासन" कायम किया जाना चाहिए, (पृ० ३५२)। शान्तिपूर्ण ढंगसे तथा सम्वन्धित पक्षोंकी सहमतिसे सत्ताके इस क्रमिक हस्तान्तरणको सम्भव वनाने के लिए गाधीजी को इसमें कोई हर्ज नही मालूम पड़ता था कि रियासतोंकी प्रजा, अपनी कमजोरीके कारण नही वल्कि अपने लक्ष्यकी ओर सचमुच तेजीसे बढ़ने के लिए, अपनी माँगे कुछ कम कर दे। कारण, "अहिंसा-पालनके साथ मेल खाती हुई नागरिक स्वाधीनता स्वराज्यकी दिशामें पहला कदम है। यह राजनीतिक और सामाजिक जीवनके लिए प्राणवायुके समान है। यह स्वतन्त्रताकी वुनियाद है। इसमें समझौतेकी या इसे हलका करने की कोई गुंजाइश ही नही है। मैंने कभी पानीको और पतला करनेकी वात नहीं सुनी" (पृ० ३८७)। दूसरे, अहिंसाका वातावरण तैयार करने के लिए रचनात्मक कार्यक्रमपर आग्रह अत्यावश्यक था (पृ० २३९)। इसलिए हरएक सत्याग्रहीसे गांधीजी को उम्मीद थी कि "वह नियमित रूपसे डायरी रखे और रचनात्मक सेवाकी दृष्टिसे अपने हर मिनट के समयका पूरा विवरण दर्ज करे" (पृ० ८)। जनताको मूक सेवा द्वारा ही एक सूत्रमे वाँधा जा सकता था (पृ० ८३)।

गांधी सेवा संघकी वैठकमें गांधीजी ने अनेक जटिल प्रश्नों पर अपने विचार काफी बेवाक ढंगसे व्यक्त किये। राजकोट, जहाँकी समस्या अव भी पूर्ववत् कायम थी, "शुद्ध अहिंसाकी अपूर्व प्रयोगशाला" सिद्ध हो रहा था (पृ० २१७)। उनके

और बोसके बीचके मतभेदमें कोई भी व्यक्तिगत तत्त्व नही था। गान्धीजी की दृष्टिमें वह मतभेद बहुत बडा और बुनियादी था, क्योकि उसका सम्बन्ध संघर्षके लिए आवश्यक साधनो तथा अनुशासन और अहिंसाके प्रशिक्षणके प्रश्नसे था (पृ० २३२-३)। जवाहरलालके साथ उनका मतभेद उतना महत्त्वपूर्ण नही था; कमसे-कम उनके हृदय एक थे। जवाहरलालके बिना वे "अपनेको अपंग-सा महसूस" करते थे और मानते थे कि जवाहरलाल भी कुछ ऐसा ही महसूस करते है (पृ० २३३-४)। राजनीतिमें सहिष्णुताकी आवश्यकताके सन्दर्भमें उन्होने कहा : "काग्रेस में हमारे जो दूसरे भाई है उनके दोषको तिनका या रजकण समझकर दरगुजर करे। अपने दोषको पहाड़के समान समझें" (पृ० २१८)। इसीं प्रकार नरम-दल और गरम-दलवालोंके सम्बन्धमें भी उनका कहना था कि हमें दोनोंके प्रति समान दृष्टिकोण रखना चाहिए, और अपना धर्म अपनी दृष्टिसे देखना चाहिए तथा उनका उनकी दृष्टिसे। "मतलब यह... कि जिन बातोमें हम सहमत है उनपर हमें ज्यादा जोर देना चाहिए" (पृ० २३४)। जहाँतक गाधीवादी विचारधाराके प्रसार का सम्बन्ध था, उनकी रायमें वह काम पुस्तकोंके माध्यमसे नही, वरन् उस विचारधाराका आचरण करके ही किया जा सकता था। इसी दृष्टिसे उनके लिए "करोड़ो पुस्तको" की अपेक्षा "एक जीवित दृष्टान्त... की कीमत अधिक" थी। उनका विचार था कि "सत्याग्रहीकी बुद्धिका विकास सिद्धान्तो पर चलने से होता है।... बुद्धि और हृदयमें ऐक्य होना चाहिए। जब बुद्धि और हृदयका युगल बन जाता है तब हम अजेय बन जाते है। हमारी बुद्धिमें सारे प्रश्नोको हल करने की शक्ति आ जाती है" (पृ० २२२)। गांधीजी ने इस बात पर भी जोर दिया कि जिनमें ईश्वर पर विश्वास रखने से उत्पन्न आन्तरिक शक्ति नही है उनके लिए सत्याग्रहका मार्ग बन्द है (पृ० २४७)।

जब ८ जुलाईको प्रसिद्ध मीनाक्षी मन्दिरके द्वार हरिजनोंके लिए खोल दिये गये और यह शुभ समाचार गांधीजी को एबटाबादमें मिला तो उन्होने इस घटना पर अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए इसे १९३६ की त्रावणकोर घोषणासे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बताया, क्योंकि मदुरैमें यह सुधार "जनताके सकल्पका ..शुभ फल" था और "इसका अर्थ. मीनाक्षीके मन्दिरमें जानेवाले लोगोका निश्चित हृदय-परिवर्तन" था (पृ० ४६०)।

अगाथा हैरिसनको सत्याग्रह और असहयोगका मर्म समझाते हुए गाधीजी ने बताया कि सत्याग्रहका मतलब अहिंसक साधनोंके सहारे सुलह-शान्तिकी सक्रिय तलाश है। सत्याग्रहके शस्त्रागारके असहयोग-रूपी शस्त्रका भी उद्देश्य अपने-आपको विरोधी से पूरी तरह काट लेना नही, बल्कि सत्य और न्यायकी रक्षा करते हुए उसका सहयोग प्राप्त करना है। वह वैरको मिटाना चाहता है, स्वयं वैरियोको नही (पृ० ४५)। वे इस बातको माननेके लिए बराबर तैयार रहते थे कि "काम करने का मुझसे भिन्न कोई दूसरा तरीका भी हो सकता है और वह मेरे तरीकेसे बेहतर भी हो सकता है" (पृ० २७७)। उनका कहना था : "मेरी सब सलाहोमें निष्क्रतिका

मार्ग विद्यमान है। अर्थात्, जबतक किसीके दिल और दिमागमें मेरी बात बैठ नहीं जाती, वह उस पर अमल करने के लिए बाध्य नही है" (पृ० ४३७)। सर्वोत्कृष्ट वस्तुको सामान्य रूपसे अच्छी वस्तुका और अहिंसाको साहसका शत्रु नही बनने देना चाहिए। जो चीज उन्हें सबसे नापसन्द थी वह यह कि हमारे देशभाई कायर बन जायें। लोग "कुत्सित भयसे मरें, इससे अच्छा" गांधीजी यह मानते थे कि वे "बहादुरीसे प्रहार करते हुए और प्रहार सहते हुए मरें" (पृ० ३३९)। कायरताको हिंसाकी अपेक्षा लाख दर्जे त्याज्य वस्तु बताते हुए उन्होंने "हरएक अहिंसक-धर्मी" से इस बातका ध्यान रखने का अनुरोध किया कि "अहिंसाके नामपर नामर्दी न फैले" (पृ० ३४२)। अहिंसाकी अचूक शक्तिके बारेमें बोलते हुए गांधीजी ने कहा, वाद्ययन्त्रोंकी ही तरह "प्रत्येक मानव-हृदयमें तार है। यदि हम केवल यह जानते हों कि सही तार कैसे छूना है तो हम संगीत पैदा कर लेते है" (पृ० २७९)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओं, व्यक्तियों, पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओंके आभारी हैं :

संस्थाएँ :– साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय, अहमदाबाद; राष्ट्रीय गांधी संग्रहालय (गांधी राष्ट्रीय संग्रहालय और पुस्तकालय) तथा नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय, नई दिल्ली; कर्नाटक सरकार; तमिलनाडु सरकार; भारत कला भवन, वाराणसी; विश्वभारती एव शान्तिनिकेतन।

व्यक्ति :– श्रीमती अमृतकौर, शिमला; श्री ए० के० सेन, कलकत्ता; श्रीमती एफ० मेरी बार, कोट्टगिरि; श्री कपिलराय एच० पारेख, हरिगाँव; श्री कान्तिलाल गांधी, बम्बई; श्री घ० दा० बिड़ला, कलकत्ता; श्री चिमनलाल एन० शाह, सेवाग्राम; श्री छगनलाल गांधी, अहमदाबाद; श्री नारणदास गांधी, राजकोट; श्री नारायण देसाई, बारडोली; श्री पुरुषोत्तम के० जेराजाणी, बम्बई; सरदार पृथ्वीसिंह, लालरू; श्रीमती प्रेमाबहन कंटक, सासवड; श्री द० बा० कालेलकर, नई दिल्ली; श्री मंगलदास पकवासा, बम्बई; श्रीमती मीराबहन, गाडेन, आस्ट्रिया; श्री मुन्नालाल जी० शाह, सेवाग्राम; श्रीमती लीलावती आसर, बम्बई; श्री वल्लभराम वैद्य, अहमदाबाद; श्रीमती वांडा डयनोवस्का, नई दिल्ली; श्री वालजी गो० देसाई, पूना; श्रीमती विजयाबहन एम० पंचोली, सनोसरा; श्रीमती शारदाबहन गो० चोखावाला, सूरत; श्री सतीश द० कालेलकर, नई दिल्ली; श्री सी० आर० नरसिंहन्, मद्रास; श्री सी० ए० तुलपुले, पूना तथा श्री हबीब केशवजी, नैरोबी।

पुस्तकें : 'इंडिया इन १९३१-३२'; 'इंडिया इन १९३४-३५'; 'द इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९३९', खण्ड–१; 'क्रासरोड्स'; 'गांधी-१९१५-१९४८ : ए डिटेल्ड क्रॉनोलोजी'; 'गांधी सेवा संघके पंचम वार्षिक अधिवेशन (वृन्दावन, बिहार)का विवरण'; 'गांधीजी और राजस्थान'; 'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स'; 'बापुना पत्रो : ४ – मणिबहेन पटेलने'; 'बापुना पत्रो – ५ : कु० प्रेमाबहेन कंटकने'; 'बापुनी प्रसादी'; 'बापू-कन्वर्सेशन्स एण्ड कॉरेसपांडेंस'; 'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, १९३२-१९४८'; 'बापूज लेटर्स टु मीरा'; 'द लाइफ ऑफ महात्मा गांधी'; 'द लेटेस्ट फैड'; 'सरदार वल्लभभाई

पटेल', खण्ड २; 'सेवामूर्ति: श्री वीरचन्द पानाचन्द शाह' एवं 'द हिस्ट्री ऑफ द इंडियन नेशनल कांग्रेस', खण्ड–२।

पत्र-पत्रिकाएँ: 'अमृतबाजार पत्रिका', 'ग्रामोद्योग पत्रिका', 'बॉम्बे क्रानिकल', 'स्टेट्समैन', 'हरिजन', 'हरिजनबन्धु', 'हरिजन-सेवक', 'हितवाद', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओंके लिए सूचना और प्रसारण मन्त्रालय का अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग, नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया, इंडियन काउन्सिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय और श्री प्यारेलाल, नई दिल्ली; एवं कागज-पत्रोंकी फोटो-नकल तैयार करने में सहायता देने के लिए हम सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, नई दिल्लीके फोटो-विभागके आभारी है।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजी के स्वाक्षरोमें मिली है, उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरो द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदि में हिज्जो की स्पष्ट भूलोको सुधारकर दिया गया है।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करने में अनुवादको मूलके समीप रखने का पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनाने का भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूले सुधारने के बाद अनुवाद किया गया है। और मूलमें प्रयुक्त शब्दोके संक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये हैं। नामोंको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखने की नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणमें संशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गाधीजी ने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गाधीजी ने किसी लेख, भाषण आदिका जो अश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोडकर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि कोई ऐसा अंश उन्होने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजी के कहे हुए नही है, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये है। भाषण और भेंटकी रिपोर्टके उन अंशोंमें, जो गाधीजी के नही है, कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कही कुछ छोड़ दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है, वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है। परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नही है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमें की गई है, और आवश्यक होने पर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है, उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ़ आधार पर उसका अनुमान लगाया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ, वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये है।

इस ग्रन्थमाला में प्रकाशित प्रथम खण्ड का जहाँ-जहाँ उल्लेख किया गया है, वह जून, १९७० का संस्करण है।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०', संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्ली, में उपलब्ध कागज-पत्रोंका, 'एम० एम० यू०' मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिटका, 'एस० जी०' सेवाग्राममें सुरक्षित सामग्रीका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (क्लेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

परिशिष्ट

चित्र-सूची

१. एक तार[1]

राजकोट
१ मार्च, १९३९

मैं कुछ भी कहने में असमर्थ हूँ। मैं जी-जानसे कोशिश कर रहा हूँ। प्रदर्शनीके उद्घाटनकी तारीख बढ़ाकर ६ मार्च कर दें।[2] सेठ गोविन्ददासको खबर कर दें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २-३-१९३९

२. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको[3]

राजकोट
१ मार्च, १९३९

सुबह मैं हलेन्दा खारी, होड़थाली और अन्य कई स्थानोके किसानोसे मिला, जिन्हें फसलके राज्यके हिस्सेकी अदायगीके बारेमें और लाठी चार्ज वगैरहके खिलाफ शिकायतें थी। उन लोगोकी सख्या डेढ सौके लगभग थी, जिसमें बीस-पच्चीस महिलाएँ भी थी। उनसे आज प्रातः मिलना है, यह मुझे मालूम नही था। इसलिए खान साहबको[4] मैंने इसकी सूचना नही दी थी। सौभाग्यसे बातचीत शुरू होने के कुछ देर बाद ही वे आ गये। किसानोको जो-कुछ कहना था, वह उन्होंने सुना और उनसे

१. यह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके त्रिपुरीमें होनेवाले ५२वें अधिवेशनकी स्वागत-समितिके "एक अनुरोध" का उत्तर देते हुए भेजा गया था। अनुमानतः यह तार शंकरलाल बैंकरके लिए था। "द राजकोट फास्ट[-१]" (हरिजन २५-३-१९३९) में प्यारेलालने लिखा है : "शंकरलाल बैंकर और सेठ गोविन्ददास [स्वागत-समितिके अध्यक्ष] ने गांधीजी से अत्यन्त आग्रहपूर्वक अनुरोध किया था कि त्रिपुरीमें उनकी उपस्थितिसे ही स्वागत-समितिकी कई आर्थिक और दूसरी परेशानियाँ दूर हो सकती हैं। उनका कहना था कि गांधीजी के ६ तारीखतक भी पहुँच जाने से उनका काम चल जायेगा। . . ."

२. गांधीजी को ३ मार्चको खादी और ग्रामोद्योग प्रदर्शनीका उद्घाटन करना था। लेकिन गांधीजी राजकोटसे रवाना नहीं हो पाये। इसलिए जवाहरलाल नेहरूने ६ मार्चको प्रदर्शनीका उद्घाटन किया।

३. साधन-सूत्रके अनुसार सायंकालीन प्रार्थनाके बाद गांधीजी ने सुबहसे शामतक किये हुए कामोंका ब्योरा दिया।

४. राजकोट राज्य परिषद्के प्रथम सदस्य, फतेह मुहम्मद खान

कुछ सवाल भी पूछे। अभी मैं उन शिकायतोंकी तफसीलसे चर्चा नहीं करना चाहता हूँ। किसानोंसे बातचीतके बाद खान साहबसे मेरी काफी लम्बी चर्चा हुई। हमेशाकी तरह यह चर्चा भी सर्वथा मैत्रीपूर्ण थी।

तीसरे पहर मैं साथी-कार्यकर्त्ताओंसे मिला और जिन सवालोंको लेकर जन-मानस उद्वेलित है, उनपर उनसे डेढ़ घंटेतक विस्तारपूर्वक चर्चा की। कार्यकर्त्ताओंके साथ हुई बातचीत बड़ी रोचक रही, क्योंकि उन्होंने कुछ गहरे सवाल रखे और मैंने उनके सम्मुख सच्चे सत्याग्रहके फलितार्थोंके बारेमें अपने विचार रखने की कोशिश की। मेरा खयाल है कि वे पूरी जिम्मेदारीकी भावनासे काम कर रहे हैं। इस सिलसिलेमें मुझे यह कहते हुए खुशी होती है कि अधिकारियोंने कुछ नेताओंको, जो जेलमें हैं, मुझसे मिलने की इजाजत दे दी, क्योंकि समझौता-वार्त्ता चलाने के लिए मुझे उनकी मदद चाहिए थी। वे कुछ घंटे मेरे साथ रहे और शामको लगभग साढ़े छह बजे उन्हें उनके अपने-अपने ठिकानोंपर पहुँचा दिया गया।

गांधीजी ने एसोसिएटेड प्रेसके विशेष प्रतिनिधिको बताया कि आज रात दरबार वीरावालासे[1] हुई उनकी बातचीत पूरी नहीं हुई है और बातचीत फिर शुरू करने के बारेमें वे कल उनके सन्देशकी प्रतीक्षा करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २-३-१९३९

३. पत्र : धर्मेन्द्रसिंहको[2]

आनन्दकुंज, राजकोट
२ मार्च, १९३९

मेहरबान ठाकुर साहब,[3]

यह पत्र लिखते संकोच होता है, लेकिन क्या करूँ, लिखना कर्त्तव्य हो गया है।

मेरे यहाँ आने का कारण आप जानते हैं। मेरी दरबार वीरावालाके साथ तीन दिन बातें हुईं। उनसे मुझे अत्यधिक असन्तोष हुआ है। एक भी बातपर दृढ़ रहने की शक्ति उनमें नही है। यह मेरा उनके बारेमें तीन दिनके परिचयपर आधारित मन्तव्य है। मुझे लगता है कि उनके मार्गदर्शनसे राज्यका अहित हो रहा है।

अब मैं यह पत्र लिखने के हेतुपर आता हूँ। वर्धासे रवाना होते समय मैंने यह निश्चय किया था कि आपके द्वारा की गई प्रतिज्ञाका पालन आपसे कराये बिना

१. राजकोट रियासतके दीवान

२. इस पत्रका अंग्रेजी अनुवाद स्वयं गांधीजी ने किया था, जो *हरिजन* के ११-३-१९३९ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।

३. राजकोट रियासतके शासक

राजकोट नही छोड़ूँगा। लेकिन मैंने ऐसा नही सोचा था कि मुझे यहाँ एक-दो दिनसे ज्यादा रुकना पड़ेगा, अथवा जैसी मुझपर बीती है ऐसी बीतेगी।

अब मेरा धीरज टूट गया है। यदि हो सके तो मुझे त्रिपुरी जाना चाहिए। यदि मैं नही गया तो हजारो कार्यकर्त्ता निराश होंगे और लाखों दरिद्रनारायण दुःखी होंगे। अतः इस बार मेरे लिए समयकी बहुत कीमत है।

इसलिए मैं आपसे विनती करता हूँ कि आप निम्न सुझावोको पूरे हृदयसे स्वीकार करके मुझे चिन्तामुक्त करें और कल यहाँसे विदा कर दें।

(१) जनताके समक्ष पुन. घोषित करें कि दिनाक २६-१२-३८ के गजटमें प्रकाशित आपकी अधिसूचना नम्बर ५०[1] अब भी कायम है।

(२) दिनाक २१-१-३९ के गजटमें प्रकाशित अपनी अधिसूचना नम्बर ६१[2] रद्द कर दें।

(३) सुधार-समितिके जिन ७ नामोंकी आपने घोषणा की है, उनमें से २, ३, ५ और ७ को[3] छोड़कर राजकोट राजकीय प्रजा-परिषद्की ओरसे निम्नलिखित नाम स्वीकार करें:

१. श्री उछरंगराय न० ढेबर
२. श्री पोपटलाल पु० अनडा
३. श्री व्रजलाल म० शुक्ल
४. श्री जेठालाल ह० जोशी
५. श्री सौभाग्यचन्द वी० मोदी

इस सुझावका आन्तरिक हेतु यह है कि राजकोट प्रजा-परिषद्का बहुमत रहे। उपर्युक्त व्यक्तियोमें से श्री उछरंगराय ढेबरको अध्यक्ष मनोनीत करें।

(४) तीन अथवा तीनसे कम ऐसे अधिकारियोंको समितिके सहायक और सलाहकारके रूपमें नियुक्त करें, जिन्हे परिषद्की ओरसे मैं पसन्द कर सकूँ। उन्हें समितिकी कार्रवाईमें मत देने का अधिकार नही होगा।

(५) आप आज्ञा प्रसारित करें कि समितिको कागज-पत्र, आँकड़े आदि जिस-जिस सामग्रीकी जरूरत हो, राज्यके विभिन्न विभागोके अधिकारी वह सब उसे दें। समितिकी बैठकोके लिए दरबारगढमें उचित स्थान आप निर्धारित कर दें।

(६) मेरी सलाह है कि उपर्युक्त खंड ४ के अनुसार आप जिन्हें सलाहकार नियुक्त करे, उन्हें ही अपनी कार्यकारिणी भी मानें और उनपर यह जिम्मेदारी डाले कि वे दिनांक २६ दिसम्बरकी अधिसूचनाके अनुरूप राज्यका कार्य-भार चलायें;

१. देखिए खण्ड ६८, पृ० १५०-५१।

२. ४-२-१९३९ के *हरिजन* के अनुसार, इस अधिसूचनामें सुधार-योजना तैयार करने के लिए जो समिति घोषित की गई थी उसके सदस्योंको रियासत के तीन अधिकारियोंके साथ मिलकर काम करना था।

३. अर्थात् क्रमशः जे० जे० धीरूभाई, डी० एच० वलीमोहम्मद, एम० एम० टंक और एच० अब्दुल अलीको

साथ ही वे ऐसा कोई कदम न उठायें जो उक्त अधिसूचनाके उद्देश्यके लिए घातक सिद्ध हो। इन सलाहकारोंमें से एकको कार्यकारिणीका अध्यक्ष नियुक्त करें और यह घोषणा करे कि उक्त कार्यकारिणी जो भी निवेदन अथवा आदेश निकालेगी, उसपर आप विना किसी आपत्तिके हस्ताक्षर करेंगे। लेकिन यदि समितिके सलाहकारोंकी ही कार्यकारिणी बनाना आपको पसन्द न हो, तो जो कार्यकारिणी आप नियुक्त करें, वह भी मुझसे परामर्श करके करे।

(७) समिति अपना काम तारीख ७-३-३९ को शुरू करे तथा तारीख २२-३-३९ को पूरा कर दे।

(८) आप घोषणा करें कि समितिका प्रतिवेदन आपके हाथमें आने के बाद सात दिनके भीतर आप उसकी सिफारिशोंपर अमल करना शुरू कर देंगे।

(९) कल सत्याग्रही कैदियोंको आप मुक्त कर दें, उनपर किये गये जुर्माने, जब्तियाँ वगैरह माफ कर दें, और साथ ही जुर्मानेसे जो वसूली हुई हो उसे वापस कर दें।

मि० गिब्सनने[1] बातचीतके दरम्यान बताया है कि २६ दिसम्बरकी अधिसूचनाके सम्बन्धमें आप जो-कुछ करेंगे, उसमें वे कोई हस्तक्षेप नही करेंगे।

यदि आप मेरी यह विनती कल दोपहरके बारह बजेसे पहले स्वीकार नहीं करेंगे तो उस समयसे मेरा उपवास शुरू हो जायेगा और तबतक जारी रहेगा जबतक आप उसे स्वीकार न कर लेंगे।

मैं आशा करता हूँ, आप मेरी भाषाको कड़ी भाषा नहीं समझेंगे। और अगर यह कड़ी हो भी तो आपके प्रति कड़ी भाषाका प्रयोग करने तथा कड़ा होने का मुझे अधिकार है। मेरे पिताश्रीने आपके पितामहका नमक खाया था।

आपके पिताश्री मुझे अपने पिता-तुल्य मानते थे। मुझे तो उन्होंने प्रकट रूपमें गुरु-पद भी सौंपा था, लेकिन मैं किसीका गुरु नही हूँ, इसलिए मैंने उन्हें शिष्यके रूपमें स्वीकार नही किया था। मैं आपको पुत्रवत् मानता हूँ; यों हो सकता है कि आप मुझे पिता-तुल्य न मानें। लेकिन आप यदि मुझे पिता-तुल्य मानें तो आप मेरी विनतीको एक क्षणमें सहज ही स्वीकार कर लेंगे और २६ दिसम्बरके बाद प्रजापर जो बीती है उसके लिए आप खेद प्रकट करेंगे। आप स्वप्नमें भी मुझे अपना अथवा राज्यका दुश्मन न मानें। मैं किसीका दुश्मन नही हो सकता, जीवन-भर कभी बना भी नही। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि मेरी विनतीको पूरे हृदयसे स्वीकार कर लेने में आपका हित है, उसीमें आपकी शोभा है, और वही आपका कर्त्तव्य है।

आपको ऐसा लग सकता है कि अपने सुझावोंमें से कुछ मैंने २६ दिसम्बरकी अधिसूचनाके बाहर जाकर दिये हैं। सतही तौरपर विचार करने से ऐसा लग सकता है, लेकिन आप देखेंगे कि परिषद्के बाहरके सदस्योंको स्वीकार करते हुए मैंने आपकी प्रतिष्ठाको ही ध्यानमें रखा है। इसलिए वह तो राज्यकी तरफदारीकी ही बात हुई। दूसरे सुझाव, जो उक्त अधिसूचनासे बाहरके माने जा सकते हैं, राज्यके

१. राजकोटके रेजीडेंट ई० सी० गिब्सन

पक्षमें नही हूँ, ऐसा कहा जा सकता है। लेकिन यह परिस्थिति मेरी समझमें केवल आपके प्रतिज्ञा-भंगसे उत्पन्न हुई है। वैसे मेरी दृष्टिमें तो ये भी राजा और प्रजा दोनोंकी रक्षाके लिए हैं, और इस उद्देश्यसे उन्हे शामिल किया गया है कि पुनः शान्ति-भंग न हो।

अन्तमें मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि समिति जो रिपोर्ट तैयार करेगी उसकी जाँच, यदि मेरा शरीर रहा तो, मैं करूँगा; मेरा शरीर नही रहा तो सरदार वल्लभभाई उसे जाँचेंगे, और उसमें एक भी वाक्य ऐसा नही होगा, जिससे आपकी प्रतिष्ठाको धक्का लगे अथवा राज्यको या प्रजाको हानि पहुँचे।

इस पत्रकी प्रतिलिपि मैं गिब्सन साहबको भेज रहा हूँ।

इस पत्रको मै फिलहाल प्रकाशित नहीं कर रहा हूँ, और आशा तो करता हूँ कि आप मेरे सुझावोको सहर्ष स्वीकार कर लेंगे और इसलिए मुझपर इसे प्रकाशित करने का दायित्व नही आयेगा।

प्रभु आपका कल्याण करे और आपको सद्बुद्धि दे।[1]

मोहनदासके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ५-३-१९३९

४. पत्र : दरबार वीरावालाको

२ मार्च, १९३९

आखिर मैं क्या करूँ? आधी राततक जगे रहने के बाद मै आपको यह पत्र लिख रहा हूँ। पिछले तीन दिनोंमें आपकी वजहसे मुझे बहुत ही कटु अनुभव हुआ है। मुझे आपमें अपने किसी भी वक्तव्यपर टिके रहने की कोई इच्छा नजर नही आई। बल्कि हमेशा ही ऐसा लगा मानो आप अपने हर वचनसे बच निकलने के लिए व्यग्र हों। पिछली रातकी बातचीत तो इसकी पराकाष्ठा ही थी। अब मुझे यह समझ आ रहा है कि राजकोटके लोग आपसे आतंकित क्यों है।

आपने मुझे अपने पूरे कार्यकारी जीवनका अध्ययन करने के लिए निमन्त्रित किया है। मैंने आपका निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। लेकिन सच यह है कि मेरी छान-बीनके लिए आपने कुछ ज्यादा छोड़ा ही नही है। ईश्वरने मुझे उतनी शक्ति, निर्मलता और अहिंसा प्रदान नही की; क्योंकि अगर की होती तो मैं आपके हृदयमें प्रवेश पा गया होता। मैं आपका हृदय नही जीत सका, इससे मैं अपनेको लज्जित और दुखी अनुभव कर रहा हूँ। मेरा यह विश्वास है कि ठाकुर साहब पर आपका जो प्रभाव है वह उनके भलेके लिए नही है। परसों रात जब मैंने उन्हें

१. ठाकुर साहबके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट १।

मानसिक रूपसे इतना निस्सहाय पाया तो मेरा हृदय रो उठा। उनकी इस हालतके लिए मैं आपको ही जिम्मेदार मानता हूँ।

मैंने अभी-अभी ठाकुर साहबको एक पत्र[1] लिखा है और अभी ही यह पत्र आपको भेज रहा हूँ। आप वह पत्र तो देखेंगे ही, इसलिए उसकी प्रति मैं आपको नहीं भेज रहा हूँ। यद्यपि आप अपना अन्तिम निर्णय मुझे दे चुके हैं, फिर भी आपसे मेरी यही प्रार्थना है कि आप ठाकुर साहबको मेरे सुझाव मान लेने की सलाह दें। ईश्वर आपको सद्बुद्धि दे।

[अंग्रेजीसे]
सरदार वल्लभभाई पटेल, जिल्द २, पृ० ३४६

५. पत्र : ई० सी० गिब्सनको

आनन्दकुंज, राजकोट
२ मार्च, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

अभी-अभी मैंने महाविभव ठाकुर साहबको गहरे दुःखके साथ, पर मात्र कर्त्तव्यकी प्रेरणासे, एक पत्र[2] भेजा है, जिसकी नकल इसके साथ है। मैं अभी उसका अनुवाद नहीं कर पाया हूँ। इसलिए, समयकी बचतकी दृष्टिसे, मैंने आपको मूल गुजरातीकी ही नकल भेजी है। परन्तु आशा है, दिन-भरमें मैं आपको इसका अंग्रेजी अनुवाद भेज दूँगा। तब आप कृपया उसे एकमात्र प्रामाणिक अनुवाद या मूल-जैसा ही मानिएगा।

अपने सुझावके कार्यान्वयनमें क्या मैं आपसे, जहाँतक आपके लिए सम्भव हो, हार्दिक सहयोगकी याचना कर सकता हूँ?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-३-१९३९

१ देखिए पिछला शीर्षक।
२. देखिए पृ० २–५।

६. बातचीत : सत्याग्रहियोंसे[1]

२ मार्च, १९३९

शामकी प्रार्थनाके बाद गांधीजी ने सत्याग्रही स्वयंसेवकोंसे दो शब्द कहे। उन्होंने कहा कि स्वयंसेवकोंने अपनी बहादुरीसे अपना नाम उजागर किया है, और अपनी अहिंसात्मक शक्तिको सिद्ध कर दिया है। लेकिन मैं राजकोट इस कारणसे नहीं आया हूँ। मुझे जो फिक्र है वह तो गुण्डापनकी वृत्तिके बढ़ने और फैलने के कारण है। त्रावणकोर, तालचर, ढेंकानल और अन्तमें राजकोटमें भी मैं यह देख रहा हूँ कि सत्याग्रह जारी रहने से अधिकारियोंमें हिंसाकी वृत्ति अधिकाधिक बढ़ रही है और वे अधिकाधिक पाशविकता अख्तियार करते जा रहे हैं। इसलिए मैंने सत्याग्रहको रोक दिया है और लड़ाईका सारा बोझ अपने ऊपर ले लिया है। आज सत्याग्रहियोंके सामने डंडाशाही और भड़ैत गुण्डोंको खड़ा कर दिया गया है। राजकोटमें मैं इस विकट स्थितिका कोई उपाय खोज पाने की आशा करता हूँ। [उन्होंने कहा :]

इसमें मुझे ईश्वरका हाथ मालूम पड़ता है। इसके लिए राजकोटके मामलेसे शुद्ध और श्रेष्ठ और कोई साधन मैं नही चुन सकता था। यह तत्त्वत. एक नैतिक प्रश्न है। इससे अधिक स्पष्ट और कोई चीज नही हो सकती थी। वचन-भंगका इससे अधिक नग्न उदाहरण और कुछ नही हो सकता था। यह ऐसा दोष है जिसे दूर करना अत्यन्त आवश्यक है।

सत्याग्रहियोंको उन्होंने सलाह दी कि वे बहुत सावधान रहें और हिंसासे कोई समझौता या कोई सम्बन्ध हरगिज न रखें। उन्होंने कहा कि हिंसा और अहिंसाके बीच कोई "संयुक्त मोर्चा" नहीं हो सकता, ये दोनों एक-दूसरे के बिलकुल विपरीत हैं। इसलिए जहाँ अहिंसामें विश्वास न करनेवालों की बहुतायत हो वहाँ सत्याग्रहियोंको उनसे अलग रहकर उनके साथ सत्याग्रहमें प्रवृत्त होने से इनकार कर देना चाहिए।

एक सत्याग्रही स्वयंसेवकने यह बतलाते हुए कि उनमें से कुछके साथ राज्यके अधिकारियोंने कैसा बरताव किया, पूछा कि सत्याग्रहके अनुसार क्या हमें उस गैर-कानूनी और अमानुषिक व्यवहारको सिर झुकाकर स्वीकार कर लेना चाहिए जो अक्सर हमें भुगतना पड़ता है। उदाहरणके लिए, अगर कोई पुलिस अफसर किसी सत्याग्रहीको गिरफ्तार करके जेलकी गाड़ीमें बैठने का हुक्म दे तो वह उसे मानने के लिए बाध्य है। लेकिन फर्ज कीजिए कि उसे बसमें बैठने का हुक्म इसलिए दिया जाये

१ प्यारेलालके "द राजकोट फास्ट [-१]" से उद्धृत।

कि दूर जंगलमें ले जाकर किसी तरहकी कानूनी कार्रवाई या मुकदमेका दिखावातक किये बिना उसे मार-पीटकर वहाँ छोड़ दिया जाये, तो भी क्या वह उस पुलिस-वाले का हुक्म माने? गांधीजी ने जवाब दिया :

सत्याग्रही इस आशासे आगे बढ़कर कष्टोंको अपने सिर लेता है और उन्हें खुशी-खुशी सहता है कि ऐसा करके वह अपने विरोधीके हृदयको पिघला देगा। मजबूरीमें वह कुछ नहीं करता। प्रह्लादको उसके पिताने जब गरम लोहेके खम्भेसे बाँधने का हुक्म दिया, तो उसने कोई आगा-पीछा नहीं किया था, उलटे वह बड़ी व्यग्रतासे उससे चिपट गया, और कथा तो यही है कि उससे उसके शरीरको कोई क्षति नहीं पहुँची। आदर्श सत्याग्रही तो वस्तुतः सब शारीरिक यन्त्रणाओंके प्रति उदासीन ही रहता है और ऐसी स्थिति आ पड़ने पर सिवा आनन्द और उल्लासके और कुछ महसूस नहीं करता। मैं जानता हूँ कि खुद मैं भी अभी इस आदर्शसे बहुत दूर हूँ। लेकिन योग्य उत्तराधिकारी विरासतमें जो-कुछ पाता है उसमें हमेशा वृद्धि ही करता है, और सत्याग्रहमें तो खोज और प्रगति करने की अनन्त सम्भावनाएँ पड़ी हुई हैं।

मगर सत्याग्रहीको ऐसा हुक्म नहीं मानना चाहिए जो उसकी नैतिकताकी भावनाके खिलाफ हो या जिससे उसके आत्मसम्मानको धक्का लगे, चाहे इसके लिए उसे अपने प्राणोंकी ही बलि क्यों न देनी पड़े। यही नहीं, बल्कि आत्मसम्मानकी रक्षा यदि प्राणोके मोलपर ही हो सकती हो, तो उसके लिए अपने प्राणोंको उत्सर्ग कर देना उसका कर्त्तव्य भी हो सकता है। ऐसा काम आत्महत्या नहीं कहा जायेगा। बल्कि यह तो हमारे नश्वर शरीरपर, जिसे अन्ततः मिट्टीमें मिल जाना है, हमारी अमर आत्माकी विजय होगी।

यह मेरा सतत अनुभव रहा है कि ईश्वर सत्याग्रहीकी शक्तिसे अधिक उसकी परीक्षा कभी नहीं लेता। अगर हम उसपर पूरा विश्वास रखें, तो जरूरतके वक्त किसी-न-किसी तरह हमें शक्ति मिल ही जाती है। लेकिन इसके लिए अविश्रान्त परमार्थ-कार्य के द्वारा पूरी तैयारी और आत्मानुशासनकी आवश्यकता होती है। जेल जाना तो केवल एक छोटा-सा कदम-भर है। इसे हम सबसे महत्त्वपूर्ण तो कभी कह ही नहीं सकते। सेवाकी भावना न हो, तो आगे बढ़कर जेल जाना और मारपीट तथा लाठीके प्रहारोंको सहना एक तरहकी हिंसा ही हो जाता है। इसलिए हरएक सत्याग्रहीसे मैं यह उम्मीद करूँगा कि वह नियमित रूपसे डायरी रखे और रचनात्मक सेवाकी दृष्टिसे अपने हर मिनटके समयका पूरा विवरण दर्ज करे। सत्याग्रहका मार्ग तलवारकी धार है। सत्याग्रहीको सदा जागरूक और तैयार रहना चाहिए, व्यर्थ तो वह एक क्षण भी न गँवाये। सत्याग्रहमें संख्याका कोई महत्त्व नहीं है। जो सर्वसाधारणकी निःस्वार्थ सेवाके बलपर सुसंगठित और अनुशासित हो गये हों, ऐसे मुट्ठी-भर सच्चे सत्याग्रही भी हिन्दुस्तानकी आजादी हासिल कर सकते हैं, क्योंकि खामोश रहनेवाले करोड़ोंकी शक्ति उनकी पीठपर होगी। सत्याग्रह तो आत्माकी शक्ति है। यह सूक्ष्म रीतिसे और सार्वत्रिक रूपसे काम करती है। एक बार

उसका प्रयोग शुरू हुआ नही कि उस वक्ततक यह जोर पकड़ता चला जाता है जबतक कि सारे भौतिक बन्धनोंको तोड़कर यह समस्त संसारमें न फैल जाये।

बातचीतके अन्तमें उन्होंने उन लोगोंको, जिनके हाथमें कामकी जिम्मेदारी है, सुझाया कि अब स्वयंसेवक-शिविरको भंग किया जा सकता है और जिन स्वयंसेवकोंकी खास वहाँ चल रहे कामके लिए जरूरत न हो उन्हें अपने-अपने मुकामोंको भेज दिया जाये।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २५-३-१९३९

७. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

२ मार्च, १९३९

आपके सवालके जवाबमें दु:खके साथ मुझे 'हाँ' कहना पड़ता है। मुझे इस बातका भी अफसोस है कि यह बात समयसे पहले ही जाहिर हो गई। अपने पत्रको[2] मैं अब भी प्रकाशित नही करना चाहता। इस नाजुक मौकेपर तो मैं सिर्फ यही कहना चाहूँगा कि एक पूरी रातके जागरणके बाद मैं इस परिणामपर पहुँचा कि जिस लड़ाईको स्थगित कर दिया गया है उसे यदि फिरसे शुरू न होने देना है और जिन अत्याचारोंके बारेमें मैंने बहुत-कुछ सुना है और जिनका मुझे अखबारोंको दिये गये अपने वक्तव्यमें[3] भी उल्लेख करना पड़ा है, उन्हें भी फिरसे शुरू न होने देना है, तो मुझे इस मर्मान्तिक वेदनाका अन्त करने के लिए कोई कारगर उपाय करना ही चाहिए — और, ईश्वरने मुझे यह उपाय बतला दिया।

मैं जो-कुछ करना चाहता हूँ उसके साथ ईश्वरका नाम जोड़ने पर लोगोको मेरी हँसी नही उडानी चाहिए। सही हो या गलत, मै यह जानता हूँ कि सत्याग्रहीके नाते हरएक सम्भव कठिनाईमें ईश्वरकी सहायताके अलावा और किसीका सहारा मुझे नही है। और मैं आपको यह विश्वास दिलाना चाहूँगा कि मेरे जो काम समझमें न आनेवाले मालूम पडें वे वस्तुत: मेरी आन्तरिक प्रेरणाओके ही परिणाम होते हैं।

हो सकता है कि यह मेरे उत्तप्त मस्तिष्ककी उपज हो। अगर ऐसा हो, तो मुझे उस उत्तप्त मस्तिष्कपर गर्व है, क्योकि मैं पन्द्रह वर्षका भी नही हुआ था

१. यह वक्तव्य "द फायरी ऑर्डीयल" (अग्नि-परीक्षा) शीर्षक लेखसे उद्धृत है। लेखमें इस वक्तव्यकी पृष्ठभूमि स्पष्ट करते हुए बताया गया है कि गांधीजी के उपवास करने की अफवाहके बारेमें सही स्थिति जानने के लिए कुछ संवाददाता गांधीजी से मिलने आये। "द राजकोट फास्ट [-१]" में प्यारेलालने लिखा है कि गांधीजी ने यह वक्तव्य बोलकर लिखवाया था।

२. देखिए "पत्र: धर्मेन्द्रसिंहको", पृ० २-५।

३. देखिए खण्ड ६८, पृ० ४९८-५०२।

तभीसे मैंने सजग रूपसे ईश्वरपर निर्भर रहना सीख लिया था और अपने जीवनके उतार-चढ़ावके लगभग ५५ वर्षसे अधिक समयतक वह मेरे काम आता रहा है।

एक बात और। यह मैं जानता हूँ कि उपवासका अस्त्र यों ही चाहे जब काममें नहीं लाया जा सकता। यदि कोई ऐसा आदमी इसका उपयोग न करे, जो इस कलामें पूर्ण प्रवीण हो, तो उसमें आसानीसे हिंसाकी गन्ध समा जा सकती है। लेकिन मेरा दावा है कि इस कलाका मैं विशेषज्ञ हूँ।

यह याद रहे कि राजकोट और उसके शासकोंसे मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। ठाकुर साहबको जब मैं अपने लड़केकी तरह मानता हूँ, तब मुझे इस बातका पूरा हक है कि उनकी प्रकृतिके सर्वोत्तम अंशको उत्तेजन देने के लिए मैं कष्ट-सहनका सहारा लूँ। अगर मेरे उपवासको, जो मुझे उम्मीद है कि टल जायेगा, दबाव डालना समझा जाये, तो मैं सिर्फ यही कह सकता हूँ कि ऐसे नैतिक दबावका सभी सम्बन्धित जनोंको स्वागत ही करना चाहिए।

वचन-भंग मेरी अन्तरात्माको हिला देता है, खासकर जबकि वचन-भंग करनेवाले से मेरा किसी तरहका कोई सम्बन्ध हो। इसके लिए अगर मुझे अपनी जान भी दे देनी पड़े, वह जान जो अब इस ७० बरसकी इस उम्रमें कोई बीमा लायक चीज भी नहीं रह गई है, तो एक पवित्र और गम्भीर वचनका उचित रीतिसे पालन कराने के लिए मुझे खुशीके साथ उसे उत्सर्ग कर देना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-३-१९३९

८. सन्देश : वल्लभभाई पटेलको[1]

२ मार्च, १९३९

मेरे फैसलेसे तुम्हें परेशान नहीं होना चाहिए। ईश्वरेच्छासे ही यह निर्णय लिया है। लेकिन तर्क-बुद्धिने भी इसके सिवा और कोई रास्ता नहीं दिखाया। मैं चाहता हूँ कि तुम इस बातकी किसीसे भी चर्चा न करो। अगर दरबार वीरावाला ठाकुर साहबको मेरा प्रस्ताव स्वीकार करने देते हैं, तो ठाकुर साहब ही इसका सारा श्रेय लें।

अपनी जगह छोड़ना तुम्हारे लिए उचित नहीं होगा। . . .[2] तुम्हें इतनेसे सन्तुष्ट हो जाना चाहिए कि राजकोट-समस्याका उत्तरदायित्व वहन करने के लिए मैं यहाँ हूँ।

१. प्यारेलाल द्वारा लिखित "द राजकोट फास्ट [-१]" से उद्धृत। लेखकके अनुसार यह सन्देश टेलिफोनसे भेजा गया था।

२. साधन-सूत्रके अनुसार

इस संकटमें टेलिफोनका सारा खर्चा भी बच सकता तो मुझे अच्छा लगता। लेकिन तुम्हारे मिजाजको मैं जानता हूँ, इसलिए अगर बताने के लिए खबरें हो, तो टेलिफोनसे सूचना देने पर मैं कोई अंकुश नहीं लगाऊँगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २५-३-१९३९

९. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

३ मार्च, १९३९

ठाकुर साहबको भेजा अपना पत्र[2] दुःखके साथ अखबारोंको प्रकाशनार्थ दे रहा हूँ। अपने जीवनमें ऐसे अनेक प्रसंगोंपर मुझे दुःखके साथ अपना कर्त्तव्य निभाना पड़ा है; उन प्रसंगोंमें से यह भी एक है। मैं चाहता हूँ कि मेरे मित्र और मेरे साथ हमदर्दी रखनेवाले सज्जन सहानुभूतिमें एक दिनका भी उपवास न रखें। मैं जानता हूँ कि आजकल सत्याग्रहकी भाँति उपवासका भी दुरुपयोग किया जाता है। लोग जरा-जरा-सी बातपर उपवास करना शुरू कर देते हैं। ऐसे उपवासोंमें अक्सर हिंसा छिपी रहती है। दूसरे कारणोंसे न सही तो नासमझी-भरी नकलको ही रोकने के लिए इस अनशनको आरम्भ करने में मुझे बहुत ज्यादा झिझक हो रही थी, मगर आन्तरिक प्रेरणाको अस्वीकार नहीं किया जा सकता। इसलिए मैं उन लोगोंको, जो आगे अपनी सचमुचकी या काल्पनिक शिकायतें दूर करवाने के लिए उपवास रखना चाहें, आगाह किये देता हूँ कि वे मेरी नकल न करें। कुछ तेजअसर दवाओंकी तरह इसका प्रयोग भी बहुत कम मौकोंपर और विशेषज्ञकी निगरानीमें ही किया जा सकता है। और हरएक व्यक्तिका अपने-आपको विशेषज्ञ समझना अनुचित है, पाप है।

आम जनताको जानना चाहिए कि मैंने अपने जीवनमें बहुत पहले से ही आत्म-शुद्धिके निमित्त अनशन करना शुरू कर दिया था।[3] और बादमें अपने एक भूल करने-वाले पुत्रके लिए लम्बा अनशन किया था। इसके बाद अपने मित्रकी एक गुमराह पुत्रीके लिए और भी लम्बा अनशन किया था।[4] इन दोनों प्रयोगोंमें अनशन सफल

१. "द फास्टरी ऑर्डीयल" (अग्नि-परीक्षा) से उद्धृत।

२. देखिए पृष्ठ २-५। "डायरी ऑफ द फास्ट-२" (हरिजन, १-४-१९३९) में प्यारेलालने लिखा है, "गांधीजी के कहे अनुसार . . . अखबारवाले . . . सुबह ९ बजे इकट्ठे हो गये थे, क्योंकि इस समय तक ठाकुर साहबका उत्तर आ जाने की आशा थी। . . . गांधीजी को अब भी आशा थी कि कोई सन्तोषजनक उत्तर आयेगा और उपवास करने की आवश्यकता नहीं होगी। . . . ११-१५ पर गांधीजी को उपवाससे पहलेका अन्तिम खाना परोसा गया। . . . बारह बजने में एक मिनट बचा था, लेकिन जवाब अभीतक नहीं आया था। अब गांधीजी अपने पत्रका पाठ अखबारवालोंको देने ही वाले थे . . . पहले उनका प्रिय भजन "वैष्णवजन" गाया गया . . . और फिर रामधुन। अन्तमें गांधीजी ने अपने पत्रका पाठ अखबारवालोंको दे दिया . . और उसी क्षण उन्होंने एक वक्तव्य भी लिखवाना शुरू कर दिया।"

३ और ४. तात्पर्य शायद १९१३ में फीनिक्स आश्रमके दो सदस्योंकी नैतिक चूकके लिए किये गये हफ्ते-भरके उपवास, और १९१४ में ऐसे ही कारणसे किये गये १४ दिनोंके उपवाससे है; देखिए खण्ड ३९, पृ० २६२-३ और खण्ड १२, पृ० ४००-१।

सिद्ध हुआ। सार्वजनिक हेतुसे मैंने पहला अनशन दक्षिण आफ्रिकामें उन गिरमिटिया भारतीयोंके लिए किया था[1] जो सत्याग्रह-आन्दोलनमें शरीक हुए थे। अनशनोंका मेरा एक भी प्रयोग विफल हुआ हो, मुझे ऐसा याद नहीं पड़ता। इसके सिवा, मुझे अपने सभी उपवासोंमें अमूल्य शान्ति और अनन्त आनन्दका अनुभव भी हुआ। मैं इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि अगर अनशनकी प्रेरणा ईश्वरके अनुग्रहसे न हुई हो, तो वह और बुरा नहीं तो कमसे-कम अकारण भूखों मरना तो अवश्य है।

दूसरी बात जो मैं कहना चाहता हूँ वह यह कि ठाकुर साहब, उनके सलाहकारों या रेजीडेंटके विरुद्ध न तो कड़े भाषण ही दिये जायें और न उनके सम्बन्धमें कड़ी बातें ही लिखी जायें। मैंने रेजीडेंट और राज्यके अधिकारियोंके लिए सख्त भाषाका इस्तेमाल किया है। अगर मुझे मालूम पड़ेगा कि मैंने उनके साथ किसी प्रकारका अन्याय किया है, तो मैं उसका प्रक्षालन भी जानता हूँ। ठाकुर साहबके लिए या इस दुःखद काण्डके दूसरे पात्रोंके लिए सख्त भाषाका प्रयोग किया गया तो उससे मेरे अनशनका असर मारा जायेगा और वह बात न हो सकेगी जिसकी अनशनसे आशा की जाती है।

गम्भीरतापूर्वक किये गये समझौतेके उल्लंघनके परिणाम अपने-आपमें इतने बुरे हैं कि कड़ी और आलोचनात्मक भाषाका प्रयोग करके उन्हें और बढ़ाने की जरूरत नहीं। जनता और समाचारपत्र इस सम्बन्धमें यही एक सेवा कर सकते हैं कि ठाकुर साहबके कामका अनौचित्य उन्हें शालीन ढंगसे बतायें और इस तरह उन्हें ठीक रास्तेपर लाने के लिए उनपर प्रबुद्ध लोकमतका दबाव डालें।

सत्याग्रहके विविध रूप और अनशन त्यागके ही प्रकार हैं। अपने अभीष्ट परिणामके लिए वह कटुतासे अछूते कल्याणकारी लोकमतके प्रकाशन पर निर्भर है। अनशनके कारण ऐसा नहीं होना चाहिए कि वांछित परिणामकी प्राप्तिके लिए लोग किसी तरहकी अधीरता दिखायें। जिसने मुझे यह अनशन करने की प्रेरणा दी है वही मुझे पार भी उतारेगा। और यदि उसकी इच्छा है कि मानवताकी सेवाका जो कार्य मैंने अपने लिए स्वयं चुना है उसे करने के लिए मैं इस धरतीपर कुछ दिन और रहूँ तो कोई भी अनशन, वह कितना ही लम्बा क्यों न चले, इस शरीरको नष्ट नहीं कर सकता।

मुझे याद है और इसका दुःख है कि साम्प्रदायिक प्रश्न पर स्वर्गीय श्री मैकडॉनल्डके निश्चयके विरुद्ध जब मैंने आमरण अनशन[2] किया था तब बहुत-से सज्जन अपनी इच्छाके विरुद्ध काम करने पर राजी हो गये थे। मैं आशा करता हूँ कि मेरे राजकोटके अनशनके सम्बन्धमें ऐसी कोई बात नहीं होगी। ठाकुर साहबने एक विज्ञप्ति २६

१. २१ दिसम्बर, १९१३ को गांधीजी ने दक्षिण आफ्रिकावासी गिरमिटिया भारतीयोंकी हड़तालके दौरान गोलियोंसे मारे गये भारतीयोंके निमित्त "आन्तरिक शोकके प्रतीक स्वरूप" दिनमें सिर्फ एक बार खानेका अपना निर्णय घोषित किया था।

२. १९३२ में; १९ सितम्बरको आरम्भ किया गया यह "आमरण अनशन" २६ सितम्बरको तोड़ा गया था; देखिए खण्ड ५१।

दिसम्बरको प्रकाशित की, फिर दूसरी २१ जनवरीको जारी की। पहलीको देखते हुए २१ जनवरीकी विज्ञप्ति को मैंने वचन-भंग कहा है। अगर सार्वजनिक काम करनेवाले कोई सज्जन मेरे कथनको गलत समझते हैं, तो वे मेरे अनशन और मेरे उक्त कथनकी निन्दा करके मेरे प्रति मित्रताका ही व्यवहार करेंगे। मेरे अनशनका उद्देश्य निस्सन्देह ठाकुर साहबके हृदयको पिघलाना है, पर मेरा अनशन लोकमतको ठाकुर साहबपर जोर डालने के लिए या उन लोगोंको प्रभावित करने के लिए नही है जिनकी समझसे ठाकुर साहबके कामोंमें कोई गलती नही है।

एक बात मुझे अपने पत्रके पहले अनुच्छेदके[१] विषयमें कहनी है, जिसमें मैंने दरबार वीरावालाकी आलोचना की है। सचाईके साथ यह कह सकता हूँ कि मनुष्यके दोष देखने में मैं कभी जल्दबाजी नही करता। कारण, मुझमें खुद ही बहुत-से दोष है, इसलिए मै स्वयं दूसरोसे आशा करता हूँ कि वे मेरे दोष देखने में जरा सहानुभूतिसे काम लेंगे। मैंने सीखा है कि किसीके सम्बन्धमें सख्तीसे विचार न किया जाये और दूसरे व्यक्तियोकी जो बुराइयाँ मेरी नजरमें आयें, उन्हें दरगुजर कर दूँ।

लेकिन दरबार वीरावालाके सम्बन्धमें मैंने इतनी कटु और कड़ी शिकायतें सुनी हैं जिनकी कोई इंतिहा नही है। दरबार वीरावालासे बातचीतके सिलसिलेमें मैंने उन शिकायतोका जिक्र भी किया था और उनकी प्रशंसामें मुझे यह कहना चाहिए कि उन्होंने मुझसे इन शिकायतोकी जाँच करने के लिए भी कहा। मैंने कहा कि मै करूँगा। पर अब इस अनशनके कारण मजबूर हूँ। मेरी यह पूरी इच्छा थी कि मैं उन शिकायतोंकी जाँच करूँ।

उनके खिलाफ जो खास शिकायतें की गई थीं उनके समर्थनमें सबूत देने के लिए मैं मित्रोको निमन्त्रित कर चुका था। लेकिन दरबार वीरावालाके साथ तीन दिनोतक हुई लम्बी बातचीतसे, उनके विरुद्ध की गई शिकायतें सुनकर मेरी जो धारणा बनी थी, वह पुष्ट हो गई — इतनी पुष्ट हो गई कि मुझे लगा, उस बातचीतके दौरान जो सबूत मिले वे उनपर लगाये गुरु-गम्भीर आरोपोंको सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं।

अपने पत्रके पहले अनुच्छेदमें मैंने उनके विषयमें अपनी रायको जान-बूझकर दबाया है और पूरी बात नही कही है। पहला अनुच्छेद लिखने में मुझे बहुत ही कष्ट हुआ, पर अपने उद्देश्यको पूरा करने के लिए यह आवश्यक था कि मैं ठाकुर साहबको दरबार वीरावाला उनपर जैसा प्रबल प्रभाव रखते हैं, उसके खिलाफ आगाह कर दूँ। एक नही, अनेक विचारशील और प्रभावशाली व्यक्तियोने मुझसे कहा है कि जबतक दरबार वीरावालाका ठाकुर साहबपर ऐसा प्रभाव है, प्रजाके लिए चैन नही है।

मै खुद यह समझता हूँ कि उन बातोंमें काफी सचाई है और अनशन शुरू करते समय यदि मैं इस सत्यको छिपाता हूँ तो अधर्म करता हूँ। मैंने उन्हें

१. देखिए पृ० २।

एक खानगी और गुप्त पत्र भेजा है, जो मेरी ओरसे कभी प्रकाशित नही किया जायेगा। पर मैं उनसे अपील करता हूँ और चाहता हूँ कि उनसे परिचय रखनेवाले सभी लोग इस अपीलमें मेरा साथ दें कि दरबार वीरावाला अपना प्रभाव ठाकुर साहब पर न डालें, हालाँकि हो सकता है, ठाकुर साहबके लिए अपनेको वीरावालाके प्रभावसे मुक्त करना बहुत मुश्किल हो। मैं और भी बहुत-कुछ कह सकता हूँ, पर कहूँगा नही।

हालाँकि मैं काठियावाड़से डेढ़ पीढ़ीसे अधिक समय बाहर रहा हूँ, फिर भी मैं जानता हूँ कि काठियावाड़की राजनीति कितनी गँदली है। यह अभागा उपप्रान्त अपने जाल-फरेबके लिए बदनाम है। इसका घातक असर मुझे इन चार दिनोंमें ही मालूम पड़ गया है। मेरी उत्कट अभिलाषा है कि मेरा उपवास काठियावाड़की राजनीतिकी शुद्धिमें, चाहे जितना भी कम क्यों न हो, सहायक हो। इसलिए मैं काठियावाड़के देशी राजाओं और राजनीतिज्ञों दोनोंको आमन्त्रित करता हूँ कि वे मेरे उपवासका उपयोग काठियावाड़को जहरीले वातावरणके उस घातक प्रभावसे मुक्त करने के लिए करें जिसके कारण काठियावाड़में सुन्दर और शालीन रीतिसे रहना असम्भव हो गया है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-३-१९३९

१०. बातचीत: राजकोट राज्य परिषद्के प्रथम सदस्यसे[1]

३ मार्च, १९३९

गांधीजी: यह तो आगमें घी डालने-जैसा हुआ। मैं इसका जवाब जाब्तेसे तो बादमें दूंगा। पर क्या, इस बीच, मैं आपके सामने यह तजवीज रख सकता हूँ कि आप ठाकुर साहबको यह सलाह दें कि तमाम सत्याग्रही कैदियोंको अब रिहा कर दिया जाये? चूँकि मैंने उपवास शुरू कर दिया है, इसलिए मेरे जीवन-कालमें इस प्रश्नपर सत्याग्रह फिरसे आरम्भ नही किया जा सकता। मेरे उपवासकी खबर पाकर निश्चय ही वे लोग घबरा जायेंगे और हो सकता है कि सहानुभूतिमें वे भी उपवास शुरू कर दें। कैदियोंके रूपमें उन्हें काबूमें रखना या रोकना मुश्किल हो जायेगा।

प्रथम सदस्य: अगर वे रिहा न किये गये, तो क्या सविनय अवज्ञा-आन्दोलन फिर शुरू कर दिया जायेगा?

नही। मेरे उपवासने तो उसे सर्वथा स्थगित कर दिया है।

१. यह और अगला शीर्षक दोनों "डायरी ऑफ़ द फास्ट-२" (उपवासकी दैनन्दिनी-२) से लिये गये हैं। प्यारेलालके अनुसार जब गांधीजी ने समाचारपत्रोंके निमित्त वक्तव्य (देखिए पिछला शीर्षक) पूरा किया, ठीक उसी समय ठाकुर साहबका उत्तर (देखिए परिशिष्ट १) लेकर प्रथम सदस्य वहाँ पहुँचे।

लेकिन उपवास क्या आपके लिए एकदम जरूरी है? क्या दूसरा चारा ही नहीं? आप उपवास करें, इससे तो अधिक मैं सविनय अवज्ञा-आन्दोलनको ही पसन्द करूँगा, चाहे वह जितना बड़ा हो।

यह मैं जानता हूँ। पर अगर सत्तर वर्षकी इस ढलती अवस्थामें मुझे एक ऐसे निर्णयपर फिरसे विचार करना पड़े, जो मैंने इतने अधिक अन्तर्निरीक्षण और ईश्वर-प्रार्थनाके बाद लिया है, तब तो मैं यही कहूँगा कि जीवनके मेरे सत्तर बरस व्यर्थ गये। जब मैंने देखा कि मेरे लिए अब कोई उपाय नही रहा, तभी मैंने उपवास शुरू किया है। क्या आप कोई दूसरा रास्ता सुझा सकते हैं?

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-४-१९३९

११. पुर्जा : कस्तूरबा गांधीको[1]

३ मार्च, १९३९

आशा है, तुम सब शान्त और प्रकृतिस्थ हो। परन्तु यदि तुम वहाँ शान्तिसे न रह सको, तो मेरे पास आ सकती हो।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-४-१९३९

१२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[2]

३ मार्च, १९३९

यह उत्तर पढ़कर मुझे दुःख हो रहा है। मैं यह कहे बिना नही रह सकता कि ठाकुर साहबको ठीक सलाह नही दी गई है। यह उत्तर तो आगमें घी डालने-जैसा है। इस पत्रमें उन्होंने जो मुद्दे उठाये हैं वे तो तभी अप्रस्तुत हो गये थे जब उन्होंने सरदारको यह लिख दिया था:[3]

१. प्यारेलालने लिखा है कि प्रथम सदस्यके साथ अपनी बातचीत (देखिए पिछला शीर्षक) के बाद गांधीजी ने यह पुर्जा बा को पहुँचाने के लिए उन्हींको दे दिया था। बा उन दिनों त्रम्बामें नजरबन्द थीं।

२. यह ठाकुर साहब के उत्तरपर गांधीजी की टिप्पणी के रूपमें "ऐडिंग फ्यूल टु फायर" (आगमें घी डालना) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। "डायरी ऑफ द फास्ट-२" में प्यारेलाल बताते हैं कि यह वक्तव्य गांधीजी ने प्रथम सदस्यके कस्तूरबा के नाम लिखा पुर्जा (देखिए पिछला शीर्षक) लेकर चले जाने पर लिखवाया था।

३. २६ दिसम्बर, १९३८ को; देखिए खण्ड ६८, परिशिष्ट १।

मैं इस बातसे सहमत हूँ कि इसी तारीखकी राजघोषणाकी[1] धारा २ में जिस समितिका उल्लेख हुआ है उसके सात सदस्योंकी सिफारिश सरदार पटेल करेंगे और हम उन्हें मनोनीत करेंगे।

इसकी भाषामें दूसरे किसी अर्थकी गुंजाइश ही नहीं है। यह नोट लिखकर ठाकुर साहबने समितिमें नियुक्त किये जानेवाले व्यक्तियोंको चुनने की जिम्मेदारी स्वेच्छा से त्याग दी थी। इन सदस्योंके मनोनयनकी जिम्मेदारी अब भी उनकी है, किन्तु उसके साथ यह शर्त जुड़ी हुई है कि नामोंकी सिफारिश सरदार करेंगे। इसलिए उपयुक्त नामोंकी सिफारिश करने की जिम्मेदारी सरदारपर चली गई और उन्हें यह जिम्मेदारी राजकोटके शासक की इच्छासे प्राप्त हुई। ठाकुर साहब और उनके सलाहकारोंको सरदार द्वारा सुझाये नाम उपयुक्त न मालूम होने पर वे सरदारके साथ उन्हें बदलवाने के लिए बातचीत कर सकते थे, किन्तु सरदारके राजी न होने पर उन्हें सरदार द्वारा सुझाये नाम ही स्वीकार करने थे, क्योंकि ठाकुर साहबने ये सदस्य चुनने की जिम्मेदारी छोड़ दी थी। और बुद्धि भी तो यही कहेगी कि जो काम समितिको सौंपा जाना था वह यदि सही ढंगसे पूरा होना था तो उस समितिका गठन उन लोगोंकी इच्छाके अनुसार होना चाहिए था जिनकी खातिर वह घोषणा — जिसमें बताया गया था कि समिति क्या करेगी — जारी की गई थी। अन्यथा, यह तो ऐसा ही था कि एक हाथसे दिया और दूसरेसे ले लिया।

यदि चुनावका काम राजा और उनके सलाहकारोंपर ही छोड़ दिया जाये तो उन्हें ऐसी समिति नियुक्त करने से कौन रोकेगा जो ऐसे सुधारोंकी सिफारिश कर डाले जिनसे वह घोषणा जिस हेतुसे जारी की गई थी, वह हेतु ही विफल हो जाये? लेकिन अब तो मामला आगे बढ़ गया है; दलीलोंसे कोई लाभ नहीं हो सकता। यदि ठाकुर साहबका यह पत्र ही इस सम्बन्धमें उनका अन्तिम कथन है तो मेरा उपवास मेरे जीवनका अन्त होने तक चालू रहेगा। मैं आशा करता हूँ कि इस परीक्षाको प्रसन्न मनसे पार करूँगा और मैं यह भी जानता हूँ कि मेरे जीवन-कालमें जो नहीं होगा, मेरे इस बलिदानके बाद वह निस्सन्देह होकर रहेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-३-१९३९

१. देखिए खण्ड ६८, पृ० १५०-१।

१३. तार : मीराबहनको

राजकोट
३ मार्च, १९३९

मीराबाई
मारफत बादशाह खान[1]
चारसद्दा,

प्रार्थना और उल्लासके साथ उपवास शुरू हुआ। लम्बा चलने की सम्भावना है। तुम्हें चिन्ता न करके कार्य जारी रखना चाहिए। स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५४३१) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००२६ से भी

१४. तार : अब्दुल गफ्फार खाँको

राजकोट
३ मार्च, १९३९

खान साहब अब्दुल गफ्फार खाँ
चारसद्दा

ईश्वरके नामपर उपवास आरम्भ। हर्षका प्रसंग। मीराबाईका ध्यान रखें। खुदाई खिदमतगारोंको कताई तथा अन्य रचनात्मक कार्य करने चाहिए। स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य. प्यारेलाल

१. खान अब्दुल गफ्फार खाँ, जिन्हें सीमा प्रान्तमें खुदाई खिदमतगारोंको कताई सिखाने में मीराबहन सहायता दे रही थीं।

१५. तार : अमृतकौरको

राजकोट
३ मार्च, १९३९

राजकुमारी
मगनवाड़ी, वर्धा

उपवास बड़े आनन्दके साथ आरम्भ। लम्बा भी चल सकता है। तुम सबको काममें लीन रहना चाहिए। आशा है 'लोअर हाउस'[1] मजेमें होंगे। सप्रेम।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९०४) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७२१३ से भी

१६. तार : गोविन्ददासको

[३ मार्च, १९३९][2]

उपवास आरम्भ हो गया है। शीघ्र समाप्त होने की आशा नहीं है। त्रिपुरी आना असम्भव ही लगता है। खेद है।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ४-३-१९३९

१. हरमन कैलेनबैक, गांधीजी उन्हें 'लोअर हाउस' और खुदको 'अपर हाउस' कहते थे। देखिए खण्ड ५१, पृ० ८२।

२. उपवासके उल्लेखसे; देखिए पिछले तीन शीर्षक भी।

१७. पत्र : धर्मेन्द्रसिंहको[1]

राष्ट्रीय शाला, राजकोट
३ मार्च, १९३९

मेहरबान ठाकुर साहब,

आपका पत्र[2] पढ़कर दुःख हुआ। ऐसा नहीं लगता कि आपके लिए वचनकी कोई कीमत है। आपका आचरण तो उस मनुष्यके-जैसा है जो किसी बड़े दानका वचन देकर फिर अपना वचन-भंग करे। तारीख २६ दिसम्बर, १९३८ की अधिसूचनाके[3] द्वारा आपने प्रजाको कितना विशाल दान दिया था! उदारता राजवंशी राजकुमारोंका एक लक्षण है और आभूषण भी है। उस विज्ञप्तिके द्वारा आपने एक उदार दानकी घोषणा की थी। सुधार-समितिके सदस्योंके नामोंके चुनावका अधिकार त्याग देना उस अधिसूचनाका प्रधान स्वर था। और प्रस्तुत मामलेमें तो आपने परिषद्‌के प्रतिनिधि होने के नाते सरदारको एक खास पत्र[4] लिखकर अपना वह अधिकार उन्हें सौंप दिया है। आजका आपका यह पत्र उस दानको रद्द करता है। मेरी तो यह मान्यता है कि कलके मेरे पत्रमें बताई गई शर्तोंको स्वीकार करना आपके वचनके पालनके लिए जरूरी है। भगवान् आपको उन्हें स्वीकार करने की सद्‌बुद्धि दे।

खान साहबकी मारफत मैंने आपको जो सुझाव भेजे हैं, उन्हें कार्यान्वित करना आपके लिए उचित है। और चूंकि अब सत्याग्रह रोक दिया गया है, इसलिए सत्याग्रही कैदियोंको मुक्त कर देना आपका कर्त्तव्य है।

मोहनदासके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १२-३-१९३९

१. इस गुजराती पत्रका अंग्रेजी अनुवाद गांधीजी ने स्वयं किया था, जो *हरिजन* के ११-३-१९३९ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए परिशिष्ट १।

३. देखिए खण्ड ६८, पृ० १५०-१।

४. देखिए पृ० १५।

१८. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

३ मार्च, १९३९

एक तारके विषयमें, जो मुझे सेगाँवमें मिला था और राजकोट आते समय जारी की गई अपनी पहली प्रेस विज्ञप्तिमें[2] जिसका मैंने उपयोग किया था, लोगोंमें कुछ गलतफहमी है। इस विज्ञप्तिमें मैंने उक्त तारका उल्लेख करना आवश्यक नहीं समझा था। जब मेरा ध्यान इस तथ्यकी ओर खींचा गया तब यह बात मेरी समझमें तुरन्त आ गई कि इस विज्ञप्तिमें मुझे श्री नानालाल कालिदास जसानी रंगूनवालासे २४ फरवरीको प्राप्त उस तारका समावेश करना चाहिए था। तार इस प्रकार था:

> **राज्यने अम्बा, सरधार तथा राजकोट जेलोंमें मोहनभाई-गढ़डावालाको और मुझे सत्याग्रहियोंसे मिलने देने की हमारी प्रार्थना स्वीकार कर ली। कैदियोंको कुछ असुविधाएँ थीं, जिन्हें राज्यके अधिकारियोंने दूर कर दिया। सरधार और राजकोटकी जेलोंमें कैदियोंके साथ किये जानेवाले व्यवहारमें कोई फर्क नहीं किया जायेगा। सूचना देते हुए हर्ष होता है कि उपवास समाप्त हो गया है।**

पाठकोंको याद होगा कि [राज्यकी परिषद्के] प्रथम सदस्यसे प्राप्त एक तारमें इस तारका उल्लेख था और यह कहा गया था कि श्री नानालालसे प्राप्त तारसे विदित हो जायेगा कि उपवास अनुचित था।

यहाँ आने पर मुझे मालूम हुआ कि मैंने इस तारको उद्धृत नहीं किया, इस कारण लोगोमें यह अफवाह फैल गई है कि श्री नानालाल इस निर्णयपर पहुँचे थे कि उपवास उचित नही था। मुझे भेजे गये इस तारमें ऐसा कोई उल्लेख नही था कि उपवास अनुचित था। तारमें यह कहने की जरूरत नही थी कि उपवास उचित था, क्योंकि तारके प्रेषक और अन्य मित्र परिस्थितिको सुलझाने का उपाय ढूँढ़ रहे थे।

मेरे लिए इस गलतफहमीको दूर करना इसलिए जरूरी हो गया है कि वातावरण सन्देहका है और बहुत विक्षुब्ध है और ऐसा वातावरण सत्याग्रहकी क्रियाकी सफलतामें बाधक हो सकता है। अतः कार्यके हितकी दृष्टिसे मैं अपने साथियोंको

१. यह "ए मिसअण्डरस्टैंडिंग क्लियर्ड" (एक गलतफहमीका मार्जन) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। "डायरी ऑफ़ द फास्ट – २" (उपवासकी दैनन्दिनी–२) में प्यारेलाल बताते हैं कि कुछ पत्रकारोंसे गांधीजी की अनौपचारिक बातचीत हुई थी।

२. देखिए खण्ड ६८, पृ० ४९८-५०२।

सूचित कर देना जरूरी मानता हूँ कि ऐसे किसी सन्देहका कोई कारण नहीं है कि श्री नानालाल उपवासके बारेमें जल्दबाजीमें किसी निर्णयपर पहुँचे थे। उन्होंने इस मामलेमें हाथ डाला, इसका एकमात्र उद्देश्य यही आजमाना था कि वे कैदियोंका उपवास समाप्त कराने में सहायक हो सकते हैं या नहीं, और उनके प्रयत्नोंका जो नतीजा हुआ वह तो हम जानते ही हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-३-१९३९

१९. पत्र : बलवन्तसिंहको

३ मार्च, १९३९

बडे शब्दोके बीच ज्यादा अन्तर होना चाहीये। कैसे भी सुधारणा काफी हुई है। ऐसा ही चलता रहेगा तो अच्छा ही होगा। मेरी चली तो तुम सच्चे और कुशल गो सेवक होने वाले है।

यह खत[1] यहीं बारडोली होकर आज आया।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९१९) से

२०. तार : सी० एफ० एन्ड्रयूजको[2]

[३ मार्च, १९३९ या उसके पश्चात्][3]

सबकुछ ठीक-ठाक। चिन्ताका भाव नहीं रहना चाहिए। स्नेह।

मोहन

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-३-१९३९

१. बलवन्तसिंहने अपने इस पत्रमें गांधीजी से सुधार करने का अनुरोध किया था। यह पत्र गांधीजी ने उसीकी पीठपर लिख दिया था।

२. यह और अगला तार दोनों सी० एफ० एन्ड्रयूजके "ऑर्डियल बाई फायर" (अग्नि-परीक्षा) शीर्षक लेखसे उद्धृत हैं। सी० एफ० एन्ड्रयूजके अनुसार यह तार उन्हें दिल्लीके पतेपर पुनर्निर्दिष्ट होकर मिला था, क्योंकि जब यह बोलपुर पहुँचा उससे पहले ही वे वहाँसे चल चुके थे।

३. सी० एफ० एन्ड्रयूजके अनुसार, यह तार उन्हें अपने उस तारके उत्तरमें मिला था जो उन्होंने गांधीजी के उपवासका समाचार देनेवाला एक तार प्राप्त होने पर भेजा था।

२१. तार: सी० एफ० एन्ड्रयूजको[1]

[३ मार्च, १९३९ या उसके पश्चात्][2]

तुम्हारा आना अभी अनावश्यक। ठीक हूँ। स्नेह। महादेव तथा औरोंको भी बता दो।

मोहन

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-३-१९३९

२२. तार: रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

[४ मार्च, १९३९ या उसके पूर्व][3]

गुरुदेव

आपका स्नेहपूर्ण सन्देश मिला। अच्छी तरह हूँ। आशा है आप मेरे पास पहलेकी तरह दौड़े आने का विचार नहीं करेंगे। मैं जानता हूँ कि मुझे आपका आशीर्वाद और स्नेह प्राप्त है।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ५-३-१९३९

१ और २. देखिए पिछला शीर्षक। सी० एफ० एन्ड्रयूज बताते हैं: "मैंने उन्हें [गांधीजीको] रेल-यात्राके दौरान एक एक्सप्रेस तार देकर पूछा था कि मैं राजकोट आ जाऊँ या दिल्ली ही रहूँ। यह तार उसीके उत्तरमें भेजा गया था।"

३. यह तार दिनांक "शान्तिनिकेतन, ४ मार्च" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२३. तार : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

राजकोट
४ मार्च, १९३९

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी

अच्छी तरह और चुस्त-दुरुस्त हूँ। यह कदम अनिवार्य था।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०८८७) से। सौजन्य : सी० आर० नरसिंहन्

२४. तार : हरेकृष्ण महताबको

राजकोट
४ मार्च, १९३९

हरेकृष्ण महताब,[१] एम० एल० ए०
कटक

मेरी एक ही सलाह है कि अधिकाधिक निष्ठासे काम करते जाओ। फिर हमें शीघ्र ही मंजिल प्राप्त होगी।

बापू

[अंग्रेजीसे]

हरेकृष्ण महताब पेपर्स। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. उड़ीसा के मुख्य मन्त्री, १९४६-५० और १९५७-६१; भारत सरकारके वाणिज्य तथा उद्योग-मन्त्री, १९५०-५२; बम्बईके गवर्नर, १९५५-५६।

२५. तार : मीराबहनको

राजकोट
४ मार्च, १९३९

मीराबाई
मारफत बादशाह खान
चारसद्दा तहसील

अच्छी तरह हूँ। चिन्ता मत करना। खानसाहबको सूचित कर देना।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४३२) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० १००२७ से भी

२६. पत्र : ई० सी० गिब्सनको[1]

राष्ट्रीय शाला, राजकोट
४ मार्च, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

आज सुबह जब मैं जागा तो मेरे मनमें यह विचार आया था कि यहाँ जो-कुछ मैं लिखने जा रहा हूँ उसे लिखकर समाचारपत्रोंको भेज दूँ। फिर यह विचार आया कि नहीं, यह सब वाइसराय महोदयको[2] तारसे भेज दिया जाये। अन्तमें मैं इस सही निष्कर्षपर पहुँचा कि मेरे मनमें जो-कुछ है उसे आपको लिख भेजूँ और आपसे यह अनुरोध करूँ कि आपको जैसा ठीक लगे वैसी टिप्पणीके साथ उसे आप तारसे वाइसराय महोदयको भेज दें।

मुझे लगता है कि ठाकुर साहबको अपने दायित्वके प्रति सजग और विचार-शील शासक मानकर मैं, या इजाजत हो तो कहूँ कि हम सब, एक असत्यको प्रश्रय दे रहे हैं। यह बात मुझे तब महसूस हुई जब परसों मैंने उन्हें वह पत्र[3] भेजा

१. "द राजकोट फास्ट-३" (राजकोटका उपवास-३) (**हरिजन**, ८-४-१९३९) में प्यारेलाल बताते हैं कि बहुत शान्तिपूर्ण रात व्यतीत करने के बाद गांधीजी ने यह पत्र ५-३० पर लिखाया।

२. लॉर्ड लिनलिथगो

३. देखिए पृ० २-५।

जिसमें मैंने उन्हें अपने सुझाव दिये हैं। मैं नहीं जानता कि उन्हें वह पत्र पढ़ने भी दिया गया या नहीं और यदि दिया गया तो उन सुझावोंको वे पूरी तरह समझ भी पाये या नहीं। मैं ऐसी आशा कर रहा हूँ कि ठाकुर साहबके पिता और उनके पितामहसे मेरा अपना और मेरे पूर्वजोंका जो सम्बन्ध रहा है, वह उनमें कर्त्तव्यकी भावना जगा सकेगा। राजकोटके असली शासक तो दरबार वीरावाला हैं। जैसा कि मैंने ठाकुर साहबके नाम अपने पत्रमें कहा है, वीरावाला एकदम अविश्वसनीय व्यक्ति हैं। उन्हे पहली अधिसूचना[1] ही पसन्द नहीं है। उनसे बनता तो वे सुधार-समितिमें अपने नामजद सदस्योंको ही बहुमतमें भरकर उसे व्यर्थ कर देते। इस समय वे राज्यमें किसी सरकारी पदपर नहीं हैं, तो भी वे जो चाहते हैं वही होता है। वे लिखित आदेशतक जारी करते हैं और राजमहलमें उनका एक भतीजा है। वह एकमात्र ऐसा व्यक्ति है जो ठाकुर साहबके पास किसी भी समय पहुँच सकता है। जैसा कि आप जानते है, सर पैट्रिक कैडलका उनमें कोई विश्वास नहीं रह गया था और उन्होंने तो उनके राजकोटमें रहने या ठाकुर साहबसे किसी प्रकारका सम्बन्ध रखने का भी निषेध कर दिया था। शायद आप नहीं जानते होंगे कि पहले आन्दोलनके दिनोंमें कर्नल डैलीने उनके राजकोटमें प्रवेश करने पर उन्हें बहुत फटकारा था। राजकोटमें जैसी अराजकता है, उसकी कोई मिसाल मुझे और कहीं नहीं मिलती। मैं निश्चय ही ऐसा महसूस करता हूँ कि यह एक ऐसी स्थिति है जिसमें ठाकुर साहब द्वारा दिये गये वचनका पालन कराने के लिए अधीश्वरी सत्ताको अविलम्ब हस्तक्षेप करना चाहिए।

२६ दिसम्बरकी अधिसूचनाका यह एक हिस्सा है कि सुधार-समितिके निमित्त जिन गैर-सरकारी सदस्योंकी सिफारिश सरदार पटेल द्वारा की जाये, ठाकुर साहब उन्हे उक्त समितिमें मनोनीत कर दें। इसके सिवा, जैसा कि मैंने ठाकुर साहबके नाम अपने कलके पत्रमें[2] कहा है, ऐसी किसी सावधानीके बिना अधिसूचना कोरे कागजसे अधिक कुछ नहीं रह जायेगी। मैं इसके साथ ठाकुर साहबके पत्रकी[3] नकल और अपने जवाबके अनुवादकी नकल भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१३७) से। सौजन्य : द० बा० कालेलकर

१. २६ दिसम्बर, १९३८ की
२. देखिए पृ० १९।
३. देखिए परिशिष्ट १।

२७. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

४ मार्च, १९३९[2]

राजकोट दरबारकी विज्ञप्ति पढ़कर मुझे दुःख हुआ है। प्रकाशित दस्तावेजोंका जिन्होंने अध्ययन किया है, उन्हें मेरे इस विचारसे सहमत होने में कोई झिझक नहीं होगी कि विज्ञप्तिमें प्रश्नोंको टाला गया है और तथ्योंको खूब तोड़ा-मरोड़ा गया है। विज्ञप्तिकी विस्तारसे जाँच करने के लिए मुझमें न तो शक्ति है और न उसकी इच्छा ही है। परन्तु ठाकुर साहबके नाम मेरे पत्रमें और समाचारपत्रोंको दिये गये वक्तव्योमें जो एक बात मैंने छोड़ दी थी, उसका स्पष्टीकरण आवश्यक है। उसका सम्बन्ध मेरे तारोंमें उन अत्याचारोंके उल्लेखसे है जिनके कारण मुझे राजकोट आना पड़ा। वह बात इसलिए छोड़ दी गई थी कि मैं खान साहब और उनके मातहतोंके साथ, जिनपर सत्याग्रहियोंकी कार्रवाइयोंसे निपटने की मुख्य जिम्मेदारी है, पूर्ण न्याय करना चाहता था। परन्तु बजाय इसके कि उसे छोड़ देने की बातकी सराहना की जाती, उसे मेरे खिलाफ इस्तेमाल किया गया है।[3] इसलिए मैं सर्वसाधारणके आगे वास्तविक स्थिति रखने के लिए मजबूर हूँ।

दो जेलोंको देखने के बाद मैंने खान साहबको बताया था कि कैदियोंने जो बयान दिये उनका मुझपर बहुत असर पड़ा है। मैंने उनसे कहा कि मेरा मन कैदियोंके आरोपोंपर विश्वास करने को होता है, क्योंकि उनमें से कुछको मैं व्यक्तिगत रूपसे जानता हूँ और उनमें से बहुतोंकी समाजमें ऐसी स्थिति है कि उनके साक्ष्यपर, जबतक कि वह गलत सिद्ध न कर दिया जाये, विश्वास किया ही जाना चाहिए। इसलिए मैंने खान साहबसे कहा कि आरोप इतने गम्भीर है, इतने विविध है, और इतने व्यक्तियोंसे सम्बन्ध रखते हैं कि मेरे लिए रियासतके साथ न्याय करने का केवल यही एक मार्ग रह जाता है कि मैं एक निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा न्यायिक जाँचका सुझाव दूँ। जहाँतक उनका सवाल है, उन्होंने वह सुझाव तुरन्त स्वीकार कर लिया और मेरी प्रार्थनापर न्यायिक जाँचके लिए कई अंग्रेज अधिकारियोंके नामतक सुझाये। और हममें यह तय हुआ था कि मैं एक आरोप-पत्र तैयार करूँ, जिसका

१ और २. यह वक्तव्य "एन अनकाइंड कट" (एक निर्मम आघात) शीर्षकसे "राजकोट दरबारकी इसी ५ तारीखकी विज्ञप्ति पर" गांधीजी की टिप्पणी के रूपमें प्रकाशित हुआ था। लेकिन "द राजकोट फास्ट-३" (राजकोटका उपवास-३) में प्यारेलालने इसका उल्लेख ४ मार्चकी घटनाओंके साथ किया है।

३. प्यारेलाल के अनुसार, इस बातको "तोड़-मरोड़कर" इसका "अर्थ यह लगाया गया" था कि "गांधीजी ने राजकोटमें जो जाँच की और खुद जो निरीक्षण किया उससे उन्हें यह विश्वास हो गया कि 'ये आरोप झूठे हैं।' साथ ही गांधीजी पर यह आरोप भी लगाया गया कि इन तीनों आरोपोंके सम्बन्धमें उन्होंने खेद प्रकट नहीं किया।"

वे जाँच करके उत्तर देंगे। उधर अपनी तरफसे, वे एक जवाबी आरोप-पत्र तैयार करेंगे, जिसका मैं जाँच करके उत्तर दूँगा। इस प्रक्रियाके पूरी हो चुकने और जिन आरोपोंके विषयमें पारस्परिक सहमति हो उन्हें छोड़ देने पर यदि कुछ बच रहेंगे तो वे न्यायाधिकरणको सौंप दिये जायेंगे।

खान साहब ने मुझसे यह भी पूछा था कि वे सत्याग्रहियोंके विरुद्ध सफेद झूठ बोलने का जो आरोप लगाना चाहते हैं, यदि वह सच निकला तो मैं क्या हरजाना दूँगा। मैंने कहा था कि यदि सत्याग्रहियोंका कोई प्रतिनिधि झूठ बोलने का दोषी पाया गया तो मैं इस संघर्षसे पूर्णतया अलग हो जाऊँगा और, जहाँतक मेरा सवाल है, मैं झूठ बोल सकनेवाले व्यक्तियोंकी उत्तरदायी सरकारकी माँगको खत्म हुआ मानूंगा। मैंने निःसंकोच जिस हरजानेका प्रस्ताव रखा उससे खाँ साहब पूर्णतया सन्तुष्ट नजर आये।

मैं जिस अग्नि-परीक्षामें से गुजर रहा हूँ, यदि उसमें से जीवित बाहर आ सका तो खान साहबको दिये गये अपने वचनको पूरा करने की आशा रखता हूँ। बिस्तरेपर बीमार पड़ा-पड़ा भी मैं साक्ष्य इकट्ठे करवा रहा हूँ और जो इकट्ठे हो चुके हैं उनका मिलान कर रहा हूँ। पीड़ितो और अन्य लोगोके १७५ से भी अधिक बयान मेरे सामने हैं।

मेरे विरुद्ध विश्वासघातका आरोप एक निर्मम आघात है। अपने उपवासको मैं अपने कार्यका अंग मानता हूँ। इसके अन्तमें चाहे जो हो, पर उससे शान्तिकी स्थापना होगी। बातचीत टूटने का विकल्प संघर्षका फिरसे छिड़ जाना होता जिससे विग्रह और कटु हो जाता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-३-१९३९

२८. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

राजकोट
४ मार्च, १९३९[2]

मेरे शरीरमें कुछ शक्ति शेष है, इसी बीच उन भाइयो और बहनोके प्रति अपना आभार प्रकट कर देना चाहता हूँ जो मुझपर प्रेमपूर्ण सन्देशोंकी वर्षा करते रहे हैं। मैं जानता हूँ कि जो बात होनी उचित है वह हो, इसके लिए बहुत-से हृदय प्रार्थनारत हैं। जिस ईश्वरके नामपर यह उपवास आरम्भ किया गया है वही भारतको और अधीश्वरी सत्ताको सन्मार्गपर चलायेगा। लेकिन यह सन्देश तो मैं कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओंको यह चेतावनी देने के लिए लिखा रहा हूँ कि वे त्रिपुरीको

१ और २. यह वक्तव्य "द वन ऐंड ओनली टास्क" (एक और केवल एक कर्तव्य) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। समाचारकी तिथि-पंक्ति "राजकोट, ६ मार्च" थी। "द राजकोट फास्ट-३" में प्यारेलाल लिखते हैं कि यह वक्तव्य गांधीजी ने ४ मार्चकी शामको ६ बजे लिखवाया था।

न भूल जायें। त्रिपुरी जाने के लिए मनुष्यके लिए जहाँतक सम्भव था, वहाँतक हर कोशिश करके मैंने देख ली। लेकिन ईश्वरकी इच्छा कुछ और ही थी। त्रिपुरी जाना जिनका कर्त्तव्य है उन्हें वहाँ निःसंकोच अधिवेशनमें शरीक होना चाहिए और उनके सामने जो कठिनाइयाँ आयें उनमें से रास्ता निकालने का संयुक्त प्रयत्न करना चाहिए।

मैंने सुभाषबाबू से अनुरोध किया है कि वे डॉक्टरोंकी सलाहकी उपेक्षा न करें, बल्कि विनम्रतापूर्वक उसे स्वीकार करके कलकत्तामें बैठे-बैठे ही अधिवेशनकी कार्यवाहीका नियमन करें।

मेरी रायमें तो कांग्रेसके सामने आज एकमात्र कार्य यही है कि उसके अपने ही घरमें जो गन्दगी और सड़ाँध असन्दिग्ध रूपसे पैदा हो गई है, वह उसे साफ करने के प्रयत्नमें पूरे प्राणपणसे जुट जाये। कांग्रेस चाहे जितने कड़े प्रस्ताव पास करे, लेकिन अगर उनपर अमल कराने के लिए सर्वथा शुद्ध और निष्कलंक संगठन न होगा तो वे प्रस्ताव किसी कामके साबित नहीं होंगे। मैं अपने बिस्तरपर लेटे-लेटे यही प्रार्थना करूँगा कि गत बावन वर्षोंमें भगीरथ प्रयत्न करके कांग्रेसकी जो प्रतिष्ठा बनाई गई है, कांग्रेसी लोग पूरी चौकसीसे उसकी रक्षा करेंगे।

अखिल भारतीय चरखा संघ और अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ, जो कांग्रेसके उपांग हैं, व्यवहारतः उससे अलग और स्वतन्त्र हैं और वे [कांग्रेसकी] आन्तरिक राजनीतिके स्पर्शसे बचे हुए हैं। लेकिन जो भ्रष्टाचार कांग्रेस संगठनमें घुस आया है उसका असर उनपर भी हो सकता है।[1] मैं आशा करता हूँ कि हर वर्षकी तरह इस बार भी हजारों लोग इसमें उपस्थित होंगे। तमिलनाडु, बिहार और हिसारने यह बात निर्विवाद रूपसे सिद्ध कर दी है कि खादी न केवल गाँवों और ग्रामोद्योगोंको नवजीवन प्रदान करती है, बल्कि यह दुर्भिक्षके खिलाफ भी सबसे अच्छा सुरक्षात्मक उपाय है। अखिल भारतीय चरखा संघने कतैयोंकी मजदूरीमें जो भारी वृद्धिकी है उससे भारतकी लाखों-करोड़ों ग्रामवासिनी बहनोंको एक नई आशाका सन्देश मिला है। वे काम माँगने के लिए चरखा संघके केन्द्रोंमें झुण्ड बाँध-बाँधकर जाती हैं, लेकिन उधर अनबिकी खादीके ढेर पड़े हुए हैं। क्या कांग्रेसी और अन्य लोग खादी-भण्डारोंको इन कपड़ोंके बोझसे छुटकारा दिलाकर अ० भा० च० सं० को यह सामर्थ्य प्रदान नहीं करेंगे कि नई मजदूरी-योजनाके अन्तर्गत, जो अप्रत्याशित रूपसे सफल रही है, कातने को उत्सुक सभी स्त्रियोंको वह काम दे सके? यहाँ भी हम स्वयं अपने प्रति तथा जिन करोड़ों मूक मानवोंकी सेवाके लिए इन दो संघोंकी स्थापना की गई है उनके प्रति अपना धर्म निभायें। यदि उचित-अनुचितकी परवाह न करनेवाले लोग ऐसी खादी या ग्रामोद्योगकी चीजें, जिन्हें तैयार करवाने के लिए कारीगरों और मजदूरोंको इतनी कम मजदूरी दी गई हो कि उन्हें भूखों मरना पड़ रहा हो, बेचते हैं तो मजदूरी-योजना सफल नहीं हो सकती। इससे बचने का एक ही

१. यह वाक्य *हिन्दू*से लिया गया है। *हरिजन* में यहाँ इस प्रकार है: "जो भ्रष्टाचार संगठनमें घुस आया है उसका असर कांग्रेसपर भी हो सकता है।"

तरीका है। वह यह है कि लोग विधिवत् प्रमाणित भण्डारोंके अलावा और कहींसे या किसीसे खादी या ग्रामोद्योगकी वस्तुएँ बिलकुल खरीदें ही नहीं।

मेरे उपवाससे त्रिपुरीमें एकत्र होनेवाले कांग्रेसियोंका मन विह्वल नहीं होना चाहिए। लेकिन यदि हमें सत्य-अहिंसामय उपायोंसे अपनी मुक्ति प्राप्त करनी है तो तफसीलकी छोटी-छोटी बातोंका भी खयाल रखना आवश्यक है। लोगोंके असीम प्रेमको मैं अपने लिए बहुत कीमती मानता हूँ, लेकिन वे भी यह समझ लें कि यदि मेरी जिन्दगी बचाने की आतुरतामें उनका ध्यान मुख्य ध्येयसे भटक जाये तो उस जिन्दगीको बचा रखने में कोई सार नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-३-१९३९; और हिन्दू, ५-३-१९३९

२९. पत्र : कस्तूरबा गांधीको[1]

४ मार्च, १९३९

'तुम बेकार चिन्तित हो। तुम्हें खुशी होनी चाहिए कि ईश्वरने मुझे मौका दिया है कि मैं उसकी इच्छा पूरी करूँ। जब मैं खुद ही नहीं जानता था कि मुझे उपवास करना होगा तब उसे शुरू करने से पहले मैं तुझसे या किसी दूसरेसे विचार-विमर्श कैसे कर सकता था? ईश्वरने मुझे संकेत दिया और उसका पालन करने के सिवाय मेरे पास कोई चारा नहीं था। जब कालका अन्तिम बुलावा, जिसे एक-न-एक दिन आना ही है, आयेगा तब क्या तुझसे या किसी दूसरेसे विचार-विमर्श करने के लिए रुकने का मुझे कोई अवसर मिलेगा?'[2]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-४-१९३९

१. "द राजकोट फास्ट–३" से उद्धृत। प्यारेलाल बतलाते हैं कि सायंकाल डॉ० सुशीला, विजयाबहन और नारणदास गांधी कस्तूरबासे मिले "उस समय वे बहुत चिन्तातुर थीं। उन्होंने गांधीजी को एक पत्र लिखा था, जिसमें इस बातके लिए मीठी फटकार दी थी कि उपवास शुरू करने से पहले उन्होंने उनसे पूछा तक नहीं।"

२. प्यारेलाल आगे बताते हैं: "डॉ० सुशीलाने कस्तूरबाको एक मौखिक सन्देश भी दिया, जो गांधीजी ने उन्हींकी मारफत भेजा था। सन्देश यह था कि क्या गांधीजी राज्यके अधिकारियोंसे कस्तूरबाको उनके साथ रहने देने का निवेदन करें। कस्तूरबाने बेझिझक जवाब दिया कि 'नहीं, कभी नहीं। मुझे अगर वे प्रतिदिन उनकी कुशल-क्षेम जान लेने दें तो मेरे लिए इतना ही काफी होगा। जिस ईश्वरने हर परीक्षाके अवसरपर उनकी रक्षा की है वही इस बार भी उनकी हिफाजत करेगा। लेकिन इस तरह बार-बार खतरा मोल लेना क्या ठीक है?' जब यह बात गांधीजी को बताई गई तब उन्होंने कहा: 'हाँ, यह हो सकता है। लेकिन आध्यात्मिक उपवासका औचित्य उसके परिणामसे नहीं सिद्ध होता है, बल्कि जिस प्रभु की इच्छाकी वह अभिव्यक्ति होती है उसकी इच्छाको निस्संकोच और प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करने से सिद्ध होता है। यदि अपने उच्चतम कर्तव्यके निर्वाहमें मृत्यु प्राप्त हो तो वह भी स्वागत-योग्य है'।"

३०. पत्र : मणिबहन पटेलको

राजकोट
५ मार्च, १९३९

चि० मणि,

तू क्यों परेशान होती है? इस तरहके अनुभव क्या तेरे लिए नये हैं? इस मामलेमें तो तू मेरी आशासे आगे बढ़ गई है। मैं अपने-आप आया हूँ। धर्म समझकर आया हूँ। ईश्वरकी प्रेरणासे आया हूँ। तू जरा भी दुःखी न होना। मैं आजकल किसीको पत्र नहीं लिखता। एक बा को लिखा था,[1] और यह तुझे लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

श्री मणिबहन पटेल
कैदी
फर्स्ट मेम्बरके मारफत
राजकोट

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने, पृ० १२५

३१. तार : महादेव देसाईको[2]

राजकोट
६ मार्च, १९३९

महादेव देसाई
बिड़ला भवन
नई दिल्ली

गिब्सनको लिखे पत्रके अर्थ ये हैं कि वीरावालाको हटा देना चाहिए, ठाकुर साहबसे मेरी शर्तोंपर या किसी भी अन्य स्वीकार्य शर्तपर हस्ताक्षर करवाये जायें और जबतक सुधरे हुए संविधानको लागू नहीं

१. देखिए पिछला शीर्षक। लेकिन कस्तूरबा गांधीको पत्र ४ मार्चको लिखा गया था।

२. हरिजनके १५-४-१९३९ के अंकमें "द राजकोट फास्ट–४" (राजकोटका उपवास–४) में प्यारेलालने लिखा है: "महादेव देसाईके एक तारके उत्तरमें गांधीजी ने श्री गिब्सनको ४ मार्चको लिखे अपने पत्रका मर्म लिखकर भेजा।" देखिए पृ० २४-५।

किया जाता तबतक छब्बीस दिसम्बरकी अधिसूचनाकी भावनाके अनुसार प्रशासन चलाने के लिए एक नया और अच्छा दीवान या परिषद् नियुक्त की जाये। वैकल्पिक उपाय यह है कि यदि अधीश्वरी सत्ता छब्बीस दिसम्बरकी अधिसूचनाके अनुसार ऐसा संविधान प्रदान करने का आश्वासन दे दे जो संविधानशास्त्रियोंको सन्तुष्ट कर सके तो मैं ऊपर सुझाये गये तरीकेसे नियुक्त किये गये नये अन्तरिम प्रशासन द्वारा निष्पक्ष ढंगसे चुनी गई किसी भी समितिको स्वीकार कर लूंगा। एक दूसरा विकल्प यह है कि मैं वाइसराय द्वारा नियुक्त किसी अन्य सदस्य — उदाहरणके लिए श्री गिब्सन — के साथ काम करूँ और हम दोनोंमें मतभेद होने पर मामला किसी तीसरेके सामने रखा जाये। मैं नहीं समझता कि वह स्थिति आवश्यक है जो 'स्टेट्समैन' ने सुझाई है। अधिकारोंको कम करना आवश्यक है।

बापू

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१३४) से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर। गांधी निधि फाइल (अगस्त, १९७६) से भी; सौजन्य: गांधी राष्ट्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३२. तार: जॉर्ज एस० अरुंडेलको

[६ मार्च, १९३९][1]

आपके तारके[2] लिए धन्यवाद। यदि मेरा उपवास जैसा कि मैंने दावा किया है ईश्वरीय प्रेरणासे किया गया हो तो वह आतंकवाद नहीं हो सकता। यदि वह मात्र मेरी कल्पनाकी उपज है तो मेरा जीवन ऐसा नहीं है जिसके लिए प्रार्थना की जाये या जिसे बचाया जाये। ठाकुर साहबसे अपना वचन निभाने को कहकर मैं उनसे अपने सिद्धान्त त्यागने को नहीं कहता। मैं समझता हूँ कि मुझमें इतना साहस है कि यदि मैं कोई ऐसा दोष देखूं जिससे उपवास तोड़ना जरूरी लगे तो मैं उसे तोड़ दूंगा। यदि आपने सभी तथ्योंका अध्ययन किया होता तो शायद आपने मेरे कामको वैसा नहीं चित्रित किया होता जैसा किया है।

१. "द राजकोट फास्ट-४" (राजकोटका उपवास-४) से

२. ४ मार्चका। प्यारेलालके अनुसार अरुंडेलने गांधीजी से पूछा था कि क्या उनका उपवास हिंसाके बराबर ही नहीं है, क्योंकि उसका कुल परिणाम ठाकुर साहबको या तो अपने सिद्धान्त छोड़ने को मजबूर करना या गांधीजी की मृत्युका दायित्व अपने सिर लेकर भारतीयोंमें घृणाका सबसे बड़ा पात्र बनकर जीना था। अन्तमें उन्होंने गांधीजी से उपवास तोड़ने का अनुरोध किया था, ताकि भारतको उनकी सेवाका लाभ मिलता रहे और ठाकुर साहबके सम्मानकी भी रक्षा हो सके।

फिर भी मैं आपको तथा आपके साथियोंको स्पष्टवादिताके लिए धन्यवाद देता हूँ। आपने इस प्रश्नको सार्वजनिक चर्चाका विषय बना दिया है। यदि मेरे जवाबके बावजूद आप अपनी राय कायम रखते हैं तो अपना तार मेरे जवाबके साथ प्रकाशित करना आपके लिए जनसेवा होगी। मेरे लिए सत्यके सिवा कोई दूसरा ईश्वर नहीं है जिसकी सेवा करूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ९-३-१९३९

३३. पत्र : ई० सी० गिब्सनको

राष्ट्रीय शाला, राजकोट
६ मार्च, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

इसी तारीखके आपके पत्रके[1] उत्तरमें क्या आप परमश्रेष्ठको निम्नलिखित तार भेजने की कृपा करेंगे?

"आपके तारके लिए मैं आपका आभारी हूँ। मैं अपने कार्य, विशेषकर अपने उपवास, कभी भी यान्त्रिक ढंगसे नहीं करता हूँ। वे अन्तरात्माकी प्रेरणापर ही किये जाते हैं। उपवासकी प्रेरणा एक आपात् स्थितिका सामना करने के लिए मिली। प्रतीक्षा की नही जा सकती थी और न किसीसे परामर्श ही किया जा सकता था। जहाँतक पुलिसकी ज्यादतियोंका सवाल है, अपने निरीक्षणोंसे मैं इस विचारपर पहुँचा हूँ कि वे मेरी आशंकासे भी कहीं ज्यादा रही हैं। इसके अलावा, जहाँतक मैं समझ सका हूँ कानून और नियमोंका भी घोर उल्लंघन हुआ है। आपका ध्यान मैं इस विषयपर समाचारपत्रोंको दिये गये अपने वक्तव्यकी[2] ओर आकर्षित करना चाहता हूँ। परन्तु उपवास उनके कारण शुरू नही हुआ। निर्णायक कारण वचनको तोड़ना था। यदि मुझे आपका यह स्पष्ट आश्वासन मिल जाये कि ठाकुर साहबके नाम इसी ३ तारीखके मेरे पत्रमें[3] जो शर्तें हैं उनके सारकी पूर्ति कर दी जायेगी, तो मैं खुशीसे उपवास तोड़ दूंगा। निकट भविष्यकी अनिश्चितताकी तुलनामें उपवासका कष्ट कुछ नही है। मैं कोई जोखिम नही उठा सकता। राजकोटमें अराजकता है। यदि वह कहानी सुनाने के लिए मैं जीवित रहा तो उसे सुनाऊँगा। दरबार वीरावालाको हटाया जाना चाहिए। ठाकुर साहब तो शून्य हैं। वे शासन नही करते। दरबार वीरावालाकी इच्छा ही कानून है। एक सहानुभूतिशील दीवान नियुक्त किया जाना

१. देखिए परिशिष्ट २।
२. देखिए पृ० १५-६।
३. देखिए पृ० २-५। यह पत्र अखबारोंको प्रकाशनार्थ ३ मार्चको दिया गया था।

चाहिए, जिसे किसी कागजपर ठाकुर साहबके हस्ताक्षरोंकी जरूरत न हो। कैदी मेरे राजकोटसे जाने से पहले ही रिहा होने चाहिए। जो बातें मैंने राजकोटमें देखी हैं और रोज देख रहा हूँ वैसी मैंने कभी नहीं देखी हैं। मेरा उपवास खत्म कराने की आपकी चिन्ताकी मैं सराहना करता हूँ। आपके लिए मेरे मनमें बड़ा आदर है। मैं समझता हूँ कि हमारे बीच सहानुभूतिका एक नाता है। मैं यह भी महसूस करता हूँ कि आपके वचनपर मैं भरोसा कर सकता हूँ। परन्तु आपके कृपापूर्ण सुझावका यदि मैं तुरन्त अनुकूल उत्तर नहीं देता हूँ तो आप यह जानते हैं कि जान-बूझकर किये गये वचन-भंगको और सन्तापके इन दिनोंमें जो कलुषित बातें मेरी नजरमें आई हैं उन्हें मैं कितना गम्भीर मानता हूँ।"[1]

यह मेरा मौन-दिवस होने से मैं इस पत्रको बोलकर नहीं लिखवा सकता था। मैं इसे विस्तरपर लेटे-लेटे लिख रहा हूँ। पर आप इसे आसानीसे पढ़ सकें, इसलिए मैं मिस हैरिसनसे इसे टाइप करने को कह रहा हूँ। टाइप की हुई प्रति इसके साथ रहेगी। मिस हैरिसन इसे आपके पास ले जायेंगी।

मैं जानता हूँ कि ये दिन आपके लिए कितनी चिन्ताके हैं। इसका कारण अनजाने मैं हूँ, मुझे इसका खेद है।

हृदयसे आपका,

पुनश्च :

इसे समाप्त करने के बाद मैंने मिस हैरिसनके नाम आपका नोट देखा। आज रात ८ बजे, जब मेरा मौन समाप्त होना है, यदि वह समय आपको सुविधाजनक हो तो, मुझे आपसे मिलकर खुशी होगी।

मो० क० गां०

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१३९)से। सौजन्य : द० बा० कालेलकर

३४. पत्र : नारणदास गांधीको

६ मार्च, १९३९

चि० नारणदास,

कनैयाके हिसाब रखने की पद्धतिकी जाँच करो, हिसाबके विशेषज्ञके रूपमें उसपर रिपोर्ट पेश करो, और चाहो तो कनैयाको हिसाबका ज्ञान कराओ। शालामें दीवारें और दरवाजे गन्दे हैं, उनमें जाले लगे हैं। उन्हें धुलवाना चाहिए और जाले वगैरह साफ करवाने चाहिए।

१. वाइसरायके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ३।

दीवारोंको ४ या ५ फुट ऊपरतक धुलवाना चाहिए। कलसे ही काम शुरू कर देना।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५५६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३५. बातचीत : अगाथा हैरिसनसे[1]

राजकोट
६ मार्च, १९३९

किसी-न-किसी तरह मैं मनुष्यकी आन्तरसत्तामें निगूढ़ उसके श्रेष्ठ अंशको प्रकट करने में सफल हो जाता हूँ, और यही बात है जो ईश्वर और मनुष्य-स्वभावमें मेरा विश्वास बनाये हुए है।

काठियोंकी भूमि काठियावाड़को मैं जानता हूँ। काठियावाड़ी बड़े बहादुर योद्धा है, लेकिन उनमें षड्यन्त्र और भ्रष्टाचारका बोलबाला है। इस महागन्दगीको दूसरोंके लिए स्वयं प्रायश्चित्त किये बगैर मैं कैसे साफ कर सकता हूँ? जैसा मैं होना चाहता हूँ वैसा अगर मैं होता तो उपवासकी कोई जरूरत न होती, किसीके साथ दलील करने की भी जरूरत न होती। तब तो मेरी बात सीधे दिलमें उतर जाती। बल्कि, मुझे मुँहसे कुछ कहने की भी जरूरत न होती। इच्छा-मात्रसे वांछित प्रभाव पड़ जाता। लेकिन मुझे अपनी मर्यादाओंका दुःखद भान है, इसीलिए अपनी बात सुनाने के लिए मुझे यह सब करना पड़ रहा है।

दूसरा रास्ता, यानी सत्याग्रहका रास्ता, मैंने जान-बूझकर इस मामलेमें त्याग दिया है, क्योंकि जहाँतक मैं देख सकता था, मुझे यही जान पड़ा कि मौजूदा परिस्थितियोंमें सत्याग्रह जिन लोगोंके हाथमें सत्ता है, उनकी पाशविक वृत्तियोको, हिंसाको और अधिक जाग्रत करेगा। इसके विपरीत, सत्याग्रहीका उद्देश्य तो हमेशा यह रहता है कि हरएकके अन्दर जो पशु है उसे सुला दे। मैंने खुद प्रायश्चित्त करके प्रजाको कष्ट उठाने से बचा लिया है। अगर सत्याग्रह फिरसे शुरू कर दिया जाता, तो प्रजाको अनिवार्यतः कष्ट उठाना पड़ता।

सिवा एक अवर्णनीय शान्ति और आध्यात्मिक आनन्दके मेरे मनमें और कुछ भी नहीं है। किसी भी मनुष्यके प्रति मेरे हृदयमें दुर्भावका नाम भी नहीं है। मैं निरन्तर प्रयत्न कर रहा हूँ कि मेरे मनमें कोई खीझ या उत्तेजनाका भाव पैदा न हो। मेरे हृदयमें तो वीरावालातक के लिए सद्भावना उमड़ रही है। मेरा

१. प्यारेलालके "द राजकोट फास्ट–४" (राजकोटका उपवास–४) से उद्धृत यह बातचीत गिब्सनके साथ गांधीजी की चर्चाके बाद हुई थी।

उपवास तभी सार्थक माना जायेगा, जब यह वीरावाला तथा ठाकुर साहबको अपनी जिम्मेदारीके प्रति जाग्रत कर दे। और, अगर वाइसराय अन्तमें मेरी माँगको अस्वीकार करने का निर्णय करें, तो मेरे दिलमें उनके लिए कोई गलतफहमी नहीं होगी। मैं यह जानता हूँ कि अंग्रेजोंके लिए उपवासके मार्गका अर्थ ठीक-ठीक समझना कितना कठिन है।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-४-१९३९

३६. तार : शंकरलाल बैंकरको

[६ मार्च, १९३९ या उसके पश्चात्][2]

शंकरलाल बैंकर
प्रदर्शनी
त्रिपुरी

जवाहरलालने प्रदर्शनीके उद्घाटनके अवसरपर जो भाषण दिया है वह सीधे पूना भेज दो[3] और एक प्रतिलिपि दिल्ली भी।[4]

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

३७. पत्र : ई० सी० गिब्सनको

राष्ट्रीय शाला, राजकोट
७ मार्च, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

आपका कृपापूर्ण पत्र मिला। उसके कुछ मुद्दोंका मैं स्पष्टीकरण चाहता था, इसलिए आपने मेरे पास आकर और उनपर बातचीत करके बहुत ही अच्छा किया। चूँकि अपनी वर्तमान दशामें मैं अपनी शक्ति बचाकर रखना चाहता हूँ इसलिए अब

१. अगाथा हैरिसनके साथ इससे पिछली सुबहकी एक अन्य बातचीतके वृत्तान्तके लिए देखिए परिशिष्ट ४।

२. ६ मार्च, १९३९ को त्रिपुरीमें खादी प्रदर्शनीके उद्घाटनके अवसरपर दिये गये जवाहरलाल नेहरूके भाषणके उल्लेखसे।

३. सम्भवतः हरिजनमें और उसके दूसरी भाषाओंमें प्रकाशित होनेवाले अंकोंके लिए। भाषणका संक्षिप्त अंग्रेजी पाठ १८-३-१९३९ के हरिजनमें प्रकाशित हुआ था।

४. गांधीजी उपवासके बाद दिल्ली जाना चाहते थे; लेकिन वे १५ मार्चको वहाँ पहुँचे।

मैं उन्हें यहाँ लिपिवद्ध नही कर रहा हूँ। आपसे प्रार्थना है कि कृपया निम्नलिखित सन्देश वाइसराय महोदयको तारसे भेज दें:

"तुरन्त उत्तर[1] देने के लिए मै आपका आभारी हूँ; उत्तर मुझे आज १०-४५ पर दिया गया है। यद्यपि स्वभावत: इसमें कई बातें अनकही रह गई है, फिर भी आपके कृपापूर्ण सन्देशको मै उपवास तोड़ने और उन लाखों लोगोंकी दुश्चिन्ताको दूर करने के लिए पर्याप्त आश्वासन मानता हूँ जो समझौता शीघ्र हो इसके लिए प्रार्थनाएँ और यथाशक्ति प्रयत्न कर रहे है।

मेरे लिए यह कहना उपयुक्त ही होगा कि जिन बातोंका आपके सन्देशमें उल्लेख नही किया गया है वे मैंने छोड़ी नही है और मै अपेक्षा रखता हूँ कि उनपर मुझे सन्तोष मिलेगा। लेकिन उनपर परस्पर विचार-विमर्शकी प्रतीक्षा की जा सकती है।

डाक्टर जैसे ही मुझे दिल्लीकी यात्राकी अनुमति देंगे, मैं वह करूँगा।

जिसके कारण उपवासकी जरूरत पड़ी, आपने उस मामलेपर इतनी जल्दी और इतनी सहानुभूतिसे विचार किया, इसके लिए मैं आपको एक बार फिर धन्यवाद देता हूँ।

आशा है कि कैदी आज यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र रिहा कर दिये जायेंगे।

उपवास तोड़ने से पहले मै प्रकाशनके बारेमें आपके उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।[2]

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१४१) से। सौजन्य: द० वा० कालेलकर

१. देखिए परिशिष्ट ३। "द राजकोट फास्ट-४" (राजकोटका उपवास-४) में प्यारेलाल बताते हैं, "पुर्जा ध्यानसे पढ़ने के बाद" गांधीजी ने कहा: "यह उपवास तोड़नेका आधार प्रस्तुत करता तो अवश्य जान पड़ता है, लेकिन मुझे श्री गिब्सनसे कुछ बातें स्पष्ट करवा लेनी चाहिए।" गिब्सन दिनमें ११-३० पर आये और उन्होंने गांधीजी से २० मिनटतक एकान्तमें बातचीत की।

२. प्यारेलाल आगे लिखते हैं कि गिब्सन द्वारा उसी दिन भेजा गया उत्तर दिनके दो बजे प्राप्त हो गया। उत्तर इस प्रकार था: ". . . ठाकुर साहब कैदियोंकी रिहाईके लिए अविलम्ब आदेश जारी कर रहे हैं। मैं. . . आपके इस निर्णयकी सराहना करता हूँ कि आप प्रकाशनके लिए सिर्फ आजके ही पत्र दे रहे हैं, जिनमें आपके नाम वाइसरायका पिछला सन्देश और आपका उत्तर शामिल हैं।. . . परमश्रेष्ठ स्वीकार करते है कि अब ये प्रकाशनार्थ दिये जा सकते हैं।" (सी० डब्ल्यू० १०१४२)

३८. वक्तव्य: समाचारपत्रोंको[1]

७ मार्च, १९३९

मेरी रायमें अनशनका यह उत्तम अन्त करोड़ोंकी प्रार्थनाका परिणाम है। मैं अपने इन करोड़ों देशवासियोंको पहचाननेका दावा करता हूँ। चौबीसों घंटे मैं उनके साथ रहता हूँ। उनकी हिमायत करना मेरा पहला और आखिरी काम है, क्योंकि मैं और किसी ईश्वरको नही, सिर्फ उस ईश्वरको मानता हूँ जिसका निवास करोड़ोंके मूक हृदयोंमें है। वे लोग ईश्वरकी मौजूदगी नही पहचानते; मैं पहचानता हूँ। और मैं इन करोड़ोंकी सेवा द्वारा सत्यरूपी ईश्वरकी या ईश्वररूपी सत्यकी पूजा करता हूँ।

मैं जानता हूँ कि इनके अलावा भी मुझे संसार-भरमें फैले हुए अन्य अनेक लोगोंकी प्रार्थना और सहानुभूति प्राप्त थी। साथ ही बुद्धिजीवी समाज भी निरन्तर यह प्रयत्न करता रहा कि सम्मानपूर्ण समझौता हो जाये और इस अनशनका शीघ्र ही अन्त हो। अंग्रेजोंने भी वैसा ही सहयोग दिया, जैसा कि हिन्दुस्तानियोंने। राजनीतिक दृष्टिसे तो इस समझौतेका श्रेय वाइसराय महोदयको है।

मैं जानता हूँ कि अंग्रेज लोग अनशनके तरीकेको नही समझते, खासकर जब वह एक पूर्णत. राजनीतिक दिखनेवाले प्रश्नपर किया जाता है। वे अकसर इस तरीकेपर चिढ़ भी महसूस करते हैं। मुझे यह भी मालूम है कि ऐसे हिन्दुस्तानी भी हैं, जो अनशनके तरीकेकी कद्र नही करते। मुझे उम्मीद है कि जब शक्ति आ जायेगी, तब मैं इस तरीकेके विषयमें[2] विस्तारसे लिखूँगा, क्योंकि पिछले ५० वर्षोंके अनुभवने मुझे कायल कर दिया है कि सत्याग्रहके कार्यक्रममें अनशनका एक निश्चित स्थान है।

मैं यहाँ अनशनका जिक्र कर रहा हूँ, इसका कारण यह है कि वाइसरायने जिस सद्भावका परिचय दिया है उसकी मैं पूरी कद्र करना चाहता हूँ। वे अंग्रेजोंके मानसका प्रतिनिधित्व करते हैं। वे कह सकते थे —और मैं उनके इस कथनको औचित्यपूर्ण मानता — कि 'मैं इस आदमीके कामोंको नहीं समझता। इसके अनशनोंका तो कोई अन्त ही नही दिखाई पड़ता। कही-न-कही कोई अन्त होना चाहिए। वह

१. यह वक्तव्य "ए गुड ऐंडिंग" (शुभ अन्त) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। प्यारेलालने "द राजकोट फास्ट-४" (राजकोटका उपवास-४) में लिखा है: "उपवास दिनमें २-२० पर, ऐसे अवसरों पर जो औपचारिकताएँ निभाई जाती हैं, उनके साथ तोड़ा गया। २-३० से ३-२० तक गांधीजी ने समाचारपत्रोंके लिए एक लम्बा वक्तव्य बोलकर लिखवाया।"

२. देखिए "उपवास", १३-३-१९३९।

इसकी कोई गारंटी नही देता कि यह उसका आखिरी अनशन है। उससे हम तबतक बातचीत नहीं करेंगे, जबतक कि वह अपना अनशन नहीं तोड़ देता।'

मैं समझता हूँ कि अगर उन्होंने ऐसा रुख अख्तियार किया होता, तो नैतिक दृष्टिसे वे गलती करते, लेकिन राजनीतिक दृष्टिसे और अंग्रेजोंके दृष्टिकोणसे स्थितिका निरीक्षण करते हुए मैं उनकी इस कार्रवाईको औचित्यपूर्ण ही कहता। मैं आशा कर रहा हूँ कि ऐसे उत्तम अन्तसे और यद्यपि यह तरीका अंग्रेजोंकी समझमें नहीं आता फिर भी वाइसराय महोदय द्वारा की गई उसकी कद्रसे न सिर्फ वह बात दुरुस्त हो जायेगी, जिसे मैं एक मौलिक गलती मानता आ रहा हूँ, बल्कि वातावरण भी साफ हो जायेगा और देशी राज्योंकी समस्याओंके हलमें भी मदद मिलेगी।

मेरे कहने का यह अभिप्राय नही है कि सभी देशी राज्योंको राजकोटके उदाहरणका अनुकरण करना होगा। राजकोटकी बात खास है और उसे एक अलग मामला मानना चाहिए। ऐसे राज्य भी हैं, जिनकी समस्याओंका उनकी परिस्थितियोंके आधारपर विचार करना चाहिए। किन्तु अब जनताका ध्यान राज्योंकी समस्याओंपर केन्द्रित हो गया है। मैं आशा करता हूँ कि यह स्वीकार किया जायेगा कि यह एक ऐसी समस्या है, जिससे निबटनेमें देरी नही होनी चाहिए।

मैं चाहूँगा कि नरेशगण मेरे इस आश्वासनको मान लें कि मैं राजकोट बतौर उनके मित्रके और एकमात्र शान्ति स्थापित करने के उद्देश्यसे ही आया था। मैंने देखा कि राजकोटके सत्याग्रही अपने संकल्पपर अडिग थे और उनका ऐसा होना स्वाभाविक था। उनके सम्मानकी बाजी लगी हुई थी। मेरे कान क्रूरताकी कहानियोंसे भर गये थे। मैंने महसूस किया कि अगर मैंने सत्याग्रहको जारी रहने दिया तो मनुष्यकी नीचतम वृत्तियोंको खुलकर खेलने का मौका मिल जायेगा। उसका फल यह होता कि न सिर्फ राजकोट राज्य और सत्याग्रहियोंमें, बल्कि तमाम नरेशों और प्रजामें कटुतापूर्ण लड़ाई छिड़ जाती। कारण, मनुष्यका मन स्वभावतः विशेषसे सामान्यकी ओर दौड़ता है।

मैं जानता हूँ कि आज भी, लोगोंका एक ऐसा बढ़ता हुआ वर्ग हिन्दुस्तानमें है जिसे दृढ़ विश्वास है कि राजा लोग सुधारसे परे हैं और भारत तबतक स्वतन्त्र नही हो सकता, जबतक कि 'बर्बर अतीतकी इन निशानियोंको' मिटा न दिया जाये। मैं उनसे सच्चे दिलसे मतभेद रखता हूँ। अहिंसामें और इस कारण मनुष्य-स्वभावकी अच्छाईमें विश्वास होने के कारण मैं और कुछ कर भी नही सकता। नरेशोंका भारतमें एक स्थान है। प्राचीन अतीतकी सब रीतियोंको मिटा देना शक्य नही है। इसलिए मैं यह विचार रखता हूँ कि अगर नरेशगण अतीतके पाठोंको ग्रहण करेंगे और समयकी भावनाको समझ लेंगे तो सब भला ही होगा। लेकिन यह काफी नही होगा कि समस्याओसे केवल कुछ छेड़छाड़ की जाये। उन्हें वीरताके साथ व्यवहार करना होगा। उन्हें राजकोटके उदाहरणका अनुकरण करने की जरूरत नही, लेकिन उन्हें प्रजाको वास्तविक और ठोस अधिकार सौंपने होंगे।

जहाँतक मैं जानता हूँ, स्थितिको सँभालने और रक्तपातसे भारतको बचाने के लिए और कोई बीचका रास्ता नही है। नरेशोंकी बाबत मुझे जो पत्र मिले हैं, उन्ह

प्रकाशित करने का साहस मुझमें नही है, लेकिन इस बातपर मै भविष्यमें और ज्यादा कहूँगा। अपनी कमजोरीकी मौजूदा हालतमें मुझे यह वक्तव्य देने में भी कष्ट हो रहा है। फिर भी मै उसे लिखवा रहा हूँ क्योंकि मुझे लगता है कि जबतक मेरे ऊपर अनशनका असर है और जबतक मै, अपनी भाषामें, आध्यात्मिक आनन्दसे ओतप्रोत हूँ, तभी मुझे अपने विचारोंका महत्त्वपूर्ण अंश लोगोंके आगे रख देना चाहिए।

फिर भायातो[1] और गरासियोंका[2] प्रश्न है। उन्होंने अपने मामलेकी मुझसे पैरवी की। मैंने उन्हें बताया कि उनसे मेरी हमदर्दी है। वे मुझे अपना मित्र मानें। मै चाहता हूँ कि वे गरासिया और भायातकी हैसियतसे रहें, लेकिन उन्हें भी समयके साथ चलना होगा। उन्हें अपनी जिन्दगीके तौर-तरीकेको बदलना होगा। उन्हें उन लोगोके साथ एकता अनुभव करनी होगी, जिनपर वे एक तरहसे अधिकार जमाये हुए है।

हमारे मुसलमान दोस्त भी हमारे पास आये और बिना किसी विवादके मुझे उन्हें यह बताने में कोई हिचक नही हुई कि उनके खास स्वार्थोंकी रक्षा होगी, अगर वे राजकोटमें सुरक्षित सीटोंके साथ पृथक् निर्वाचन चाहेंगे, तो मै ध्यान रखूँगा कि उन्हें वह मिल जाये। उनके बगैर माँगे ही उन्हें धार्मिक स्वाधीनताकी पूरी गारंटी दी जायेगी। मैंने उन्हें बताया कि अगर वे नामजदगीके लिए जिद करेंगे तो मै उन्हें ऐसा करने से रोकूँगा नही। मुझे वह बताने की जरूरत इसलिए है कि उनके साथ-साथ हिन्दुस्तान-भरके मुसलमानोके दिलोको सन्तोष हो। मैं चाहता हूँ कि वे महसूस करें कि न मै और न काग्रेस कभी इस बातके गुनहगार हो सकते है कि अपने पूरे विकास और धर्म तथा संस्कृतिकी रक्षाके लिए वे जो संरक्षण चाहें उसमें तनिक भी कमी की जाये।

मुझे यह भी बताना चाहिए कि मैंने आज सवेरे पौने ग्यारह बजे वाइसरायका जो तार-सन्देश प्राप्त हुआ था, केवल उसे और उससे सम्बन्धित अपने जवाबको ही क्यों प्रकाशित किया है। इन दोनोंमें इस बातका संकेत है कि इसके पहले भी हम दोनोमें सन्देशोका आदान-प्रदान हुआ है। वाइसरायकी पूरी सम्मतिसे मै इन पिछले पत्रोको प्रकाशित नही कर रहा हूँ। परमश्रेष्ठने इन्हें प्रकाशित करने से मुझे रोका नही है। मै जानता हूँ कि सार्वजनिक व्यक्तियोंको गुप्त सन्देश भेजने में वह विश्वास नही करते, लेकिन कुछ कारणोंसे, जिनका जिक्र करने की यहाँ जरूरत नही है, मैंने इस दलीलकी शक्ति महसूस की, कि हमारे उद्देश्यको देखते हुए उन्हें प्रकाशित करना समझदारीका काम नही होगा। मै उम्मीद करता हूँ कि इन्हें कभी भी प्रकाशित करने की जरूरत नही पड़ेगी। मेरे पत्रोमें कुछ बातें ऐसी है, जो प्रासंगिक हैं, लेकिन वे जनताके लिए नही है। इसलिए पिछले पत्रोंको रोकने की जिम्मेदारी पूरी तौरसे मेरी है।

१. काठियावाड़में देशी नरेशोंके परिजन
२. अनुदत्त भूमिके स्वामी; राजपूतोंकी एक जाति

दो शब्द कांग्रेसके बारेमें भी। मेरा दिल वहाँ है, लेकिन मैं देखता हूँ कि मैं वहाँ पहुँच नहीं सकूँगा। मैं अभी बहुत कमजोर हूँ। पर मुख्य बात यह है कि अगर राजकोटके मामले और इससे निकलनेवाले दूसरे मामलोंको आखिरी तौरसे तय करना है, तो मुझे त्रिपुरी और राजकोटके बीच अपना ध्यान बाँटना नहीं चाहिए। मुझे इस समय पूरे तौरसे राजकोटपर ही अपना ध्यान लगा देना चाहिए। मेरे लिए यहाँ काफी काम है। जैसे ही मैं जा सकूँ, मुझे दिल्ली जाना चाहिए। मैं सिर्फ यही उम्मीद करता हूँ कि त्रिपुरीमें सब अच्छा ही होगा।

मेरे लिए गत कई वर्षोमें यह असाधारण अनुभव है कि इस साल कांग्रेसके अधिवेशनमें मैं शामिल नहीं हुआ। लेकिन यह अच्छी बात है। मुझे इतना अहंकार क्यों होना चाहिए कि यह विचार करूँ कि मेरे बगैर कोई भी गम्भीर बात नहीं हो सकती? त्रिपुरीमें ऐसे नेता मौजूद हैं जो उतने ही साहसी, आत्मत्यागी और लगनवाले हैं जितना कि मैं। इसलिए मुझे बिलकुल शक नहीं है कि अगर दूसरी नीति भी तय की जाये, तो भी उसमें कटुता नहीं होगी, और उनके विचारों, शब्दों और कर्मोमें कोई हिंसात्मक भावना नहीं होगी।

अन्तमें मैं कहना चाहूँगा कि मैं उन सभी पत्र-प्रतिनिधियोंको धन्यवाद देना चाहता हूँ जो इस नाजुक समयमें मेरे साथ रहे। उनपर मुझे गर्व है। उन्होंने पत्रकार-जगत्की श्रेष्ठ परम्पराओंका पालन किया। उन्होंने झूठ-मूठकी खबरें नहीं उड़ाईं, बल्कि मेरे साथ शान्तिके दूत बने रहे। उन्होंने मेरा बहुत लिहाज किया। उन्होंने कभी मुझे परेशान नहीं किया।

मैं सार्वजनिक रूपसे उन डाक्टर मित्रोंको भी धन्यवाद देना चाहूँगा जिन्होंने प्रसन्नतापूर्वक मेरी देखभाल की।

मैं आशा करता हूँ कि उन लोगोंकी प्रार्थना, जो प्रार्थनामें विश्वास करते हैं, जारी रहेगी। एक तरहसे मेरा काम तो अब शुरू होता है; मैं फिर धरतीपर अपना सामान्य जीवन आरम्भ कर रहा हूँ। मुझे नाजुक बातचीत चलानी है। मैं उस सदिच्छाको खोना नहीं चाहता जिसका सुखद स्पर्श मैं इस समय अपने चारों ओर महसूस कर रहा हूँ। मैं ठाकुर साहबके विषयमें सोचता हूँ। मैं दरबार वीरावालाके विषयमें सोचता हूँ। मैंने उनकी आलोचना की है, लेकिन बतौर मित्रके। मैं यह दोहराता हूँ कि मैं ठाकुर साहबके पिता-जैसा हूँ। मैंने उनके प्रति उससे अधिक कुछ नहीं किया, जितना मैं अपने एक गुमराह लड़केके साथ करता। मैं चाहूँगा कि उनके सामने जो-कुछ हुआ है, उसका महत्त्व वे समझें, और इस अनशनका उत्तम अन्त तब माना जायेगा जब मैंने जो-कुछ कहा है, वे उसको मैत्रीपूर्ण मानें और उनसे वह प्रत्युत्तर मिले जिसकी मैं उम्मीद करता हूँ।

राजकोट काठियावाड़की धुरी है। और अगर राजकोटमें लोकप्रिय शासन स्थापित हो जाता है, तो काठियावाड़के दूसरे नरेश अपनी इच्छासे, बिना सत्याग्रहके इसका अनुकरण करेंगे। इस धरतीपर पूर्ण एकरूपता नामकी कोई चीज नहीं है। इसका सौन्दर्य तो इसकी असंख्य विविधतामें है। इसलिए काठियावाड़ी वृक्षके शाखारूप

राज्योंमें विविध प्रकारके शासन-विधान होंगे, लेकिन उनका तना मजबूत होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-३-१९३९

३९. पत्र : ई० सी० गिब्सनको

राजकोट
७ मार्च, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

उपवास मैंने तोड़ दिया है, समाचारपत्रोंको एक सन्देश[1] दिया है, और अब आपके प्रेमपूर्ण पत्रके[2] लिए धन्यवाद भेज रहा हूँ। मुझे आशा है कि यह सम्पर्क स्थायी मित्रताका आधार सिद्ध होगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१४३) से। सौजन्य: द० बा० कालेलकर

४०. तार : सुभाषचन्द्र बोसको[3]

[७ मार्च, १९३९][4]

उपवास तोड़ दिया। ईश्वरको धन्यवाद।[5]

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ८-३-१९३९

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. देखिए पृ० ३६की पाद टिप्पणी २।
३. सुभाषचन्द्र बोस तब कांग्रेस-अध्यक्ष थे।
४. तारके मजमूनके आधारपर अनुमानित। यह तार दिनांक "त्रिपुरी, ८ मार्च" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था। देखिए अगले दो शीर्षक भी।
५. सुभाष बोसने इस तारका निम्न उत्तर भेजा था: "आपका तार मिला। सारा देश इस खबरको पाकर प्रसन्न और निश्चिन्त हुआ।"

४१. तार : रामेश्वरी नेहरूको

राजकोट
७ मार्च, १९३९

श्रीमती ब्रजलाल नेहरू
लाहौर

उपवास . समाप्त। ईश्वरको धन्यवाद।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९८८) से

४२. तार : भारतीय महिला-संघ, मद्रासको[1]

[७ मार्च, १९३९][2]

उपवास समाप्त। ईश्वरको धन्यवाद।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ८-३-१९३९

१ और २. यह तार भारतीय महिला संघकी अवैतनिक मंत्री एस० अम्मुअम्माल द्वारा प्रकाशनार्थ जारी किया गया था और दिनांक "मद्रास, ८ मार्च"के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था। यह ६ मार्चको संघ द्वारा भेजे गये निम्नलिखित तारका उत्तर था: "भारतीय महिला संघ इस निर्णयसे बहुत दुःखी और चिन्तित। प्रभुसे प्रार्थना करता है कि वह आपको शक्ति और सफलता प्रदान करे।" देखिए पिछले दो शीर्षक भी।

४३. तार : गोविन्ददासको[1]

[७ मार्च, १९३९][2]

वक्तपर वहाँ पहुँचना असम्भव है। डॉक्टरोंका आग्रह है कि अभी कुछ दिन आराम करना जरूरी है। और जैसे ही वे इजाजत देंगे, मुझे राजकोटका काम पूरा करने के लिए दिल्लीके लिए रवाना होना पड़ेगा। प्रभुसे प्रार्थना है कि वह कांग्रेसमें होनेवाले विचार-विमर्शका मार्गदर्शन करे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ८-३-१९३९

४४. इसका अर्थ

कोई आलोचक कह सकता है कि 'उपवास तोड़ने के लायक आपने क्या पाया? और तो और, आपने ठाकुर साहबको जो अल्टिमेटम दिया था, कैदियोंकी रिहाईके सिवा उसकी कोई भी शर्त तो पूरी नही हुई है, लेकिन कैदियोंकी रिहाईके लिए तो आपने उपवास किया भी नही था।'

ऊपरसे देखने में यह दलील बिलकुल ठीक है। उसका तर्क बहुत ज्यादा सुसगत है। मेरा जवाब तो यह है कि 'शब्द घातक होते है, पर उनका भाव जीवन देनेवाला होता है।' जीवन प्रदान करनेवाली बात यह है कि राजकोट का मामला अखिल भारतीय बन गया है और ठाकुर साहबका स्थान वाइसरायने ले लिया है, जिनकी बातपर अविश्वास करने का कोई कारण नही। ठाकुर साहब मेरी सब शर्तोंको मान लेते, तो भी मुझे उनके भली-भाँति पूरी होने का यकीन न होता, यद्यपि उनकी बात स्वीकार करने के लिए मैं विवश होता। जिस बातको मैंने अब जान-बूझकर सन्देहास्पद बना दिया है, वह सरदारको भेजे गये प्रसिद्ध पत्रका[3] अर्थ है। अपने अल्टिमेटममें मैंने यह माना था कि उसका केवल एक ही अर्थ हो सकता है। लेकिन सत्याग्रहीके रूपमें मुझे अपनी सब बातोंकी बार-बार जाँचके लिए हमेशा तैयार रहना चाहिए और अगर उनमें कोई गलती मालूम पड़े तो उसे दुरुस्त करना चाहिए।

१ और २. यह तार दिनांक "त्रिपुरी, ८ मार्च" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था। यह गोविन्ददास द्वारा ७ मार्चको "स्वागत समिति" की ओरसे किये गये तारके उत्तरमें भेजा गया था।

३. तात्पर्य धर्मेन्द्रसिंहके लिए तैयार किये गये वक्तव्यके मसौदेसे है; देखिए खण्ड ६८, पृ० १५०-१।

इसलिए मैं यह मानता हूँ कि इस समझौतेमें प्रभुने मुझे आशासे कहीं अधिक दिया है। मेरा यह दावा ठीक है या नहीं, यह तो समय ही बतलायेगा।

राजकोट, ८ मार्च, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-३-१९३९

४५. पत्र : मीराबहनको

राजकोट

८ मार्च, १९३९

चि० मीरा,

आशा है, तुमने मेरे उपवासको वीरतापूर्वक सहन किया होगा। इससे मुझे शायद पहलेके उपवासोंसे भी अधिक लाभ हुआ है। मैं बहुत प्रसन्न हूँ। शक्ति भी आ रही है। अभी तो इससे अधिक नहीं।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४३४) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००२९ से भी

४६. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

राजकोट

८ मार्च, १९३९

चि० प्रेमा,

सुशीला पास बैठी है। वह अपना काम अन्यमनस्क भावसे करती है। मैं तो परम आनन्दमें था। बाकी तो सुशीलाने लिखा ही है। अधिक लिखने का मतलब डॉक्टरोंसे विद्रोह करना होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३९८) से। सी० डब्ल्यू० ६८३७ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक

४७. बातचीत: अगाथा हैरिसनसे[1]

८ मार्च, १९३९

अगाथाकी सुबह और फिर दोपहर-बाद गांधीजी से दिलचस्प बातचीत हुई। बातचीतके दौरान उन्होंने गांधीजी से प्रश्न किया, "अब चूंकि अधीश्वरी सत्तासे बीचमें पड़ने की अपील की गई है, क्या [कांग्रेसका] साम्राज्यवादके विरोधमें नारा लगाते रहना इस रुखके साथ संगत होगा? दूसरे शब्दोंमें, क्या आपके दृष्टिकोणसे साम्राज्यवादी सत्ता द्वारा नियुक्त मशीनरीका उपयोग करना मुनासिब होगा, जब कि आप साम्राज्यवादको खत्म करने के लिए वचनबद्ध हैं?"

गांधीजी ने उन्हें समझाया कि जिस असंगतिका आप उल्लेख कर रही हैं, वह केवल देखने-भरकी है। अहिंसात्मक असहयोगका अर्थ यन्त्रवत् अलग हट जाना या हर हालतमें विरोधीसे कोई सम्बन्ध न रखना नहीं है। अधीश्वरी सत्ताकी मध्यस्थता की माँग करके मैंने उसकी परीक्षा की है और उसे सही काम करने का एक मौका दिया है।

अबतक तो सर्वोच्च सत्ता राजाओंको उनके कुशासनमें लगातार मदद देती रही है। लेकिन उसका जनताके प्रति भी एक दायित्व है। राजकोटकी जनताने अब उस दायित्वको निभाने की बात अधीश्वरी सत्तासे कही है। जब अवसर आये तो वैसा न करना असहयोग नहीं होगा, मूर्खता होगी। उससे तो सर्वोच्च सत्ताकी शक्ति बढ़ भी सकती है। यद्यपि सत्याग्रहके शस्त्रागारमें असहयोग एक मुख्य शस्त्र है, तथापि यह नहीं भूलना चाहिए कि आखिर तो वह सत्य और न्यायकी रक्षा करते हुए विरोधीका सहयोग पाने का केवल एक साधन ही होता है। अहिंसाकी कलाका सार यही है कि वह वैर खत्म करना चाहती है, न कि खुद वैरियोंको। अहिंसात्मक संघर्षमें कुछ हदतक आपको उस प्रणालीकी परम्पराओं और तरीकोंसे बँधकर चलना होता है जिससे आपको लड़ना है। इसलिए विरोधी ताकतसे किसी भी तरहका सम्पर्क न रखना कभी भी सत्याग्रहीका उद्देश्य नहीं हो सकता, बल्कि उसका उद्देश्य उस सम्पर्कको नया रूप देना और शुद्ध बनाना है। राजकोटकी जनता यदि यह कहे, 'हम उसे दूरसे भी नहीं छुएँगे, उसे बदलने के लिए भी हम उससे मिलना नहीं चाहेंगे' तो वह कभी भी अहिंसात्मक उपायोंसे उसकी प्रभुता नहीं समाप्त कर सकेगी।

१. प्यारेलालके लेख "द राजकोट फास्ट–५" (राजकोटका उपवास–५) से उद्धृत।

जनतामें अहिंसात्मक शक्ति तथा जागृति बढ़ने के साथ-साथ अधीश्वरी सत्ता तथा रियासतोंकी जनताके बीच सहयोगका क्षेत्र घटने के बजाय बढ़ेगा। वास्तवमें मैं एक ऐसे समयकी उम्मीद करता हूँ जब कि भारतीय रियासतोंमें रेजीडेण्ट और पॉलिटिकल एजेन्ट सर्वोच्च सत्ताकी तरफसे जनताके सच्चे न्यासी और सेवक बन जायेंगे और इसी रूपमें जनता उनसे काम लेगी।

असहयोग आन्दोलनके आरम्भमें कांग्रेसने देशको नये विधान-मण्डलोंका बहिष्कार करने की सलाह दी थी। कांग्रेस उन्हें एक जाल और मोहपाश मानती थी। लेकिन सविनय अवज्ञा आन्दोलनोंसे प्राप्त शिक्षणके परिणामस्वरूप जनतामें जो अद्भुत जागृति आई थी, और उसकी वजहसे जनता और सरकारके सम्बन्धोंमें जो सापेक्ष परिवर्तन हुआ था उसको देखते हुए १९३७ में कांग्रेसने उन सात प्रान्तोंमें, जहाँ उसका बहुमत था, सरकारकी मशीनरी हथिया लेने का फैसला किया था।[1]

इसलिए मौजूदा मामलेमें अधीश्वरी सत्तासे मध्यस्थता करने की माँग करने का यह अर्थ नहीं कि मेरे दृष्टिकोणमें गहरा परिवर्तन आ गया है। इसके विपरीत यह तो विद्यमान शासन-प्रणालीको, आज वह जिस तरह काम करती है, उसके उस रूपको समाप्त करने की दिशामें एक और कदम है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-४-१९३९

४८. तार : सुभाषचन्द्र बोसको[2]

[९ मार्च, १९३९ या उसके पूर्व][3]

डॉक्टरोंकी सलाह है कि मैं १३ तारीखसे पहले कहीं न जाऊँ। तुमने डॉक्टरोंकी परवाह नहीं की, मुझमें ऐसा साहस नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ९-३-१९३९

१. देखिए खण्ड ६५।

२. यह तार सुभाषचन्द्र बोसके उस तारके उत्तरमें था जिसमें उन्होंने लिखा था: "मुझे ऐसा लगता है कि यहाँ आपकी उपस्थिति बहुत आवश्यक है। सब लोगोंके मनमें भी यही बात है" (हिन्दू, ८-३-१९३९)।

३. यह दिनांक "त्रिपुरी, ९ मार्च" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

४९. तार : क० मा० मुंशीको[1]

[९ मार्च, १९३९ या उसके पूर्व][2]

कृपया मेरी ओरसे वफ्दी प्रतिनिधि-मण्डलका स्वागत कीजिए। आशा है उनका समय सानन्द बीतेगा। उनकी इस यात्रासे मिस्र और भारतमें एक अटूट नाता कायम होगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ९-३-१९३९

५०. तार : जवाहरलाल नेहरूको

राजकोट
९ मार्च, १९३९

जवाहरलाल नेहरू
त्रिपुरी कांग्रेस
[जबलपुर]

कांग्रेसको भीतरी भ्रष्टाचारसे मुक्त करने के लिए यदि प्रस्ताव पास नहीं किया गया तो यह एक भारी गलती होगी। अ० भा० कां० क० को यह अधिकार दे देना चाहिए कि वह संविधानमें आवश्यक सुधार कर सकती है और उन्हें कांग्रेसके आगे रखना आवश्यक नहीं है। स्वास्थ्य ठीक है।[3]

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३९। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. बम्बईके तत्कालीन गृह-मन्त्री

२. तार दिनांक "बम्बई, ७ मार्च" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था। साधन-सूत्रके अनुसार "कांग्रेसके त्रिपुरी अधिवेशनमें भाग लेने के लिए मिस्रसे वफ्दी प्रतिनिधि-मण्डल ९ मार्चको बम्बई पहुँचा था।"

३. हिन्दू, ११-३-१९३९ के अनुसार, इसी तरहका एक तार सुभाषचन्द्र बोसको भी भेजा गया था। उसे शरत बोसने विषय-समितिकी बैठकमें पढ़कर सुनाया था, क्योंकि सुभाषचन्द्र बीमारीके कारण उसमें भाग नहीं ले सके थे। शरत बोसने कहा कि सुभाषचन्द्र बोस "गांधीजी के विचारोंसे पूरी तरह सहमत हैं।"

५१. पत्र : ई० सी० गिब्सनको

राष्ट्रीय शाला, राजकोट
९ मार्च, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

कमजोरी अब पहलेसे कम हो गई है, इसलिए मैंने सूचनाके सूत्रोंको एकत्रित करना शुरू कर दिया है। आप मेरी इस बातसे सहमत होंगे कि दमनकी कार्रवाइयाँ, वे चाहे अधिसूचनाओंके रूपमें हों, उनके अधीन की गई कार्रवाइयोंके रूपमें हों या अधिसूचनाओंसे बाहरकी प्रतिशोध-कार्रवाइयोंके रूपमें, खत्म कर दी जानी चाहिए। मुझे तो लम्बी सूची दी गई है। उसमें से कुछ मैं लेता हूँ:

१. व्यक्तियोंपर पाबन्दी।
२. समाचारपत्रोंपर पाबन्दी।
३. संगठनोंपर पाबन्दी।
४. जब्ती और जुर्माने।
५. स्कूलों और औषधालयोंको बन्द करना।
६. चल और अचल सम्पत्तिकी बिक्री।
७. काश्तकारोंको अपना अनाज न उठाने देना।
८. विद्यार्थियोंकी फीस और जल-शुल्कमें वृद्धि।
९. जिन्हें फीसकी माफी मिली हुई थी उन्हें उससे वंचित करना।

आप कृपया इन मामलोंको ठीक करवाने का प्रयत्न करें। यदि आपका यह विचार हो कि कोई कार्रवाई करने से पहले आपका मुझसे मिलना जरूरी है, तो मैं आपकी सेवाके लिए तैयार हूँ।

डॉक्टरोंने मुझे अगले सोमवारसे पहले यात्रा करने से मना किया है। इसलिए मेरा विचार सोमवारकी शामको दिल्लीके लिए रवाना होने का है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१४५) से। सौजन्य: द० बा० कालेलकर

५२. अपील: राजकोटकी जनतासे[1]

राजकोट
९ मार्च, १९३९

ईश्वर-कृपासे जिस हेतुसे मैं आया था वह सफल हो गया है। ठाकुर साहबकी प्रतिज्ञाका पालन होगा, उनकी २६ दिसम्बरकी अधिसूचनाके अनुसार राज्यतन्त्र भी स्थापित होगा, और ऐसा करने का आश्वासन ठाकुर साहबकी ओरसे और उनकी सम्मतिसे केन्द्रीय सरकारने दिया है। यह वाइसराय और मेरे बीच हुए तार-व्यवहारका सरल और सामान्य अर्थ है। इसे मैं शुभ और अपनी अपेक्षासे कहीं अधिक अच्छा परिणाम मानता हूँ। इसके लिए हमें प्रभुका आभार मानना चाहिए। उसकी कृपाके बिना ऐसा परिणाम निकलना असम्भव था। राजा और प्रजा दोनोंकी ही लाज रह गई और लोगोंने जो यातना भोगी थी वह सफल हो गई।

अन्य बातोंका उल्लेख मैं इस अपीलमें नहीं करता। यहाँ तो इतना ही कहना काफी होना चाहिए कि उन्हें मैंने छोड़ नहीं दिया है। समाचारपत्रोंपर लगे हुए प्रतिबन्ध और अन्य कठिनाइयाँ अभी दूर नहीं हुई हैं, यह मैं जानता हूँ। इन्हें दूर कराने का प्रयत्न जारी है, और वे जरूर दूर हो जायेंगी।

इससे हमें फूल उठने की कोई वजह नहीं। जनताको असली काम तो अब करना है। उत्तरदायी शासन मिलेगा तो अवश्य, पर क्या जनता उसे सँभाल सकेगी, सुशोभित कर पायेगी? इसका समुचित उत्तर देने के लिए जनताको आजसे ही तैयारी करनी चाहिए। सभाओं और भाषणोंकी जरूरत अब कम होनी चाहिए। और जरूरत हो तो उसका उपयोग लोगोंको आवश्यक शिक्षण देने के लिए ही होना चाहिए। सफलता प्राप्त करने के लिए हरएक स्त्री-पुरुषको अपना योगदान देना पड़ेगा।

१. हिन्दू-मुसलमान आदिके बीच फूट नहीं होनी चाहिए।

२. हिन्दुओंमें जो ऊँच-नीच और स्पृश्य-अस्पृश्यका भेद-भाव बरता जाता है, वह मिटना चाहिए।

३. अपना कार्य हमें सत्य और अहिंसाके सहारे चलाना है, इसलिए पारस्परिक व्यवहारमें अहिंसा किस तरह काम करती है, यह समझना चाहिए।

४. लोगोंमें सेवाकी भावना पैदा होनी चाहिए।

५. कुछ नवयुवकों और युवतियोंको अपनी सेवाएँ जनताको अर्पित करनी चाहिए।

१. इसका अंग्रेजी अनुवाद **हरिजन**, १८-३-१९३९ के अंकमें "टु द पीपल ऑफ राजकोट" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

६. प्रपंच, द्वेषभाव आदिको छोड़कर हम लोगोंमें अनुशासनकी भावना आनी चाहिए।

७. लोगोंको उद्यमी होना चाहिए और इसलिए उन्हें कातने आदिकी कोई उपयोगी प्रवृत्ति स्वीकार करनी चाहिए और खादीका व्रत लेना चाहिए।

८. पढ़े-लिखे अनपढ़ोंको अक्षरज्ञान दें।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १९-३-१९३९

५३. बातचीत : राजकोट प्रजा परिषद्के कार्यकर्त्ताओंसे[1]

९ मार्च, १९३९

एक कार्यकर्त्ताने बातचीत करते हुए कहा कि मैंने अहिंसाको नीतिके रूपमें स्वीकार किया है, धार्मिक सिद्धान्तके रूपमें नहीं। गांधीजी ने उसे समझाते हुए कहा कि यदि आपने इसे हृदयसे और ईमानदारीके साथ उस रूपमें भी स्वीकार किया तो इतना भी काफी है। दिलमें कोई चोरी नहीं होनी चाहिए। डर तो इस बातका है कि बहुत-से लोग अहिंसामें विश्वास करने का दम्भ भरते हैं, पर उनके अन्तरमें इस शब्दका एक-सा अर्थ नहीं होता। हिंसाका अर्थ किसीके शरीरको प्रत्यक्ष हानि पहुँचाना ही नहीं है। धूर्तता, असत्य, प्रपंच, छल-कपट — थोड़ेमें कहा जाये तो तमाम अस्वच्छ और कुटिल मार्गोंकी गणना हिंसामें है, और सिद्धान्त-रूपमें हो या नीतिके रूपमें, अहिंसाको जिसने एक बार स्वीकार कर लिया उसके लिए इन तमाम मलिन मार्गोंका त्याग आवश्यक है।

इसलिए अहिंसावादी कुंदन जैसा शुद्ध, न्यायपरायण, व्यवहारमें सरल, सत्यवादी, खरा और बिलकुल निःस्वार्थ होता है, निरभिमानी होता है। इस प्रकार अहिंसाके अर्थके या उसके फलितार्थोंके सम्बन्धमें कोई गड़बड़ी या गलतफहमी नहीं होनी चाहिए। सिद्धान्त या नीति-सम्बन्धी विवादको एक तरफ रखा जा सकता है, यदि सब लोग इस मुद्देको भली-भाँति समझ लें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-५-१९३९

१. यह बातचीत "द राजकोट फास्ट-६" (राजकोटका उपवास-६) से उद्धृत है।

५४. तार: नहास पाशाको[1]

[९ मार्च, १९३९ के पश्चात्][2]

आपके कृपायुक्त प्रेमपूर्ण सन्देशके लिए शतशः धन्यवाद। उन्हीं भावोंको मैं भी आपके लिए दुहराता हूँ।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १८-३-१९३९

५५. तार: मिस्री प्रतिनिधि-मण्डलको

राजकोट
११ मार्च, १९३९

मिस्री प्रतिनिधि-मण्डल
रेस्ट हाउस
जबलपुर

आपका स्नेह-भरा तार[3] पाकर खुशी हुई। मुझे आशा है कि आपको अपनी अपेक्षाएँ किसी हदतक पूरी हुई दिखाई दे रही होगी। पन्द्रहको दिल्ली पहुँचूंगा। वहाँ मुलाकात होने की आशा है।

गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

१ और २. यह वफ्द पार्टीके नेता नहास पाशा द्वारा भेजे गये सन्देशके जवाबमें था। नहास पाशाका सन्देश इस प्रकार था: "मिस्री प्रतिनिधि-मण्डलके स्वागतके लिए मेरा और वफ्दका हार्दिक धन्यवाद स्वीकार कीजिए। मिस्री लोग हिन्दुस्तानी भाइयोंके साथ समान आदर्श और उन आदर्शोंको यातना और त्यागके द्वारा प्राप्त करने के पवित्र बन्धनोंसे बँधे हुए हैं। उन्हें आपके महान् उदाहरणसे सदा प्रेरणा मिलती रही है। पददलित मानवताके मुक्ति-कार्यके लिए ईश्वर आपको शक्ति प्रदान करे।" मिस्री प्रतिनिधि-मण्डल ९ मार्चको भारतीय तटपर उतरा था; देखिए "तार: क० मा० मुन्शीको", पृ० ४७ और अगला शीर्षक भी।

३. यह मिस्री प्रतिनिधि-मण्डलके ११ मार्चके उस तारके जवाबमें भेजा गया था, जिसमें शिष्टमण्डलने गांधीजी से दिल्लीमें या उनकी सुविधानुसार तय की गई किसी और जगह भेंट करने की इच्छा व्यक्त की थी।

५६. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

[११ मार्च, १९३९][1]

तारके[2] लिए धन्यवाद। स्वास्थ्य और शक्ति संचित करो। ईश्वर तुम सबका साथ दे। मैं अच्छा हो रहा हूँ।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-३-१९३९

५७. तार : अमतुस्सलामको

राजकोट
११ मार्च, १९३९

अमतुस्सलाम
गांधी सेवा संघ
वर्धा

तुम्हें पटियाला चले जाना चाहिए। मेरा स्वास्थ्य ठीक है। रोज अधिक शक्ति आ रही है।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१४)से

१. राजकोटसे प्रेषित जिस समाचारमें यह तार दिया हुआ है उसकी तिथि ११ मार्च है।

२. इसी तारीखका यह तार इस प्रकार था: "विषय-समितितक आपका तार पहुँचा दिया है [देखिए "तार: जवाहरलाल नेहरूको", पृ० ४७]। . . . आशा है, समिति आपकी सलाहपर चलेगी। मैं ८ और ९ को विषय-समितिकी बैठकमें शामिल हो रहा हूँ। कल मेडिकल बोर्डने मुझे कुछ भी करने से मना कर दिया। . . . आशा है, आपका स्वास्थ्य सुधर रहा होगा।"

५८. पत्र : मीराबहनको

११ मार्च, १९३९

चि० मीरा,

दिनों-दिन शक्ति आती जा रही है। इसलिए कोई चिन्ता न होनी चाहिए। १५ तारीखको दिल्ली पहुँचूँगा। पता नही, कबतक वहाँ ठहरना पड़ेगा। यह भी सम्भावना है कि मुझे राजकोट वापस आना पड़े। राजकोटका मामला ठीक न हो जाये, तबतक मुझे और किसी बातका विचार नही करना चाहिए।

बा मेरे साथ दिल्ली जा रही है; कानो[1] साथ नही होगा।

सस्नेह ।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४३५)से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००३० से भी

५९. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[2]

राजकोट
११ मार्च, १९३९

सेगांव छोड़ने के बाद, अर्थात् करीब दो हफ्तेसे, सभी घटनाओंके सम्पर्कसे दूर रहने के कारण मैं त्रावणकोरमें सत्याग्रह पुनः जारी करने के सम्बन्धमें निश्चित राय देने के लिए अपने-आपको काबिल नही समझता। लेकिन कुछ आम सिद्धान्त बताने में मुझे कोई दिक्कत नही है। किसी भी सविनय अवज्ञाके जारी किये जाने की पहली और अनिवार्य शर्त यह है कि सत्याग्रहसे सम्बन्ध रखनेवाले अथवा जनसाधारण, किसीकी भी तरफसे हिंसा न फूट निकलने का निश्चय हो। हिंसाके फूट निकलने पर यह कोई जवाब न होगा कि वह रियासतकी, या सत्याग्रह-विरोधी किसी दूसरी जमातकी तरफसे भड़काई गई थी। यह स्पष्ट है कि हिंसाके वातावरणमें सत्याग्रह पनप नहीं सकता। इसका यह मतलब नही कि सत्याग्रहीके साधनोंका अन्त हो गया

१. रामदास गांधीके पुत्र कानम

२. हरिजनमें यह "त्रावणकोर" शीर्षकसे और परिस्थितिको समझाने के लिए दी गई इस टिप्पणीके साथ छपा था कि यह वक्तव्य गांधीजी ने उस समय दिया जब उन्हें त्रावणकोर राज्य कांग्रेसके इस निर्णयके बारेमें बताया गया कि वह २५ मार्चसे फिरसे सत्याग्रह आरम्भ कर रही है।

है। सविनय अवज्ञाके सिवा दूसरे तरीके निकाले जाने चाहिए। दूसरी शर्त यह है कि सविनय अवज्ञा ध्वंसात्मक अर्थात् देश के लिए हानिकारक नहीं होनी चाहिए। इसलिए भंग किये जाने के लिए वही कानून चुने जायें जो जनताके लिए हानिकारक है अथवा जिनके तोड़े जाने से जनताको तो कुछ नुकसान न पहुँचे, लेकिन उसके कारण सम्भवतः अधिकारियोका काम अधिक हो जाये। तीसरे, वह आन्दोलन ऐसा होना चाहिए जिसमें लोग अधिकसे-अधिक संख्यामें भाग ले सकें। चौथे, विद्यार्थियोंको उसमें भाग लेने के लिए न तो बुलाया जाये, न उन्हें उसमें भाग लेने की इजाजत दी जाये। आन्दोलनमें गोपनीयता न हो। अनुशासनके लिए अथवा और किसी बातके लिए जो न्यूनतम नियम निश्चित किये जायें, सत्याग्रह करनेवालों को निश्चय ही उनका पालन करना चाहिए।[1]

यह पूछने पर कि आपने सन् १९२१ में विद्यार्थियोंको कॉलेजों और स्कूलोंसे बाहर निकल आने और असहयोग आन्दोलनमें शरीक होने को क्यों कहा था[2] और अब आप उनके आन्दोलनमें भाग लेने के खिलाफ क्यों हैं, गांधीजी ने कहा: उस समयकी हालत दूसरी थी। मैंने सरकारसे सम्पूर्ण असहकार जाहिर करने के लिए विद्यार्थियोंको स्कूल, कॉलेज आदि खाली कर देने को कहा था। ज्यों ही विद्यार्थी कॉलेज छोड़कर बाहर जाता है त्यों ही वह नागरिक बन जाता है और इस प्रकार वह आन्दोलनमें भाग लेने को स्वतन्त्र हो जाता है। अगर विद्यार्थी कॉलेज बिलकुल ही छोड़ दें और आन्दोलनमें भाग लें तो मुझे कोई आपत्ति न होगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-३-१९३९; हिन्दू, ११-३-१९३९ भी

६०. बातचीत: राजकोट प्रजा परिषद्के कार्यकर्त्ताओंसे

१२ मार्च, १९३९

मुझे एसा लगता है कि पहली गलती राजकोटके सत्याग्रहमें यह हुई कि तमाम काठियावाड़ियोंको सत्याग्रहमें शामिल होने की अनुमति दे दी गई। इससे लड़ाईमें कमजोरीका तत्त्व आ गया। ऐसा करके हम लोगोंने सफलताके लिए संख्या-बलका सहारा लिया। सत्याग्रही तो एक ईश्वरपर ही आधार रखता है, जो असहायोंका एकमात्र सहायक है। सत्याग्रही तो हमेशा अपने मनमें यही कहता है कि 'जिसके नामपर सत्याग्रह शुरू किया है, वही उसे पार लगायेगा।' राजकोटके कार्यकर्त्ताओंने ऐसा विचार किया होता, तो बड़े-बड़े जुलूसों और प्रदर्शनोंका आयोजन करने के प्रलोभनमें वे न पड़ते, और तब सम्भवतः राजकोटमें जो अत्याचार हुए हैं वे न होते। सच्चा

१. इसके बादका अंश हिन्दूसे लिया गया है।

२. देखिए खण्ड १९।

सत्याग्रही तो अपने विरोधीको अभयदान देकर आगे बढ़ता है। उसके कार्यसे 'शत्रु' के दिलमें कभी डर पैदा नही होता। मान लीजिए कि सत्याग्रहके नियमोंका सख्तीसे पालन करने के परिणामस्वरूप अन्तमें केवल कुछ सौ या मुट्ठी-भर सत्याग्रही ही सत्याग्रहकी सच्ची भावनासे लड़ने के लिए निकले होते, तो वे उस लडाईमें ऐसी सच्ची वीरताका उदाहरण रखते, जो दूसरोंके लिए एक अनुकरणीय चीज होती।

मैं शीघ्र ही आपके प्रतिनिधिके रूपमें दिल्ली जा रहा हूँ। जिनके लिए हम लोग लड़ रहे हैं उन लोगोके हाथमें सत्ताका सौंपना उचित है, यह विश्वास जबतक मुझमें न हो तबतक मैं अपना काम आत्मविश्वासके साथ न कर सकूँगा और न मेरी वांणीमें अधिकार होगा। आजीवन सत्यके उपासकके रूपमें मैं यह जानता हूँ कि मेरी वकालतमें तबतक कोई प्रभाव और शक्ति नही होगी, जबतक अपने कार्यके औचित्यके विषयमें तथा उस कार्यको आगे ले जानेवाले लोगोंकी सचाई और शक्तिके विषयमें मुझमें पूरी श्रद्धा न हो। आप खुद ही गम्भीरतासे अपने मनसे पूछें—'मान लें कि यदि आज स्वराज्य मिल जाये, तो हम उसका क्या उपयोग कर सकते हैं?'[1]

आपको प्रजातन्त्र—प्रजाका, प्रजाके लिए, प्रजाके हाथों चलनेवाला तन्त्र—चाहिए। स्पष्ट है कि राजकोटके ७५,००० आदमी इस प्रजातन्त्रका कारोबार चलानेवाले नही हो सकते हैं। असलमें देखा जाये तो प्रजातन्त्रका अर्थ समस्त प्रजाके कल्याणके लिए प्रजाके भिन्न-भिन्न वर्गोंकी समग्र शारीरिक, आर्थिक और आत्मिक शक्तियोंको एकत्र करके उपयोगमें लगाने की कला तथा विज्ञान है।

अबतक कुटुम्ब-सेवाके लिए हमारी तमाम प्रवृत्तियोका उपयोग होता रहा है। अब हमें अपनी दृष्टिको विशाल बनाकर इस प्रकारकी सेवाका लक्ष्य समस्त प्रजाको बनाना सीखना चाहिए।

गाँवोंमें काम करने की बहुत-सी कल्पनाएँ हमारे पास पड़ी हैं। अबतक हमने ज्यादातर ग्रामवासियोको उनके अधिकारोंका भान कराया है। कभी-कभी उनकी आर्थिक स्थितिमें सुधार करनेवाली सेवा-प्रवृत्तियाँ भी चलाई हैं। अब हमें गाँवोंकी प्रजाको उनके कर्त्तव्यका ज्ञान कराना है।

जो अपने कर्त्तव्यका पालन करना सीख लेगी उसे अपने हक तो अपने-आप मिल जायेंगे। वस्तुत जीने या मरने लायक हक तो एक ही है, और वह है अपना फर्ज अदा करना। सारे न्याय्य अधिकार इसमें आ जाते हैं। बाकी सब किसी-न-किसी रूपमें छीना-झपटी ही है, और उनके गर्भमें हिंसाके बीज होते है।

मेरी कल्पनाका स्वराज्य तो तभी आयेगा, जब हम सब दृढतापूर्वक यह मान लेंगे कि केवल सत्य-अहिंसाके द्वारा ही हमें स्वराज्य प्राप्त करना है, चलाना है, और उसीके द्वारा उसे कायम रखना है। सच्चा प्रजातन्त्र या जनताका स्वराज्य असत्य और हिंसक साधनोंसे कदापि मिलने का नही। कारण, इन साधनोंके प्रयोगमें विरोधियों

१. यह और पिछला अनुच्छेद प्यारेलालके "द राजकोट फास्ट–६" (राजकोटका उपवास–६) से लिया गया है। इसके बादका अंश "द राजकोट फास्ट–७" (राजकोटका उपवास–७) (हरिजन, २७-५-१९३९) से लिया गया है।

के दमन या नाश द्वारा विरोधके निर्मूलनको स्वाभाविक परिणामके रूपमें स्वीकार करना पड़ता है। और ऐसा करना पड़े तो व्यक्तिकी स्वतन्त्रता अप्राप्य हो जाती है। व्यक्तिगत स्वातन्त्र्य शुद्ध अहिंसासे ही फलित हो सकती है।

यदि प्रजाको शिक्षण देना है, तो हम लोगोंमें मनमुटावके लिए कोई स्थान नहीं हो सकता। हम सबकी ओरसे एक ही आवाज उठनी चाहिए। यदि भिन्नभिन्न वर्गोंको हमें एक अखण्ड प्रजाके रूपमें संगठित करना है—और प्रजातन्त्रकी यह अनिवार्य शर्त है—तो सेवा करने में हम ऐसा भेद-भाव कर ही नहीं सकते कि इन्होंने संघर्षमें भाग लिया था, और इन्होंने नहीं लिया।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २०-५-१९३९ और २७-५-१९३९

६१. उपवासके बारेमें

उपवासकी परम्परा आदिकालसे चली आ रही है। उपवास आत्म-शुद्धिके लिए भी और किसी उच्च या नीच हेतुकी सिद्धिके लिए भी किये गये हैं। बुद्ध, ईसा तथा पैगम्बर मुहम्मदने ईश्वर-साक्षात्कारके लिए उपवास किये थे। रामचन्द्रने उपवास इसलिए किया था कि महोदधि उनकी वानर-सेनाके लिए मार्ग दे दे। पार्वतीने शिवको अपने पतिके रूपमें वरण करने के लिए उपवास किया था। अपने उपवासोंमें मैंने ऊपर बताये महान् उदाहरणोंका अनुसरण-मात्र किया है। अलबत्ता, मेरा उद्देश्य उनके उद्देश्यों जितना उदात्त नहीं रहा है।

अपने पिछले उपवासके औचित्यकी चर्चामें न उतरकर मैं यहाँ एक ही प्रश्न का उत्तर दूंगा। यह पूछा गया है कि जब मैं सेगाँवसे रवाना हुआ तब क्या मैं यह जानता था कि मैं उपवास करूँगा। हकीकत यह है कि इधर कुछ बरसोंसे उपवास के सम्बन्धमें मैं बिलकुल कायर बन गया हूँ। सन् १९३३ का मेरा उपवास लम्बा नहीं था, पर उससे मेरी देहको बहुत कष्ट हुआ था।[2] जिस दिन मुझे रिहा किया गया उसी दिन मैं मानों मृत्युका आलिंगन करने की तैयारी कर चुका था। अपने शारीरिक स्वास्थ्यके खयालसे जो भी चीजें मैं रखता हूँ उनमें से अधिकांश मैंने अपनी सार-सँभाल करनेवाली परिचारिकाको दे दी थी। तबसे हमेशा मुझे उपवासका भय रहा है। इसके बाद ६ अप्रैल[3] और १३ अप्रैलके[4] २४ घण्टेके वार्षिक उपवासोंने भी मुझे यह बता दिया है कि मेरा शरीर अब ऐसा नहीं रहा जो किसी लम्बे उपवासको सह सके। इसलिए जब मैं सेगाँवसे चला उस समय राजकोट जाकर

---

१. देखिए "अपील: राजकोटकी जनतासे", पृ० ५८-६१।

२. देखिए खण्ड ५५।

३ और ४. यह सप्ताह १९१९ के रौलट अधिनियम तथा उसी साल १३ अप्रैलको हुए जलियाँवाला बाग-काण्डके खिलाफ विरोध प्रकट करने के लिए "राष्ट्रीय सप्ताह" के रूपमें मनाया जाता था।

उपवास करने का खयाल हलके मनसे करना मेरे लिए असम्भव था। अगर वैसा कोई संकल्प लेकर मैं निकला होता, तो उस संकल्पकी मित्रोंको काफी पहलेसे खबर देने के लिए मै वचन-बद्ध था। इस तरह पूर्वसंकल्प-जैसा कुछ था ही नहीं। यह चीज तो मनमें एकाएक ही आई और मेरी अन्तरात्माकी तीव्र वेदनामें से ही उत्पन्न हुई। उपवासके पहलेके दिन आर्त्त हृदयकी प्रार्थनामें बीते थे। उपवासका निश्चय करने के पहलेकी रातके अनुभवने मुझे बिलकुल व्याकुल कर डाला था। मै किंकर्तव्य विमूढ हो गया था। सवेरा हुआ, और मुझे मार्ग दिखाई दिया। मुझे मालूम हो गया कि मुझे क्या करना है, उसका चाहे जितना मूल्य चुकाना पड़े। मेरी यदि यह श्रद्धा न होती कि प्रभु मुझसे यह करवाना चाहता है, तो जो निश्चय मैंने किया था वह कदापि न कर पाता।

इतना तो हुआ राजकोटके उपवासके विषयमें।

उपवास सत्याग्रहके शस्त्रागारमें एक महान् शक्तिशाली अस्त्र है। इसे हर कोई नही कर सकता। उपवास करने की महज शारीरिक क्षमता इसके लिए कोई योग्यता नही। ईश्वरमें जीती-जागती श्रद्धा न हो, तो दूसरी योग्यताएँ बिलकुल निरुपयोगी है। भावनाशून्य मनसे या निरी अनुकरण-वृत्तिसे वह कभी नही किया जाना चाहिए। वह तो अपनी अन्तरात्माकी गहराईमें से उठना चाहिए। इसीलिए उपवास यदाकदा ही किया जाता है। लगता है, मै इसके लायक हूँ। ध्यातव्य है कि मेरे साथियोंमें से एकको भी राजनीतिक क्षेत्रमें उपवास करने की प्रेरणा आजतक कभी नही हुई। और यह भी कृतज्ञताकी भावनाके साथ कह सकता हूँ कि उन्होंने मेरे उपवासोंके प्रति कभी रोष जाहिर नही किया है। मेरे आश्रमवासी साथियोंने भी बहुत थोड़े प्रसंगोंको छोड़कर उपवासके लिए अन्तर्नादका अनुभव नही किया है। उन्होने ऐसी मर्यादासे अपने-आपको बाँध रखा है कि प्रायश्चित्तस्वरूप उपवासोंके सम्बन्धमें भी चाहे जितना तीव्र अन्तर्नाद हो, मेरी अनुमतिके बिना वे उपवास नही करेंगे।

इस प्रकार उपवास एक अमोघ अस्त्र अवश्य है, पर उसके साथ सख्त मर्यादाएँ जुड़ी हुई है। जो उसमें पहलेसे ही भली-भाँति कुशल हैं, वे ही उसका प्रयोग कर सकते हैं। फिर अपने पैमानेसे मापकर देखता हूँ तो अधिकाश उपवास सत्याग्रहकी श्रेणीमें आ ही नही सकते, बल्कि आम जनता जिन्हें भूख हड़ताल कहती है उसी प्रकारके वे होते हैं, अर्थात् न उनमें कोई समुचित विचार होता है, और न पहलेसे कोई तैयारी। यह काम अगर बार-बार किया जाये तो आज भूख हड़तालोंका जो थोड़ा-सा असर है वह भी नष्ट हो जायेगा और वह बिलकुल उपहासकी चीज बन जायेगी।

राजकोट, १३ मार्च, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-३-१९३९

६२. अपील : राजकोटकी जनतासे[1]

१३ मार्च, १९३९

अहिंसक स्वराज्यमें लोगोंके लिए अपने अधिकार जानना जरूरी नहीं है, बल्कि उन्हें अपने कर्त्तव्यका ज्ञान अवश्य होना चाहिए और उनका पालन भी करना चाहिए। कोई कर्त्तव्य ऐसा नहीं है जिसके फलस्वरूप कोई-न-कोई अधिकार न मिलता हो। और वास्तविक अधिकार वही है जो केवल पालन किये हुए धर्मसे उत्पन्न होता है। जो सेवा-धर्मका पालन करता है उसीको नागरिकताके वास्तविक अधिकार मिलते हैं और वही उनकी रक्षा कर सकता है। झूठ बोलने और मारपीट करने का अधिकार तो सभीको है, लेकिन उस अधिकारको अमलमें लाने से अमल करनेवाले और समाजको नुकसान पहुँचता है। लेकिन जो झूठ न बोलने अर्थात् सत्यका और मारपीट न करने अर्थात् अहिंसाका धर्म पालता है, उसे जो प्रतिष्ठा मिलती है वह उसे बहुत-से अधिकार दिला देती है और ऐसे मनुष्य अपने अधिकारोंका उपयोग परमार्थके लिए करते हैं, स्वार्थके लिए कदापि नहीं।

जनताके स्वराज्यका अर्थ है प्रत्येक व्यक्तिके स्वराज्यसे फलित होनेवाला जन-सत्तात्मक राज्य। ऐसा राज्य तभी बन सकता है जब प्रत्येक व्यक्ति नागरिकके रूपमें अपने धर्मका पालन करे। इस स्वराज्यमें कोई अपने अधिकारोंका खयाल भी नहीं करता। जिस समय अधिकारोंकी आवश्यकता होती है, वे कर्त्तव्यपालनके साथ उसके पास अपने-आप दौड़े आते हैं।

कल कार्यकर्त्ताओंकी एक सभामें इन विचारोंका आदान-प्रदान हुआ और उसके फलस्वरूप सभाने यह निर्णय किया कि चुने हुए स्वयंसेवक और स्वयंसेविकाएँ गाँवों और शहरोंमें जाकर लोगोंको स्वराज्य-धर्मकी शिक्षा दें। उदाहरणार्थ, गाँवोंमें जाने-वाले स्वयंसेवक लोगोंको गाँवको साफ और स्वावलम्बी बनाने का कर्त्तव्य सिखायें। स्वराज्यमें सरकार गाँवोंकी सफाई नहीं करेगी, बल्कि लोग उन्हें अपना समझकर खुद ही साफ करेंगे। गाँव ग्रामोद्योगोंका नाश होने से बरबाद हो गये हैं, और ग्रामो-द्योगोंका उद्धार करने से ही उनका पुनरुद्धार होगा। इसमें चरखा केन्द्र-बिन्दु है और उसके आसपास अन्य धन्धे प्रतिष्ठित हैं। यदि राजकोट राज्यमें सब अपने धर्मको समझ ले, तो कोई भी स्वदेशी कपड़े नहीं पहनेगा, बल्कि सब अपने काते हुए अथवा राज्यमें कते हुए सूतकी ही खादी पहनेंगे। इस प्रकार यदि लोग परिश्रमी हो जायें और जनताके कल्याणके लिए इन उद्योगोंको चलायें तो जनताके लाखों रुपये बच

१. इसका अंग्रेजी अनुवाद हरिजन, २५-३-१९३९ के अंकमें "टु द पीपल ऑफ राजकोट" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

जायेंगे, उसके धनकी वृद्धि होगी और वह कमसे-कम कर देकर अधिकसे-अधिक सुखी होगी। जो जनताके लिए परिश्रम करता है वह उतना ही कर अदा करता है जितना कि रुपयेके रूपमें कर देनेवाला। रुपया तो किये हुए परिश्रमको आँकने का साधन-मात्र है, इसके अतिरिक्त उसका कोई मूल्य नहीं है। मैं बाजारसे एक रुपयेका आटा लाऊँ तो इसका अर्थ यह हुआ कि मैंने गेहूँ बोनेवाले, उसे लानेवाले और उसे पीसनेवाले की मजदूरी चुकाई। इसका अर्थ यह हुआ कि असली धनिक और पूंजीपति तो ज्ञानपूर्वक उत्पादक परिश्रम करनेवाला व्यक्ति है। मैं हर साल राज्यको कर के रूपमें एक रुपया अदा करूँ या एक रुपयेके बराबर मेहनत दूँ, दोनों एक ही समान हैं। और अक्सर राज्यके लिए सिक्कोंकी अपेक्षा ऐसा परिश्रम अधिक उपयोगी होता है। परिश्रमरूपी कर प्रजाको पुष्ट तथा बलवान बनाता है। जहाँ प्रजाजन स्वेच्छापूर्वक समाजके कल्याणके लिए परिश्रम करते हैं वहाँ रुपयेका लेन-देन करने की कम जरूरत रहती है, और कर वसूल करने और उसका हिसाब रखने की मेहनत बच जाती है, किन्तु परिणाम वही निकलता है जो कर अदा करने से निकलता।

ऐसी शिक्षा प्रत्येक स्त्री-पुरुषको मिलनी चाहिए। राज्यकी सम्पत्ति प्रजाकी सम्पत्ति है। ठाकुर साहब उसके ट्रस्टी हैं। ट्रस्टीके तौरपर उन्हें स्वयं और राज-कुटुम्बियोंको अपने धर्मका पालन करना चाहिए और इस धर्म-पालनके फलस्वरूप ही उन्हें एक निश्चित रकम लेने का अधिकार प्राप्त होता है। इस तरह यदि राजा लोग अपने राजधर्मका पालन करें, तो राजा और प्रजाके बीच कभी कटुता पैदा ही न होगी।

स्वराज्यमें, राजासे लेकर प्रजा तक, एक भी अंग अविकसित रहे, ऐसा नहीं होना चाहिए। उसमें कोई किसीका शत्रु न हो, सब अपना-अपना योगदान करें, कोई निरक्षर न रहे, उत्तरोत्तर सबके ज्ञानकी वृद्धि होती जाये, सारी प्रजामें कमसे-कम बीमारियाँ हों, कोई भी दरिद्र न हो, परिश्रम करनेवाले को बराबर काम मिलता रहे, उसमें जुआखोरी, मद्यपान और व्यभिचार न हो, वर्ग-विग्रह न हो, धनिक अपने धनका विवेकपूर्वक उपयोग करें — भोग-विलासकी वृद्धि करने अथवा अतिशय संचय करने में नहीं। ऐसा नहीं होना चाहिए कि मुट्ठी-भर धनिक पच्चीकारीके महलोंमें रहें और हजारों अथवा लाखों लोग हवा और प्रकाशविहीन कोठरियोंमें रहें।

हिन्दू-मुसलमान, स्पृश्य-अस्पृश्य, ऊँच-नीचके भेदभावके सम्बन्धमें मैं पहली अपीलमें[1] लिख चुका हूँ। गरासिया और भायातोंके प्रश्नपर दो शब्द लिखने की आवश्यकता रह जाती है। ये भी जनताके अंग हैं, और स्वराज्यवादियोंको इन्हें भी अभयदान देना चाहिए। अहिंसक स्वराज्यमें कोई भी किसीके उचित अधिकारोंमें काट-छाँट नहीं कर सकता। दूसरी ओर, कोई अनुचित अधिकारोंका उपभोग भी नहीं कर सकता। जहाँका तन्त्र व्यवस्थित है, वहाँ किसीसे अनुचित अधिकारोंका उपभोग किया ही नहीं जा सकता। अनुचित अधिकारोंका उपभोग करनेवाले के खिलाफ हिंसाके प्रयोगकी कोई बात नहीं रहती। गरासिया भाइयोंको कांग्रेसकी

१. देखिए पृ० ४९-५०।

तरफसे कुछ डर पैदा हो गया है। यदि वे अपने गरासका — राज्यकी ओरसे मिली हुई अपनी जमीनका — ट्रस्टीकी तरह उपयोग करें और उद्यमी बनकर रहें, तो उनके लिए डरका कोई कारण नहीं रह जाता। कांग्रेस किसीके अधिकारपर आक्रमण करके प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं कर सकती। उसकी प्रतिष्ठा तो सार्वजनिक हित-साधनके उसके सतत प्रयत्नमें सन्निहित है।

गरासिया-मण्डलका अधिवेशन फिलहाल चल रहा है। आज उनका जो जलूस निकला था, उसे मैं अपने बिस्तरपर पड़े-पड़े देख पाया था। किसी स्वयंसेवकने उनके सूत्रवाक्य मुझे दिये हैं। वे सुन्दर हैं, इसलिए मैं उन्हें नीचे दे रहा हूँ:

१. शिक्षा, मद्य-निषेधका प्रचार करो और अपने आचरणमें सादगी लाओ।

२. गरासदार रचनात्मक काममें विश्वास रखते हैं।

३. अमुक बात मेरी है, इसलिए ठीक है, ऐसा न मानकर यह मानना सीखो कि अच्छी बात — वह किसीकी भी हो — मेरी ही है।

४. झूठे बड़प्पन, ईर्ष्या और दुर्व्यसनको तिलांजलि दे दो।

५. किसीके अधिकारपर आक्रमण करना हमारा उद्देश्य नहीं है।

६. दुःखीकी रक्षा करना हमारा धर्म है।

७. "क्षमा वीरस्य भूषणम्।"

८. "बोली बोल अमोल रे, बिन सोचे मत बोल।"

९. आजाद होनेके लिए पुरुषत्वका विकास करो।

मेरी कामना है कि मण्डलके सदस्योंको इन आदर्शोंपर चलनेका बल प्राप्त हो।

इतना सब रचनात्मक कार्य तो तभी पूरा हो सकता है, जब राजकोटके योग्य नवयुवक और नवयुवतियाँ उसे उत्साहके साथ करें। उनमें ऐसे कामके लिए श्रद्धा होनी चाहिए। हममें मूक सेवाकी आदत बहुत कम है। हमें यह आदत डालनी चाहिए। कलकी सभामें मैंने ऐसी मूक सेवा करनेवाली मण्डलीके लिए सदस्योंके नाम माँगे थे। उनके नाम मुझे मिल गये हैं। अगर ये लोग सत्य और अहिंसामें मन, वचन और कर्मसे श्रद्धा रखकर तन-मनसे अपना कार्य करेंगे तो वे राजकोटकी जनताके स्वराज्यका बोझ अवश्य उठा सकेंगे। इस सेवा-मण्डलके सदस्योंके नाम नीचे लिखे अनुसार हैं:

१. श्री उछरंगराय न० ढेबर
२. श्री जेठालाल ह० जोशी
३. श्री पोपटलाल पु० अनडा
४. श्री रामजीभाई माणेकचन्द दोशी
५. श्री सौभाग्यचन्द वीरचन्द मोदी
६. श्री जमनादास शाह

पाठक देखेंगे कि मेरे द्वारा सुझाये हुए अथवा सत्य और अहिंसामें जिन भाइयोंकी धर्म-रूप श्रद्धा नहीं है वे इससे अलग रहे हैं। लेकिन वे इस कार्यक्रमका विरोध नहीं करेंगे और मण्डलका जो काम उनसे श्रद्धापूर्वक हो सकेगा और उन्हें सौंपा जायेगा उसे वे सहर्ष करेंगे। ऐसे त्याग और स्वदेश-प्रेमके लिए मैं उन भाइयोंको बधाई देता हूँ।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १९-३-१९३९

६३. एक पत्र

आनन्दकुंज, राजकोट
१३ मार्च, १९३९

मैंने तुम्हें बहुत तकलीफ दी है, भगवान् तुम्हें इसका पुरस्कार देंगे।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २२३) से

६४. बातचीत : हरिभाऊ उपाध्याय तथा अन्य कार्यकर्त्ताओंसे[1]

१४ मार्च, १९३९

उनकी बात ध्यानसे सुनने के बाद गांधीजी ने आन्दोलनमें "तेजी लाने" के बारेमें अपना विचार उन्हें समझाया। उन्होंने कहा कि जयपुरमें सत्याग्रह आरम्भ करके आपने यहाँ एक बिलकुल नई प्रवृत्ति शुरू की है। जनताने जो उत्साह दिखाया वह आपके पूर्वानुमान और आपकी आशासे भी कहीं अधिक है। यहाँतक तो बात ठीक है। लेकिन अच्छे घोड़ेको दौड़ाते-दौड़ाते थकाकर मार डालना तो अच्छी घुड़-सवारीकी निशानी नहीं है। इस आन्दोलनको और भी व्यापक बनाने के बजाय आपको अब उसकी नीवको और ज्यादा पुख्ता करने और लोगोंमें आन्तरिक शक्ति भरने की कोशिश करनी चाहिए। गांधीजी ने आगे सत्याग्रहमें भाग लेने की अनिवार्य शर्तके रूपमें कुछ कड़ी कसौटी और प्रारम्भिक प्रशिक्षणका सुझाव देते हुए कहा कि मेरे द्वारा निर्धारित न्यूनतम स्तरतक पहुँचने के पूर्व सत्याग्रहका सविनय अवज्ञावाला हिस्सा स्थगित रखा जा सकता है, लेकिन इसका मतलब स्वयं सत्याग्रहका स्थगन

१. यह "द राजकोट फास्ट-७" (राजकोटका उपवास-७) से लिया गया है। इसकी पूर्वपीठिका समझाते हुए प्यारेलाल लिखते हैं: "हरिभाऊ उपाध्याय तथा कुछ और कार्यकर्त्ता गांधीजी से रेलगाड़ीमें मिले और उन्होंने उनसे जयपुरकी स्थितिके बारेमें बातचीत की। वहाँ एक प्रकारका गतिरोध पैदा हो गया था। वे लोग चाहते थे . . . आन्दोलनमें तेजी लाई जाये।" देखिए अगला शीर्षक भी।

नहीं है। अगर आपको जरूरी लगे तो और भी बातचीत करने के लिए आप दिल्ली आ जायें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-५-१९३९

६५. सन्देश : जयपुर निवासियोंको

१४ मार्च, १९३९

सुनता हूँ कि जयपुर निवासियोंने सत्याग्रहमें शान्तिका पालन किया है। सब लोग याद रखें कि जो व्यक्ति या समुदाय अपने कार्यके लिए सत्य और अहिंसाका पूर्ण रूपसे पालन करते हैं, उनकी सदा विजय होती है।[1]

[अंग्रेजीसे]
गांधीजी और राजस्थान, पृ० ७६

६६. पत्र : रेजिनल्ड एम० मैक्सवेलको

नई दिल्ली
[१५][2] मार्च, १९३९

प्रिय सर रेजिनल्ड,

मुझे जो सुविधाएँ दी गईं उनके कारण मैं दिल्ली जेलमें जो तीन कैदी अनशन कर रहे थे उनसे मिल सका और मुझे यह कहते हुए खुशी होती है कि उन्होंने मेरी सलाह मानकर अपना अनशन समाप्त कर दिया; वैसे यह कहना शायद ज्यादा सही होगा कि स्थगित कर दिया। मैंने सरकार जैसा आश्वासन चाहती है वैसा आश्वासन देने के लिए उन्हें राजी करने की कोशिश की। किन्तु उन्होंने कहा, हम लोग किसी तरहका वचन देकर अपनी रिहाई खरीदना नहीं चाहते। हमें किसी तरहका मुकदमा चलाये बिना ही जेलमें डाल दिया गया है, अतः जिस तरह ऐसी परिस्थितियोंमें दूसरे कई कैदियोंको छोड़ दिया गया है उसी तरह हमें भी बिना शर्त रिहा किया जाना चाहिए। मुझे लगा कि उनकी इस आपत्तिमें बल है। किन्तु मैंने उनसे कहा कि मैं उनकी रिहाईके लिए कोशिश कर सकूँ, इसके लिए यह आवश्यक है कि उन्हें मुझे तो यह आश्वासन देना ही चाहिए कि वे कांग्रेसकी अहिंसाकी नीतिमें विश्वास करते हैं और यह कि वे कांग्रेसके अनुशासनमें रहकर ही अपना काम

१. देखिए पिछला शीर्षक भी।
२. अगले पत्रमें इस शीर्षकके उल्लेखके आधारपर। लेकिन साधन-सूत्रमें "१६" है।

करेंगे। मेरी यह बात उन्होंने तुरन्त स्वीकार कर ली और अपने उक्त आश्वासनको लिपिबद्ध करते हुए मुझे एक पत्र भी दिया। किन्तु साथ ही उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि मैं उस पत्रका उपयोग उन्हें रिहाई दिलाने के लिए न करूँ और न सरकारसे उस पत्रके आधारपर उन्हें छोड़ देने के लिए कहूँ। मेरी तो यही इच्छा है कि आप इन कैदियोंको बिना शर्त छोड़ सकें तो बहुत अच्छा हो। यदि आप ऐसा करें तो राजनीतिक क्षेत्रमें अपने अहिंसाके ध्येयको आगे बढ़ाने के अपने प्रयत्नमें मेरे हाथ ज्यादा मजबूत हो जायेंगे।

श्री पकलने[1] मुझे जो पत्र भेजा है उसमें एक और शर्त भी जोड़ दी गई है। शर्त यह है कि छोड़े हुए कैदियोंको अमुक प्रान्तोंमें प्रवेश नहीं करना चाहिए। निश्चय ही, यह एक बिलकुल अनावश्यक शर्त है। यदि सम्बन्धित सरकारें उन्हें अपने क्षेत्रमें नहीं रहने देना चाहती तो वे प्रवेश-निषेधकी आज्ञा जारी करेंगी। इसके लिए भारत सरकारको ऐसी शर्तें लगाने की जरूरत क्यों होनी चाहिए?

मैं यह पत्र महादेव देसाईके हाथ भेज रहा हूँ, ताकि यदि आप चाहें तो वे आपको मेरे और उन तीन कैदियोंके बीच हुए वार्तालापका सजीव विवरण दे सकें।

हृदयसे आपका,

माननीय श्री रेजिनल्ड एम० मैक्सवेल, सी० एस० आई०, इ०
गृह-सदस्य, भारत सरकार
नई दिल्ली

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८१४) से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

६७. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

बिड़ला भवन, नई दिल्ली
१५ मार्च, १९३९

१. यह पत्र तीसरे पहर ही भेजने की आशा थी। लेकिन वाइसराय हाउससे[2] मैं सीधे दिल्ली जेलके कैदियोंके पास चला गया, जो अनशन कर रहे थे। सोचा नहीं था लेकिन वहाँ मुझे पूरे दो घण्टे लग गये। मुझे यह सूचित करते हुए प्रसन्नता हो रही है कि उन्होंने मेरी बात मानकर मेरी उपस्थितिमें ही उपवास तोड़ दिया। उन लोगोंको अबतक जबरदस्ती खिलाया जा रहा था। अब मैं उनकी रिहाईके लिए सर रेजिनल्ड मैक्सवेलको लिख रहा हूँ।[3]

१. एफ० एच० पकल, गृह-सचिव
२. "द राजकोट फास्ट-७" (राजकोटका उपवास-७) में प्यारेलालने बताया है कि गांधीजीने वाइसरायसे दो घण्टे बातचीत की थी।
३. देखिए पिछला शीर्षक।

२. मैंने हमारे बीच हुई बातचीतमें उन्हें क्या समझाने की कोशिश की, यह आपको लिखकर बता रहा हूँ। आपके तारसे[1] मेरी समझमें यह आता है कि ठाकुर साहबने २६ दिसम्बरको सरदार वल्लभभाई पटेलको जो पत्र[2] दिया उसकी व्याख्या मुख्य न्यायाधीश[3] करनेवाले हैं। अगर यह मान ले कि व्याख्या हमारे दृष्टिकोणसे मेल खाती है तो फिर समितिकी स्थापना करनी पड़ेगी, जिसमें सात सदस्योंके नाम सरदार देंगे और तीन सरकारी सदस्योके नाम ठाकुर साहब सुझायेंगे, तथा उन दस सदस्योंमें से अध्यक्षका चुनाव ठाकुर साहब करेंगे।

३. आपके तारमें जिस दूसरी बातकी तजवीज है वह यह है कि अगर २६ दिसम्बरकी अधिसूचनाके अर्थके बारेमें एक ओर सरदारके नामजद किये सदस्यों और दूसरी ओर सरकारी सदस्योंके बीच मतभेद होता है[4] तो मामला मुख्य न्यायाधीशके सामने ले जाया जायेगा और उन्हीका निर्णय अन्तिम होगा। जहाँतक मुख्य न्यायाधीशके दो मुद्दोंका सम्बन्ध है, तारसे उसका तकनीकी अर्थ मुझे यही मालूम होता है। संविधान-रचनाके सम्बन्धमें बहुमतका निर्णय लागू होना चाहिए।[5]

४. मैंने आपसे जिन दो मुद्दोंके बारेमें लिखने का वादा किया था उनके सम्बन्धमें इस पत्रमें और कुछ कहने की तो आवश्यकता नहीं है; किन्तु आपका ध्यान इस ओर खीचना आपके प्रति मेरा कर्त्तव्य है कि ठाकुर साहबके सलाहकारोंने कुछ लोगोंको नामजद करने को उन्हें वचनबद्ध कर दिया है,[6] और इस वचनको झुठलाना तो शायद सर्वोच्च सत्ताके लिए भी बहुत अटपटा काम साबित हो सकता है। मेरा तात्पर्य दो मुसलमान सदस्यों और एक भायातसे है। आपको शायद इस कठिनाईकी जानकारी है और मैंने इससे निकलने के जो रास्ते सुझाये है वे भी आपको मालूम है। अगर ऐसी बात न हो तो मैं आपको वह सब समझाने के लिए खुशीसे तैयार हूँ। हमारी बातचीतके विषयमें सोचते हुए मुझे लगता है कि वह कई तरहसे अनिर्णायक रही। आपके पास समयकी कमीका ध्यान मुझे बराबर बना रहा और मैंने सोचा कि चूंकि आपको हर चीज ठीक ही चल रही दिखाई दे रही है, इसलिए मै आपको और ज्यादा परेशान नही करना चाहता था। आप इस बातसे सहमत होंगे कि जिन शर्तोंपर मैंने उपवास तोड़ा उनको पूरा करने के लिए जो अनेक कदम

१. रेजीडेन्ट ई० सी० गिब्सनकी मारफत दिया गया तार; देखिए परिशिष्ट ३।

२. साधन-सूत्रमें हाशियेपर लिखी गई वाइसरायकी टिप्पणी इस प्रकार है: "ठीक है, लेकिन मैं नहीं कह सकता कि मुख्य न्यायाधीश क्या करेंगे; मतलब यह कि अधिसूचनाका अर्थ वे दस सदस्योंके अतिरिक्त एक अध्यक्ष भी लगा सकते हैं।"

३. सर मॉरिस ग्वायर

४ और ५. हाशियेपर वाइसराय द्वारा दी गई टिप्पणी इस प्रकार है: "नहीं। किन्हीं भी सदस्योंके बीच। इस या उस गुटके बीच ही नहीं (देखिए मेरा तार)। बहुमतके निर्णयका प्रश्न स्पष्टतः मुख्य न्यायाधीशके निर्णयार्थ सौंपी जानेवाली बातोंमें है। मुझे नहीं मालूम कि वे क्या कहेंगे।"

६. वाइसरायकी टिप्पणी इस प्रकार है: "हम फिर २६ दिसम्बरकी अधिसूचना और सरदार पटेलके नाम ठाकुर साहबके पत्रकी बातपर आ गये हैं।"

उठाने हैं उनके सम्बन्धमें कोई गलतफहमी नहीं होनी चाहिए। किसी भी कार्रवाईके घोषित कर दिये जाने के बाद यदि उसपर आपत्ति करना मेरा कर्त्तव्य हो जाता है तो यह बड़ी बुरी बात होगी। इसलिए मेरा सुझाव है कि जो भी घोषणा या घोषणाएँ[1] राजकोटके मामलेके सम्बन्धमें की जानी हों उनकी जानकारी मुझे पहले ही दे दी जानी चाहिए।

५. और जैसा कि मैं आपको बता चुका हूँ, जिसे ठाकुर साहबके नाम मेरा अल्टीमेटम कहा गया है और जिसके बारेमें मुझे आपके दो तारोंमें आश्वासन दिया गया है उस पत्रमें मैंने और भी बहुत-सी बातें उठाई हैं। मुझे लगता है कि हमारे बीच एक और बातचीत होना आवश्यक है, ताकि हमारे बीच हुए तारोंके आदान-प्रदानमें उठाये गये बहुत-से मुद्दोंको ठीकसे और अन्तिम रूपसे स्पष्ट किया जा सके।[2] मुझे आपने जल्दीमें देशी राज्योंके बारेमें सामान्य तौरसे जो-कुछ बताया उसके विषयमें तथा आप निकट भविष्यमें जो नीति अपनाने का विचार कर रहे हैं उसके सम्बन्धमें सोचता हूँ तो मन बहुत उद्विग्न हो उठता है। यह मानते हुए कि मैंने आपकी बातें ठीक-ठीक समझ ली हैं, मेरा मन एक अस्पष्ट भयसे ग्रस्त हो उठता है। वह भय क्या है, यह मैं लिखकर नहीं बताना चाहता। अगर आप लिख भेजने को कहें तो बात और है। इसलिए भी मैं आपसे मिलना चाहता हूँ।

क्या आप मुलाकातका कोई समय सूचित कर सकते हैं?[3]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे · लार्ड लिनलिथगो पेपर्स; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार। एक नकल (सी० डब्ल्यू० ७८१३) से भी; सौजन्य: घ० दा० बिड़ला

१. वाइसरायकी टिप्पणी इस प्रकार है: "कौन-सी 'घोषणा'? मैं तो कोई घोषणा करने का विचार नहीं कर रहा हूँ।"

२. अनुच्छेदका शेष अंश सी० डब्ल्यू० साधन-सूत्रसे लिया गया है।

३. प्यारेलालके अनुसार १६ मार्चको शामके ५ बजेसे ७-३० बजेतक गांधीजी ने वाइसरायसे फिर बातचीत की, जो निर्णायक रही।

६८. बातचीत : फिलिपोजसे[1]

दिल्ली
१५ मार्च, १९३९

सविनय अवज्ञा न तो सत्याग्रहका आदि है, न उसका अन्त। सत्याग्रहका मर्म तो तपश्चर्यामें है। अतः हम थोड़ी तपश्चर्या और करें। इस दृष्टिसे कल्पित स्थगनसे हमारे आन्दोलनकी कदापि कोई हानि नहीं हो सकती। विरोधी अभी हमसे जैसे व्यवहारकी अपेक्षा रखता है वैसा व्यवहार यदि हम नहीं करते, किसी तरहका दिखावा या उत्पात नहीं करते अथवा ऐसा कुछ नहीं करते जिससे उसके गुण्डोंको हमारे ऊपर पाशविक आक्रमण करने का अवसर मिले तो यह सब देखकर उसे यही अनुभव होगा कि उसकी शक्तिका स्रोत सूख गया है। हमें उकसाने और दबाने के लिए वह जो भी करे, उसका मुकाबला हमें तो अपनी शान्ति और आदर्श आत्म-संयमसे ही करना चाहिए, फिर चाहे इसके लिए हमें कोई कायर ही क्यों न कहे। यदि हममें कायरता नहीं है तो हम सुरक्षित ही हैं; अन्तमें हमारा यह व्यवहार वीरताका एक विरल उदाहरण ही कहा जायेगा।

इस बीच हम यह देखते रहें कि घटनाएँ क्या रूप लेती हैं। कुछ राज्य आजकल जनताके आन्दोलनको कुचलने के लिए जैसे आतंककारी तरीके अपनाते प्रतीत हो रहे हैं, उन्हें देखते हुए मैं इस आन्दोलनको चलाने की नई योजनाएँ ढूँढ़ रहा हूँ। हमें सत्याग्रहकी ऐसी कोई पद्धति खोज निकालनी है कि शान्तिप्रिय नागरिकोंके खिलाफ भाड़ेके गुण्डोंका उपयोग निष्फल हो जाये।

योग्य सेनापति लड़ने का समय और क्षेत्र स्वयं चुनता है। इस सम्बन्धमें पहल करने की सुविधा वह अपने हाथमें रखता है, उसे कभी दुश्मनके हाथोंमें नहीं जाने देता।

सत्याग्रहकी लड़ाईमें लड़ने की रीति और दाव-पेंचोंका चुनाव, यानी कब आगे बढ़ना और कब पीछे हटना है, कब सत्याग्रह करना या रचनात्मक तथा शुद्ध मानव-सेवाके कार्योंके द्वारा अहिंसक शक्तिका निर्माण करना है इन बातोंका निर्णय परि-स्थितिकी माँगके अनुसार किया जाता है। इसलिए सत्याग्रहीको लड़ाईकी जो भी योजना उसके सामने रखी जाये उसपर दृढ़ संकल्पके साथ किसी भी तरहके आवेग या अवसादके बिना अमल करना चाहिए।

सत्याग्रहीका तो एक उद्देश्य है — अपना कर्त्तव्य, चाहे वह कुछ भी हो, करते हुए अपने प्राण न्योछावर कर देना। यही उसकी सर्वोच्च सिद्धि और

१. यह बातचीत प्यारेलालके "द राजकोट फास्ट–७" (राजकोटका उपवास–७) से उद्धृत है। लेखके अनुसार यह बातचीत अपराह्णमें हुई और त्रावणकोरकी स्थितिके बारेमें थी।

प्राप्ति है। जिस कार्यके पीछे ऐसे योग्य सत्याग्रही होते हैं, उनकी हार कभी नहीं हो सकती।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-५-१९३९

६९. तार : मीराबहनको

नई दिल्ली
१६ मार्च, १९३९

मीराबहन
उतमानजई
चारसद्दा तहसील

राजकोट नहीं जा रहा। अभी कुछ दिन यहीं हूँ। यदि तुम चाहो तो आ सकती हो। मैं ठीक हूँ।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४३६) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००३१ से भी

७०. पत्र : रेजिनल्ड एम० मैक्सवेलको

बिड़ला भवन, नई दिल्ली
१६ मार्च, १९३९

प्रिय सर रेजिनल्ड,

मेरा पत्र[1] आपको देते समय महादेव देसाईकी आपसे जो बातचीत हुई, उसका सार उन्होंने मुझे बता दिया है। आपने उन्हें मिलने के लिए समय दिया, उसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। आपने जो सुझाव दिया वह भी उन्होंने मुझे बताया। कैदियोंकी इच्छाएँ जाने बगैर मैं कोई कदम उठाना नहीं चाहता था, इसीलिए मैंने उन्हें उनके पास भेजा। अब मैं यह कह सकता हूँ कि मुझे यह विश्वास हो गया है कि वे हिंसाको भारतकी स्वतन्त्रता प्राप्त करने का तरीका नही मानते हैं और उनका ऐसे किसी भी संगठनमें शामिल होने का इरादा नही है जिसकी गति-विधियाँ हिंसात्मक हों। मुझे उम्मीद है कि आप इस पत्रके आधारपर कैदियोंकी

१. देखिए पृ० ६२-३।

बिना शर्त रिहाईकी घोषणा करने की कृपा करेंगे। मुझे पूर्ण आशा है कि एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमें जाने से सम्बन्धित शर्तें अब बिलकुल हटा दी जायेंगी।

हृदयसे आपका,

माननीय सर रेजिनल्ड एम० मैक्सवेल, सी० एस० आई०, सी० आई० ई० गृह-सदस्य,
भारत सरकार
नई दिल्ली

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८१२) से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

७१. पत्र: जमनालाल बजाजको

दिल्ली
१६ मार्च, १९३९

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। 'मैं जान-बूझकर ज्यादा नहीं लिखना चाहता। मेरा दृढ़ विश्वास है कि हमें अपनी माँगोंमें वृद्धि नहीं करनी चाहिए। यदि प्रजा-मण्डलको बिना शर्त मान्यता और सिविल लिबर्टी (नागरिक स्वतन्त्रता) दे दी जाये तो हम सविनय अवज्ञा आन्दोलन समाप्त कर देंगे।'[1] अलबत्ता, कैदियोंको तो उसे छोड़ना ही चाहिए।

तुम्हारी तबीयत ठीक रहती होगी। मानसिक स्थिति भी उत्तम होगी। क्या तुम कुछ पढ़ते हो? कातते हो? तुम्हारा वजन कितना है? तुम्हें फल वगैरह तो खाने ही चाहिए। इसमें हठ करना मोह है। हम स्वादके लिए भले न खायें, किन्तु शरीर जो माँगे वह उसे औषधके रूपमें दिया जाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३००१) से

१ प्रजा-मण्डलने २३ मार्चको सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थगित कर दिया था।

७२. भेंट : गोविन्द बिहारी लालको[1]

[१६ मार्च, १९३९][2]

गांधीजी ने अमेरिका और मेरे अपनाये गये देशके सम्बन्धमें मेरे व्यक्तिगत अनुभवके बारेमें बातचीत शुरू की। . . . उन्होंने मुझसे भारतकी राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानीमें बातचीत की। उन्होंने कहा :

आप हमारी भाषा नही भूले? सयुक्त राज्यमें चौथाई सदी बिताने पर भी नही। यह बडे सन्तोषकी बात है।

मेरे पहले प्रश्नके उत्तरमें . . . गांधीजी ने गम्भीरताके साथ उत्तर दिया :

वह दिन दूर नहीं जब भारतको राजनीतिक स्वतन्त्रता, शुद्ध राजनीतिक स्वतन्त्रता हासिल हो जायेगी।

महात्मा गांधीने ब्रिटिश सरकारके खिलाफ एक भी रोषपूर्ण शब्द नहीं कहा। उन्होंने इस बातपर जोर दिया कि अब भारतकी स्वतन्त्रता और प्रगतिकी असली समस्या अपने-आपको सुसंगठित करने की है। . . . उन्होंने बताया :

बाहरी लोग इस तथ्यको शायद न समझते हो कि ब्रिटिश भारत (अर्थात् देशी नरेशों द्वारा शासित हिस्सोको छोडकर शेष भारत) के अधिकाश प्रान्तोंका प्रशासन आज राष्ट्रवादी लोग, काग्रेस पार्टीके मन्त्री चला रहे हैं। इससे मोटे तौर-पर यह नजर आता है कि इस देशमें राष्ट्रवादी आन्दोलन पहले ही राजनीतिक सत्ता प्राप्त कर चुका है।

अब बड़ा सवाल समग्रतः भारत सरकारका है। जब केन्द्रीय या संघीय सरकार भारतीयोंके हाथमें आ जायेगी तब भारत आयर्लैण्डकी तरह वस्तुतः एक स्वतन्त्र देश हो जायेगा। लेकिन गांधीजी और राष्ट्रवादियोंके अनुसार ब्रिटिश सरकार द्वारा १९३६ में बनाई गई संघ-योजना भारतको स्वायत्त शासन देने के लिए नहीं थी। उन्होंने कहा :

वर्तमान सघ-योजनाको यदि स्वीकार कर लिया जाये तो इससे भारतकी स्वतन्त्रताके हित की हानि ही होगी। वाइसराय यही कोशिश करेंगे कि योजना स्वीकार कर ली जाये। राष्ट्रवादी, बहुत-से राजे-महाराजे, फिरकापरस्त और दूसरे

१. मुलाकाती हर्स्ट समाचारपत्र-समूहके विज्ञान सम्पादक थे। त्रिपुरी काग्रेसमें वे इन्टरनेशनल न्यूज सर्विसके प्रतिनिधिकी हैसियतसे शामिल हुए थे। गांधीजी ने उन्हें तीसरे पहर मुलाकात दी थी।

२. बिहारी लालने इस विवरणमें बताया है कि मुलाकातके एक दिन पहले गांधीजी को एक स्त्री से १०,००० रु० का चन्दा मिला था। गांधी — १९१५-१९४८ : ए डिटेल्ड क्रॉनोलॉजीके अनुसार यह चन्दा १५ मार्चको मिला था।

लोग विभिन्न कारणोंसे इसका विरोध करेंगे। यह बड़ी गम्भीर स्थिति है। भारतीय वातावरणमें बड़े तूफान आनेवाले हैं।

प्रश्न : यदि युद्ध शुरू हो गया तो राष्ट्रवादी भारत क्या करेगा?

गांधीजी : मैं पहलेसे ही इसका कोई उत्तर नहीं दे सकता। परन्तु यह निश्चित है कि स्वतन्त्र भारत दूसरे सच्चे जनतन्त्रोंके साथ मिलकर काम करेगा और सारे संसारमें जनतन्त्र और मानवताका हित-संवर्धन करने में सदा सहायता करेगा।

मैं यह जानने को उत्सुक था कि अहिंसक विद्रोहकी नई पद्धतिका सहारा लेकर उन्होंने अपने मार्ग-दर्शनमें करोड़ों भारतीयोंको "स्वशासन" के संघर्षमें कैसे एकजुट करके खड़ा कर दिया। उन्होंने समझाया :

वास्तविक स्वशासनका अर्थ है अपनी परम्परागत तथा बाहरसे लादी गई असमानताओंसे भारतकी मुक्ति।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-५-१९३९

७३. बातचीत : हैदराबादके आर्यसमाजी नेताओंके साथ[1]

१६ मार्च, १९३९

किसी भी प्रकारके सत्याग्रहमें उद्देश्योंकी घालमेल हानिकारक है, पर धार्मिक सत्याग्रहमें तो उसकी किसी भी तरह अनुमति नहीं दी जा सकती। किसी प्रच्छन्न राजनीतिक या सांसारिक उद्देश्यके लिए धार्मिक सत्याग्रहको एक आवरण या साधनकी तरह प्रयुक्त करना घातक है।

जो बात लक्ष्यके बारेमें है वही साधनके बारेमें भी है। साधनकी परिपूर्ण विशुद्धताको इस प्रकारके सत्याग्रहका सार ही समझना चाहिए। इस तरहके आन्दोलनमें नेता ऐसा आदमी होना चाहिए जो गहन आध्यात्मिक जीवन बिताता हो। ज्यादा अच्छा तो यह होगा कि वह ब्रह्मचारी हो, फिर चाहे विवाहित हो या अविवाहित। जिस विशेष धार्मिक विधानके लिए आन्दोलन छेड़ा गया है उसमें उसकी आस्था होनी और उसे उसपर आचरण करना चाहिए। वस्तुतः इस तरहके आन्दोलनमें भाग लेनेवाले हर व्यक्तिको ऐसा ही होना चाहिए। नेता सत्याग्रहके विज्ञानमें निष्णात होना चाहिए। उसकी वाणीमें सत्य और अहिंसाकी दीप्ति रहनी चाहिए। उसके सभी कार्य बिलकुल खुले और सुस्पष्ट होने चाहिए। कूटनीति और षड्यन्त्र उसके शस्त्र

१. "द राजकोट फास्ट-७" (राजकोटका उपवास-७) से उद्धृत। इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९३९, जिल्द १ के अनुसार "शिष्टमण्डलने, जिसमें लाला देशबन्धु गुप्ता और प्रो० सुधाकर शामिल थे, हैदराबाद राज्यमें आर्यसमाजके सत्याग्रहके सम्बन्धमें गांधीजी से मुलाकात की।"

कदापि नहीं हो सकते। इस तरहके सत्याग्रहके लिए अहिंसा और ईश्वरमें पूर्ण आस्था एक अनिवार्य शर्त है।

धार्मिक सत्याग्रहमें आक्रामकता, प्रदर्शन और दिखावेको कोई स्थान नही हो सकता। उसमें भाग लेनेवालों के मनमें अपनेसे भिन्न धर्मावलम्बियोके धार्मिक विश्वासों और भावनाओके लिए भी उतना ही सम्मान और आदर होना चाहिए। उनके दृष्टिकोणमें यदि जरा-सी भी संकीर्णता होगी तो वह विरोधीको कई गुना बड़ी दिखाई दे सकती है।

धार्मिक सत्याग्रह, प्रथमतः आत्मशुद्धिकी एक प्रक्रिया है। वह मात्र संख्या और वाहरी सहायताकी उपेक्षा करता है, क्योकि उससे सत्याग्रहीकी आत्मशुद्धिमें कोई वृद्धि नही होती। इसके विपरीत, वह पूर्णतया ईश्वरपर निर्भर रहता है, जो समस्त शक्तिका स्रोत है। धार्मिक सत्याग्रह, इसलिए, सर्वाधिक सफलता ऐसे सच्चे भगवत्परायण व्यक्तिके नेतृत्वमें ही प्राप्त करता है, जो अपने जीवनकी पवित्रता, अपने ध्येयकी पूर्ण निःस्वार्थता और अपने दृष्टिकोणकी उदारतासे विरोधीतक का सम्मान और प्रेम प्राप्त कर लेता है।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-५-१९३९

७४. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

बिड़ला भवन, नई दिल्ली
१७ मार्च, १९३९

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

मामला मुख्य न्यायाधीशको सौंपने के लिए तैयार किये गये पत्रका मसौदा, जो कल कृपापूर्वक आपने मुझे दिया था, मैं अब लौटा रहा हूँ। मैंने उसे सरदार पटेलको दिखाया; हम दोनों उसमें और कुछ नही जोड़ना चाहते। मसौदेकी एक नकल मैंने अपने पास रख ली है।

कल मैंने आपका वहुत ज्यादा समय ले लिया, इसके लिए आपसे पुनः क्षमा-याचना करता हूँ। तथापि मैं आशा करता हूँ कि जैसा मुझे लगता है उसी तरह आपको भी यह लगता होगा कि हमारा वह समय अच्छी तरह ठीक काममें व्यतीत हुआ। कम-से-कम राजकोटके विषयमें आगे कोई गलतफहमी न हो इसके लिए कोई मनुष्य जितना कर सकता है उतना प्रयत्न तो आवश्यक ही है।

१. प्यारेलाल आगे लिखते हैं: "इसके कुछ देर वाद कुमारी अगाथा हैरिसन आईं और उन्होंने पूछा... 'क्या यह सच है कि सच्चा सत्याग्रह किसीको प्रतिशोधकी कार्रवाई करने का उत्तेजन नहीं देता?' गांधीजी ने उत्तर दिया: 'हाँ, सच्चा सत्याग्रह आध्यात्मिक अभ्यास है। इसलिए वह किसी व्यक्तिके श्रेष्ठ गुणको तो उभार सकता है, लेकिन उसके दुर्गुणको उत्तेजन नहीं दे सकता'।"

लेडी लिनलिथगोसे परिचय कराने के लिए मैं आपको फिर धन्यवाद देता हूँ।[1]

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१४९) से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर

७५. पत्र: यशवन्तराव होलकरको

दिल्ली
१७ मार्च, १९३९

राजा साहेब,[2]

हिन्दी साहित्य सम्मेलनके[3] मीठे स्मरण मैं भूला नही हूँ। मेरी उमेद है कि हिन्दी विश्वविद्यालय इंदोरमें बनाने का कार्य आगे बढ रहा है।

आपका,
मो० क० गांधी

पत्रकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

७६. हरिजन-कार्यके निमित्त दौरा

श्री ठक्कर बापा और श्री रामेश्वरी नेहरूने मध्य भारत और दक्षिण राजपूतानाके राज्योंका दौरा किया है। आशा है, श्री रामेश्वरी नेहरू द्वारा प्रस्तुत दौरेका यह वृत्तान्त[4] पाठक चावसे पढ़ेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-३-१९३९

१. १८ मार्चको इसका उत्तर देते हुए वाइसरायने लिखा: "मुख्य न्यायाधीशको सौंपे जानेवाले विचारार्थ विषयोंकी सूची आपने वापस भेजी . . . इसके लिए धन्यवाद। मुझे इस बातकी खुशी है कि आपको इस सम्बन्धमें कुछ कहना नहीं था।"

२. इन्दौरके

३. २० अप्रैल से २३ अप्रैल, १९३५ का; देखिए खण्ड ६०।

४. अखिल भारतीय हरिजन सेवक संघकी उपाध्यक्षा, रामेश्वरी नेहरूने लिखा था: "इस दौरेका उद्देश्य जहाँ भी हरिजन सेवक संघ द्वारा कुछ काम किया गया था वहाँ उस कामको पुख्ता करना और जहाँ यह प्रवृत्ति नहीं चलाई जा रही वहाँ नये केन्द्र खोलना और अस्पृश्यता-निवारणका प्रचार करना था।" चार किस्तोंमें प्रकाशित यह वृत्तान्त यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

७७. तार : उ० न० ढेबरको[1]

नई दिल्ली
१८ मार्च, १९३९

उछरंगराय ढेबर, वकील
राजकोट

यहाँका काम जल्दी निवटवा रहा हूँ।[2] इस बीच जो भी हो सहन करना। मुझे खबर देते रहना।

बापू

हरिजन, ३-६-१९३९। अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१४७) से भी; सौजन्य द० बा० कालेलकर

७८. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

बिड़ला भवन, नई दिल्ली
१८ मार्च, १९३९

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

आशा है, आप ऐसा नही कहेंगे कि 'अरे अविश्वासी, तुझे भरोसा ही नही होता।' आपमें मुझे प्रचुर विश्वास है, किन्तु मुझे यह भय बेचैन किये है कि आपको राजकोटके विषयमें मेरी कठिनाईकी पूरी कल्पना नही है। ऐसा लग रहा है कि जो स्वतन्त्रता आनेवाली है वह बडी अवास्तविक-सी चीज होगी। अपने व्यवहार और वाणीमें अहिंसाकी रक्षाका ध्यान रखते हुए राजकोटकी जनता इन दोनो बातोमें अत्यधिक स्वतन्त्रताका उपभोग करती रही है। किन्तु आज जब उसे स्वशासन-अधिकार मिलनेवाले है, वह अपनेको स्वतन्त्रतासे प्राय· वंचित पा रही है। वहाँसे प्राप्त एक तारकी[3] नकल तो आपके समक्ष है ही। एक दूसरे तारकी नकल यह रही .

१. "द राजकोट फास्ट–८" (राजकोटका उपवास–८) से उद्धृत।

२. सी० डब्ल्यू० साधन-सूत्रका पाठ यहाँ कुछ भिन्न हैं। देखिए अगला शीर्षक ।...

३. उ० न० ढेबर द्वारा प्रेषित यह तार इस प्रकार था: "राज्यकी नीतिमें कोई परिवर्तन नहीं। उसने फलाकी बिक्रीका इजारा दिया है। आजाद चौककी नींव खोदी जा रही है। दो कार्यकर्त्ताओंको खेरडीमें रहने की इजाजत नहीं दी गई। किसानोंसे जुर्माने और ढुलाई महसूल वसूल करने के लिए सख्ती बरती जा रही है। अपना हिस्सा ले जाने की इजाजत नहीं दी गई। सहानुभूति रखनेवाले किसानोंसे चौथाईकी जगह तीसरा हिस्सा माँगा जा रहा है।".

खान साहब (कौंसिलके प्रथम सदस्य) ने कहलाया है कि वे सेवा मण्डलकी साक्षरता-प्रचारकी प्रवृत्तिको मौजूदा परिस्थितिमें अवांछनीय मानते हैं और चाहते हैं कि जबतक समझौतेकी बातचीत पूरी नहीं हो जाती तबतक उसे बन्द रखा जाये। —ढेबर।

यदि राजकोटके लोगोंको आज सामान्य स्वतन्त्रता भी नहीं मिल सकती तो यह आशा कैसे की जा सकती है कि दो या तीन सप्ताह बाद उन्हें पूरी स्वतन्त्रता मिल जायेगी? इसकी परिणति किसी दुःखद घटनामें न हो, इसलिए मैं सुझाता हूँ कि आप रेजीडेंटसे कहें कि सारी व्यवस्था वे अपने हाथमें ले लें और सत्ता जनताको सौंपने का रास्ता साफ करने के लिए अपने-आपको जिम्मेदार बना लें। उपयुक्त संविधान बन जाने पर भी इसके बाद जो काम किया जाना है उसे पूरा करने-वाला — जनताको उसकी माँगी चीज देनेवाला — राजकोटमें कोई नहीं है; दरबार वीरावालाके अदृश्य हाथ कुछ भी नहीं देंगे। मेरा खयाल है, आप यह तो जानते ही हैं कि — अगर उन्होंने मुझसे सच कहा है तो — उनकी सरकार द्वारा बाकायदा स्वीकृत कोई हैसियत नहीं है।

यह पत्र — और वह भी रविवारके दिन — भेजना आपपर ज्यादती ही है कृपया इसके लिए क्षमा करें। लेकिन मेरी दृष्टिके अनुसार वस्तुस्थिति जैसी है, वह तो आपको जाननी ही चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१३५) से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर

७९. सन्देश : मिस्रको[1]

१८ मार्च, १९३९

मेरे पास कोई नई बात कहने को नहीं है। आपके यहाँ पहुँचने पर अपने तारमें[2] मैंने जो-कुछ कहा था, उसीको दोहराते हुए मैं यह कहूँगा कि भारत और मिस्र सच्ची मित्रताके सूत्रमें बँधें। यह केवल शिष्टाचारवश व्यक्त की गई कामना नहीं है। यह मेरी हार्दिक कामना है। दोनों देशोंकी संस्कृतियोंमें बहुत-सी समानताएँ हैं। इसके अलावा, भारतमें मुसलमानोंकी काफी बड़ी आबादी है।

१. "द राजकोट फास्ट-७" (राजकोटका उपवास-७) से उद्धृत। मिस्रका प्रतिनिधि-मण्डल दोपहरमें गांधीजी से मिला था और उनसे मिस्रके लिए एक सन्देश देनेकी प्रार्थना की थी।
२. देखिए "तार: क० मा० मुंशीको", पृ० ४७।

भारत और मिस्रकी मित्रतासे हमारी बहुत-सी घरेलू समस्याओंको सुलझाने में मदद मिलनी चाहिए।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-५-१९३९

८०. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[2]

१८ मार्च, १९३९

ये दोनो मन्दिर मालवीयजी महाराजकी प्रेरणासे और बिड़ला-परिवारकी दानशीलतासे बने हैं — खासकर श्री जुगलकिशोर बिड़लाकी, जिनकी ऐसी चीजोंमें ज्यादा रुचि है। उचित तो यह था कि इनके निर्माणमें जिनकी प्रेरणा थी उन्हींके, अर्थात् मालवीयजी के हाथोसे ही इनकी उद्घाटन-क्रिया भी होती। किन्तु वे यहाँ नही है, अतः दैवयोगसे यह बोझ मेरे सर आया है।

मुझे आशा है कि ये दोनों मन्दिर भक्तोंकी धर्म-भावनाकी वृद्धिमें खास योग देंगे। बुद्ध-मन्दिरमें तो छुआछूतको कोई स्थान हो नही सकता, लेकिन कृष्ण-मन्दिरमें भी ऊँच-नीचका भाव अथवा स्पृश्यास्पृश्यका भेद निषिद्ध होना चाहिए। मेरी रायमें शुद्ध हिन्दू-धर्ममें ऊँच-नीच और छुआछूतकी भावना है ही नहीं। वर्ण-भेद अवश्य है, परन्तु कोई वर्ण दूसरे वर्णसे ऊँचा नहीं है। वर्णमें श्रेष्ठता-कनिष्ठता नही है, केवल कार्यों तथा कर्त्तव्योंकी व्यवस्था है।

जिस वर्णके पास अधिक सम्पत्ति है — भौतिक या आध्यात्मिक — उसको अधिक नम्र बनना है और समाजकी अधिक सेवा करनी है। ऊँच-नीच और छुआछूतका भेद होते ही हिन्दू-धर्मका पतन शुरू हुआ। हिन्दू-धर्म सत्य और अहिंसाकी दृढ़ नीव पर खड़ा हुआ है और इस कारण हिन्दू-धर्म किसी धर्मका विरोधी नहीं हो सकता।

हिन्दू-धर्मावलम्बियोंकी नित्य-प्रार्थना यह होनी चाहिए कि जगत्के प्रतिष्ठित धर्मोंकी उन्नति हो और उनके द्वारा सारी मानवताकी सेवा हो। मेरी ऐसी उम्मीद है

१. अन्तमें प्यारेलाल कहते हैं: "एक दुभाषियेने प्रतिनिधि-मण्डलके नेताको मिस्रकी भाषामें इसका अनुवाद करके समझाया। जाते समय उसने . . . मिस्रीमें कहा: 'हम आपकी दीर्घायुकी कामना करते हैं क्योंकि आप सिर्फ भारतका ही सहारा नहीं हैं बल्कि पूरा विश्व आपकी ओर आशाकी दृष्टिसे देखता है। आप जो काम कर रहे हैं वह समस्त प्राच्य संसारके लिए है।' गांधीजी ने उत्तर दिया, 'कमसे-कम आशा तो मैं भी यही करता हूँ।'"

२. यह "ईक्वल रेस्पेक्ट फॉर रिलीजन्स" (सभी धर्मोंके लिए समान आदर) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था और इसकी पृष्ठभूमि समझाते हुए लेखकने बताया था: ". . . गांधीजी ने दिल्लीमें . . . लक्ष्मी नारायण मन्दिर और बुद्ध विहारका उद्घाटन किया। विशाल संख्यामें एकत्र लोगोंने गांधीजी के लिए मन्दिरके प्रांगणमें प्रवेश करना कठिन बना दिया और माइक्रोफोनकी व्यवस्थामें गड़बड़ी आ गई। इसलिए जो-कुछ वे बोलकर कहते वह उन्होंने समाचारपत्रोंके लिए एक वक्तव्य जारी करके बताया।"

कि इन मन्दिरोंके द्वारा धार्मिक समभावका प्रचार होता रहेगा, और कौमी द्वेष-भाव और झगड़े मिटते चले जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-३-१९३९

८१. टिप्पणी : जयपुर सत्याग्रह परिषद्को

१९ मार्च, १९३९

मेरा अभिप्राय है कि जबतक मैं दूसरा निर्णय न दूँ तबतक सत्याग्रहजथाको जैपुर भेजने का थकित[1] कर दिया जाय।

मो० क० गांधी

सी० डब्ल्यू० ६१६६ से; सौजन्य : घ० दा० बिड़ला। हिन्दुस्तान टाइम्स, २०-३-१९३९ से भी

८२. आवश्यक योग्यताएँ

चार दिनके इस उपवासने मुझे सत्याग्रहीके लिए आवश्यक योग्यताओंपर विचार करने को प्रवृत्त किया। यद्यपि १९२१ मे उनपर सावधानीपूर्वक विचार किया जा चुका है और वे लिपिबद्ध भी की जा चुकी हैं,[2] लेकिन उन्हे भुला दिया गया मालूम होता है। क्योकि कई रियासतोमें सविनय अवज्ञाके रूपमे सत्याग्रह किया जा रहा है या करने का विचार चल रहा है, इसलिए उन योग्यताओंको दुहरा देना और अनेक कार्यकर्त्ताओंमें फैले दिखनेवाले गलत खयालोंको दूर करना जरूरी है।

इसके अलावा, इस समय जब कि वातावरणमें अहिंसा नही, बल्कि हिंसा व्याप्त हुई दिखाई देती है, बहुत अधिक सावधानी रखी जाने की जरूरत है। वैसे तो, पर्याप्त औचित्य के साथ यह दलील भी दी जा सकती है कि हिंसासे भरे वातावरणमें अहिंसाके लिए कोई स्थान नही है। यहाँतक कि इस दलीलको बहुत ज्यादा खीचकर अहिंसाको सर्वथा बेअसर बनाया जा सकता है, किन्तु अहिंसा-वादियोंका दावा यह है कि हिंसाका, फिर चाहे वह कितनी ही भीषण क्यों न हो, कारगर जवाब अहिंसा ही है। लेकिन जब वातावरणमें हिंसा व्याप्त हो, तब अहिंसाकी अभिव्यक्ति सविनय अवज्ञाके जरिये नही होनी चाहिए, और यदि अवज्ञा सविनय होनी हो, तो वह उपयुक्त प्रतिबन्धोंसे युक्त होनी चाहिए। सत्याग्रहमें — और

१. स्थगित
२. देखिए खण्ड २२, पृ० १०७।

खासकर उस समय, जब कि हिंसात्मक शक्तियाँ सर्वोपरि हो रही हो — संख्याका नही हमेशा गुणोंका ही महत्त्व होता है।

फिर, अक्सर यह भुला दिया जाता है कि सत्याग्रहीकी अन्यायीको परेशान करने की इच्छा कभी नही होती। प्रतिपक्षीको डराने या दबाने की नही, बल्कि हमेशा उसके हृदयको छूने की वृत्ति होनी चाहिए। सत्याग्रहीका उद्देश्य अन्यायीका हृदय-परिवर्तन करना है, उसे दबाना नही। उसे अपनी सब प्रवृत्तियोमें कृत्रिमतासे बचना चाहिए। उसे हमेशा स्वाभाविक रूपमें और आन्तरिक विश्वासके अनुसार काम करना चाहिए।

इन बातोको अपने ध्यानमें रखते हुए पाठक शायद नीचे लिखी योग्यताओको पसन्द करेगे, जिन्हे मै हिन्दुस्तानके प्रत्येक सत्याग्रहीके लिए लाजिमी समझता हूँ:

१. ईश्वरमें उसकी जीवन्त श्रद्धा होनी चाहिए, क्योकि वही सत्याग्रहीका आधार है।

२. सत्य और अहिंसा उसके लिए धर्म-रूप होने चाहिए और इसलिए उसे मनुष्य-स्वभावकी सहज सात्विकतामें विश्वास होना चाहिए — जिसे वह अपने कष्ट-सहनके रूपमें प्रदर्शित सत्य और प्रेमके द्वारा जाग्रत करना चाहता है।

३. वह चारित्र्यवान् हो और अपने लक्ष्यके लिए जान और मालको कुरबान करने के लिए तैयार हो।

४. वह आदतन खादीधारी हो और कातता हो। हिन्दुस्तानमें यह लाजिमी है।

५. वह निर्व्यसनी हो, और किसी भी नशीले पदार्थका सेवन न करनेवाला हो, जिससे कि उसकी बुद्धि हमेशा स्वच्छ और स्थिर रहे।

६. समय-समयपर निर्धारित अनुशासनके नियमोका पालन करने में हमेशा तत्पर रहता हो।

७. उसे जेलके नियमोका, बशर्ते कि वे विशेष रूपसे उसके आत्मसम्मानको ठेस पहुँचानेवाले न हों, पूरा पालन करना चाहिए।

इसे सत्याग्रहीकी योग्यताओकी सम्पूर्ण सूची न मान लिया जाये। ये तो केवल दिशा-दर्शक है।

नई दिल्ली, २० मार्च, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-३-१९३९

८३. आर० शंकरके नाम तारका मसौदा[1]

२० मार्च, १९३९

आर० शंकर[2]
ट्रैवलर्स बंगलो
मदुरा

गिरफ्तारियोंके लिए तैयार नहीं था, ऐसी बात नहीं। उनसे उद्देश्यको लाभ पहुँचेगा। वक्तव्य जारी कर रहा हूँ।[3]

गांधी

मूल अंग्रेजीसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल। पट्टम ताणु पिल्लै पेपर्स से भी; सौजन्य: नेहरु स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

८४. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

नई दिल्ली
२० मार्च, १९३९

प्रिय सी० आर०,

यह[4] सत्यमूर्तिने भेजा है; पढ़ो और जैसा तुम्हें ठीक लगे वैसा करो। अन्तरात्मा-सम्बन्धी धारा मुझे तो ठीक लगती है। लेकिन जो मेरे लिए ठीक हो वह तुम्हारे लिए गलत भी हो सकता है और जो मेरे लिए गलत हो वह तुम्हारे लिए ठीक भी हो सकता है।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०८८९)से; सौजन्य: सी० आर० नरसिंहन्

१. यह आर० शंकरके उस तारके उत्तरमें भेजा गया था जिसमें उन्होंने त्रावणकोर राज्य कांग्रेसके अध्यक्ष पट्टम ताणु पिल्लै, अ० भा० कां० कमेटी तथा त्रावणकोर राज्य कांग्रेस कार्य-समितिके सदस्य जी० रामचन्द्रन तथा अन्य लोगोंकी गिरफ्तारीका समाचार दिया था।

२. केरल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष

३. देखिए पृ० ८२-४।

४. देखिए परिशिष्ट ५।

८५. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

नई दिल्ली
२० मार्च, १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

शौकतके हाथ भेजा तुम्हारा पुर्जा अभी-अभी मिला है। तुम्हारी भेजी खबरने चकित कर दिया है। मैं मानना चाहता हूँ कि कहीं कोई गलतफहमी हुई है। क्या उस कांग्रेसीका[1] नाम तुम्हें मालूम हुआ? मैं पूछताछ कर रहा हूँ।

मौलाना साहब[2] पहलेसे बहुत अच्छे होंगे। उन्हें मेरा स्नेह देना और कहना कि उनसे मिलने की बड़ी तीव्र इच्छा हो रही है। ज्योंही यहाँसे बेखटके निकलने की स्थितिमें होऊँगा, उनसे आकर मिलूँगा।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३९; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

८६. पत्र : शारदा गो० चोखावालाको

दिल्ली
२० मार्च, १९३९

चि० बबुड़ी,

तू कैसी है? अब बिलकुल शान्त हो गई न? मुझे तो लिखने का समय ही नहीं मिलता, लेकिन तुझे क्या हो गया है? तूने कांग्रेसमें क्या-क्या देखा? तबीयत ठीक रहती है या नहीं? अभी हम लोग दो-चार दिन और दिल्लीमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००२०) से; सौजन्य: शारदाबहन गो० चोखावाला

१. इस पत्रका जवाब देते हुए २२ मार्चके पत्रमें जवाहरलाल नेहरूने लिखा था: "मैं उन कांग्रेसियों के नाम नहीं जानता जिनके बारेमें यह कहा जाता है कि वे दिल्लीमें किसी सरकारी अधिकारीके पास गये थे। मुझे उनके नाम नहीं बतलाये गये हैं।"

२. अबुल कलाम आजाद

८७. पत्र : द० बा० कालेलकरको

२० मार्च, १९३९

चि० काका,

आज ही पहली बार ढंगसे पत्रोंपर ध्यान दे पा रहा हूँ। मैंने तुम्हारे पत्र ध्यानपूर्वक पढ़े। बाबूरामजी को अभी पत्र मत भेजना। मैं पत्र वापस भेज रहा हूँ। आशा करता हूँ, जमनालालजी कुछ ही दिनोंमें छूट जायेंगे। उनके जरिये यह काम कराने की व्यवस्था करेंगे। यदि हम असफल हुए, तो अन्तमें त्यागपत्र तो है ही।

गोपीनाथको जवाब नहीं दिया, लेकिन अब लिखूंगा कि परिस्थितिको देखते हुए वे अभी भले कुछ समय रोमन लिपिसे काम चलायें। बम्बई सरकारकी मारफत तुम जो कराना चाहते हो, यदि वैसा हो जाये तो मुझे अच्छा लगेगा।

क्या हिन्दुस्तानी बोर्डमें दिवाकरको अध्यक्ष नहीं बनाया जा सकता? अथवा शंकररावको उसमें ले लो और उन्हें अध्यक्ष बनाओ। इस काममें पेरीनबहन शायद अध्यक्ष-पदपर शोभा नहीं देंगी। काजीकी जरूरत नहीं है। ब्रेलवी मुझे तो पसन्द है। वह सीधा-सच्चा आदमी है। किन्तु देवकी आपत्ति भी विचारणीय है। नरहरिके ऊपर यह बोझ नहीं डाला जा सकता।

अमृतलालको अलगसे पत्र नहीं लिखता। आशा है, तुम अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखते होगे। मेरा कार्यक्रम अनिश्चित है। फिलहाल तो नई दिल्लीमें हूँ और बिड़ला भवनमें ठहरा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९७४) से

दिल्लीमें, लक्ष्मीनारायण मन्दिरके उद्घाटनके पश्चात् आराम करते हुए

८८. बातचीत : त्रावणकोरके सत्याग्रहियोंसे[1]

२० मार्च, १९३९

स्थगनसे सत्याग्रह संघर्षमें हताशा और कमजोरी कदापि नही आनी चाहिए। हो सकता है लोग तैयार हो और अहिंसा सुनिश्चित हो, और स्थगनका आदेश देने में सेनापतिने गलती की हो, फिर भी आन्दोलनका भविष्य इससे संकटापन्न नहीं हो सकता। सत्याग्रहका अर्थ है कष्ट-सहनके लिए तैयार रहना और यह विश्वास कि उसे सहन करने में हमारा व्यवहार जितना निर्दोष और पवित्र होगा, उसके प्रभावमें उतनी ही शक्ति होगी। इस तरह, सत्याग्रहमें हताशाके लिए कोई स्थान नही है। सविनय अवज्ञा स्थगित करने पर यदि दमन बढ़ जाता है तो इसका स्थगित होना ही आदर्श सत्याग्रह बन जायेगा।

आज आपका विरोधी आपकी संख्यासे भयभीत है। जबतक उसका मन आतंक से छुटकारा नही पा लेगा, उसका हृदय-परिवर्तन नही हो सकता। आपके कार्यमें उसे प्रतिशोधकी भावना नजर आती है, जिससे वह और भी क्षुब्ध हो जाता है। इस प्रकार यह एक प्रकारकी हिंसा ही बन जाती है।

आपको अपना सघर्ष अबसे शायद कुछ व्यक्तियोतक ही सीमित रखना पड़े। किन्तु उनके सत्याग्रहका प्रभाव पड़ेगा। अहिंसाके साथ खिलवाड़ करके तो हम केवल त्रावणकोरकी शासन-सत्ताको मनुष्यकी पाशविक वृत्तिको सगठित करने का अवसर ही दे रहे हैं। ऐसा नही होने देना चाहिए।[2]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-६-१९३९

१. "द राजकोट फास्ट–८" (राजकोटका उपवास–८) से उद्धृत। त्रावणकोरके सत्याग्रहियोंको, जो गांधीजीसे तीसरे पहर मिले थे, यह भय था कि सविनय अवज्ञाको अनिश्चित कालके लिए स्थगित कर देने से लोगोंमें इतनी हताशा आ जायेगी कि उससे उनका उबरना कठिन होगा।

२. देखिए "बातचीत : फिलिपोजसे", पृ० ६६-७ भी।

८९. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

नई दिल्ली
२० मार्च, १९३९

मैं देखता हूँ कि त्रावणकोरके दो वीर नेताओं श्री ताणु पिल्लै और श्री रामचन्द्रनंका श्री सी० पी० रामस्वामी[2] इससे बेहतर उपयोग नहीं कर सके कि उन्हें जेलमें बन्द कर दें। वे जेलके अन्दर भी अपनेको वैसा ही उपयोगी साबित करेंगे जैसा कि उन्होंने बाहर किया है। मगर त्रावणकोर दरबारको उसके इस कार्यके लिए मैं बधाई नहीं दे सकता।

राजकोटमें मैंने सर सी० पी० रामस्वामीका वह वक्तव्य देखा था, जिसमें उन्होंने उस चीजकी निन्दा की है जिसे वे बाहरी दस्तन्दाजी कहते हैं। क्या इसका मतलब यह है कि राजा लोग तो जो भी बाहरी मदद चाहें वह ले सकते हैं लेकिन प्रजा नहीं ले सकती? नरेशगण जो बाहरी मदद लेना चाहें उसपर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। हाँ, प्रजापक्षने तो अपने-आप ही ऐसी मददपर अनेक प्रतिबन्ध लगा रखे हैं। आखिर मैं इसके सिवा और कर भी क्या रहा हूँ कि सत्याग्रह-शास्त्रमें निष्णात होने के नाते सलाह-भर दे देता हूँ? ऐसा करके मैं अहिंसाकी भावना और शान्तिके उद्देश्यको ही बढ़ाता हूँ। देशी राज्यों और कथित ब्रिटिश भारतकी प्रजाका सम्बन्ध तो जीवन्त, अविभाज्य और अविच्छिन्न है। लेकिन राजाओंमें ऐसा कोई सम्बन्ध नहीं है, बल्कि वे तो एक-दूसरेसे स्वतन्त्र हैं और स्वतन्त्र होनेमें ही गर्व महसूस करते हैं। उन लोगोंको एक धागेमें पिरोनेवाली संयुक्त कड़ी तो अधीश्वरी सत्ताकी गुलामी है, जिसकी प्रत्यक्ष या परोक्ष अनुमतिके बिना वे एक पत्ता भी नहीं हिला सकते।

लेकिन आज तो खुद अधीश्वरी सत्ता अधिकाधिक जनताकी—जिसमें देशी राज्योंकी प्रजा भी शामिल है—इच्छापर निर्भर होती जा रही है। अगर प्रजा यह महसूस कर ले कि सत्य और अहिंसाके जरिये वह अपनी शक्तिको अजेय बना सकती है तो वह अपने-आप अधीश्वरी सत्ताका स्थान ले लेगी। इसलिए मुझे ऐसा लगता है कि सर सी० पी० और वे दीवान, जो उनकी तरह सोचते हैं, अपने राजाओंके अच्छे सलाहकार नहीं हैं और उनकी सेवा नहीं बल्कि कुसेवा करते हैं। कांग्रेस और

१. यह वक्तव्य "रीड द साइन्स" (समयके संकेतको समझिए) शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. त्रावणकोर राज्यके दीवान

कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओंकी अवहेलना करने और उसके स्वाभाविक प्रभावको देशी राज्योंमें काम न करने देने की कोशिश करना तो वैसा ही है, जैसे कोई बच्चा अपने दायें हाथकी छोटी-सी हथेलीसे सामनेसे आती हुई भयंकर बाढ़को रोकने का प्रयत्न करे। देशी राज्योंकी प्रजाकी वैध आकांक्षाओंको कुचलने का यह प्रयास निश्चय ही एक ओर तो राज्योंकी प्रजा और राजाके बीच, जिसके प्रति वह वफादार रहना चाहती है, और दूसरी ओर कांग्रेस और राजाओंके बीच, जिनकी कि अगर करने दी जाये तो वह मदद करना चाहती है, कटुताके बीज बोता है।

राजाओं और उनके सलाहकारोंसे मैं कहता हूँ कि वे समयकी गतिको पहचानें और उसके साथ-साथ चलें। आतंक पैदा करनेवाली कार्रवाइयोंसे वे स्वतन्त्रताकी हलचलको कुछ समयके लिए दबा देने में भले ही कामयाब हो जायें, लेकिन उसे सर्वथा कुचलने में वे हरगिज कामयाब न होंगे। मैं यह भी सोचने का साहस करता हूँ कि अधीश्वरी सत्ताको अपनी हिचकिचाहट और आवश्यकतासे अधिक सावधानीको छोड़ना पड़ेगा। राजाओंके प्रति यदि उसका कर्त्तव्य है, तो उनकी प्रजाके प्रति भी निस्सन्देह उसका कुछ कर्त्तव्य है। वे दिन लद गये जब प्रजाकी उपेक्षा की जा सकती थी।

राजा लोग ध्यान न दें, तो अधीश्वरी सत्ताको उनसे स्पष्ट कह देना चाहिए कि प्रजाको कुचलने में वे उसकी मददकी आशा न करें। वह सत्ता, जिसके अनेक प्रान्तोंका कारोबार कांग्रेसी मन्त्री चला रहे हैं, उस वक्त खामोश नहीं रह सकती जब कि उसके पड़ोसकी रियासतें कांग्रेसका अपमान करने में लगी हों। यह तो ऐसी विसंगति है जिसे तुरन्त दूर करना आवश्यक है।

त्रावणकोरके लोगोंसे मेरा कहना है कि इन दो वीरोंकी समयसे पहले की गई गिरफ्तारीसे उनके आन्दोलनको लाभ ही हुआ है। लेकिन यह लाभ तभी होगा जब वे इन गिरफ्तारियोंका बुद्धिमानीके साथ उपयोग करें। अगर हिंसा हो जाने का जरा भी खतरा हो, तो जलूस आदिके रूपमें कोई भी प्रदर्शन न करना चाहिए। उन सबको रचनात्मक कार्यमें अपना ध्यान लगाना चाहिए। सविनय अवज्ञा शुरू करने की तारीखको नजदीक लाने की कोशिश हरगिज नहीं करनी चाहिए। अगर मुझे सलाह देते रहना है, तो मुझे परिस्थितिका अध्ययन करने का मौका मिलना चाहिए और उन्हें सविनय अवज्ञा फिर शुरू करने से पहले मेरी रायकी[1] प्रतीक्षा करनी चाहिए। सविनय अवज्ञा तो सत्याग्रहका एक छोटा-सा हिस्सा है। सर्वथा अनपढ़ और दलित-पीड़ित लोगों-सहित पूरी जनताको मूक सेवा द्वारा एक धागेमें बाँध दिया जाना चाहिए। यह ऐसा काम है जिसमें विद्यार्थी भी ठीक भाग ले सकते हैं। सत्याग्रहियोंको यह याद रखना चाहिए कि जल्दबाजी बरबादीकी निशानी है। उनकी स्वतन्त्रता तो तभी निश्चित हो गई जब उन्होंने सत्य और अहिंसा यानी प्रबुद्ध और अनुशासनयुक्त कष्ट-सहनके द्वारा उसके लिए लड़ने की

१. देखिए पृ० ८७-९।

गम्भीर प्रतिज्ञा ली। क्योंकि यह मैं जानता हूँ कि अपनी प्रतिज्ञासे पीछे वे कभी नहीं हटेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-३-१९३९

९०. बातचीत : जयपुरके सत्याग्रहियोंसे[1]

२० मार्च, १९३९

थोथी बहादुरीके प्रदर्शनकी भावनासे ऐसा आचरण करना जिससे पुलिसको लाठियोंकी बौछार करनी पड़े या ऐसी भावनासे लाठियोंके प्रहारोंको सहना सत्याग्रह नहीं है। सच्चा सत्याग्रह तो इस बातमें निहित है कि आप अपना कर्त्तव्य कर रहे हों, उस दौरान यदि आपको उससे विमुख करने के लिए आपपर प्रहार किये जायें तो उन्हें झेलने के लिए आप तैयार रहें।

आज समूचे देशका वातावरण हिंसामय है। त्रिपुरीमें इसका प्रमाण देखने को मिला। मैं भ्रष्टाचार, झूठ, पाखण्ड, धोखा आदिको भी हिंसा ही मानता हूँ। यदि हमारे सत्याग्रहको इस वातावरणसे उबरना है तो हम अहिंसावादियोंको स्वयं अपने आचरणके विषयमें और भी सख्तीसे काम लेना होगा। जेल जाना हो तो सर्वथा शुद्ध और अत्यन्त निर्दोष लोग ही जेल जायें। उन्हें आजीवन कारावासमें रहना पड़े तो भी कोई हर्ज नहीं। उनका आत्मत्याग कारावासको सुगन्धसे भर देगा, और उसका प्रभाव जेलकी दीवारोंके बाहर भी पहुँचेगा और वह अदृश्य रूपसे सारे वातावरणको बदल देगा। अपनी रिहाईकी कामना उन्हें कभी नहीं करनी होगी और न अपने मनमें कोई ऐसा सन्देह ही रखना होगा कि उनका त्याग 'बेकार' जा रहा है। उन्हें अपने अन्दर यह प्रतीति रखनी होगी कि व्यक्तिका पवित्र संकल्प शरीरसे की जानेवाली किसी भी कार्रवाईसे अधिक क्षमताशील है। जेलमें वे जो अनुशासन सीखेंगे उससे जेलके बाहर लोगोंको अहिंसात्मक रूपसे संगठित करने में मदद मिलेगी और उनमें निर्भीकता आयेगी।

इतना तो हुआ जेलोंमें बन्द लोगोंके बारेमें, किन्तु जो बाहर हैं वे क्या करें? रचनात्मक कार्यको अहिंसाके सक्रिय सिद्धान्तका मूर्तिमन्त रूप मानते हुए उन्हें उसीमें लग जाना चाहिए। यदि उन्हें यह कार्य नहीं जँचता है तो इसका मतलब यह होगा कि उनमें अहिंसाके प्रति श्रद्धाकी कमी है।

दूसरी चीजका सम्बन्ध मनुष्यके अन्त:प्रदेशसे है। उन्हें अपने अन्दर ईश्वरके प्रति जीवन्त श्रद्धा — समस्त बाहरी साधनोंका मोह छोड़कर केवल उसीपर निर्भर रहने की वृत्ति — जगानी चाहिए। ऐसी श्रद्धासे अनुप्राणित कोई एक सत्याग्रही भी अपने

1. "द राजकोट फास्ट-८" (राजकोटका उपवास-८) से उद्धृत।

उदाहरणसे समस्त राष्ट्रको अनुप्रेरित करेगा और हो सकता है कि वह अपने विरोधीमें भी, जो तबतक भयकी भावनासे मुक्त हो चुका होगा और इसलिए उसकी सरल आस्थाको समझने और उसका आदर करने के लिए अधिक तत्पर रहेगा, आमूल परिवर्तन ले आये।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-६-१९३९

९१. भेंट : 'न्यूयार्क टाइम्स' के प्रतिनिधिको[2]

नई दिल्ली
[२३ मार्च, १९३९ के पूर्व][3]

यह पूछने पर कि यदि अधीश्वरी सत्ता यूरोपीय युद्धमें फँस जाती है तो आप कांग्रेसको क्या रवैया अपनाने की सलाह देंगे, महात्मा गांधीने कहा कि फिलहाल इसका उत्तर देना बहुत ही कठिन है।

वे इस प्रश्नको भी टाल गये कि उनकी रायमें स्वाधीन भारतको ब्रिटिश राष्ट्रकुलके अन्दर रहना चाहिए या उससे बाहर। उन्होंने कहा :

यह फिर कठिन सवाल है। इस विषयमें मेरी स्थिति क्या है, यह मैं ठीक-ठीक नहीं बता सकता। ये दोनों ही कठिन सवाल हैं।

संवाददाता : पर क्या ये प्रश्न परिस्थितिकी जड़तक नहीं जाते?

गांधीजी : बुद्धिमान पत्रकार कभी जडतक नहीं जाते।

यह पूछने पर कि क्या आप त्रिपुरी कांग्रेसके परिणामसे सन्तुष्ट हैं, महात्माजी फिर मुस्कराकर बात टाल गये :

सन्तोष ही आनन्द है, यह आपकी ही एक लोकोक्ति है — है न?

सं० : तब मुझे यह पूछने दीजिए : क्या भारत आपकी पसन्दके मुताबिक प्रगति कर रहा है?

गां० : (सोचते हुए) हाँ, कर रहा है। कभी-कभी मुझे डर लगता है, पर मूलमें प्रगति हो रही है और वह प्रगति ठोस है। सबसे बडी कठिनाई हिन्दू-मुस्लिम मतभेद है। वह एक भारी अड़चन है। वहाँ कोई स्पष्ट प्रगति मुझे दिख रही है, ऐसा तो मैं

१. अन्तमें प्यारेलाल लिखते हैं : "बातचीतके फलस्वरूप जयपुर सत्याग्रह 'अनिश्चित कालके लिए स्थगित करने का निर्णय लिया गया।" देखिए पिछला शीर्षक भी।

२ और ३. इस समाचारपत्रका प्रतिनिधित्व विशेष संवाददाता एफ० ई० बर्चेल कर रहे थे। मुलाकात, जिसकी रिपोर्ट रायटरने दी, दिनांक "न्यूयार्क, २३ मार्च" के अन्तर्गत "नई दिल्लीसे प्रेषित एसोसिएटेड प्रेसका एक सन्देश" के रूपमें प्रकाशित हुई थी। मुलाकातकी एक छोटी-सी रिपोर्ट "द राजकोट फास्ट-८" (राजकोटका उपवास-८) में भी उद्धृत की गई थी।

नहीं कह सकता। पर यह परेशानी खुद दूर हो जानी है। जन-मानस स्वस्थ है, और किसी कारण नहीं तो सिर्फ इसी कारण कि वह स्वार्थहीन है। दोनों सम्प्रदायोंकी राजनीतिक और आर्थिक कठिनाइयाँ भी एक-जैसी हैं।

आगे बातचीतमें संवाददाताने महात्मा गांधीसे पूछा कि अशान्तिकी इस स्थितिमें क्या आप लोगोंके दिलोंको शान्तिकी ओर मोड़नेवाला कोई सन्देश नहीं देंगे, जिसे मैं सारी दुनियातक पहुँचा सकूँ? "शान्ति" शब्दसे उनकी आँखोंमें एक चमक आई और वे सिर झुकाकर कुछ सोचने लगे।

गां० : इस घड़ी मुझे ऐसा वातावरण दिखाई नहीं देता कि मेरी आवाज सभी राष्ट्रोंतक पहुँच सके। शायद मैं समयसे बहुत आगे हूँ।

सं० : उतनी ही सचाईसे क्या यह नहीं कहा जा सकता कि समय आपसे पिछड़ता जा रहा है?

गां० : आप चाहें तो कह सकते हैं। मैं आपके सुझावके बारेमें सोच रहा हूँ। जैसा कि कभी-कभी हो चुका है, क्या मैं फिर अपनी हँसी उड़वाऊँ? पर क्या हर्ज है? हँसना स्वास्थ्यवर्धक है। शायद यह अच्छा ही रहे। इसलिए मुझसे यह सन्देश लीजिए :

आजके समाचारपत्रोंमें मैंने पढ़ा है कि ब्रिटिश प्रधान मन्त्री लोकतान्त्रिक शक्तियोंसे परामर्श कर रहे हैं कि अभी बिलकुल हालमें घटना-क्रमने जो खतरनाक मोड़ लिया है उसका सामना कैसे किया जाये। काश वे इस प्रस्तावको उनके सामने रखकर उनसे चर्चा करते कि सबको एकसाथ निरस्त्रीकरणका सहारा लेना चाहिए। और जितना विश्वास मुझे इस बातका है कि मैं अभी यहाँ बैठा हुआ हूँ उतना ही विश्वास इस बातका है कि इस वीरतापूर्ण कदमके फलस्वरूप हिटलरकी आँखें खुल जायेंगी और वे निरस्त्र हो जायेंगे।

सं० : क्या यह एक चमत्कार नहीं होगा?

गां० : शायद होगा, लेकिन यह संसारको उस भीषण संहारसे बचा लेगा जो मुँह बाये खड़ा दीख रहा है। इतना क्या एक प्रभातके लिए पर्याप्त नहीं है?

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २४-३-१९३९

९२. तार : उ० न० ढेबरको

नई दिल्ली
२३ मार्च, १९३९

उ० न० ढेबर, वकील
राजकोट

यहाँके अधिकारियोंका यह सुझाव है कि आपने जो तथ्य तारसे यहाँ भेजे हैं उन सबको तथा और भी जो शिकायत हो उसे आप रेजीडेंटके सम्मुख रखें और राहतकी माँग करें। यदि जरूरी हो तो आप उन्हें यह दिखा सकते हैं।

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१३६) से; सौजन्य : द० बा० कालेलकर

९३. वक्तव्य : त्रावणकोर सत्याग्रहको स्थगित करनेके लिए[1]

त्रावणकोरकी स्थितिके बारेमें श्री फिलिपोजके साथ मेरी एकाधिक बार लम्बी बातचीत हुई है।[2] राज्य कांग्रेसकी पिछली कार्य-समितिके प्रस्ताव और सारे त्रावणकोर राज्यके लिए रचित उस व्यापक और सुगठित कार्यक्रमका, जिसमें अहिंसाके पालनकी दृष्टिसे पूरी सावधानी की व्यवस्था की गई है, मैंने ध्यानके साथ अध्ययन किया है। श्री फिलिपोज को मिला हुआ वह तार भी मैंने पढ़ा, जिसमें उनसे कहा गया है कि सविनय अवज्ञा अगर और स्थगित की गई तो लोगोंमें बड़ी नाराजगी और निराशा फैलेगी।

लेकिन लाभ-हानिपर पूरी तरह विचार करके मैं तो इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि २५ मार्चको सविनय अवज्ञा शुरू न करने और जबतक मैं फिरसे शुरू करने की सलाह न दूँ तबतक उसे स्थगित रखने में ही लाभ है।

सत्याग्रहमें निराशा या नाराजी-जैसी बातके लिए कोई स्थान ही नहीं है। इसमें तो, जबतक लक्ष्य-सिद्धि न हो, किसी-न-किसी रूपमें लड़ाई हमेशा जारी ही

१. यह वक्तव्य "सरेंडर सिविल डिसओबीडिएन्स" (सविनय अवज्ञा स्थगित करो) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। प्यारेलालने "द राजकोट फास्ट–८" (राजकोट उपवास–८) में स्पष्ट किया है कि वक्तव्य "त्रावणकोरके मित्रोंसे अन्तिम रूपसे सलाह करने के बाद" जारी किया गया।

२. देखिए, पृ० ६६-७।

रहती है। सत्याग्रही इस बारेमें उदासीन रहता है कि उसे जो करने को कहा जा रहा है वह सविनय अवज्ञा है या लड़ाईका कोई दूसरा रूप। और न वह इस बातकी परवाह करता है कि सविनय अवज्ञाके दौरान उसे एकाएक रुककर कुछ और करने के लिए क्यों कहा जाता है। उसको श्रद्धा होनी चाहिए कि जो-कुछ हो रहा है अच्छा ही है। अबतक का मेरा अपना अनुभव तो यही है कि आन्दोलन स्थगित करके हर बार लोग दूसरी लड़ाईके लिए अधिक तैयार मिले हैं और हिंसात्मक शक्तियोंपर उनका पहलेसे अधिक नियन्त्रण कायम हुआ है। इसलिए, सविनय अवज्ञा स्थगित करने की सलाह देते हुए, मैंने इस भयको अपने मनसे निकाल दिया है कि ऐसा करने से लोगोंमें अविश्वास पैदा होगा और वे आन्दोलनसे हट जायेंगे। अगर ऐसा हो भी, तो उसके लिए मुझे अफसोस नहीं होना चाहिए। क्योंकि यह मेरे लिए इस बातकी निशानी होगी कि हटनेवाले यह नही जानते कि सत्याग्रह क्या है और आन्दोलनके लिए यह अच्छा ही होगा कि जो लोग यह नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं वे उससे हट जायें।

मैंने जो यह सलाह दी, उसके कारण ये हैं: अगर यह सच है कि सत्याग्रहियोंमें आतंक फैलाने के लिए त्रावणकोर दरबारने बिना प्रशिक्षण पाये हुए अनाड़ी आदमियोंको पुलिसमें भरती किया है, तो सत्याग्रहियोंको चाहिए कि जबतक सविनय अवज्ञा स्थगित होना सम्भव है तबतक दरबार को यह पाप-कार्य करने का कोई मौका न दें। मेरे खयालसे विभिन्न रियासतोंमें लोगोंपर जो अमानुषिक अत्याचार किये गये है उन्हें देखते हुए मैं खुद यह सोच रहा हूँ कि सविनय अवज्ञाको कोई नया रूप दूँ। इसमें मैं असफल हो सकता हूँ। लेकिन अगर मुझे सफल होना है तो इसके लिए मुझे शान्ति चाहिए, जो जहाँ-कहीं मैं सविनय अवज्ञाकी रहनुमाई कर रहा हूँ वहाँ उसे स्थगित कर देने पर ही मिल सकती है।

इसे स्थगित करने से इस बातका अवसर मिलता है कि त्रावणकोरमें स्वतन्त्रताका जो आन्दोलन चल रहा है उसके पक्षमें लोकमतको संगठित किया जाये। साथ ही इससे त्रावणकोर दरबारको भी सत्याग्रहियों और उनकी माँगोंके बारेमें उसके जो विचार है उनपर फिरसे गौर करने का मौका मिलता है।

रियासतोंकी प्रजामें जो भारी जागृति हुई है, उससे राजा लोग खुद ही घबरा रहे है। त्रावणकोरमें और अन्यत्र सविनय अवज्ञा स्थगित कर देने से उन्हें सत्याग्रहसे निबटनेसे छुटकारा पाकर साँस लेने का वक्त और अपने तरीकेपर विचार करने का मौका मिलता है।

फिर वाइसरायने हालमें राजाओंको जो सन्देश दिया है, उसे अपना असर पैदा करने के लिए वक्त देना भी समझदारीका काम होगा।

त्रावणकोरके सत्याग्रहियोंको यह भी जानना चाहिए कि इन्ही कारणोसे मैंने जयपुरमें सविनय अवज्ञा स्थगित करने की सलाह दी है[१] और इसी तरह अन्य रियासतोंके कार्यकर्त्ताओंको भी रोक रखा है। लेकिन त्रावणकोरवालों और अन्य सब

१. देखिए पृ० ८४-५।

सम्बन्धित व्यक्तियोंको मैं यह आश्वासन देता हूँ कि स्थगन-कालमें मैं यों ही नही बैठा रहूँगा, और जिन रियासतोंमें सविनय अवज्ञा स्थगित की गई है उनमें अगर इस बीच प्रजाको कोई राहत न मिली तो इस सम्बन्धमें आखिरी निश्चय करने में मैं देरी भी नही करूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-४-१९३९

९४. पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको

रेलगाड़ीमें
पत्रोत्तरके लिए पता : बिड़ला भवन
नई दिल्ली
२४ मार्च, १९३९

प्रिय सुभाष,

आशा है, तुम पूर्ण स्वास्थ्य-लाभकी ओर बराबर प्रगति कर रहे होगे।

इसके साथ मेरे नाम शरतके पत्रकी नकल और मेरा उत्तर भी है। मेरे ये सुझाव तभी, और केवल तभी, संगत होने हैं जब वह पत्र तुम्हारी भावनाओंका भी प्रतिनिधित्व करता हो। हर हालतमें केन्द्रमें जो अराजकता है वह खत्म होनी चाहिए। तुम्हारे अनुरोधके अनुसार, मैं बिलकुल मौन साधे हुए हूँ, यद्यपि इस संकटके बारेमें अपनी राय देने के लिए मुझपर दबाव डाला जा रहा है।

प्रस्ताव[1] मैंने पहली बार इलाहाबादमें देखा। वह मुझे बिलकुल स्पष्ट लगता है। पहल तुम्हें करनी है। मुझे पता नही कि तुम्हारा स्वास्थ्य तुम्हारे राष्ट्रीय कार्यमें

१. प्रस्तावमें, जिसे गोविन्दवल्लभ पन्तने त्रिपुरी कांग्रेसकी विषय-समितिमें रखा था, कहा गया था : "कांग्रेस अध्यक्षके चुनाव और परवर्ती घटनाओंसे सम्बन्धित विवादके कारण देशमें तथा कांग्रेस-संस्थाके अन्दर जो गलतफहमियाँ पैदा हो गई हैं, उन्हें ध्यानमें रखते हुए यह वांछनीय है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी अपनी स्थिति स्पष्ट करे और अपनी सामान्य नीति घोषित करे। यह समिति कांग्रेसकी मूल नीतियोंमें, जो पिछले कुछ सालोंसे महात्मा गांधीके मार्गदर्शनमें उसके कार्यक्रमको शासित करती रही हैं, अपनी दृढ़ निष्ठा घोषित करती है और उसका यह सुनिश्चित मत है कि इन नीतियोंमें कोई व्यवधान नहीं आना चाहिए और कांग्रेस-कार्यक्रम भविष्यमें भी इन्हींके द्वारा शासित होता रहना चाहिए। यह समिति गत वर्षकी कार्य-समितिके कार्यमें अपना विश्वास प्रकट करती है और उसे इस बातका खेद है कि उसके किसी सदस्यपर कुछ छींटाकशी की गई है। इस बातको दृष्टिमें रखते हुए कि आगामी वर्षमें परिस्थिति नाजुक हो सकती है और इस तथ्य पर ध्यान देते हुए कि इस तरहके संकटमें केवल महात्मा गांधी ही कांग्रेस और देशको विजयकी ओर ले जा सकते हैं, समिति यह आवश्यक समझती है कि कांग्रेसके कार्यकारी अंगको उनका निश्चित विश्वास प्राप्त करना चाहिए और अध्यक्षसे यह प्रार्थना करती है कि वे आगामी वर्षके लिए गांधीजी की इच्छाके अनुरूप कार्य-समिति मनोनीत करें।"

यह प्रस्ताव १३५ के विरुद्ध २१८ मतोंसे पास हुआ था।

लगने लायक है या नहीं। यदि न हो तो, मेरे खयालमें, तुम्हारे आगे जो एकमात्र संवैधानिक मार्ग है वही तुम्हें अपनाना चाहिए।[1]

अभी कुछ दिन और मुझे दिल्लीमें ही रहना होगा।

सस्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

९५. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

नई दिल्ली
२५ मार्च, १९३९

राष्ट्रपति बोस
जीलगोड़ा

तुम्हारा तार[2] मिला। मौलानासे मुलाकात करने के लिए कल इलाहाबादमें था क्योंकि वे बातचीतके लिए उत्सुक थे। रेलमें से पत्र[3] डाला है। तुम्हारे पत्रकी प्रतीक्षा है। आशा है, स्वास्थ्यमें लगातार प्रगति हो रही है। स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१. देखिए अगला शीर्षक भी।

२. २४ मार्चका जो इस प्रकार था: "शरतको कांग्रेसके बारेमें दिये गये आपके सुझाव और निकट भविष्यमें मेरे आपसे मिल पाने की असम्भावनाको देखते हुए आपके साथ डाक द्वारा मशवरा करना आवश्यक मानता हूँ। पत्र लिख रहा हूँ।"

३. देखिए पिछला शीर्षक।

९६. तार : डॉ० सुनील बोसको

[२५ मार्च, १९३९][1]

आपका तार[2] मिला। इन अखबारवालोंकी मनगढ़न्त खबरोंसे और उन पर विश्वास करनेवालोंसे भगवान बचाये।

[अंग्रेजीसे]
संडे स्टेट्समैन, २६-३-१९३९

९७. तार : आर० के० झा को

२५ मार्च, १९३९

झा[3]
दुर्ग कांग्रेस

तजवीज है।[4]

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे

२. इस तारमें कहा गया था : "आपके जीलगोडामें सुभाषसे मिलने पर चिकित्सकोंको तनिक भी आपत्ति नहीं है। सच तो यह है कि आप आने की कृपा करें तो आपका हार्दिक स्वागत किया जायेगा।" साधन-सूत्रके अनुसार यह तार नई दिल्लीसे जारी की गई इस प्रेस रिपोर्टके सिलसिलेमें भेजा गया था कि "चिकित्सकोंने सुभाषचन्द्र बोसके लोगोंसे मिलने पर आपत्ति की थी, और इसलिए गांधीजी उनसे मिलने जीलगाड़ा नहीं जा सके।"

३. दुर्ग जिला कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष

४. आर० के० झा ने अपने २५ मार्चके तारमें गांधीजी से पूछा था कि जिस वक्तव्यके द्वारा त्रावणकोर-सत्याग्रह स्थगित किया गया है (देखिए पृ० ८७-९) उसमें क्या नादगाँव-राज्यमें सत्याग्रह स्थगित करने की भी तज्वीज है। द इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९३९, जिल्द १, के अनुसार छत्तीसगढ़ डिवीजन-स्थित राजनादगाँव और छुईखदान राज्योंमें १० अप्रैलको सत्याग्रह स्थगित कर दिया गया। देखिए पृ० १२२।

९८. सुन्दर बम्बई

"जो सुन्दर करनी करे सो ही सुन्दर होय" यह अंग्रेजीकी एक सुन्दर लोकोक्ति है। मैंने अक्सर यह कहा है कि बम्बईमें जबतक गन्दी चालें, घनी बसी हुई गलियाँ और वे अकल्पनीय नरक-स्थान मौजूद हैं जिनमें हरिजन रहते हैं तबतक उसे महज बन्दरगाहतक के सुन्दर मार्ग और अनेक सुहावने स्थान होने के कारण सुन्दर कहना ठीक नहीं है। लेकिन बम्बईके मदिरा-विमुक्त होने पर, जैसा कि वह बहुत जल्द होनेवाला है,[1] वह अपने इस एक ही सुन्दर कार्यसे सचमुच सुन्दर बन जायेगा और जिन बुराइयोंका मैंने उल्लेख किया है उनके बावजूद इस विशेषणकी पात्रता हासिल कर लेगा। क्योंकि जब उसके मजदूरपेशा निवासियोंको शराब पीने के प्रलोभनका अवकाश न रहेगा, तो उनकी हालत सुधरने से, जैसा कि शराबसे पीछा छूटने पर हमेशा होता है, बम्बई नगरपालिकाके लिए गरीब लोगोंकी रिहायशकी अच्छी व्यवस्था करना आसान हो जायेगा। बम्बई सरकारने जिस साहसके साथ यह काम शुरू किया है उसके लिए वह, और विशेषकर डॉ० गिल्डर, बम्बईके ही नहीं, सारे प्रान्तके नागरिकोंके धन्यवादके पात्र हैं। मैं जानता हूँ कि जिन बहुत-से पारसियोंके निर्वाहका आधार शराबके रोजगारपर ही है उनकी इससे बड़ी हानि होगी। बम्बई पारसियोंका अड्डा है। फिर, वहाँ ऐसे 'सभ्य' नागरिक भी हैं, जो समझते हैं कि पानीकी ही तरह उन्हें नशीले पेयोंकी भी जरूरत है। पर मुझे पूरी उम्मीद है कि वे सब समयकी माँगके अनुसार ऊँचे उठेंगे, और खुद नशेसे बचने को महत्त्वपूर्ण न समझें तो भी अपने गरीब भाइयोंका खयाल करके सारे भारतवर्षके सामने एक सुन्दर उदाहरण रखेंगे। ऐसा करके वे बम्बईके इस दावेको सही साबित करेंगे कि वह सुन्दर ही नहीं बल्कि हिन्दुस्तानका सर्वश्रेष्ठ नगर भी है।

बम्बईमें शराबबन्दी होने से सरकारकी आमदनी बहुत घट जायेगी। अर्थ-मन्त्रीको आय-व्यय सन्तुलित करना होगा। इसके लिए उन्हें आमदनीके दूसरे जरिये खोजने पड़ेंगे और नये कर लगाने पड़ेंगे। अतः जिन्हें वह बोझ बरदाश्त करना पड़े उन्हें इसकी शिकायत न करनी चाहिए। यह सब जानते हैं कि कर कितने ही वाजिब क्यों न हों, उन्हें कोई पसन्द नहीं करता। मुझे मालूम हुआ है कि अर्थ-मन्त्रीने इस सम्बन्धमें सभी वाजिब आपत्तियोंका निराकरण कर दिया है। अतः जिन लोगोंपर यह बोझ पड़े, वे इस महान् प्रयोगमें भागीदार होने की सुविधा पाने का गर्व क्यों न करें? अगर सभी नागरिकोंके आनन्दके बीच शराबबन्दीकी शुरुआत हो, तो निश्चय ही बम्बईके लिए वह दिन बड़े गौरवका होगा। यह याद रहे कि यह शराबबन्दी दूसरोंकी लादी हुई चीज नहीं है। इसकी शुरुआत तो वे सरकारें

१. १ अगस्त, १९३९ से बम्बईमें शराबबन्दी लागू हुई।

कर रही हैं, जो जनताके प्रति जिम्मेदार हैं। १९२० से ही हमारे राष्ट्रीय कार्यक्रमका यह एक अंग रही है। इसलिए बीस बरस पहले राष्ट्रने निश्चित रूपसे जो इच्छा प्रकट की थी उसीकी अवसर मिलने पर, इसके द्वारा पूर्ति हो रही है।

नई दिल्ली, २६ मार्च, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १-४-१९३९

९९. 'स्थगन जारी रहे'

श्री फिलिपोज़ को त्रिवेन्द्रमसे नीचे लिखा तार मिला है:

> **गिरफ्तारियाँ अब भी जारी हैं। कुंजुकृष्ण पिल्लै तथा दूसरे लोग गिरफ्तार कर लिये गये हैं। अध्यक्ष कुझिथराय कृष्ण पिल्लै आज (२४ मार्चको) गिरफ्तार हुए हैं। उनकी जगह कोराको अध्यक्ष नामजद किया गया है। गांधीजी को खबर कर दें।**

मुझे यह आशा नहीं थी कि सविनय अवज्ञा स्थगित कर देनेके बाद भी गिरफ्तारियाँ जारी रहेंगी। लेकिन, निस्सन्देह, यह जरूरी नहीं कि मेरी आशा पूरी ही हो। जिन कारणोंसे सविनय अवज्ञा स्थगित करनेकी सलाह दी गई, उन्हें मैं खुले आम बतला चुका हूँ। त्रावणकोरके अधिकारी अगर गिरफ्तारियाँ जारी रखना जरूरी समझते हैं, तो सत्याग्रहियोंको उसकी शिकायत नहीं करनी चाहिए। यों, सविनय अवज्ञा अधिकारियोंको गिरफ्तारीका मौका देती है, या उनके लिए यह आवश्यक कर देती है कि वे कोई कार्रवाई करें। इसलिए राज्यके साथ पहलेसे कोई समझौता किये बगैर सविनय अवज्ञा स्थगित कर देनेके बाद आम तौरपर गिरफ्तारियाँ ही बन्द नहीं कर दी जातीं, बल्कि सविनय अवज्ञाके कारण सजा पाये लोगोंको भी छोड़ दिया जाता है। त्रिवेन्द्रमका तार अगर सही है, तो त्रावणकोरके अधिकारियोंने एक ऐसा तरीका अख्तियार किया है जिसकी आशा नहीं थी, लेकिन सत्याग्रहियोंको उनकी कार्रवाईसे घबराने या हड़बड़ा जानेकी कोई आवश्यकता नहीं है। सविनय अवज्ञा तो अभी भी स्थगित ही रहनी चाहिए। अगर इन्हें इसीलिए गिरफ्तार किया गया हो कि वे सत्याग्रही हैं, तो निस्सन्देह इन गिरफ्तारियोंसे प्रजा-पक्षको, उससे अधिक मदद मिलेगी जितनी कि सविनय अवज्ञा जारी रहने से मिलती। चूँकि सविनय अवज्ञा स्थगित कर दी गई है, मैं इस बातकी कोई जरूरत नहीं समझता कि गिरफ्तार अध्यक्षकी जगह दूसरा अध्यक्ष नियुक्त किया जाये। क्योंकि अध्यक्षोंकी गिरफ्तारीके बाद उनके स्थानापन्न अध्यक्ष नियुक्त करनेका अब कोई प्रयोजन नहीं। राज्य-कांग्रेसके साधारण विधानमें ही ऐसी कोई व्यवस्था होगी जिससे अध्यक्षकी गैरहाजिरीमें कामकाज चलता रहे।

इस बातका मुझे पूरी तरह पता है और मुझे इसका खेद है कि मेरी सलाहसे पैदा हुई परिस्थितिके लिए सत्याग्रही तैयार नही थे। अगर हो सके तो उन्हें इस बातसे सन्तोष प्राप्त करना चाहिए कि जो तरीका उनके लिए शायद नया है, उसे फिलहाल वे चाहे समझ न सकें और इसलिए चाहे उसकी कद्र न करें, पर उसकी सलाह एक ऐसे आदमीने दी है जो सत्याग्रह-शास्त्रको जानने का दावा करता है। इसके लिए सत्याग्रहकी क्षमतामें अटूट श्रद्धा और असीम धीरज रखने की जरूरत है। जो जागरूक रहते हुए प्रतीक्षा और प्रार्थना करते है उनके लिए हरएक बात ठीक ही होती है।

ऊपरकी बातें लिखने के बाद सविनय अवज्ञा स्थगित करने पर अधिकारियोकी प्रतिक्रिया मेरी नजरमें आई है। एसोसिएटेड प्रेसके अनुसार अधिकारियोका मत यह मालूम पड़ता है कि सविनय अवज्ञा न तो बन्द की गई है, न उसे स्थगित ही किया गया है। इस सन्देहका अगर कोई आधार हो, तो वह राज्य-कांग्रेसके दूसरे अध्यक्ष श्रीकृष्ण पिल्लैके उस वक्तव्यसे दूर हो जाना चाहिए जो एसोसिएटेड प्रेसकी एक दूसरी खबरके मुताबिक नीचे लिखे अनुसार है:

> सविनय अवज्ञा महात्माजी के आदेशपर[1] स्थगित की गई है और केवल उन्हींकी अनुमतिसे फिर शुरू की जायेगी, चाहे इसमें कितना ही समय क्यों न लगे। देशको मेरी हिदायत यह है कि राज्य-कांग्रेसके कार्यकर्त्ता जन-साधारणमें इस समय सीधी अहिंसात्मक कार्रवाईसे भिन्न सिर्फ अहिंसा तथा खादी और स्वदेशीके सन्देशका प्रचार करें। राज्य-कांग्रेस आजकी हालतमें महात्माजी के आदेशके बगैर कोई सीधी कार्रवाई नहीं करना चाहती। मैं यह जानता हूँ कि शराबकी दुकानोंपर धरना देना कानून-भंग नहीं है, और सरकारने उसकी मनाही नहीं की है। फिर भी उपद्रव और गलतफहमीके भयसे यह भी हम शुरू नहीं कर रहे हैं।

इस स्पष्ट वक्तव्यसे सन्देहकी कोई गुंजाइश नही रहती। मैं उम्मीद कर रहा हूँ कि जो सत्याग्रही उत्सुकताके साथ सविनय अवज्ञाके फिरसे शुरू होने की प्रतीक्षा कर रहे थे, वे अध्यक्षकी हिदायतोंका पूरी तरह पालन करेंगे और इस प्रकार यह बतला देंगे कि अगर वे यह समझते हैं कि 'अवज्ञा' क्या है, तो वे उतनी अच्छी तरह यह भी समझते है कि 'सविनय'का क्या मतलब है।

मुझे विश्वास हो गया है कि अपने कार्योंमें 'सविनय' शब्दके भावार्थपर उचित बल न देने के कारण ही हमें कई मुसीबतोंका सामना करना पड़ा है। 'सविनय' शब्दमें अपराध, उद्धतता और हिंसाका निषेध है। सविनय अवज्ञा स्थगित होने से राज्य-कांग्रेसके सदस्यों और आम तौरसे त्रावणकोरकी जनताको अहिंसाके फलितार्थोंको समझने का जो मौका मिला है उससे वे लाभ उठायें, और मैं यह वादा

१. देखिए पृ० ८७-९।

करता हूँ कि मनसा-वाचा-कर्मणा इसका पालन करने से वे अपने लक्ष्यकी ओर जितनी तेजी से बढ़ेंगे उतनी और किसी तरह नही बढ़ेंगे।

नई दिल्ली, २६ मार्च, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-४-१९३९

१००. जयपुर सविनय अवज्ञा

जयपुरसे यह पुकार आ रही है कि कुछ सत्याग्रही सत्याग्रह स्थगित कर दिये जाने के कारण निराश हैं और उन्हें रचनात्मक कार्यमें, जो मुख्यत: कताई और खादी है, उतना उत्साह नही है जितना कि लड़ाईके लिए था। अगर आम मनो-भावना सचमुच यही है, तब तो सविनय अवज्ञा स्थगित किया जाना और भी उचित हुआ। क्योंकि रचनात्मक कार्य करने में हिचकिचाहट होना अहिंसाकी समझकी कमी जाहिर करता है, जिसके बिना प्रतिरोध एक तरहकी हिंसा हो जाता है। जो लोग बिना सोचे-समझे रियासतोंमें स्वतन्त्रताकी बात करते हैं और उसे सत्याग्रहके जरिये प्राप्त करने की आशा रखते हैं, जाहिर है कि वे यह नही जानते कि वे किस चीजकी बात कर रहे हैं। क्या वे प्रान्तोसे सबक नही सीखेंगे? प्रान्तीय स्वायत्तता,[1] जैसी-कुछ भी वह है, सत्याग्रहके ही जरिये, फिर वह कितने ही नीचे दर्जेका क्यों न रही हो, हासिल की गई है। लेकिन क्या वे यह महसूस नही करते कि अगर कांग्रेसी मन्त्री पुलिस और फौजकी अर्थात् ब्रिटिश तोपोंकी सहायताके बगैर अपना काम न चला सकें तो वह खत्म हो जायेगी? अगर आंशिक प्रान्तीय स्वायत्तता अहिंसात्मक उपायोंसे प्राप्त की गई है तो वह उन्ही उपायोंसे, किन्ही दूसरोंसे नही, कायम भी रखी जानी चाहिए। हालके अनुभवोंसे यह साफ जाहिर होता है कि देश अहिंसात्मक उपायोसे सत्ता कायम रखने को तैयार नही है। हालांकि पिछले २० वर्षोंसे — और ये बीस वर्ष सर्वाधिक जन-जागृतिके वर्ष हैं — जनताको हथियारोंके, जिनमें ईंटें, पत्थर और लाठियाँ भी शामिल हैं, इस्तेमाल न करने और एकमात्र अहिंसाको ही अपनाने की शिक्षा दी जाती रही है, हम जानते हैं कि जनताकी तरफसे होनेवाली वास्तविक या कल्पित हिंसाको दबाने के लिए कांग्रेसी मन्त्रियोंको हिंसाका प्रयोग करने के लिए मजबूर होना पड़ा है। यह भी साफ है कि देशको उपयुक्त तालीमके बिना हिंसाका इस्तेमाल करने के लिए तैयार नही किया जा सकता। तब क्या हमारी अहिंसा कमजोरोंकी अहिंसा थी? हिन्दू-मुस्लिम तनातनी मेरे लिए बिलकुल खरी कसौटी है। कांग्रेसमें फैली हुई अशुद्धि हिंसाका निश्चित चिह्न है। रियासतोंको स्वराज्य अहिंसाके किसी बाहरी दिखावे से

१. भारत सरकार अधिनियम १९३५ के अन्तर्गत प्रदत्त; देखिए खण्ड ६५।

हासिल नही होना है। अगर वह हासिल किया जाना है तो सबलकी अहिंसाके जरिये ही हासिल किया जायेगा। अर्थात्, उसके लिए हमें कड़ी मेहनत करनी होगी, शान्तिपूर्वक और चुपचाप कष्ट सहना होगा, गरीबों, भूखों और समाजके परित्यक्त लोगोंकी सेवा करनी होगी और राज्य और समाजके कानूनोंका, जहाँतक वे सार्वजनिक और व्यक्तिगत नैतिकताके खिलाफ न हों, स्वेच्छापूर्वक पालन करना होगा। जबतक हममें सचमुच सबलकी अहिंसा पैदा नही हो जाती, तबतक हमें स्वराज्यके लिए, चाहे वह ब्रिटिश भारतका स्वराज्य हो या रियासतोंका, सविनय अवज्ञाका खयाल ही नही करना चाहिए। और भावी सत्याग्रहियोके लिए मै नियमित रूपसे चरखा चलाने और खादी पहनने को अचूक तो नही तथापि एक लाजिमी कसौटी मानता हूँ। जयपुरके सत्याग्रहियोको, अगर वे आगे होनेवाली किसी भी सविनय अवज्ञामें भाग लेना चाहते हों तो, अहिंसाके फलितार्थोंको समझ लेना चाहिए और मैंने जो न्यूनतम शर्तें रखी हैं उनको पूरा करने में उत्साहपूर्वक जुट जाना चाहिए। उन्हें यह भी समझ लेना चाहिए कि जो बात मैंने उनके लिए लागू की है वह आगे जिन सत्याग्रहियोंसे भी मेरा सम्बन्ध आयेगा उन सभीके लिए लागू है।

लेकिन इसका मतलब यह नही है कि आजादीकी लड़ाई बन्द हो गई है। इसका तो सिर्फ इतना ही मतलब है कि सविनय अवज्ञा इतनी सस्ती न होनी चाहिए जितनी कि, मुझे भय है, सीधे नही तो परोक्ष रीतिसे ही सही, मैंने उसे बना दिया है। लेकिन कोई बात सीखने के लिए मै कभी भी अपनेको अत्यधिक वृद्ध नहीं मानता हूँ। कोई भी व्यक्ति सदा ही युवक है, अगर वह सत्य-रूपी परमात्माकी अथवा सत्यकी, जो कि परमात्मा ही है, अभिव्याप्तिको अनुभव करता रहे। लेकिन अगर अबसे सविनय अवज्ञा एक अत्यन्त विरल चीज होनेवाली है, तो ईश्वरकी कृपासे मै यह भी दिखा देने की आशा रखता हूँ कि हम अभीतक जिस हलकी धातुसे सन्तोष किये बैठे थे, उसकी बनिस्बत यह निश्चित रूपसे कही ज्यादा कारगर और तेज असरवाली चीज साबित होगी।

नई दिल्ली, २७ मार्च, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १-४-१९३९

१०१. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

नई दिल्ली
२७ मार्च, १९३९

राष्ट्रपति सुभाष बोस
जीलगोड़ा

तुम्हारे पत्रकी प्रतीक्षामें हूँ। जैसा कि तुमने अपने वक्तव्यमें कहा है, यह वांछनीय है कि हम मिलें। राजकोटके मामलेमें मैं दिल्लीमें बँधा हूँ नहीं तो कमजोरीके बावजूद तुम्हारे पास दौड़ा चला आता। मेरा सुझाव है कि तुम यहाँ चले आओ और मेरे साथ रहो। हमारी बातचीत आरामसे चलती रहेगी और इस दौरान मैं तुम्हारी सेवा भी करूँगा जिससे तुम्हारा स्वास्थ्य सुधरेगा। स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१०२. पत्र : सर मॉरिस ग्वायरको

२७ मार्च, १९३९

मैंने अपना उत्तर[1] तैयार करके रखा था। इस बीच मुझे आपका पत्र मिला। फिर भी मैंने जो उत्तर लिखा है उसमें रद्दो-बदल करनेकी कोई जरूरत नहीं है।

१. साधन-सूत्रमें महादेव देसाई बताते हैं: "बापूने पिछली रात (२६ मार्चको) अपना छोटा-सा उत्तर पहलेसे ही तैयार कर रखा था। अगली सुबह वे उन परिवर्तनोंको देख रहे थे जो उसमें सुझाये गये थे। वे ११ बजे दिनमें पत्र भेजने ही वाले थे कि उन्हें मुख्य न्यायाधीशका पत्र मिला, जिसमें उन्होंने लिखा था कि 'आपको विस्तारपूर्वक लिखना चाहिए, क्योंकि मैं प्रारम्भिक आपत्तियोंपर उन्हें सतही तौरपर देखकर ही व्यवस्था नहीं देना चाहता।"

"द राजकोट फास्ट–८" (राजकोटका उपवास–८) में प्यारेलालने २६ मार्चकी तिथिमें निम्न जानकारी दी है: "यद्यपि मुख्य न्यायाधीशके आदेशानुसार सरदारने पिछली १७ तारीखको ही अपना निवेदन भेज दिया था, लेकिन आगेकी कार्यवाही इसलिए रुकी रही कि राजकोट दरबारका कोई बयान प्राप्त नहीं हुआ था। यह विलम्ब बेहद खटकनेवाला था, लेकिन कोई चारा नहीं था। अन्तमें कल दरबार वीरावाला मुख्य न्यायाधीशके समक्ष राजकोट-दरबारका पक्ष प्रस्तुत करने को पहुँचे। उन्होंने टाइप किये हुए पूरे चालीस पृष्ठोंका बयान पेश किया। उसकी एक नकल उत्तरके लिए सरदारके पास भेजी

मैं आपसे इतना कह दूँ कि धोखा-धड़ीकी[1] जो बात कही गई है, मैं उसका प्रतिवाद[2] करता हूँ। सच पूछा जाये तो इसका कोई प्रश्न ही नहीं उठता।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

१०३. एक आशीर्वचन[3]

रामनवमी, २९ मार्च, १९३९

जीवन यज्ञ ही के लिये है।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

१०४. बातचीत : अगाथा हैरिसनसे[4]

२९/३० मार्च, १९३९

यह तो बेहद आसान काम[5] है। लेकिन कभी-कभी इन आसान चीजोंमें कुछ ऐसा होता है कि वे हमें सबसे कठिन दिखने लगती है। यदि हमारे हृदयके कपाट

गई। बयान सरदारके खिलाफ आक्षेपोंसे भरा था। उसमें २६ तारीखको सरदारके नाम लिखे ठाकुर साहबके पत्रकी वैधतापर आपत्ति की गई थी और उस पत्रको दबाव डालकर और फरेब करके ठाकुर साहबसे लिखवाया गया बताया गया था। उत्तरमें सरदारने आधे पृष्ठका छोटा-सा बयान दिया। उन्होंने लिखा था कि राजकोट दरबारके उत्तरका अधिकतर भाग अप्रासंगिक है और उसमें निन्दापूर्ण बातें कही गई हैं, जिनके समर्थनमें कोई सबूत नहीं दिया गया है। उन्होंने प्रार्थना की कि इन्हें बयानमें से निकाल देना चाहिए। जहाँतक ठाकुर साहबके उसी दिनके पत्र और उसके साथकी २६ दिसम्बरकी अधिसूचनाका सवाल था, उन्होंने कहा कि यह तो अपने-आपमें स्पष्ट है और इसकी व्याख्याके लिए किसी बाहरी साक्ष्यकी आवश्यकता नहीं है। इसलिए उन्होंने अनुरोध किया कि मुख्य न्यायाधीश पिछले २६ दिसम्बरके नोटपर अविलम्ब निर्णय दें। सुनवाई मुख्य न्यायाधीशके आवासपर दिनके साढ़े तीन बजे हुई। मुख्य न्यायाधीशके अनुरोधपर सरदारने, वे इस मामलेमें जबसे पड़े थे तबसे लेकर उनके नाम ठाकुर साहबके २६ दिसम्बरके पत्रपर हस्ताक्षर होने तककी, घटनाओंका संक्षिप्त विवरण सुनाया। निर्णयके लिए आगेकी तिथि दे दी गई" (हरिजन, ३-६-१९३९)।

१ और २. साधन-सूत्रमें यहाँ अंग्रेजी शब्दोंका प्रयोग किया गया है।

३. अपनी वर्षगाँठके अवसरपर घनश्यामदास बिड़ला गांधीजी से आशीर्वाद लेने गये थे। उनके पास जो गीता थी उसके एक पृष्ठपर गांधीजी ने यह वाक्य लिख दिया था।

४ और ५. बातचीत "द राजकोट फास्ट–८" (राजकोटका उपवास–८) से ली गई है। प्यारेलालके अनुसार, "अगाथा हैरिसनको लोगोंको अहिंसाका प्रशिक्षण देने में जिन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ रहा था वे उनकी चर्चा कर रही थीं।"

खुल जायें तो हमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। अहिंसा हृदयकी वस्तु है। वह हमें किसी बौद्धिक कमालसे नहीं मिलती। हर-किसीको ईश्वरमें विश्वास है, यद्यपि हर-कोई इस बातको जानता नहीं। क्योंकि हर-किसीको अपने-आपमें विश्वास है और अपनेको ही असंख्य गुना कर दिया जाये तो वह ईश्वर है। सब जो जीवित हैं कुल मिलाकर ईश्वर हैं। हम ईश्वर भले ही न हों पर ईश्वरके अंश हैं—उसी प्रकार जैसे छोटी-सी बूंद भी सागरकी है। कल्पना कीजिए कि उस बूंदको काटकर सागरसे अलग कर दिया जाये और करोड़ों मील दूर फेंक दिया जाये। अपने दायरेसे अलग कटकर वह बेबस हो जाती है और सागरकी शक्ति और महानता नहीं महसूस कर सकती, लेकिन यदि कोई उसको संकेत दे सके कि वह सागरकी है तो उसका विश्वास पुनः ताजा हो जायेगा, वह खुशीसे नाच उठेगी और सागरकी सारी शक्ति और महानता उसमें झलक उठेगी। ऐसा ही सभी अहिंसात्मक क्रिया-कलापोंका हाल है। आधा घंटा रोजाना कताईको ही ले लें। वह कुछ भी नहीं है, यदि अहिंसासे न जोड़ी जाये। माला जपने को ही लीजिए। एक बन्दर भी माला फेर सकता है, लेकिन भक्त उसे ईश्वरके करीब पहुँचने के लिए फेरते हैं। मैं चाहता हूँ कि हर-कोई अहिंसामें अपने विश्वास तथा करोड़ों मूक लोगोंके साथ अपने तादात्म्यके प्रमाण-स्वरूप रोज आधा घंटा कताई करे। तभी हम अपने भीतर अहिंसक शक्तिका प्रस्फुटन महसूस करेंगे।[1]

अभीतक हमने जो अहिंसा प्रस्तुत की है, वह बहादुरकी अहिंसा नहीं रही है। कमजोरके एक हथियारके रूपमें, एक कार्य-साधक उपायके रूपमें वह काफी अच्छी है। वह कुछ समयतक अपना प्रयोजन सिद्ध कर सकी। लेकिन कमजोरकी अहिंसा कबतक चल सकती है? मैं यूरोपके लिए जवाब नहीं दे सका हूँ, क्योंकि मैंने भारतमें उसको कारगर सिद्ध नहीं किया है। और फिर भी मैं अपने इतिहासमें उन अध्यायोंको फिरसे नहीं लिखूंगा। कभी-कभी अपने साधनोंकी कमजोरीसे भी ईश्वर अपना हेतु पूरा कर लेता है। लेकिन अब यदि हम अपनी अहिंसाका आधार पूरी तरह नहीं सुधारते और पुराने ही तरीकेसे चलना जारी रखते हैं, तो यह अनर्थ ही होगा। हम अहिंसात्मक शक्ति और साहस नहीं पैदा कर सकेंगे और कठिनाई सामने आने पर शायद कायर-जैसा व्यवहार करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-६-१९३९

१. प्यारेलालके अनुसार आगेकी बात ३० मार्चको कही गई थी।

१०५. तार : सुनील बोसको

नई दिल्ली
३० मार्च, १९३९

डॉ० सुनील बोस
जीलगोड़ा

आपका तार[1] देखते हुए मैं निस्संकोच अपना सुझाव[2] वापस लेता हूँ। आरोग्य-लाभकी दिशामें होनेवाली प्रगतिको किसी भी हालतमें खतरेमें नहीं डालूँगा। मैं आपका सुझाव मान लूँगा और सुभाषके पत्रमें उठाये गये सवालोंको पत्र-व्यवहार द्वारा निबटाऊँगा। यह बात उनसे मेरे स्नेह-सहित कह दीजिए।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१०६. पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको

नई दिल्ली
३० मार्च, १९३९

प्रिय सुभाष,

अपने तारका[3] जवाब पाने की खातिर मैंने तुम्हारे २५[4] तारीखके पत्रका उत्तर देने में देर की है। सुनीलका तार मुझे कल रातको मिला। अब प्रात:कालकी प्रार्थनाके समयसे पहले उठकर यह उत्तर लिख रहा हूँ।

चूँकि तुम्हारे खयालमें पण्डित पन्तका प्रस्ताव[5] अनियमित था और कार्य-समिति-सम्बन्धी धारा स्पष्ट रूपसे अवैधानिक और नाजायज है, इसलिए तुम्हारा मार्ग नितान्त स्पष्ट है। तुम्हें समितिका स्वेच्छासे चुनाव करना चाहिए।

१. २९ मार्चका, जिसमें और बातोंके अलावा यह भी कहा गया था: "अनुभवसे . . . लगता है . . . लम्बी यात्रासे . . . स्वास्थ्य फिर बिगड़ेगा . . . सुझाव कि बाकी समस्याओंको भविष्यमें चर्चाके लिए छोड़कर आप दोनों सिर्फ अत्यावश्यक समस्याओंके बारेमें . . . पत्र-व्यवहार करें।"

२. देखिए "तार: सुभाषचन्द्र बोसको", पृ० ९७।

३. देखिए पृ० ९७।

४. साधन-सूत्रमें "२६" है।

५. देखिए पृ० ८९, पा० टि० १।

इसलिए इस विषयमें तुम्हारे कई प्रश्नोंको मेरे उत्तरकी जरूरत नहीं।

जब हम फरवरीमें मिले थे तबसे मेरी यह राय मजबूत हुई है कि जहाँ मौलिक बातोंपर मतभेद हों, और हम सहमत थे कि ऐसे मतभेद हैं, वहाँ मिली-जुली समिति हानिकर होगी। इसलिए अगर यह माना जा सके कि तुम्हारी नीतिको महासमितिके बहुमतका समर्थन प्राप्त है तो तुम्हें बिलकुल उन्ही लोगोंकी बनी हुई कार्य-समिति रखनी चाहिए, जो तुम्हारी नीतिमें विश्वास करते हैं।

हाँ, हमारी फरवरीकी मुलाकातमें सेगाँवमें मैंने जो यह विचार प्रकट किया था कि मैं किसी भी प्रकारसे तुम्हारे आत्म-दमनमें भागीदार होने का अपराधी नहीं बनूँगा, उसपर मैं अभी भी कायम हूँ। स्वेच्छापूर्वक आत्म-विलोपन दूसरी चीज है। किसी ऐसे विचारको दबा लेना, जिसे तुम बहुत दृढ़ताके साथ देश-हितका साधक मानते हो, आत्म-दमन होगा। इसलिए अगर तुम्हें अध्यक्षके रूपमें काम करना है तो तुम्हारे हाथ खुले रहने चाहिए। देशके सामने जो परिस्थिति है, उसमें किसी मध्यम मार्गकी गुंजाइश नही है।

जहाँतक गांधीवादियों (वैसे, यह शब्दप्रयोग गलत है)का सम्बन्ध है, वे तुम्हें बाधा नहीं पहुँचायेंगे। जहाँ सम्भव होगा, वे तुम्हारी सहायता करेंगे और जहाँ नही कर सकेंगे, वहाँ अलग रहेंगे। अगर वे अल्पमतमें हैं तब तो कुछ भी कठिनाई नहीं होनी चाहिए। अगर वे स्पष्टतः बहुमतमें होंगे तो शायद वे अपने-आपको दबाकर न रख सकें।

लेकिन मुझे जिस चीजकी चिन्ता है वह यह हकीकत है कि कांग्रेसके मतदाता फरजी है और इसलिए बहुमत और अल्पमतका पूरा अर्थ नही रह जाता। फिर भी जबतक कांग्रेसकी भीतरी सफाई नहीं हो जाती तबतक जो हथियार हमारे पास फिलहाल है, उसीसे काम चलाना होगा। दूसरी चीज, जिससे मुझे परेशानी है, हमारा भयंकर आपसी अविश्वास है। जहाँ कार्यकर्त्ताओंमें परस्पर अविश्वास हो वहाँ मिल-जुलकर काम करना असम्भव हो जाता है।

मेरे खयालसे तुम्हारे पत्रमें अब ऐसा और कोई मुद्दा नही रह जाता जिसका जवाब देने की आवश्यकता हो।

जो-कुछ करो उसमें भगवान् तुम्हारा मार्ग-दर्शन करे। डॉक्टरोंकी आज्ञाओंका पालन करके जल्दी अच्छे हो जाओ।

प्यार।

बापू

[पुनश्च :]

जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, हमारे पत्र-व्यवहारको प्रकाशित करने की जरूरत नहीं। परन्तु तुम्हारा दूसरा विचार हो तो प्रकाशित करने की मेरी इजाजत है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१०७. पत्र : अकबर हैदरीको

नई दिल्ली
३० मार्च, १९३९

प्रिय सर अकबर,[1]

आपके कृपापत्रके लिए आभारी हूँ।

डॉ० मुंजेका पत्र तो विचित्र है। आप इस बातका भरोसा रख सकते हैं कि हैदराबादसे सम्बन्धित कोई भी चीज पहले आपको दिखाये बिना मैं प्रकाशित नहीं करूँगा। मैं आपसे बड़ी-बड़ी बातोंकी आशा रखता हूँ। लन्दनसे लौटते समय हम दोनोंके बीच जो बातचीत हुई थी उसे मैं भूल नहीं सकता। हम दोनों दोनों समुदायोंके बीच शान्ति-सौहार्द स्थापित करने के लिए एक संयुक्त अभियान छेड़नेवाले थे, लेकिन ईश्वरकी इच्छा कुछ और ही थी। मुझे तो जेल जाना था। हम दोनों जाहिरा तौरपर तो मिलकर काम नहीं कर पाये, लेकिन उस तरह काम करने की इच्छा मेरे मनमें बराबर बनी रही है और मुझे भरोसा है कि आपके अन्दर भी वह इच्छा कायम रही है। उस इच्छाकी पूर्तिके अवसर आपको तो उपलब्ध हैं, लेकिन मुझे नहीं। मैं आपकी ओर मित्रकी-सी दिलचस्पी-भरी निगाहसे देख रहा हूँ। अपने पत्रमें आपने जिन सुधारोंकी रूप-रेखा बताई है, मैं उत्सुकतासे उनकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

मैं हर दिन इस समाचारकी तलाश करता हूँ कि आपने राज्य-कांग्रेसके कैदियोंको छोड़ दिया है। आप जानते ही हैं कि मैंने उस संस्थाको सत्याग्रह फिर आरम्भ करने से रोक दिया है। यदि आप राज्य-कांग्रेसवालों के साथ सहानुभूतिसे पेश आयेंगे तो वे हैदराबादमें एक नये युगका आरम्भ करने के आपके प्रयत्नोंमें बाधक होने के बजाय सहायक ही होंगे। मैं चाहूँगा कि जबतक आपको कोई ऐसी निश्चित जानकारी न मिले जो मेरी इस बातके खिलाफ जाती हो तबतक आप इसपर पूरा यकीन करके चलें।

आपने मेरे उपवासका जिक्र किया, इसके लिए आभारी हूँ।

आशा है, आप स्वस्थ-सानन्द होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८४२) से

1. हैदराबाद राज्यके दीवान

१०८. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

नई दिल्ली
३० मार्च, १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे दो पत्र[1] मिले। दोनों अच्छे थे।

तुम्हे पत्र-व्यवहारकी नकले भेज रहा हूँ।

सं० प्रा० की घटनाओंसे[2] मुझे अशान्ति होती है। मेरा हल यह है कि या तो तुम्हें मुख्य मन्त्री बन जाना चाहिए या मन्त्रिमण्डलको तोड़ देना चाहिए। तुम्हें उच्छृंखल तत्त्वोंपर काबू पाना चाहिए।

जो समाजवादी यहाँ आये थे, उनसे मेरी तीन दिन दिल खोलकर बातें हुईं। नरेन्द्रदेव तुम्हें खबर देंगे। वह अपने-आप न दें तो तुम देने को कहना।

प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३९; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृष्ठ ३५४ से भी

१. २२ और २४ मार्चके पत्र, जिनके साथ सुभाषचन्द्र बोसके साथ जवाहरलाल नेहरूके पत्र-व्यवहारकी नकलें भेजी गई थीं। जवाहरलाल नेहरूने गांधीजी को सुभाषचन्द्र बोसके नाम भेजे अपने इस तारकी भी सूचना दी थी: "गांधीजी . . . महसूस करते हैं कि दिशा-दर्शन और कार्यालयकी व्यवस्थाके अभावमें कांग्रेसके कामका नुकसान हो रहा है। राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय संकटोंका भी तकाजा है कि हम सतत सावधानी बरतें" (गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३९)।

२. "द राजकोट फास्ट–८" (राजकोटका उपवास–८) में प्यारेलाल लिखते हैं: "इलाहाबादके साम्प्रदायिक दंगोंको लेकर गांधीजी बहुत विचलित थे।" देखिए अगला शीर्षक भी।

१०९. एक बातचीत[1]

३१ मार्च, १९३९

मैं तो चालू कांग्रेस-तन्त्रको ही समाप्त कर देना चाहूँगा। आज यह एक बोझ बनकर रह गया है। यदि कांग्रेसके रजिस्टरमें चार-छह सच्चे कांग्रेसी ही होते तो वे शान्तिके सच्चे दूत होते। किन्तु उनके सारे प्रयत्न संख्याके बोझके नीचे दबकर बिखरे जा रहे हैं। जिनके नाम कांग्रेसके रजिस्टरमें हैं वे सबके-सब यदि सच्चे कांग्रेसी होते तो साम्प्रदायिक दंगे फैल पायें, इससे पहले ही वे आगे बढ़कर खुदको होम देते। किन्तु आज तो हर कोई अपने भाईपर खंजर चलाना चाहता है। या तो हमें अहिंसाकी अपेक्षाओंके अनुसार सब-कुछ बदल देना चाहिए या इस संस्थाका पुनर्निर्माण करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-६-१९३९

११०. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

नई दिल्ली
३१ मार्च, १९३९

राष्ट्रपति सुभाष बोस
जीलगोड़ा

तुम्हारा पत्र[2] मिला। पहले पत्रका उत्तर[3] कल डाकमें डाल दिया है। अखिल भारतीय बैठकको प्राथमिकता मिलनी ही चाहिए। कार्यवाहीके नियम दो के अनुसार आपात्कालीन बैठकके लिए सात दिनका

१. "द राजकोट फास्ट–८" (राजकोटका उपवास–८) से उद्धृत। प्यारेलालके अनुसार "सुबह ७ बजे जब बिड़ला भवनकी वह छोटी-सी 'घरेलू मंडली' हमेशाकी तरह एकत्र हुई तो स्वभावतः इलाहाबादकी साम्प्रदायिक स्थितिकी चर्चा छिड़ गई।" गांधीजी से पूछा गया कि आज वे इलाहाबादमें हों तो क्या करें।

२. २९ मार्चके अपने पत्रमें सुभाषचन्द्र बोसने गांधीजी को सूचना दी थी कि वे २० अप्रैलके आसपास कलकत्तामें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी और कार्य-समितिकी बैठक बुलाना चाहते हैं। इन्हीं दिनोंके आसपास बिहारमें गांधी सेवा संघका सम्मेलन था, इसलिए सुभाष बोसने उनसे पूछा था कि अ० भा० कां० क० की बैठक इसके पहले बुलाई जाये या बादमें।

३. देखिए पृ० १००-१।

नोटिस दिया जाना चाहिए जो समाचारपत्रों द्वारा दिया जा सकता है। स्नेह।[1]

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१११. पत्र : अमृतकौरको

नई दिल्ली
३१ मार्च, १९३९

प्रिय पगली,

तुम्हारा तार यथासमय मिल गया था। मुझे उसकी जरूरत भी थी। सिरदर्द खत्म होना ही चाहिए। कैलेनबैक आज चले गये। वे उद्विग्न थे। अदनके लिए वे स्टीमर लेंगे और वहाँसे डर्बनके लिए। घर खाली है। सुभाषके पत्रकी नकल इसके साथ है।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९०५)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२१४ से भी

११२. पत्र : रेहाना तैयबजीको

नई दिल्ली
३१ मार्च, १९३९

प्रिय रेहाना,

तेरा प्यारा खत मेरे सामने है। मेरी बड़ी इच्छा है कि मैं तुझे और अम्माजानको पूर्ण सन्तोष दूँ और तुम्हारे परिवारमें पहले मेरी जो स्थिति थी, उसे पुनः प्राप्त करूँ। मैं इस आशामें जी रहा हूँ कि किसी दिन मैं उसे प्राप्त कर पाऊँगा। मैं हृदयसे ऐसी प्रार्थना करता हूँ।

तेरे साथके सब लोगोंको प्यार; सरोजको[2] भी मेरा प्यार भेजना।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६७४)से

१. सुभाषचन्द्र बोसने अपने इसी तिथिके तारमें २० तारीखके बादकी किसी तिथिके पक्षमें अपनी राय बताते हुए कहा था कि वे गांधीजी की इच्छानुसार फैसला करेंगे।

२. सरोज नानावटी

११३. पत्र : कृष्णचन्द्रको

३१ मार्च, १९३९

चि० कृष्णचंद्र,

तुमारे खत तो आते हैं। मुझको बखत रहता ही नहीं। शक्तिका संग्रह करने के लिये खतोंका लिखना करीब २ छोड़ दीया है।

बालकृष्णसे कहो वजनको और बढ़ना है। शक्ति तो आवेगी ही। मेरा कार्य-क्रम आज निश्चित हो ही नहीं सकता है। सेगांव कब आउंगा सो नहीं जानता।

चक्रैया राजभूषणका काम कैसे चलता है? बलवंतसिंह खुश है? पारनेरकरकी तबीयत अच्छी है? भणसाली भाई कैसे हैं? चिमनलाल व शकरी बहिन? यशोधराको कुछ ज्यादा समय दिया जाय। मैथ्यु कैसे हैं? क्या करते है? मुझे लिखे।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३१२)से। एस० जी० ७५ से भी

११४. पत्र : नारायणीदेवीको

नई दिल्ली
३१ मार्च, १९३९

प्रिय भगिनी,

वर्तमान स्थितिको देखते हुए मेरा अभिप्राय है देशी राज्योंमें जो सत्याग्रह चल रहा है या उसकी तैयारियां हो रही है, स्थगित किया जाय। इसलिये अच्छा होगा यदि मेवाडमें भी सत्याग्रह स्थगित किया जाय।[1] रचनात्मक कार्य अवश्य किया जाय और मै आजकल जो लीख रहा हूं उसपर मनन किया जाय।

आपका,
मो० क० गांधी

श्रीमती नारायणीदेवी[2]
मेवाड़

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१३२)से

१. द इण्डियन एनुअल रजिस्टर, १९३९, जिल्द १ के अनुसार ४-अप्रैलको सत्याग्रह स्थगित कर दिया गया था।

२. मेवाड़ प्रजा-परिषद्की मन्त्री

११५. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

नई दिल्ली
१ अप्रैल, १९३९

राष्ट्रपति सुभाष बोस
झरिया

तार मिला[1]। जो तारीख तुम्हें ठीक लगे निश्चित करो। उसीके अनुसार मैं अपना कार्यक्रम बना लूँगा। स्नेह।[2]

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

११६. पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको

बिड़ला भवन, नई दिल्ली
२ अप्रैल, १९३९

प्रिय सुभाष,

तुम्हारा ३१ मार्चका तथा उससे पहलेवाला पत्र भी मिला।[3] तुम काफी स्पष्टवादी हो और मैं तुम्हारे पत्र पसन्द करता हूँ, क्योंकि अपने विचारोंको तुम साफ-साफ प्रकट करते हो।

जो विचार तुमने प्रकट किये हैं, वे अन्य लोगोंके तथा मेरे विचारोंके इतने विरुद्ध हैं कि मैं उनमें किसी तरह मेल बिठा सकने की कोई सम्भावना नहीं देखता। मेरा खयाल है कि प्रत्येक विचारधाराके अनुयायियोंको अपने विचार देशके सामने बिना किसी मिलावटके रख सकने की सुविधा होनी चाहिए। और यदि ईमानदारीसे ऐसा किया जाता है तो मैं नहीं समझता कि ऐसी कोई कड़वाहट क्यों होनी चाहिए जिससे गृह-कलह हो।

१. देखिए पृ० १०५, पा० टि० १।

२. सुभाष बोसने उसी दिन अपने उत्तरमें कार्य-समितिकी बैठकके लिए २८ अप्रैल और अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकके लिए ३० अप्रैलकी तिथियाँ सुझाई थीं।

३. सुभाषचन्द्र बोसके २९ और ३१ मार्चके पत्रोंके लिए देखिए परिशिष्ट ६।

जो चीज गलत है वह हमारे बीच मतभेदोंका होना नहीं, बल्कि एक-दूसरेके प्रति आदर और विश्वासका समाप्त हो जाना है। इसका इलाज समय करेगा, जो सबसे अच्छा वैद्य है। यदि हममें सच्ची अहिंसा है तो कोई गृह-कलह नही हो सकता और कड़वाहट तो और भी नही।

सभी बातोंको ध्यानमें रखते हुए मेरा मत है कि तुम्हें तुरन्त अपने विचारोंका पूरी तरह प्रतिनिधित्व करनेवाली अपनी समिति बना लेनी चाहिए और अपना कार्यक्रम सुनिश्चित रूपसे तैयार करके उसे आगामी अ० भा० कां० क० के सामने रखना चाहिए। अगर कमेटी उस कार्यक्रमको स्वीकार कर लेती है तो सब सुगम हो जायेगा और अल्पसंख्यकोंके द्वारा रुकावट डाले गये बिना तुम उसे कार्यान्वित कर सकोगे। इसके विपरीत, यदि तुम्हारा कार्यक्रम स्वीकार नहीं किया जाता, तो तुम्हें त्यागपत्र दे देना चाहिए और कमेटीको अपना अध्यक्ष चुन लेने देना चाहिए। और तब तुम देशको अपने ढंगपर समझाने-सिखाने को आजाद होगे। मैं यह सलाह पण्डित पन्तके प्रस्तावका खयाल किये बिना दे रहा हूँ।

अब रही तुम्हारे प्रश्नोंकी बात। जब पण्डित पन्तका प्रस्ताव[1] पेश किया गया था, मैं बिस्तरपर था। मथुरादास, जो उस दिन राजकोटमें थे, एक दिन सवेरे मेरे पास यह सन्देश लाये कि पुराने नेताओंमें विश्वास व्यक्त करनेके लिए एक प्रस्ताव होनेवाला है। मेरे सामने प्रस्तावका पाठ नही था। मैंने कहा कि इस बातकी हदतक वह अच्छा होगा, क्योंकि सेगाँवमें मुझे बताया गया था कि तुम्हारा चुनाव जिस मात्रामें तुममें विश्वासका सूचक था उससे कहीं ज्यादा पुराने नेताओंकी, खासकर सरदारकी, निन्दाका सूचक था। इसके बाद वास्तविक पाठ तो मैंने इलाहाबादमें उस समय देखा जब मैं मौलाना साहबसे मिलने गया।

मेरी प्रतिष्ठाकी कोई बात नही है। उसका कोई अपना मूल्य नहीं है। जब मेरे मन्तव्यमें सन्देह किया जाता हो या मेरी नीति अथवा कार्यक्रमको देश अस्वीकार कर दे तब प्रतिष्ठा समाप्त ही होनी चाहिए। भारतका उठना या गिरना तो इस बातपर निर्भर है कि उसके करोड़ों निवासी कुल मिलाकर क्या करते हैं। व्यक्ति चाहे जितने ऊँचे हों, उनका कोई मूल्य नही है। जिस मात्रामें वे उन करोड़ोंका प्रतिनिधित्व करते हैं उतना ही उनका मूल्य है। इसलिए इस बातको हम ध्यानसे निकाल दें।

मैं तुम्हारी इस रायसे पूरी तरह असहमत हूँ कि देश कभी इतना अहिंसात्मक नही रहा जितना आज है। मैं जिस हवामें साँस लेता हूँ उसमें मुझे हिंसाकी गन्ध आती है। लेकिन हिंसाने बड़ा सूक्ष्म रूप धारण कर लिया है। हमारा पारस्परिक अविश्वास हिंसाका ही एक बुरा रूप है। हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच जो दरार बढ़ती जा रही है वह भी इसी बातकी तरफ इशारा करती है। मैं और भी उदाहरण दे सकता हूँ।

१. देखिए पृ० ८९, पा० टि० १।

कांग्रेसमें कितना भ्रष्टाचार है, इस बातपर हममें मतभेद मालूम देता है। मेरा खयाल है कि यह बढ़ रहा है। पिछले कई महीनोंसे मैं पूरी जाँच-पड़तालके लिए आग्रह करता रहा हूँ।

इन परिस्थितियोंमें मैं सामूहिक अहिंसात्मक कार्रवाईका कोई वातावरण नहीं देखता। जो हम चाहते है उसे करा सकने की प्रभावकारी शक्ति उत्पन्न किये बिना अल्टीमेटम बेकार, बल्कि उससे भी बुरा होगा।

लेकिन जैसा कि मैंने तुम्हें बताया है, मैं एक वृद्ध आदमी हूँ, शायद दिनों-दिन भीरु और जरूरतसे ज्यादा सतर्क होता जा रहा हूँ और तुम्हारे सामने जवानी है और उससे पैदा होनेवाला निर्भीक आशावाद है। मैं चाहूँगा कि तुम्हारी बात सही हो और मेरी गलत। मुझे दृढ़ विश्वास है कि कांग्रेस, जैसी वह आज है, अपेक्षित कार्य नही कर सकती सही, अर्थोमें सविनय अवज्ञा नही कर सकती। इसलिए यदि तुम्हारा विश्लेषण सही है तो सत्याग्रहके संचालकके रूपमें अब मेरा कोई उपयोग नहीं रह गया है, और मैं एक ऐसा पुराना आदमी हूँ जो वर्त्तमानसे विच्छिन्न हो चुका हैं।

मुझे खुशी है कि तुमने राजकोटके छोटे-से मामलेका उल्लेख किया है। हम दोनों जिन भिन्न दृष्टिकोणोसे चीजोंको देखते हैं, यह इससे काफी स्पष्टतापूर्वक प्रकट होता है। इस मामलेमें मैंने जो कदम उठाये उनमें कही भी ऐसा कुछ नहीं है जिसपर मुझे पछतावा हो। मुझे लगता है कि इसका बड़ा राष्ट्रीय महत्त्व है। मैंने राजकोटके कारण अन्य रियासतोमें सविनय अवज्ञा बन्द नही की है। लेकिन राजकोटने मेरी आँखें खोल दी; उसने रास्ता दिखलाया। मै दिल्लीमें अपने स्वास्थ्यके कारण नही हूँ। मै तो दिल्लीमें अनिच्छापूर्वक हूँ; यहाँ मुख्य न्यायाधीशके फैसलेका इन्तजार कर रहा हूँ। वाइसरायने मुझे जो अन्तिम तार[1] दिया था, उसमें की गई घोषणाकी समुचित पूर्तिके लिए जो कदम उठाये जाने चाहिए जबतक वे अन्तिम रूपसे नही उठाये जाते तबतक दिल्लीमें रहना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। मैं इसमें कोई जोखिम नही उठा सकता। यदि मैं अधीश्वरी सत्ताको अपना कर्त्तव्य करने के लिए कहूँ तो फिर मुझे यह देखने के लिए दिल्लीमें रहना जरूरी है कि वह कर्त्तव्य पूर्णतया पूरा किया जाये। जिस दस्तावेजके अर्थमें ठाकुर साहबने सन्देह प्रकट किया है उसकी प्रामाणिक व्याख्याके लिए मुख्य न्यायाधीशको नियुक्त किया जाये, इस बातमें मुझे कोई गलत चीज नही दिखलाई दी। वैसे, सर मॉरिस मुख्य न्यायाधीशकी हैसियतसे दस्तावेजकी जाँच नही कर रहे है, बल्कि वाइसरायके विश्वासपात्र प्रशिक्षित विधिवेत्ताकी हैसियतसे कर रहे है। वाइसराय द्वारा मनोनीत व्यक्तिको न्यायाधीश स्वीकार करके, मैं समझता हूँ, मैंने बुद्धिमत्ता और शालीनता ही दिखलाई है और जो बात ज्यादा महत्त्वपूर्ण है वह यह कि इस तरह मैंने इस मामलेमें वाइसरायकी जिम्मेदारी बढ़ा दी है।

१. देखिए परिशिष्ट ३।

यद्यपि हमने अपने बीचके तीव्र मतभेदोंपर बातचीत की है, मुझे पूरा विश्वास है कि हमारे निजी सम्बन्धोंपर जरा-सी भी आँच नहीं आयेगी। यदि वे दिली हैं, और मैं समझता हूँ कि वे हैं, तो वे इन मतभेदोंका भार बरदाश्त कर लेंगे।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९; तथा **क्रॉसरोड्स**, पृ० १४०-२ भी

११७. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

नई दिल्ली
२ अप्रैल, १९३९

राष्ट्रपति सुभाषचन्द्र बोस
जीलगोड़ा

तुम्हारे पत्रोंका पूर्ण उत्तर[1] डाकसे भेज दिया है। उसमें मैंने जो सलाह दी है वह पण्डित पन्तके प्रस्तावपर ध्यान दिये बिना। इस बातको दृष्टिमें रखते हुए कि [कांग्रेसमें] दो सर्वथा परस्पर-विरोधी विचारधाराएँ चल रही हैं, तुम्हें तुरन्त अपनी पसन्दकी कार्य-समिति बना लेनी चाहिए, जो तुम्हारी नीतिका पूर्ण प्रतिनिधित्व करती हो। तुम्हें अपनी नीति और कार्यक्रम तैयार करके प्रकाशित कर देने चाहिए और अ० भा० कां० क० के आगे रखने चाहिए। यदि तुम्हें बहुमत प्राप्त हो जाता है तो तुम्हें अपनी नीति बिना किसी बाधाके अमलमें लाने की सुविधा मिलनी चाहिए। यदि बहुमत प्राप्त न हो, तो तुम्हें त्यागपत्र दे देना चाहिए और अ० भा० कां० क० को नया अध्यक्ष चुनने के लिए आमन्त्रित करना चाहिए। ईमानदारी और सद्भावना हो तो मुझे गृह-कलहकी कोई आशंका नहीं है। स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१. देखिए पिछला शीर्षक।

११८. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

नई दिल्ली
२ अप्रैल, १९३९

प्रिय गुरुदेव,

आपका स्नेह-सिक्त पत्र[1] मिला। जो समस्या आपने मेरे सम्मुख रखी है, वह कठिन है। मैंने कुछ सुझाव[2] सुभाषके सामने रखे हैं। इस विकट स्थितिसे उबरने का मुझे और कोई रास्ता नजर नहीं आता।

मुझे उम्मीद है कि आप बिलकुल स्वस्थ होंगे।

चार्ली अभी अस्पतालमें ही हैं।

स्नेह।

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६५०) से

११९. पत्र : अकबर हैदरीको

नई दिल्ली
२ अप्रैल, १९३९

प्रिय सर अकबर,

आशा है, मेरा पत्र आपको[3] मिल गया होगा। आर्यसमाजके नेताओंसे उनके सत्याग्रहके बारेमें मेरी बातचीत चल रही है।[4] उनकी माँग मुझे इतनी छोटी मालूम होती है कि उनके लिए आसानीसे गुंजाइश की जा सकनी चाहिए। क्या यह सम्भव नहीं है?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८४३) से

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुरके २९-३-१९३९ के पत्रमें लिखा था: "पिछले कांग्रेस-अधिवेशनमें कुछ लोगोंके दुराग्रहसे बंगालको गहरी क्षति पहुँची है। कृपया शीघ्र ही अपनी उदारतासे इस घावपर मरहम रखें और इस स्थितिको जारी न रहने दें।"

२. देखिए पिछले दो शीर्षक।

३. देखिए पृ० १०२।

४. देखिए पृ० ७०-१।

१२०. पत्र : अमृतकौरको

नई दिल्ली
२ अप्रैल, १९३९

प्यार भेजने के सिवा और कुछ लिखने के लिए समय नहीं है। सुभाषसे पत्र-व्यवहारकी नकलें अलबत्ता इसके साथ हैं।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९०६)से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७२१५ से भी

१२१. पुर्जा : लेडी रज़ा अलीको[1]

२ अप्रैल, १९३९

सत्यसे भिन्न और कोई ईश्वर नहीं है।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७५०) से

१२२. पत्र : शारदाबहन गो० चोखावालाको

२ अप्रैल, १९३९

चि० बबुड़ी,

तू पत्र नहीं लिखती, यह ठीक नहीं है। मैं तो मजेमें हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००१०) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

१. जी० एन० रजिस्टरके अनुसार। रज़ा अली १९३५ से १९३८ तक दक्षिण आफ्रिकामें भारत सरकारके एजेंट थे।

१२३. पुरुषोत्तम के० जेराजाणीको

नई दिल्ली
२ अप्रैल, १९३९

भाई काकुभाई,

आप माटुंगामें हो रही खादी प्रदर्शनीके लिए सन्देश चाहते हैं।[1] मैं क्या सन्देश दूं? मैं तो खादीका दीवाना हूँ और जीवनके अन्ततक रहूँगा। मैं चाहता हूँ कि हर कोई मेरी तरह ही खादीका दीवाना हो जाये। विश्वास कीजिए, जिस दिन करोड़ों लोगोंमें खादीके लिए यह दीवानगी पैदा हो जायेगी, उस दिन स्वराज्य हमारे दरवाजेपर होगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०८४१) से; सौजन्य: पुरुषोत्तम के० जेराजाणी

१२४. देशी राज्य

देशी राज्योंमें सविनय अवज्ञा स्थगित करने का देशी राज्योके निवासी पूरा लाभ उठाना चाहें, तो इसके लिए उन्हें उसे स्थगित करने का मर्म भली-भाँति समझ लेना जरूरी है। सविनय अवज्ञा स्थगित करने का एक परिणाम, जो बिलकुल अप्रत्याशित नहीं है, यह हुआ मालूम पड़ता है कि कुछ राज्योने अपना रुख और भी कठोर कर लिया है और वे ऐसे दमनका सहारा ले रहे है जिसके स्थगनसे पहले शायद उन्होंने कल्पना नही की थी। जहाँ-कहीं ऐसा हो, वहाँ हिम्मत हारने की कोई वजह नही है। क्योंकि दमनसे सत्याग्रहकी तालीमका वैसा ही अवसर मिलता है, जैसे न चाहते हुए भी युद्ध हो जाये, तो सैनिकोंको सैनिक तालीमका अवसर मिल जाता है। सत्याग्रहियोंको तो इस बातका पता लगाना चाहिए कि आखिर दमनकी वजह क्या है। ऐसा करने पर उन्हें पता लगेगा कि दमन उन्हींपर होता है, जो ताकतके जरा से भी प्रदर्शनपर आसानीसे डर जाते हैं और कष्ट-सहन और बलिदानके लिए तैयार नही होते। ऐसी हालतमें यह वह मौका है जिसमें वे सत्याग्रहके प्राथमिक पाठको सीख सकते हैं। जो लोग इस

१. ६-४-१९३९ के बॉम्बे क्रॉनिकलमें इस टिप्पणीके साथ गांधीजी का सन्देश दिया गया था: "आज प्रातः आठ बजे श्रीमती गोसीबहन कैप्टेन खादी विक्रय भण्डारके तत्त्वाधानमें माटुंगाके नप्पू हॉलमें तिरुपुर अकाल सहायता खादी प्रदर्शनीका उद्घाटन करेंगे। प्रदर्शनी १६ अप्रैलतक खुली रहेगी।"

अमोघ शक्तिके बारेमें कुछ भी जानते हैं उन्हें अपने आस-पासवालोंको यह सिखला देना चाहिए कि दमनको वे कमजोरी और बेबसीके तौरपर नहीं बल्कि जानबूझकर और बहादुरीके साथ बरदाश्त करें। उदाहरणके लिए, मान लीजिए कि कोई राज्य किसी संस्थाको गैरकानूनी करार दे देता है। इस स्थितिमें उसके सदस्य उस हुक्मको या तो सजाके भयसे मानेंगे या जान-बूझकर इस खयालसे कि अभी वे सविनय अवज्ञा नहीं करना चाहते। अगर दूसरी सूरतमें वे ऐसा करें, तो वे अपनी शक्तिका संगठन करके अहिंसात्मक प्रतिरोध करने की अपनी इच्छाको बढ़ाते हैं। व्यक्तिगत रूपसे उस संस्थाके सदस्य उस हालतमें भी उन कामोंको तो करते ही रहेंगे जो अपने-आपमें शायद गैरकानूनी नहीं समझे जायें। साथ ही, अपनी संस्थाके कानूनी रूपमें स्वीकृत कर लिये जाने के लिए भी वे वैध आन्दोलन जारी रखेंगे, और अगर स्थानीय कानूनोंके दायरेमें ही काम करते हुए भी कार्यकर्त्ता गिरफ्तार कर लिये जायें, तो वे इस कष्टको खुशीसे बरदाश्त करेंगे। और ऐसा करते हुए वे अपने भीतर झाँककर इस बातका पता लगायेंगे कि उनके मनमें अपने उत्पीड़कोंके प्रति कोई दुर्भावना या क्रोध तो नहीं है; वे अपने-आपसे यह भी पूछेंगे कि उन्हें अपने सच्चे सहायक तथा प्रस्तुत कठिनाइयोंमें अपने सच्चे मार्ग-दर्शकके रूपमें ईश्वरकी उपस्थितिका अनुभव होता है या नहीं। यह तालीम अगर ठीक तरहसे और लगातार ली जाये, तो उसे पानेवालोंमें निस्सन्देह शान्त अहिंसात्मक प्रतिरोधकी ऐसी शक्ति आ जायेगी जो स्वयं अजेय होगी, और इसलिए सविनय अवज्ञाके रूपमें फिर कुछ करने की शायद कोई जरूरत ही न रहे।

लगता है, मुझे यह दोष स्वीकार करना ही पड़ेगा कि पहलेके सविनय अवज्ञा-आन्दोलनोंको शुरू करते वक्त मैंने आवश्यकतासे अधिक विश्वास तथा जल्दबाजीसे काम लिया है। देशको उससे कोई नुकसान इसीलिए हुआ मालूम नहीं पड़ता, क्योंकि देशकी नब्जपर हमेशा मेरा हाथ रहा है और ईश्वरको इस बातका धन्यवाद है कि जब-कभी मुझे उसमें कोई खतरा दिखलाई दिया अथवा अपने निर्णय या हिसाबकी भूल मालूम पड़ी तभी अपना कदम पीछे हटा लेने में मैंने कोई आगा-पीछा नहीं किया। फिर भी इस बड़े नुकसानको तो मंजूर करना ही पड़ेगा कि पहलेकी तैयारियोंमें जो ढील रही उसके आदी हो जाने के कारण अब तैयारीके नीरस नियमोंका पालन कड़ाईसे करने में लोगोंको बड़ी दिक्कत महसूस होती है। लेकिन सत्याग्रहकी तालीमके लिए वे हैं तो बहुत जरूरी। तीव्र और सक्रिय अहिंसा तभी प्राप्त की जा सकती है जब पहले उसका उम्मीदवार उन आवश्यक मंजिलोंको पार कर ले जो धीरे-धीरे मेहनत करते रहने से ही पार की जा सकती है। लेकिन अगर मैं यह बतला सका हूँ कि दमनको ठीक तरह देखना सीख लें तो उससे सत्याग्रहीके अन्दर प्रतिरोधकी भावना स्वभावतः अपने-आप पैदा हो जाती है, तो शायद उस ज्ञानसे, ऊपरसे बेमजा दिखनेवाले रचनात्मक प्रयत्न और प्रतीक्षामें भी लोगोंको आनन्द आने लगेगा। इन चीजोंका नीरस लगना वस्तुतः यही साबित करता है कि सत्याग्रहके महत्त्व और अहिंसाकी क्षमता और सौन्दर्यको पूरी तरह नहीं समझा गया है। दूसरे शब्दोंमें यों

कहा जा सकता है कि सत्याग्रहकी भावना गहरी नहीं गई है और जो लोग इस मार्गपर चलना चाहते हैं उनके दिलोंमें हिंसा अभी भी मौजूद है, फिर चाहे वह अनजाने ही क्यों न हो।

इसलिए मैं उम्मीद करता हूँ कि जहाँ-कहीं दमन हो वहाँ पीड़ित लोग उससे निराश न होकर रचनात्मक प्रयत्नको और तेजीसे बढ़ायेंगे। जहाँतक सम्भव हो, सत्ताधिकारियोंको हमें इस बातका विश्वास करा देना चाहिए कि हमारा इरादा पूर्णतः अहिंसात्मक है। उन्हें ऐसा विश्वास हो जाये तो मानो हमने आधी लड़ाई जीत ली। लेकिन उन्हें ऐसा विश्वास कराने के लिए जिस तरह हमारे कार्य असन्दिग्ध रूपसे अहिंसात्मक हो उसी तरह हमारे भाषणों और लेखोंमें भी काफी संयम रहना आवश्यक है।

नई दिल्ली, ३ अप्रैल, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-४-१९३९

१२५. तार : उ० न० ढेबरको

नई दिल्ली
३ अप्रैल, १९३९

उछरंगभाई ढेबर, वकील
राजकोट

हमारी बात पूरी तरह सही सिद्ध हुई।[1]

बापू

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ४-४-१९३९। सी० डब्ल्यू० १०१६७ से भी; सौजन्य : द० बा० कालेलकर

१. सर मॉरिस ग्वायरने सरदार पटेल और राजकोटके ठाकुर धर्मेन्द्रसिंहके बीच हुए २६ दिसम्बर, १९३८ के "समझौते" की शर्तोंकी व्याख्याके बारेमें सरदारके पक्षमें निर्णय दिया था। सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड २, पृ० ३५६-७ में नरहरि द्वा० परीख लिखते हैं: "वीरावालाने स्वयं पैरवी की थी। सरदार पटेलने संक्षेपमें २६ दिसम्बरको हुए समझौतेका ब्योरा देते हुए अपनी बात कही। दोनों पक्षोंके वक्तव्य पढ़कर और बहस सुनकर सर मॉरिस ग्वायरने ३ अप्रैलको फैसला दिया। निर्णयके कुछ उद्धरण यहाँ दिये जा रहे हैं, जिनसे यह स्पष्ट है कि सरदारका पक्ष कितना सही सिद्ध हुआ: '. . .मेरी रायमें हर दस्तावेजका सच्चा अर्थ यह है कि ठाकुर साहब श्री वल्लभभाई पटेल द्वारा सुझाये गये लोगोंको नियुक्त करनेका वचन देते हैं और वे अपने पास ऐसा कोई अधिकार नहीं

१२६. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

बिड़ला भवन
३ अप्रैल, १९३९

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

मुझे ऐसा पता चला है कि विलम्बित पंचनिर्णय[1] आज राजनीतिक विभागको भेजा जायेगा। क्या मुझे उसकी प्रति आज मिल जायेगी? और इसके बाद क्या करना है, यह तय करने के लिए क्या आप भेंटका कोई समय सूचित करने की कृपा करेंगे?[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे : लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

रख रहे हैं कि जो उन्हें नापसन्द हों उनके नाम अस्वीकार कर दें।...' निर्णयमें आगे कहा गया था कि 'सुझाना' शब्दके आधारपर ही कोई ऐसी दलील खड़ी नहीं कर सकता।...और मुख्य न्यायाधीशकी रायमें, अधिसूचनामें जो यह बात कही गई कि श्री वल्लभभाई पटेल समितिके सदस्योंके नाम सुझायेंगे उसका उद्देश्य यह अर्थ संप्रेषित करना था कि उनके द्वारा सुझाये गये नामोंको ठाकुर साहब स्वीकार कर लेंगे।"

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. इसी तारीखको जवाब देते हुए वाइसरायने लिखा: "आपका आजका पत्र अभी मिला, बहुत-बहुत धन्यवाद। मैं आपका अनुरोध राजनीतिक विभागको तत्काल भेज रहा हूँ। मुख्य न्यायाधीशके कार्यक्रमकी या वे जैसी व्यवस्था करने का विचार कर रहे हैं उसकी जितनी थोड़ी जानकारी आपको है उतनी ही मुझे भी है। लेकिन आप जब भी चाहें मुझे आपसे मिलकर प्रसन्नता होगी। लेकिन मैं कहना चाहूँगा कि आपको शायद यह ज्यादा ठीक लगे कि—पंचनिर्णय चाहे जैसा भी हो—उसकी धाराओंको ध्यानमें रखकर परिस्थितिपर और भी विचार करने के बाद ही हम कोई निश्चित व्यवस्था करें।"

१२७. पत्र : गोपीनाथ बारदोलईको

नई दिल्ली
३ अप्रैल, १९३९

प्रिय बारदोलई,[1]

आप एक बृहत्, सम्भवतः असमके लिए बृहत्तम, प्रयोग[2] शुरू कर रहे हैं। इस प्रयोगकी सफलताके लिए मैं ईश्वरसे प्रार्थना कर रहा हूँ। यदि असम सचमुच अफीमकी लतसे छूट जाये तो बेशक लोगोंका कायाकल्प हो जायेगा। परन्तु वैसा हो, इसके लिए आपको [अफीम-] निषेधके साथ बहुत रचनात्मक श्रम करना होगा। आपको कुशल डॉक्टरी सहायताकी जरूरत पड़ेगी, ताकि अफीमका कोई ऐसा विकल्प ढूँढ़ा जाये जो उसकी तलबको मिटा सके और अफीम सेवन करनेवालोंके टूटे शरीर फिरसे स्वस्थ किये जा सकें। ईश्वर आपको इसके लिए आवश्यक शक्ति और प्रज्ञा प्रदान करे।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल। स्टेट्समैन, २४-४-१९३९ से भी

१२८. तार : बी० जी० खेरको

नई दिल्ली
४ अप्रैल, १९३९

खेर
मुख्य-मन्त्री
बम्बई

आपका साक्षरता-अभियान पूरी तरह सफल होगा ऐसी आशा है। इस शुभकामना में सरदार भी शामिल है।

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल। हिन्दू, ५-४-१९३९ से भी

१. असमके मुख्य-मन्त्री

२. असम सरकारने अफीम-निषेध आन्दोलन १५ अप्रैलको शिबसागर और डिब्रूगढ़में आरम्भ किया था।

१२९. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

नई दिल्ली
४ अप्रैल, १९३९

राष्ट्रपति सुभाष बोस
जीलगोड़ा

समाचारपत्रोंके संवाददाता हमारे पत्र-व्यवहारके बारेमें तरह-तरहके सवाल पूछते हैं। उन सबसे मैंने ये सवाल तुमसे पूछने के लिए कह दिया है। साथियों और साथी कार्यकर्त्ताओंको छोड़कर और किसीको मैंने कुछ नहीं बताया है।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१३०. तार : अमृतकौरको

नई दिल्ली
४ अप्रैल, १९३९

राजकुमारी अमृतकौर
जालन्धर सिटी

ईश्वरकी कृपासे एक चरण पूरा हो गया। आशा है तुम पहलेसे अच्छी होगी। स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९०७)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२१६ से भी

१३१. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

नई दिल्ली
४ अप्रैल, १९३९

बम्बईमें शराबबन्दीके खिलाफ विरोध जाहिर करने के लिए वहाँ पारसियोंकी जो भारी सभा हुई थी, उसकी लम्बी रिपोर्ट मैंने पढ़ी है। मैं देखता हूँ कि सभामें पारसी महिलाओंने भी भाग लिया था। कुछ पारसी मित्रोंके पत्र भी मुझे मिले हैं, जिनमें मुझसे अपील की गई है कि चूँकि मैंने कांग्रेसके कार्यक्रममें शराबबन्दीको एक मुख्य मुद्दा बनाया है, इसलिए मुझे ही बम्बईके मन्त्रिमण्डलसे शराबबन्दीकी नीति अमलमें लाने से रोकने को कहना चाहिए।

यह स्पष्ट नही होता कि उनकी आपत्ति शराबबन्दीके खिलाफ है, या जो नये कर लगाये जानेवाले हैं उनके खिलाफ। मेरे और पारसी कौमके बीच कितना मीठा सम्बन्ध चला आ रहा है, इसको सारा हिन्दुस्तान जानता है। संसारकी यह सबसे बड़ी परोपकारिणी जाति शराबबन्दीके विशुद्ध परोपकारमूलक कार्यके खिलाफ चलाये जा रहे आन्दोलनके साथ सहयोग कर रही है — यह विचार मुझे मर्मान्तिक वेदना पहुँचाता है, और यह चीज तो मेरी वेदनाको और भी तीव्र बना देती है कि पारसी बहनें भी इस आन्दोलनमें शामिल हैं। मैं देखता हूँ कि सभामें अशोभनीय धमकियाँ भी दी गईं; और अल्पसंख्यक सम्प्रदायोंके हकोंका मुद्दा भी उठाया गया। मैं यही आशा रखता हूँ कि इस सभामें जो जोश जाहिर किया गया उसका कारण क्षणिक रोष था, और पारसी कौमके हृदयमें बसनेवाली परोपकारकी भावना अन्तमें जरूर अपना काम करेगी। मैं तो यहाँतक कहता हूँ कि शराबबन्दीसे पारसियोंको सबसे पहले फायदा पहुँचेगा। यह कहना गलत है कि मद्यपानके रिवाजसे पारसियोंका कोई नुकसान नही हुआ है, या नही हो रहा है। इस धन्धेसे छूटकर शराब बेचनेवाले पारसी जीविकोपार्जनके लिए किसी दूसरे रोजगारकी ओर झुकेंगे, इससे भी पारसी कौमका भला ही होगा।

आपत्ति उठानेवाले पारसियोंको मैं इस बातकी याद दिलाऊँगा कि शराबबन्दीके मातहत नीरापर कोई प्रतिबन्ध नही लगाया गया है। इसलिए किसी भी पारसी भाईको नीरासे वंचित नही होना पड़ेगा और यह मैं स्वीकार करता हूँ कि दूसरे मीठे रसोकी अपेक्षा नीरामें जो बहुत जल्दी खटास आकर मादकता शुरू हो जाती है इसे रोकने का उपाय अगर ढूँढ़ा जा सके, तो नीराका पान ईखके रसके समान ही आरोग्यदायक और शायद उससे भी सस्ता हो सकता है।

१. यह "प्रोहिबिशन एंड पारसीज" (नशाबन्दी और पारसी) शीर्षकसे छपा था। वक्तव्य हिन्दुस्तान टाइम्सके ५-४-१९३९ के अंकमें भी प्रकाशित हुआ था।

विरोध जाहिर करनेवालों ने यह भी आवाज उठाई थी कि शराबबन्दीसे धर्म-पर हमला हो रहा है। इसमें वे सत्यसे अलग जा पड़े हैं। पूरी सावधानीसे बनाये गये शराबबन्दी-सम्बन्धी नियमोंको मैंने पढ़ लिया है, जिनमें सच्ची धार्मिक क्रियाओंसे सम्बन्ध रखनेवाले आवश्यक उपयोगके लिए परवानगी देने की व्यवस्था रखी गई है। उसके डॉक्टरी उपयोगके लिए भी व्यवस्था है। और करकी दृष्टिसे देखा जाये तो मैं इतना ही कहूँगा कि लाखों अज्ञान प्रजाजनोंका कल्याण करनेवाले मद्यनिषेध-जैसे महान् आन्दोलनके हकमें अगर कर देना पड़े, तो इतनी बड़ी उदार कौमको उसके विरुद्ध आवाज उठाना शोभा नहीं देता। इसलिए मुझे आशा है कि पारसी कौमकी मनोरचनामें पर्याप्त मात्रामें सन्निहित उदात्त तत्त्व अपना बल प्रकट करेगा और शरीर तथा आत्मा दोनोंका नाश करनेवाले इस अभिशापसे लाखों मजदूरोंको मुक्ति दिलाने की सम्भावनावाले इस भव्य आन्दोलनमें अपना योगदान देगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-४-१९३९

१३२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

नई दिल्ली
४ अप्रैल, १९३९

श्री फिलिपोजको — जो त्रावणकोरमें हो रही घटनाओंकी जानकारी देते रहने के खयालसे आजकल विशेष रूपसे मेरे साथ हैं — त्रावणकोर राज्य-कांग्रेसके अध्यक्षका आँखें खोलनेवाला एक तार प्राप्त हुआ है। ऐसा मालूम होता है कि जिन नेताओंको ऐसा सोचकर गिरफ्तार और कैद किया गया था कि उनका इरादा सविनय अवज्ञा करने का है उन्हें रिहा कर दिया गया है; किन्तु एक या दूसरे बहानेसे अन्य लोगोंकी गिरफ्तारियाँ जारी हैं। ये लोग जाने-माने सक्रिय कार्यकर्त्ता हैं। ज्यादा बुरी बात यह है कि समाचारोंके अनुसार, विशेष पुलिस, जिसे अपने कामकी कोई तालीम भी नहीं दी गई है और जो पुलिसकी वर्दी भी नहीं पहनती, गुंडों-जैसा व्यवहार कर रही है। पुलिसके ये आदमी ढोल बजाकर और गड़बड़ी मचाकर सभाएँ भंग कर देते हैं। वे रचनात्मक काम करनेवाले कार्यकर्त्ताओंको तंग करते हैं। उदाहरणके लिए, ३१ मार्चको क्विलोनमें उन्होंने ११ कार्यकर्त्ताओंके एक दलको, जिसका नेतृत्व एक प्रसिद्ध वकील श्री वर्गीज कर रहे थे, बुरी तरह मारा-पीटा और उनका रुपया-पैसा भी छीन लिया। उनमें से कई लोग गम्भीर रूपसे आहत हुए हैं और बिस्तरपर पड़े हुए हैं।

यदि मुझे दी गई जानकारी सही है तो कहना होगा कि अधिकारियोंका व्यवहार अत्यन्त आक्षेप-योग्य है। मैं तो यही आशा कर सकता हूँ कि दमनकी ये

१. यह "रिप्रेशन इन त्रावणकोर" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। वक्तव्य ५-४-१९३९ के हिन्दूमें भी छपा था।

कार्रवाइयाँ अपने-आप समाप्त हो जायेंगी—किसी और कारणसे नहीं तो केवल इसलिए कि जनता अपनी ओरसे किसी प्रकारका प्रतीकार नहीं कर रही है। कार्यकर्त्ताओंको समझ लेना चाहिए कि यद्यपि आन्दोलन स्थगित कर दिया गया है तथापि सत्याग्रहका एक फल तो उन्हें मिल ही रहा है। उन्होंने कोई अपराध नहीं किया है, फिर भी उन्हें कष्ट सहने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है। और यदि वे अपने मनमें किसी भी प्रकारका द्वेष या क्रोध रखे बिना इस कष्टको सह लेते हैं तो वे देखेंगे कि वे पहलेकी अपेक्षा अपने लक्ष्यके ज्यादा पास पहुँच गये हैं। कमसे-कम मुझे आन्दोलनको स्थगित करने की आवश्यकताके विषयमें अपनी राय[1] बदलने का तो कोई कारण नहीं दिखता। उलटे, इस विचारहीन दमनसे आन्दोलनको स्थगित करने का औचित्य ही सिद्ध होता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-४-१९३९

१३३. तार: सुभाषचन्द्र बोसको

नई दिल्ली
५ अप्रैल, १९३९

राष्ट्रपति सुभाष बोस
जीलगोड़ा

तार[2] मिला। यहाँसे कोई तारीख नहीं दी गई। तुम्हारे तारकी[3] स्वीकृति नहीं सूचित की गई इसके लिए क्षमा करना। आज मालूम हुआ कि गांधी सेवा संघकी बैठक प्लेगके कारण स्थगित कर दी गई है[4] तुम्हारे लिए जो तारीख सुविधाजनक हो, नियत कर लो। प्रकाशनका मामला पूर्णतः तुमपर छोड़ देता हूँ। स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१. देखिए पृ० ८७-९।

२. ५ अप्रैलके अपने इस तारमें सुभाष बोसने लिखा था: "... मेरा विचार है कि प्रकाशन ... हमारी पारस्परिक सहमतिसे ही किया जाये। नई दिल्लीके समाचारपत्रोंसे पता चलता है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक २८को है, पर आपकी ओरसे कोई जवाब नहीं मिला।"

३. देखिए पृ० १०९, पा० टि० १।

४. संघकी बैठक वृन्दावन (बिहार) में ३ से ७ मई तक हुई थी।

१३४. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

नई दिल्ली
५ अप्रैल, १९३९

राष्ट्रपति सुभाष बोस
जीलगोड़ा

समाचारपत्रोंको सत्य छिपाने की तरकीब आती है। वे नाम और स्थान गढ़ लेते हैं। दूसरी बातोंकी भी कल्पना कर लेते हैं। मालूम नहीं 'पत्रिका' कार्यालयको क्या हुआ है। विश्वास दिलाता हूँ कि जहाँतक मैं जानता हूँ, [उक्त] खबरके[1] लिए यहाँ कोई जिम्मेदार नहीं है। मुझे बताओ कि मैं क्या करूँ। स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१३५. पत्र : आर० के० झा को

नई दिल्ली
५ अप्रैल, १९३९

भाई झा,

तुम्हारा पत्र मिला। तारका जवाब नहीं दे सका। मैं चाहता हूँ कि फिलहाल राजनादगाँव और छुईखदान, दोनों स्थानोंपर सत्याग्रह स्थगित कर दिया जाये। [इस विषयपर] मैं 'हरिजन' में लिख रहा हूँ।[2] उसे ध्यानसे पढ़ना चाहिए और लोगोंको ठीक तालीम दी जानी चाहिए।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, १२-४-१९३९

१. इसी तारीखके अपने तारमें सुभाष बोसने कहा था कि एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके अनुसार, यूनाइटेड प्रेस हमारे पत्र-व्यवहारके बारेमें भविष्यवाणियाँ कर रहा है। उन्होंने यह भी कहा था कि अमृतबाजार पत्रिका और लीडरकी रिपोर्टोंमें इस बातके "स्पष्ट संकेत" मिलते हैं कि समाचारोंका सुराग दिल्लीसे लगता है। देखिए पृ० ११७ भी।

२. देखिए "देशी राज्य", पृ० ११३-५।

१३६. पत्र : मुल्कराजको

बिड़ला भवन, नई दिल्ली
५ अप्रैल, १९३९

प्रिय मुल्कराज,

आपका पिछली २६ तारीखका पत्र मिला।

जलियाँवाला बाग स्मारक कोषका जो रुपया सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया और पंजाब नेशनल बैंकके सावधिक जमा खातेमें है, उसका दुबारा विनियोग करने के बारेमें मेरी राय यह है कि वह रुपया क्रमशः सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया और बैंक ऑफ इंडियामें आधा-आधा जमा करा दिया जाये। पंजाब नेशनल बैंकमें जमा रुपया निकलवा लेना चाहिए।[1]

सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया और पंजाब नेशनल बैंक द्वारा दी जानेवाली ब्याजकी दरें भी मुझे लिख भेजें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१३७. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

५ अप्रैल, १९३९

चि० मुन्नालाल,

न तुम्हारा पत्र आया, न कंचनका। यह क्या बात है? तुम दोनोंके पत्रकी आशा तो करूँ न? मेरे बारेमें तो अभी सब अधरमें लटका हुआ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५६२)से। सी० डब्ल्यू० ७०४७ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल जी० शाह

१. जलियाँवाला बाग स्मारक कोषके मन्त्री श्री मुल्कराजने गांधीजी को सूचना दी थी कि पंजाब नेशनल बैंकमें पड़े रुपयेपर ब्याज नहीं मिल रहा है।

१३८. पत्र : बलवन्तसिंहको

नई दिल्ली
५ अप्रैल, १९३९

चि० बलवंतसिंह,

आज कल मैं तो खत लिखता नही हूँ ना? गो० से० संघमें अवश्य आना। आज पता चला है कि संघ मरकीके कारण मुल्त्वी रहा है। तारीख बादमें बताई जायेगी।

शब्द-कोषके बारेमें समजा हूँ। ऐसी बातोंसे दु:ख नहीं मानना। सच है कि शंकरनको अलग कोष देने से मैं टाल रहा था। लेकिन जिस चीजकी जरूरत महसुस हो वह तो लेना ही चाहीये। अभ्यास खूब कर लो। उर्दू भी सीख लेना अच्छा ही है। और शरीर तो अच्छा बनाना ही है। मैं कब पिहोचुंगा उसका पता ही नहीं है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९२०) से

१३९. पत्र : रेहाना तैयबजीको

नई दिल्ली
५ अप्रैल, १९३९

प्यारी बेटी,

तेरा खत मिला। मेरे ख्वाब में भी नहीं था कि इतनी बात होने के बाद मुझे कुछ भी करना या कहना बाकी था। तेरे ही शब्द यही लिखता हूँ। हां रेहाना मैं मानता हूं कि अम्माजान और तुम लोग फरेबी नहीं और यह मैं दिलसे लिखता हूं। मैंने कभी माना नहीं है कि तुम लोग कभी फ़रेबी हो सकते हैं। सरोज तेरे साथ है क्या?

अम्माजान अच्छी है सुनकर आनन्द आता है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६७५) से

१४०. सन्देश : राष्ट्रीय सप्ताहके लिए

नई दिल्ली
[६ अप्रैल, १९३९ या उसके पूर्व]

राष्ट्रीय सप्ताह मनाने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि प्रत्येक व्यक्ति ज्यादासे-ज्यादा खादी तैयार करे या खरीदे और इस प्रकार लाखों जरूरतमंद और अकाल-पीड़ित आदमियोंकी, चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान, सहायता करे। यह याद रखिए कि शुद्ध खादी अखिल भारतीय चरखा संघ द्वारा प्रमाणित खादी-भण्डारोंमें ही मिलती है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ६-४-१९३९

१४१. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

नई दिल्ली
६ अप्रैल, १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

हालात जो मोड़ ले रहे हैं[1] उसपर भला कौन दुःखी नहीं होगा? पर हमें आशा रखनी चाहिए कि बादल जल्दी ही छँट जायेंगे।

राजकोट पंच-फैसला[2] लक्ष्यकी दिशामें केवल एक कदम है। अगले कदमपर मुझे अभी भी निगाह रखने की जरूरत है। फिर भी आज मैंने डॉ० खान साहबको फोन किया था। उन्होंने वादा किया है कि यदि उन्हें मेरी जरूरत हुई तो फोन करेंगे और मुझे बतायेंगे। वहाँ हमले आम हो गये हैं, जिससे मैं बहुत उद्विग्न था। आज मुझे वाइसरायसे मिलना है। कमेटीके सिलसिलेमें मुझे राजकोट जाना पड़ सकता है।

१. नेहरूने १ अप्रैलके अपने पत्रमें २९ मार्चको लखनऊमें बारादरी हॉलपर हुए दंगेका उल्लेख किया था और यह राय व्यक्त की थी कि साम्प्रदायिक दंगे राजनीतिक होते जा रहे हैं, और उनके कारण बहुत ही सतही होते हैं तथा उनमें आवेश और आवेग नहीं होता। उनके विचारसे मुस्लिम लीगके स्थानीय नेता उनके लिए जिम्मेदार थे।

२. देखिए पृ० ११५-६, पा० टि० १।

इन्दुको प्यार। मैं समझता हूँ कि कृष्णा[1] भी जा रही है। इसका मतलब है कि तुम १५ को बम्बईमें होगे।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

तुमने वहाँके तनावके[2] बारेमें जो-कुछ कहा है वह मैंने लक्ष्य किया है।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३९; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१४२. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

नई दिल्ली
७ अप्रैल, १९३९

राष्ट्रपति सुभाषचन्द्र बोस
जीलगोड़ा

तुम्हारा टेलिफोन सन्देश मिला। राजकोटके कार्यसे मैं आज रात राजकोट जा रहा हूँ। स्थगित नहीं कर सकता, अन्यथा तात्कालिक कर्त्तव्यकी अवहेलना होगी। जैसे ही राजकोटसे छुट्टी पाऊँगा तुम्हारी सेवामें हाजिर हो जाऊँगा। इस दौरान मेरा अनुरोध है कि तुम मेरी सलाह मान लो। अपनी समिति बनाओ और अपना कार्यक्रम प्रकाशित कर दो। राजकोट रविवार सुबह पहुँच रहा हूँ। स्नेह।[3]

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१. जवाहरलाल नेहरूकी बहन कृष्णा हठीसिंह
२. तात्पर्य इलाहाबादके दंगेसे है।
३. देखिए अगला शीर्षक भी।

१४३. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

नई दिल्ली
[७ अप्रैल, १९३९][1]

राष्ट्रपति सुभाषचन्द्र बोस
जीलगोड़ा

तुम्हारा तार[2] मिला। मैं लाचार हूँ। मुझे राजकोट अवश्य जाना है। मैं चाहता हूँ कि शरत या किसी और प्रतिनिधिको राजकोट भेजो। वह हवाई जहाजसे यात्रा कर सकता है। दस दिनसे पहले राजकोटसे फुरसत मिलने की आशा मत करो। स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१४४. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

नई दिल्ली
७ अप्रैल, १९३९

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

आपका पत्र[3] मिला; उसके लिए तथा उसमें निहित सुसम्पूर्ण और स्पष्ट आश्वासनके लिए आपको धन्यवाद देना ही होगा। आश्वासनसे लैस होकर मैं आज

१. हिन्दू, १३-५-१९३९ से

२. इसी तारीखके इस तारमें सुभाषचन्द्र बोसने गांधीजी से अनुरोध किया था कि दिल्लीसे राजकोटके लिए रवाना होने से पहले उनसे मुलाकात करने की कोई सूरत निकालें; देखिए पिछला शीर्षक भी।

३. इसी तारीखको लिखा पत्र, जिसमें वाइसरायने कहा था: "हमारी कलकी बातचीतपर मैंने और भी विचार किया और आपकी सहायता करने की पूरी इच्छाके साथ तथा आपके रुखको ठीकसे समझते हुए विचार किया। लेकिन मुझे खेदके साथ कहना पड़ता है कि ध्यानपूर्वक और ईमानदारीसे विचार करने के बाद मुझे साफ लगता है, सरकारी अध्यक्षकी नियुक्तिके विषयमें आपका विचार मैं स्वीकार नहीं कर सकता। और मेरी रायमें इस विषयमें अब इतना ही करना है कि ठाकुर साहब और श्री पटेलके बीच जिस कमेटीके बारेमें करार हुआ था और मुख्य न्यायाधीशके निर्णयके अनुसार जिसका गठन हुआ वह अपना काम शुरू कर दे। लेकिन मैं वह बात फिर दुहराता हूँ जो मैंने आपसे कल कही थी कि ठाकुर साहबके कार्योंके बारेमें इस सब मामलेमें जो जिम्मेदारी मैंने ली है, उसे रेजिडेंट द्वारा मैं पूरी तरहसे पूरा करूँगा और आपको इसके बारेमें कोई सन्देह नहीं होना चाहिए। मेरे विचारमें सारी व्यवस्था राजकोटमें की जानी चाहिए, न कि यहाँ।"

रात इस विश्वासके साथ रवाना हो रहा हूँ कि ठाकुर साहबकी पिछली २६ दिसम्बरकी अधिसूचनापर अमल होने में कोई रुकावट नहीं होगी ।

मेरा जवाब अधूरा रहेगा अगर मैं इस बातपर अपना खेद न व्यक्त करूँ कि आपको मेरा यह सुझाव स्वीकार करना सम्भव प्रतीत नहीं हुआ कि पिछले ६ मार्चको आपने मुझे जो तार दिया था, वह ५ मार्चके तारको रद्द करता है या केवल उसे स्पष्ट तथा परिवर्धित करता है, यह प्रश्न निर्णयके लिए भारतके मुख्य न्यायाधीशको सौंप दिया जाये।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८१८) से; सौजन्य: घ० दा० बिड़ला

१४५. एक पत्र[1]

नई दिल्ली
७ अप्रैल, १९३९

आशा है, आपकी सभा सफल रहेगी। इसमें सन्देह नहीं कि यदि प्रस्तावित विधेयक[2] दक्षिण आफ्रिका संघका कानून बन जाता है तो उसका मतलब ट्रान्सवालके भारतीय समुदायके लिए तिल-तिल कर मरना होगा। हिटलरके बहुत-से कार्योंको इकरारनामोंका भंग बताकर उनकी निन्दा करने का आज फैशन हो गया है। यह प्रस्तावित कानून यदि १९१४ के केप टाउन समझौतेके[3] तथा संघ सरकारकी बादकी घोषणाओंके भंगका प्रयत्न नहीं तो और क्या है?

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

१. यह पत्र शायद नेटाल भारतीय कांग्रेसके अध्यक्ष भवानीदयालको लिखा गया था। द इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९३९, जिल्द १, के अनुसार भवानीदयाल इन्हीं दिनों भारत आये थे और जनता तथा सरकारको दक्षिण आफ्रिकाकी स्थितिसे अवगत कराने के लिए उन्होंने कई स्थानोंमें सभाएँ की थीं।

२. द इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९३९, के अनुसार तात्पर्य एशियाई (ट्रान्सवाल) भूमि तथा व्यापार विधेयकसे है, जिसमें यह अपेक्षित था कि भारतीयोंको अन्य लोगोंके निवास-स्थानोंसे अलग ली गई जमीनोंमें रहने पर सहमत होना पड़ेगा और उन्हें "यूरोपीय हल्कों" में जमीन प्राप्त नहीं करने दी जायेगी तथा उन्हें अपना व्यापार भी गैर-यूरोपीय हल्कोंमें ही चलाना होगा।

३. देखिए खण्ड १२, परिशिष्ट १५।

महादेव देसाई वाइसराय के ७ अप्रैल, १९३९ के पत्र को पढ़ते हुए

१४६. पत्र : अमृतकौरको

७ अप्रैल, १९३९

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं राजकोट जा रहा हूँ। महादेव तुम्हें उसके बारेमें सब कुछ बतायेगा। बेशक, वृन्दावनका[1] अब कोई सवाल नहीं है। तालीमी संघकी बैठक १२, १३, १४ को होगी। मैं उसमें भाग नहीं ले सकता। यदि सम्भव हुआ तो मैं राजकोटसे सुभाषके पास जाने की कोशिश करूँगा। मैं बिलकुल ठीक हूँ।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू ३९०८)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२१७ से भी

१४७. पत्र : मदनमोहन मालवीयको

नई दिल्ली

७ अप्रैल, १९३९

भाई साहब,

आपका खत सुन्दरमके मारफत मिला था। तार भी मिला था। आपके दर्शनके लिये आना मेरे लिये यात्रा है। मैं पूरी कोशिश करूँगा।

बनुके बारेमें प्रयत्न कर रहा हूं। कठिन समस्या है।

आपका,

मो० क० गांधी

पत्रकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०२२९) से। सौजन्य: भारत कला भवन, वाराणसी

१. तात्पर्य गांधी सेवा संघकी बैठकसे है; देखिए "पत्र: बलवन्तसिंहको", पृ० १२४।

१४८. पत्र : दिनेशसिंहको

नई दिल्ली
७ अप्रैल, १९३९

चि० दिनेश,

तुमारा खत मिला था। माताजी ही आ गई। मेरे साथ दो दिन रही। मेरी कोशिश चल रही है। तुमारे निश्चित होकर अभ्यास करना। मुझे लिखा करो।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

माताजीकी तबियत कुछ अच्छी हो रही थी। यहाँसे दवा भी ले गई है।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६७३) से

१४९. क्या मैंने भूल की?

कुछ मित्र मेरे राजकोटके मामलेमें आ फँसने के बारेमें शिकायत कर रहे हैं। नीचे मैं उनकी दलीलोंका सारांश दे रहा हूँ :

और सब बातोंको छोड़कर आपने राजकोटके मसलेपर जो इतना अधिक ध्यान दिया, उससे मालूम होता है कि आपने उचित-अनुचितका विवेक खो दिया है। यह साफ है कि त्रिपुरी जाना आपका फर्ज था। अगर आप वहाँ होते तो स्थिति बिलकुल भिन्न होती। लेकिन आपने तो आमरण उपवास करने का फैसला कर लिया। आपको इस तरह कोई पूर्व-सूचना दिये बिना राष्ट्रके जीवनको अस्तव्यस्त कर डालने का कोई अधिकार नहीं था। आपको किसी राजासे उसका वादा पूरा कराने के लिए अनशन करने की क्या जरूरत थी? राजकोटकी प्रजा सविनय अवज्ञा आन्दोलन कर रही थी। अगर आपने अचानक आन्दोलन बन्द न कर दिया होता, तो वे और ज्यादा मजबूत हो गये होते। यह निश्चित है कि जनतन्त्र आपके तरीकेसे कायम नहीं हो सकता। किसी समय आपने ही वाइसरायों और गवर्नरोंसे और ऐसे ही उन दूसरे अधिकारियोंसे, जिनसे हम रोब खाते थे, दूर रहना सिखाया था, पर अब आप खुद वाइसरायसे मुलाकातके लिए भाग-दौड़ कर रहे हैं, जब कि आपको कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण मामलोंपर ध्यान देना चाहिए। माना यह जाता है कि आप

फेडरेशनके विरोधी हैं, लेकिन आप फेडरल कोर्टके चीफ जस्टिसके अस्तित्वको मान्यता दे रहे हैं और उस समयतक दिल्लीसे रवाना नहीं होना चाहते, जबतक कि फेडरल कोर्टके चीफ जस्टिस अपना फैसला नहीं दे देते। सच है कि महात्माओंके तरीके अजीबो गरीब होते हैं।

किसी जल्दबाज पाठकको यह दलील बहुत जोरदार मालूम पड़ सकती है, लेकिन जो व्यक्ति अधिक गंभीरतासे विचार करता और सत्याग्रहकी कार्य-प्रणालीको समझता है, उसे इस दलीलका थोथापन देखने में जरा भी दिक्कत न पड़नी चाहिए। राजकोटमें मैंने जो-कुछ किया और कर रहा हूँ उसमें कोई नई बात नही है। भौगोलिक दृष्टिसे हिन्दुस्तानके नक्शेपर राजकोट एक जरा-सा स्थान है, लेकिन जिस गड़बड़ीका मुझे वहाँ मुकाबला करना पड़ा, वह एक सार्वदेशिक समस्याका संकेत थी। राजकोटमें मैंने जो-कुछ किया उसका उद्देश्य एक नई बुराईको तुरन्त ही मिटा देना था। मेरी राय है कि मेरी इस कोशिशसे सारे हिन्दुस्तानको फायदा पहुँचा है। मैंने एक चतुर सेनापतिका-सा काम किया है, जो अपनी रक्षा-पंक्तिमें पैदा हुई तनिक-सी भी कमजोरीकी अवहेलना नहीं करता। खेड़ा और चम्पारन इसके दो उदाहरण हैं। वे आन्दोलन जबतक चलते रहे तबतक सारे देशका ध्यान उस ओर लगा रहा और मुझे भी अपना सारा समय और ध्यान उन्हींपर लगाना पड़ा। ऐसी बात तो कभी-कभी ही होती है, जब सभी मोर्चोंपर एक साथ ही जूझना पड़े। हमें युद्धकी तैयारी और एक मामूली झड़पका फर्क जानना चाहिए। त्रिपुरीमें युद्धकी तैयारी हो रही थी और राजकोटमें एक झड़प हो गई थी।

अहिंसाके शस्त्रागारमें अनशन एक अमोघ अस्त्र है। यह बात सही है कि इसका उपयोग कुछ इने-गिने लोग ही कर सकते हैं, किन्तु इसीलिए इसपर कोई आपत्ति नही हो सकती। यह बेवकूफी होगी कि मैं उन प्रतिभाओंका उपयोग न करूँ जो ईश्वरने मुझे दी है, और उपयोग न करने के लिए यह दलील दूँ कि सब लोगोंके पास उनमें से कुछ नहीं है या केवल कुछ ही के पास हैं। मैंने कभी भी यह नही सुना कि जनतन्त्रके ठीक विकासमें किसीके विशेष गुणोका उपयोग घातक होता है। मैं मानता हूँ कि राजकोटके-जैसे अनशनका उपयोग तो उसके विकासमें और अधिक सहायक होता है। अगर देशको पिछले अनशनोंसे लाभ पहुँचा है, तो फिर राजकोटके अनशनकी क्यो निन्दा की जाये? आलोचकोको यह कहने का अधिकार है कि पिछले अनशनोकी भी आलोचना की गई थी। यह बात ठीक भी है। किन्तु मेरा कहना यह है कि देशको हरएक अनशनसे फायदा पहुँचा। हिंसाका पैदा होना ही जनतन्त्रके विकासमें बाधक है। जब मैं जनतासे यह कहता हूँ कि अनशनने कमसे-कम इतना तो किया कि हिंसाको रोका, तो उसपर उसे विश्वास करना चाहिए।

वाइसराय महोदयके पास जाने के बारेमें मुझे तनिक भी लज्जा नही है। मैंने उन्हें सम्राट्के प्रतिनिधिके रूपमें हस्तक्षेप करके सम्राट्के मांडलिकसे वादा पूरा कराने का अपना फर्ज अदा करने के लिए निमंत्रित किया था। मैं वाइसरायके पास एक आवेदनकर्त्ता और उनके कृपाभिलाषीके रूपमें नही गया था और उनसे मध्यस्थता करने

को कहने के बाद यदि मैं भेट करने और विचार-विनिमय करने के उनके निमंत्रणको ठुकरा देता तो यह मेरी अशिष्टता होती। मेरे उपवासकी अवधिमें उन्होंने जैसा सौजन्यपूर्ण व्यवहार किया उसकी सराहना मैं पहले ही कर चुका हूँ। वे चाहते तो उसकी ओर ध्यान न देते और यह निश्चय करने के लिए कुछ समय लेते कि क्या उन्हें हस्तक्षेप करना चाहिए और करना चाहिए तो कब, लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया। उन्होंने देशकी बेचैनीको महसूस किया और मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नही है कि तेजीसे कदम उठाने के लिए राजपूतानेके दौरेको बीचमें ही छोड़ देने में उन्होने सहृदयताका परिचय दिया। वाइसरायसे भेंट करने के कारण मेरे लिए कोई स्पष्टी-करण देना जरूरी नही है। अपने विरोधीके साथ सम्मानपूर्ण समझौते या उसके हृदय-परिवर्तनका अवसर न खोना भी सत्याग्रहका ही एक अंग है। जब लॉर्ड हैलिफैक्स, लॉर्ड अर्विन कहे जाते थे और हिन्दुस्तानके वाइसराय थे, उस मौकेपर जो-कुछ मैंने किया था, लॉर्ड लिनलिथगोके साथ मैंने एक छोटे रूपमें उसकी पुनरावृत्ति ही की है।

अन्तमें, मैं सर मॉरिसको ठाकुर साहबके गत २६ दिसम्बरको सरदार वल्लभ-भाई पटेलके नाम लिखे पत्रका व्याख्याता मानने के सम्बन्धमें कुछ कह देना चाहता हूँ। ठाकुर साहब उसका एक अर्थ लगाते थे और सरदार पटेल दूसरा। वाइसरायने अर्थ लगाने के लिए भारतके चीफ जस्टिस सर मॉरिसका नाम सुझाया। मुझे क्या करना चाहिए था? क्या मुझे यह कहना था कि उन्हें नहीं होना चाहिए, क्योंकि वे एक ऐसी अदालतके चीफ जस्टिस हैं जिसका निर्माण नये गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट द्वारा हुआ है? मेरी औचित्य-बुद्धि इस प्रकारके एतराजके प्रति विद्रोह करती है। एक पत्रके अर्थके निर्णायकके रूपमें सर मॉरिसकी नियुक्ति मानने से, मैं नहीं समझता, फेडरेशन नजदीक आ गया है। अगर उसे जबरदस्ती लादा जाता है, तो ऐसा देशमें बढ़ती हुई हिंसापर अहिंसा द्वारा काबू पाने में हमारी दुर्बलता, कांग्रेसमें अनुशासनकी कमी और गन्दगीकी वृद्धिकी वजहसे होगा। मैं पिछले सालसे बराबर इन कुप्रवृत्तियोंके खिलाफ आवाज उठा रहा हूँ।

पाठकोंको मैं यह भी बता देना चाहता हूँ कि सर मॉरिसने राजकोटके पत्र-व्यवहारका अर्थ चीफ जस्टिस होने के नाते नहीं, वरन् एक प्रतिष्ठित न्यायशास्त्रीके नाते किया है। जो कोई इस फैसलेको पढ़ेगा वह सर मॉरिस द्वारा उठाये गये कष्टको महसूस किये बिना नही रह सकता।

रेलगाड़ीमें राजकोटसे दिल्ली जाते हुए ८ अप्रैल, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-४-१९३९

१५०. तार : धर्मेन्द्रसिंहको[1]

अजमेर स्टेशन
८ अप्रैल, १९३९

महामान्य ठाकुर साहब
राजकोट

फैसलेको कार्यान्वित करने के लिए जो कार्रवाई करनी है उसके सिल-सिलेमें इतवारकी सुबह राजकोट पहुँच रहा हूँ।

गांधी

हरिजन, २२-४-१९३९

१५१. पत्र : द० बा० कालेलकरको

रेलगाड़ीमें
८ अप्रैल, १९३९

चि० काका,

तुम्हारा पत्र मिला। मै राजकोट जा रहा हूँ। क़ब यह किस्सा खत्म होगा, भगवान् जाने। मुझे डर है, बजट-सम्बन्धी कागज-पत्र तुम्हीने फाड़ डाले थे। अब नये बनाकर भेज देना। गाधी सेवा संघका काम तो अब मईके महीनेमें ही होगा। असममें हिन्दी-प्रचारकी व्यवस्था ठीक हो जाये तो बड़ा काम हो। उनकी यह माँग कि शिक्षक उन्हे मुफ्त मिलने चाहिए, हमें स्वीकार कर लेनी चाहिए। इसके लिए पैसा कलकत्तेसे उगाहा जा सकता है। सब प्रान्तोसे हिन्दीके कामका हिसाब माँगो तो अच्छा हो। मिलना मुश्किल होगा। होगा तब तो देंगे। फिर भी प्रयत्न करना। तुम अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखते हो या नही?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९७३) से

१. यह "राजकोट इवेन्ट्स" (राजकोटकी घटनाएँ) से उद्धृत है।

१५२. पत्र : अमृतलाल तो॰ नानावटीको[1]

[८ अप्रैल, १९३९][2]

चि॰ अमृतलाल,

तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा रहता है? कृष्णचन्द्र लिखता है कि राजभूषण हिन्दी तथा कताईमें कोई वहुत प्रगति नहीं कर रहा है। क्या विजयाका कोई पत्र आया?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी॰ एन॰ ७९७३) से

१५३. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

[८ अप्रैल, १९३९][3]

चि॰ ब्रजकिसन,

इतना लंबा खत क्यों? मेरा दोप मैं कवूल कर लेता हूं। यह मेरा स्वभाव-दोष है। जो मेरेसे मांगते हैं जोरोंसे वे ही कुछ पाते हैं। सबको पहचाननेकी मेरी योग्यता नहीं है लेकिन मेरे दोप-स्वीकारसे तुमारा थोडे ही कम होता है? तुमारी अव्यवस्था भयानक है। तुम बेदरकार हरगीज नहीं। तुमारा मोह भी ऐसा ही भयानक है। इसलिये तुमने किसी कामको पूरा नहीं किया है। अभी भी भाईयोंको छोडो, तुमारे पास देनेके पैसे कहां है? घरसे कोडी तक मत लो। जुगतरामजी के लिये भिक्षा मांगो। नौकरी करो उसमें से जो मिले उससे निर्वाह करो तो दूसरे भाई सीखेंगे।

मुझको भूलकर ईश्वरका शरण लेकर पुरुषार्थ करो।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

घडीके समार कामके क्या पैसे लगे?

पत्रकी फोटो-नकल (जी॰ एन॰ २४७४) से

१ और २. यह और इससे पिछला पत्र एक ही पन्नेपर लिखा हुआ है।

३. ब्रजकृष्ण चाँदीवालासे प्राप्त जानकारीके आधारपर अनुमानित।

१५४. क्या करें?

एक प्रिंसिपलने, जो अपना नाम जाहिर नहीं करना चाहते, नीचे लिखा महत्त्वपूर्ण पत्र[1] भेजा है:

किंकर्त्तव्यताकी उलझनमें पड़ा हुआ मैं निम्नलिखित आवश्यक प्रश्नको हल करने के लिए दूसरोंकी बुद्धिसंगत और तर्क-पुष्ट सम्मति चाहता हूँ: शान्ति-प्रतिज्ञा-संघ (पीस प्लेज यूनियन) की, जिसे किसी भी परिस्थितिमें हिंसाका आश्रय लेने से इन्कार करके युद्धका विरोध करने के लिए स्वर्गीय डिक शेपर्डने कायम किया था, प्रतिज्ञाका पालन करना क्या हमारे संसारकी मौजूदा हालतमें ठीक और व्यावहारिक तरीका है?

'हाँ' के पक्षमें नीचे लिखी दलीलें हैं:

(१) संसारके महान् आध्यात्मिक शिक्षकोंने उपदेश किया है और अपने आचरण द्वारा हमें यह शिक्षा दी है कि किसी बुराईका अन्त केवल अच्छे उपायोंसे ही हो सकता है, बुरे उपायोंसे हरगिज नहीं, और किसी भी तरहकी हिंसा . . . निस्सन्देह बुरा उपाय है, फिर उसका उद्देश्य चाहे कुछ भी हो। . . .

(२) वर्तमान हिंसा और कष्टके वास्तविक कारण युद्धसे कभी दूर नहीं हो सकते। . . .

(३) . . . युद्धका अन्त चाहे विजयमें ही क्यों न हो, फिर भी उससे हमारी रही-सही स्वतन्त्रताका . . . भी अन्त हो जाता है . . . क्योंकि आजकल सफलताके साथ कोई युद्ध तबतक नहीं लड़ा जा सकता, जबतक कि सारी जनताको फ़ौजी साँचेमें न ढाला जाये। उस फौजी समाजमें . . . कठपुतली बनकर रहने की अपेक्षा विवेकपूर्वक अहिंसात्मक रूपमें अत्याचारके प्रतिरोध करते हुए मर जाना कहीं बेहतर है।

'नहीं' के पक्षमें नीचे लिखी दलीलें हैं:

(१) अहिंसात्मक प्रतिरोध उन लोगोंके मुकाबलेमें ही कारगर हो सकता है, जिनपर नीति और मानवताके विचारोंका असर पड़ सकता है। फासिज्मके . . . प्रतिरोधको खत्म करने के लिए चाहे जितनी पाशविकतासे काम लेने में कोई पसोपेश नहीं होता। . . .

१. जिसे यहाँ आंशिक रूपसे ही उद्धृत किया जा रहा है।

(२) लोकतन्त्रीय स्वतन्त्रताकी रक्षाके लिए होनेवाले हिंसात्मक प्रतिरोधमें सहयोग देने से इन्कार करना . . . एक तरहसे उन्हीं लोगोंकी मदद करना है जो उस स्वतन्त्रताको नष्ट कर रहे हैं। फासिस्ट आक्रमणको निस्सन्देह इस बातसे बड़ा उत्तेजन मिला है कि प्रजातान्त्रिक देशोंमें बहुत-से ऐसे आदमी हैं जो प्रजातन्त्रकी रक्षाके लिए लड़ना नहीं चाहते और जो युद्ध होने पर भी अपनी सरकारोंका विरोध करेंगे और इस प्रकार युद्ध शुरू होने या किसी तरहकी लाजिमी सैनिक भरती होने पर अपनी सरकारोंकी निन्दा करेंगे (और इस प्रकार उनके कामोंमें रुकावट डालेंगे)। ऐसी हालतमें, रक्षाके हिंसात्मक उपायों के बारेमें नैतिक आधारपर आपत्ति करनेवाला न केवल शान्ति-वृद्धिमें पूरी तरह असफल सिद्ध होता है, बल्कि वस्तुतः जो लोग उसे भंग कर रहे हैं उनकी मदद करता है।

(३) युद्ध व्यक्तिगत स्वतन्त्रताको भले ही नष्ट कर दे, लेकिन अगर प्रजातन्त्र बरकरार रहे तो कमसे-कम उसका कुछ अंश फिरसे प्राप्त करने की कुछ सम्भावना तो रहती है, जब कि फासिस्टोंको अगर संसारका शासन करने दिया जाये तो उसकी बिलकुल कोई गुंजाइश ही नहीं है। . . .

. . . इस प्रश्नका हल होना बहुत जरूरी है। . . . लेकिन दक्षिण आफ्रिका, मिस्र या आस्ट्रेलिया-जैसे देशोंमें, जिन्हें शायद आक्रमण की संभावना का मुकाबला करना पड़े, और हिन्दुस्तानमें भी जिसे 'पूर्ण स्वाधीनता' मिलने पर शायद जापान या मुस्लिम देशोंके गुटके आक्रमण का सामना करना पड़ सकता है, क्या इसका हल उतना ही जरूरी नहीं है?

ऐसी सम्भावनाओं (बल्कि कहना चाहिए कि आसारों)के सामने हरएक तीव्र विवेक-बुद्धि रखनेवाले को (फिर चाहे वह जवान हो या बूढ़ा) क्या इस बातका निश्चय न होना चाहिए कि उसके लिए कौन-सा मार्ग सही और व्यावहारिक है? . . .

शान्तिकी प्रतिज्ञा लेनेवालों के प्रतिरोधके पक्षमें दी गई दलीलोंके बारेमें तो कुछ भी कहने की जरूरत नहीं है। हाँ, इस प्रतिरोधके विरुद्ध जो दलीलें दी गई हैं उनकी सावधानीके साथ छान-बीन करने की जरूरत है। इनमें से पहली दलील अगर सही हो तो वह युद्ध-विरोधी आन्दोलनकी ठेठ जड़पर ही कुठाराघात करती है। आन्दोलनका आधार इस कल्पनापर है कि फासिस्टों और नाजियोंका हृदय पलटना सम्भव है। उसी मानव-जातिमें वे भी पैदा हुए हैं जिसमें तथाकथित प्रजातन्त्रवादियों या कहना चाहिए, खुद युद्ध-विरोधियोंका जन्म हुआ है। अपने कुटुम्बियोंमें वे वैसी ही मृदुता, वैसे ही प्रेम, समझदारी व उदारतासे पेश आते हैं, जैसे युद्ध-विरोधी इस दायरेके बाहर भी पेश आ सकते हैं। अन्तर सिर्फ मात्राका है। फासिस्ट और नाजी तथाकथित प्रजातन्त्रोंके दुष्कृत्योंकी ही उपज हैं — उनके दुष्कृत्योंके जवाब हैं या यदि हम ऐसा न कहना चाहें तो ऐसा कह लें कि वे उनके संशोधित संस्करण हैं। किर्बी

पेजने पिछले युद्धसे हुए संहारपर लिखी हुई अपनी पुस्तिकामें बताया है कि दोनों ही पक्षवाले झूठ, अतिशयोक्ति और क्रूरताके अपराधी थे। वरसाईकी संधि विजयी राष्ट्रों द्वारा जर्मनीसे बदला लेनेके लिए की गई संधि थी। तथाकथित प्रजातन्त्रोंने अबसे पहले दूसरोंकी जमीनको जबरदस्ती अपने कब्जेमें किया है और निर्दय दमनको अपनाया है। ऐसी हालतमें यदि मेसर्स हिटलर एण्ड कम्पनीने, उनके पूर्वगामियोंने तथाकथित पिछड़ी हुई जातियोंका अपने भौतिक लाभके लिए शोषण करनेमें जिस अनगढ़ हिंसाका विकास किया था, उसे वैज्ञानिक रूप दे दिया तो उसमें आश्चर्यकी बात ही क्या है? इसलिए अगर यह मान लिया जाये, जैसा कि माना जाता है, कि ये तथाकथित प्रजातन्त्र अहिंसाका एक हदतक पालन करने से पिघल जाते हैं तो फासिस्टों और नाजियोंके कठोरतर हृदयोंको पिघलाने के लिए कितनी अहिंसाकी जरूरत होगी, यह तो त्रैराशिकसे मालूम किया जा सकता है। इसलिए हमें इस पहली दलीलको, जिसमें तथ्य होता तो उसके बहुत खतरनाक परिणाम निकलते, रद्द कर देना चाहिए।

अन्य दो दलीलें व्यावहारिक हैं। शान्तिवादियोंको ऐसी कोई बात तो न करनी चाहिए जिससे उनकी सरकारोंके कमजोर पड़ने और हारनेकी सम्भावना हो। लेकिन इस भयसे उन्हें यह दिखा देनेके एकमात्र कारगर अवसरको नहीं गँवा देना चाहिए कि सभी तरहके युद्धोंकी व्यर्थतामें उनका अटूट विश्वास है। उनके ऐसा करनेसे यदि उनकी सरकारें क्रुद्ध हो जायें और युद्ध-विरोधियोंको शहीद बनाने लगें, तो उन्हें अपनी करनीके फलस्वरूप होनेवाली अशान्तिके परिणामोंको सहना ही होगा। प्रजातन्त्रोंको चाहिए कि वे व्यक्तिगत रूपसे अहिंसाका पालन करनेकी स्वतन्त्रताका, उससे उन्हें कितनी ही परेशानी क्यों न हो, आदर करें। ऐसे आदरसे ही संसारके लिए आशा-किरणोंका उदय होगा। मतलब यह हुआ कि शान्तिवादियोंको अपने देशके तथाकथित हितोंकी तुलनामें सत्य एवं अपने अंतःकरणके आदेशको अग्रिम स्थान देना चाहिए। क्योंकि अंतःकरणके आदेशका आदर करनेसे — यदि वह सचमुच अंतःकरणका आदेश ही हो — कभी किसी न्याय्य हित अथवा उद्देश्यकी हानि होते नहीं देखी गई। इसलिए निष्कर्ष यह निकला कि जब किसी शान्तिवादीको ऐसा लगे कि तथाकथित प्रजातान्त्रिक देश जीवित रहें या न रहें, किन्तु युद्धोंसे युद्धका अन्त कभी नहीं होगा, उसका अन्त तो तभी होगा जब निर्णायक घड़ीके आ पहुँचने पर शान्तिवादी शान्तिमें अपनी जीवन्त आस्थाका अपने कष्ट-सहन द्वारा — जरूरत हो तो प्राणाहुति द्वारा — प्रमाण पेश करेंगे तब उसे उसका विरोध करना ही चाहिए। सत्याग्रहीके नाते मुझे यह नहीं सोचना है कि मैं अन्तिम बलिदान किस तरह टाल सकता हूँ; मुझे तो इतना ही सोचना है कि जो उद्देश्य मुझे प्राप्त करना है उसे प्राप्त करनेके लिए मैं क्या करूँ। जहाँ आस्थाका विषम किन्तु प्रबल तत्त्व हमारे व्यवहारका अंग हो वहाँ हमारा दुनियवी हिसाब किसी कामका नहीं। सच्चा शान्तिवादी सच्चा सत्याग्रही होता है। और सत्याग्रही तो अपनी आस्थाका अनुसरण करता है; वह परिणामकी चिन्ता नहीं करता। कारण, वह जानता है कि यदि उसका आचरण सच्चा हुआ तो परिणाम फलेगा ही।

और आखिर, यदि तथाकथित प्रजातान्त्रिक देश जीत जाते हैं तो लाभ क्या है? उससे युद्धका अन्त तो होगा नहीं। प्रजातान्त्रिक देश भी विजयके लिए फासिस्टों और नाजियोंकी सारी युक्तियाँ अपनायेंगे। वे भी अनिवार्य सैनिक भरतीका, और अपनी आज्ञाओंका पालन कराने के लिए सभी तरहकी जबरदस्तीका आश्रय लेंगे। विजयके अन्तमें कुल लाभ इतना ही होगा कि वैयक्तिक स्वतन्त्रताकी सापेक्ष सुरक्षाकी संभावना बन जायेगी। किन्तु यह सुरक्षा किसी बाहरी सहायतापर निर्भर नहीं है। वस्तुतः तो वह सारी दुनियाके खिलाफ लड़कर भी उसकी रक्षा करने के आन्तरिक संकल्पसे ही मिलती है। दूसरे शब्दोंमें, सच्चा प्रजातन्त्रवादी तो वही है जो अपनी स्वतन्त्रताकी और इसलिए देशकी स्वतन्त्रताकी तथा अन्तमें सम्पूर्ण मानव-समाजकी स्वतन्त्रताकी रक्षा विशुद्ध अहिंसक साधनोंसे करता है। आगामी परीक्षामें शान्तिवादियोंको प्रतिरक्षात्मक या आक्रमणात्मक किसी भी प्रकारके युद्धसे कुछ भी सम्बन्ध न रखने का दृढ़ निश्चय करके अपनी आस्थाका प्रमाण देना होगा। किन्तु युद्धके इस विरोधके कर्त्तव्यका अधिकार केवल उनका ही हो सकता है जो अहिंसाको अपना धर्म मानते हैं। यह अधिकार उन्हें नहीं मिल सकता जो किसी युद्धके विषयमें विरोध या सहमतिका निश्चय उस युद्धके गुण-दोषोंका और उससे होनेवाले लाभ-हानिका विचार करके करेंगे। सारांश यह निकला कि युद्धके विरोधका यह प्रश्न ऐसा है जिसका निर्णय प्रत्येक व्यक्तिको स्वयं ही करना होगा और यदि वह अन्तर्नाद-जैसी चीजमें विश्वास करता हो तो उक्त निर्णय वह अन्तर्नादके मार्गदर्शनमें करे।

राजकोट, ९ अप्रैल, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-४-१९३९

१५५. पत्र : धर्मेन्द्रसिंहको[1]

आनन्दकुंज, राजकोट
९ अप्रैल, १९३९

मेहरबान ठाकुर साहब,

आपको मैंने कल अजमेरसे तार[2] दिया था, वह मिल गया होगा।

अब आपको सर मॉरिसके निर्णयके[3] अनुसार कमेटी नियुक्त करनी है।

मुझे लगता है, आपकी इच्छा होगी कि आपके द्वारा घोषित चार नाम कायम रहें। जबतक परिषद्की ओरसे सरदार जो नाम दें उनका बहुमत रहेगा, तबतक

१. "राजकोट इवेंट्स" (राजकोटकी घटनाएँ) से उद्धृत।
२. देखिए पृ० १३३।
३. देखिए पृ० ११५-६, पा० टि० १।

सरदार ये चारों नाम सहर्ष स्वीकार करेंगे। इसका मतलब यह हुआ कि अगर ये चार नाम कायम रहें और तीन अधिकारियोंको भी मतदानका अधिकार रहे तो सरदारको आठ नाम प्रस्तुत करने होंगे।

यदि आप अपने द्वारा प्रस्तुत चार नाम वापस ले ले तो सरदारकी ओरसे सात नाम देने की जरूरत रहेगी। आशा है, आप अपनी राय बताने की कृपा करेंगे। साथ ही यह भी बतायें कि तीन अधिकारी कौन-कौन होंगे तथा अध्यक्ष कौन होगा?[1]

मोहनदासके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
हरिजनबंधु, २३-४-१९३९

१५६. पत्र : ई० सी० गिब्सनको

आनन्दकुंज, राजकोट
९ अप्रैल, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

ठाकुर साहब द्वारा जारी की गई अधिसूचनाकी शर्तोंकी पूर्तिके सिलसिलेमें मैं आज सुबह ही यहाँ पहुँचा हूँ। मेरे निमंत्रणपर सरदार पटेल भी आज सुबह हवाई जहाजसे यहाँ आ गये हैं।

मेरा खयाल है कि वाइसराय महोदयने इस विषयमें आपको कुछ निर्देश भेजे हैं। अगर आप समझते हों कि हमारा मिलना ठीक रहेगा, तो मैं आपसे, आप जब भी चाहें, मिलने को तैयार हूँ।

ठाकुर साहबको मैंने एक पत्र[2] भेजा है, जिसके अनुवादकी एक प्रति मैं इसके साथ आपको भेज रहा हूँ।[3]

हृदयसे आपका,
मो० क० गां०

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१७१)से; सौजन्य : द० बा० कालेलकर

१. धर्मेन्द्रसिंहके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ७।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. उत्तरमें ई० सी० गिब्सनने इस बातपर अपनी चिन्ता व्यक्त की कि ऐसी गर्मीमें गांधीजी ने दिल्लीसे राजकोटतक की यह थकानेवाली यात्रा की। उन्होंने यह भी लिखा कि वे गांधीजीसे कभी भी मिलने को तैयार थे।

१५७. पत्र : भोलानाथको

राजकोट
९ अप्रैल, १९३९

भाई भोलानाथ,[1]

आपका २३-३-३९ का पत्र मिला। इस बारेमें श्री हरिभाऊ उपाध्यायजी से सब बातें[2] हो गयी है, कृपा करके आप उनसे पूछ लीजीये।

आपका,
मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १३१०) से

१५८. पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको

राजकोट
१० अप्रैल, १९३९

प्रिय सुभाष,

इस महीनेकी ६ तारीखका तुम्हारा पत्र[3] पता बदलकर यहाँ भेजा गया है।

मैंने यह सुझाव दिया था कि दोनों विरोधी पक्ष आपसमें मिल बैठें और एक-दूसरेसे बिना किसी दुराव-छिपावके अपनी बातें साफ-साफ कहकर सारा मामला निबटा लें। लेकिन तबसे अबतक बहुत-कुछ घटित हो चुका है। इसलिए मैं नहीं कह सकता कि वह सुझाव आज भी किसी कामका है या नहीं। वे सिर्फ एक-दूसरेको कोसेंगे ही और इस तरह कटुता और बढ़ेगी। दोनोंके बीच जो खाई पड़ गई है, वह बहुत चौड़ी है और पारस्परिक सन्देह बहुत गहरा है। इस झगड़ेको बन्द करने का कोई रास्ता मुझे नही दिखता। यदि कोई रास्ता दिखता है तो केवल यही कि दोनोंके मतभेदोंको स्वीकार करके दोनोंको अपने-अपने ढंगसे काम करने दिया जाये।

१. अलवरके कांग्रेसी कार्यकर्त्ता

२. तात्पर्य अलवर प्रशासन द्वारा अलवर प्रजा मंडलको पंजीकृत करने से इन्कार कर दिये जानेके मामलेसे है।

३. देखिए परिशिष्ट ८।

आपसमें झगड़ते हुए इन तत्त्वोको साथ लाकर मिल-जुलकर काम करने को तैयार करने में मै अपने-आपको अक्षम पाता हूँ। मै यह उम्मीद करना चाहूँगा कि वे अपनी-अपनी नीतियोंको यथेष्ट गरिमाके साथ कार्यान्वित करेंगे। यदि वे ऐसा करते हैं तो देशका भला ही होगा।

पं० पंतके प्रस्तावका मै विश्लेषण नहीं कर सकता। जितना अधिक मै उसका अध्ययन करता हूँ, उतना ही अधिक उसे नापसन्द करता हूँ। इस प्रस्तावको तैयार करनेवालों के इरादे नेक ही थे, किन्तु उससे वर्तमान कठिनाई हल नही होती। इसलिए तुम्हें तो अपनी समझके अनुसार इसका अर्थ लगाकर बिना किसी सकोचके उसीके मुताबिक काम करना चाहिए।

मै तुमपर कोई कार्यसमिति नही थोप सकता और न थोपना चाहूँगा। ऐसी कोई कार्यसमिति तुमपर थोपी जाये तो तुम्हें उसके लिए तैयार भी नही होना चाहिए और न मै ही तुम्हे यह आश्वासन दे सकता हूँ कि अ० भा० कां० क० तुम्हारी कार्यसमिति और नीतिका समर्थन करेगी ही। यह तो लोगोंके विचारोको दवाना होगा। सदस्योंको अपनी निर्णय-बुद्धिका प्रयोग करने दो। यदि तुम्हें बहुमतका समर्थन प्राप्त न हो तो जितने भी सदस्य तुम्हें समर्थन दें उन्हीको साथ लेकर विपक्षकी तरह काम करते हुए बहुमतको अपने पक्षमें लाने की कोशिश करते रहो।

क्या तुम नही जानते कि जहाँ-कही मेरा प्रभाव था, वहाँ मैंने सविनय अवज्ञा को रोक दिया है? त्रावणकोर और जयपुर इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। यहाँ तक कि यहाँ आने के पूर्व ही मैंने राजकोटके आन्दोलनको भी रोक दिया था। मै फिर कहता हूँ कि वातावरणमें मुझे हिंसाकी गंध मिल रही है। अहिंसक कार्रवाईके लिए अपेक्षित वातावरण मुझे नजर नहीं आता। क्या रामदुर्गका उदाहरण[1] तुम्हारे लिए पर्याप्त नही है? मेरी समझमें तो उसने हमारे कार्यको भारी क्षति पहुँचाई है। जहाँतक मै समझ सकता हूँ, वह पूर्व-निर्धारित योजना थी। काग्रेसी ही उसके लिए उत्तरदायी हैं, जैसे कि वे रणपुरके मामलेमें थे। क्या तुम यह लक्ष्य नहीं कर रहे हो कि हम दोनों एक ही चीजको पूरी ईमानदारीके साथ एक-दूसरेसे भिन्न रूपमें देखते हैं और निष्कर्ष भी एक-दूसरेके विपरीत निकालते है? राजनीतिक मंचपर हम कैसे मिल सकते है? हम यह मान लें कि यहाँ हममें मतभेद हैं और फिर हमें सामाजिक, नैतिक और नागरिक मंचोपर मिलना चाहिए। इसमें मै आर्थिक मंचको शामिल नही कर सकता, क्योंकि उस मंचपर भी हमें अपने आपसी मत-भेदका पता चल गया है।

मै तो मानता हूँ कि एक-दूसरेसे भिन्न दृष्टिकोण रखनेवाले गुट परस्पर बिलकुल बेमेल तत्त्वोंको जैसे-तैसे राजी करके तय की गई किसी नीति और कार्यक्रमको अंजाम देने की कोशिश करें, इसके बजाय यदि हम अपने-अपने रास्तेपर अपने ही ढंगसे काम करे तो उसमें देशकी ज्यादा सेवा हो सकेगी।

१. रामदुर्ग प्रजा संघने वहाँके राजाको और भी रियायतें देनेको मजबूर करने के लिए हिंसात्मक उपायोंका सहारा लिया था। देखिए खण्ड ६८, पृ० ५०३-६।

मैंने धनबाद जाने की अपनी पूर्ण असमर्थताके विषयमें दिल्लीसे तुम्हें तार भेजे थे।[1] राजकोटकी उपेक्षा करने का साहस मैं नहीं कर सकता।

मैं सकुशल हूँ। बा को सांघातिक किस्मका मलेरिया हो गया है। आज पाँचवाँ दिन है। मैं उसे अपने साथ ले आया हूँ। बीमार वह पहले ही हो चुकी थी।

मेरी तो यही इच्छा है कि परिणाम ईश्वरपर छोड़ते हुए निर्णायक कदम उठाकर तुम अपने स्वास्थ्यकी रक्षा करोगे। अपने पिताजी के बारेमें तुमने जो बात लिखी है, वह हृदयस्पर्शी है। उनसे मिलने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था।

मैं एक बात भूल ही गया। किसीने भी मुझे तुम्हारे विरुद्ध खड़ा नहीं किया।[2] जो-कुछ मैंने तुमसे सेगाँवमें कहा था वह वस्तु-स्थितिको खुद देखने-समझने के बाद कहा था। यदि तुम ऐसा सोचते हो कि पुराने लोगोंमें से ही कोई व्यक्तिगत रूपसे तुम्हारा दुश्मन है तो तुम गलतीपर हो।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१५९. पत्र : अकबर हैदरीको

राष्ट्रीय शाला, राजकोट
१० अप्रैल, १९३९

प्रिय सर अकबर,

निज़ामसाहबकी सरकार द्वारा बातचीतके समाचारोंका खण्डन किये जाने के कारण सरकार और आर्यसमाजकी बातचीत बिलकुल भंग हो जाने पर घनश्यामसिंह गुप्त और देशबन्धु गुप्ता मेरी सलाह लेने के लिए मेरे पीछे-पीछे राजकोट आये हैं।

मैं यह बता देना चाहता हूँ कि कुछ समयसे मैं आर्यसमाजके अपने उन मित्रोंको जो मेरी रायका आदर करते हैं, अपने आन्दोलनके सविनय अवज्ञावाले अंशको मुल्तवी करने और बातचीतका उपाय आजमा देखने की सलाह देता रहा हूँ। मुझे उन कारणोंको बताने की जरूरत नहीं जिनसे मैं यह सलाह देने को प्रेरित हुआ। ये मित्र मेरी सलाहपर गम्भीरतापूर्वक विचार कर ही रहे थे कि उन्हें उसे स्वीकार करने के लिए एक रास्ता भी खुला दिखाई दिया। अलबत्ता, स्वीकृतिके उनके कारण मेरे सुझाये कारणोंसे भिन्न थे। मेरा आशय बातचीतसे है। उनका विचार था कि यदि उनकी

१. देखिए पृ० १२६-७।

२. सुभाषचन्द्र बोसने कहा था : "त्रिपुरीमें पुराने लोग खुद तो चतुराईसे मैदानसे हट गये और इससे भी अधिक चतुराईसे मुझे आपके खिलाफ खड़ा कर दिया।"

न्यूनतम माँग पूरी की जा सके तो वे सविनय अवज्ञा बन्द कर देंगे। लेकिन जैसाकि मैंने बताया, उनकी आशा भग हो गई। अब वे चाहते हैं कि मैं उनका अगला कदम बताऊँ। अपनी इस रायका आधार बताते हुए कि बातचीत वास्तवमें शुरू हो गई है, वे एक घोषणा-पत्र जारी करना चाहते थे।

घोषणा-पत्र पढ़कर मुझे लगा कि उन्हें दिशा-निर्देशन दे सकने से पहले मैं स्वयं आपको लिखूं और आपकी निजी राय जान लूं।

अगर घोषणा-पत्रसे मिलनेवाली जानकारी सही है तो निजाम सरकारका यह कहना कि बातचीत हुई ही नहीं, समझमें नहीं आता। उस घोषणा-पत्रके मसौदेमें से, जो मेरे कहने से फिलहाल रोक रखा गया है, कामके अनुच्छेद ये हैं:

> फरवरीके अन्तिम सप्ताहके आसपास गुलबर्गाके डिवीजनल कमिश्नर और कलेक्टर, आर्योंकी शिकायतोंका पता लगानेके लिए आन्दोलनके नेता महात्मा नारायण स्वामीजी महाराजसे जेलमें मिले थे और उन्होंने वादा किया था कि वे सौहार्दपूर्ण समझौतेकी सम्भावना ढूंढ़ निकालने के लिए उच्च अधिकारियोंको समझायेंगे।
>
> २७ मार्च, १९३९ को हैदराबाद राज्यके पुलिस तथा जेलोंके डाइरेक्टर-जनरल श्री एस० टी० हॉलिन्स, गुलबर्गा डिविजनके कमिश्नर नवाब गौस यारजंग बहादुर, गुलबर्गा जिलेके कलेक्टर श्री रजवी और गुलबर्गा जेलके सुपरिंटेंडेंट महात्मा नारायण स्वामीजी महाराज, कुँवर चांदकरणजी शारदा, लाला खुशालचन्दजी और स्वामी विवेकानन्दजी से गुलबर्गा जेलमें मिले और श्री एस० टी० हॉलिन्सने कुछ प्रस्ताव रखे जिनका सार यह था कि निजामकी सरकार ओम्‌के झंडे फहराने पर किसी तरहकी कोई आपत्ति नहीं करेगी, यज्ञशाला और हवनकुण्ड बनाने के लिए किसी अनुमतिकी जरूरत नहीं होगी और उन सब आर्यसमाजों और मन्दिरोंको, जो बिना किसी अनुमतिके स्थापित कर लिये गये थे, मान्यता दी जायेगी; नये मन्दिर बनवाने के मामलेमें ऐसी सरकारी मशीनरी मुहैया की जायेगी कि अर्जी देनेके बाद १५ दिनके अन्दर इजाजत मिल जाये; ऐसी इजाजत देने में रोक सिर्फ तब लगेगी जब मन्दिरका स्थान ऐसा हो जहाँ उससे साम्प्रदायिक दंगे हो सकने की सम्भावना हो; और दूसरे धर्मोंके अनुयायियोंकी भावनाओंका पूरा ध्यान रखते हुए धर्म-प्रचारकी पूरी स्वतन्त्रता दी जायेगी।
>
> महात्मा नारायण स्वामीजी और उनके साथियोंने इन प्रस्तावोंको समझौतेके लिए बातचीतके आधारके रूपमें मानने की अपनी रजामन्दी जाहिर की बशर्ते कि समझौता शोलापुरके प्रस्तावोंसे संगति रखता हुआ हो। स्वामीजी ने श्री हॉलिन्सको यह साफ बता दिया कि सत्याग्रह आन्दोलन वापस लेने का अधिकार सार्वदेशिक सभाको है।

इसपर श्री हॉलिन्सने सार्वदेशिक सभाके प्रतिनिधियों और सम्बद्ध सरकारी अफसरोंकी हैदराबादमें एक बैठक करवाने का प्रबन्ध करने की और वहाँ इस बातचीतमें हिस्सा लेने के लिए स्वामीजी महाराज तथा उनके साथियोंका हैदराबाद तबादला करवाने की जिम्मेदारी ली। स्वामीजी के अनुरोधपर श्री हॉलिन्स तथा कमिश्नर नवाब गौस यारजंग बहादुरने वादा किया कि सार्वदेशिक सभाके प्रतिनिधियोंको कष्ट नहीं दिया जायेगा और उनके कागज-पत्र जब्त नहीं किये जायेंगे और न उनसे अन्यथा छेड़छाड़ की जायेगी।

इस प्रकार आश्वस्त किये जानेपर स्वामीजी महाराजने सत्याग्रह समिति, शोलापुरके मन्त्री स्वामी स्वतन्त्रानन्दजीको तार देकर बुलाया और उपर्युक्त बातचीतके सारको संक्षेपमें लिखकर और बाकायदा जेल सुपरिटेंडेंटके हस्ताक्षर करवाकर सार्वदेशिक सभाके अध्यक्ष, मन्त्री और कुछ अन्य सदस्योंके पास भेजा। इसी महीनेकी ७ तारीखको जब मैं तथा सर्वश्री घनश्यामसिंह गुप्त और देशबन्धु गुप्ता गुलबर्गा जेलमें नारायण स्वामीजी से मिले थे तब जेल सुपरिटेंडेंटने हमें बताया था कि अपने हस्ताक्षर करने के पूर्व उन्होंने स्वामीजी के उन पत्रोंमें उक्त बातचीतके जो विवरण दिये गये थे वे गुलबर्गाके तालुकेदारको दिखा कर उनपर उनकी स्वीकृति ले ली थी।

स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी गुलबर्गा गये और उन्होंने नारायण स्वामीजी महाराजसे भेंट की। नारायण स्वामीजी ने स्वामी स्वतन्त्रानन्दजीसे कहा कि सार्वदेशिक सभाकी कार्य-समितिकी एक आपातिक बैठक शोलापुरमें तुरन्त १० अप्रैल, १९३९ से पहले बुलाई जानी चाहिए।

स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी ने शोलापुरमें बैठकका आयोजन किया और सर अकबर हैदरीको पत्र लिखा और नारायण स्वामीजी महाराजकी श्री हॉलिन्स और उनके साथियोंसे जो बातचीत हुई थी उसके सारकी एक प्रति साथ भेजी और उन्हें सूचित किया कि सार्वदेशिक सभाके प्रतिनिधि रियासतके प्रतिनिधियोंसे मिलने और प्रस्तुत प्रश्नपर बातचीत करने के लिए हैदराबाद ९ अप्रैलको पहुँचेंगे। इस पत्रमें उन्होंने सर अकबर हैदरीसे बैठकका समय और स्थान सूचित करने का अनुरोध भी किया था। पहली अप्रैल, १९३९ के एक पत्रमें स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी ने गुलबर्गा जेलके सुपरिटेंडेंटको भी यह सूचित करते हुए पत्र लिखा कि अन्तर्राष्ट्रीय आर्य संघकी कार्य-समितिके अलावा पत्रमें जिन सज्जनोंके नाम दिये गये हैं, वे हैदराबादकी बैठकमें सार्वदेशिक सभाका प्रतिनिधित्व करेंगे।

स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी को गुलबर्गा सेन्ट्रल जेलके सुपरिटेंडेंटका ३ अप्रैल, १९३९ का एक पत्र, सं० २६९७, मिला। यह पत्र बहुत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि वह मौजूदा विवादपर काफी प्रकाश डालता है। वह इस प्रकार है:

"३१ मार्च, १९३९ का आपका पत्र, सं० ३७०६०, मुझे आज मिला है। उसके सन्दर्भमें आपको यह सूचित कर रहा हूँ कि आपके प्रतिनिधियोंकी महात्मा नारायण स्वामी, श्री खुशालचन्द तथा अन्य लोगोंके साथ बैठक गुलबर्गामें करना तय हुआ है, हैदराबादमें नहीं। कृपया अपने प्रतिनिधियोंको शोलापुरमें इकट्ठा कर लीजिए और ७ अप्रैल, १९३९ की सुबहकी डाकगाड़ीसे गुलबर्गा भेज दीजिए, ताकि वे महात्मा नारायण स्वामी और अन्य लोगोंसे पहले ही मिल लें और ८ तारीखको रियासतके अधिकारियोंसे बात करने के लिए तैयार हो जायें।

"मैं आपको आश्वासन देता हूँ कि आपके प्रतिनिधियोंको पुलिस कदापि परेशान नहीं करेगी और न आपके कागज-पत्र ही यहाँ जब्त किये जायेंगे, बशर्ते कि आपकी तरफसे कोई प्रदर्शन न हो। कृपया मुझे उनके गुलबर्गा पहुँचने की तारीख और समयकी सूचना तार द्वारा दीजिए, ताकि यहाँ आवश्यक प्रबन्ध कर लिये जायें। मैं आपको यह सब गुलबर्गाके प्रथम ताल्लुकेदारकी सहमतिसे लिख रहा हूँ।"

यह पत्र बिलकुल साफ है और इससे जाहिर होता है कि जेल सुपरिंटेंडेंटने पूरे अधिकारके साथ लिखा था, क्योंकि वह साफ कहता है कि शिष्टमंडल रियासतके अधिकारियोंसे ८ अप्रैल, १९३९ को मिलनेवाला था।

आर्यसमाजके नेता जब हैदराबादके लिए चल पड़े थे और रास्तेमें थे, उसी समय हैदराबाद सरकारने एक आश्चर्यजनक विज्ञप्ति जारी की कि कुछ समाचारपत्रोंमें प्रकाशित यह समाचार कि निजाम सरकार किसी समझौते या सुलहके लिए अन्तर्राष्ट्रीय आर्य संघके साथ बातचीत कर रही है, बिलकुल गलत है।

इस महीनेकी ३ तारीखका पत्र, जिसपर गुलबर्गा सेन्ट्रल जेलके सुपरिंटेंडेंटके हस्ताक्षर है, इस सम्बन्धमें निर्णायक प्रतीत होता है। मेरा सुझाव है कि चाहे श्री हॉलिन्स और अन्य अधिकारी जरूरतसे ज्यादा उत्साही रहे हों और उन्होंने अपने अधिकारकी सीमाका उल्लघन किया हो, निजाम सरकारको चाहिए कि वह और कुछ नही तो अपने सुनामकी रक्षाके लिए ही उनके कामकी तसदीक करे। निजाम सरकार-जैसी महान् सरकारके शब्दोंमें जनताका विश्वास नही डिगना चाहिए, लेकिन जो चीज ऊपरसे देखने में ऐसी लगती है जिसका कोई औचित्य नही, सम्भव है, सचमुच उसका कोई बहुत ठोस औचित्य हो। क्या मैं जल्दी जवाब पाने की आशा करूँ? फिलहाल मैं राजकोटमें रुका हुआ हूँ।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०२१६)से

१६०. पत्र : ई० सी० गिब्सनको

आनन्दकुंज, राजकोट
१० अप्रैल, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

आपके कृपा-पत्रके[1] लिए धन्यवाद। ईश्वरकी कृपासे इस यात्राका मेरे शरीर-पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा।

आज मेरा मौन-दिवस है। क्या मैं कल तीसरे पहर तीन बजे आ सकता हूँ?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१७२)से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर

१६१. पत्र : अमतुस्सलामको

राजकोट
१० अप्रैल, १९३९

बेटी अ० स०;

तेरा खत मिला है। फाका करने से कुछ भी लाभ नहीं हो सकता है। यहां सब ठीक हो जायगा ऐसा मालुम होता है। कुरेशी भी फिकर न करे। किसीको आनेकी जरुरत नहीं है। बा के बारेमें सुशीलाके खत से।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१५)से

१. देखिए पृ० १३९, पा० टि० ३।

१६२. पत्र : अमृतकौरको

राजकोट
११ अप्रैल, १९३९

प्रिय पगली,

यहाँ मेरी स्थिति 'जैसे थे'-वाली है। मीठी-मीठी बातोंके बीच कठिनाइयोंका कोई अंत नही है। अच्छा हुआ कि मैंने सरदारको बुला लिया। उनके पास रहने से मैं एक तरहकी सुरक्षा महसूस कर रहा हूँ, जो उनकी अनुपस्थितिमें कभी नही कर पाता। अब मै जो भी कदम उठाता हूँ उन्हें बताकर और उनकी सहमतिसे ही उठाता हूँ।

सुभाषचन्द्र बोसके साथ जो और पत्र-व्यवहार हुआ है उसकी नकल भेज रहा हूँ। आखिर कोई क्या करे? अपने निर्णयपर यदि किसीकी आस्था है तो दृढ़ता ही एकमात्र मार्ग दिखाई देता है।

रामदुर्ग एक संकेत है। अहिंसा जबतक प्रतिष्ठित नही होती, और सविनय अवज्ञा नही होगी।

आशा है, तुम्हें खाँसी और सिरदर्दसे छुटकारा मिल गया होगा। मैं बिलकुल ठीक हूँ। बा के मलेरियाका आज छठा दिन है। वह अब लगातार धीरे-धीरे कम हो रहा है।

मै अब गिब्सनके यहाँ जा रहा हूँ। यह 'लाइब्रेरी'[1] में ही पूरी की जा रही है। चिट्ठी लिखना बहुत कम हो गया है। भेंटोंका सिलसिला कभी खत्म होने में ही नही आता।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९०९)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२१८ से भी

१. गांधीजी इस अंग्रेजी शब्दका प्रयोग 'लैवेटरी' (शौचालय) के लिए करते थे, क्योंकि अपना पढ़ने-लिखने का कुछ काम वे वहीं निपटा लेते थे।

१६३. तार : जीवनसिंह धीरूभाई जाडेजाको

एक्सप्रेस

राजकोट
१२ अप्रैल, १९३९

जाडेजा जीवनसिंहजी धीरूभाई[1]
निजी सचिव
सानन्द

आशा थी कि आपसे यहाँ भेंट हो जायेगी। मुख्य न्यायाधीशका फैसला ठाकुर साहबके मतके विपरीत रहा, फिर भी वे चाहते हैं कि सुधार-समितिके सदस्यके रूपमें उनके द्वारा मनोनीत आपका नाम सरदारकी सूचीमें शामिल कर लिया जाये। इस तरह वे खुद अपनी जिम्मेदारी अस्वीकार करते हैं। इसलिए यदि आप सरदारके मनोनीत व्यक्तिके रूपमें काम करने को तैयार न हों और उनके द्वारा मनोनीत अन्य व्यक्तियोंके साथ एक टीमके रूपमें काम करने का वचन न दें तो आपका नाम छोड़ दिया जायेगा। हाँ, इसमें आपको यह आश्वासन अवश्य दिया जायेगा कि वे लोग भायातोंके न्यायोचित अधिकारोंकी रक्षा करेंगे। कृपया जवाब तारसे दीजिए क्योंकि हदसे-हद कलतक मुझे सूची भेज ही देनी है।[2]

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१७५)से; सौजन्य: द० वा० कालेलकर

१. उन्हें राजकोट भायात और गरासदार समाजके अध्यक्षने उस सुधार-समितिमें भायातों और जमींदारोंका प्रतिनिधित्व करने के लिए नामजद किया था जिसकी नियुक्तिके लिए ठाकुर साहब राजी हो गये थे।

२. देखिए अगला शीर्षक भी।

१६४. पत्र : गरासियोंको

[१३ अप्रैल, १९३९ या उसके पूर्व][1]

ऐसा समझा जाता है कि महात्मा गांधीने गरासियों (भायातों)को एक पत्र लिखकर सूचित किया है कि वे सुधार-समितिमें, जिसके सात प्रतिनिधि ग्वायर निर्णयके अनुसार सरदार वल्लभभाई पटेल द्वारा नामजद किये जायेंगे, किसी भी भायातका नाम शामिल करने में असमर्थ हैं।

बताया जाता है, महात्मा गांधीने पत्रमें इस ओर ध्यान दिलाया कि सुधार-समितिकी सदस्य-संख्यामें वृद्धि न करने के ठाकुर साहबके निर्णयको देखते हुए, यदि सरदार पटेल द्वारा मनोनीत सात प्रतिनिधियोंमें से एक भायातोंका प्रतिनिधि भी होता है तो परिषद्के लिए ग्वायर निर्णयके अनुसार जो बहुमत है वह अल्पमत हो जायेगा। खबर है, गांधीजी ने इस बातकी ओर भी ध्यान दिलाया कि मार्चके आरम्भमें उन्होंने भायातोको जो आश्वासन[2] दिया था वह बिना शर्त नहीं था और ऐसा तो सभी मान-कर चल रहे हैं कि सुधार-समितिमें परिषद्को बहुमत प्राप्त होना चाहिए।

महात्मा गांधीको यह जानकर दु:ख हुआ कि भायातोंके संघने बीचकी राह खोजने के लिए बातचीत जारी रखना जरूरी नहीं समझा।[3]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १३-४-१९३९

१. यह पत्र दिनांक "राजकोट, १३ अप्रैल" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. "द राजकोट फास्ट-६" (राजकोटका उपवास-६) में प्यारेलाल लिखते हैं: "११ मार्चको व्यस्त कार्यक्रमके बीच भायातोंका एक पत्र गांधीजी को दिया गया, जिसमें भायातोंके एक शिष्टमण्डलने गांधीजी से मिलने की अनुमति माँगी थी ताकि वे भायातोंको सुधार-समितिमें उनके प्रतिनिधित्वके बारेमें वैसा ही आश्वासन दे सकें, जैसा कहा जाता है, उन्होंने मुसलमानोंको दिया है। जहाँतक सुधार-समितिमें उनके प्रतिनिधित्वका सवाल था, गांधीजी ने उन्हें मुसलमानोंके स्तरपर रखने का आश्वासन देते हुए जल्दीमें एक संक्षिप्त नोट भेजा, क्योंकि गांधीजी अपना और उनका दोनोंका समय बचाने को इस समयाभावकी स्थितिमें उत्सुक थे।" देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", पृ० १५६-८ भी।

३. देखिए पिछला शीर्षक और "पत्र : रणजितसिंहको", पृ० १५५-६ भी।

१६५. तार: भीमराव अम्बेडकरको

आनन्दकुंज, राजकोट
१४ अप्रैल, १९३९

डॉक्टर अम्बेडकर, विधान सभा सदस्य
बम्बई

जहाँ तक मैं देख सकता हूँ कमसे-कम चार सदस्य दलित वर्गका पूरा प्रतिनिधित्व करेंगे। नाम सरदार चुनेंगे।

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१७६)से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर

१६६. तार: सुभाषचन्द्र बोसको

राजकोट
१४ अप्रैल, १९३९

राष्ट्रपति सुभाष बोस
जीलगोड़ा

तुम्हारा पत्र[1] मिलने से पहले मैं पत्र[2] लिख चुका था। और कोई और उपयोगी बात लिखने के लिए नहीं है। मुझे विश्वास है कि तुम्हारे लिए राष्ट्रहितमें सबसे अच्छी बात यह होगी कि तुम बिना किसी प्रतिबन्धके बिलकुल अपनी पसन्दकी कार्य-समिति बनाओ और कार्यक्रम निर्धारित कर लो। स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१. १० अप्रैलका, जिसमें सुभाषचन्द्र बोसने अपने पहले पत्रोंके मुख्य मुद्दोंको संक्षेपमें दुहराया था।
२. १० अप्रैलका; देखिए पृ० १४०-२।

१६७. तार: सुभाषचन्द्र बोसको

राजकोट
१४ अप्रैल, १९३९

राष्ट्रपति सुभाष बोस
झरिया

तुम्हारा तार[1] मिला। गांधी सेवा संघकी बैठक ३ से १० मई तक हो रही है। यदि कार्य-समितिकी बैठक इसी महीनकी २८ और अ० भा० कां० क० की २९ तारीखको हो तो बेहतर होगा। शामिल होने की भरपूर कोशिश करूँगा। बा का बुखार कम है। खतरेकी कोई बात नहीं। स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१६८. पत्र: धर्मेन्द्रसिंहको[2]

आनन्दकुंज, राजकोट[3]
१४ अप्रैल, १९३९

मेहरबान ठाकुर साहब,

आपके तारीख १०-४-३९ के अंग्रेजी पत्रका[4] उत्तर आज दे पा रहा हूँ।

आपने अपनी जिम्मेदारी अपने सिरसे उतार फेंकी, इसका मुझे दुःख है। जिन मुसलमान तथा भायातोंके नामोंके बारेमें आप लिख रहे हैं, उनकी नियुक्ति आपने की

१. १४ अप्रैलका यह तार इस प्रकार था: "समाचारपत्रोंकी लगातार इस तरहकी सूचनाओंसे कि आप अ० भा० कां क० की बैठकके दौरान कलकत्ता नहीं जा रहे हैं और गांधी सेवा संघ सम्मेलन मईके दूसरे सप्ताहतक स्थगित हो रहा है, मैं बहुत चिन्तित हो गया हूँ। अ० भा० कां० क० की बैठकमें आपका शामिल होना सर्वथा जरूरी है। अ० भा० कां० क० की बैठकके लिए मईका पहला सप्ताह क्या आपके लिए अधिक उपयुक्त रहेगा?"

२. "राजकोट इवेंट्स" (राजकोटकी घटनाएँ) से उद्धृत यह पत्र वल्लभभाई पटेलकी इस टिप्पणीके साथ प्रकाशित हुआ था: "यह पत्र मेरी सम्मतिसे लिखा गया है और इसमें दिये गये नाम मेरे दिये हुए हैं।"

३. १७-४-१९३९ के हिन्दूके अनुसार यह पत्र १५ अप्रैल को लिखा गया था।

४. देखिए परिशिष्ट ७।

थी। मेरी प्रतिज्ञाका अर्थ यह था और उसका यही अर्थ लगाया जा सकता है कि कि यदि चीफ जस्टिसका निर्णय आपके विरुद्ध जाये, तब भी आपको अपने वचनका पालन करने में मैं आपकी मदद करूँ। जो देने का मुझे अधिकार ही नही है वह देने का मैंने वचन दिया है, ऐसा अर्थ मेरे शब्दोंसे कैसे निकलता है, यह मेरी समझसे बाहरकी बात है। मैं तो परिषद् तथा सरदारके ट्रस्टीकी भाँति काम कर रहा हूँ। स्पष्ट है कि इस ट्रस्टके बाहर जाकर मेरे द्वारा कुछ नही किया जा सकता। इसलिए मेरी प्रतिज्ञाका अर्थ इतना ही था और हो सकता है कि यदि आप इन भाइयोंके नाम बनाये रखना चाहें तो सरदार द्वारा प्रस्तुत नाम बहुमतमें रहेंगे, इस शर्तपर सरदारकी ओरसे मैं आपकी मदद करूँ; इससे अधिक अर्थ उसमें से निकालना मेरी समझमें असंभव है। दुर्भाग्यवश आपने एक ऐसा कदम उठाया है जिसकी आशा नही थी। आपने अपने द्वारा मनोनीत नामोंको सरदार द्वारा प्रस्तुत नामोंमें शामिल करने का बोझ मुझपर डाला है। मुझे दुःख यही है कि आप मेरी प्रतिज्ञाका ऐसा अनर्थ कर रहे हैं जिससे सरदारको जो अधिकार मिले हैं उनपर पानी फिर जाता है।

अतः यद्यपि आपका पत्र पाने के बाद सरदारकी ओरसे सात नाम आपके पास भेजने के सिवा मेरे लिए और कुछ करना नही रह गया था, तथापि मैंने आपके द्वारा नामित उक्त चार भाइयोंमें से तीनसे प्रार्थना की थी कि वे सरदारको जो नाम देने हैं उनमें शामिल हो जायें और सातकी एक टीमकी भाँति काम करें। मेरी वह प्रार्थना भी सर्वथा व्यर्थ सिद्ध हुई है। आपके द्वारा नामित सदस्योंके नामोंको मान देने का जो भी प्रयत्न किया जा सकता था, यहाँ उसकी भी सीमा हो गई। इस दिशामें मैं अब और कुछ नही कर सकता। अपने पत्रमें आपने एक चौथे नामका भी उल्लेख किया है। श्री मोहन मांडणको अपने पास आकर चर्चा करने का कष्ट देना मैंने उचित नही समझा, क्योंकि वे स्वयम् हरिजन नही हैं।

किन्तु उक्त चार नामोंको अलग कर देने का यह मतलब बिलकुल नही है कि सरदार द्वारा नामित सदस्य मुसलमानों, भायातों, हरिजनों तथा अन्य किसी वर्गके विशिष्ट एवम् उचित अधिकारोंकी चिन्ता नहीं करेंगे। इन सदस्योंके समक्ष इस कमेटीके नाते और सामाजिक सेवाकी दृष्टिसे जात-पाँतका भेद नहीं है। उनके समक्ष तो राजकोटकी समस्त प्रजा ही है। वे ही कमेटीमें शामिल हैं, क्योंकि उन्हींके दलने समस्त प्रजाके अधिकारोंके लिए संघर्ष किया था। आपने उनके उस संघर्षका सम्मान करके परिषद्की ओरसे सरदारको कमेटीके लिए राज-कर्मचारियोंके वर्गके बाहरके सात नाम प्रस्तुत करने का अधिकार दिया था। ये नाम नीचे लिखे अनुसार हैं:

१. पोपटलाल पुरुषोत्तम[1] अनडा, बी०ए०, एल-एल० बी०
२. पोपटलाल धनजी मालविया[2]
३. जमनादास खुशालचंद गांधी[3]

१. काठियावाड़ वकील संघ और प्रजा प्रतिनिधि सभाके सदस्य
२. व्यापारी समुदायके सदस्य और स्थानीय समाज सेवा संघके अध्यक्ष
३. राजकोट राष्ट्रीय शालाके प्रिंसिपल; जो दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहमें शामिल हुए थे।

४. बेचरभाई वालाभाई वाढेर[1]
५. व्रजलाल मयाशंकर शुक्ल[2]
६. जेठालाल ह० जोशी[3]
७. गजानन भवानीशंकर जोशी, एम०ए०, एल-एल०बी०[4]

अब अध्यक्ष-सहित तीन सदस्य आपको मनोनीत करने हैं।

मेरी मानें तो मैं और भी प्रार्थना करूँ। आप लिखते हैं कि अब कमेटीके सदस्योंकी सख्या बढ़ाई नही जायेगी। यह बिलकुल ठीक नही है। दस ही हो सकते है, ऐसा प्रतिबन्ध चीफ जस्टिसके निर्णयमें नही है। दोनों पक्ष मिलकर इसमें जो चाहें रद्दोबदल कर सकते हैं। आपके द्वारा मनोनीत सदस्योंको बनाये रखने में सरदार अब भी आपकी मदद करना चाहते हैं। शर्त यही है कि संख्या बढ़ने पर भी परिषद्का बहुमत रहे। फिलहाल, यानी चीफ जस्टिसके निर्णयके अनुसार उसका बहुमत चारका है। उसके बदले सरदार आपकी — और झगड़ा टालने की — खातिर एकका बहुमत रखने को अब भी तैयार हैं। इससे अधिकको आशा आप कैसे कर सकते हैं?

२६ दिसम्बरकी अपनी अधिसूचनामें आपने कमेटीकी रिपोर्ट पूरी करने और उसे आपके सामने प्रस्तुत करने की अवधि एक महीने और चार दिनकी नियत की थी। उक्त अवधि भी अब उससे अधिक बढ़ाई नही जा सकती, इस बातकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करता हूँ।

यह तो कहने की जरूरत ही नही होनी चाहिए कि दूसरे सघर्षके दौरान जो जब्तियाँ और जुर्माने हुए थे, और अन्य प्रकारसे दमनकी नीति अपनाई गई थी, अब उस सबको रद्द कर देना जरूरी है।[5]

मोहनदासके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २३-४-१९३९

१. हरिजन सेवामें रुचि रखनेवाले एक रचनात्मक कार्यकर्ता
२. राष्ट्रीय शालाके शिक्षक
३. राष्ट्रीय शालाके अध्यापक और स्थानीय समाज सेवा संघके मंत्री
४. स्थानीय रामकृष्ण मिशनके मंत्री
५. १९-४-१९३९ के हिन्दुस्तान टाइम्सके अनुसार धर्मेन्द्रसिंहने इसका उत्तर देते हुए और बातोंके साथ-साथ यह भी लिखा था: "मुझे यह देखकर बहुत दुःख हो रहा है कि मैंने आपको जो-कुछ लिखा उसके बावजूद मुसलमानों या भायातोंको समितिमें कोई प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया है और दलित वर्गोंके प्रतिनिधिका नाम भी छोड़ दिया गया है, यद्यपि उसकी योग्यताओंके बारेमें विशेष सिफारिश की गई थी। मैं यह कहना चाहता हूँ कि राज्यके कानूनी सलाहकारके अनुसार सातमें से केवल एक बेचरवाला वाढेर ही राजकोटकी प्रजा हैं, अन्य छहोंकी स्थिति ऐसी नहीं है। इसलिए मैं आपसे यह बताने का अनुरोध करता हूँ कि किन आधारोंपर आप उन्हें उक्त समितिमें नियुक्त किये जाने योग्य मानते हैं।"

१६९. पत्र : चन्दन पारेखको

राजकोट
१४ अप्रैल, १९३९

चि० चन्दन,

तेरा पत्र मिला। तुझे मैंने एक पत्र देहरादूनके पतेपर लिखा था। लगता है, वह तुझे मिला नहीं। वहाँ लिखकर पूछना।

बा अब बिलकुल स्वस्थ हो गई है, अतः उसके खयालसे आनेकी ज़रूरत नहीं है।

यदि विहार जानेकी तेरी इच्छा हो तो जरूर जा। वहाँ काम तो प्रचुर है ही। लेकिन अभी शायद शंकरकी[1] प्रतीक्षा करना ठीक होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९५०)से; सौजन्य: सतीश द० कालेलकर

१७०. पत्र : ख्वाजा हसन निज़ामीको

बिड़ला भवन, नई दिल्ली[2]
१४ अप्रैल, १९३९

ख्वाजा साहब,

आपने हिन्दी कुरान शरीफ़ भेजकर मुझे एहसानमन्द किया है।

उर्दूके लिए मेरे दिलमें काफी अदब है। मैं तो इसका अभ्यासी भी हूँ। और इसकी तरक्की भी चाहता हूँ।

मेरा ख्याल है कि जो हिन्दू दोनों [समुदायों] की खिदमत करना चाहता है उसे उर्दू जानना चाहिये, और उर्दू अखबारोंमें और किताबोंमें लिखा जाता है उसे पढ़ना चाहिये। ऐसे ही दोनोंकी खिदमत करनेवाले मुसलमानोंको हिन्दी जानना चाहिये और हिन्दी अखबार और किताबोंसे वाकिफ़ रहना चाहिये।

उर्दूकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

१. सतीश द० कालेलकर, जिन्होंने बादमें चन्दन पारेखसे विवाह कर लिया।
२. पत्रके सरनामेके अनुसार

१७१. पत्र : रणजितसिंहको

१५ अप्रैल, १९३९

मुझे इस महीनेकी १४ तारीखका आपका पत्र[1] मिला है। मैंने आपसे अपनी बातचीतमें आपको यह समझाया है कि आप मेरे लिखित वचनको एक बिलकुल अलग ही अर्थ दे रहे हैं। आप उसे जो अर्थ दे रहे है, यदि वही सही है तब तो उसका यह मतलब निकलेगा कि मैंने ऐसा कुछ देने का वचन दिया है जो मेरे पास है ही नही। मैं उस समय मुख्य न्यायाधीशसे उनका निर्णय प्राप्त करने के लिए दिल्ली जा रहा था। उस समय स्थिति यह थी कि यदि निर्णय सरदारके खिलाफ जाये तो मेरे पास देने को कुछ था ही नही, क्योंकि आपका प्रतिनिधि तो सुरक्षित ही रहता। किन्तु यदि निर्णय सरदारके पक्षमें हो और सरदार सातसे अधिक प्रतिनिधियोकी नियुक्तिका विरोध करें तो जाहिर है कि फिर आपके प्रतिनिधिके लिए कोई स्थान नहीं रह जाता। सरदारकी सूचीमें तो केवल ऐसे ही व्यक्ति हो सकते थे जो एक टीमकी तरह काम करने को तैयार हों। इस तथ्यको ध्यानमें रखते हुए मैंने आपको अपने पत्रमें यह लिखा था कि आप सुरक्षित है, क्योंकि यदि सरदारका प्रयोजन पूरा हो जाता है तो वे विरोध नही करेंगे और ठाकुर साहब आपका नाम कायम रखेंगे। मेरे वचनका तो यही एक अर्थ था कि यदि सरदारका उद्देश्य पूरा हो जाता है तो वे कोई विरोध नहीं करेंगे। मुझे ऐसा कोई वचन देने का अधिकार ही कहाँ था जिसका आशय ऊपर मैंने जो-कुछ कहा है उससे उलटा हो।[2]

मुझे तो यह दिनके प्रकाशकी भाँति साफ दिखता है कि यदि आपका प्रतिनिधि एक टीमकी तरह काम करने को तैयार नही है तो आपको यह बात स्वतः

१. अपने इस पत्रमें कच्छ-काठियावाड़-गुजरात गरासिया संघके अध्यक्ष रणजितसिंहने कहा था: "...आपका यह दृढ मत था कि भायातोंमें से कोई एक समितिका सदस्य केवल उसी हालतमें रह सकता है जब वह श्री वल्लभभाई पटेलके साथ एक टीमके रूपमें काम करे। यदि हम इस शर्तको स्वीकार कर लेते है तो हम अपना मत स्वतन्त्रतापूर्वक देने का अधिकार खो देंगे, और कोई भी स्वाभिमानी व्यक्ति इस बातको नहीं मान सकता। आपने हमें एक स्थान बिना किसी शर्तके भायातोंको देने का वचन दिया है। हमारा विश्वास है कि आपके इस वचनका कोई और अर्थ नहीं है।... भायातोंने संकल्प लिया है कि यदि राजकोटके किसी भायातको समितिमें नहीं लिया गया तो वे सत्याग्रह करेंगे और चूँकि राजकोट भायात-गरासिया समाज कच्छ-काठियावाड़-गुजरात संघका ही एक हिस्सा है, इसलिए हमें केन्द्रीय संस्थाके निर्णयका पालन करना होगा और इस हालतमें हमें भय है कि राजकोटकी परिस्थिति और बुरी हो जायेगी।"

२. देखिए "पत्र: गरासियोंको", पृ० १४९।

स्पष्ट हो जायेगी कि उसे सरदारकी सूचीमें शामिल नहीं किया जा सकता। इसलिए यदि आप अपने प्रतिनिधियोंको [सुधार-]समितिमें शामिल कराना चाहते हैं तो आपको इसके लिए ठाकुर साहबसे कहना चाहिए। मैं तो इस सम्बन्धमें एक पत्र[1] लिख ही चुका हूँ। और एक मित्रके नाते मैं आपसे यह कह देता हूँ कि आन्दोलन और सत्याग्रह आदि करने की आपकी धमकी बिलकुल ही अप्रासंगिक है।[2]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १८-४-१९३९

१७२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[3]

१५ अप्रैल, १९३९

ठाकुर साहबकी २६ दिसम्बरकी अधिसूचना तथा चीफ़ जस्टिसके फैसलेके अनुसार सरदार वल्लभभाई पटेलकी तरफसे सुधार कमेटीके सात नामोंकी सिफारिश करने में मुझे असाधारण देर हो गई है। देर इस कारण हुई कि मेरी और सरदार पटेलकी भी इच्छा थी कि नामावलीमें ठाकुर साहबके उन चार नामोंको शामिल कर लिया जाये, जो उनकी गत २१ जनवरीकी अधिसूचनामें — जो अब प्रभावहीन हो गई है — प्रकाशित हुए थे। फैसलेके मुताबिक ठाकुर साहबके नाम अपने-आप गिर गये हैं। किन्तु सरदार पटेलके सहयोगसे ठाकुर साहब इन नामोंको फिर भी रख सकते थे। ९ अप्रैलको राजकोट आने के बाद मैंने पहली कार्रवाई यह की कि ठाकुर साहबको लिखित रूपमें यह कहा कि इन नामोंको बनाये रखने में सरदार सहयोग देंगे। मुझे खेद और आश्चर्य हुआ, जब मेरी तजवीज फौरन अस्वीकार कर दी गई। ठाकुर साहबके पत्रसे, जो उनकी तरफसे अखबारवालों को दिया गया था, जनता जान गई है कि मेरा यह प्रस्ताव किन शब्दोंमें नामंजूर किया गया है। उन शब्दोंसे यह अर्थ निकलता है कि फैसलेके बाद कमेटीके सदस्योंकी संख्या बढ़ाने की कोई गुंजाइश नहीं रह गई है। जाहिर है कि यह बात सही नही है। पारस्परिक सहमतिसे बहुत-कुछ करने की गुंजाइश है। अगर ठाकुर साहब सरदार पटेलका सहयोग प्राप्त कर लेते हैं तो कमेटीके सदस्योंकी संख्या बढ़ाने या घटाने में भी वे फैसलेसे बँधे हुए नही हैं।

मुझे जब इस दु:खद निर्णयका पता लगा, तब सरदारके पूरे सहयोगके साथ मैंने इन उपायोंकी खोज करनी शुरू की कि सात नामोंमें दो मुस्लिम प्रतिनिधियो

१. देखिए पृ० १५१-२।

२. साधन-सूत्रके अनुसार, "एक लम्बे उत्तरमें" रणजितसिंहने "यह दावा किया था कि भायातोंको एक स्थान देने का गांधीजी का वचन बिना शर्त था।"

३. यह वक्तव्य "राजकोट इवेन्ट्स" (राजकोटकी घटनाएँ) से उद्धृत है। १६ अप्रैल, १९३९ के हिन्दुस्तान टाइम्स, और हिन्दूमें भी यह छपा था।

तथा एक भायात प्रतिनिधिको भी स्थान मिल जाये। ऐसा तबतक नही हो सकता था, जबतक यह स्वीकार न कर लिया जाये कि सरदारके अन्य नामजद सदस्योंके साथ वे एक टीमकी भावनासे कार्य करेंगे। अगर यह शर्त पूरी नही होती है, तब सरदार अर्थात् परिषद्‌को सातो सदस्योके चुनावका अधिकार देनेका उद्देश्य विफल हो सकता था। मनुष्यके वशमें जितनी भी कोशिशें करनेकी सामर्थ्य है, मैंने और सरदार पटेलने की; फिर भी हम असफल हुए। अतः ठाकुर साहबके चारो नाम छोड़ दिये गये है।

लेकिन इसका यह मतलब नही कि कमेटी उन सब हितोंका प्रतिनिधित्व नहीं करेगी, जिनमें से कुछका प्रतिनिधित्व वे चार सदस्य करते। मै संसारमें एक भी ऐसी कमेटीका नाम नही जानता जिसमें स्पष्ट तौरसे और वर्गतः उन सब स्वार्थोका प्रतिनिधित्व हो सके जिनकी कि कल्पना की जा सकती है। प्रजातन्त्रकी भावना यह है कि हरएक व्यक्ति किसी राष्ट्रमें जितने भी वर्ग हो उन सबके हितोका प्रतिनिधित्व करता है। इसका यह मतलब नही है कि इसमें विशेष हितोका विशेष प्रतिनिधित्व नही होता है या नही होना चाहिए। लेकिन ऐसा प्रतिनिधित्व उसकी कसौटी नही है। यह दोषकी एक निशानी है।

मै यह दावा नही करता कि राजकोट कमेटी सर्वांगपूर्ण है, लेकिन सरदार पटेलकी तरफसे अगर यह कोशिश की जाती कि पूर्वोक्त शर्तके बगैर भी सभी विशेष स्वार्थोंको स्थान दिया जाये, तब एक ऐसा विधान बनाने में असफलता ही मिलती, जो सन्तोष-जनक रूपमें राजकोटके सभी निवासियोंके हितोंके अनुकूल होता। मै यह कहनेका साहस करता हूँ कि सरदार पटेलके सब नाम इस पहली लाजिमी शर्तको पूरा करने के बाद चुने गये है कि वे एक टीमके रूपमें काम करेंगे। अतः वे सब इस बातका ईमानदारीसे प्रयत्न करेंगे कि हरएक व्यक्ति राजकोटके सारे व्यक्तियोके स्वार्थोका प्रतिनिधित्व करे। इसलिए इन सात सदस्योका दुहरा फर्ज होगा कि वे राजकोट राज्यके मुसलमानों, भायातों और हरिजनोंके सभी विशेष और उचित अधिकारोंकी रक्षा करें।

हरिजन-प्रतिनिधित्व के सम्बन्धमें मैं यह कहूँगा कि ठाकुर साहब द्वारा नामजद सदस्योमें चौथे सदस्य श्री मोहन मांडण राजकोटके एक मान्य नागरिक तो है किन्तु वे उतने ही हरिजन हैं, जितने अन्य सात, जिनके नाम सरदारकी तरफसे ठाकुर साहबके सामने पेश कर दिये गये है।

गरासिया सघने जोरदार शब्दोमें सात नामोमें उनके प्रतिनिधिको शामिल न करने के लिए मुझपर वचन-भगका आरोप लगाया है। मैं इतना ही कहूँगा कि उन्होंने मेरे ११ मार्चके पत्रको[1] सर्वथा गलत पढ़ा और समझा है। मै इस समय उन तात्कालिक परिस्थितियोमें नही जाना चाहता, जिनमें मैंने जल्दीमें उनके पत्रका उत्तर लिखा, लेकिन उस उत्तरको उस वक्तव्यके[2] साथ पढ़ना चाहिए, जो मैंने वर्धासे रवाना

१. देखिए पृ० १४९, पा० टि० २।
२. देखिए खण्ड ६८, पृ० ४९८-५०२।

होते समय दिया था और जिसमें मैंने कहा था कि मैं शान्ति-स्थापनाके उद्देश्यसे राजकोट जा रहा हूँ। मैंने उस समय यह कह दिया था कि सुधार-कमेटीकी रचनामें सुझाये गये किसी भी परिवर्तनको स्वीकार करने में एक लाजिमी शर्त यह होगी कि सरदार पटेलके नामजद सदस्योंको कमसे-कम एकका बहुमत प्राप्त हो। ११ मार्चके पत्रको इसी शर्तके साथ पढ़ना चाहिए। ११ मार्चको ऐसा कुछ नहीं हुआ, जिससे मैं इस शर्तसे हट जाता।

थोड़ी देरके लिए यह मान लें कि मै अपने पत्रमें इस शर्तको शामिल करना भूल गया था तो भी गरासिया मित्रोंसे यही आशा की जायेगी कि वे मेरा पत्र उसमें छूटी हुई इस शर्तके साथ ही पढ़ेंगे। लेकिन मै एक कदम और आगे जाकर कहूँगा कि गरासिया संघने मेरे पत्रका जो अर्थ किया है, उससे तो वह उद्देश्य ही नष्ट हो जाता है, जो ठाकुर साहब द्वारा सरदार पटेलको लिखे गये पत्रसे प्राप्त करना अभिप्रेत था। सरदार पटेलने जो अर्थ लगाया और चीफ जस्टिसने अपने फैसलेमें जिस अर्थका समर्थन किया उसे देखते हुए मुझे कोई हक नही कि मै इस अमूल्य अधिकारको छोड़ दूँ। इससे तो मै विश्वास भंग करने का दोष लूँगा। यह याद रखना चाहिए कि सरदारकी नीतिका औचित्य ठहराने के लिए मैंने अनशन किया था, अर्थात् आपको समझना चाहिए कि ठाकुर साहबपर वचन-भंगका जो आरोप लगा था उससे उन्हें बचाने के लिए मैंने अनशन किया था। चीफ जस्टिसके फैसलेने ऐसा कर दिया है। क्या आशा की जा सकती है कि जिस समय मै दिल्ली इस उम्मीदसे जा रहा था कि सरदार पटेलके कथनकी पुष्टि की जायेगी, तब मैं पहलेसे ही उस नतीजेको नष्ट कर देता, जो दिल्ली यात्राके सुखद अन्तसे निकलता? मैंने ११ मार्चको गरासिया संघके नाम लिखे पत्रमें किये गए वादेसे अधिक किया है। मैंने सरदारके नामजद सदस्योंके बहुमत को कम करके एक करने की तजवीज गरासिया-संघसे की, जब कि फैसलेमें ४ सदस्योंका बहुमत प्राप्त है। मै सोचता हूँ कि मै इसके योग्य था कि संघ मेरे साथ बेहतर व्यवहार करता। उनकी सारी अपील ठाकुर साहबसे होनी चाहिए थी कि वे अपने नामजद सदस्योंको फिरसे प्रतिष्ठित करने के मौकेका लाभ उठायें। ऐसा सीधा रास्ता अख्तियार करने के बजाय उन्होंने गलत रास्ता पकड़ा। मैंने गरासियोंको याद दिलाया कि १९१४ के अन्तमें स्वत: देश-निर्वासनके बाद जब मै देश वापस लौटा, मैंने अपनी मित्रता और उनके हित-चिंतनका उन्हें यथेष्ट सबूत दिया था। वे मुझसे पहली बार भावनगरमें मिले। उनमें से बहुत-से व्यक्ति जानते है कि तबसे जब भी उन्होंने मेरी सलाह और पथप्रदर्शन माँगा है, तब मै तैयार रहा हूँ। अब भी कोई हानि नहीं हुई है। जैसा कि मैंने कहा है, उन्हें आश्वस्त रहना चाहिए कि सरदारके नामजद सदस्यगण उनके न्याय्य अधिकारोंका सम्मान करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-४-१९३९

१७३. पत्र : ई० सी० गिब्सनको

राजकोट
१६ अप्रैल, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

मुझे पता लगा कि ठाकुर साहबको लिखा मेरा कलका पत्र[1] आपके पास है, इसलिए मैंने आपको यह लिखने में कुछ देर की कि पत्र मैंने भेज दिया है। यह मेरे लिए अत्यन्त चिन्ताजनक एवं कष्टकर समय रहा है। मैं ऐसी कठिनाइयाँ अनुभव कर रहा हूँ जिनके बारेमें मैंने कभी सोचातक न था। इसकी चर्चा उपयुक्त समय आने पर करूँगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१७७) से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर

१७४. रणजितसिंहको लिखे पत्रका अंश[2]

१६ अप्रैल, १९३९

मैंने जो-कुछ लिखा है, कर्तव्य समझकर लिखा है। मैं सरदार पटेलकी ओरसे काम कर रहा हूँ, ऐसा लिखने में अपनी जिम्मेदारीसे इन्कार करने का जरा भी इरादा नहीं था। फिर भी, मैंने कानूनी स्थिति स्पष्ट की। इसका अर्थ यह कदापि नहीं था कि सरदार मुझपर तनिक भी रोक लगा रहे हैं। 'ट्रस्टी' शब्दके प्रयोगका अर्थ मात्र इतना था कि मैं कोई ऐसा वचन नहीं दे सकता जो मेरे अधिकारसे बाहर हो।

आपने दूसरी बातोंके बारेमें भी लिखा है, जिनका उत्तर तो दिया जा सकता है, पर मैं आपका समय नष्ट नहीं करना चाहता था। एक वक्त आयेगा जब आप भी यह स्वीकार करेंगे कि मैंने जो-कुछ लिखा या कहा है, उससे न तो कोई वचन-भंग हुआ है और न आपके साथियोंकी अवहेलना ही हुई है। आपने जिन

१. अनुमानतः १४ अप्रैलका पत्र; देखिए पृ० १५२-३।

२. साधन-सूत्रके अनुसार यह रणजितसिंहके १५ अप्रैलके पत्रके जवाबमें लिखा गया था। देखिए पृ० १५६, पा० टि० २।

शब्दोंको सरदारके कहे बताया है, वे एक भ्रमके अतिरिक्त और कुछ नहीं है।[1] जो लोग उस वक्त मौजूद थे उनसे मैं पूछ चुका हूँ। उन्होंने जो सुना वह यह था: 'अधीश्वरी सत्ता जब नरेशोंके अधिकारोंकी छानबीन कर रही है, तो भायातोंके अधिकारोंके बारेमें ही किसी गारंटीका कैसे विश्वास किया जा सकता है?' मतलब यह था कि किसीके भी अधिकारोंके बारेमें कोई स्थायित्व नहीं है। इसलिए, परिषद् जब आपको गारंटी देती है तो आपको वह स्वीकार करनी चाहिए। आपने अन्तके मेरे निर्दोष शब्दोंका भी गलत अर्थ लगाया है। लेकिन जब परस्पर विश्वास ही न रहे, तो किसी भी पक्षके शब्दोंका गलत अर्थ लगाना आश्चर्यजनक नही होता।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १८-४-१९३९

१७५. वक्तव्य: समाचारपत्रोंको[2]

१६ अप्रैल, १९३९

आज शामके प्रदर्शनमें[3] सबसे अधिक चोट तो मुझे इस बातसे पहुँची कि प्रदर्शन-कारियोंने ऐसा समय चुना जो मेरे लिए दिनकी एक महत्त्वपूर्ण और पावन घड़ी है। सारा भारत जानता है कि वर्षोंसे मैं अपनी सायंकालीन प्रार्थना, प्रायः बिना किसी नागाके, खुली सभामें करता आ रहा हूँ। मुझे परेशान करने के लिए उन्होंने मेरी प्रार्थनाका ही समय क्यों चुना? और फिर जो बहुत सारे नर-नारी और बच्चे दिन ढलनेपर यहाँ हम सबके एक और एकमात्र ईश्वरको अपनी विनम्र प्रार्थना अर्पित करने आये थे, उन्होंने ऐसा क्या बिगाड़ा था कि उसमें इस तरह विघ्न डाला गया? इस चीजको देखते हुए कि मैं प्रार्थनाके सिवा और कभी बाहर नहीं निकलता हूँ, क्या यह काफी नही था कि मैंने जब प्रार्थना-स्थानमें प्रवेश किया वे बस तभी नारे लगाते और काले झंडे दिखाते? हालाँकि वह चीज भी काफी बुरी होती। पर वे तो पूरी प्रार्थनामें बराबर जोर-जोरसे नारे लगाते रहे। और वे सब मेरे अपने ही देशवासी थे।

१. साधन-सूत्रमें बताया गया है कि रणजितसिंहने "उन धमकियोंका" उल्लेख किया था, "जो सरदार वल्लभभाई पटेलने गांधीजी की उपस्थितिमें इसी १४ तारीखको संघके शिष्टमण्डलको दी थीं।" रणजितसिंहने कहा था: "... आपको याद होगा कि जब श्री ढेबरने भायातोंके अधिकार-सम्बन्धी दरबारके इस वक्तव्यपर बातचीत शुरू की थी कि इस तरहके अधिकारोंकी रक्षा की जायेगी, तो हमने श्री ढेबरसे कहा था कि हमारे अधिकारोंको कोई छू नहीं सकता। तब सरदार पटेलने कहा था 'जब शासकोंको ही झुकने पर मजबूर कर दिया गया है, तो वे (गरासिया और भायात) क्या हस्ती रखते हैं?"

२. यह "राजकोट इवेन्ट्स" (राजकोटकी घटनाएँ) से उद्धृत है। यह वक्तव्य १७-४-१९३९ के *हिन्दुस्तान टाइम्स* और *हिन्दू*में भी छपा था।

३. प्यारेलाल द्वारा दिये गये इस घटनाके विवरणके लिए देखिए परिशिष्ट ९।

मैं अपने मनको प्रार्थनाके शब्दोंपर एकाग्र करने की कोशिश कर रहा था और उनका शोर तीरोंकी तरह मुझे बीध रहा था। मैं अभी ध्यानकी वह शक्ति प्राप्त नही कर पाया हूँ जिससे मनुष्य सभी बाहरी विघ्न-बाधाओंसे अप्रभावित रहता है। वे यह जानते थे कि यदि उन्होंने मुझे अपना विरोधी प्रदर्शन और रोष दिखाने के लिए अपनी सभामें बुलाया होता तो, कमजोर होते हुए भी, मैं वहाँ जाता और उन्हें शांत करने की कोशिश करता।

मेरा कहना यह है कि मैंने कोई वादा नही तोड़ा है। जहाँतक मुझे मालूम है, अपने पूरे सार्वजनिक और निजी जीवनमें मैंने कभी कोई वादा नहीं तोड़ा है। यहाँ तो कोई ऐसा हेतु भी नही है जिसके लिए वादा तोड़ा जाता। फिर भी मैंने सोचा कि कही ऐसा न हो कि मैंने, चाहे जितनी जल्दबाजीमें, कोई ऐसा वादा कर दिया हो, जिसका मैंने ११ मार्चको भायातोंको लिखे गये अपने पत्रमें जो-कुछ कहा था उससे भिन्न कोई अर्थ हो सकता हो। इसीलिए, राजकोटमें मुझे जितने भी कानूनदाँ दोस्त मिल सकते थे उन सभीसे मैंने अपना निष्पक्ष मत देने को कहा और उन्हें यह चेतावनी दे दी कि यदि वे बिना समुचित कारणके मेरे पत्रके मेरे अपने अर्थका समर्थन करेंगे तो उससे उनकी प्रतिष्ठाको धक्का लगेगा। उनका युक्तियुक्त और सर्वसम्मत मत मेरे पास है, जो पूर्णतया मेरे अपने अर्थका ही समर्थन करता है, और किसीका नही करता।

मुझे डर है कि प्रदर्शनकारियोंने निर्दोष नर-नारियोंकी प्रार्थनामें अनुचित हस्तक्षेप कर अपने ध्येयको लाभ नही पहुँचाया है। मुख्य न्यायाधीशके पंच-फैसलेको यथोचित रूपसे कार्यान्वित कराने में जबरदस्त कठिनाइयाँ पेश आनी है। अभी मुझे उन कठिनाइयोंकी चर्चा करने का अवकाश नही है। परन्तु जिन लोगोंको सरदारकी सूचीमें से कई नाम शामिल न करने के मेरे कार्यसे कष्ट पहुँचा है, उनसे मैं यह अपील करता हूँ कि वे इसे बरदाश्त कर लें। अपनी शिकायतोंके निवारणके लिए वे सभी न्यायोचित उपाय काममें ला सकते हैं। उन्होंने जो तरीका आज अपनाया वह किसी भी तरह न्यायोचित नही था।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-४-१९३९

१७६. दुःखी त्रावणकोर

त्रावणकोर रियासत कांग्रेसकी कार्य-समितिने इस मासके प्रथम सप्ताहमें जो प्रस्ताव पास किये हैं, उनके सारका अनुवाद[1] इस प्रकार है :

> कार्यवाहक प्रधान और कार्य-परिषद्ने महात्मा गांधीकी सलाहपर[2] चलते हुए सविनय अवज्ञा स्थगित करने का जो निर्णय लिया है, कार्य-समिति उसकी सराहना करती है। कार्य-समिति इस बातपर जोर देना चाहती है कि इस घड़ी जरूरी यह है कि स्थानीय और ताल्लुका समितियाँ अपना ध्यान रचनात्मक कार्यपर केन्द्रित करें और आन्दोलनके संगठनात्मक पक्षको मजबूत करें। . . .
>
> खादी : कार्य-समिति श्रीयुत एलंकथ रामकृष्ण पिल्लै (संयोजक), जी० रामचन्द्रन् और के० एम० भूतलिंगम पिल्लैकी एक उपसमिति नियुक्त करती है, जो खादीकी कताई और बुनाईके लिए रियासतमें उपलब्ध सुविधाओंके बारेमें एक विस्तृत रिपोर्ट पेश करेगी तथा उनके लिए एक योजना भी पेश करेगी। इस समितिको यह भी निर्देश दिया जाता है कि वह ऐसे और केन्द्र चुने और सुझाये जहाँ तुरन्त काम शुरू किया जा सके।
>
> देशी बुनाई : देशी बुनाईको (जो इस रियासतका एक महत्त्वपूर्ण उद्योग है) प्रोत्साहन देने के लिए कार्य-समिति श्रीयुत आर० शंकर (संयोजक), के० एस० थंगल और एम० जी० कोशीकी एक उपसमिति बनाती है, जो इसके लिए एक योजना पेश करेगी।
>
> सरकारी गुण्डागर्दी : रियासत कांग्रेसकी गतिविधियोंके दमनके लिए आज गुण्डागर्दीको जो उकसावा दिया जा रहा है, कार्य-समितिको उसपर गहरी चिन्ता है। समितिको यह याद है कि पिछले साल मई और जूनके महीनोंमें रियासत कांग्रेसकी सभाओंमें पुलिसने गुण्डागर्दी कराई थी। गत नवम्बरमें राजनीतिक कैदियोंकी रिहाईसे पहले, रियासत कांग्रेसकी सभाओंको या तो प्रतिषेधात्मक आदेशों या गुण्डागर्दीसे अथवा रियासत कांग्रेसको अवैध घोषित करके रोकने की कोशिश की जाती थी। रिहाईके बाद जनवरीके मध्यसे पहले यद्यपि बहुत-सी सभाएँ हुईं, पर उनमें किसी भी तरहकी कोई गड़बड़ी नहीं हुई। इस बीच सरकारने तथाकथित विशेष पुलिसकी भरती शुरू कर दी।

1. यहाँ कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।
2. देखिए पृ० ८७-९।

विशेष पुलिसके ये सिपाही कोई वर्दी नहीं पहनते और इनका वेतन प्रति मास ५ रुपये नियत किया गया है। जनवरी १९३९ के मध्यसे विशेष पुलिसके ये सिपाही नेय्याटिंकारा और पारूर ताल्लुकोंकी सभाओंमें भाग लेने लगे। तभी से ये तथाकथित पुलिसके सिपाही और इनके अधीन काम करनेवाले गुण्डे रियासत कांग्रेसकी सभाओंको भंग करने की कोशिश करते आ रहे हैं। . . . २२ तारीखको सत्याग्रह स्थगित कर देने की घोषणाके बाद भी रचनात्मक कार्यके लिए आयोजित स्वयंसेवकोंके जत्थोंके साथ और सभाओंमें गुण्डागर्दी की गई। . . .

कार्यकर्त्ताओंसे अनुरोध : गत नवम्बरमें जब राजनीतिक कैदी रिहा किये गये तो ऐसा माना जा रहा था कि हमें कमसे-कम सार्वजनिक सभाएँ करने की स्वतन्त्रता मिल गई है। परन्तु आज तो हालत पिछले अगस्तसे भी, जब रियासत कांग्रेस अवैध घोषित कर दी गई थी, बदतर है। रियासत कांग्रेसकी हालकी सभाओंमें भाग लेनेवालों ने अहिंसामें अपनी जो दृढ़ आस्था दिखाई, समिति उसकी हृदयसे सराहना करती है। यह गुण्डागर्दी सत्याग्रहके स्थगनके बाद भी सरकार द्वारा चलाई जा रही दमनकी सतत नीतिका ही परिणाम है। सरकार न केवल रियासत कांग्रेसकी किसी भी माँगको स्वीकार करना नहीं चाहती, बल्कि रियासत कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओंको भी किसी-न-किसी बहाने गिरफ्तार करती जा रही है और कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रम तकमें बाधा डालने की कोशिश कर रही है। सरकार चाहे कितना भी दमन और कितनी भी गुण्डागर्दी क्यों न करवाये, रियासत कांग्रेस गांधीजी के अगले निर्देशोंकी प्रतीक्षा करती हुई अपना कार्य जारी रखेगी। सरकार द्वारा प्रेरित और प्रोत्साहित इस गुण्डागर्दीका विरोध करते हुए, समिति लोगोंसे यह अपील करती है कि वे कांग्रेसका काम साहस और अहिंसाके साथ जारी रखें।

मैं चाहूँगा कि कार्यकर्त्ता यह समझ लें कि वहाँकी घटनाओंको देखते हुए सविनय अवज्ञा स्थगित किया जाना सर्वथा उचित ही था। अधिकारियोंने उन्हें धैर्य और आत्मनियंत्रणको प्रयोगमें लाने का पर्याप्त अवसर दिया है। उन्होने उन्हें सविनय अवज्ञाके बिना भी कष्ट सहने का अवसर प्रदान किया है। इसलिए कार्यकर्त्ता यदि आस्था छोड़े बिना और हिम्मत हारे बिना इस अग्नि-परीक्षामें से गुजर सकें और चुपचाप दृढ़तापूर्वक रचनात्मक कार्यक्रमपर अमल करते रहें, तो स्वराज्य अपने-आप आ जायेगा। यह एक दर्पोक्ति है; कुछ लोग इसे हास्यास्पद भी कहेंगे। फिर भी यह गहरी आस्थासे निकली हुई उक्ति है।

परंतु मुझे जो बात चिंतित कर रही है वह अंतिम पैरेकी यह बात है कि "रियासत-कांग्रेस गाधीजी के अगले निर्देशोकी प्रतीक्षा करती हुई अपना कार्य जारी रखेगी।" मुझमें आस्थाकी यह घोषणा जहाँ हृदयको छूती है वहाँ मुझे असमंजसमें भी

डालती है। कार्यकर्त्ताओंको यह जान लेना चाहिए कि यद्यपि मैं सलाह और मार्गदर्शनके लिए सदा प्रस्तुत हूँ, पर जबतक मुझे नया प्रकाश नहीं मिलता, मेरे पास देने को कोई और निर्देश नही है। मैंने जो इलाज सुझाया है वह अच्छी तरह आजमाया हुआ है, और मैं यह कह सकता हूँ कि 'इसे बराबर करते जाइए, यह कभी विफल नही जाता।' सविनय अवज्ञा फिर शुरू करने की सलाह मैं आसानीसे देनेवाला नही हूँ। वातावरणमें हिंसा और असत्य इतना व्याप्त है कि उसका [सविनय अवज्ञाका] फिरसे शुरू किया जाना कही भी उचित नही है। और त्रावणकोरके मामलेमें तो, जैसा कि मैं कह चुका हूँ, उसे शुरू करना बेकार है।

जहाँतक रियासतकी गुण्डागर्दीके आरोपका सवाल है, जबतक उसकी निष्पक्ष जाँच नही की जाती, जनसाधारण बेशक उसपर विश्वास करेगा ही। अधिकारियोंके महज इन्कार करने से, वे चाहे कितनी भी बार ऐसा क्यों न करें, किसीको यकीन नही आयेगा। और यदि सिर्फ लीपापोतीके लिए कोई स्थानीय आयोग नियुक्त कर दिया गया, तो उससे भी कोई उद्देश्य पूरा नही होगा। विश्वास तो पुनः तभी पैदा किया जा सकता है और सत्य तभी प्रकाशमें आ सकता है, जब बाहरके न्यायाधीशोंसे, जिनकी निष्पक्षता असंदिग्ध हो, जाँच कराई जाये।

राजकोट, १७ अप्रैल, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-४-१९३९

१७७. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

राजकोट
१७ अप्रैल, १९३९

राष्ट्रपति सुभाष बोस
जीलगोड़ा

तुम्हारा पत्र और तार[1] मिला। कृपया अ० भा० कां०. क० बैठककी तारीख २९ ही रखो। मैं उसमें शामिल होऊँगा। तुम्हारे ऊपर [कार्य-] समिति थोपना मेरे लिए असम्भव है। यदि तुम समिति बनानेवाले हो तो इसका निश्चय अ० भा० कां० क० को ही करने

१. सुभाषचन्द्र बोसने १९ अप्रैलके अपने इस तार और पत्रमें कहा था कि कार्य-समितिकी एकरूपताके बारेमें वे गांधीजी की सलाहको कार्यान्वित नहीं कर सकते और इसका मात्र विकल्प यही है कि गांधीजी उसे नामजद कर दें।

दो। मिली-जुली कार्य-समिति तो व्यावहारिक नही लगती। तुमने प्रतिबन्ध उठा लिया है, इसलिए यदि मुझे वक्त मिला तो मैं सार्वजनिक वक्तव्य दूंगा। स्नेह।[1]

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१७८. तार : अमृतकौरको

राजकोट
१७ अप्रैल, १९३९

राजकुमारी अमृतकौर
जालन्धर

नरकमें होते हुए भी मैं ईश्वरके सान्निध्यका अनुभव कर रहा हूँ, और अच्छी तरह हूँ। चिन्ताकी कोई बात नही है। स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९१०) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७२१९ से भी

१७९. एस० सत्यमूर्तिके नाम तारका मसौदा[2]

१७ अप्रैल, १९३९

सत्यमूर्ति, एम० एल० ए०
नई दिल्ली

शिकायतोंके लिए विशेष दिवसोंकी घोषणासे मेरा विरोध है।

गांधी

मूल अंग्रेजीसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. जवाब देते हुए इसी तारीखके अपने तारमें सुभाषचन्द्र बोसने कहा : "यदि आप वक्तव्य देते हैं तो मुझे पत्र-व्यवहार प्रकाशित करनेकी अनुमति दें। मेरा अन्तिम पत्र १५को भेजा गया था।"

२. यह एस० सत्यमूर्तिके १६ अप्रैल के तारके जवाबमें भेजा गया था, जिसमें गांधीजी से १४ मईको मनाये जानेवाले 'कीनिया दिवस' के लिए आशीर्वाद माँगा गया था।

१८०. पत्र: रणजितसिंहको[1]

राजकोट
१७ अप्रैल, १९३९

कुमार श्री रणजितसिंहजी,

राजकोटके भायातों और गरासदारोंकी समिति द्वारा जारी किया गया पत्रक मैंने देखा है। उसमें जो आरोप लगाये गये हैं वे गम्भीर हैं। मेरे ध्यानमें जो बातें आई हैं वे इससे बिलकुल उलटी हैं। इसका केवल एक ही समाधान है। हम दोनों एक पंच नियुक्त कर लें और सभी शिकायतोंपर उसका फैसला ले लें।

कारमें न जाकर पैदल चलने का मेरा उद्देश्य साफ था, अर्थात् जलूस निकालनेवालों को जो-कुछ वे कहना या करना चाहें, उसका अवसर मिल जाये। पैदल चलने का निश्चय मैंने इस विश्वासके आधारपर किया था कि वे मुझे कोई शारीरिक चोट नही पहुँचाना चाहते हैं। परन्तु कदाचित् वे ऐसा करना ही चाहते हों तो मैं उन्हें यह महसूस करवाना चाहता था कि मैं पूरी तरह उनके हवाले हूँ।

यहाँ कांग्रेस नहीं है। यहाँ केवल प्रजा परिषद् ही है। इसने कोई पत्रक जारी नही किया। निस्सन्देह मैंने एक सार्वजनिक अपील[2] जारी की है, जो इसके साथ भेजी जा रही है।[3]

आपका,

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १९-४-१९३९; हिन्दुस्तान टाइम्स, १९-४-१९३९ भी

१. साधन-सूत्रसे पता चलता है कि यह पत्र मूलतः गुजरातीमें लिखा गया था, जिसका "सही अंग्रेजी अनुवाद" समाचार-पत्रोंमें प्रकाशित हुआ। मूल उपलब्ध न होनेके कारण अनुवाद अंग्रेजीसे ही दिया जा रहा है। सरनामे आदि हिन्दुस्तान टाइम्ससे लिये गये हैं।

२. तात्पर्य प्रदर्शनके सम्बन्धमें समाचारपत्रों के लिए जारी किये गये गांधीजी के वक्तव्यसे है; देखिए पृ० १६०-१।

३. रणजितसिंहके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट १०।

१८१. पत्र : रणजितसिंहको

१७ अप्रैल, १९३९

समाचारपत्रोसे पता चलता है कि आप मुख्य न्यायाधीशसे मेरे पत्रकी व्याख्या चाहते हैं और उसके लिए आपने वाइसरायसे भी अनुरोध किया है। मुझे नही लगता कि यह मामला इतना महत्त्वपूर्ण है, जिसके लिए मुख्य न्यायाधीशको कष्ट दिया जाये। और जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, इस मामलेमें वाइसराय द्वारा मेरे मनाये जाने की भी कोई बात नही है। यदि आप चाहें, और मुख्य न्यायाधीश भी सहमत हो जायें, तो मैं अपनी ओरसे इसके लिए हमेशा तैयार हूँ। मेरा सुझाव है कि यह मामला बम्बईमें किसी भी न्यायाधीशके समक्ष रख दिया जाये। मामला मध्यस्थको सौंपने से ही यदि आपको सन्तोष होगा तो मैं उसके लिए बिलकुल तैयार हूँ। लेकिन एक शर्त है· मामला मध्यस्थको सौंपा जाये और वह अपना निर्णय दे तबतक समितिके कार्यमें रुकावट नही आनी चाहिए। यदि आपकी व्याख्या स्वीकार की गई तो समितिके लिए सरदार द्वारा मनोनीत एक प्रतिनिधिको हटाकर मैं उसकी जगह आपके प्रतिनिधिको स्वीकार कर लूँगा।

[पुनश्च.]

यह पत्र लिख ही रहा था कि आपका दूसरा पत्र मुझे मिला, जिसका जवाब ऊपर आ ही गया है। यदि आपकी बातपर मुख्य न्यायाधीश विचार करना स्वीकार करें, तो भी क्या यह आवश्यक नही होगा कि आपके पर्चेमें लगाये गये आरोपोकी छान-बीनका काम एक मध्यस्थको सौंपा जाये ?[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १९-४-१९३९

१. अपने इसी तारीखके पत्रमें रणजितसिंहने गाधीजीको सूचित किया कि उनके सुबहके पत्रका गाधीजी द्वारा तीसरे पहर दिया गया उत्तर उन्हें प्राप्त हो गया और "किसी मध्यस्थका निर्णय प्राप्त करने के बारेमें रजामन्दी जाहिर करने के लिए" गाधीजी को धन्यवाद देते हुए रणजितसिंहने सूचित किया कि "इस मामलेका फैसला सर मॉरिस ग्वायर द्वारा करवाने के लिए" वाइसरायको तार भेजा जा चुका है। उन्होंने गाधीजी को इस बातका भी आश्वासन दिया कि "... भाषातों द्वारा उनके खिलाफ किये जानेवाले प्रदर्शनोंको रोकने के लिए वे कार्रवाई कर रहे हैं।"

१८२. पत्र : रणजितसिंहको[1]

राजकोट
१७ अप्रैल, १९३९

कुमार श्री रणजितसिंहजी,

मुझे आपका पत्र मिला है। चाहूँगा कि इसके बाद हम दोनोंमें कभी गलत-फहमी न हो। जैसे ही मैंने पत्रोंमें देखा, मैंने आपको यह लिखने[2] का निश्चय किया कि यदि आपको पंचकी नियुक्तिसे सन्तोष हो तो इसमें मेरी ओरसे कोई आपत्ति नहीं होगी।

मेरा सुझाव है कि इस उद्देश्यके लिए हम बम्बईमें कोई न्यायाधीश चुन लें। मुख्य न्यायाधीशके विरुद्ध मुझे कोई आपत्ति नहीं है, परन्तु उन्हें इतना सब कष्ट देने के लिए मैं तैयार नही हूँ। मुझे यह अनुचित लगता है। इसका मतलब यह होगा कि यदि आप इसी बातपर अड़े रहें तो आपको उनकी सहमति लेनी पड़ेगी।

जो भी पंच नियुक्त किया जाये, मेरी शर्तें न भुलाई जायें। पंच-फैसले तक समितिका काम नहीं रुकना चाहिए।

आपने मेरी इस दूसरी प्रार्थनाका उत्तर[3] नहीं दिया है कि आपके आजके पत्रकमें लगाये गये आरोपोंपर हम पंच-फैसला ले लें।

आपका,

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १९-४-१९३९; हिन्दुस्तान टाइम्स, १९-४-१९३९ भी

१. देखिए पृ० १६६, पा० टि० १।
२. देखिए पिछला शीर्षक।
३. देखिए पिछले शीर्षकका 'पुनश्च' वाला अंश।

१८३. पत्र : एम० विश्वेश्वरैयाको

राजकोट
१७ अप्रैल, १९३९

प्रिय सर विश्वेश्वरैया,[1]

सम्भवत: आप संलग्न पत्रको पढना चाहेंगे। आपने मुसीबतमें पड़े हुए उड़ीसाकी पुकार सुनी, यह बहुत कृपा की।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२११) से, सौजन्य: मैसूर सरकार

१८४. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

राजकोट
१७ अप्रैल, १९३९

चि० नरहरि,

एक मिनटकी भी फुरसत नहीं मिलती। यह पत्र मैं 'लाइब्रेरी' में लिख रहा हूँ।

रामजी का पत्र इसके साथ है।

कुरैशीका वेतन बढ़ा दिया जाये। उसका कर्ज सरदार अदा नही कर सकते, और यह कुरैशीके लिए भी श्रेयस्कर नहीं होगा। इससे तो अच्छा हो, वह और सब काम छोड़कर केवल दुकान देखे और अपना कर्ज अदा कर डाले। मेरी दृष्टिमें तो ऐसा करके भी वह लोकसेवा करेगा और हिन्दू-मुस्लिम एकतामें योगदान देगा। कुरैशी अपाहिज होकर बैठ जाये, यह ठीक नहीं है। यह सब तुम उसे पढ़ने के लिए दे सकते हो। लेकिन तुम्हारा अपना विचार अगर इससे अलग हो तो मुझे बताना।

तुम्हें स्वास्थ्यकी दृष्टिसे यथेच्छ अवकाश लेना ही चाहिए। वसुमतीके वैद्यसे अपने स्वास्थ्यकी जाँच करा के तो देखो। कभी-कभी इस तरहके लोगोंकी दवा काम कर जाती है। दिनशाको भी दिखाओ। स्वास्थ्य सुधारने में आलस मत करो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९११७) से

1. मैसूर राज्यके दीवान, १९१२-१८

१८५. तार : रणजितसिंहको

[१७ अप्रैल, १९३९ के पश्चात्][1]

यदि सर मॉरिस ग्वायर मध्यस्थताके लिए तैयार हो जायें तो मैं राजी हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २-५-१९३९

१८६. तालचरकी विपत्ति

उड़ीसा प्रान्तकी तालचर रियासतके बीस-पच्चीस हजार शरणार्थियोंको पाठक न भूले होंगे।[2] वे ब्रिटिश उडीसान्तर्गत अंगुलके जंगलमें कठिनाईके साथ अपनी जिन्दगी बसर कर रहे हैं। मैं इन आँकड़ोंको विश्वसनीय मानता हूँ, क्योंकि ठक्कर बापा और श्री हरेकृष्ण मेहताबने इनकी पुष्टि की है। दोनों प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। फिर, ठक्कर बापा तो एक ऐसे आदमी हैं जिनकी ख्याति एक लम्बे समयसे केवल दया-धर्म-प्रेमी और समाज-सुधारक वयोवृद्ध जन-सेवकके ही रूपमें है। राजनीतिमें वे कभी माथापच्ची नहीं करते।

अभी कुछ ही दिन पहले अखबारोंमें यह घोषणा हुई थी कि समझौता हो गया है और शरणार्थी लोग अपने घरोंको लौटनेवाले हैं। लेकिन इस खबरका तत्काल प्रतिवाद हुआ और यह बतलाया गया कि तालचर के राजाने उड़ीसाकी उत्तरी रियासतोंके असिस्टेंट पॉलिटिकल एजेंट मेजर हेनेसी द्वारा किये गये समझौतेको मानने से इन्कार कर दिया है।

यह वह समझौता है जिसपर गत २१ मार्चको दस्तखत हुए थे :

> १. विविध महसूलोंको लगानके रुपये पीछे ५ आनेसे घटाकर ३ आने कर दिया जायेगा, और बन्दोबस्तके बाद, जो कि आगामी नवम्बरके आसपास शुरू हो जायेगा, लगान और दूसरे महसूलोंका सम्मिलित योग उससे ज्यादा नहीं होगा जितना कि अंगुलमें उसी तरहकी जमीनोंपर लिया जाता है।
>
> २. खाल, चमड़ा, सींग, गाँजा, अफीम, भंग और शराबके अलावा दैनिक जीवनके लिए आवश्यक सभी चीजोंपर से एकाधिपत्य उठा दिया जायेगा।

१. यह तारीख मॉरिस ग्वायरके उल्लेखके आधारपर दी गई है; देखिए पृ० १६६-८। यह तार दिनांक "राजकोट, १ मई" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए खण्ड ६८, पृ० ३५३-५।

३. मजहबी अदालतों और (जातीय) पंचायतों द्वारा किये गये जुर्मानों की वसूली करने के लिए रियासती शासन-व्यवस्थाका उपयोग नहीं किया जायेगा।

४. 'वेठ' (बेगार) उठा दी जायेगी। केवल सार्वजनिक कार्योंके लिए आवश्यक होने पर ही वह ली जायेगी। लेकिन उस हालतमें भी उसके लिए आम दरसे मजदूरी देनी होगी।

५. उद्योग-धन्धे करनेवाली जातियोंपर लगे हुए विशेष कर (व्यक्ति-कर) उठा लिये जायेंगे।

६. शरणार्थियोंके रियासतोंमें वापस लौटने पर उनको परेशान नहीं किया जायेगा।

७. राजनीतिक विभाग द्वारा योजना स्वीकृत होते ही ऐसे वैधानिक सुधार अमलमें लाये जायेंगे, जिनसे प्रजा अपने प्रतिनिधियों द्वारा शासन-प्रबन्ध में भाग ले सकेगी।

८. सभा और भाषणकी स्वतन्त्रतामें हस्तक्षेप नहीं होगा, बशर्ते कि सभा या भाषणमें कोई विप्लवकारी या राजद्रोहात्मक बात न कही जाये।

९. रियासतके लोगोंको अपनी जमीन-जायदादके अन्दर जंगली जानवरोंको मारने का हक होना चाहिए, जिसके लिए न तो उनसे कोई फीस ली जायेगी और न उन्हें कोई दण्ड ही दिया जायेगा।

इस समझौतेके वक्त मेजर हेनेसी, फौजी खुफिया विभागके श्री ग्रेगरी, श्री हरेकृष्ण मेहताव, साल्वेशन आर्मीके ऐड्जुटेंट वुड्स और उडीसा सरकारकी ओरसे रेवेन्यू कमिश्नर उपस्थित थे।

ठक्कर बापासे मुझे मालूम हुआ है कि मेजर हेनेसीको इस बातका पूरा विश्वास था कि उन्हें तालचरके राजाकी ओरसे समझौतेपर दस्तखत करने का अधिकार प्राप्त था। अब राजा साहब किस प्रकार इसको मानने से इन्कार कर सकते हैं, यह समझना मुश्किल है।

मगर जिस सनदके अनुसार राजाको तालचर रियासत मिली हुई है, उसकी शर्तोंका खयाल करने से तो रहस्य और भी बढ जाता है। वर्तमान वाइसराय द्वारा २६ फरवरी, १९३७ को उडीसाकी छोटी रियासतोके नाम जारी की गई सनदकी कुछ सम्बद्ध धाराएँ इस प्रकार है.

३. आप रियासतके अन्दर तमाम तरहके जुर्मोका दमन करने की भरसक कोशिश करेंगे।

४. आप सबके साथ उचित और निष्पक्ष न्याय करेंगे।

५. आप अपनी सारी प्रजाके अधिकारोंको स्वीकार करेंगे और उनकी रक्षा करेंगे। प्रजापर जुल्म-ज्यादती न खुद करेंगे और न दूसरों को करने

देंगे, और अपनी रियासतमें रहनेवाले आदिम निवासियोंकी भलाईका आप खास तौरसे पूरा ध्यान रखेंगे।

६. गवर्नर-जनरलके पूर्वी रियासतोंके एजेंट या वाइसराय द्वारा अधिकृत ऐसे अन्य किसी राजनीतिक अधिकारी द्वारा आपको जो सलाह दी जाये उसीके अनुसार आप काम करेंगे।

इस सनदकी छठी धाराके मातहत राजा उस सलाहके अनुसार काम करने के लिए बाध्य है, जो गवर्नर-जनरलके पूर्वी रियासतोंके एजेंट या ऐसे अन्य किसी राजनीतिक अधिकारी द्वारा उसे दी जाये, जिसे वाइसरायकी ओरसे इस तरहका हक हासिल हो।

इसलिए राजा साहबके लिए इसके सिवा कोई चारा नही है कि वे असिस्टेंट पॉलिटिकल एजेंटकी इच्छानुसार कार्रवाई करें। अब सवाल यह है कि फिर समझौतेको अमलमें लाने में इतनी देरी क्यों हो रही है? यह २०,००० से अधिक शरणार्थियोंके हितोंका सवाल है, जिन्हें खानातक बहुत कठिनाईसे मिल रहा है और सचमुच वेचारे बेघरबार पड़े हुए हैं। यह देरी तो न केवल खतरनाक है, बल्कि अपराधपूर्ण भी है।

राजकोट, १८ अप्रैल, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-४-१९३९

१८७. तार : लॉर्ड लिनलिथगोको

राजकोट
१८ अप्रैल, १९३९

क्या मै आपका ध्यान तालचरके २०,००० शरणार्थियोंकी ओर दिलवा सकता हूँ।[1]

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे : लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. उत्तरमें २५ अप्रैल को वाइसरायने लिखा : ". . . मैं . . . अविलम्ब सन्तोषजनक हलके लिए सबसे ज्यादा उत्सुक हूँ। मेरे प्रतिनिधि इसके लिए हर सम्भव प्रयत्न कर रहे हैं।" देखिए पिछला शीर्षक भी।

१८८. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

राजकोट
१८ अप्रैल, १९३९

राष्ट्रपति सुभाष बोस
जीलगोड़ा

पत्र-व्यवहारको[1] बेशक प्रकाशित कर दो, जिससे वक्तव्य देने की कोई जरूरत न रहे। स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१८९. तार : मुल्कराजको

राजकोट
१८ अप्रैल, १९३९

मुल्कराज
जलियाँवाला बाग स्मारक कोष
अमृतसर

जिन बैंकोके बारेमें सलाह दी है,[2] उनकी दरोपर पैसा तुरन्त विनि-युक्त कर दो।

अंग्रेजीकी नकल: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

१. देखिए पृ० १६५, पा० टि० १।
२. देखिए पृ० १२३।

१९०. पत्र : अमतुस्सलामको

राजकोट
१८ अप्रैल, १९३९

प्यारी बेटी,

तेरे खत आते है, लेकिन मेरी बात तू कैसे जाने? रातको एक बजेतक सोने को न मिले, ऐसे मौकेपर भी मैं भेजू, कुछ तो भेजू, यह कैसी आशा? दूसरे नही करते है। तेरे फाकाकी मैं क्यों फिकर करू? तूने खुदाके नामसे शुरू किया, वह तुझे देख रहा था। इतना बस नही था?

मेरा तो ठीक ही चल रहा है। तकलीफ तो है। मैं खुश हूं। बाकी सुशीला कहेगी।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१७) से

१९१. तार : सुभाषचन्द्र बोसको

राजकोट
१९ अप्रैल, १९३९

राष्ट्रपति सुभाष बोस
जीलगोड़ा

२४ को निश्चित रूपसे रवाना हो रहा हूँ। २७ की सुबह कलकत्ता पहुँचूंगा। शायद सोदपुर ठहरूँ। हेमप्रभादेवीका हमेशा यही आग्रह रहा है। डाक्टरी दृष्टिकोणसे डॉ० रायका एक और सुझाव था। कलसे बुखारके कारण पड़ा हूँ, जो बढ रहा है। आशा है कि रवाना होने से पूर्व बुखार काबूमें आ जायेगा। तुम्हारे पत्रमें दिये अनेकों सुझावोके बावजूद पारस्परिक अविश्वास और सन्देहके इस वातावरणमें और गुटोंमें तीव्र मतभेदके रहते हुए पन्तके प्रस्तावकी शर्तें पूरी करने में अशक्यता महसूस करता हूँ। मैं अब भी समझता हूँ कि तुम्हें साहसपूर्वक अपनी समितिका गठन कर लेना चाहिए।

तुम्हारे जो विचार हैं उनके रहते यह तुम्हारे प्रति अन्याय होगा। स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

१९२. तार : यशवन्तराव होल्करको

राजकोट
१९ अप्रैल, १९३९

महाराजा साहब होल्कर
इन्दौर

कल रात ए० डी० सी० से लम्बी बातचीत हुई। उन्हें एक व्यक्तिगत पत्र दिया। उन्हें मेरे पास भेजने के लिए धन्यवाद।

अंग्रेजीकी नकलसे. प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य : प्यारेलाल

१९३. पत्र : ई० सी० गिब्सनको

आनन्दकुंज, राजकोट
१९ अप्रैल, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

मैं तेज सिरदर्द व हलके ज्वरके कारण बिस्तरपर पड़ा हूँ। अभीतक इसे डॉक्टरोंने गैस्ट्रिक फ्लू बताया है, जिसका राजकोटमें प्रकोप दिखता है—खासकर उस घरमें जिसमें मुझे रखा गया है।

मैं इस महीनेकी ९ तारीखको यहाँ आया था। आज १९ तारीख है। एक ऐसा मामला, जिसमें एक दिनसे ज्यादा नहीं लगना चाहिए था, दस दिन ले चुका है। दुर्भाग्यसे इस कार्यके बारेमें हमारे विचार भिन्न हैं। मेरी अपनी यह राय दृढ़ होती जाती है कि इस सब देरका कारण श्री दरबार वीरावाला हैं। मेरे पास इसका काफी प्रमाण है, जो शायद कानूनी अदालतमें न चल सके लेकिन जो अन्यथा सब तरहसे पर्याप्त है, मेरे लिए तो है ही। मुझे दरबार वीरावालासे कोई द्वेष नहीं है। मैं तो उनके हृदयको बदलना चाहूँगा। यदि मैं ऐसा कर सकूँ तो वह अहिंसाकी विजय होगी, और अगर आपका सक्रिय सहयोग मिले तो मैं ऐसा कर सकूँगा। लेकिन मैं जानता हूँ कि आप इसमें सहयोग तबतक नहीं दे सकते

जबतक कि आप उनकी योग्यता, दक्षता और निष्कपटताके बारेमें इतनी ऊँची राय रखगे जैसी कि अभी रखते हैं।

ठाकुर साहबके सबसे ताजा पत्रकी[1] एक नकल साथ भेज रहा हूँ। उसका मतलब साफ है। यदि पत्रमें दिये गये सुझावपर अमल किया जाये तो भारतके मुख्य न्यायाधीशके फैसलेकी शर्तोंके अनुसार समितिका गठन कभी हो ही नही सकता। यदि आप अधीश्वरी सत्ताके स्थानीय प्रतिनिधिके रूपमें सक्रिय ढंगसे दखल नही देंगे तो दिल्लीमें तैयार की गई सारी योजनाको पूरी तरह छिन्न-भिन्न ही हो जाना होगा। मैं आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करता हूँ कि सरदारको लिखे ठाकुर साहबके १२ जनवरीके पत्रमें सातमें से चार नाम स्वीकार कर लिये गये थे। ठाकुर साहबके मामलेके साथ लगे ढेर-से कागज-पत्रोंके एक परिशिष्टमें जो उनके राजनीतिक सलाहकारके रूपमें दरबार वीरावाला द्वारा हस्ताक्षरित है, सरदार द्वारा सुझाये उन सात नामोंका विश्लेषण किया गया है। केवल दो नामोंपर निवास-गत निर्योग्यताके आधारपर आपत्ति की गई है। अब अचानक ही एकको छोड़कर बाकी सभीकी योग्यतापर कैसे आपत्ति की गई है? और यदि मुझे वह भार उठाना है जो मुझपर डालने की कोशिश की जा रही है, तो प्रारम्भिक कार्रवाईका ही कोई अन्त नही होगा और कोई जाँच नहीं होगी।

मुझे आपको परेशान करने का या अधीश्वरी सत्तासे मध्यस्थता कराने का विचार पसन्द नही है। लेकिन मैं देखता हूँ कि इस कठिनाईसे बाहर निकलने का कोई रास्ता नहीं है।

भायातों और गरासियोंके संघने भी ऐसा रुख अख्तियार कर लिया है जिसे मैं बहुत ही अविवेकपूर्ण समझता हूँ। मैंने जैसे ही समाचारपत्रोंमें पढ़ा कि वे मेरे तथाकथित वादेकी निष्पक्ष जाँच करवाना चाहते हैं, मैंने तुरन्त इस प्रस्तावको स्वीकार करते हुए पत्र[2] लिख दिया। लेकिन चूँकि मुझे लगा कि इसमें बेहद देर होगी, मैंने कहा कि तत्सम्बन्धी कार्यवाहीसे समितिके कार्यमें बाधा नही पड़नी चाहिए और यदि उक्त निष्पक्ष जाँचमें उनके मन्तव्यकी पुष्टि हुई तो भायातोंका नामजद किया व्यक्ति तुरन्त स्वीकार कर लिया जायेगा और एक नाम वापस ले लिया जायेगा। किन्तु संघने मेरे प्रस्तावकी ओर ध्यान नही दिया। वे तो जबतक न्यायाधीश न चुन लिया जाये और उसका फैसला न मिल जाये तबतक समितिके गठनको रोक रखना चाहते थे। मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर लेने से भी फैसला मिलने से पूर्व समितिका काम शुरू नहीं होता, लेकिन यह जरूर होता कि मामला काफी जल्दी तय हो जाता। मैंने यह राय व्यक्त की है कि इस मामलेमें भारतके मुख्य न्यायाधीशको परेशान नही किया जाना चाहिए, यद्यपि अगर भारत सरकारको इस बातके लिए राजी किया जा सके कि वह सर मॉरिसको फैसला करने के लिए बुलाये और वे

१. देखिए पृ० १५३, पा० टि० ५।

२. देखिए पृ० १६७।

उस बुलावेको स्वीकार कर ले तो मुझे उनके द्वारा फैसला किये जाने पर कोई आपत्ति नही होगी। मैंने उनके बजाय बम्बई उच्च न्यायालयके किसी न्यायाधीशका नाम सुझाया है। मुझे कोई सन्देह नही है कि आप ऐसी व्यवस्था आसानीसे कर सकते है। मैं समझता हूँ कि न्यायाधीश कल या परसो यहाँ हवाई जहाजसे पहुँच सकता है। मुझे उनसे बहुत ज्यादा नही कहना है और न भायातोको ही ज्यादा कुछ कहना है। न्यायाधीशको अपना फैसला देने में ज्यादा समय लगाने की जरूरत नही है। मुझे भय और सन्देह यह है कि सच्चा व्यवहार करने की कही कोई इच्छा ही नही है। मैं आपके सामने जो साफ तौरसे अपने मनकी बात व्यक्त कर रहा हूँ, आशा है, आप उसका बुरा न मानेंगे। जब मैं आपको सम्राट्का स्थानीय प्रतिनिधि मानकर आपकी ओर इस आशासे देखता हूँ कि आप ऐसी व्यवस्था करेंगे जिससे समितिका ठीकसे गठन हो जाये और उसका काम बिना देरके बेरोक चलता रहे, तो मुझे आपसे अपने मनके अत्यन्त भीतरी विचार भी छिपाने नहीं चाहिए; यदि मैं उन्हें अप्रकट रखता हूँ तो मैं आपके प्रति पूरा न्याय नही करता।

मुझे इसी २४ तारीखको दोपहर १.१० की गाड़ीसे राजकोटसे अवश्य रवाना होना है और शीघ्र ही कलकत्ता तथा फिर वृन्दावन पहुँचना है। मैं यथासम्भव जल्दीसे-जल्दी यहाँ लौटूंगा, जो अगले महीनेकी ७ तारीखसे पहले नही हो सकता। इस बीच मेरी तरफसे श्री ढेबरभाई काम करेंगे। लेकिन मैं आशा करता हूँ कि इन पाँच दिनोमें, जब कि मैं यहाँ हूँ, काफी काम हो चुकेगा।

क्या मैं आपको याद दिला दूं कि मेरा उपवास केवल मुल्तवी किया गया था और यदि मेरे सभी प्रयत्न व्यर्थ जाते है और कोई रास्ता नही निकलता तो मुझे फिरसे उपवास शुरू करना होगा? गम्भीरतापूर्वक सोचे-विचारे बिना मैं ऐसा नही करूँगा। मैं ऐसा करना नही चाहता। मुझमें ऐसा करने की शारीरिक शक्ति भी नही है। लेकिन अनुल्लघनीय कर्त्तव्यके आदेश के आगे कोई भी लौकिक कठिनाई नही टिकती है। यह मामला इतना गम्भीर है कि मैं चाहूँगा कि आप कमसे-कम इस पत्रका सार परमश्रेष्ठको अवश्य बता दें। उनके लिए आराम निहायत जरूरी है और उसमें दखल देना मुझे बिलकुल पसन्द नही। यदि आप समझते है कि मेरी शिकायतमें सार है और आप उसका उपाय कर सकते है और करना चाहते है तो मैं चाहूँगा कि परमश्रेष्ठको परेशान न किया जाये।

यदि आप समझते हैं कि व्यक्तिगत रूपसे बातचीत करना जरूरी है तो निश्चय ही मैं आपसे मिलने के लिए तैयार हूँ; उस हालतमें आपको मेरे बुखारका खयाल करने की जरूरत नही। मैं स्वय आ जाऊँगा। पूर्व-निर्धारित कार्यक्रमके अनुसार आज मुझे साढ़े ग्यारह बजे डॉ० अम्बेडकरसे मिलना है।

फिलहाल मैं ठाकुर साहबके पत्रका उत्तर नही दे रहा हूँ।[1]

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८२०) से; सौजन्य : घ० दा० बिड़ला

१. इसी तारीखको उत्तर देते हुए ई० सी० गिब्सनने लिखा : "आप बीमार हैं. . . यह जानकर बहुत दुःख हुआ। . . . आपसे बातचीत करके मुझे प्रसन्नता होगी। . . . आपको जो भी समय सुविधाजनक हो, मेरे लिए भी ठीक होगा (वैसे ५ से ७ बजे सायंका समय छोड़ दिया जाये तो अच्छा होगा)। लेकिन आशा है, जबतक डॉक्टर अनुमति न दें, आप आने की नहीं सोचेंगे।" (सी० डब्ल्यू० १०१८०)

१९४. पत्र : ई० सी० गिब्सनको

आनन्दकुंज, राजकोट
१९ अप्रैल, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

शीघ्र उत्तर देने के लिए धन्यवाद। बुखार अब भी चढ़ता ही जा रहा है। इसलिए नेक डॉक्टरकी सलाहको न मानने की जिद मुझे नहीं करनी चाहिए। बुखार १२.३० बजे १०१.२° तक चला गया था। इसलिए मैं आपसे कल तीसरे पहर २ बजे, यदि वह समय आपके लिए सुविधाजनक हो तो, मिलूँगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१७९) से; सौजन्य : द० बा० कालेलकर

१९५. तार : वीरचन्द पानाचन्द शाहको[1]

राजकोट
२० अप्रैल, १९३९

वीरचन्द पानाचन्द
परिषद्
जामनगर

अफसोस। बिना किसी क्षोभके दमनकी तमाम कार्रवाइयाँ चुपचाप सहते रहो। इस स्थितिमें परिषद्की कोई सम्भावना नहीं।

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. वीरचन्द शाहने जामनगरकी स्थितिके बारेमें २० अप्रैलको गांधीजी को तार द्वारा सूचना दी थी। यह उसी तारके जवाबमें भेजा गया था।

१९६. पत्र : ई० सी० गिब्सनको

आनन्दकुंज, राजकोट
२० अप्रैल, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

यह वही प्रस्ताव है, जिसे आपने खिलाड़ीकी वृत्तिसे रखा गया एक उदारता-पूर्ण प्रस्ताव माना था और जो मैंने आपके सामने हम दोनोंकी मुलाकातके समय रखा था। मुझे स्वीकार करना चाहिए कि वह प्रस्ताव निराशा और घबराहटसे उत्पन्न था। राजकोटमें अदृश्य शक्तियोंसे लड़ते-लड़ते मैं थक गया हूँ। ऐसी स्थितिका सामना मुझे जीवनमें कभी नही करना पड़ा था। प्रस्ताव यह है कि परिषद् प्रस्तावित समितिसे बिलकुल अलग हो जाये, और ठाकुर साहब अपनी समिति, अधिसूचनाकी शर्तोंके अनुसार मनोनीत कर लें और इस समितिका गठन तुरन्त हो तथा गठित होने पर वह एक माह चार दिनके भीतर ही अपना प्रतिवेदन ठाकुर साहबको दे दे।

यदि समिति द्वारा बनाया संविधान अधिसूचनाकी शर्तोंके अनुसार नही हुआ तो राजकोट राज्य प्रजा परिषद्को, जिसका प्रतिनिधित्व सात सदस्य करेंगे, उससे तथा समितिके प्रतिवेदनसे असहमत होने का अधिकार होना चाहिए और तब वह असहमति-सूचक प्रतिवेदन भारतके मुख्य न्यायाधीशके सामने इस तरह रखा जाना चाहिए मानो पंच-निर्णयके अनुसार समितिमें परिषद्के भी प्रतिनिधि शामिल रहे हो।

मैंने उस प्रस्तावको तुरन्त भेज देने की आशा की थी, लेकिन आपको बताया था कि हो सकता है, उसके कारण परिषद्के लोगोंके बीच खलबली मच जाये और वास्तवमें हुआ भी यही। जो तरीका मैंने अपनाया है, वह नया है। जैसा कि मैंने अपने कलके पत्रमें[1] कहा, परिषद्को यह अधिकार है कि वह मुख्य न्यायाधीशके पंच-निर्णयको अधीश्वरी सत्ता द्वारा अंजाम दिलाये। जो दमघोटू वातावरण पैदा हो गया था, उसीके परिणामस्वरूप मुझे वह उपाय सोचना पड़ गया जो मैंने आपके सामने रखा था। आपके सामने मैंने जो प्रस्ताव रखा था उसके सम्बन्धमें मैंने अपने मनमें कही कोई मर्यादा नही रखी थी, लेकिन मैं अपने साथियोंका जी नही दुखाना चाहता था और इसलिए मैंने उसपर विचार-विमर्श करने के लिए समय दिया और उनसे कहा कि अगर वे चाहें तो बेशक प्रस्तावको अस्वीकार कर सकते हैं, क्योंकि हम दोनोंकी बातचीतके समय मैंने अपने-आपको जिस तरह सर्वसत्ता-सम्पन्न मान लेने की धृष्टता की थी वैसी कोई सत्ता वास्तवमें मझे थी नहीं। मुझे कहना चाहिए था — और

१. देखिए पृ० १७५-७।

वह प्रस्ताव सामने रखते हुए मेरा मन भी ऐसा कहने को हो रहा था — कि अन्तिम रूपसे कुछ कहने से पहले मुझे अपने साथियोंसे सलाह कर लेनी चाहिए, लेकिन तब मुझे वह एहतियात बरतने की जरूरत नहीं महसूस हुई। जो स्थिति मैंने अपनाई थी उसके औचित्यके सम्बन्धमें मेरा विश्वास तब था ही इतना प्रबल। स्थिति जिस घोर निराशाजनक रूपसे अवास्तविक हो गई थी उससे निकलने का मुझे कोई रास्ता ही दिखाई नहीं दे रहा था। मुझे बड़ी खुशी है कि आज मैं यह कह सकने की स्थितिमें हूँ कि यद्यपि मेरे साथियोंके मनमें बहुत गम्भीर सन्देह है, फिर भी वे यह स्वीकार करते हैं कि मेरी स्थिति बिलकुल ठीक है।[1]

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१८२)से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर

१९७. पत्र: ई० सी० गिब्सनको

आनन्दकुंज, राजकोट
२१ अप्रैल, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

आपका पुर्जा अभी-अभी मिला है — तदर्थ अनेक धन्यवाद। 'विस्तार' की तो मुझे कोई जानकारी नहीं है; अलबत्ता, आप परिषद्को प्रतिनिधित्वसे वंचित करने को ऐसा मानते हों तो अलग बात है।

निस्सन्देह मुझे दरबार श्री वीरावालासे, जब भी उन्हें मेरे पास आने का समय हो, मिलकर प्रसन्नता होगी। सम्भवतः आपकी और उनकी इच्छा यह है कि हम तीनों मिलें। बहरहाल, मैं उसके लिए राजी हूँ।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१८४) से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर

१. ई० सी० गिब्सनने २१ अप्रैलको उत्तर देते हुए लिखा था: "... कलकी हमारी बातचीतके समय आपने जिस प्रस्तावकी सिर्फ मोटी रूपरेखा बताई थी उसे अब आपने पूरे विस्तार और स्पष्टतासे प्रस्तुत कर दिया है। ..." देखिए अगला शीर्षक भी।

१९८. तार : मुल्कराजको

राजकोट
२२ अप्रैल, १९३९

मंत्री
जलियाँवाला बाग स्मारक कोष
अमृतसर

एक लाख पचास हजार सेन्ट्रलमें। बाकी रुपया पंजाब नेशनलमें छह महीनेके लिए।[1]

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१९९. तार : मुल्कराजको[2]

राजकोट
२२ अप्रैल, १९३९

मंत्री
जलियाँवाला बाग [स्मारक कोष]
अमृतसर

मैं सहमत हूँ।

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. देखिए पृ० १२३ और १७३ भी।
२. यह मुल्कराजके २२ तारीखके तारके जवाबमें भेजा गया था। मुल्कराजने अपने तारमें कोषके पुनर्विनियोगके बारेमें कुछ सुझाव दिया था। देखिए पिछला शीर्षक भी।

२००. वक्तव्य : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इण्डियाके प्रतिनिधिको[1]

२२ अप्रैल, १९३९

हमारी बातचीत मैत्रीपूर्ण रही और हमने बहुत-से विषयोंकी चर्चा की। अनेक प्रस्तावोंके सम्बन्धमें हमने विचारोंका आदान-प्रदान किया।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २३-४-१९३९

२०१. वीरावालाको लिखे पत्रका सार

[२३ अप्रैल, १९३९][2]

महात्मा गांधीने वीरावालाको एक पत्र लिखकर कहा है कि मुझे आपके सुझाये गये आधारपर सुधार-समितिका चयन मंजूर नहीं है।

अपने पत्रमें उन्होंने बताया है कि यदि सातमें से चार स्थान किन्हीं विशेष समाजोंके लिए सुरक्षित कर दिये जायेंगे तो आजका बहुमत अल्पमतमें बदल जायेगा।[3]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-४-१९३९

१. साधन-सूत्रके अनुसार गांधीजी ने "शामको" वीरावालासे बातचीत करनेके बाद "वीरावाला और खुदकी ओरसे" यह वक्तव्य दिया था। देखिए अगले दो शीर्षक भी।

२. साधन-सूत्रमें प्रकाशित वीरावालाके उत्तरके आधारपर अनुमानित।

३. साधन-सूत्रमें यह भी बताया गया है कि अपने उत्तरमें वीरावालाने लिखा था: "आपका आजका पत्र मिला। उससे स्पष्ट है कि कल रात जिस सुझावकी चर्चा हुई थी और जिसका आधार यह सिद्धान्त था कि सुधार-समितिके सदस्य निर्वाचित होने चाहिए, वह आपको स्वीकार्य नहीं है।. . . ठाकुर साहब महसूस करते हैं कि हमने जिस दूसरे प्रस्तावकी (अर्थात् गांधीजी द्वारा सुझाये इस प्रस्तावकी कि ठाकुर साहब अपनी समिति स्वयं नामजद करें और राजकोट प्रजा परिषद्को . . . अगर आवश्यक लगे तो वह उसपर अपनी असहमतिका निवेदन मुख्य न्यायाधीशके समक्ष करे) चर्चा की थी उसे स्वीकार करना असम्भव है। . . . राजमान्यने वह वक्तव्य जाँचके लिए भेजा है जिसमें समितिके लिए सुझाये गये छह नामोंके औचित्यके कारण बताये गये हैं; और यदि . . . कोई सन्देह रहता है तो, जैसी कि आपने सहमति दी थी, मामला पश्चिमी भारत देशी राज्य एजेंसीके न्यायिक आयुक्तके विचारार्थ पेश किया जायेगा।" देखिए अगला शीर्षक भी।

२०२. पत्र : ई० सी० गिब्सनको

राजकोट
२३ अप्रैल, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

कल दरबार श्री वीरालालसे मेरी पूरे पाँच घंटेतक बातचीत हुई। उसका नतीजा यह निकला कि उन्होंने मेरे उदारतापूर्ण सुझावको अस्वीकार कर दिया। अस्वीकृति-पत्र साथमें भेज रहा हूँ। परिषद् समिति तो अधरमें लटक रही है और समितिके गठनमें मेरे तथाकथित वादेके मन्तव्यकी जाँचतक विलम्ब होनेके आसार दिख रहे हैं, लेकिन उधर मामलेको पंच-फैसलेके लिए सौंपनेको मैं इसी शर्तपर तैयार हुआ हूँ कि समितिके गठनमें विलम्ब नही किया जायेगा।

मैं मानता हूँ कि यदि "राज्यकी प्रजा" शब्दोंका अर्थ निर्धारित करने का प्रश्न न्यायिक आयुक्तको सौंपा जाता है तो तत्सम्बन्धी पत्र मेरे प्रतिनिधि श्री ढेबरभाईको दिखाया जायेगा और परिषद्को जरूरत होने पर वकील द्वारा अपना पक्ष पेश करने का अधिकार होगा। लेकिन यदि मामलेके एक संयुक्त विवरणमें न्यायिक आयुक्तके सामने खालिस कानूनी मुद्दा रखा जाता है तो इस सबकी जरूरत नही पड़ेगी।

और अन्तमें, जुर्मानोंकी माफी आदिका सवाल अब भी पड़ा ही हुआ है और उसे टाला जा रहा है।[1]

हृदयसे आपका,

[पुनश्च :]

मैं यह मान रहा हूँ कि हमारे बीच हुआ पत्र-व्यवहार प्रकाशनार्थ दिया जा सकता है।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१८५) से; सौजन्य : द० बा० कालेलकर

१. देखिए पिछले दो शीर्षक भी।

२०३. भाषण : प्रजा परिषद्‌के कार्यकर्त्ताओंकी सभा, राजकोटमें[1]

२३ अप्रैल, १९३९

यह तो आपको मालूम ही है कि पिछले १५ दिनसे मैं राजकोटकी उलझी हुई समस्याको सुलझाने के लिए सख्त मेहनत कर रहा हूँ। किन्तु १५ दिनकी इस तन-तोड़ मेहनतसे हमने क्या पाया है, यदि इसका लेखा-जोखा किया जाये तो परिणाम शायद शून्य ही निकले। मैं यह कह सकता हूँ कि इस प्रयत्नके स्थूल परिणामको देखते हुए इस सम्बन्धमें हम शायद एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सके। फिर भी जो काम मैंने हाथमें लिया था, वह तो करना ही था, और मुझे पूरा विश्वास है कि यह मेहनत बेकार नहीं गई।

आखिरकार मुसलमान भाइयोंके साथ समझौता नहीं हो सका, इस बातका मुझे खास दुःख है। इस बारेमें मुझे बड़ी आशा थी, पर जब विधि विपरीत हो तो सारे पासे उलटे ही पड़ते हैं। सर मॉरिस ग्वायरके निर्णयके अनुसार कमेटी भी न बन सकी। ऐसी परिस्थितिमें मुझे यहाँसे जाना पड़ रहा है।

ठाकुर साहबने जो प्रतिज्ञा की थी उसका पालन कराने के बारेमें सर्वोच्च सत्ता द्वारा दिये गये आश्वासनपर अमल कराने के लिए मैं परसों[2] गिब्सन साहबसे मिलने गया था। और यदि मैंने आग्रह किया होता तो वे इन्कार न करते। पर बातचीतके सिलसिलेमें मुझे यह महसूस हुआ कि 'मैं यह कर क्या रहा हूँ? मुझे जो करना चाहिए वह तो दूसरी ही बात है।' मैंने गिब्सन साहबसे कहा, "मैं जो कहना चाहता हूँ, इसे आप भी कबूल करेंगे कि यह एक शराफतकी बात है।" इसपर उन्होंने कहा कि "हाँ, आप जो कहते हैं वह बात है तो शराफतकी।"

अब मैं आपको बताऊँ कि यह कदम उठाने के पीछे मेरी भावना क्या रही है। मुझे एक चीज खटक रही थी। अहिंसामें हिंसककी हिंसाका शमन करने की शक्ति होनी चाहिए। यदि अहिंसाका यह गुण सिद्ध नहीं हो सकता, तो मान लेना चाहिए कि उसमें कहीं-न-कहीं कोई कमी है। दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय जनताने सत्याग्रहके परिणामस्वरूप जो-कुछ प्राप्त किया, वह कोई शत्रुतासे प्राप्त नहीं किया था; और अन्तमें तो जनरल स्मट्स मेरे आजीवन मित्र बन गये। लन्दनमें गोलमेज

१. सायंकाल आयोजित सभामें दिये गये "भाषणका यह सार" हरिजनबन्धुमें "हृदयमंथन" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. लेकिन जान पड़ता है, यह मुलाकात २० तारीखको हुई थी, जिसमें गांधीजी ने ई० सी० गिब्सनके सामने यहाँ उल्लिखित "उदारतापूर्ण" प्रस्ताव रखा था। देखिए "पत्र : ई० सी० गिब्सनको", पृ० १७९-८०।

परिषद्‌के दिनोंमें भी उन्होंने मुझे काफी मदद दी। अगर उनकी चलती, तो वे सारी माँगें ही पूरी करा देते। दक्षिण आफ्रिकामें जब आखिरी समझौता हुआ, तब उन्होंने कहा था कि "मैंने तो गांधीके आदमियोंपर अच्छी तरह सख्ती की, पर उन्होंने तो उसे चुपचाप सहन कर लिया। ऐसे लोगोंपर आखिर मैं कहाँतक सख्ती करता रहूँ!"

आप ऐसा न समझें कि दरबार वीरावालाको जीतना जनरल स्मट्सको जीतने की अपेक्षा कही ज्यादा मुश्किल है। बार-बार मेरे मनमें यह विचार उठता रहा है कि जो दक्षिण आफ्रिकामें सम्भव था क्या वह यहाँ सम्भव नही हो सकता? जनरल स्मट्सने जो उद्‌गार व्यक्त किये थे, वैसे उद्‌गार क्या दरबार वीरावालाके मुँहसे नही निकल सकते? दक्षिण आफ्रिकामें तो मुट्‌ठी-भर भारतीय थे, और विरोधमें सारी बोअर प्रजा डटी हुई थी। भारतीयोंकी लड़ाई एक राजतन्त्रके खिलाफ थी और राजतन्त्र तो हमेशा जड़ होता है। पर यहाँ तो प्रश्न सिर्फ दरबार वीरावालाके हृदयमें प्रवेश करने का है। आप लोगोंसे मुझे ऐसे परम पुरुषार्थकी अपेक्षा है। दरबार वीरावाला यहाँसे जबतक चले नही जायेंगे, तबतक यहाँ शान्ति नही होने की — यह अहिंसाकी भाषा नही है। अहिंसाका लक्षण तो सीधे हिंसाके मुँहमें दौड जाना है। अगर गायोंको यह ज्ञान हो और सारी-की-सारी गायें सीधे दौड़कर शेरके मुँहमें चली जायें, तो सम्भव है कि शेरकी गोमांस खाने की रुचि चली जाये। कभी-कभी मैं सोचता हूँ कि ठाकुर साहबके साथ मेरा वंश-परम्पराका जो सम्बन्ध है उसी बलके भरोसे मैं यहाँ आया था, पर यहाँ आकर तो मैंने उलटा ही किया। मैंने तो सार्वभौम सत्ताको बीचमें डाला। यह कैसी कुमति मुझे सूझी? अब क्या मैं सम्राट्‌के प्रतिनिधिको उनके दिये हुए आश्वासनसे मुक्त नही कर सकता? मुझसे जो भूल हुई उसे क्या खुलेआम पुकार-पुकारकर जाहिर नही कर सकता?

पर मुझे यह कबूल करना चाहिए कि मुझमें इतनी हिम्मत अभी नही आई। फिर भी इन विचारोंको मैं आप लोगोंके आगे रख देता हूँ। आप अपने अन्दर अच्छी तरह शोध करें और आपका अन्तःकरण भी यदि यही साक्षी दे, तो आप समझ लीजिएगा कि विरोधीके हृदयमें प्रवेश करने में ही आपकी तथा मेरी अहिंसाकी सच्ची परीक्षा है।

अपने हृदय-मंथनके परिणामस्वरूप मैंने जो शोध की वह यह है: राज्यसे लड़कर आप चाहे जो अधिकार हासिल करें, पर उन्हें आप उसी हदतक पचा सकेंगे, जिस हदतक कि आप राज्यके हृदयमें परिवर्तन करा सके होंगे, इससे अधिक नहीं। अधिकार हासिल करने के लिए अगर आपको सफल सत्याग्रह करना है तो आपकी भाषामें सुधार होना चाहिए। फिर आपके आचार, आपके विचारोंका एक भिन्न ही रूप होगा। अहिंसा डरपोकका शस्त्र नही है। वह तो परम-पुरुषार्थ है। वीरोंका धर्म है। सत्याग्रही बनना है, तो आपका अज्ञान, आलस्य सब दूर हो जाना चाहिए। सतत जागृति आप लोगोंमें आनी चाहिए। तन्द्रा-जैसी चीज ही नही रहनी चाहिए। तभी अहिंसा चल सकती है। सच्ची अहिंसा आने के बाद आपकी

वाणीसे, आपके आचारसे, व्यवहारसे अमृत झरने लगेगा, और इच्छा या अनिच्छासे 'शत्रु' उससे अपरिचित नहीं रह सकेगा।

यह हो किस तरह? एक उदाहरण देता हूँ: कल पाँच घंटेतक दरबार वीरावालाके साथ मेरी बातें हुईं। उनका स्वभाव तो जो पहले था वही कल भी था। मैं अपनी मीठी भाषामें उनकी वक्रताका दर्शन भी उन्हें कराता जाता था। पर हमारे बीचका वातावरण इस समय भिन्न ही प्रकारका था। उन्होंने मुझसे कहा, "मेरा यह दुर्भाग्य है कि मैं आपको यह न समझा सका कि इससे अधिक मैं दे ही नहीं सकता।" मैंने जवाब दिया, "मैं यह स्वीकार करता हूँ कि आज आपके प्रति मेरे मनमें शंकाका भाव है। आपसे मैं डर गया हूँ। पर जबतक हम लोग एकमत नही हो जायेंगे, तबतक आपके साथ एक कमरेमें बन्द होने के लिए तैयार हूँ। आप मेरी शंकाओंका निराकरण कर दें।" खाँ साहब फतह मुहम्मद खाँ भी वहाँ मौजूद थे। वे भी इस बातचीतमें शामिल हो गये, और दरबार वीरावालासे आग्रह करने लगे कि "चाहे जिस तरह हो, इस मामलेको अब तय कर दीजिए। प्रजा इस सबसे अब ऊब गई है।" इतना समय नही कि इस प्रसंगके सारे मधुर संस्मरण मैं आपको सुनाऊँ, पर एक बात जरूर कहूँगा, वह यह कि परिषद्के आदमियोंके प्रति उनके दिलमें बहुत तिरस्कार था। पहले तो मैं उसे हँसकर टाल देता था, पर कल मुझे चोट पहुँची। अहिंसासे एक प्रकारका भय तो उत्पन्न हो सकता है — जैसा कि बालक जब रातका भोजन किये बिना रूठकर सो जाता है, तब माताको होता है। पर अहिंसाका परिणाम तिरस्कार कैसे हो सकता है?

अहिंसाकी यह व्याख्या यदि आपके बूतेके बाहर हो, तो आप मुझसे ऐसा कह सकते हैं, और अपना मार्ग स्वयं चुन सकते हैं। मुझसे बाहरसे जितनी सहायता हो सकेगी करता रहूँगा। पर अगर अहिंसाके पथपर ही चलने का आपने निश्चय कर लिया है तो आपको यह समझ लेना चाहिए कि सम्पूर्ण आत्मशुद्धिके प्रयत्नमें मर मिटना, यह अहिंसाकी शर्त है। चौबीसों घंटे अहिंसाकी स्तुति करनेवाले साधकके रूपमें, मैं इसे अपना धर्म समझूँगा कि अन्तरमें भरे हुए दोषोंको निकालकर आप लोगोंके समक्ष रख दूँ। ऐसा करते हुए आपको मदद देने की मेरी शक्ति हजार गुनी बढ़ जायेगी।

यह तो मैं पहलेसे ही कहता चला आ रहा हूँ कि आप अपने खुदके बलपर ही लड़ें। पर अब एक भिन्न प्रकारकी शक्ति मैं आप लोगोंमें देखना चाहता हूँ। तमाम बातोंमें आपके लिए मुझे विचार करना पड़े, यह मुझे तथा आपको दोनोंको ही असह्य हो जाना चाहिए। इसलिए मैं इस बार सारा भार आपके ऊपर डाल जाना चाहता हूँ। अहिंसा और हिंसाके बीच आपको अपना अन्तिम चुनाव कर लेना है। आप किसी दिन कायर न बन जायें, यह मैं चाहता हूँ। हो सकता है कि मर्यादित हिंसासे आप किसी दिन अहिंसा सीख लें। पर त्रिशंकुकी तरह हिंसा और अहिंसाके बीच आपका अधर लटकते रहना तो एक भयंकर स्थिति है। यह मार्मिक समस्या आज जिस तरह आपके सामने है उसी तरह सारे देशके समक्ष है। इसका निर्णय आपको

तुरन्त कर लेना चाहिए। यदि आप अहिंसाको ही पकड़े रहना चाहते हैं, तो आपकी यह अहिंसा मेरी दी हुई नहीं, किन्तु बतौर एक स्वतन्त्र प्रेरणाके आप लोगोंमें आनी चाहिए।

इसलिए मेरी यह बात अगर आपके गले उतरती है, तो इसपर अमल करने का कार्यक्रम मैं आपको बता देता हूँ। परिषद्के आप सातों प्रतिनिधि दरबार श्री वीरावालाके पास जायें। चाहे जितने कटु वचन वे आपको सुनायें, या तिरस्कार करें, उस सबको धैर्यपूर्वक, शान्तिपूर्वक सहन करने के लिए आपको तैयार होना चाहिए। ऐसी अनेक अग्नि-परीक्षाओंमें से उत्तीर्ण होने के बाद ही मैं दक्षिण आफ्रिकामें सत्याग्रहकी शक्ति प्राप्त कर सका था। आप लोगोंमें यहाँतक शक्ति आनी चाहिए कि आप दरबार वीरावालासे जाकर कहें कि "हमें तो गांधीको इससे मुक्त करना है। हम तो सार्वभौम सत्ताके हस्तक्षेपमें से भी निकल जाना चाहते हैं। हमें तो आपको बीचमें डालकर २६ दिसम्बरकी विज्ञप्तिपर राज्यसे अमल भी कराना है, आपको निकलवाकर नहीं। आप ही यह बतलायें कि आपको हम किस तरह रिझा सकते हैं, जिससे कि सारे देशके लिए राजकोट, राजा और प्रजाके बीच मधुर सम्बन्धका एक सुन्दर उदाहरण बन जाये।"

इस प्रकारकी अहिंसाकी साधनाके लिए बतौर साधनके, अहिंसाके प्रतीकके रूपमें, चरखेसे बढ़कर दूसरा कोई साधन मैं आपको नहीं बता सकता।

मेरी अहिंसा एक वैज्ञानिक प्रयोग है। वैज्ञानिक प्रयोगमें निष्फलता-जैसी वस्तुके लिए स्थान नहीं। निर्धारित परिणाम प्राप्त करते हुए विघ्न भी रास्तेमें आते हैं, किन्तु प्रायः उनमें से बड़े-बड़े वैज्ञानिक आविष्कार होते देखे गये हैं। आप अगर अहिंसापर कायम रहना चाहते हैं, तो इस प्रकारकी मनोवृत्तिसे मेरा बताया हुआ अहिंसाका यह प्रयोग आपको करना चाहिए।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १४-५-१९३९, और **हरिजन**, ६-५-१९३९

२०४. तार : अमृतकौरको

राजकोट
२४ अप्रैल, १९३९

राजकुमारी अमृतकौर
जालन्धर शहर

आज बा के साथ बम्बईके रास्ते कलकत्ता जा रहा हूँ।[1] हम दोनों काफी ठीक हैं। स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९११) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७२२० से भी

१. बापूज लेटर्स टु मीरामें मीराबहनने लिखा है कि गांधीजी "फजलुल हक मन्त्रिमण्डलसे बंगला अध्यादेशके अन्तर्गत कैद किये गये राजनीतिक बन्दियोंके बारेमें वार्ता करने" कलकत्ता जा रहे थे।

२०५. तार: घनश्यामदास बिड़लाको

राजकोट
२४ अप्रैल, १९३९

घनश्यामदास बिड़ला
मारफत लकी
बनारस

डॉ० विधान [और] सुभाष मेरे सोदपुर रहने पर सहमत हैं। मालवीयजी से मिलने के लिए अत्यन्त उत्सुक हूँ। कलकत्ता जाते हुए रुकना असम्भव है। वापसी में रुकूँगा।

बापू

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८२१) से; सौजन्य: घ० दा० बिड़ला

२०६. पत्र: ई० सी० गिब्सनको

राजकोट
२४ अप्रैल, १९३९

प्रिय श्री गिब्सन,

कलके मेरे पत्रमें[1] जिस सहपत्रका उल्लेख है उसे रखना भूल गया था, इसके लिए शतशः क्षमा-याचना करता हूँ। मैं लगभग बीमार ही हूँ। उसे रखने का काम मैंने अपने एक सहयोगीको सौंप दिया था। सहपत्र अब इसके साथ भेजा जा रहा है।

हाँ, कार्य-विधिकी बात स्वभावतः न्यायाधीशपर ही छोड़ दी जायेगी। दलीलें लिखित पेश करनी हैं या समक्ष उपस्थित होकर, यह तो सम्बन्धित पक्षों द्वारा ही निश्चित किया जायेगा। मेरी कल्पना तो ऐसी ही है।

पत्र-व्यवहारके प्रकाशनके विषयमें आपके सुझावोंका मैं आदर करूँगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१८६) से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर

१. देखिए पृ० १८३।

२०७. पत्र : माणेकलाल और राधा कोठारीको

आनन्दकुंज, राजकोट
२४ अप्रैल, १९३९

चि० माणेकलाल और राधा,

चि० मनुका विवाह निर्विघ्न सम्पन्न हो, दोनों सुखी रहें और आदर्श दम्पति बनें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२३) से

२०८. पत्र : विजया गांधीको

आनन्दकुंज, राजकोट
२४ अप्रैल, १९३९

चि० विजया,[1]

तेरा कौन-सा जन्मदिवस होगा यह? अंग्रेज लड़कियाँ अपनी उम्र छिपाती हैं, क्या तू भी ऐसा कुछ करती है? जो हो, तू दीर्घायु हो और फिर भी इतनी-की-इतनी बनी रहे। लेकिन कातने में आलस करेगी तो ठीक नहीं होगा। पिछले वर्षकी अपेक्षा इस वर्ष कुछ अधिक कातना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से

१. नारणदास गांधीकी पुत्रवधू एवं पुरुषोत्तम गांधीकी पत्नी

२०९. वक्तव्य: समाचारपत्रोंको[1]

बम्बई जाते हुए रेलमें
२४ अप्रैल, १९३९

राजकोटने, लगता है, मुझसे मेरी जवानी छीन ली है। मैं बूढ़ा हूँ, यह मुझे पहले कभी लगता ही न था। अब बुढ़ापेके एहसाससे मैं दबा जा रहा हूँ। पहले निराश होना मैं कभी जानता ही न था। लेकिन अब लगता है कि राजकोटमें मेरी आशाकी अन्त्येष्टि हो गई है। मेरी अहिंसाको ऐसी कड़ी परीक्षा देनी पड़ी है जैसी कि पहले कभी नहीं देनी पड़ी थी।

मुख्य न्यायाधीशके पंच-फैसलेमें जिस समितिकी तजवीज है, उसके लिए मैंने पन्द्रह अमूल्य दिन नष्ट किये। पर मैं उससे अभी भी उतना ही दूर हूँ जितना कि पहले कभी था। ऐसी कठिनाइयाँ मेरे रास्तेमें आईं जिनकी कभी आशंका नही थी। पंच-फैसला सरदारकी पूर्ण विजय माना गया था और भारत-भरमें सराहा गया था। लेकिन उसका उपयोग मुझपर मुसलमानों और भायातोंके साथ वादा-खिलाफी करने का इल्जाम लगाने के लिए किया गया है। जो वादा ठाकुर साहबने किया था, वह मेरे दिल्लीसे लौटने पर मेरे दुर्बल कंधोंपर थोप दिया गया। मैंने जो-कुछ कहा था उसका सीधा-सादा अर्थ केवल यही हो सकता था कि मैं ठाकुर साहबकी अपने वादेको पूरा करने में मदद करूँगा, यद्यपि पंच-फैसलेके अनुसार ऐसा जरूरी नहीं है। कारण चाहे कुछ भी रहा हो, पर मुसलमानों और भायातों, दोनोंने ठाकुर साहबको अपना वादा पूरा करने की जिम्मेदारीसे मुक्त कर दिया।

मुसलमानों और भायातोंको जब मैं सन्तुष्ट न कर सका तो मैंने ठाकुर साहबको परिषद्के लिए सात नाम भेजे। उसके जवाबमें, उनमें से छह के बारेमें मुझसे उन्हें राजकोटके नागरिक साबित करने के लिए कहा गया। इस तरहकी आपत्तियोंका कमसे-कम आभास तो मुझे पहले दिया जाना चाहिए था। जो व्यक्ति काफी ईमानदार माने जाते हैं उनके प्रत्येक कथनको यदि चुनौती दी जाने लगे, तो एक-एक मामलेके तथ्योंकी जाँच पूरी करने में एक-एक साल लग सकता है, पर मैंने अपेक्षित प्रमाण भेज दिये हैं।

जब मुझे ऐसा लगने लगा कि मेरे पास कोई उपाय नही रहा है और मेरा धीरज खत्म हो चला है तो मैंने रेजीडेंटको शिकायतका एक पत्र लिखकर यह माँग की कि अधीश्वरी सत्ताके स्थानीय प्रतिनिधिकी हैसियतसे वे वाइसराय द्वारा दिये

१. यह "आई एम डिफीटेड" (मैं हार गया) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। वक्तव्य २५-४-१९३९ के हिन्दुस्तान टाइम्स और हिन्दूमें भी छपा था।

गये आश्वासनोंके अनुसार, मेरी सहायता करें। उन्होंने मुझे भेंटके लिए बुलाया। और जब हम विभिन्न तरीकों और उपायोंपर विचार-विमर्श कर रहे थे तो अचानक मुझे यह विचार सूझा कि समितिके सदस्योंको नामजद करने का अधिकार त्यागकर मुझे यह सन्ताप मिटा देना चाहिए। इसलिए मैंने वह प्रस्ताव रखा जो मेरे खयालसे —और रेजीडेंटकी रायमें भी—उदारतापूर्ण था। वह यह था कि पूरी समितिका चुनाव ठाकुर साहब करें और वह गत २६ दिसम्बरकी विज्ञप्तिकी शर्तोंके अनुसार अपनी रिपोर्ट दे। पर उसकी रिपोर्ट परिषद्को दिखाई जाये, और यदि उसे ऐसा लगे कि रिपोर्ट विज्ञप्तिकी शर्तोंको पूरा नहीं करती है तो उसकी असहमतिसूचक टिप्पणी और मूल रिपोर्ट मुख्य न्यायाधीशके पास निर्णयके लिए भेज दी जायें। रेजीडेंटने मेरा प्रस्ताव दरबार श्री वीरावालाको भेज दिया, परन्तु महाविभव ठाकुर साहबने उसे अस्वीकार कर दिया।

पन्द्रह दिनोंके सन्तापकारी अनुभवोंसे मैंने यह जाना कि यदि ठाकुर साहब और दरबार श्री वीरावाला ऐसा महसूस करते हैं कि उन्हें ऊपरके दबावके कारण कुछ देना पड़ा है, तो मेरी अहिंसा विफल मानी जानी चाहिए। मेरी अहिंसाकी यह माँग थी कि मुझे यह भावना दूर करनी चाहिए। इसलिए जब इसका अवसर मिला तो मैंने दरबार श्री वीरावालाको यह यकीन दिलाने की कोशिश की कि अधीश्वरी सत्ताकी सहायता माँगने से मुझे कोई खुशी नहीं हुई है। अहिंसाके अतिरिक्त, राजकोटसे मेरे सम्बन्धका भी मुझपर उस तरहका अंकुश रहना चाहिए। मैंने उन्हें विश्वास दिलाया कि श्री गिब्सनके आगे रखा गया मेरा स्वतःस्फूर्त प्रस्ताव उसी दिशामें एक प्रयास है। उन्होंने तुरन्त पलटकर कहा : "लेकिन राजा साहबकी समितिकी रिपोर्टसे असन्तुष्ट होने पर, आप उस रिपोर्टकी विज्ञप्तिकी शर्तोंकी रोशनीमें जाँच करवाने के अधिकारका दावा करते हैं, और यदि परिषद् उससे असहमत होती है तो आप यह चाहते हैं कि रिपोर्ट और उससे असहमति—दोनोंकी माननीय मुख्य न्यायाधीश द्वारा जाँच हो। क्या आप इसे दबावकी भावनाको दूर करना कहेंगे? राजा साहब और उनके सलाहकारपर आप पूरा-पूरा विश्वास क्यों नहीं करते? जो आप चाहते हैं वह सब चाहे आपको न मिले, पर जो-कुछ मिलेगा वह उनकी सद्भावनासे युक्त होगा और उसके साथ यह प्रतिज्ञा होगी कि वह पूरा-का-पूरा दिया जायेगा। आपको मालूम है, परिषद्के लोगोंने ठाकुर साहबके और मेरे बारेमें क्या-क्या कहा है? अपने नरेशसे सुधारोंकी इच्छा रखनेवाले लोगोंका क्या यह तरीका होता है?" उनकी वाणीमें कटुता और परिषद्के लोगोंके प्रति तिरस्कारकी भावना थी। लेकिन अपने इस अचानक एहसासके कारण कि मैं अहिंसाका उपयोग ठीक तरह नहीं कर पाया हूँ, मैंने उनके वारको बचा जाने की बजाय उनके तर्कके बलको स्वीकार कर लिया, जो यह दिखाता था कि मानव-स्वभाव मूलतः अच्छा होता है, इस निष्ठाकी मुझमें कमी रही है और अहिंसापर मेरा अपना विश्वास भी कुछ कम रहा है। इस तरह हमारी बातचीत चलती रही और उसमें बहुत-से सुझावोंकी चर्चा हुई। पर वह किसी निष्कर्षपर नहीं पहुँची।

समस्याका समाधान, मुझसे अभी भी उतना ही दूर था। फिर भी जब मैं चलने लगा तो मैं यह महसूस कर रहा था कि हम एक-दूसरेको अब ज्यादा अच्छी तरह समझने लगे हैं और दरबार श्री वीरावालाको समझाने-मनाने की कोशिश करके मैं ठीक ही कर रहा था।

और इसीलिए यह नया रुख मैंने अपने साथी कार्यकर्त्ताओंके आगे रखा।[1] वे अनेक बार मुझे यह बता चुके थे कि दरबार श्री वीरावाला ही राजकोटके सारे अनिष्टकी जड़ हैं और उनके हटने से ही उन्हें पूर्ण स्वराज्य मिल जायेगा। मुझे उन्हें यह समझाने में कोई कठिनाई नहीं हुई कि आप जो सोच रहे हैं वह स्वराज्य नहीं, सुराज्य है। इस बैठकमें, जो कल ही हुई थी, मैंने उन्हें बताया कि यदि आप अहिंसाकी मेरी व्याख्याको स्वीकार करते हैं तो आपको दरबार श्री वीरावालासे पिण्ड छुड़ाने का नहीं बल्कि उनका हृदय-परिवर्तन करने का संकल्प करना होगा। यह आप केवल तभी कर सकते हैं जब आप उनकी अच्छाइयाँ ढूँढ़ने और उन्हें निखारनेकी कोशिश करें। प्रत्येक हिंसाप्रिय व्यक्तिको अप्रभावी बनाने के लिए अहिंसाकी शक्तिमें आपको असीम निष्ठा विकसित करनी होगी। सच्ची अहिंसा अपनेको हिंसाके मुँहमें झोंक देने में है। यदि गायोमें बुद्धि हो तो यह हो सकता है कि इस तरहकी काफी सारी गायोंके खुद शेरके मुँहमें जाने से उसे गायके मांसमें रुचि ही नहीं रहे और उसका स्वभाव बदल जाये। इसलिए दरबार श्री वीरावालाका भय आपको दिलसे निकाल देना चाहिए और अहिंसाकी इस शक्तिमें अपना अविश्वास खत्म कर देना चाहिए कि जो देखने में असम्भव लगता है वह उसे भी प्राप्त कर सकती है।

इस सिद्धान्तको, जो उनके लिए नया था, उन्होंने बड़े ध्यानसे सुना। मैंने उनसे यह नहीं पूछा कि मेरी बातपर उन्हें विश्वास हुआ या नहीं। पर मुझे आशा है कि हो गया है। उनका मुझसे यह पूछना सर्वथा न्यायोचित होता कि 'आपने हमसे जो अनोखा रुख अपनाने को कहा है, उसके सही होने का क्या आपको खुद इतना विश्वास है कि आप पंच-फैसले को फाड़कर फेंक दें और केवल दरबार श्री वीरावालाके हृदयकी सदाशयता पर ही भरोसा रखें?' यदि उन्होंने यह सवाल किया होता तो मुझे यह कहना पड़ता: 'मुझमें अभी अपेक्षित साहस नहीं है। अहिंसाका आविर्भाव केवल साहसी व्यक्तियों में ही होता है।'

इस तरह मैं जर्जर शरीर लेकर, सारी आशा भस्मकर खाली हाथ निकल आया हूँ। राजकोट मेरे लिए एक अमूल्य प्रयोगशाला सिद्ध हुआ है। काठियावाड़की कुटिल राजनीतिने मेरे धैर्यकी कड़ी परीक्षा ली है। मैंने कार्यकर्त्ताओंसे कहा है कि आप दरबार श्री वीरावालाके साथ सलाह-मशविरा करें, मुझे और सरदार पटेलको भूल जायें, और यदि आपको इतना मिलता है जिससे आपकी न्यूनतम माँगें पूरी हो जायें तो आप उस प्रस्तावको, हममें से किसीके भी आगे उसे रखे बिना, स्वीकार

१. देखिए पृ० १८४-७।

कर सकते हैं। दरबार श्री वीरावालाको मैंने बता दिया है कि 'मैं हार गया हूँ। ईश्वर करे, आप जीत जायें! जितना दिया जा सकता हो उतना देकर लोगोंको सन्तुष्ट कीजिए और मुझे तार दे दीजिए ताकि मेरी आशा, जो फिलहाल मर गई लगती है, फिरसे जी उठे।'

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-४-१९३९

२१०. रामदुर्गमें सार्वजनिक हिंसा

रामदुर्गके बारेमें मैंने अबतक एक शब्द भी नही कहा है। डॉ० हार्डीकरने मुझे तार द्वारा यह सलाह दी थी कि जबतक वे मुझे रामदुर्गकी दुर्घटनाके बारेमें न लिखें तबतक मुझे कुछ भी नही कहना चाहिए। और राजकोटका काम इतना ज्यादा रहा कि दूसरे कामोके लिए मुझे जरा भी वक्त नही मिल सका। सर्वश्री दिवाकर, कौजलगी और हार्डीकरकी तैयार की हुई रिपोर्ट मैंने अब ट्रेनमें पढ़ी है। श्री दिवाकरका एक पत्र भी मेरे पास है, जिससे इस काण्डपर काफी प्रकाश पड़ता है। इस दुःखद घटनापर श्री गंगाधरराव देशपांडेने जो नोट लिखा है उसका भी मैंने अध्ययन किया है। प्रजा सघके अध्यक्ष श्री मुन्नावली तथा श्री मगाडीने मुझसे मुलाकात भी की थी। सर्वश्री दिवाकर, कौजलगी और हार्डीकरकी रिपोर्ट एक निष्पक्ष और अपनी हदतक सन्तोषकारक रिपोर्ट है। उस रिपोर्टका उपसंहार इस प्रकार है :

> अन्तमें, हमें ऐसा महसूस होता है कि अधिकारियोंने एक बड़ी हदतक यह गलती की कि उन्होंने जुगतसे काम नहीं लिया, और पुलिसको अपनी मनमानी करने दी। हमारा यकीन है कि अगर उन्होंने जरा और धीरजसे काम लिया होता और प्रजा संघके कार्यकर्त्ताओंकी बातपर विश्वास किया होता, जैसा कि उन्होंने कई बार किया है, तो स्थितिको वे काबूमें ला सकते थे। लेकिन हालाँकि वहाँ उत्तेजना थी, फिर भी हम यह नहीं मानते कि वह उत्तेजना इतनी ज्यादा थी जिससे लोग पशुतापर उतर आते, और दोष लोगोंकी इस कमजोरीका है कि उनके अंदर आसानीसे इतनी अधिक क्रोधाग्नि भड़क उठी। मालूम होता है कि उन्होंने फौरन बगैर सोचे-समझे अफवाहोंपर विश्वास कर लिया और आपेसे बाहर हो गये।
>
> लेकिन बड़ीसे-बड़ी उत्तेजनामें भी किसी भी प्रकारकी हिंसा उचित नहीं ठहराई जा सकती। असल बात तो यह है कि जितनी बड़ी उत्तेजना हो उतना ही बड़ा अवसर और आवश्यकता अहिंसात्मक भावना दिखानेकी है। जबकि हमारा यह आदर्श है, तब हम किन्हीं भी परिस्थितियोंमें किसी छोटीसे-छोटी हिंसाका भी बचाव नहीं कर सकते। ये घटनाएँ तो यही जाहिर करती हैं कि

प्रजा संघ का हिंसाकी उन ताकतोंपर कोई काबू नहीं था, जो लोगोंके दिलोंमें छिपी हुई थीं। यह गहरेसे-गहरे पश्चात्तापका विषय है और निश्चय ही इस दुःखद घटनाका देशी राज्योंमें चलनेवाले प्रजा-पक्षके तमाम आन्दोलनोंपर बुरा प्रभाव पड़ेगा। इस क्षेत्रमें काम करनेवालों के लिए यह एक स्पष्ट चेतावनी है, और हरएकके लिए यह समझने की बात है कि जबतक यह यकीन न हो जाये कि लोगों को अहिंसाका ठीक-ठीक शिक्षण मिला है और वे अनुशासन-भंग नहीं करेंगे, तबतक जन-आन्दोलन कोई शुरू करना बुद्धिमत्ता नहीं है।

मेरे सामने जो सबूत है उनपर गौर करने से मै इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि हिंसाके लिए कितनी ही उत्तेजना क्यों न मिली हो, फिर भी जनताने जो-कुछ किया वह बहुत ही भीषण, क्रूर और जान-बूझकर किया हुआ काण्ड है। दो हजारसे ऊपर ग्रामवासी बदला लेने के निश्चित इरादेसे ही वहाँ इकट्ठे हुए थे। वे अपने प्रधान तथा अन्य कैदियोंको जेलसे रिहा कराने पर तुले हुए थे। ऐसी हालतमें कांग्रेसजन लोगोंकी बर्बरता के दोषसे नही बच सकते। गाँववालों को उनके द्वारा ठीक शिक्षा नही मिल रही थी। उड़ीसाका रणपुर इस दिशामें पहला संकेत था, रामदुर्ग दूसरा संकेत है। इस बातसे किसीने इन्कार नही किया है कि रामदुर्गके राजा साहब कांग्रेसके मित्र थे। वे इससे बेहतर व्यवहारके पात्र थे। हिंसाके लिए उत्तेजना मिली या नही, इससे फिलहाल मुझे कोई सरोकार नही। जो आरोप लगायेगये है वे काफी गम्भीर हैं। लेकिन कितनी ही उत्तेजना क्यों न मिले, कांग्रेसकी नीति यह कभी नही रही कि उसके आधारपर वह सामूहिक हिंसाका औचित्य सिद्ध करे। कांग्रेसकी मौलिक बातोंके साथ अगर हम इस तरह खिलवाड़ करेंगे, तो हम अपने सारे किये-कराये को चौपट कर देंगे। रामदुर्ग-काण्डसे पहले ही मैं यह लिख चुका हूँ कि वायुमण्डलसे मुझे हिंसाकी गंध आ रही थी। हिंसा या असत्यके जरा से भी प्रदर्शनसे मै बड़ा क्षुब्ध हो जाता हूँ। ये दोनों एक-दूसरेसे जुड़े हुए है।

मेरा यह स्पष्ट मत है कि प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंको, और कार्य-समिति बन जाने पर उसे भी कांग्रेसजनोंके मन-वचन-कर्मसे हिंसाको निकालने की सख्त कार्रवाई करनी चाहिए। अखबार मै बहुत कम पढ़ता हूँ, पर जितना भी पढ़ता हूँ उतनेसे ही मालूम पड़ता है कि सत्य और अहिंसाका अक्सर खयाल नही रखा जाता। यह बुराई कैसे दूर हो सकती है, यह मै नही जानता। सम्भव है कि कांग्रेसियों द्वारा संचालित अखबार नैतिक नियंत्रणके पक्षमें हो जायें। मगर मुझे लगता है कि सबसे ज्यादा शरारत गाँवोंमें काम करनेवाले कांग्रेसी कर रहे हैं। उन्हें कठोर अनुशासनमें रखना बहुत मुश्किल नही होना चाहिए।

रामदुर्गमें जो-कुछ हुआ है, मै समझता हूँ कि उसकी निष्पक्ष रूपसे जाँच होनी चाहिए। कर्नाटक प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीको यह मामला हाई कोर्टके किसी जजको सौंपना चाहिए। राजा साहब भी मदद करें, तो इसमें आसानी हो जायेगी। लेकिन अगर वे मदद न करें तो भी सचाईका पता लगाने में कोई कठिनाई नही होनी चाहिए।

रामदुर्गके आन्दोलनका एक और कुपरिणाम हुआ है। उसने कुछ साम्प्रदायिक रूप धारण कर लिया है। वहाँ ब्राह्मण और अब्राह्मण ये दो पक्ष हैं। मेरा खुदका खयाल अबतक यह था कि कर्नाटक इस अभिशापसे अधिकतर मुक्त रहा है। लेकिन मुझे अखबारोंकी जो कतरनें और कागजात भेजे गये हैं, उनसे यह जाहिर होता है कि इस बुराईकी जड़ वहाँ इतनी गहरी चली गई है कि उसका इलाज तुरन्त करने की जरूरत है। मुझसे इस विषयमें पथ-प्रदर्शन करने के लिए भी कहा गया है। तनातनीकी जगहपर स्थितिका ठीक-ठीक अध्ययन किये बगैर पथ-प्रदर्शन करना मेरे लिए धृष्टता होगी। मै केवल इतना ही सुझा सकता हूँ कि अगर वहाँ तनातनीको दूर करने के प्रयत्नमें दिलचस्पी लेनेवाले काफी ब्राह्मण और अब्राह्मण हैं, तो उन्हें प्रभावित इलाकेमें दौरा करना चाहिए, और तनातनीके कारणका पता लगाकर उन्हें दूर करना चाहिए। यह तनातनी देशमें बढती हिंसाकी भावनाका एक चिह्न है।

बम्बई जाते हुए रेलगाड़ीमें, २४ अप्रैल, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-४-१९३९

२११. तार : घनश्यामदास बिड़लाको

बम्बई
२५ अप्रैल, १९३९

घनश्यामदास बिड़ला
लकी
कलकत्ता

पूर्ण विचार-विमर्शके बाद मैंने और सरदारने निश्चय किया है कि कलकत्ताकी बैठकमें[1] उन्हें सम्मिलित नही होना चाहिए।

बापू

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८२२)से, सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की; देखिए पृ० १९८ भी।

२१२. पत्र : मीराबहनको

कलकत्ता जाते हुए रेलगाड़ीमें
२५ अप्रैल, १९३९

चि० मीरा,

मैं तो कुएँसे निकलकर खाईमें गिर रहा हूँ।[1] मेरी कैसी कड़ी परीक्षा हो रही है! तुमने मेरा राजकोटका वक्तव्य[2] देखा होगा। उससे तुम्हें मेरी मानसिक स्थितिकी झलक मिलेगी। जिस बम्बईसे बचने की पहले मैं कोशिश किया करता था, वहाँ रहना आज ताजी हवामें साँस लेने-जैसा था।

मैं अंगूरके रस और ग्लूकोज पर हूँ। इसीसे मुझे बुखार नहीं आता और तबीयतमें अन्य प्रकारकी गड़बड़ी पैदा नहीं होती। पता नहीं, मुझे कबतक फलाहार जारी रखना पड़ेगा।

तुम्हारा लम्बा पत्र बड़ा दिलचस्प है। तुम प्रगति कर रही हो। स्वास्थ्यकी रक्षा कर सकोगी तो कठिनाइयोंपर विजय प्राप्त कर लोगी।

बा, नवीन[3] और धीरू[4] मेरे साथ हैं। कानम रामदासके पास रह गया। इसके लिए वह राजी नहीं था। बहुत रोया। लेकिन ठीक ही हुआ। बा की अपनी हालत भी बहुत अच्छी नहीं है। उम्मीद है कि मैं ३ तारीखको वृन्दावन पहुँचूँगा और राजकोट १२ तक। राजकोटसे निबटने के बाद ही मैं सीमा प्रान्त आ सकता हूँ।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४३७) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० १००३२ से भी

१. देखिए पृ० १८७, पा० टि० १।
२. देखिए पृ० १९०-३।
३ और ४. व्रजलाल गांधीके पुत्र

२१३. पत्र : अमृतकौरको

कलकत्ता जानेवाली गाड़ीमें
२५ अप्रैल, १९३९

प्रिय पगली,

तुम ऐसा मत सोचना कि मैंने तुम्हारी उपेक्षा की है। और कुछ करने का समय ही नही था। राजकोट-सम्बन्धी मेरी ताजी टिप्पणीसे[1] तुम्हें थोड़ी कल्पना हो जायेगी कि मुझे कितनी व्यथा सहनी पड़ी है। और वह अभी खत्म नही हुई है।

मुझे बहुत तेज खाँसी हो गई है, जो छोड़ने का नाम ही नही लेती। केवल फलोंके रसके आहारके बलपर अन्यथा अपने-आपको ठीक रख रहा हूँ। दूध भी नहीं लेता। अपनी शारीरिक शक्तिको बहुत अच्छी तरह कायम रखे हुए हूँ। चिन्ता मत करना। खाँसीके कारण मेरी नीदमें कोई बाधा नही पड़ती।

बा मेरे साथ है और नवीन तथा धीरू भी। उन्होंने आश्चर्यजनक प्रगति की है। अमतुस्सलाम बम्बईमें थी। अब अहमदाबाद जा रही है।

मुझसे ज्यादाकी उम्मीद मत करो। मैं रीत गया हूँ। आशा है, ३ मईको वृन्दावनमें मिलोगी। वहाँ पहुँचने का सबसे अच्छा रास्ता यह रहेगा कि पटना पहुँचकर वहाँ नदी पार करो और फिर सोनपुरसे बेतियाके लिए गाड़ी पकड़ो।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९१२) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२२१ से भी

१. देखिए पृ० १९०-३।

२१४. भेंट: 'स्टेट्समैन' के प्रतिनिधिको[1]

२७ अप्रैल, १९३९

प्रश्न: आपने सरदार पटेलको कलकत्ता न आने की सलाह दी है। इसलिए क्या आप शान्ति मिशनपर कलकत्ता आये हैं?

उत्तर: हाँ, सरदार पटेलके न आने का कारण यह था कि उनका कलकत्तासे दूर रहना देशके सर्वोत्तम हितमें था।

प्र०: क्या आपने परस्पर विरोधी माँगोंमें बीचका मार्ग ढूंढ़ निकाला है?

उ०: मेरी जेबमें इसका कोई समाधान नहीं पड़ा हुआ है। मेरी जेब है ही नहीं। मैं नहीं कह सकता कि श्री सुभाषचन्द्र बोससे मेरी बातचीतका क्या परिणाम होगा। जब परिणाम शीघ्र ही ज्ञात हो जायेगा तो भविष्यवाणी करने का क्या लाभ है?

प्र०: क्या आपने यह कहे जाते सुना है कि सुभाष एक अवांछित व्यक्ति हैं?

उ०: मैंने यह कभी नहीं सुना। उनका चुनाव कांग्रेसने किया। यदि वे अवांछित व्यक्ति होते तो अबतक कांग्रेसमें न रहते। मेरे पास ऐसा विश्वास करने का कोई कारण नहीं है कि सुभाष अवांछित व्यक्ति हैं।

प्र०: क्या श्री बोसने त्रिपुरी चुनाव के बादसे ऐसी इच्छा प्रकट की है कि वे पहलेकी अपेक्षा अधिक मेल-जोलसे काम करेंगे?

उ०: वे अपने सिद्धांतोंके अनुरूप काम कर रहे हैं।

प्र०: क्या बोसका ३४ पृष्ठका नवीनतम नोट शान्ति-वार्त्ताका आधार बन सकता है?

उ०: चौंतीस पृष्ठ? मैंने उन्हें गिना नहीं। पत्र-व्यवहार हमारी बातचीतका आधार अवश्य बनेगा।

प्र०: पण्डित नेहरूने धनबादमें श्री बोससे अभी हालमें जो बातचीत की थी उसका विवरण क्या उन्होंने आपको बताया है?

उ०: हाँ।

प्र०: क्या वह बातचीत अनुकूल मानी जा सकती है?

उ०: बातचीत हमेशा अनुकूल ही होगी। सभी कांग्रेसजन शांतिके लिए काम करते हैं।

१. साधन-सूत्रके अनुसार गांधीजी ने, "जो कुछ अस्वस्थ और थके हुए दिखाई दे रहे थे", यह मुलाकात "बम्बई मेलमें यात्रा करते हुए खड़गपुर और कलकत्ताके बीच" दी थी।

प्र० : श्री सुभाषसे अन्तिम रूपसे बिगाड़ हो जाने पर क्या कांग्रेसमें फूट पड़ जायेगी ?

उ० : जरूर पड़ेगी। परन्तु बिगाड़ होगा ही क्यो ? मुझे आशा है, समझौता हो जायेगा।

प्र० : क्या श्री बोसके आदेशकी अधीनस्थ कांग्रेसी संस्थाओं द्वारा अवहेलना की गई है ?

उ० : मुझे अवहेलना करने के एक भी मामलेकी जानकारी नही है। यदि ऐसा कोई मामला मेरी जानकारीमें आये तो उससे मुझे बड़ा आश्चर्य होगा। वे कांग्रेसके प्रधान है।

प्र० : क्या इसके लिए अप्रत्यक्ष रूपसे आप ही जिम्मेवार नहीं हैं, क्योंकि आपके उपवासके दौरान ही कांग्रेस मन्त्रिमण्डलोंने श्री बोसके अनुदेशोंकी परवाह किये बिना त्यागपत्र देने की धमकी दी थी ?

उ० : प्रधानको बताये बिना त्यागपत्र नही दिये जा सकते। अतः आदेशकी अवहेलना करने का प्रश्न ही नही उठता।

प्र० : सर्वोच्च कांग्रेस कार्यकारिणी, कार्य-समितिके अभावमें नीति-निर्धारण, संघ-व्यवस्था, युद्ध आदि बड़े मामलोंपर कांग्रेसके निर्णयोंमें देरी नहीं हुई है ?

उ० : कुछ देरी हुई है। समितिका न होना एक कारण है, और एसी स्थितिमें देरी होना अनिवार्य है।

प्र० : क्या यह सच है कि म्यूनिख-संकटके दौरान दिल्लीमें समितिका अधिवेशन बराबर चलता रहा, जिससे युद्धके प्रति कांग्रेसके रुखका निश्चय किया जा सके ?

उ० : हाँ, हमने अपनी अहिंसा-नीतिपर पूरी तरह चर्चा की।

प्र० : क्या वर्त्तमान संकटके बारेमें यह कहा जा सकता है कि इसकी वजहसे अंग्रेजोंसे सौदेबाजी करने की कांग्रेसकी शक्ति कम हुई है ?

उ० : इसे मैं "सौदेबाजी" नही, अपितु "समझौता" कहूँगा।

प्र० : जबसे कांग्रेसमें गतिरोध उत्पन्न हुआ है तबसे कांग्रेस प्रान्तीय मन्त्रि-मण्डलोंको नियन्त्रणमें रखने के लिए कोई संसदीय समिति नहीं रही है। क्या इस कारण मन्त्रिमण्डलोंने स्वतन्त्र कार्यवाही की है ?

उ० : ऐसा मेरी जानकारीमें नही हुआ है।

प्र० : मन्त्रिमण्डलोंको सलाह देने के लिए वर्त्तमान तन्त्र क्या है ? क्या वे आपकी या सरदार पटेलकी सलाह माँगते हैं ?

उ० : [कांग्रेस] प्रधान ही वह तन्त्र है। सरदार पटेलकी या मेरी राय नही पूछी जाती। कांग्रेस से अलग हो जाने के[1] बादसे यहाँ मेरी कोई पूछ नही रह गई है।

१. अक्तूबर, १९३४ में; देखिए खण्ड ५९।

प्र० : क्या केन्द्रीय कांग्रेस नई संसदीय समितिके अधीन — जब नई संसदीय समिति बन जायेगी तब — कांग्रेस मन्त्रिमण्डलोंसे उसी भावनासे काम करवा सकेगी जैसी कि पुरानी समितिके अधीन काम करवा लिया करती थी?

उ० : मुझे ऐसा कोई कारण नजर नही आता कि वह ऐसा न करवा सके।

प्र० : क्या यह अच्छी बात नहीं है कि प्रान्तोंको स्वतन्त्र रूपसे कार्यवाही करने की छूट फिरसे मिल गई है?

उ० : उन्हें वैसी स्वतन्त्रता नही मिली है। प्रधानके पास अब भी उतना ही अधिकार है जितना कि पुराने मण्डल के पास था।

प्र० : कांग्रेसमें से भ्रष्टाचारका उन्मूलन करने के अलावा आप और क्या आवश्यक सुझाव देंगे जिससे कांग्रेसको सुगठित संस्थाके रूपमें स्थापित किया जाय?

उ० : कांग्रेसके सुचारु संचालन के लिए भ्रष्टाचार-उन्मूलन पहली शर्त है। एक बार यदि भ्रष्टाचार समाप्त हो जाये तो कांग्रेस अपना विशाल कार्य चला ले जायेगी।

प्र० : क्या कांग्रेसके लिए यह बेहतर नहीं होगा कि वह वास्तवमें जनतन्त्रात्मक संविधान अपनाये या पूर्णतः एक नेताके अधीन रहे?

उ० : कांग्रेसमें जनतन्त्र-भावनाकी कमी नही है। कांग्रेस जनतन्त्रात्मक है।

इसके बाद श्री गांधीने 'स्टेट्समैन' के पाठकोंको निम्नांकित विशेष सन्देश दिया :

मैं आप सबको यह आश्वासन दिला सकता हूँ कि हम व्यक्तियोंकी नहीं, अपितु नीतियोंकी चर्चा करेंगे। श्री बोसने मेरे साथ हुए पत्र-व्यवहारमें सिद्धान्तोंकी ही चर्चा की है। जहाँतक मुझे याद है, मुझे लिखे गये उनके पत्रोंमें व्यक्तियों या शिकायतोंका कोई उल्लेख नहीं था। किन्तु पत्रोंमें सिद्धान्तों और नीतियोंके उल्लेख किये जाने का मुझे स्पष्ट स्मरण है।

फिर श्री गांधीने अपने राजकोटके वक्तव्यको दुहराया :

> अहिंसा तो सिर्फ साहसी लोगोंके अन्दरसे ही जन्म लेती है, और मैंने खाली हाथ, टूटे हुए शरीर, भग्न आशाओंके साथ राजकोट छोड़ा है। मैंने श्री वीरावालाको बताया है: "मैं हार गया हूँ। भगवान करे, आप जीत जायें! लोगोंको अधिकसे-अधिक देकर आप उन्हें सन्तुष्ट करें और इसकी सूचना मुझे दें, ताकि उस आशाको मैं फिरसे जीवित कर सकूँ, जो अभी तो लगता है, मिट ही गई है।"
>
> लगता है, राजकोटने मुझसे मेरी जवानी छीन ली है। मुझे अबतक नहीं मालूम था कि मैं बूढ़ा हो गया हूँ। अब तो मैं अपनी जीर्णताके एहसासके भारसे दबा हुआ हूँ। मुझे नहीं मालूम था कि आशा गँवा बैठना क्या होता है। लेकिन जान पड़ता है, राजकोटमें मेरी आशा भस्म कर दी गई है।

श्री गांधीने आगे कहा:

मैं तो अब टूट चुका हूँ। अब मैं बुढ़ापा महसूस करने लगा हूँ। पहले लोग कहते थे, 'अरे! आप ७० सालके हैं — नहीं १७ के'। अब तो मैं अपने-आपको ८० का महसूस करता हूँ।

श्री गांधीको खाँसी हो गई है। इसपर टिप्पणी करते हुए उन्होंने कहा:

मुझे खाँसी कभी नहीं हुई थी, पर अब १५ दिनसे यह मेरा पीछा नहीं छोड़ रही है।

तब संवाददाताने श्री गांधीसे पूछा — क्या लड़ाई होने जा रही है? इसके लिए उनका उत्तर यह था कि इसके बारेमें पत्रकार सम्भवतः उनसे ज्यादा जानते होंगे। लेकिन, श्री गांधीने आगे कहा, मेरी रायमें शान्तिका सर्वोत्तम उपाय निरस्त्रीकरण है। [उन्होंने कहा:]

यदि मैं तीन बड़े राष्ट्रों, ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस और अमेरिकाको अहिंसापर अपने विश्वासका दशमांश भी दे सकूँ तो युद्ध नहीं होगा।

वे इस बातसे सहमत नहीं थे कि राष्ट्रों द्वारा निरस्त्रीकरण कर लेने पर जर्मनी और इटली दूसरे देशोंमें घुस जायेंगे और ब्रिटिश उपनिवेश भी छीन लेंगे।

जर्मनी और इटलीके लोग युद्ध नहीं चाहेंगे। उनके नेता भी यह बात अनुभव करेंगे। फिर वे युद्ध करने की हिम्मत नहीं करेंगे। सारे ससारमें शान्तिका राज्य होगा। यदि मैं इंग्लैण्डका प्रमुख राजनीतिज्ञ होता तो मैं युद्धकी सम्भावनापर काँपने लगता।

भेंटके अन्तमें श्री गांधीने निम्नांकित सन्देश दिया:

कांग्रेसमें शान्ति हो, रियासतोंमें शान्ति हो, धरतीपर शान्ति हो, मनुष्य-मनुष्यके बीच सद्भाव हो, इसीके लिए मैं लड़ रहा हूँ और इसीके लिए मर मिटूँगा। इस बातको प्रमाणित करने के लिए, यदि मैं अपने अन्दर शक्तिका अनुभव करूँगा तो, मैं पश्चिमी मानवताको, जो संसारके इतिहासमें अबतक अज्ञात परिमाणमें आत्म-विनाश के लिए तैयार हो रही है, ऐसा करने से रोकने के लिए आमरण अनशन भी कर सकता हूँ।

श्री बोससे अपनी बातचीतका हवाला देते हुए उन्होंने कहा:

सारे भारतको और मुझे भी यह आशा है कि बिगाड़ नहीं होगा।

[अंग्रेजीसे]
स्टेट्समैन, २८-४-१९३९

२१५. पत्र : मुन्नालाल गंगादास शाहको

कलकत्ता
२७ अप्रैल, १९३९

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारा पत्र पढ़ गया। तुम कुछ समयके लिए सेगाँव छोड़ दो। इससे शायद तुम्हारे मनको शान्ति मिले। मुझे डर है कि जो गति जानकीप्रसादकी हुई वही कहीं तुम्हारी भी न हो। क्या पांडिचेरी जाना चाहोगे? अथवा रमण महर्षिके पास? मुझे तो कुछ ऐसा ही सूझता है। लेकिन अगर कहीं भी जाने की इच्छा ही न होती हो तो जहाँ हो वहीं बने रहो और सन्तोष करना सीखो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५५९) से। सी० डब्ल्यू० ७०५६ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल गं० शाह

२१६. 'बुद्धिका अपमान'

आशा है, मद्य-निषेधका विरोध करनेवाले लोग एक पत्र-लेखक भाईकी निम्न-लिखित बातें[1] रुचिपूर्वक पढ़ेंगे और उससे लाभ उठायेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-४-१९३९

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने मद्यपानके पक्षमें दी जानेवाली दलीलोंको "बुद्धिका अपमान" बताते हुए समझाया था कि "मद्यनिषेधसे होनेवाली राजस्व-हानिको दूसरे साधनोंसे प्राप्त राजस्व न केवल पूरा कर देगा बल्कि उससे राजस्वकी कुछ वृद्धि भी होगी।"

२१७. तार : अमृतकौरको

कलकत्ता
२९ अप्रैल, १९३९

राजकुमारी अमृतकौर
मैनरविले
शिमला वेस्ट

तीनको तुम्हारे वृन्दावन पहुँचने की आशा रखता हूँ। यहाँसे मैं सोमवारकी रातको रवाना होऊँगा। तुम पटनामें साथ हो सकती हो। काफी अच्छा हूँ। स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९१४)से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७२२३ से भी

२१८. पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको

सोदपुर
२९ अप्रैल, १९३९

प्रिय सुभाष,

तुमने मुझसे पन्तके प्रस्तावके अनुसार कार्य-समितिके लिए नाम सूचित करने को कहा है। जैसा कि मैं तुम्हें प्रेषित अपने पत्रो और तारोंमें कह चुका हूँ, मैं ऐसा करने में अपनेको बिलकुल असमर्थ पाता हूँ। त्रिपुरीके बाद बहुत-कुछ हो चुका है। तुम्हारे विचारोको जानते हुए और यह जानते हुए कि तुममें और अधिकांश सदस्योमें बुनियादी बातोंके विषयमें मतभेद हैं, मुझे लगता है कि यदि मैं तुम्हें ये नाम देता हूँ तो यह तुम्हारे ऊपर एक प्रकारकी ज्यादती होगी। अपने पत्रोमें मैंने इस स्थितिको सविस्तार स्पष्ट किया है। हमारे बीच इन तीन दिनोंमें जो अत्यन्त अन्तरंग बातचीत हुई है उसमें भी ऐसा कुछ नही हुआ है जिससे मेरी रायमें कोई फर्क पड़ता। ऐसी हालतमें अपनी कार्य-समितिका चुनाव करने के लिए तुम स्वतन्त्र हो। मैंने तुमसे यह भी कहा है कि तुम भूतपूर्व सदस्योसे आपसी सहमतिकी संभावनापर चर्चा कर सकते हो, और मुझे यह जानकर जितनी प्रसन्नता होगी उतनी किसी और चीजसे नही होगी कि दोनों पक्षोमें समझौता हो गया है। इस बीच जो-कुछ हुआ है उसमें जाने की मैं कोई आवश्यकता नही देखता। तुम और वहाँ उपस्थित भूतपूर्व

सदस्य अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें यह सारी परिस्थिति सुस्पष्ट कर दें। यहाँ मुझे इतना ही और कहना है कि इस बातसे मुझे गहरा दुःख हुआ है कि आपसी समझौता सम्भव नहीं हुआ। तथापि मैं आशा करता हूँ कि जो-कुछ भी किया जायेगा, पारस्परिक सद्भावनाके साथ किया जायेगा।[1]

सप्रेम,

तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी फाइल सं० ११४५, १९३८; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२१९. पत्र: अमृतकौरको

सोदपुर
२९ अप्रैल, १९३९

प्रिय पगली,

आशा है, तुम अपनेको उपेक्षित महसूस नहीं कर रही होगी। मैं तुम्हें तार भेजता रहा हूँ; वे तुम्हें मिले ही होंगे।

जी० के साथ भेंटकी तुम्हारी टिप्पणियोंको मैंने ध्यानसे पढ़ा है। ब्योरा अच्छा है। हमें अब चीजोंको अपने ढंगसे चलने देना चाहिए। मुझपर यदि शक किया जाता है या मुझे गलत समझा जाता है, तो तुम्हें उसकी परवाह नहीं करनी चाहिए। वह मेरे लिए कोई नई बात नहीं है।

तुम्हें तार[2] भेजने के बाद मुझे पता चला कि मेरा रास्ता बदल सकता है। और मेरा खयाल है कि तुम्हें लखनऊसे बेतियाको सीधी रेल मिल सकती है। यह चीज विचारणीय है। शायद मैं तुम्हें एक और तार भेजूं।

सुशीला आज रात वापस लौट रही है। वह तुम्हें मेरी सेहतके बारेमें सब-कुछ बतायेगी ही।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९१३) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२२२ से भी

१. हिन्दूके २९-४-१९३९ के अंकमें प्रकाशित एक रिपोर्टके अनुसार, कांग्रेसके अध्यक्ष-पदसे अपना त्यागपत्र देने के पहले सुभाषचन्द्र बोसने अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकमें यह पत्र पढ़कर सुनाया था।

२. देखिए पृ० २०३।

२२०. एक पत्र[1]

सोदपुर, कलकत्ता
२९ अप्रैल, १९३९

प्रिय भगिनि,

चि० कृष्णचंद्रके लिखने से मालूम हुआ कि आपकी पुत्रीका देहांत हो गया और आप काफी शोक करती हैं। लेकिन मृत्युका शोक क्या? जिसको जन्म हुआ है उसका मृत्यु तो है ही। किसीका आज, किसीका कल। इसी कारण तो हमको अनुभवी लोगोने सिखाया है कि जन्म-मृत्यु ईश्वरकी अकलित कला है और उसे याद कर हम दोनोंकी बरदास्त करें। प्रियजनोंके मृत्युसे हम अवश्य यह शिक्षा लें कि उनके गुणोंका स्मरण करें और उनका अनुकरण भी करें।

ईश्वर तुमको शांति बक्शे।

आपका भाई,
मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३१३) से। एस० जी० १३० से भी

२२१. जयपुरके राजबन्दी

जयपुर सरकारने सेठ जमनालाल बजाज तथा दूसरे राजबन्दियोंके साथ किये जाने-वाले बरतावके बारेमें जो विज्ञप्ति जारी की है, वह विद्यमान स्थितिके बचावके लिए खास प्रयत्नके साथ लिखी गई मालूम होती है। सेठजी से सम्बन्धित प्रश्न तो बिलकुल सीधा-सादा है। यह स्वीकार किया गया है कि उन्हें ऐसी दूरवर्ती जगह[2] रखा गया है, जहांका पानी, भारतीयोंकी धारणा के मुताबिक बहुत भारी बताया जाता है। यह कबूल कर लिया गया है कि वहाँ पहुँचना आसान नही है। उनका वहाँ कोई साथी भी नही। उन्हें दूसरोंसे अलग अकेला क्यों रखा गया है? क्या वे कोई खतरनाक आदमी हैं? क्या वे कोई षड्यन्त्री हैं? उनको नजरबन्द रखना तो समझमें आ जाता है, क्योंकि उन्होंने उस हुक्मकी उदूली करनी चाही थी, जो उन्हें उनके अपने जन्म-प्रदेशमें प्रवेश करने से रोकता है।

१. शायद यह पत्र कृष्णचन्द्रकी माताको लिखा गया था; देखिए "पत्र: कृष्णचन्द्रको", ८-५-१९३९।
२. मोरनसागर

अधिकारियोंको यह मालूम है कि सेठजी एक आदर्श कैदी हैं, वे जेलके अनुशासनका पूरी तरह पालन करने में विश्वास रखते हैं। उन्हें जिस प्रकार बाहरकी सारी दुनियासे अलग कर दिया गया है, क्या यह निर्दयता नहीं है? कैदियोंको सबसे बड़ी जरूरत ऐसे साथीकी होती है, जो आचार-विचार, रहन-सहन और व्यवहारमें उनका-सा हो। मेरा खयाल है कि उन्हें बगैर किसी बखेड़ेके ऐसे स्वास्थ्यदायक स्थानपर रखा जा सकता है, जहाँ पहुँचना कठिन न हो, साथ ही जहाँ उनके कुछ साथी हों।

लाम्बा जेलमें रखे गये सत्याग्रहियोंके बारेमें जो विशेष दलीलें दी गई हैं, वे तो और भी निकम्मी हैं। यह स्वीकार किया गया है कि उनको जहाँ रखा गया है वह एक पुराना किला है, जहाँ साँपोंकी बहुतायत है। लेकिन उनका कहना है कि ऐसा होने पर भी आजतक किसीको साँपने काटा नहीं है! क्या जयपुर-सरकारकी आत्मामें तबतक सहृदयता और चैतन्य पैदा नहीं होगा, जबतक कि साँप किसीको डसेगा नहीं? यह याद रखना चाहिए कि इन सत्याग्रहियोंको लाम्बा इसलिए भेजा गया था कि अच्छा बरताव पाने के लिए बुरे बरतावके खिलाफ उन्होंने भूख-हड़ताल करने की ढिठाई की थी। अगर मैं बीचमें न पड़ता तो, भूख-हड़ताल जारी रहती।

सत्याग्रहके ध्येयसे सम्बन्धित व्यापकतर सवालका हल होना अभी बाकी है। लेकिन वास्तवमें यह सवाल बहुत बड़ा भी नहीं है। इसका उद्देश्य तो केवल प्रजा संघको मंजूर करवाना है। दरबारने उसके लिए एक ऐसी शर्त रख दी है, जिसको स्वीकार करना अशक्य है। उसकी शर्त यह है कि इसके पदाधिकारी वे लोग नहीं हो सकेंगे, जो राज्यसे बाहरकी राजनीतिक संस्थाओंके सदस्य होंगे। इससे तो खुद जमनालालजी ही प्रजा संघके प्रमुख नहीं रह सकते, क्योंकि उनका सम्बन्ध कांग्रेससे है। दूसरी रियासतोंकी तरह जयपुरमें भी सत्याग्रह मेरे कहने पर[1] स्थगित किया गया है। पर वह हमेशा स्थगित नहीं रह सकता। मुझे अब भी आशा है कि रियासतें अपनी प्रजाके जाग्रत एवं प्रगत समुदायको सन्तुष्ट करेंगी। और मैं जयपुर सरकारको यह सुझाना चाहता हूँ कि सत्याग्रह स्थगित होने पर भी इन सबको जेलमें रखकर वह उलटे रास्तेपर जा रही है। जो भी हो, कमसे-कम उस चीजको जिसे मैं राजबन्दियोंके साथ, जिनमें सेठ जमनालालजी भी शामिल हैं, अमानुषिक बरताव कहूँगा, तुरन्त बन्द कर देना चाहिए।

सोदपुर, ३० अप्रैल, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-५-१९३९

१. देखिए पृ० ८४-५।

२२२. तार : धर्मेन्द्रसिंहको[1]

कलकत्ता
३० अप्रैल, १९३९

महामहिम ठाकुर साहब
राजकोट

आपके तारके[2] लिए कृतज्ञ हूँ। इससे ज्यादा खुशी मुझे और किसी बातसे नहीं होगी कि आप और आपकी प्रजा बिना किसी बाहरी हस्तक्षेपके सम्मानजनक समझौतेपर पहुँच जायें। मेरी पत्नी और मैं काफी ठीक हैं।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-५-१९३९

२२३. तार : वीरावालाको[3]

कलकत्ता
३० अप्रैल, १९३९

दरबार वीरावाला
राजकोट

मैं आपके बारेमें गलत धारणा नहीं बनाऊँगा, और आपसे आशा करूँगा कि सम्मानयुक्त समझौतेपर पहुँचने का आपने जो

१. यह और अगला शीर्षक "राजकोट कॉरस्पॉण्डेन्स" (राजकोट-पत्रव्यवहार) से उद्धृत है।

२. २९ अप्रैलका, जिसमें लिखा था: "मैं आपका हृदयसे कृतज्ञ हूँ कि आपने आन्दोलनकारियोंके नेताओंको यह सही सलाह दी कि वे मुझे शासक मानकर मेरे पास आयें और विभिन्न हितोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले दूसरे सदस्योंको भी अपने साथ लायें।... यदि वे ऐसा करें तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं और मेरे अधिकारी इस बातका भरसक प्रयत्न करेंगे कि उनकी न्यायपूर्ण एवं तर्क-सम्मत माँगें पूरी कर दी जायें।... मेरी तीव्र इच्छा है कि जितनी जल्दी हो सके समझौता कर लिया जाये।"

३. यह तार वीरावालाके २९ अप्रैलके उस तारके उत्तरमें भेजा गया था, जिसमें उन्होंने कहा था कि वे समझौतेके लिए भरसक प्रयत्न कर रहे हैं, किन्तु ढेबरभाई और उनके अनुयायी विघ्न-रूप सिद्ध हो रहे हैं। वीरावालाने यह अनुरोध भी किया था कि गांधीजी वल्लभभाई पटेलको समझौतेके मार्गमें बाधा उपस्थित करने से रोकें।

वचन दिया है, उसे पूरा करेंगे। ढेबरभाईसे नाराज न हों। वे भले आदमी हैं। ठाकुर साहब और उनकी प्रजाके बीच परस्पर सम्मानयुक्त समझौतेके मार्गमें सरदारकी अथवा मेरी बाधा डालने की बिलकुल इच्छा नहीं है। लगभग १२ को राजकोट पहुँचने की सोचता हूँ; लेकिन इस बीच अगर आप मुझे अच्छी खबर भेज दें, तो बात और है।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-५-१९३९

२२४. भेंट: शान्ति राय तथा अन्य लोगोंको[1]

सोदपुर
३० अप्रैल, १९३९

उन्होंने गांधीजी को बताया कि राजनीतिक कैदियोंसे १३ अप्रैलतक अर्थात् जबतक बंगाल सरकारके साथ गांधीजी की वार्त्ता चल रही थी तबतक किसी प्रकारकी हलचल न करने को कहा गया है। वह तारीख निकल गई किन्तु नौजवान लोग बहुत बड़ी संख्यामें अब भी जेलके अन्दर ही सड़ रहे हैं।

उत्तरमें गांधीजी ने कहा कि मुझे तारीख गुजर जाने की बात अच्छी तरह याद है, किन्तु इस विषयमें सुभाषचन्द्र बोस और शरतचन्द्र बोस अपनी ओरसे भरसक कोशिश कर रहे हैं और उनसे सलाह किये बिना मैं कुछ नहीं कर सकता। श्रीयुत शान्ति रायका कहना है कि बातचीतके दौरान गांधीजी ने प्रसंगवश कहा कि इस विषयमें बंगाल सरकारका रवैया "तर्करहित" है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १०-५-१९३९

१. राजनीतिक बन्दी मुक्ति दिवस समितिके संयोजक शान्ति रायने समाचारपत्रोंको एक वक्तव्य दिया था। वे निरंजन सेन एवं अनुकूल चटर्जीके साथ गांधीजी से मिले थे। यह भेंट-वार्त्ता उसी वक्तव्य से ली गई है।

२२५. पत्र : चिमनलाल न० शाहको

रात्रि १-२०, १ मई, १९३९

चि० चिमनलाल,

जैसी कठिन तपश्चर्या तुम करना चाहते हो वैसी जल्दबाजीमें नहीं की जाती। जो अहिंसाका रहस्य समझना चाहता है, उसे पहले यम-नियम आदिका पालन करना सीखना पड़ता है। यह कोई मामूली बात नहीं है। क्या सब इसका पालन एकनिष्ठाके साथ करते हैं? कितने लोग प्रार्थना करते हैं? कितने कातते-पींजते हैं? पड़ोसीसे कितने लोग प्रेम करते हैं? सेगाँवमें हम एक-दूसरेके प्रति कितना प्रेम जताते हैं? ऐसी छोटी मानी जानेवाली बातोंसे हम अहिंसा, सत्य आदिके पाठ सीखते हैं। मेरी सख्ती भी मेरी अपूर्णतासे उत्पन्न होती है। यह भी कारण है जो मैं अपने साथियोंकी शिथिलता सहन कर जाता हूँ। तुम्हारे द्वारा उद्धृत छन्दमें 'यम-नियम, शम, दम, विषम व्रतका' उल्लेख है, उसपर मनन करो। अभी हम लोग वृन्दावन जा रहे हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५६३) से। सी० डब्ल्यू० ७०४९ से भी; सौजन्य : चिमनलाल न० शाह

२२६. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

१ मई, १९३९

चि० कान्ति,

रामचन्द्रन्‌के पत्रकी नकल इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। मुझे मालूम नहीं है कि तूने मेरी सलाहके मुताबिक उन्हें पत्र लिखा या नहीं। यदि न लिखा हो तो अब लिख देना। रामचन्द्रन्‌को शान्त करना तेरा कर्त्तव्य है। क्या सरस्वती उन्हें पत्र लिखती है? उस कुटुम्बको अपना दुश्मन समझने से तो काम नहीं चलेगा। तूने जो भूल की है यदि तू उसका सच्चा प्रायश्चित्त करेगा तो उत्तरोत्तर उन्नति करेगा। तुझमें जो हठ, अहंकार आदि है, उन्हें नरम पड़ना चाहिए। सरस्वतीमें गम्भीरता आनी चाहिए। यदि तू मुझे पत्र भी न लिखे तो मुझे चिन्ता तो होगी ही।

इस समय वृन्दावन जाने की तैयारी हो रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७३५९)से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

२२७. तार : उ० न० ढेबरको

कलकत्ता
१ मई, १९३९

उ० न० ढेबर
राजकोट

तुम्हें हिम्मत नहीं हारनी चाहिए। तुम्हें मेरे लौटने तक संकल्पपूर्वक अपनी योजनाके अनुसार काम करते रहना चाहिए।[1]

बापू

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१८७) से; सौजन्य : द० बा० कालेलकर

२२८. तार : उ० न० ढेबरको

मोतीपुर
२ मई, १९३९

ढेबरभाई, वकील
राजकोट

तुम्हारा तार मिला। कालिदासभाईको तार भेजा है कि परिषद्के लोगोंसे सहयोग करें। जो बोझ तुम्हें उठाना है, उसे उठाने की अपनी क्षमताका खयाल रखते हुए तुमसे अधिकसे-अधिक जितनी बने उतनी रियायत करो। यहाँसे जो-कुछ भी कर सकता हूँ कर रहा हूँ। अन्तिम रूपसे समझौता न होनेपर निश्चित रूपसे लौट रहा हूँ। वृन्दावन, चम्पारनके पतेपर तार दो।

बापू

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१८८)से; सौजन्य : द० बा० कालेलकर

१. गांधीजी वृन्दावन (बिहार) जा रहे थे; देखिए पिछले दो शीर्षक।

२२९. तार : वीरावालाको

वृन्दावन, चम्पारन
३ मई, १९३९

दरबार श्री वीरावाला
राजकोट

आपका तार[1] मिला। मेरे तारोंको साथ मिलाकर पढ़ना चाहिए। खुद नया तरीका निकाल रहा हूँ। बीचमें दखल न देने की मेरी इच्छाका यह अर्थ नही कि जो लोग पथ-प्रदर्शन चाहते हैं उनका पथ-प्रदर्शन करने से इन्कार कर दूँ लेकिन मैं चाहता हूँ कि ढेबरभाई तथा परिषद्के अन्य लोग अपने ही साधनोंपर निर्भर रहें और मुझपर या सरदारपर निर्भर रहे बिना काम करें। जब वे ऐसा करेंगे तब हमारी और आपकी विजय होगी, लेकिन आप परिषद्के लोगोंको नीची नजरसे देखेंगे और उन्हें बदमाश मानेंगे तो वे ऐसा नही कर पायेंगे। विज्ञप्तिके अनुसार ढेबरभाई रियासतकी प्रजा भले ही न हों लेकिन वे कोई बाहरी आदमी नहीं हैं। इसके अलावा वे मेरा प्रतिनिधित्व करते हैं और केवल वे ही एक व्यक्ति हैं जिन्हें मैं इस कामके लिए काफी अच्छी तरह जानता हूँ। मेरा अनुरोध है कि आप उनका विश्वास करें। उनमें एक दोष है। वे मेरा या सरदारका बहुत ज्यादा सहारा लेते हैं। सरदारने उन्हें बताया है कि अगर उन्हें सलाहकी जरूरत हो ही तो वे केवल मुझसे ही पूछें। मैं उन्हें आत्मनिर्भर बनाने का प्रयत्न कर रहा हूँ। मैं राजकोट नही आना चाहता लेकिन मेरा न आना इस बातपर निर्भर है कि आप न्याय और उदारताका व्यवहार करें और समझौतेको कार्यान्वित करानेके अपने वादेको माननीय लोगोंको अपमानित

१. वीरावालाके ३ मईके तारमें कहा गया था कि "ढेबरभाईके नाम आपका तार प्रकाशित हुआ है। उसे पढ़कर ठाकुरसाहबको और मुझे दुःखद आश्चर्य हुआ। तारमें कहा गया है कि उन्हें आपकी वापसी तक अपनी योजनाके अनुसार दृढ़तापूर्वक काम करना चाहिए। यह तार ठाकुरसाहब तथा उनकी प्रजाके बीच सीधे समझौतेके आपके पहलेके निर्देशके विपरीत है।. . ."

करके नहीं, बल्कि उनके साथ उनकी प्रतिष्ठाके अनुरूप व्यवहार करके पूरा करें।

गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१९०)से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर। सी० डब्ल्यू० ७८२५ से भी; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

२३०. भाषण: ग्रामोद्योग प्रदर्शनीके उद्घाटन-समारोहके अवसरपर, वृन्दावनमें[1]

३ मई, १९३९

भाइयो और बहनो,

बहनें तो बहुत नहीं आई हैं। जो थोड़ी आई हैं वे ही इसे सुन लें। जो एक नोटिस मैंने सुनी है कल निकली थी, प्रजापतिबाबूके[2] नामसे, लेकिन वह उनकी निकाली नहीं थी। उसमें लिखा था यहाँ तो प्लेग चल रही है। न तो गांधी सेवा संघकी मीटिंग होगी न प्रदर्शनी होगी। पानीका इन्तजाम नहीं होगा। और हो तो भी यहाँका पानी पीना नहीं चाहिए। यहाँके किसी मित्रने बाँटी, उसे तो मित्र ही कहना चाहिए, दुश्मन कैसे कहें? उससे यह डर रहा कि लोग नहीं आयेंगे। वे ऐसा समझेंगे कि प्रदर्शनी मौकूफ हो गई। मुझसे कहा गया कि प्रदर्शनी आज नहीं खोलनी चाहिए। कल खोली जाय। मैंने कहा कि प्रदर्शनी तो खोल दें। पाँच ही लोग आयें, हम लोग तो आ ही गये हैं। यहाँ प्रवन्ध तो आप देख ही रहे हैं कि ज्यादा लोगोंके लिए किया गया है। मैं प्रदर्शनी थोड़ी-सी देखकर आ गया। ज्यादा न देख सका। खुलासेमें व्याख्यान देना डाक्टरोंने मना कर दिया है। इसलिए बहुत तो नहीं कह सकूँगा। मुझे तो यहाँ आना भी मना किया गया था। लेकिन इतने बरसोंके बाद आया हूँ तो इस लालचको भी नहीं छोड़ सकता था कि आपको देख लूँ और कुछ सुना दूँ। बहुत बरसोंकी बात है जब मैं पहले चम्पारनमें आया था। उस वक्त (आपमें से) कुछ लोगोंका जन्म नहीं हुआ था। उस वक्त मैंने इसी बातपर जोर दिया था कि लोग अपना जो समय बच जाता है उसका उपयोग करें। उस वक्त इसके लिए करघा लिया था। चरखाका ज्ञान नहीं था। सूत कैसे कातना हम नहीं जानते थे। जिस मनुष्यके मार्फत इस कामका आरम्भ

१. इस प्रदर्शनीका आयोजन कुमार बागमें गांधी सेवा संघकी ओरसे किया गया था। इस अवसर पर कस्तूरबा गांधी, राजेन्द्रप्रसाद, वल्लभभाई पटेल और गांधी सेवा संघके अध्यक्ष किशोरलाल मशरूवाला भी उपस्थित थे। अधिवेशन सवेरे हुआ था।

२. गांधी सेवा संघके संगठनकर्ता प्रजापति मिश्र

हुआ उस छोटेलालको[1] कोचरबसे बुला लिया था। वह बड़ा उद्योगी आदमी था। जो भी काम उसके हाथमें दें उसे समाप्त करके ही रहता था। लेकिन उसके लिए भी यह काम कठिन था। छोटेलाल तो बेचारा चला गया लेकिन उसका काम रह गया। उसका काम पूरा नही हुआ। लेकिन फल तो अच्छा ही आया। उस समय बिलकुल निराशा थी। लोग बड़े आलसी थे। और चम्पारनके लोग जरा आलसी हैं। लोग मेरे पास आकर बैठे रहते थे, मुझे परेशान करते थे, मैं उनसे कहता था कोई काम तो सीखो। इसलिए मैंने छोटेलालको बुलाया। लेकिन बेचारे छोटेलालकी कौन सुने? छोटेलाल तो मर गया लेकिन उसका काम तो बाकी रहा है। मैं छोटेलालका पुण्य स्मरण आपको कराता हूँ।

इसीलिए मैं आप सबको आमंत्रण करता हूँ कि आप सब प्रदर्शनी देखिये। प्रदर्शनी कोई बड़ी नही है। मैं वहाँसे कोई स्फूर्ति लेकर नहीं आया हूँ। लेकिन चम्पारनके लिए बड़े कामकी चीज है। चम्पारनके लोग देखें कि कौन-कौन-सी चीजें बनने लग गई हैं। जैसे निर्दोष चमड़ा भी बनता है। जिसमें गोरू (गाय-बैल) को कत्ल नही करते उसे मैं निर्दोष चमड़ा कहता हूँ। गोरूके मरने पर उसको खोल कर उसकी हड्डीका उपयोग करते हैं, मांसका उपयोग करते हैं, चमड़ेका उपयोग करते हैं, सबका उपयोग करते हैं। इस कामको एक भूमिहार ब्राह्मण चलाता है। यह देखकर मुझे बड़ी खुशी हुई कि ताँत कोई बनाना नही जानता था। वह तो ताँत भी बना लेता है। और बहुत अच्छी बनाता है। प्रदर्शनीमें एक तकली बनानेका औजार भी मैंने देखा। वह छोटा-सा औजार है। कोई बड़ी चीज नहीं है। दिन-भरमें छह-सात तकलियाँ बना लेता है, और अपना पेट भर लेता है। शायद चार आना कमा लेता होगा। शायद उतनेसे उसे सन्तोष होता हो। लेकिन मुझे संतोष कहाँसे हो? मैं तो एक आना फी-घण्टा देना चाहता हूँ। पर सबको काम कहाँसे दें। जब आप सब लोग प्रामाणिक बन जायें और खद्दर पहनने लगें, और समझें कि दरिद्रनारायणकी सेवा करना है तब उन्हें काम मिलेगा। यहाँ तो जापान, इंग्लैण्ड और अहमदाबादकी मिलोंका कपड़ा आता है। आप उसे सस्ता कह कर खरीदते हैं। और गरीब लोग जिसे बनाते हैं वह खादीको आप महँगी मानते हैं। तब तो मैं कहता हूँ, आप हिन्दुस्तानमें रहने लायक नहीं हैं। धनवानोंकी बनाई हुई चीज आप सस्ती बतलाते हैं। मेरा अर्थशास्त्र यह नहीं मानता। अगर इसे आप समझते हैं तो अपना कर्त्तव्य देख लें। गरीबोंके हाथकी बनी चीजें ज्यादा पैसा देकर मोल लेना यही मेरा अर्थशास्त्र है।

ऐसी बहुत-सी चीजें प्रदर्शनीमें हैं। नेपालका कागज है। हिन्दुस्तानमें तो नहीं पाइये सारी दुनियामें भी नही पाइये। हाथसे बने हुए उसके समान दूसरे कागज नही हैं। रेशमके जैसे बने हैं। देखने लायक हैं। चाहे तो आप उसे एयर मेलसे भेज सकते हैं।

१. छोटेलाल जैन, जिन्होंने ३१ अगस्त, १९३७को आत्महत्या कर ली थी; देखिए खण्ड ६६, पृ० १०४-६।

और एक चीज है। आप एक पेय वहाँ पी सकते हैं। उसे नीरा कहते हैं। बिहारमें लाखों ताड़के पेड़ हैं। उनका यह रस है। उससे शराब भी बनती है। लेकिन नीरा शराब नहीं है। मेरे पास एक ब्राह्मणका लड़का है। उसने अपना सारा जीवन उसके लिए समर्पित कर दिया है। उसमें शराबका इतना ही अंश नही है। शराब तो किसी भी चीजकी बनायी जाती है। द्राक्षके रसकी भी बनती है। चावलका पानी है उससे भी बनती है। उसके ऊपर क्रिया करनेसे उसकी शराब बन जाती है। नीराका शहद-जैसा गुड़ बनता है। गन्नेका गुड़ होता है उससे यह अच्छा होता है। गन्नेका गुड़ ज्यादा मीठा होता है। यह अच्छा होता है। करोड़ो रुपयोंका बन सकता है। गन्नेकी चीनी निकम्मी चीज है। खाने के कामकी नही है। गुड़ अच्छा है। उससे क्षार मिलता है। गुड़ खाने से कोई आतिशी नही होती। चीनीसे होती है। नीराका गुड़ कैसे बनता है यह आप जाकर देखें ऐसी मेरी सिफारिश है। कोई कहता है ताड़में से जो गुड़ निकलता है वह मादक है। यह झूठी बात है। आपको मेरी सलाह है कि आप वह जरूर खायें। डाक्टर लोगोंने मुझसे कहा है कि गुड़ खाओ। मैं यही गुड़ नित्य खाता हूँ, पर उकता नहीं जाता। गन्नेका रस बहुत मीठा होता है। यह उतना मीठा नही होता। कुदरतने यह चीज ही ऐसी बनाई है कि वह मिलसे नहीं बनाई जाती। वह घरपर ही बन सकती है। जहाँ ताड़के पेड़ हों वहाँ वह बन सकता है। आन्ध्र देशमें हजारों ताड़के पेड़ हैं वहाँ बनता है। बिहारमें लाखों पेड़ हैं। यहाँ भी वह बन सकता है। हमारी कंगालियत हम इस तरह बिलकुल नाबूद कर सकते हैं। कंगालीशाही पर यही एक इलाज है।

एक आना देकर सारा प्रदर्शन देख सकते हैं। और एक चीज देखने लायक है। वहाँ तेल निकलता है। ऐसी कई चीजें हैं जो देहातमें बन सकती हैं। इन सब चीजोंका अगर हम पुनरुद्धार करें तो हम धनवान तो नहीं बनेंगे लेकिन अपनी गरीबीको नष्ट कर सकते हैं। आज हमारे पास पूरा खाना नही है, औरतोंके पास पूरा कपड़ा नहीं है। वह मिलने लगेगा। चाँदी, सोना, या रुपये-पैसे नही मिलेंगे। लेकिन चाँदी, सोना इस संपत्तिके सामने कोई चीज नही है। जिस राष्ट्रमें ये चीजें बनती हों उसीके पास असली दौलत है। वही सच्चा मालदार है। यह सब बातें आप प्रदर्शनमें जायेंगे तो सीख सकेंगे। इतना कहकर मैंने प्रदर्शनी खोल दी ऐसा आप समझें।

गांधी सेवा संघके पंचम वार्षिक अधिवेशन (वृन्दावन, बिहार) का विवरण, पृ० २-४

२३१. भाषण : गांधी सेवा संघके अधिवेशन, वृन्दावनमें[1]

३ मई, १९३९

भाइयो और बहनो,

आपन किशोरलालभाईका व्याख्यान सुना। उस व्याख्यानमें जो विषय आये हैं उनपर मैं आज कुछ नही कहना चाहता। और न आजके बाद भी। कल रातको मेरे सामने जो चार-पाँच प्रश्न रखे गये हैं, उनके विषयमें संक्षेपमें कुछ कहना चाहता हूँ। लेकिन उससे भी पहले मैंने राजकोटके बारेमें जो-कुछ लिखा है, उसे अगर यहाँ दुहरा दूँ तो आपको पता चल जायेगा कि मेरी आजकी भूमिका क्या है। किशोरलालने अपने व्याख्यानमें जो एक बात लिखी है, उसकी ओर मैं आपका ध्यान दिलाता हूँ। उन्होंने कहा है कि अगर हम सच्चे अहिंसक हैं तो जो अपनेको हमारा शत्रु मानता है उसका दिल हमारी अहिंसाके सामने प्रतिदिन पिघलना चाहिए। अहिंसा का स्वभाव ही यह है कि वह दौड़-दौड़कर हिंसाके मुखमें चली जाये। और हिंसाका स्वभाव है कि दौड़-दौड़कर जो जहाँ मिले उसको खा जाये। अहिंसक प्राणी आपसमें अपनी अहिंसाका प्रयोग नही कर सकते। क्योंकि वे सभी अहिंसक होते हैं। लेकिन जब अहिंसक प्राणी हिंसक प्राणीके सामने खड़ा हो जाता है तब उसकी परीक्षा होती है। मैं यह सब शुरूसे ही मानता आया हूँ और अपने जीवनमें अहिंसाके अनेक प्रयोग भी करता आया हूँ। लेकिन मैं यह नहीं कह सकता कि मुझे हमेशा सफलता मिली। सफलता इस अर्थमें कि प्रतिपक्षीका हृदय पिघल जाय। मैं हमेशा जिस तरहसे इस चीजको मानता था कि उसी तरहसे प्रयोग कर सका या नहीं इसके विषयमें भी मेरे मनमें शंका है। मैं जिस हदतक पहुँचना चाहता था वहाँ तक नही पहुँच सका ये सब खयाल राजकोटमें मेरे दिलमें अधिक जोरोसे पैदा हुए।

मैं बार-बार अपने दिलसे पूछता था कि दरबार वीरावालाके दिलको पिघलाने में हम अयशस्वी क्यो हुए। मुझे सीधा उत्तर मिला कि हमने उसके साथ शुद्ध अहिंसाका व्यवहार नही किया। जो अपने-आपको सत्याग्रही कहते हैं वे भी वीरावालाको गालियाँ दे लेते थे। मैं खुद भी ऐसी चीजोंको कहता आया हूँ। मैंने सबकी जिह्वापर काबू नहीं रखा। अपने जबान सम्हालने की कोशिश अवश्य करता रहा हूँ। लेकिन अपने साथियोंकी जीभपर काबू नहीं रखा। इस तरहकी बातें

१. गांधी सेवा संघका पाँचवाँ अधिवेशन ३ से ७ मई, १९३९ तक वृन्दावनमें हुआ था। महादेव देसाई द्वारा तैयार किया गया इस भाषणका सार हरिजनके १३-५-१९३९ के अंकमें "द न्यू टेक्नीक" (नई कार्य-पद्धति) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

जबानसे निकालने में हम अहिंसाको भंग कर रहे हैं ऐसा भी कई सत्याग्रही नही मानते। मैंने इन बातोंकी उपेक्षा की यह मेरी शिथिलता है। अलीबन्धुओंका ही दृष्टान्त लीजिए। उनकी जबानमें काफी उग्रता भरी थी। उनके साथ मेरा गाढ़ परिचय था। एक जमानेमें वे मुझसे कुछ भी छिपाते नही थे ऐसा प्रमाणपत्र मैं आज भी दे सकता हूँ। हम जब खिलाफतके बारेमें दौरा करते थे तो वे सरल चित्तसे जो-कुछ उनके मनमें चलता रहता था, कह डालते थे। अगर उनके मनमें कोई घोर विचार आये तो उसे भी सुना देते थे। इस तरहके कुछ मीठे-मीठे स्मरण आज भी मेरे पास पड़े हैं। बादमें मेरी अहिंसा और सत्यके बारेमें, और मुसलमानोंके प्रति मेरे प्रेमके बारेमें उनके विचारोंमें काफी परिवर्तन हो गया। बादमें बहुत-से कटु अनुभव आये उनसे हमारे पुराने सम्बन्धका माधुर्य कम नही होता। उन्होंने मेरे सत्य और अहिंसाके बारेमें मुसलमानोंमें काफी कटुता पैदा की। वह सब मैं भूल गया हूँ। इसी तरह कई दूसरे साथी भी काफी कठोर भाषाका प्रयोग करते थे। प्रतिपक्षीको चाहे जो कह डालते थे।

मतलब यह है कि मुझको इस बारेमें जैसा सख्त होना चाहिए था वैसा मैं नही रहा। हमारे लोग जबानके बाहर जबतक नहीं जाते थे तबतक मैंने उनके बोलने पर ध्यान नही दिया। वाचिक हिंसाके बारेमें मैं उदासीन ही रहा। पीछे वही आदत हो गई। इसलिए उस तरफ ध्यान देना भी छोड़ दिया।

जब मैंने राजकोटमें गिब्सन साहबके सामने यह बात रखी कि ठाकुर साहब अपने मर्जीकी कमिटी बना लें तब एकाएक मुझे नई रोशनी मिली। गिब्सन साहबने भी स्वीकार किया कि मेरी तजवीज एक खिलाड़ीकी दरखास्त (स्पोर्टिंग ऑफर) थी। उससे पहले मैं जो-कुछ कर रहा था वह बात मेरे जीवनमें स्वयंसिद्ध है। याने अपना काम बनाने के लिए ब्रिटिश सल्तनतको भी मैंने उसका धर्म बतलाया। प्रजाकी रक्षा करना उसका धर्म है। इसीलिए वाइसरायको तार दिया। ब्रिटिश सरकारसे मैंने कोई भीख नहीं माँगी। उनके कर्त्तव्यका उनसे पालन कराया। लेकिन उनकी मददसे ठाकुर साहबपर या यों कहिए कि दरबार वीरावालापर दबाव डाला यह उसमें बड़ा-सा दोष रह गया। मुझे बार-बार लगता था कि यह जो प्रयोग मैं कर रहा हूँ वह खतरनाक है। इसलिए गिब्सन साहबके पास गया और उनसे कहा, ठाकुर-साहब अपनी कमिटी बना लें। यह एक नई बात मेरे दिलमें और देशके जीवनमें आई। मुझे एक नया साधन और नया तरीका मिला। मैंने अपने मुकामको बदल दिया।

लेकिन आज भी मैं ग्वायर-निर्णयको फाड़कर फेंक देनेको तैयार नही हूँ। उससे लाभ उठाना चाहता हूँ। इतना तो हृदयदौर्बल्य मुझमें है। लेकिन मैं क्या करूँ? मैं तो अपने हृदयका ही पालन कर सकता हूँ। लेकिन अगर मुझमें अहिंसाके आदेशका पालन करने की हिम्मत आ जाये तो मैं जो निर्णय लाया हूँ उसे फाड़ दूँ या अंगार लगा दूँ। मुझे वीरावालाको अभयदान देना चाहिए था। उससे कह देना चाहिए था कि यह लो ग्वायर-निर्णयको फाड़ दिया। अब मुझे

ब्रिटिश सल्तनतसे कोई मतलब नहीं। अब अगर सत्याग्रह भी करना पड़े तो आपके सामने करूँगा। वह मेरा दिली प्रयोग होगा। राजकोटके राज्याधिकारियोंके हृदय-परिवर्तनकी कोशिशमें मैं मर भी जाऊँ तो क्या हानि है? मैं अबतक अपने दिलको उसके लिए तैयार नही कर सका हूँ कि राजकोटके मामलेमें मैं ब्रिटिश सरकारकी मदद नही चाहता। लेकिन मेरे दिलमें यह बात उबल रही है। अब मेरे लिए राजकोट ही शुद्ध अहिंसाकी अपूर्व प्रयोगशाला है। मेरी बुद्धि कहती है कि मैं वही पूर्ण अहिंसाके प्रयोग करूँ। दुनिया मुझे पागल भले ही कहे। लोग भले ही मेरा मजाक करें कि इतनी मेहनतसे जो चीज लाया था उसे फेंक रहा है। मेरी बुद्धि तो कहती है कि मुझे ऐसा ही करना चाहिए। लेकिन अबतक हृदय नही तैयार होता। यह मेरे हृदयकी कमजोरी है। इसका मतलब यह है कि हमारी अहिंसामें कुछ कमी जरूर रह गई है। इसीलिए राजकोटमें हमारा प्रयोग शुद्ध नही रहा और यशस्वी नही हुआ। सारा दोष वीरावालाका ही नहीं है। अगर हम शुद्ध अहिंसाका प्रयोग करें तब देखें वह क्या करता है? ऐसा शुद्ध प्रयोग मैं यहाँ चम्पारनमें बैठे-बैठे नही कर सकता। राजकोटको ही मुझे अपनी प्रयोगशाला बनाना होगा। लेकिन आज मेरा हृदय नही बताता कि मैं यह सब करूँ। यह मेरे हृदयदौर्बल्यकी निशानी है। इसमें शक नही कि राजकोटके मामलेमें हम कही-न-कही भूल कर रहे हैं। उसे सुधारने की हिम्मत हमें दिखानी चाहिए।

जो बात राजकोटको लागू है वही कांग्रेसके क्षेत्रमें भी लागू करनी चाहिए। कांग्रेसमें भी विखवाद पैदा हो गये है। उसके लिए भी हम सब जिम्मेवार हैं। जो अपनेको गांधीवादी कहते है उनकी जवाबदारी इसमें कम नही है। मैं आपसे फिर कहता हूँ कि आप गांधीवादी नाम छोड़ दें। गांधीवादी नाम निकम्मा है। आप अहिंसावादी कहलाइये। गांधी तो निकम्मा है। मैं अपूर्ण हूँ। भले-बुरेका, शक्ति और दुर्बलताका, जोर और कमजोरीका सबका मिश्रण है। इसलिए आपका दावा यह हो कि आप सत्यार्थी है, सत्यवादी है, अहिंसार्थी है, अहिंसावादी है। यह दावा काफी हो जाता है। गांधीवादी निरर्थक शब्द है। अहिंसामें ऐसा कोई मिश्रण नही होता। आप अहिंसाकी दृष्टिसे अपना आत्मपरीक्षण करें, तो आपको मालूम होगा कि आज कांग्रेसमें जो तिरस्कार पैदा हुआ है उसके लिए हम ही जवाबदार है, दूसरे नही। क्या आप सचाईसे कह सकते है कि कांग्रेसमें आपने अहिंसाका प्रयोग किया? दूसरोंके जो तीर आये उनके सामने क्या आप सीधे छाती खोलकर खड़े रहे? क्या उन तीरोको इधर-उधर मोड़कर टालने की कोशिश नही की? क्या हमने दूसरोंकी टीका-टिप्पणीका स्वागत किया? — नही। हमने अपनी जिह्वासे उनका मुकाबला किया। अगर किसी तीसरेने उनकी टीका की तो हमें अच्छा लगा। ये सब हिंसाकी निशानी है। आप कह सकते है कि अबतक तो मैंने ऐसी कोई कठिन परीक्षा नही रखी थी। मेरी भाषामें भी कठोरता कभी-कभी आ ही जाती है। लेकिन वह मेरा दोष है। अहिंसाका नही। आप यह भी कह सकते है कि हमने तो अहिंसाका पालन इस मर्यादातक करने का दावा कभी नही किया था। लेकिन यह भी मेरी कार्य-

पद्धतिका दोष है। इस विषयमें मैं कुछ ढीला रहा। हम अपने दोषोंको देखें। उन्हें अहिंसा-तत्त्वके दोष न समझें। अपने दोषोंके कारण जगत्‌में अहिंसाकी निन्दा न करायें। कांग्रेसमें हमारे जो दूसरे भाई हैं उनके दोषको तिनका या रजकण समझकर दरगुजर करें। अपने दोषको पहाड़के समान समझें। दूसरे हमको अपना प्रतिपक्षी मानें तो भी हम उन्हें अपना प्रतिपक्षी न समझें। हिंसा तो जैसी उनके अन्दर है वैसी हमारे स्वभावमें भी भरी पड़ी है। साँपका फुंकारना ही स्वभाव है। लेकिन हमने तो अहिंसाकी शपथ ली है। हम उस स्वभावको जीतना चाहते हैं। हमारा तो यह दावा है कि हम राजाओंका रक्षण करेंगे, भक्षण नही करेंगे। हम तो उनके हृदयपरिवर्तनकी भी बातें करते हैं। लेकिन मुझे डर है कि हम हृदयपरिवर्तनकी बात केवल इसलिए करते हैं कि वह एक रिवाज हो गया है। अपने दिलमें उसे नहीं मानते। यह हमारी हिंसाकी निशानी है। सचमुच तो हम अपने दिलसे यह आशा भी नहीं करते कि इन राजाओं का दिल कभी बदलेगा। कांग्रेसमें जो हमारे दूसरे भाई हैं उनके लिए भी हमारा यही खयाल है। मैं आपसे साफ कहना चाहता हूँ कि यह सब हिंसाकी निशानी है। और इसीलिए कांग्रेसमें इतना तिरस्कार पैदा हो रहा है।

मै प्रतिदिन यही सोच रहा हूँ और इसीलिए एक नई कलाका प्रयोग दरबार वीरावालाके साथ कर रहा हूँ। आप विश्वास रखिए कि मै डरपोक बनकर राजकोट-प्रकरणसे भागनेवाला नही हूँ। अपने साथियोंको इस तरहसे दगा देनेवाला नही हूँ। ऐसी विपरीत बात नहीं होगी। यदि मै ऐसी कुछ बात करूँ तो आप यह निश्चित समझ लीजिए कि मुझे बुद्धिभ्रंश हो गया है। मुझे बुढ़ापा तो आया ही है। लेकिन बुद्धिका भी विनाश हो रहा हो ऐसी प्रतीति बिलकुल नहीं है। मैं बड़ी सावधानीसे अपना काम कर रहा हूँ। आखिर अंजाममें हम लड़नेवाले तो हैं। लेकिन हमें अपनी युद्धनीति बदलनी होगी। दुबारा नये सिरेसे व्यूहरचना करनी होगी। इसलिए राजकोटमें जो साथी हैं उनको बल मिले ऐसा मैं कर रहा हूँ। यह बात आप समझ लें इस-लिए कुछ विस्तारके साथ कह दी है।

इस भूमिकाके बाद अब संघके बारेमें कुछ कहूँगा। इस भूमिकापर से आपको पता चलेगा कि मै आज क्या सोच रहा हूँ। मुझे ऐसा लगता है, हमें कुछ हटना होगा। हुबलीमें तो मैंने यह कह दिया था[1] कि हमें अपने क्षेत्रका कुछ विस्तार करना चाहिए। राज्यप्रकरणमें भी दखल देना चाहिए। लेकिन यदि हम राज्यप्रकरणी क्षेत्रमें कूद पड़े हैं तो वहाँ भी हमें अपनी अहिंसाका ही प्रयोग करना चाहिए। इस विषयमें हमें बड़ी सख्तीसे काम लेना चाहिए। इसके कारण आज दो सौ सदस्योंमें से बीस ही रह जायें तो भी कोई परवाह नहीं। फिर बीसके दो सौ सच्चे सदस्य होना होगा तो हो जायेंगे। नहीं तो बीस ही सही। मै यह भी पाता हूँ कि जो बुराई हम कांग्रेसमें देखते हैं वह संघमें भी है। कांग्रेस बड़ी संस्था है, संघ छोटा है। कांग्रेसमें जो बुराइयाँ बड़े परिमाणमें हैं, संघमें अल्प परिमाणमें हैं। आपसमें द्वेष है, झगड़ा भी है और दम्भ भी है। सब एकदिल, एकप्राण बनकर काम करते हैं

१. देखिए खण्ड ६५, पृ० १३० ।

ऐसा मै नही देखता। मैं अपने व्यक्तिगत अनुभवसे यह नही कह रहा हूँ। मै तो सारे सदस्योंको जानता भी नही। सबके चेहरे नही पहचानता। बहुतेरोंके नाम भी नही जानता। वे कहाँके है, क्या काम करते है वह भी नहीं जानता। फिर भी मेरे पास जो सामान आ गया है उसपर से मै कह रहा हूँ। जमनालालजी आज यहाँ नही है यह दुःखकी बात है। उनका कई संस्थाओंसे सम्बन्ध है। वे अपनी मुसीबतें मुझे सुनाते रहते है। हमें संस्थाएँ चलाने में ये सब कष्ट क्यों होते है? ये सब दोष क्यो आते है? अगर दो सौ आदमी एकदिल, एकप्राण हो जायें तो हम किसी खास कार्यकर्त्ताका नाम न लेते हुए भी हर किसीसे यह कह सकेंगे कि — जाओ त्रावणकोरमें काम करो और वहाँ सफलता हासिल करो। लेकिन किशोरलालकी आज यह कहने की हिम्मत नही है। उसे हरएक कार्यकर्त्ताकी योग्यता, स्वभाव और मनोवृत्तिका खयाल करना पड़ता है।

मै यह सब आपके दोष निकालने के लिए नही कह रहा हूँ। ये तो हम सबके दोष बतलानेवाली चीजें है। मुझे ऐसा लगता है, हमें इस बातमें सोचना होगा। अपनी संस्थाके सिद्धान्तों और नियमोके पालनमें ज्यादा सख्त होना होगा। इससे हमारे सदस्य कम हो जायें तो भले हो जायें। मै तो पहले ही कह चुका हूँ कि सत्याग्रहीका बल सख्यामें नहीं, आत्मामें है। दूसरे शब्दोमें ईश्वरमें है।

इसीलिए मै हरएक सत्याग्रहीसे यह आशा करता हूँ कि उसकी ईश्वरमें जिन्दा श्रद्धा होनी चाहिए। सत्याग्रहीको दूसरा कोई बल नही है। ईश्वरका बल तभी आता है जब उसमें अनन्त श्रद्धा हो। जब ईश्वरमें ऐसी श्रद्धा न हो तो वह सत्याग्रह कैसे कर सकता है? जो यह कहे कि मुझे ईश्वरमें ऐसी श्रद्धा नही है उसे संघको छोड़ देना चाहिए और सत्याग्रहको भूल जाना चाहिए। मै पूछता हूँ कि चरखेमें जिन्दा श्रद्धा आपमें से कितनो की है? चरखेके बारेमें तो निडरतासे और बेशरम होकर मैंने कहा है कि वह स्वराज्यका प्रत्यक्ष साधन है, अहिंसाका असाधारण प्रतीक है। अगर आप चरखेके विशारद भी बनें परन्तु उसे अहिंसाका प्रतीक न मानें तो आपका चरखा चलाना व्यर्थ है। अगर चरखेमें हमारी जीवित श्रद्धा हो तो हम उसमें अद्भुत शक्ति देखेंगे। मै तो चरखेको सविनय भंगकी अपेक्षा अहिंसा का श्रेष्ठतर प्रतीक मानता हूँ। सविनय भंगमें द्वेष या हिंसा पैदा होने का खतरा रहता है। लेकिन चरखा निर्दोष है। कुछ लोग उसकी हँसी भले ही उड़ायें। उससे हँसी तो पैदा हो सकती है लेकिन हिंसा कभी भी पैदा नही हो सकती। जो लोग आज चरखा चलाते है, नियमपूर्वक और आस्थासे चलाते है वे भी उसे अहिंसाका प्रतीक नही मानते। जो लोग राज्यक्षेत्रमें पडे है वे उसे अहिंसाका प्रतीक नही मानते। केवल नियमपालनके लिए चला लेते है। मैं इस विषयमें भी उदासीन रहा। उसका दाम आज मुझे देना पड़ता है। चरखेमें मैंने अपनी श्रद्धा १९२० में ही प्रकट की थी। अब १९४० पास आ रहा है। बीस सालके बाद अनुभवके जोरपर मै फिर कहता हूँ, अहिंसाका प्रदर्शन करने की और स्वराज्य हासिल करने की जो शक्ति चरखेमें है वह दूसरी किसी चीजमें नही है। आज मुझे श्रद्धाके साथ ज्ञान भी मिला

है। श्रद्धा और बुद्धिके सम्मेलनसे मेरा विश्वास और भी तेजस्वी हो उठा है। मैंने चरखेके विषयमें तबसे अबतक जो-कुछ लिखा है उसपर मैं कायम हूँ। जो लोग सत्याग्रही होना चाहते हैं लेकिन चरखेमें विश्वास नहीं रखते उनसे मैं फिर कहूँगा कि वे सत्याग्रहको भूल जायें।

प्रजापति मिश्रने जो सुनाया कि पाँच गाँवोंमें चरखा चल रहा है वह तो मजाक है। चम्पारनके घर-घरमें चरखा क्यों नहीं चलता? पाँच गाँवोंमें चरखा चलाने की बात को लेकर मैं उसकी हँसी भी उड़ा दूँगा। और चाहूँ तो रुला भी सकता हूँ। यहाँ के प्रदर्शनमें भी कोई उत्साह देनेवाली चीज नहीं है। वह बेचारा लक्ष्मी बाबू, मथुरादास ध्वजा काम करते हैं। पर उससे मुझे संतोष थोड़े ही होता है? बिहारमें इतने अच्छे-अच्छे कार्यकर्त्ता पड़े हैं। यहाँ चम्पारनके घर-घरमें चरखा क्यों नहीं चलता? जब वे यह मानेंगे कि चरखा एक अनोखी शक्ति देनेवाली चीज है तो बिहार की मुखाकृति ही बदल जायेगी। ऐसे चन्द कार्यकर्त्ता हैं उससे थोड़े ही पेट भरनेवाला है। आज हजारों बहनें चरखा चलाती हैं और जिन्हें मैं आठ आने रोजी नहीं दे सकता उनकी बात नहीं कह रहा हूँ। वे तो रोटीके लिए चरखा चलाती हैं। मैं उनकी बात कह रहा हूँ जो उसे अहिंसाका प्रतीक समझकर चलायेंगे। जो अहिंसक और सत्यवादी बनेगा, चरखा उसके जीवनमें परिवर्तन कर देगा। वह अपने प्रत्येक मिनटका हिसाब देगा। वक्त नाहक बरबाद करना वह पाप समझेगा। विचारका साक्षी तो ईश्वर ही है। लेकिन ऐसा मनुष्य निकम्मा विचार एक भी नहीं करेगा। उसकी भाषामें विलक्षणता रहेगी। हरएक बातमें अलौकिकता देखने में आयेगी।

यह सब शक्ति चरखेमें है। लेकिन वह स्वयंसिद्ध नहीं है। यों तो चरखा जड़ वस्तु है। उसमें शक्ति संकल्पसे आती है। हम उसकी साधना करें। मिट्टीमें क्या पड़ा है? पर कोई भक्त मिट्टीकी एक गोली बनाता है और संकल्प करता है कि इसमें भगवान् शंकर बैठा है, तो वही मिट्टी कामधेनु बन जाती है। निरी मिट्टी में क्या पड़ा है? दूसरा आदमी उसे उठाकर फेंक देगा। मिट्टीमें शंकर नहीं है। श्रद्धा ही शंकर है। रामनाममें क्या भरा है? उसमें आज जो शक्ति है उसका क्या मतलब है? करोड़ों लोगोंने श्रद्धासे रामनाम लिया है। उनके संकल्पकी वह शक्ति है। हजारों लोग यों भी रामनाम रटते हैं। उन्हें कुछ नहीं मिलता। क्योंकि हृदय में संकल्पकी शक्ति नहीं है। कलियुगमें रामनाम तो धोखा भी दे सकता है। लेकिन चरखा धोखा नहीं दे सकता। वह तो कमसे-कम सूत तो निकालेगा। मेरे पास सैंकड़ों आदमियोंकी गवाही है कि अगर संकल्प लेकर चरखा चलाने बैठ जाये तो विषयवासना भी कम हो जाती है। प्रभाशंकर पट्टणी तो मर गये। वे मुझे कभी धोखा देनेवाले नहीं थे। उन्होंने मुझे लिखा था कि जब रातको चरखा लेकर बैठ जाता हूँ तो सारा प्रपंच भूल जाता हूँ। उन्हें चरखेका चमत्कार मिल गया। वे हमेशा के लिए उसे कायम नहीं रख सके यह बात दूसरी है।

इतनी स्तुति करना आवश्यक था क्योंकि हमारे जितने हथियार हैं उनमें चरखेको अग्र स्थान है। आप सब संकल्प करें और इस सब शक्तिका उसमें आरोपण करें।

मेरा यह कोई दावा नहीं कि उसमें स्वतंत्र शक्ति है। मैंने अपने संकल्पसे उस शक्ति का चरखेमें आरोपण किया है। इसलिए मेरी कल्पनाके सत्याग्रहके लिए वह परम आवश्यक हो गया है। मैंने १९०९[1] में 'हिन्द स्वराज्य' लिखा। उसकी भाषा अनघड़ भले ही हो लेकिन उसमें मेरी कलम आज भी दुरुस्ती करने के लिए तैयार नहीं है। उस वक्त मैंने एक भी चरखा नहीं देखा था। बल्कि यहाँतक कि मैंने करघेको ही चरखा समझ लिया था। इसलिए उसमें करघेकी बात मैंने लिखी थी। चरखे की बात मैंने नहीं लिखी थी। लेकिन तभीसे मेरे दिलमें चरखेके प्रति श्रद्धा है। तभी से मेरे लिए वह अहिंसाका प्रतीक बना। आज मुझमें इतनी शक्ति आ गई है कि जो लोग ऐसा नहीं मानते उनसे मैं कहूँगा कि तुम चले जाओ। अगर वे त्रावणकोर-वाले, मैसोरवाले या जयपुरवाले मुझसे कहें कि हम तो ऐसा नहीं मानते तो मैं कहूँगा कि तुम्हारी मार्फत मैं सत्याग्रह नहीं चला सकता। वे चाहें तो अपनी जिम्मे-वारीपर सत्याग्रह करे पर मैं उनकी मदद नहीं कर सकता।

तो मैंने यह चीज एक नई तरहसे आपके सामने रखी है। यह पाँच-छह दिनका यज्ञ करने के लिए हम यहाँ आये हुए हैं। हममें से प्रत्येक मनुष्य इस सप्ताहमें अपने मन और विचारकी शुद्धि करने की चेष्टा करेगा। अपना कड़ा आत्मपरीक्षण करेगा। वह अपने-आपसे कहेगा कि जब मैं इस भाषाकी दृष्टिसे देखता हूँ तो मैंने इतना-इतना क्रोध किया। अमुक आदमीका द्वेष किया। संघको धोखा दिया है। जो इन दोषोको समझेंगे उनमें से कई तो अपने-आप हट जायेंगे और बाहर रहकर संघकी सेवा करेंगे, जैसे कि कांग्रेसकी सेवा मैं कर रहा हूँ। मेरा यह दावा है कि जब मैं चार आना मेम्बर था तबसे आज कांग्रेसकी ज्यादा सेवा करता हूँ। इसके विषयमें मेरे मनमें सन्देह नहीं। इस तरह कुछ लोग बाहर रहकर संघकी सेवा करें। जो लोग अन्दर रहें वे अपने विचारोंके परीक्षक बनकर रहें। शायद हम सब जानते हैं, संघमें ऐसे आदमी भी आ गये हैं जो दंभी प्रसिद्ध हुए और व्यभिचारी सिद्ध हुए हैं। हम यह दावा तो हरगिज नहीं कर सकते हैं कि जो संघमें आ गया उसपर मानो द्वारकाकी छाप ही लग गई। मैं आशा करता हूँ कि ऐसे कुछ सदस्य तो अपने-आप निकल जायेंगे। वे बाहरसे अधिक सेवा कर सकेंगे।

अब उस परिपत्रपर[2] आ जाता हूँ। मैं उसके दोष नहीं निकालना चाहता। जो बात हो गई सो हो गई। गांधी सेवा संघके सदस्य भले ही कांग्रेसमें रहें।

१. साधन-सूत्रमें "१९०८" है; देखिए खण्ड १०।

२. किशोरलाल मशरूवाला द्वारा जारी किये गये इस परिपत्रमें बताया गया था कि कांग्रेस कार्य-समितिके जिन सात सदस्योंने कांग्रेस अध्यक्ष-पदके लिए पट्टाभि सीतारामय्याके नामकी सिफारिश की, उनमें से छह गांधी सेवा संघके थे और सदस्योंको इस चुनावमें गांधीजी की दिलचस्पीका पता तब चला जब उन्होंने घोषणा की (देखिए खण्ड ६८, पृ० ३९६-७) कि पट्टाभि सीतारामय्याकी हार मेरी हार होगी। परिपत्रमें संघके सदस्योंको याद दिलाया गया था कि सारे मतभेदोंको भुलाकर ऐक्यबद्ध होकर रहना उनका प्राथमिक कर्तव्य था। उसने वल्लभभाईपर लगाये निराधार आरोपोंको झूठा और शरारत-भरा बताकर उनकी निन्दा की और कहा कि गांधीजी उन्हें पूर्णतः निर्दोष मानते हैं।

सरदार, राजेन्द्रबाबू आदि उसमें भले ही रहें। दूसरे सदस्य उन्हें भले ही बल दें, वह उनका व्यक्तिगत सवाल है। लेकिन गांधी सेवा संघको संघकी हैसियतसे उस झंझटमें नही पड़ना चाहिए। वह गांधी सेवा संघके क्षेत्रमें नही आता। गांधी सेवा संघके सदस्योंको राज्यप्रकरणमें दखल देने की जरूरत मालूम पड़े तो वे अपनी जवाबदारी पर दें। लेकिन वहाँ भी दखल देने का मतलब सत्य और अहिंसाकी मर्यादाका पालन ही हो सकता है। हम सत्य और अहिंसाकी मर्यादा नही पालेंगे तो उसमें हारेंगे ही, उसमें उत्तीर्ण नहीं होंगे। राज्यप्रकरणमें भी हम सत्य और अहिंसाका तराजू लेकर ही जायें। दूसरे जो कर सकते हैं वह हम नहीं कर सकते। क्योंकि संघके सदस्य होने के कारण हम तो सत्य और अहिंसाके ट्रस्टी बन जाते हैं। जो सदस्य सत्य और अहिंसाके गजको लेकर राज्यप्रकरणमें जायें उनका काम हम भले ही चलने दें। लेकिन गांधी सेवा संघका काम दूसरा है। त्रिपुरीमें क्या हुआ, किसने किस पक्षमें मत दिया, यह काम संघका नही है। यह हमारा क्षेत्र नहीं है। वह सरदारका काम है या जो त्रिपुरीमें जाते हैं उनका काम है।

यह हुआ इस परिपत्रके विषयमें। अब कांग्रेसकी अशुद्धिपर आता हूँ। इसका सबसे अच्छा इलाज यह है कि पहले हम खुद शुद्ध बनें। हम अपने सम्पर्कसे जितनी शुद्धि करा सकते हैं, करायें। क्योंकि कांग्रेस भी स्वराज्य हासिल करना चाहती है सत्य और अहिंसासे ही। वह भी एक अहिंसक दल ही है। और वहाँ भी मेरी चल सके तो वहाँ भी मेरी बड़ी सख्त शर्तें रहेंगी। लेकिन कांग्रेसकी शुद्धिका काम गांधी सेवा संघका नही। इस तरह एक दृष्टिसे हमारे सिरपर बोझ कम भी है और ज्यादा भी है। हमारेमें से कांग्रेसकी शुद्धिके बोझको जो उठाना चाहें वे उठायें। सबपर उसका भार नहीं है। लेकिन दूसरी तरफसे हमारी जवाबदारी बहुत बड़ी है। क्योंकि हम अहिंसाके स्वयंनिर्वाचित प्रतिनिधि बन बैठे हैं। कांग्रेसकी वर्किंग कमेटीमें हमारे तेरह लोग हैं। कांग्रेसके शुद्धीकरणका काम वे देख लेंगे। नही तो वे निकम्मे साबित होंगे।

अब मैं गांधी-मत-प्रचारके सवालको लेता हूँ। गांधी-मत-प्रचार पुस्तकों द्वारा बहुत कम होगा, पर जीवनके द्वारा बहुत आला दर्जेका होगा। सत्य और अहिंसाका प्रचार इस तरह होता है। एक तरफ करोड़ों पुस्तकें रखें और दूसरी तरफ एक जीवित दृष्टान्त, तो उस दृष्टान्तकी कीमत अधिक है। पुस्तकें तो जड़ हैं। मेरा मतलब यह नहीं है कि हम पुस्तकें बिलकुल न लिखें। पुस्तकें भले ही लिखें, अखबार भी चलाना है तो चलायें। मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि वे हमारे लिए आवश्यक साधन नही है। सत्याग्रहीकी बुद्धिका विकास सिद्धान्तोंपर चलने से होता है। हम मुँहसे 'अहिंसा, अहिंसा' कहते हैं, लेकिन अपनी बुद्धिकी तीव्रता नहीं बढ़ाते। कुछ आलसी बन गये हैं। 'गीता' में लिखा है कि बुद्धि और हृदयमें ऐक्य होना चाहिए। जब बुद्धि और हृदयका युगल बन जाता है तब हम अजेय बन जाते हैं। हमारी बुद्धिमें सारे प्रश्नोंको हल करने की शक्ति आ जाती है।

हम किसीको थप्पड़ नहीं मारते इसीसे हम दरअसल अहिंसक नही बनते। अपने विचार और बुद्धिसे हिंसा कर लेते हैं। यह तेजस्वी बुद्धिका लक्षण नहीं है।

तेजस्वी बुद्धिका लक्षण यह है कि हम अपने कानोंको खुला रखें। जब प्रतिपक्षी हमारे सामने आ जाता है तब हमें उसकी दृष्टिको समझ लेना चाहिए। देखें वह जयप्रकाश क्या कह रहा है? उसके और मेरे बीचमें तो एक महासमुद्र पड़ा है। लेकिन अहिंसा कहती है कि हम हमारा प्रतिपक्षी क्या कह रहा है यह समझने का धीरज रखें। यही अहिंसाका लक्षण है। इसीका नाम है शत्रुके मुंहमें दौड़-दौड़कर जाना। अहिंसक अपने प्रतिपक्षीसे कहता है, तुम क्यो इतनी तकलीफ लेते हो, मैं खुद तुम्हारे पास आ रहा हूँ। इसका मतलब यह नही है कि हम भोले बनें। हम तीव्र बुद्धि रहें। अगर हमारे पास जवाब है तो प्रतिपक्षीकी बातोंका जवाव दें। उनकी दृष्टिसे उनकी बातको समझने की कोशिश करें। उनमें से जो मानने लायक हो वह मानें। मैंने अपने प्रतिपक्षियोंका दृष्टिकोण समझने की कोशिश की इसका मतलब यह नही कि उनकी हरएक बातको कबूल किया या उनकी खुशामद की। अगर हम अपनी बुद्धिको इस तरह बनायें तो सत्य और अहिंसाका प्रचार अपने जीवनसे कर सकते है। इसके बिना किसी मासिक, द्विमासिक या त्रैमासिकसे नही होगा। 'यंग इण्डिया' मैं कितनी बेदरकारीसे चला रहा था वह मेरे साथी आपको बतलायेंगे? 'यंग इण्डिया' ने काम तो काफी किया। आखिर वह मर गया, पर सत्याग्रह नही मरा। 'यंग इण्डिया' बन्द होने से मेरा काम तो नही रुका। सत्याग्रही जानता है कि वह बाह्य साधनपर निर्भर नहीं रह सकता। वह अन्त.साधनपर ही निर्भर रहता है। जिसकी ईश्वरपर अनन्य श्रद्धा है वह अपनेपर श्रद्धा रखकर चलेगा।

और एक सवाल यह भी पूछा गया है कि गांधी-मतका काफी विरोध हो रहा है और महाराष्ट्रमें नाहक जहर फैलाया जा रहा है, उसका क्या इलाज करें? इसका जवाव मैं दे चुका हूँ। हम अपने-आपको शुद्ध करे। अगर महाराष्ट्रमें कुछ हो रहा है तो शंकरराव देवको कत्ल करें। और कर्नाटकमें अगर कुछ हो रहा है तो गंगाधररावको कत्ल करें। क्यो शंकरराव, क्यों गंगाधरराव—ठीक है न?[1] इससे अधिक मैं क्या कह सकता हूँ?

आर्यसमाज-सत्याग्रहके बारेमें मेरी राय पूछी गई है। काफी परीक्षाके बाद आज अपने दिलकी बात आपको सुनाता हूँ। सत्याग्रहके नामपर हैदराबादमें जो आज चल रहा है वह धार्मिक नही है और न वह धार्मिक दृष्टिसे चलाया जाता है। उसमें गोलमाल है। सत्य और अहिंसाको माननेवाला उसमें भाग नही ले सकता। मेरे पास काफी सबूत हैं। उन्हें गुप्ताजीके पास भेज दिया है। वे बेचारे मेरे पास आये थे। काफी परेशान है।

गांधी सेवा संघके पंचम वार्षिक अधिवेशन, (वृन्दावन, बिहार) का विवरण, पृ० ७-१५

१. दोनों ने हामी भरी।

२३२. पत्र : मीराबहनको

वृन्दावन, चम्पारन
४ मई, १९३९

चि० मीरा,

आशा है, तुम्हें मेरा पत्र या मेरे पत्र (मैं भूल रहा हूँ) मिल गये होंगे। खानसाहब यहाँ हैं और ७ तारीखतक रहेंगे। मैं ८ तारीखको बनारस होता हुआ राजकोटके लिए प्रस्थान करूँगा। रास्तेमें मालवीयजी से मिलने के लिए रात-भर बनारस ठहरूँगा। पता नही राजकोटमें कितने दिन ठहरना पड़ेगा।

खानसाहबने मुझे बताया कि तुम खुश हो और अपना काम कर रही हो।

यहाँ सब विशुद्ध ग्राम-कार्य और देहाती वातावरण नही है। मोटरें और शहरी सहूलियतें बहुत हैं। ये चीजें खटकती हैं। तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि इस शिविरमें मच्छर नहीं हैं। इसका कारण मनुष्यका प्रयत्न नही, परन्तु प्रकृतिका प्रबन्ध है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४३८) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००३३ से भी

२३३. पत्र : अगाथा हैरिसनको

वृन्दावन
४ मई, १९३९

प्रिय अगाथा,

यह मात्र यह बताने को लिख रहा हूँ कि मैं तुम्हारे बारेमें सोचता रहा हूँ।

संघके[1] बारेमें जहाँतक मुझे दिखाई देता है, वह अब पृष्ठभूमिमें चला गया है। यदि वह आता है तो वह एक थोपी हुई चीज होगी। इंग्लैंडका शासक-जगत् यदि सचमुच सत्ता छोड़ना चाहे तो बहुत-कुछ किया जा सकता है। ए० मूरके[2] प्रश्नोंके उत्तरमें मैं उन्हें एक लम्बा पत्र लिखने की सोच रहा हूँ। तुम्हें मैं उसकी नकल भेज दूंगा।

१. यहाँ गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट, १९३५ में निर्धारित "भारत संघ" का उल्लेख है।
२. स्टेट्समैनके सम्पादक, आर्थर मूर।

युद्ध एक ऐसा प्रश्न है जिसके बारेमें कुछ करना मेरे लिए मुश्किल है। मुझे खुद पता नही कि मैं कांग्रेसको क्या सलाह दूं।

हिटलरको लिखे जानेवाले पत्रकी[1] अभी कोई रूप-रेखा तैयार नही कर पाया हूँ। वह कोई लम्बा पत्र नही होगा।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

सभी मित्रोंको स्नेह।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५०७) से

२३४. पत्र : मुन्नालाल गंगादास शाहको[2]

वृन्दावन
४ मई, १९३९

चि० मुन्नालाल,

मैथ्यूको तुम नागपुर ले जाना, और हो सके तो डेविडकी डिस्पेंसरीमें दाखिल कराना। नागपुरमें तीन महीने रहने की क्या जरूरत है? क्या वर्धामें उसका इलाज नहीं हो सकता? अगर . . . रहना निहायत जरूरी है, तो सोचना कि कैसे . . . और मुझे ८ तारीखतक यहाँ . . . और उसके बाद राजकोटके पतेपर तार . . .

बापू [के आशीर्वाद]

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५६१) से। सी० डब्ल्यू० ७०५० से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

१. देखिए खण्ड ७०, "पत्र : एडॉल्फ हिटलरको", २३-७-१९३९।
२. पत्र कई स्थानोंपर कटा-फटा है।

२३५. पत्र: पी० जी० मैथ्यूको

४ मई, १९३९

प्रिय मैथ्यू,

तुम तो एक समस्या बन गये हो। मैंने मुन्नालालसे[1] कहा है कि वह तुम्हें डॉ० डेविडके पास ले जाये और उनसे मालूम करे कि तुम्हें नागपुरमें रखा जा सकता है या नहीं, अथवा सेगाँवमें ही रखा जा सकता है या सिर्फ उपचारके लिए नागपुर भेजा जा सकता है। तुम्हें धीरजसे काम लेना चाहिए और चिन्तित नहीं होना चाहिए। जो-कुछ होता है, उसे खुशीसे झेलना है। अगर तुम्हारा कोई अपना सुझाव हो तो देने में संकोच मत करना।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५५०) से

२३६. भाषण: शिक्षक-प्रशिक्षण शिविर, वृन्दावनमें[2]

४ मई, १९३९

मुझे आज जो अनुभव हुआ वह मैं आपको सुनाना चाहता हूँ। पहले तो मैंने प्रदर्शनी[3] देखी, बहुत ही अच्छी थी। कहते हैं कि त्रिपुरीमें जो प्रदर्शनी हुई उसकी यह चौथाई है। एक चतुर्थांश देखकर भी मैं तो खुश ही हुआ। लेकिन पूरी प्रदर्शनी देख लेता, तो मेरी खुशी चौगुनी हो जाती, ऐसा थोड़े ही है? त्रिपुरीमें जो प्रदर्शनी हुई थी उसका बड़ा हिस्सा जामिया मिलिया (देहली) का था। प्रदर्शनीमें वह हिस्सा नहीं है। वह तो बड़ा भारी हिस्सा था। मैं तो चन्द मिनटों के लिए ही आज प्रदर्शनीमें जा सका। वह है तो बड़ी चीज। अगर मेरे पास एक पूरा दिन होता, तो उसे देखता और उसमें से बहुत-कुछ पाता। देखता कि इस चीजको ये

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. यह शिविर वर्धा शिक्षण योजनाके अन्तर्गत शिक्षकोंको प्रशिक्षण देनेके लिए अखिल भारतीय तालीमी संघ द्वारा आयोजित किया गया था।

३. बुनियादी शिक्षाके विभिन्न पहलुओंको प्रदर्शित करनेके लिए आशादेवी आर्यनायकम् द्वारा इसका संयोजन किया गया था।

लोग कहाँ तक ले गये हैं, उद्योग द्वारा शिक्षाके आयोजनमें कितनी सफलता प्राप्त की है, हरएक विषयको उद्योगके साथ किस प्रकार जोड़ते हैं।

मैं आपको सलाह देना चाहता हूँ कि आप इस प्रदर्शनीका अध्ययन करें। एक-एक चीजको गौरसे देखें। उदाहरणके लिए, एक ही चीज ले लीजिए। हमको पता नहीं था कि मूँजकी धुनकी इतना काम देती है। वह तो इतनी अच्छी है कि कुछ बातोंमें ताँतसे भी बढ़कर है। बारीक सूत निकालने के लिए बहुत बढ़िया है। कपासका एक-एक रेशा अलग-अलग कर देती है। और इसके अलावा स्वास्थ्यको भी नुकसान पहुँचानेवाली नहीं है। मेरे-जैसा आदमी भी, जिसका हृदय कमजोर हो गया हो, अपनी रुई उससे अच्छी तरह धुन सकता है। लगती भी खूबसूरत है। परिश्रम कुछ नहीं, धुनने में आनन्द-ही-आनन्द आता है। ऐसी छोटी-छोटी चीजोंमें भी हम कहाँतक जा सकते हैं, इसका यह उदाहरण है। जिस आदमीने अपनी सारी सूझ-बूझ और प्रतिभा इस काममें लगा दी उसका यह आविष्कार है।

मैं चाहता हूँ कि आप प्रदर्शनीका इस दृष्टिसे भली-भाँति निरीक्षण करें और शोध करें। हम कहाँ तक तरक्की कर सकते हैं इसकी कोई हद नहीं। अगर हम इस शिक्षा द्वारा अपने अन्दर मौलिकता पैदा न कर सकेंगे, तो हम सच्चे शिक्षक ही नहीं हैं। उद्योगके द्वारा शिक्षा बुनियादी शिक्षाका मध्य-बिन्दु है। आपमें इतनी मौलिकता आ जानी चाहिए कि आप अनेक उद्योगोंके मारफत अपनी बुद्धिका विकास कर सकें और अपनी सारी मौलिकता और सूझसे काम लेकर अनगिनत चीजें उद्योगकी मारफत सिखायें और नये-नये आविष्कार करें।

आज हमारा आधार दो ही उद्योगोंपर है। उन्हींकी बात ले लीजिए। जो इन उद्योगोंके द्वारा अपने दिमागकी तरक्की कर सकते हैं ऐसे दो आदमी मिल गये। इसीसे आशादेवी और आर्यनायकम्‌का काम चल सका। तकलीके लिए हमको विनोबा मिल गये। और कार्डबोर्डके उद्योगकी मारफत बुद्धिका विकास कैसे हो सकता है यह बतानेवाले एक दूसरे सज्जन मिल गये। उन उद्योगोंमें कितनी-कितनी बातें भरी पड़ी हैं यह उन्होंने दिखा दिया। इसी तरह अगर आप न बता सकें तो आपमें मौलिकता नहीं आयेगी। ऐसे आदमी न मिले तो न तो जाकिरसाहब कुछ कर सकते थे, न आशादेवी। मैं आपसे कहूँगा कि आप इस शिक्षा-पद्धतिसे मौलिकता पैदा करने की दृष्टिसे प्रदर्शनी देखें। परम्परासे चली आई पद्धतिसे उद्योग या दस्तकारी सिखाना हमारा उद्देश्य नहीं है। हमें तो उद्योगकी शिक्षाको सजीव माध्यम बनाना है।

इसके बाद मैं पाठशालामें चला गया। मैंने देखा कि मास्टर साहब काफी चालाक आदमी हैं। सब लड़के तकली चला रहे थे। मेरा तो यह दावा है कि मैं चरखेके, तकलीके, करघेके शास्त्रको खूब जानता हूँ। हालाँकि मैं खुद उन कामोंको तेजीसे नहीं कर सकता, लेकिन जानता तो अच्छी तरह हूँ। मैंने फौरन देख लिया कि यहाँ कोई-न-कोई त्रुटि है। या तो मास्टर साहब खुद कातने की कला नहीं जानते या लड़कोंको गलत सिखाया गया है। मैंने उनका दोष फौरन पकड़ लिया। जो काम आधे मिनटमें हो सकता था उसमें वे लड़के चौगुना वक्त लगाते थे। धागा

निकालने पर वे तकलीको घुमाते ही रहते थे। वह सच्चा सूत नही था। जैसे-जैसे हम धागेको खींचते है वैसे-वैसे सूतको बल मिलना चाहिए। बादमें वल देनेकी जरूरत नहीं। जरा भी ज्यादा बल देनेसे सूत पक्का तो नहीं, बल्कि निकम्मा हो जाता है। रफ्तार तो इस तरह बढ़ ही नहीं सकती।

दूसरी भी कुछ त्रुटियाँ देख रहा था। सबका उल्लेख नहीं करता। नायकमजी से कह दिया, जो शिक्षक अपना उद्योग अच्छी तरह नहीं जानता वह निकम्मा समझा जाये, फिर वह चाहे कितना ही बुद्धिशाली हो। और चरखा और करघा-शास्त्रकी चाहे जितनी किताबें क्यों न पढ़ सकता हो, अगर वह सूत अच्छी तरह नहीं निकाल सकता तो वह कभी शिक्षक बनने के लायक नहीं होगा। वह तो मुन्शी भी नही बन सकेगा। वह तो बिलकुल निकम्मा है। हमारा तो यह दावा है कि उद्योगके द्वारा बुद्धिका विकास होगा; यही हमारा गुनिया है। यही हमारी सारी योजनाका मध्य-बिन्दु है।

इसलिए पहले तो मै यह देखूंगा कि शिक्षकका सूत कैसा है। समान है या नहीं, मजबूत है या नही? इतना होगा तो मैं कहूँगा कि वह कारीगर तो अच्छा है, लेकिन यदि इससे उसकी बुद्धिका विकास नही होगा तो उसमें मौलिकता नहीं आयेगी। पीढ़ियों तक यही चरखा, वही करघा चलाता रहेगा। उसमें सुधार नही करेगा। हिन्दुस्तानका तो यही इतिहास है। क्योंकि हाथ और बुद्धिका मेल नहीं रहा। जो कारीगर थे उन्होंने अपने औजारोंमें और कामके तरीकोंमें सुधार करने की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया और जो बुद्धिका काम करते थे उनका उद्योगसे कोई सम्बन्ध न रहा; मौलिकता दोनोंमें से जाती रही।

मैं अपने शिक्षकोंकी बुद्धिकी परीक्षा इस दृष्टिसे करूँगा। उन्हें अपना उद्योग इसी तरह सीखना चाहिए और उसमें रस लेना चाहिए। अगर इस तरहसे वे तालीम नहीं लेंगे, तो यह योजना कामयाब नहीं हो सकती। सारी दुनिया इसपर हँसेगी। इसका मुझे डर नहीं है। जब मैं देखूंगा कि जो चीज मैं चाहता हूँ वही हो रही है तभी मुझे सन्तोष होगा। नहीं तो सारी दुनिया हमारे कामकी तारीफ करती रहे, तो भी मै धोखेमें नहीं आऊँगा। आज इसकी इतनी तारीफ हो रही है, तो भी मुझे डर है। जो इस योजनामें शिक्षकका काम कर रहे है वे यह सोचकर नाच रहे है। लेकिन शायद यह खयाल भी हमें धोखा देगा। मैं चाहता हूँ कि आप उद्योगके द्वारा ज्ञान प्राप्त करने की कला हासिल कर लें। यह ज्ञान और कला अनोखी चीज है। आपको अपने एम० ए०, बी० ए० से प्राप्त ज्ञानका उपयोग इसीमें करना चाहिए। आज शिक्षाका नीरस और निर्जीव व्यापार है, उसे रोचक और सजीव बनाना आपका काम होना चाहिए। मेरा ऐसा दावा है कि मैंने जो तरीका ईजाद किया है उसमें से एक अनोखी तेजस्विता पैदा होनी ही चाहिए।

मेरे नजदीक किताबी शिक्षा और दिमागी शिक्षा एक ही चीज नहीं है। जिसकी बुद्धिका उसके हाथ और पैरोंके साथ मेल नहीं है वह मेरी रायमें बुद्धि-

मान नही है। अगर किसीने वेदोके शब्द रट लिये, उनकी टीकाएँ कण्ठस्थ कर लीं, तो क्या वह वेद-पारंगत बन गया? मै तो यह देखूँगा कि उसने वेदके गूढ़ अर्थको कहाँतक हजम किया है। उसके चाल-चलनसे इसका पता चल जायेगा। इस योजनाकी जो केन्द्रीय कल्पना है वह मैंने आपको बतला दी।

हरिजन सेवक, ८-७-१९३९

२३७. तार: कै० प० पिल्लैको

५ मई, १९३९

कैनिक्कर पद्मनाभ पिल्लै
कृष्ण विलास, कुन्नुमकुझी
त्रिवेन्द्रम

बारहको राजकोट पहुँच रहा हूँ। बारहके बाद राजकोटमें मिलना सम्भव।

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

२३८. प्रश्नोत्तर: गांधी सेवा संघकी बैठक, वृन्दावनमें – १

५ मई, १९३९

अन्नदा नाबूकी तरफसे ये प्रश्न आये है। वे कहते हैं कि ये प्रश्न मैं अपने लिए नहीं पूछ रहा हूँ। दूसरोके लिए पूछता हूँ।

प्रश्न: आपने सुभाष बाबूके चुनावके बाद जो वक्तव्य[1] निकाला उससे परिस्थिति कुछ बदल गई। आपने चुनावके समय कोई वक्तव्य क्यों नहीं निकाला? कुछ लोगोंका खयाल है कि चुनावके वक्त यदि आप वक्तव्य निकाल देते तो आजकी परिस्थिति ही पैदा नहीं होती।

उत्तर: मैंने कोई वक्तव्य नही निकाला यह सही है। अन्नदा बाबू कहते हैं कि इसके कारण स्थिति बदल गई। उनका मतलब यह है कि मैं पहले वक्तव्य निकालता तो जो बन गया वह न बना होता। फिर भी सरदार वल्लभभाई इत्यादिके नामसे जो वक्तव्य निकला उसमें एक छोटा-सा वाक्य था, जिससे मालूम होता था कि उसमें मैं भी हूँ। इससे आगे बढ़ूँ ऐसी कोई बात उस वक्त नही थी। वक्तव्य निकालने की आवश्यकता मैंने उस वक्त महसूस नही की थी।

१. देखिए खण्ड ६८, पृ० ३९६-७।

बादमें वक्तव्य निकालने की आवश्यकता हुई। उसका लम्बा इतिहास है। उसमें मैं नहीं जाऊँगा। इसमें कोई आलस्यकी बात नही थी। न मुल्कको समझाने में कोई गलती की थी। मेरे दिलमें जो चीज थी वह मैंने सुभाष बाबूतक पहुँचा दी थी। मेरा काम करने का तरीका ही यह है। अन्तमें इतना ही रह जाता है कि उसके कारण कोई गलत-समझी भी हो जाये तो मैं सहन कर लूँ। इसके विषयमें कोई और कुछ पूछना चाहते हैं तो पूछ सकते हैं।

कुछ लोगोंका खयाल है कि पंतजी का प्रस्ताव आपको पसन्द नहीं था। जब आपने पहले-पहल उस प्रस्तावके विषयमें सुना तो आपके दिलपर क्या असर हुआ? आपने सुभाष बाबूको ऐसा क्यों लिखा कि 'पंतके प्रस्ताव के विषयमें ज्यों-ज्यों सोचता हूँ त्यों-त्यों उसे अधिक नापसन्द करता हूँ'? कृपया इसे समझाइए।

पहली बात तो यह है कि आप यह जानते हैं कि उस वक्त मै तो बिछौनेपर पड़ा था। मेरे काम करने का तरीका ऐसा नही कि जिस चीजमें मैं नहीं हूँ उसमें मैं पड़ूँ। इसलिए त्रिपुरीमें क्या हो रहा है इसके विषयमें मैं बिलकुल उदासीन था। यहाँतक कि मैं उन दिनों अखबार भी नहीं पढ़ता था। मेरे मनमें तो राजकोट-ही-राजकोट भरा था। किसीने मुझसे कहा कि पंतजी का ऐसा कोई प्रस्ताव त्रिपुरीमें आनेवाला है। उस वक्त मुझे इतना ही खयाल हुआ कि पुरानी कार्य-समितिमें विश्वास प्रकट करनेवाला प्रस्ताव है। मैंने कहा कि विश्वास प्रकट करने की बात तो ठीक है। लेकिन मैं होता तो और कुछ करता। मैंने तो वर्धामें ही कहा था कि अगर हिम्मत है तो सुभाष बाबूके ऊपर अविश्वासका प्रस्ताव लाओ। यह सीधा तरीका है। अगर कांग्रेसके प्रतिनिधि यह समझते थे कि सुभाष बाबूको चुनने में उन्होंने गलती की तो उनके लिए यही सभ्यताका रास्ता था। लेकिन उस वक्त ऐसी आबोहवा शायद नहीं थी। मेरा तो यह खयाल हो गया कि सुभाष बाबू अपनी कार्य-समिति बना लेंगे। लेकिन वह नहीं बना। तब पंतका प्रस्ताव त्रिपुरीमें आया। मैंने इतना ही सुना कि जो लोग निकल गये हैं उनके लिए उसमें विश्वास प्रकट किया गया है। मैंने कहा इतना ही है तो ठीक है। लेकिन वह मेरी चीज तो नही थी। बादमें मैंने वह प्रस्ताव देखा। फिर सुभाष बाबूके साथ पत्र-व्यवहार चला। अन्नदा बाबूने जिस खतका जिक्र किया है वह आपके सामने नही है। जब मैंने पंतका प्रस्ताव पढ़ा तो देखा कि उसमें तो कहा गया है कि मुझे सुभाष बाबूको रास्ता दिखाना है। जब वह चीज मेरे पास आ गई तो मुझे बहुत नापसन्द लगी। यहाँतक नापसन्द लगी कि मैंने वैसा करने से इन्कार किया। और उसी इन्कारपर आखिरी दमतक कायम रहा। हो सकता है कि इसके कारण कुछ गलतफहमी पैदा हो जाये। तो उसे भी मुझे सहना है। जिस चीजको मैं गलत समझता हूँ उसे मैं कैसे करूँ? मैंने उनसे कहा कि आप अपने मनकी कमेटी बना लें और अपना कार्यक्रम बनाकर काम शुरू कर दें। मेरी चले तो मैं आबोहवा साफ कर दूँगा। नहीं तो काम चलता रहेगा और धीरे-धीरे आबोहवाको पहुँच जायेंगे। इसीलिए कलकत्तेमें जब मुझसे कहा गया कि मैं कमेटीके नाम सुझाऊँ तो मुझे यह

बात कुछ विपरीत लगी। वहाँ मेरे पास वह सामान था जिससे मुझे ऐसा करना गलत मालूम हुआ। त्रिपुरीमें वह सामान किसीके पास नहीं था। आगे पत्र-व्यवहारसे मेरी यह राय और भी पक्की हुई। पीछे वैमनस्यकी बात भी मेरे पास आ गई। ऐसी स्थितिमें मैं नाम कैसे दे सकता था? वह तो सुभाष बाबूपर जबरदस्ती होती। मैं सुभाष बाबूपर जबरदस्ती करूँ तो क्या राष्ट्रका जहाज चल सकता है? यह तो जहाज डुबानेकी बात है। मैंने कहा कि मैं ऐसा नहीं करूँगा। अगर आप पुरानी कार्य-समितिके लोगोंको चाहते हैं तो आपसमें मशवरा कर लें। आपको वे लोग चाहें तो दोनों साथ काम कर सकते हैं। लेकिन मुझसे यह काम नहीं होगा कि मैं सुभाष बाबूपर कुछ नाम लाद दूँ। जितना मैं उस प्रस्तावपर सोचूँ वह मुझे नापसन्द आता है। उसके अनुसार मैं राष्ट्रकी सेवा नहीं कर सकता। कोई कितना भी कहे मैं तो यही कहूँगा कि कार्य-समितिके नाम नहीं दे सकता। मैं जो-कुछ पसन्द करूँ वह सुभाष बाबूपर बलात्कार होगा। और बलात्कार तो हिंसा है। वह मैं कैसे करूँ? पंतके प्रस्तावका मेरे दिलपर क्या असर हुआ वह मैंने बतला दिया। अगर लोग समझते हैं कि मैंने देशकी काफी सेवा की है तो भी किसीपर बलात्कार करने का अधिकार मुझे थोड़े ही आ गया है।

जब सुभाष बाबू आपके दिये हुए कोई भी नाम मंजूर करने के लिए तैयार थे तो नाम देने में आपको क्या आपत्ति थी?

इस सवालका यह मतलब है कि "त्रिपुरीने पंत-प्रस्तावसे तुम्हें एक हुक्म दिया और सुभाष बाबूको भी दिया। सुभाष बाबू तो वह हुक्म मानने के लिए तैयार थे लेकिन तुमने उसका विरोध क्यों किया? हुक्मके अनुसार कार्य-समितिके नाम देने में कौन-सा बलात्कार था?" यह तर्क देखने में बड़ा मोहक है। लेकिन गलत है। कल कोई आदमी मुझसे कहे कि तुमको हुक्म हुआ कि मुझे गालियाँ दे दो और बेंत मारो तो क्या मैं उसे मनमानी गालियाँ दे दूँ और तड़ातड़ बेंत मार दूँ? जब सुभाष बाबूके और मेरे बीच इतना फासला था तो इस अधिकारके जोर पर उनपर कोई नाम लाद देना क्या सभ्यताका काम होता? अधिकार मिलने का मतलब यह थोड़ा ही है कि मुझे अपनी विवेक-बुद्धिके खिलाफ उसपर अमल करना ही चाहिए। मेरे साथ कोई ऐसा करे तो मैं पसन्द नहीं करूँगा। मान लीजिए कि कल मुझे सबको गाली देने का अधिकार मिल गया। लेकिन क्या उसपर अमल करना मेरा धर्म हो सकता है? अधिकार और धर्ममें भेद है। अधिकारका उपयोग करना धर्मपर निर्भर है। धर्म-पालन मेरा कर्त्तव्य है। मैं केवल अपने व्यक्तिगत महत्त्वको नहीं देखता। मेरे नजदीक उसकी कोई कीमत नहीं। मैं राष्ट्रकी दृष्टिसे विचार करता हूँ। मुझे मेरा जो कर्त्तव्य लगता है वह मैं करता हूँ।

सुभाष बाबूसे आपका जो पत्र-व्यवहार हुआ, क्या वह प्रकाशित नहीं हो सकता? अगर नहीं, तो कृपया बतलाइए कि क्यों?

पहले तो उस पत्र-व्यवहारको प्रकट करना तय हो गया था। बादमें जवाहर-लालजी आ गये और यह तय हुआ कि उसे रोक लें। यह भी तय हुआ कि मैं

भी कोई वक्तव्य नहीं निकालूँ। वह मुल्कके लिए अच्छा नहीं होगा। मैंने इसमें यही नीति अख्तियार की है कि सुभाष बाबूको जो सुभीतेका हो वही वे करें। अगर हम अहिंसक हैं तो हमें ऐसा ही करना चाहिए। किसी पत्र-व्यवहारको प्रकट करना हमारा काम नहीं है। हम जबतक रोक सकते हैं, रोकें। जब कोई आदमी खतमें लिखता है उसके विपरीत काम करे तभी उसे प्रकट करना हमारा कर्त्तव्य हो जाता है। ऐसी कोई बात यहाँ नहीं आती। इसलिए यह मैंने सुभाष बाबूपर छोड़ दिया है। पत्र-व्यवहार प्रकट न होने से अगर कोई गलतफहमी होती है तो कोई खास नुकसान नहीं है। सामनेवाला आदमी जब जरूरी समझेगा तब प्रकट कर देगा। अगर वह सब पुराना इतिहास बन गया तो छोड़ दिया जायेगा।

अब शंकररावके दो प्रश्न लेता हूँ। उनमें से दूसरा प्रश्न इसीसे संबंध रखता है। इसलिए उसे पहले लेता हूँ।

आपने सुभाष बाबूको एक पत्रमें लिखा है कि आपके और उनके बीच बुनियादी मतभेद हैं। वह कौन-सा?

मेरे और उनके बीचमें जो पत्र-व्यवहार हुआ उसका मैं उल्लेख नहीं करूँ वही अच्छा है। बात लम्बी हो जायेगी। थोड़ेमें समझा दूँ। उन्होंने जलपाईगुड़ीमें जो प्रस्ताव किया[1] वैसी आज भी उनकी राय है ऐसा मैं समझता हूँ। उसमें मैंने देखा कि मैं कहीं शामिल नहीं हो सकता। उसमें सरकारको अन्तिम सूचना (अल्टिमेटम) देने की बात है। वे मानते हैं कि हमारे पास लड़ाईका सामान मौजूद है। मैं बिलकुल उलटा मानता हूँ। आज हमारे पास लड़ाई करने का कोई सामान है ही नहीं। आज सारा वायुमण्डल हिंसासे इतना भरा हुआ है कि मैं लड़ाई कर ही नहीं सकता। उड़ीसामें रानपुर और कर्नाटकमें रामदुर्गका मामला कैसे बना? कानपुरमें पंतजी अपना काबू नहीं रख सके। लखनऊके शिया और सुन्नी मुसलमानों पर हमारा कोई काबू नहीं। जातीय झगड़ोंका तो कोई ठिकाना नहीं रह गया है। मुट्ठी-भर कांग्रेसवालों पर हमारा काबू रहने से हमारा काम नहीं चलेगा। हमारा तो हमेशा यह दावा रहा है कि सारे मुल्कपर हमारा काबू है। लेकिन आज मुट्ठी-भर लोगोंपर हमारा काबू रह गया है। मजदूर और किसान तो कांग्रेसवाले ही माने जाते थे। किसानोंपर बिहारमें हमारा पहले जो काबू था वह आज नहीं रहा। क्या यह लड़ाईके लिए अनुकूल स्थिति है? क्या कांग्रेसके काममें और अहिंसावादियोंके काममें फर्क है? आज मुझसे कोई कहे कि तुम 'दाँडीकूच' करो तो मुझमें हिम्मत नहीं है। मजदूर और किसानोंको छोड़कर हम कैसे काम कर सकते हैं? उन्हीका तो मुल्क है। सरकारको अन्तिम सूचना देने का सामान मेरे पास नहीं है। ऐसी सूचनासे देशकी हँसी ही होगी। लेकिन सुभाष बाबू समझते हैं कि हम लड़ाईके लिए तैयार हैं। यह मतभेद बहुत बड़ा और बुनियादी है।

१. **हिस्ट्री ऑफ द इंडियन नेशनल कांग्रेस,** जिल्द २, पृ० १०६ पर पट्टाभि सीतारामय्या बताते हैं: "जलपाईगुड़ीमें बंगालके प्रतिनिधियोंने मिलकर [एक] प्रस्ताव पास करके कहा कि ब्रिटिश सरकारको छह महीनेका नोटिस दिया जाये और सामूहिक [सविनय] अवज्ञा आरम्भ की जाये।"

लड़ाईके सामानकी उनकी कल्पना और मेरी कल्पनामें भेद है। सत्याग्रहकी मेरी जो कल्पना है वह उनकी नहीं है। क्या यह मतभेद बुनियादी नहीं है? मैं ये सब बातें आज ही अखबारोंमें नहीं दे सकता। क्योंकि उससे कोई फायदा नहीं है। मौका आने पर लिखूंगा। यह तो बुनियादी मतभेद की बात है। हमारे खतोंमें भी यह बात आई है। एक मोटी-सी चीज आपके सामने रख दी है। इससे व्यक्तिगत मतभेदका कोई सम्बन्ध नहीं है।

इसी तरह कांग्रेसकी अशुद्धिकी बात है। उसमें मेरा और उनका मात्रा (डिग्री) का भेद है। अशुद्धि है यह तो वे भी कबूल करते हैं। पर वे मानते हैं कि वह इतनी नहीं कि जिससे डरने की जरूरत हो। लेकिन मैं मानता हूँ कि जबतक यह अशुद्धि रहेगी हम कोई काम नहीं कर सकेंगे। मेरे नजदीक सविनय भंग और अधिकार-स्वीकारमें भेद नहीं है। दोनों सत्याग्रही लड़ाईके ही अंग हैं। इस तरह मेरा और उनका दृष्टिकोण और अवलोकन अलग-अलग है। सत्याग्रहका मेरा जो अर्थ है वह उनका नहीं है। इसलिए कभी-कभी मात्रा (डिग्री)का भेद भी बुनियादी हो जाता है। मैं तो यहाँतक अधीर हो गया हूँ कि अशुद्धि दूर करने के लिए कांग्रेसको ही दफन कर देना पड़े तो कर देना चाहिए। एक हिंसावादी संस्था जिन बातोंको दरगुजर कर सकती है उन्हें अहिंसावादी संस्था नहीं कर सकती। हिंसक-युद्धका दृष्टान्त यहाँपर लागू नहीं पड़ता। अब आप समझ गये होंगे कि बुनियादी मतभेदसे मेरा क्या मतलब है।

क्या समाजवाद और जवाहरलालजी से आपका मतभेद बुनियादी नहीं है? क्या उनके प्रति भी आपका यही रुख रहेगा?

नहीं। समाजवादियोंसे मेरा मतभेद दूसरी तरहका है। इन दोनोंको मिलाइये नहीं। सरकारको अन्तिम सूचना देने की बातपर उनका भी सुभाष बाबूसे मतभेद है। मुझे पता नहीं इसमें उनके साथ कौन-कौन है? इसलिए समाजवादियोंसे बुनियादी और तीव्र मतभेद होते हुए भी उनके बारेमें मेरे विचार दूसरे हैं। और फिर, समाजवाद और जवाहरलालको हम एक ही वर्गमें रख भी नहीं सकते। जवाहरलाल किसी समाजवादी गिरोहमें अपना नाम नहीं देते। उनका समाजवादमें विश्वास है। वे समाजवादियोंके साथ बैठते-उठते हैं, मशविरा कर लेते हैं। पर उनके काम करने के तरीकेमें काफी भेद पड़ा है। समाजवादियोंमें और मुझमें जो मतभेद है वह मशहूर ही है। मैं मनुष्यके हृदय-परिवर्तनमें और उसके लिए कोशिश करने में विश्वास करता हूँ। वे नहीं करते। वे चरखेकी हँसी उड़ाते हैं। परन्तु फिर भी समाजवादी हर दिन मेरी तरफ बढ़ रहे हैं। या, चाहें यों कह लीजिए कि मैं उनके पास जा रहा हूँ। या यों कहिए कि हम एक-दूसरेकी तरफ बढ़ रहे हैं। मुझे पता नहीं यह कबतक चलेगा। शायद एक दिन हम दोनोंका रास्ता अलग-अलग हो जाये। सुभाष बाबूके साथ ऐसा ही हुआ। जलपाईगुड़ीके प्रस्तावने हमारा मतभेद स्पष्ट कर दिया। जवाहरलाल और मुझमें मतभेद है तो सही। लेकिन वह नहीं-सा है। उनके बिना मैं अपनेको अपंग-सा महसूस करता हूँ। वे भी

कुछ ऐसा अनुभव करते हैं। मेरा और उनका हृदय एक है। हमारा यह घनिष्ट सम्बन्ध राजकारणसे ही शुरू नहीं होता। वह उससे बहुत पुराना और गहरा है। उस बातको हम छोड़ दें।

अब यह गंगाधररावका प्रश्न है।

समाजवादी लोगोंका हम लोगोंपर यह आरोप है कि आप सहिष्णु और उदार हैं और हम असहिष्णु और अनुदार हैं। उदाहरणार्थ, आप उन्हें वर्किंग कमेटी में लेने को तैयार होंगे पर हम नहीं। इसकी क्या वजह है?

यह मैं क्या जानूँ? इसका मैं क्या जवाब दूँ? इसका कारण आप अपने अन्दर खोजिए। मैं तो इतना ही कह सकता हूँ कि इसमें आप मेरा अनुकरण करें। मैं जैसी मीठी जबान रखता हूँ, आप भी रखें। समाजवादी मेरे पास चले आते हैं तो बड़े चिढ़कर आते हैं। लेकिन मेरे पाससे लौटते हैं तब हँसते हुए जाते हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि मैं अपना मतभेद उनके सामने प्रकट नहीं करता। मैं तो अपने दिलकी बात उनके सामने साफ-साफ कह देता हूँ। मैं कुछ उनकी खुशामद नहीं करता। लेकिन उनके हृदयमें प्रवेश करने की कोशिश करता हूँ। उनकी सचाईमें विश्वास रखता हूँ। उनका दृष्टिकोण समझ लेने का प्रयत्न करता हूँ। उनसे बात करने के लिए समय निकाल लेता हूँ। आप भी उनसे ऐसा ही सभ्यताका व्यवहार करें। इतनी मदद मैं आपकी कर सकता हूँ।

अब एक प्रश्न यह रह जाता है। लेकिन वह बड़ी चीज है। बाकीकी तो क्षणिक चीजें हैं। आप गांधी सेवा संघमें पड़े हैं। मैं उसका विधान देख गया। उसमें बहुत-सी बातें भरी पड़ी हैं। आप चन्द सिद्धान्तोंको मानते हैं। अन्नदाके दिलमें जो प्रश्न पैदा हुआ वह कांग्रेसके प्लेटफॉर्मपर पैदा होता तो दूसरी बात थी। पर जब संघके प्लेटफॉर्मपर होता है तब मुझे आघात-सा होता है। आप लोगोंके दिलोंमें ऐसी शंका क्यों हो? मेरे और सुभाष बाबूके बीचमें जो मतभेद है वह क्षणिक है। परन्तु उनके और मेरे बीचमें वैमनस्य आ जाये तो मुल्कका नाश हो जायेगा।

मतभेदसे वैमनस्य कभी भी पैदा नहीं होना चाहिए। आप सर्वधर्म-समानतामें मानते हैं। मैं आपसे कहता हूँ कि आप सर्वधर्म-समानताकी व्याख्याको जरा विस्तृत कर दें। नरम-दल और गरम-दलको भी उसमें शामिल कर लें। हमें तो नरम-दल और गरम-दलमें भी समानता देखनी है। जो अपने-आपको गरम-दलवाले मानते हैं उनके प्रति भी हमारे दिलमें आदर रहना चाहिए। गरम-दलवालेके धर्मको उसकी दृष्टिसे देखना चाहिए और नरम-दलवालेको उसकी दृष्टिसे। हमें अपना धर्म अपनी दृष्टिसे देखना चाहिए और दूसरोंका दूसरोंकी दृष्टिसे। यही सर्वधर्म-समभाव है। इसका मतलब यह है कि जिन बातोंमें हम सहमत हैं उनपर हमें ज्यादा जोर देना चाहिए। मतभेदोंकी बातोंपर ही जोर नहीं देना चाहिए। मुसलमान और ईसाईके धर्मके लिए मेरे मनमें आदर है, इसलिए मैं मुसलमान या ईसाई नहीं बन जाता। मेरा मतलब तो यह है कि उन धर्मोंके लिए मुझे उतना ही आदर है जितना

कि मेरे अपने धर्मके लिए होगा। मैं मुसलमान या ईसाई नहीं बनूँगा। यदि मैं असहिष्णु रहा तो मेरे 'कुरान' और 'बाइबल' पढ़ने से क्या फायदा? सर्वधर्म-समभावका यह ठीक अर्थ नही है। राजकारणमें भी जिनसे हमारा मतभेद है उनको हम ऐसा ही देखें। समाजवादीको इसी दृष्टिसे देखें। इस तरहसे देखेंगे तो जो मतभेद होगे वे क्षणिक होंगे। हम तो जहाँतक हो सके, झगडोंको मिटाने की ही कोशिश करते रहेंगे। अगर हम ऐसा न करेंगे तो हमारे दिमाग छोटे हो जायेंगे। हम छोटे-छोटे मतभेदोंको लेकर बैठ जायेंगे। जिस धर्मका मनुष्य ध्यान करता है उसीके समान बन जाता है। जो बड़ी-बड़ी बातें हैं उनको हम भूल जायेंगे, केवल मतभेदकी छोटी-छोटी बातें ध्यानमें रखेंगे तो इससे देशका सर्वनाश हो जायेगा।

जिन बातोमें हम सहमत हो सकते हैं उन्हें खोजना मुश्किल क्यो होता है? परस्पर विश्वास और सरल चित्तसे दूसरोंकी बात समझ लेने की तैयारी यही अहिंसाका राजमार्ग है। इसी सिलसिलेमें उसी परिपत्रकी[1] बात फिर ले लेता हूँ। उसे मैं दुबारा पढ गया। उसका भी मध्य बिन्दु यही है। वहाँ मध्य बिन्दु सरदार हैं। बहुत-से लोगोंके दिलमें ऐसा है कि सरदार ठीक काम नही करते। नरीमान, खरे, सुभाषके प्रकरणमें उन्होने अन्याय किया ऐसा वे मन-ही-मन मानते हैं। अगर ऐसा है तो वह साफ-साफ कह देना चाहिए। अहिंसावादीका यह शाश्वत धर्म है। सारे जगत्के प्रति हमारा यह धर्म है। किसीके प्रति हमारे दिलमें अविश्वास या रोष पैदा हो जाये तो हमारा कर्त्तव्य है कि हम उसके पास सीधे चले जायें और उससे समझ लें। इस सम्बन्धमें 'बाइबल' के दो वचन हैं उन्हें याद रखना चाहिए। नीतिके विषयमें 'बाइबल', या दूसरे किसी भी धर्मग्रन्थका वचन, वेदके वचन इतना ही प्रमाण होना चाहिए। उनमें से एक वाक्य तो यह है कि "अपने प्रतिपक्षीसे जल्दी समझौता करो।"[2] और दूसरा यह है कि "अगर किसीके बारेमें तुम्हारे दिलमें कुछ गुस्सा है तो उसपर सूर्यको न डूबने दो। सूर्यास्तसे पहले ही उसके पास चले जाओ और उससे बातचीत कर लो"[3] मेरे लिए तो ये वाक्य वेदवाक्यसे कम कीमती नही है। यही अहिंसाकी जड़ है। सच्ची बात तो यह है कि अहिंसाको हिंसाके मुँहमें चले जाना है। अगर आपके दिलमें यह है कि सरदारकी तरफसे सुभाष बाबूको अन्याय हुआ, नरीमानके साथ अन्याय हुआ, खरेके साथ अन्याय हुआ, तो मैं कहता हूँ, खरे-प्रकरण, नरीमान-प्रकरणमें दोष मेरा है। मैं सरदारको बचाने के लिए यह नही कह रहा हूँ। मैं सच्ची बात कह रहा हूँ। लेकिन अब तो वह अप्रस्तुत है। मैं सत्यार्थी, सत्यवादी, सत्याग्रही, ये सब विशेषण अपने लिए लगाता हूँ। इसलिए मैं जान-बूझकर अन्याय करनेवाले का साथ नही दूँगा। लेकिन आपके दिलमें अगर सरदारके प्रति कुछ हैं, तो आपको चाहिए कि उनसे जाकर पूछें। उनकी सफाईसे सन्तोष न हो और आपके दिलमें कुछ खटकता रहे तो आपका धर्म हो जाता है कि सरदारको आप संघमें से मुक्ति दे दें। इससे वे गांधी सेवा

१. देखिए पृ० २२१, पा० टि० २।
२. सेंट मैथ्यू, ५·२५।
३. इफेसियन्स, ४·२६।

संघके मिट नहीं जाते। मैंने कांग्रेससे मुक्ति ली तो कांग्रेसकी सेवा पहलेसे अधिक की। यदि आपने सरदारको संघसे मुक्त कर दिया तो आप उनके बैरी बन गये, या वे आपके बैरी बन गये, ऐसी बात नही है।

मैं जो सरदारके लिए कहता हूँ वह सबके लिए कहता हूँ। अपने यहाँ अप्पा पटवर्धन हैं। वे बड़े गणितशास्त्री हैं। गणितसे वे चरखे या यंत्र और इस्तेमाल करने का तरीका सूक्ष्मतासे दिखा सकते हैं। उन्हें चरखेमें श्रद्धा है, खादीको भी मानते हैं, अहिंसामें भी विश्वास रखते हैं। लेकिन, मान लीजिए कि उनके मनमें शंका उत्पन्न हो गई है। उनका सदस्योंकी सचाईपर से विश्वास उठ गया है। तो क्या उन्हें संघमें रहना ही चाहिए? अथवा, क्या यह जरूरी है कि वे संघके सदस्य नही हो सकते इसलिए वे संघके सदस्योंकी तरह सेवा ही क्यों करें? और वे संघके सदस्य नही हो सकते, इसलिए क्या वे हमसे बुरे आदमी हैं? लेकिन जब परस्पर अविश्वास उत्पन्न हो जाये, तो कोई संघ नही बन सकता। जबतक हमारा दिल ऐसा मानता है कि संघका कोई आदमी जान-बूझकर बुरा कार्य नही करेगा तभी तक हमारा मार्ग सरल रहेगा। अगर हमारे दिलमें ऐसा कोई शक पैदा हो ही जाये तो हमें एक-दूसरेसे सफाई माँगनी चाहिए। मेरे कहने का मतलब यह नही है कि जो इस तरह सरदारके बारेमें शंका करते हैं वे गंदे हैं और सरदार भले हैं। मैं ऐसी बात अपनी जबानसे नहीं निकालूँगा। मैंने तो सिर्फ रास्ता बताया। सरदार तो खुद ही कह रहे हैं कि यदि मेरे बारेमें शंका हो तो मैं संघमें क्यों रहूँ? आप जानते होंगे कि कुछ दिन पहले सरदार और जमनालालजी के बीच कुछ तनातनी और बोलचाल हो गई। जमनालालजी ने कहा कि मैं संघमें से चला जाता हूँ। सरदारने कहा कि उन्होंने तो संघ बनाया है वे क्यों जायें? मैं जाता हूँ। दोनों कहने लगे कि हमें छुट्टी दे दीजिए। हम काम करते रहेंगे। न वे गये और न ये गये। क्योंकि दोनोंके दिलमें एक-दूसरेके खिलाफ कुछ था ही नहीं। जो-कुछ समझफेर था वह चला गया। कोई वैमनस्यका सवाल तो था ही नहीं। इसी तरह आज भी सरदार कह रहे हैं कि मुझे मुक्ति दे दो। हमारे दिलमें अगर उनके लिए शक रह जाता है तो उसे रफा करना चाहिए। अगर ज्यादा आदमियोंके दिलमें शक रहे तो सरदारको निकल जाना चाहिए।

लेकिन एक भी आदमीके मनमें किसी सदस्यके लिए अविश्वास नही रहना चाहिए। जबतक ये चीजें छोटे पैमानेपर हैं तबतक वे महत्त्वकी नही दीखती। लेकिन बड़े पैमानेपर ये बातें पैदा हो जायें तो संघ ही नहीं रह सकता। तब तो यह नतीजा निकालना पड़ेगा कि इस युगमें सत्याग्रहियोंका और अहिंसावादियोंका कोई संघ ही नहीं बन सकता। लेकिन मेरा तो यह दावा रहा है कि सत्यवादियोंका संघ तो बिलकुल सरलतासे बन सकता है। मैंने तो अपने जीवनमें सत्य और अहिंसाको सामुदायिक धर्म बनाने की ही विशेष चेष्टा की है। अगर हमारी संस्थामें परस्पर अविश्वास बड़े पैमानेपर पैदा हो जाये, पचास वर्षके बाद भी यदि मुझे कहना पड़े कि सत्यवादी और अहिंसावादियोंका कोई संघ नहीं बन सकता, तो मैं कहूँगा — मैं निर्लज्ज होकर कहूँगा — कि पचास वर्षके बाद मुझे यह अनुभव हुआ कि जो

खास चीज मैंने अपने जीवनमें निकाली वह संघके रूपमें नही चल सकती। उसमें संगठित होने की शक्ति नहीं है। फिर तो इस संघको मिटा देना चाहिए। लेकिन आज तो मेरा दिल आशासे भरा पड़ा है। मैं सत्य और अहिंसाको संगठित रूप देना ही अपने जीवनका परम धर्म मानता हूँ।

अब देवका पहला प्रश्न आ जाता है। वह मुख्य प्रश्न है।

रचनात्मक कार्य और अहिंसाका घनिष्ट सम्बन्ध किस प्रकार है यह कृपया समझाइये।

अगर रचनात्मक कार्यका अहिंसासे घनिष्ट सम्बन्ध नही है तो दुनियामें दूसरी किस चीजका हो सकता है? हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य, अस्पृश्यता-निवारण, मद्यनिषेध और चौथा चरखा। पहली तीन बातोका अहिंसासे जो सम्बन्ध है वह तो बिलकुल स्पष्ट ही है। कोई अहिंसावादी एक क्षणके लिए भी किसीको अस्पृश्य कैसे मान सकता है? शराबसे अपनी बुद्धिको भ्रष्ट कैसे कर सकता है? मुसलमानोसे या दूसरे धर्मवालोंसे बैर कैसे कर सकता है? जबतक ये चीजें नही होंगी तबतक सामुदायिक सत्याग्रह नही हो सकता। यह चीज मेरे लिए है और सुभाष बाबूके लिए भी है। इन शर्तोंके बिना सुभाष बाबू भी सत्याग्रह नही करा सकते।

अब रहा चरखा। मेरे लिए तो चरखा अहिंसाकी प्रतिमा है। उसका आधार, जैसा कि मैं कह चुका हूँ, संकल्प है। रामनामकी भी वही बात है। रामनाममें कोई स्वतंत्र शक्ति नही है। वह कोई कुनैनकी गोली नही है। कुननकी गोलीमें स्वतन्त्र शक्ति है। उसमें कोई विश्वास करे या न करे। वह 'अ' को मलेरिया हुआ तो भी काम देती है और 'ब' को हुआ तो भी काम देती है। जहाँ-जहाँ मलेरियाके जन्तु हों वहाँ-वहाँ वह उनका क्षय करती है। रामनाममें ऐसी स्वतंत्र शक्ति नही है। मंत्रमें शक्ति संकल्पसे आती है। गायत्री मेरे लिए मंत्र है। उसमें मैंने अपने मोक्षका संकल्प किया है। मुसलमानके लिए उसका कलमा मंत्र है। मैं कलमा पढूँ और एक मुसलमान कलमा पढ़े इसमें बहुत बड़ा फर्क है। मुसलमान कलमा पढ़े तो वह एक अनोखा आदमी बन जाता है। क्योंकि उसने उसमें अपने मोक्षका संकल्प किया है।

चरखेमें ऐसी कोई स्वतंत्र शक्ति नही कि वह आपको स्वराज्य दे। लेकिन अगर मैं इस संकल्पको लेकर बैठ जाता हूँ कि मैं चरखेकी मारफत अहिंसाके पाठ पढूँगा, मै उससे स्वराज्य लूँगा तो चरखा मेरे लिए स्वराज्यका साक्षात् साधन बन जाता है। गांधी सेवा सघमें चरखेको जो स्थान मिला है वह सिर्फ इसलिए नही कि गरीबोंको दो पैसे मिलेंगे। केवल आर्थिक दृष्टिसे आध घण्टा सूत्रयज्ञकी क्या जरूरत है? और उसमें मौनकी क्या जरूरत है? आध घण्टा कातने से आप कितना-सा सूत निकाल लेंगे? १९२० में राष्ट्रने अहिंसक उपायोंसे स्वराज्य लेने का संकल्प किया। उस संकल्पके अधीन होकर हम यहाँ चरखा चलाते हैं। इस तरह चरखा प्रजाके संकल्पकी — हिन्दू-मुसलमान, गरीब-अमीर, बच्चे और बूढ़े, सबके संकल्पकी — प्रतिमा है। इससे ज्यादा घनिष्ट सम्बन्ध आपको क्या बता सकूँ?

जबतक घर-घर चरखा न हो, संपूर्ण शराबबन्दी न हो, जबतक हिन्दू-मुसलमानोंकी एकता न हो, और अस्पृश्यताका पूरा-पूरा नाश न हो, तबतक सारे हिन्दुस्तानका एक सामुदायिक सत्याग्रह, जो सुभाष बाबूके दिलमें है और जो मेरे दिलमें भी है, हम नहीं कर सकते। तबतक हम सिविल ना-फरमानीके लायक नहीं बन सकते।

सविनय भंग करने का अधिकार तभी आयेगा जब हम अपने बनाये कानून, अपनी खुशीसे पालेंगे। आज मुझे ऐसा नही लगता कि मैं देवसे कहूँ कि कोल्हापुरमें सत्याग्रह करो, रामचन्द्रन्से कहूँ त्रावणकोरमें करो और राधाकृष्णसे कहूँ कि जयपुरमें सत्याग्रह शुरू कर दो। दो महीने पहले तो मैं उन्हें इजाजत देने को तैयार था। दो महीने पहले जो बातें मुझे भद्दी नही लगतीं थी वे आज लगती है। इसलिए मैंने जमनालालजी को परवानगी दे दी थी। लेकिन आज कुछ चीजोंका नया वजन और नई कीमत मेरे दिलमें आ गई है।

ये चीजें मुझे राजकोटकी प्रयोगशालामें मिलीं। उस प्रयोगमें से जो बड़ी शक्ति मुझे मिली उसके बहुत मधुर परिणाम निकले। राजकोटकी बातोंका बयान करके मैं आपको हँसा सकता हूँ। वहाँ जो शक्ति मुझे मिली उसके मधुर रसका घूँट ले रहा हूँ। वायुमण्डलपर मेरा काबू आ रहा है। मेरा काम सरल हो रहा है। मैं ज्यादा आदमियोंसे काम नही ले सकता। क्योंकि मैं सख्त हो गया हूँ। पर मुझे क्या परवाह है कि मुझे राजकोटमें पाँच ही आदमी मिलें? उन्हीकी मददसे मैं कामको अंजाम दे दूँगा। पाँच हों तो उन्हीको लेकर लड़ाई शुरू कर सकता हूँ। बीसके सालमें मैंने कह दिया था कि अगर एक भी सच्चा सत्याग्रही मिल जाये तो काम शुरू कर सकते है। और अवश्य विजय पायेंगे। इसके साक्षी शायद वल्लभभाई होंगे। मेरी चेष्टा ऐसा सत्याग्रही बनने की है।

जब रौलट ऐक्टकी बात आ गई तब मैंने कहा इसपर इलाज तो है। लेकिन मैं अकेला तो नहीं कर सकता। क्योंकि मैं अपूर्ण सत्याग्रही हूँ। चन्द आदमी आ जायें तो कुछ कर लूँ। तब वह शंकरलाल आ गया, हॉर्निमैन, सरोजिनी, जमनादास द्वारकादास, और — वह बेचारा मर गया, उमर सोबानी — वह भी आ गया। इन सबका सहयोग मिला। ऐसा एक 'शंभुमेला' बन गया। फिर भी उसने सारे हिन्दुस्तानको जगाया और मेरी शक्तिको बढ़ाया। सब लोगोंकी तरफसे मुझे गर्मी चाहिए, सहायता चाहिए। सबकी सहायता लेने और संगठन करने की कोशिश में अपनी शक्तिको मैं बढ़ा रहा हूँ। आत्मनिरीक्षणकी मेरी शक्ति बढ़ रही है। मैं बड़ा स्वार्थी आदमी हूँ। मैं आपको वक्त देकर आपका निरीक्षण नहीं करता। मैं अपने वक्तकी काफी कीमत करता हूँ। अगर मैं समझूँ कि आपको वक्त देकर मैं अपना कोई फायदा नहीं करता तो ऐसी आत्महत्या मैं नहीं करूँगा। जब यह मैं देखता हूँ कि आपको वक्त देकर मैं कुछ पाता हूँ तभी वक्त देता हूँ। आप कुछ पाते है या नहीं इसकी दरकार मुझे नहीं है। मैं तो सिर्फ इतना ही देखता हूँ कि मैं कुछ पाता हूँ या नहीं। कही मेरा पतन तो नहीं हो रहा है? आपको फुसलाने के लिए मैं वक्त नहीं देता। मैं तो अपनी शक्तिको बढ़ाता हूँ। और इस

तरह मेरी शक्ति बढ़ती ही गई। भले ही मैं सत्तर बरसका बूढ़ा हो गया हूँ। मेरी शक्ति क्षीण नही हुई है। मैं अपनी जिम्मेवारीको समझता हूँ। जिस प्रतिज्ञाको ले लूँगा उसे पूरी करूँगा। फिर अकेला भी रह जाऊँ तो क्या? ट्रान्सवालमें मैंने ऐसा ही किया। मैंने प्रतिज्ञा कर ली कि मैं अकेला भी रह जाऊँ तो इस ट्रान्सवाल सरकारसे लड़ूँगा और विजय पाऊँगा। उस वक्त सत्याग्रहका जन्म भी नही हुआ था। करोड़ों लोगोंका संगठन इस तरह संकल्प-मात्रसे हो जाता है। मेरे पास इसके बहुत-से सबूत पड़े हैं। जब ६ अप्रैलकी हड़तालका[1] निश्चय हमने कर लिया तब क्या हुआ? कोई संगठन नही किया था। लेकिन हिन्दुस्तानके कोने-कोनेमें उपवास और हड़ताल हुई। वहीसे हिन्दुस्तानके स्वराज्यका जन्म हुआ। संकल्प-मात्रसे इतना काम हुआ लेकिन रचनात्मक कार्यकी तालीम न होने से वह चल न सका। जबतक आपके नजदीक रचनात्मक कामकी इतनी कीमत नही होगी कि उसके सिवा सविनय भंग चल ही नही सकता तबतक आपको निराशा ही होगी। रचनात्मक काममें दिन भले ही लग जायें लेकिन दूसरा रास्ता नही है।

रचनात्मक कामके बिना हम सविनय भंगको अंजाम नही दे सकते। उसके बिना अहिंसक वातावरण पैदा ही नही हो सकता। मेरे काम करने का यही तरीका रहा है। इसलिए जब सुरेन्द्र गुजरातमें चला गया तब मैंने उससे कहा कि अगर तुम्हारी सेवा कोई न चाहे, तुम्हारे पास कोई न आये, तो तुम्हारे पास चरखा तो पड़ा है न? चौबीस घण्टे वही चलाओ। संकल्पपूर्वक चरखा चलाओगे तो उसीसे सेवा होगी। मुझे उसमें कोई शंका नही है। मेरा तो विश्वास दिन-प्रतिदिन दृढ़ और दृढ़ ही होता जाता है।

गांधी सेवा संघके पंचम् वार्षिक अधिवेशन, (वृन्दावन, बिहार) का विवरण, पृ० ३०-४०

२३९. तार: सुभाषचन्द्र बोसको

वृन्दावन
६ मई, १९३९

सुभाष बोस
कलकत्ता

पत्र-व्यवहार प्रकाशित करवा दो। स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १३-५-१९३९

१. १९१९ में रौलट विधेयकके खिलाफ; देखिए खण्ड १५।

२४०. प्रश्नोत्तर : गांधी सेवा संघकी बैठक, वृन्दावनमें – २

६ मई, १९३९

अभी मेरे पास दो-चार कागज हैं। अध्यक्षने मुझे दिये हैं, उनमें से एक अप्पा साहब पटवर्धनका है। मैं उनके प्रश्न पहले लेता हूँ।

प्रश्न : जीवन-वेतनके सिद्धान्तपर अमल करने की कोशिश सदस्य किन मार्गोंसे कर सकते है?[१]

उत्तर : जो मार्ग नीतिके विरुद्ध नही ऐसे हरएक मार्गका प्रयोग करने में दोष नहीं है। एक मनुष्य जीवन-वेतनके लिए बढ़ईका काम करता है। उसमें से पन्द्रह रुपया कमा लेता है या घुनने का काम कर सकता है, सिलाईका काम कर सकता है। गांधी सेवा संघका सदस्य ऐसा ही धंधा चुनेगा कि जिससे हजारों लोग पैसे पाते हैं, हाथ और पैरोंसे काम करके आजीविका कमाते है। लेकिन वह सिर्फ आजीविका के लिए ही काम नही करेगा। वह आजीविका कमानेवालों के कष्टको तो मानता है, और जानता है। परन्तु स्वयं आजीविका तो पाता है और सेवा भी करता है। इन धंधोंके अलावा शिक्षणमें से भी सदस्य जीविका मिला सकते हैं। जिसकी हाजत बड़ी है और जो अप्पा-जैसा गणित जानता है वह प्रोफेसरी भी कर सकता है। पर मेरे नजदीक यह तो कुछ अपवाद-सा हो जाता है। जिनमें हाथ-पैरोंसे काम करना पड़ता है ऐसे धन्धोंसे जीविका कमाना मैं ज्यादा अच्छा समझता हूँ।

आपका ट्रस्टीशिपका सिद्धान्त या तो मेरी समझमें नहीं आता या मेरी बुद्धि उसे मंजूर नहीं करती। कृपया उसे समझाइए।

समझमें नही आता या बुद्धि मंजूर नहीं करती, दोनों चीजें एक ही हैं। इतना बड़ा सिद्धान्त मैं दो-चार मिनिटमें क्या समझाऊँ? फिर भी थोड़ेमें समझाने की कोशिश करता हूँ। मान लो मेरे पास एक करोड़ रुपये है। उन्हें या तो मैं स्वेच्छा-चारमें उड़ा दूँ यह एक वृत्ति हुई। या मैं यह समझूँ कि ये मेरे नहीं है। मैं उनका मालिक नही हूँ। विरासतमें ये मेरे पास आ गये है। ईश्वरने दिये है। इनमें से उतने ही मेरे है जितनी मेरी हाजत है। मेरी हाजत भी उतनी ही होनी चाहिए जितनी कि करोड़ोंकी है। मैं धनिकका लड़का हूँ इसलिए मेरी हाजत बड़ी नहीं हो सकती। मैं मौज-शौकमें पैसे नही उड़ा सकता। जो मनुष्य अपने समाजमें प्रचलित साधारण आवश्यकताके लिए जरूरी हो उतना ही लेता है और शेष पैसे सेवाकार्यमें खर्च करता है, वह ट्रस्टी बनता है।

१. साधनसूत्रके अनुसार गांधीजी ने "जीवन-वेतन" का अर्थ गलतीसे "जीवन-निर्वाह करने के लिए वेतन प्राप्त करने का योग्य तरीका" समझ लिया था।

हिन्दुस्तानमें जब समाजवादका प्रचार हुआ तबसे यह सवाल उठने लगा कि 'जो राजा है, करोड़पति है, उनके प्रति हमारा क्या व्यवहार हो?' समाजवादी कहते हैं कि राजाओंको और करोड़पतियोंको मिट जाना है। सबको मजदूर बन जाना है। उन सभीकी संपत्ति कानूनसे छीन ली जायेगी और पाँच रुपयासे आठ आना रोज, या पंद्रह रुपया माहवार, जो दूसरे मजदूरोंको मिलेगा वह उन्हें भी मिलेगा। यह समाजवादियोंकी मान्यता रही। यह तो हम भी कहते हैं कि धनिक धनके मालिक नही हैं। मजदूर अपने श्रमका मालिक है। इसलिए हमारे मतसे भी वह पैसेवाले धनिकों से बड़ा धनिक है। जमींदार एक, दो या दस बीघोंका मालिक माना जा सकता है। यानी उतनी जमीनका मालिक माना जा सकता है जितनी उसकी जीविकाके लिए जरूरी हो। हम भी यह चाहते हैं कि उसकी रोजी मजदूरसे अधिक न हो। वह भी आठ आने रोजपर गुजर करे और शेष सपत्तिका उपयोग जनताके कल्याण के लिए करे। लेकिन हम जबरदस्ती उसकी सपत्ति नही छीनेंगे। यही मुख्य बात है। चाहते तो हम भी यही हैं कि राजा और धनिक भी शरीरश्रम करें और आठ आना रोजमें अपना काम चलायें। शेष सपत्ति राष्ट्रका ट्रस्ट (थाती) समझें।

यहाँ दूसरा प्रश्न यह उत्पन्न हो सकता है कि ऐसे ट्रस्टी कितने हो सकते हैं। दरअसल यह प्रश्न उठना नही चाहिए। हमारे सिद्धान्तसे इसका सीधा सम्बन्ध नही है। ऐसा ट्रस्टी चाहे एक ही हो या एक भी न हो इसकी चिन्ता हम क्यों करे। हमारी यह श्रद्धा होनी चाहिए कि हम हिंसाके बिना, या इतनी कम हिंसासे कि जो हिंसा ही नही कही जा सकती, धनिकोंके अन्दर यह भाव पैदा कर सकते हैं। उस श्रद्धापर हमें अमल करना चाहिए। इतना हमारे लिए काफी है। हमें अपनी कोशिशसे जगत्को यह दिखा देना चाहिए कि हम अहिंसासे आर्थिक असमानता मिटा सकते हैं। ऐसे ट्रस्टी कितने होंगे यह सवाल तो उनके लिए उठता है जो अहिंसाको नही मानते।

आप यह भले ही कहें कि यह बात बन नही सकती, या आप उसे मनुष्य-स्वभावके विरुद्ध समझते हैं। लेकिन यह कहना कि यह बात समझमें नही आती या बुद्धिमें नही बैठती, मैं नही समझ सकता।

वर्णधर्मके बारेमें आपके विचार मुझे बिलकुल पसन्द हैं। लेकिन उनपर अमल कैसे किया जाये, यह बहुत जटिल सवाल है। इसका कुछ खुलासा हो।

'आज तो वर्णसकर हो गया है। वर्णोंका नाश हो गया है। ऐसी हालतमें वर्णको जो मानते हैं वे किस तरह चलें?'—यह इस सवालका मतलब है। आज तो एक ही वर्ण है। उसे शूद्र वर्ण कहो। अतिशूद्र तो हम नही कह सकते, क्योंकि हम अस्पृश्यताको नही मानते। हम पाँचवाँ वर्ण ही नही मानते। तो चौथा वर्ण शूद्र ही रह जाता है। हम सब अपनेको शूद्र मानें। फिर कोई श्रेष्ठ, कनिष्ठ या ऊँच-नीच नही रह जाता। द्वेष और भेदभावका अपने-आप बिलकुल क्षय हो जाता है। आजके वायुमण्डलके अनुकूल यही बात है। आज ब्राह्मण तो दुर्लभ है। ऐसा ज्ञान किसके पास है जो अपूर्व हो और जगत्का कल्याण करनेवाला हो? और ऐसा आदमी कहाँ है

जो उस ज्ञानके लिए कुछ भी न लेता हो? क्षत्रिय तो हिन्दुस्तानमें है ही नहीं। अगर होते तो देश परतंत्र होता ही नहीं। उच्च कोटिका ज्ञान और उच्च कोटिका शौर्य या क्षत्रिय तेज रहे तो हिन्दुस्तानकी आजकी हालत ही न रहे। अब रहे वैश्य। वणिकधर्म वर्णधर्म है। केवल पैसे कमाने का पेशा नहीं। वह अधिकार नहीं, धर्म है। उनको अपने धनका उपयोग समाजके लिए करना चाहिए। उनके अनेक धंधे जो वणिक करते हैं, अनीतिसे भरे हैं। बहुत अधिक पैसा कमाना भी अनीति है। वर्ण-धर्ममें तो इनमें से बहुत-से धंधे आ ही नहीं सकेंगे। इसका अर्थ यह हुआ कि आज वैश्य भी नहीं हैं। कुछ धनलोभी पेशेवाले हैं। इस तरह ये तीन तो गये। अब रहे शूद्र। उनके पास ज्ञान नहीं है। वे अपनेको गुलाम समझते हैं। ज्ञानपूर्वक सेवाका कार्य नहीं करते। यानी दरअसल तो शूद्र भी हिन्दुस्तानमें नहीं हैं। यानी चारोंमें से एक भी वर्ण जिन्दा है, ऐसा नहीं कह सकते। फिर भी हम जब वर्णधर्मको माननेवाले है तो सेवा-धर्मको मानें। शूद्रधर्मको ग्रहण करें। इसका मतलब यह नहीं कि हम ज्ञानका त्याग करें। उच्च ज्ञान जितना मिल सकता है, मिलायें। सच्ची वीरता, याने निर्भयता जितनी ला सकते हैं, लायें। व्यापार और उद्योग-धंधे जितने बढ़ा सकते हैं, बढ़ायें। यह सब धार्मिक दृष्टिसे और सेवाभावसे करें तो सम्भव है कि हममें से सच्चे ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य पैदा हों। और फिर भी उनमें कोई श्रेष्ठ-कनिष्ठ-भाव या परस्पर द्वेष न हो। ऐसा करें तो आइन्दा कुछ हो सकता है। जब ऐसा वर्णधर्म आयेगा तब आज साम्यवाद, समाजवाद, कांग्रेसवाद, गांधीवाद, जातिवाद आदिके नामसे जो झगड़े चलते हैं वे सब मिट जायेंगे।

अब वालुभाईके कुछ प्रश्न हैं।

जब श्री ठकार और मैंने ग्रामसेवा शुरू की उस वक्त गांधीजी ने एक महत्त्वकी शर्त यह बताई थी कि जिस देहातकी सेवा तुम करना चाहते हो वहाँके लोग तुम्हारी सेवा चाहते हैं इसके सबूतमें वे तुम्हें रहने के लिए मुफ्तमें जगह दें। अब इससे आगे बढ़कर मैं यह शर्त लगाना चाहूँगा कि ग्रामसेवकको वहीं जाना चाहिए कि जहाँके लोगोंको अपने गाँवके सुधारकी लगन हो और उस कार्यकर्ताके विविध कार्यक्रमोंमें गाँवके अगुआ मौका आने पर खुद शारीरिक मेहनत और गाँठका पैसा लगाने के लिए तैयार हों। जहाँ गाँवके मुखियोंका सहयोग न हो वहाँ कार्यकर्ता चाहे कितने ही दिन क्यों न रहे, कोई सुधार नहीं कर सकता। मैं जानना चाहता हूँ कि मेरी यह राय कहाँ तक सही है?

वालुभाई और ठकार-जैसे और भी सेवक महाराष्ट्रमें पड़े हैं। पहले जब उन्होंने काम शुरू किया तब वे आशावादी थे। लेकिन आज वे कहते है कि हम कितना भी करें वहाँपर इतना जहर फैलाया गया है कि गांधी टोपीवालों का तिरस्कार किया जाता है। गांधी टोपीवाले की सेवाका भी त्याग किया जाता है। ऐसी हालतमें निराशा हो सकती है। कई वर्ष पहले वालुभाई और ठकार काम शुरू करने की बात मुझसे पूछने आये थे। मैंने उन्हें एक परीक्षा बतलाई थी कि गाँवके लोग हमें कम-से-कम झोपड़ीका सामान दे दें तो हम समझें कि वे हमारी सेवा चाहते हैं। अब वालुभाई

इतनी शर्त काफी नही समझते। वे कहते है कि इससे आगे कुछ शर्त रखें। मैं इससे आगे बढ़ने को तैयार नही हूँ। यह कोई ज्यादासे-ज्यादा शर्त नही है। गाँववाले अगर हमें खाने को भी दें तो मेरी तरफसे क्या हर्ज है? मैंने इतना ही कहा कि हमारे लिए कम-से-कम शर्त क्या होनी चाहिए। हम उसको ज्यादासे-ज्यादा समझ ले। उससे आगे बढ़ने की जरूरत नही।

सेगाँवमें मेरे साथ ऐसा ही हुआ। मैंने लोगोसे पूछा, 'क्या मैं सेगाँवमें आ जाऊँ?' मुझे जमीन तो जमनालालजी ने दे दी। हमारे लोग तो बड़े विवेकी होते है। उन्होने बड़ी अदबसे मुझसे बातें की। लेकिन जो कहना था सो कह दिया। एक बूढ़ा मेरे पास आ गया और उसने मुझसे कहा कि 'आप सेगाँवमें आ सकते है। बड़ी कृपा होगी। पर हम मन्दिरोमें अस्पृश्योंको नहीं जाने देंगे। ऐसी कोई आशा आप हमसे न करे।' तो भी मैं वहाँ गया और रह गया। लोग हमको रहने के लिए जगह दे दें इतनी शर्त पूरी होने पर हमारे पास निराशा-जैसी चीज नही होनी चाहिए।

जहर कहाँतक ठहरनेवाली चीज है? अखबारवाले लिखते है कि गांधीवादी, मैं और सरदार ऐसे हैं और वैसे हैं। अगर हम सचमुच वैसे है तो उनका लिखना ठीक है। हमें सारी बातें कबूल कर लेनी चाहिए। अगर हम इतने बुरे है तो लोग हमारी सेवा क्यो ले? वे हमारे हाथोसे दवाई भी नहीं लेगे। डरेंगे कि कही हम दवा में भी जहर दे दें तो। अगर दवाईके पीछे कोई मलिन हेतु होता है तो वे कहेंगे कि हमें तुम्हारी दवा भी नही चाहिए, उससे मरना ही बेहतर है। अगर कोई मेरी सेवा करने आता है पर दिलमें यह इच्छा रखता है कि अन्तमें मुझे मार डाले, तो ऐसे आदमीका विश्वास मैं नही करूँगा, और कह दूँगा कि तुमपर मेरा विश्वास नही है। अगर लोगोंके दिलमें हमारे बारेमें ऐसा ही वहम है तो हमें सच्ची सेवा द्वारा उसे दूर करना चाहिए। लोगोंमें यह विश्वास पैदा करना चाहिए कि हम सेवा ही करना चाहते हैं। कोई नुकसान करना नही चाहते। लोगोंका विरोध देखकर अगर हम निराश होकर चले जाते है तो हम लोगोंको अपनी परीक्षा भी नही करने देते। जब पड़े रहेंगे तभी तो परीक्षा होगी। लोग हमारी झोंपड़ी जला दें फिर भी हम पड़े रहें तो भ्रम हट जायेगा। जब लोग देखेंगे कि हम इसकी झोंपड़ी जलाते हैं, मारते-पीटते हैं, गालियाँ देते है, पानी बन्द कर देते है, तो भी यह कुछ भी नही करता, तो उन्हीको पश्चाताप होगा।

हमारे बारेमें अखबारवाले मनमानी बातें लिखते है, लेकिन इसकी हमें शर्म क्या होनी चाहिए? हाँ, जितनी बात सच हो उतनी के लिए शर्म होनी चाहिए और उसे दूर करने की कोशिश करनी चाहिए। अगर हम ऐसे खराब नही है तो हमें चिन्ता क्यों हो? अगर हममें खराबी है तो उसे कबूल करने में भी डर क्यों हो? अगर 'विविधवृत्त'[1] में लिखा है कि अमुक शराबी है, ऐसा है, वैसा है, तो उसमें से जितनी बात सही है उतनी कबूल कर लें। हमें कह देना चाहिए कि हाँ,

१. बम्बई से प्रकाशित मराठी साप्ताहिक।

रातको चुपचाप एक प्याली शराब पी लेता हूँ। कभी-कभी थोड़ा-सा व्यभिचार भी कर लेता हूँ। हम अपने अपराधोंको कबूल कर लेंगे, या समझ लेंगे तो सुधर भी सकते हैं। लोगोंसे कह देना चाहिए कि 'ये दोष मुझमें हैं। धीरे-धीरे सुधर जाऊँगा।' पर वहाँसे भाग तो जाना ही नही चाहिए। भाग जाना तो हमारी किताबमें हो ही नही सकता। सत्याग्रही अपना धर्म इस तरह पाल ही नही सकेगा। अगर हमारी श्रद्धा संपूर्ण है तो निराशाका कोई कारण नहीं।

तब वहाँ रहकर आजीविकाके लिए क्या प्रबन्ध करे, यह सवाल आप पूछ सकते हैं। यह वही सवाल है जो अप्पाने पूछा। आप कुछ मेहनत-मजदूरी करें। रास्ता साफ करें, या दूसरा कोई काम करें। चार-छः पैसा मिले तो उसीपर गुजर करें। पैसेके बदले दाल-चावल मिले तो उसीको खाकर काम चलायें। गांधी सेवा संघसे हमेशा पैसे मिलते रहेंगे ऐसा नही। इसमें देह गिर जाये तो क्या! जिसने पक्का निश्चय कर लिया है वह जो कष्ट आ पड़े उसकी बरदाश्त कर लेगा तो उस निराशामें से भी आशा पैदा हो जायेगी।

इसके बादका सवाल अच्युत देशपांडेका है:

देशी राज्योंमें जब कोई फिर्का अपनेको विजेता या राजाकी जातिका मानकर प्रजा के न्याय्य आन्दोलनका न केवल विरोध ही करता है बल्कि उसे दबा देने में सरकारकी मदद करता है और आन्दोलन करनेवालों पर हिंसामय आक्रमण भी करता है, तो उस फिर्के के प्रति भी प्रजा का रुख उसी प्रकारका हो जाता है जैसा कि उस सरकारके प्रति। क्या यह स्वाभाविक नहीं है? इस प्रकार प्रजाके दो अंशोंमें जो दुराव पैदा हो उसे कैसे मिटायें? क्या कुछ समयके लिए इस सवालकी तरफ ध्यान ही न देना व्यवहार्य न होगा? क्या ऐसा मानने में कोई दोष है कि इस सवालको छोड़ देने से ही वह आसानीसे हल होगा?

मैं यह प्रश्न पूरा-पूरा नही समझ सका। लेकिन जितना समझा हूँ उसका उत्तर आज हमने दो-तीन दिनसे जो चर्चा की उसमें आ गया है। मैंने सत्याग्रहका आन्दोलन देशी राज्योंमें बन्द कर दिया है और हिन्दुस्तान-भरमें शुरू करने की मेरी हिम्मत नही होती, इसका कारण यही है। जहाँ द्वेषका और हिंसाका वातावरण पैदा होने का डर हो वहाँ हमारा यह धर्म हो जाता है कि हम अपना आन्दोलन न करे। क्योंकि वह चलेगा नही। उससे गलतफहमी पैदा हो जायगी। लोग गलत रास्ता पकड़ लेंगे। हमारे अकेलेके अहिंसक रहने से काम पूरा नहीं होगा।

एक उदाहरण लीजिए। मैं सेगाँवमें रहता हूँ। मान लीजिए, वहाँ एक साँप है। मुझे तो साँपका डर नही। लेकिन मेरे आसपासके लोग डरते हैं। तो उन्हें निर्भय करने के लिए मुझे साँपको वहाँसे हटाना होगा और उसे ऐसी जगह रखना होगा जहाँ लोगोंको उसका डर न लगे। समझ लीजिये, किसी जगह मरकी (छूतका रोग) हो गई है। मैं वहाँ सेवा-शुश्रूषा करने जाता हूँ। मैं तो ईश्वरके भरोसे रहता हूँ। लेकिन इसलिए क्या लोगोंके पास भी बिना स्नानादि किये चला जाऊँ?

लोगोंको छूत लगने का डर है। तो, मेरा अहिंसा-धर्म तो यह है कि मैं दूसरोंके पास स्नानादि करके ही जाऊँ। किसी गाँवमें चेचककी बीमारी फैल जाती है। हम दस-बीस आदमी स्मॉलपाक्स (चेचक) का टीका लगवाने में नही मानते। इसलिए टीका नही लगवाते। फिर भी, लोगोंकी सेवा तो करना चाहते हैं। हम मानते हैं कि टीका असफल हो गया है। लेकिन जिनकी सेवा करना चाहते हैं, उनके गाँवोंमें बीमारी फैलाना तो ठीक नही होगा। इसलिए यदि हम लोगोके बीचमें रहना चाहते हैं तो हमारा यह अहिंसा-धर्म हो जाता है कि हम खुद टीका लगवा लें, या वहाँसे चले जायें। इस बडे धर्मके सामने टीका न लगवाने के छोटे धर्मका लोप हो जाता है। बम्बई और मद्रासमें जो टीकाका कानून बना है उसके बारेमें मुझसे पूछा गया। मैंने डॉ० बार्कीसे कहा कि जो लोग टीका लगवाने में नही मानते वे लोग या तो गाँवसे हट जायें, या टीका लगवायें। यह अहिंसाका धर्म है। एक तरहसे तो बहुत सीधा है, एक तरहसे इतना सरल नही है।

दूसरा उदाहरण लीजिए। साबरमतीमें हम एक छोटा-सा बगीचा लगाकर बैठे हैं। वानर आकर उसका नाश करते हैं। उन्हीं वानरोंको लोग खिलाते हैं। इसलिए वे वहाँ रहते है। आप मथुरा-वृन्दावनमें चले जाइये। इतने वानर हैं कि लोग सुखसे रह नही सकते। लेकिन पास ही कण्टूनमेन्ट है, वहाँ एक भी वानर नहीं है। और शहरमें तो इतने भरे पड़े हैं। इस तरहसे वानरोंको खिलाना अहिंसा-धर्म नही है। वह दूसरे लोगोंके साथ अन्याय है।

यही बात हमारे आन्दोलनोंकी है। हमारे विरोधी ही नही बल्कि हमारा साथ देनेवाले भी हिंसासे भरे हैं। दूसरे तो स्वराज्यका निकन्दन ही करना चाहते हैं। इसका मतलब यह है कि लोगोंका सच्चा सहयोग नही है। हम स्वराज्यका आन्दोलन करना चाहते हैं तो वे हमपर आक्रमण करते हैं। ऐसी हालतमें अगर हम सत्याग्रह चलाने की जिद करेंगे तो हम स्वराज्यको दूर भगा देंगे। प्रश्नका उत्तर साफ है। हमारी जो पाँच-दस आदमियोंकी टोली होगी उसको स्वराज्य छोड़ देना होगा। हम तो नाशके लिए तैयार ही हैं। इसलिए हमारा नाश नही होगा। उनके विरोधका नाश होगा। जो लोग स्वराज्यका विरोध करते हैं वे गरीबोंका नाश चाहते हैं। इसलिए हिंसाकी परिस्थितिमें आन्दोलन चलाने से उनका कोई नुकसान नहीं होगा। गरीबोका सर्वनाश होगा। हम अपने नाशके लिए तैयार है, गरीबोंके नहीं।

यही प्रयोग मैं राजकोटमें कर रहा हूँ। इसलिए मैं कहता हूँ राजकोट मेरी लेबोरिटरी. (प्रयोगशाला) बन गई है। वहाँपर आज सत्याग्रह मैंने रोक रखा है। बल्कि सविनय भंग कहना चाहिए। यहाँ सत्याग्रह शब्द सही नही है। आज मैंने हर जगह सविनय भंग रोक रखा है और रचनात्मक कार्यपर ही जोर दें रहा हूँ, क्योंकि उसमें यह खतरा नही है।

बापू, मेरे सवालके कुछ हिस्सेका जवाब मिलना बाकी है। आपने अभी समझाया कि आज, जबकि वायुमंडल हिंसासे भरा हुआ है ऐसी हालतमें साम्प्रदायिक और दूसरे तरहके दंगे होने का डर है। आन्दोलन करनेवाले भले ही मार खायें

और मुसीबतें सहें, लेकिन जिनकी यह तैयारी नहीं उनको भी मार खाने के लिए मजबूर नहीं करना चाहिए। इसलिए सविनय भंग बन्द करके रचनात्मक काममें लग जाना चाहिए। यह सब समझमें आ गया। लेकिन रचनात्मक काम करते हुए अपनी शक्ति बढ़ाने की कोशिश करना तथा आन्दोलनमें हिस्सा लेनेवाली प्रजाको अहिंसाकी शिक्षा देना तो जरूरी है ही। अब सवाल यह है कि मान लीजिए कि हम लोग कोई सभा करना चाहते हैं या जुलूस निकालना चाहते हैं। यह सभा या जुलूस निर्दोष है। उनमें हिंसाकी भाषा तक नहीं। तो भी कोई एक फिर्का (यथा—राजकोटमें गिरासिया, बड़ौदाके कुछ महाराष्ट्रीय, हैदराबादके कुछ मुसलमान) इस भ्रमसे कि हम सरकारके प्रति बेवफा हैं और उस फिर्केको नुकसान पहुँचाना चाहते हैं हमको देखते ही क्रोधसे मतवाला हो जाता है, हमें कोसता है और हमपर टूट पड़ता है। इस तरह हमारा आन्दोलन उनमें गुस्सा पैदा करता है और उनके और आन्दोलनकारियोंके बीच एक दीवार खड़ी हो जाती है। ऐसे वक्त यदि उनसे समझौतेकी बातें करने जायें, या संपर्क बढ़ाने की कोशिश करें तो, चूँकि पहले ही काफी गैरसमझी हो चुकी है, इसलिए हमारी कोशिशें आगमें तेलका काम देती हैं।

तो क्या मेरा यह कहना ठीक है कि ऐसी हालतमें हिन्दू-मुस्लिम-एकता या गिरासिया गैर-गिरासिया-एकता कमिटियाँ बनाने के, यानी एकताकी फजूल कोशिश करने के बदले कुछ दिनके लिए इस बातमें हाथ ही न डालना आवश्यक और व्यवहार्य है?

हाँ, ठीक है।

यह प्रश्न मूलचंद अग्रवालने पूछा है। वह तो मेरा पुराना पूछनेवाला है।

बाल-विवाह, मृतक बिरादरी-भोज, पर्दा और छुआछूतके कारण लोगोंमें राष्ट्रीय जागृति होने ही नहीं पाती है। परन्तु कुछ लोगोंका खयाल है कि राजनैतिक कार्य ही करना चाहिए, समाज-सुधारके कार्यमें क्या रखा है? यह काम तो राजनैतिक अधिकारोंकी प्राप्तिके पश्चात् अपने-आप हो जायेगा। इसलिए कृपाकर बतलायें कि राष्ट्र-निर्माणके कार्यमें समाज-सुधारका क्या स्थान है?

यह प्रश्न तो बहुत देरसे पूछा गया है। यह तो १९२० में ही पूछना चाहिए था। मेरे नजदीक ऐसा कोई अनोखा राजनैतिक क्षेत्र नहीं है जिसका समाज-सुधारणासे सम्बन्ध न हो। दोनों ओतप्रोत हैं। समाज-सुधारको हम तीव्रतासे न करें तो राज्यसुधारणा भी नहीं होती। इसलिए मैं समाज-सुधारको पहला स्थान दूंगा और राजकीय काम अगर कोई अलग चीज है तो, उसे दूसरा। मैंने विद्यापीठके काममें, खादीके काममें, सनातनियोंसे मदद ली। लेकिन जब उन्होंने कहा कि अस्पृश्यता-निवारणकी बात छोड़ दो तो मैंने कहा कि मैं आपकी मदद के बिना काम चला लूंगा। मूलजी जेठा मार्केटने पैंतीस हजार रुपयेका वचन दिया था। लेकिन ऐसी ही कुछ शर्तें बताई। मैंने कहा आपके पैंतीस हजार आपको ही मुबारक हों, मुझको नहीं चाहिए, लेकिन अस्पृश्यता-निवारण आज ही चाहिए।

उनके पैंतीस हजार आजतक नही आये। पर स्वराज्यका काम नहीं रुका। ऐसी चीजोको अपने दिलमें स्थान देना भयकर है। 'राजकीय' और 'सामाजिक' के विचारको भी हम अपने दिलमें स्थान न दें। राष्ट्रकी प्रगतिको न रोकें।

हाँ, यह सही है कि कुछ विवेक तो करना होगा। बिरादरीमें कोई भोजन देते हैं तो वहाँ जाकर सत्याग्रह करना ठीक नही है। हम भोजन करने न गये तो काफी है। समाज-सुधारके विषय तो इतने पड़े हैं कि वे राजनैतिक कामके साथ-साथ चलते ही रहेंगे। उसमें भी हम अहिंसासे काम लेंगे। लेकिन सत्याग्रह तो प्रचंड शस्त्र है। उसका उपयोग हर जगह नही कर सकते। उसका उपयोग मर्यादित है।

अब महावीरप्रसाद पोद्दारका यह प्रश्न है।

जो आदमी अपने घरवालों को या आसपासवालों को हरिजनोंके साथ खाने-पीने के व्यवहारके लिए तैयार न कर सका हो उसे गांधी सेवा संघका सदस्य होना चाहिए या नहीं?

जबतक उसने अपने घरका व्यवहार शुद्ध नही किया, या नहीं कर सका, तबतक उसे गांधी सेवा सघका सदस्य किसी हालतमें नहीं होना चाहिए। जबतक उसने अपने घरका झगड़ा तय नही किया तबतक बाहर रहकर सेवाकार्य करता रहे। तो क्या घरवालोसे और अपनी पत्नीसे लडाई-झगड़ा करता रहे? अपनी पत्नीको मारे-पीटे और घरसे निकाल दे? हरगिज नही। अपने आचरणमें वह अस्पृश्यता न माने। अपने घरवालो के विरोधको शान्तिसे बरदाश्त करे। अहिंसासे उनके दिल-पर काबू कर ले। उसके लिए तो अपना घर ही प्रयोगशाला बन जाती है। जबतक वह अपनी पत्नीको अपने प्रेमसे नही जीत सका तबतक वह गांधी सेवा संघमें न आ सकेगा।

राधाकृष्ण बजाज: जिसकी ईश्वरपर श्रद्धा हो वही सत्याग्रहमें भाग ले सकता है इस नियमको जो लोग दिलसे नहीं मानते, जो समाजवादी या अनीश्वरवादी हैं, उनके लिए क्या सत्याग्रहका रास्ता बन्द ही समझना चाहिए?

मुझे यह दु खके साथ कहना पड़ता है कि 'हाँ'। सत्याग्रहीका बल ईश्वर ही है। वह अकेली अपनी टाँगोंके बल चलना चाहता है। लकड़ीका सहारा नहीं चाहता। बाहरी बलपर भरोसा नही रखता। ईश्वरपर विश्वास भीतरी शक्ति है। इसलिए जो उसे नही मानते उनके लिए सत्याग्रहका मार्ग बन्द है। वे नि शस्त्र प्रतिकारका रास्ता ले। वे असहयोगी भी हो सकते हैं। लेकिन सत्याग्रही नही। क्योंकि जो ईश्वरको नही मानता वह अन्तमें हारेगा। तो क्या मैं कबूल कर लूं कि अहिंसासे विजय नही हो सकती? उलटे मैं तो कहता हूँ कि अहिंसामें पराजयकी गुंजाइश ही नही है। ईश्वरमें विश्वास ही अहिंसाका बल है। इसलिए कोई दुःख भी माने तो हमें बरदाश्त कर लेना चाहिए। लेकिन साफ कह देना चाहिए कि जो ईश्वरको नही मानते उनके लिए यह रास्ता नही है। दूसरा कोई मार्ग नही है। जो समाज-वादी मुझे नही समझते वे कहेंगे कि देखो इसने हमको निकालने के लिए यह एक नई युक्ति निकाली। मैं लाचार हूँ। इस आक्षेपको भी सह लूंगा। आप यह भले

ही कहें कि इससे तो बहुत-से बहादुर साथी बाहर रह जायेंगे और ईश्वरमें कोरा विश्वास बतानेवाले परन्तु अपने जीवनमें उसपर अमल न करनेवाले दांभिक लोग आ जायेंगे। लेकिन मैं दांभिकोंकी बात नहीं कर रहा हूँ; बल्कि उनकी जो ईश्वर के नामपर अपना सर्वस्व देने को तैयार हैं।

मुझसे यह सवाल पूछने के बदले यह पूछो कि तू बीस साल तक क्यों सोया? और अब बीस वर्षके बाद यह नई शर्त क्यों लगाता है? यह कहो कि मुझे जागने में इतनी देर क्यों लगी? इस इलजामको मैं एकदम कबूल कर लूँगा। मैं इतना ही कहता हूँ कि मैं कहाँ आसमानसे उतरकर आया हुआ पूर्ण सत्याग्रही हूँ? मैं कोई सत्याग्रहका बना-बनाया तंत्र लेकर नहीं आया हूँ; या स्वर्गसे कोई पुस्तक लेकर नहीं आया हूँ, जिसे देखकर पहलेसे ही सारी बातें बता सकता। मैं तो आपके साथ समाजमें बैठा हूँ। सत्याग्रहके प्रयोग और अनुभवसे जो नई चीज मिल जाती है वह आपके सामने रख देता हूँ।

कृपलानी : तो क्या जैन और बौद्ध आदि निरीश्वरवादी सत्याग्रहमें नहीं जा सकते?

अगर कोई जैन और बौद्ध अनात्मवादी ही है तो वे नहीं जा सकते। लेकिन वे तो आत्मवादी हैं। जो आत्मवादी हैं वे ईश्वरवादी भी हैं। ईश्वर शब्दका एक विशेष अर्थ लेकर ही वे झगड़ा करते हैं। मैं झगड़ा नहीं करना चाहता। राजकोटमें किसी जैनने मुझसे पूछा भी तो मैंने यही कहा। तब उसे खयाल आया कि जैन भी तो एक महाप्रचंड शक्तिको मानते हैं। जो हर हालतमें हमारी मदद करे ऐसी शक्तिको जो मानता है वह नास्तिक नहीं है। वह ईश्वरको मानता है। फिर जैन और बौद्ध हो तो भी क्या हुआ? लेकिन यदि जैन और बौद्ध भी खुद कहें कि हम तो ईश्वरको नहीं मानते इसलिए सत्याग्रही नहीं बन सकते तो मैं उनसे बहस नहीं करूँगा। कहूँगा कि आप ठीक कहते हैं।

कृष्ण नायर : कोई शख्स ईश्वरको मानता है या नहीं इसकी कसौटी क्या है? कोई उसे एक मनोवैज्ञानिक सम्भावनाके रूपमें मानता हो और एक गूढ़ शक्तिके रूपमें नहीं मानता हो तो क्या वह अनीश्वरवादी है?

यह प्रश्न सूक्ष्म है। उसमें इतना गहरा जाने की जरूरत भी नहीं है। बात यह है कि मैं यह नहीं कहता कि मैं जिस रूपमें ईश्वरको मानता हूँ उसी रूपमें या उसी भाषामें सबको मानना चाहिए। कोई आदमी ईश्वरको मानता है या नहीं इसकी बनी-बनाई कसौटी नहीं है। फिर भी इस बातकी परीक्षा तो हो सकती है। लेकिन अब इसका फैसला कल होगा।[1] क्योंकि मेरा समय खत्म हो चुका है।

गांधी सेवा संघके पंचम वार्षिक अधिवेशन, (वृन्दावन, बिहार) का विवरण, पृ० ५०-९

१. देखिए पृ० २५२-३।

२४१. बातचीत : ग्राम-सेवकोंसे[1]

६ मई, १९३९

यह देखकर दु:ख होता है कि आप लोगोंमें से अधिकांश लोग या तो शहरोंसे आये हैं या शहरी जीवनके अभ्यस्त हैं। जबतक आप अपना मन शहरसे हटाकर गाँवोंमें नही लगायेंगे तबतक गाँवोकी सेवा आप नही कर सकते। आपको यह भी समझ लेना चाहिए कि हिन्दुस्तान गाँवोसे ही बना है, शहरोंसे नहीं, और जबतक आप ग्राम-जीवनको और गाँवोंके हस्त-उद्योगोंको पुनरुज्जीवित नही करते तबतक उनका पुनर्निर्माण नही कर सकते। हमारे इन गाँवोंमें जीवनका प्रवाह रुद्ध हो गया है और वे मृतप्राय हैं; औद्योगीकरण उनमें प्राणोंका संचार नही कर सकता। अपनी झोपड़ीमें रहनेवाले किसानको जीवन तभी मिलेगा जब उसे अपने घरेलू उद्योग फिरसे वापस मिलेंगे और जब अपनी आवश्यक वस्तुओंके लिए वह गाँवोंपर ही निर्भर रहेगा, शहरों पर नही, जैसा कि आज विवश होकर उसे करना पड़ रहा है। इस आधारभूत सिद्धान्तको यदि आप आत्मसात् नही करते तो ग्राम-पुनर्निर्माणके उस कार्यमें लगनेवाला आपका सारा समय व्यर्थ जायेगा।[2] अपने गाँवोंको नये सिरेसे बनाइए। गाँव इस समय विनाशके शिकंजोंमें हैं, उनमें नये जीवनका संचार कीजिए। उन करोड़ों ग्रामवासियोंको बचाइए जिन्हें आपकी मददकी जरूरत है।

आपसे एक और बातका खयाल रखनेको कहूँगा।

जो भी व्यक्ति ग्राम-सेवाकी योग्यता हासिल करना चाहता है, उसका मन और उसकी दृष्टि पवित्र होनी चाहिए। वह प्रत्येक स्त्रीको अपनी माँ या बहन समझे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-६-१९३९; अमृतबाजार पत्रिका, ८-५-१९३९ भी

१. "गांधी सेवा संघ–४" से उद्धृत। महादेव देसाई बताते हैं कि "बिहार-सरकारने ग्राम-पुनर्निर्माणके लिए ग्राम-सेवकोंकी नियुक्ति की थी।"

२. अनुच्छेदका शेष भाग अमृतबाजार पत्रिका से लिया गया है।

२४२. क्या नीरा आपत्तिजनक है?

मद्य-निषेध-अभियानके विरोधमें पारसी मित्रों द्वारा उठाई गई चौदह आपत्तियोंमें यह एक अनोखा अनुच्छेद भी देखने को मिलता है:

> महात्माजी पारसियोंसे नीरा पीनेको कहते हैं किन्तु पारसी नीरामें पाये जानेवाले तत्त्वोंको अच्छी तरह जानते हैं। इसके अतिरिक्त ब्रिटिश सरकारने नीरा पीने के प्रयोगको कर-मुक्त करके आजमा लिया है, किन्तु उसका प्रयोग असफल रहा, क्योंकि नीरा सर्दी, उदरवायु, अतिसार आदिको जन्म देता है। इस प्रकारका प्रयोग सेगाँवमें महात्माजी के आश्रममें किया जा चुका है, और वहाँ उसका परिणाम घातक सिद्ध हुआ।

मैं नहीं जानता कि बम्बई सरकारने क्या आजमाया था। किन्तु मैं इतना अवश्य जानता हूँ कि जो लोग नीराका सेवन कर रहे हैं उनपर इसका कैसा प्रभाव हो रहा है और हुआ है। यह कहना सर्वथा गलत है कि सेगाँवमें किया गया प्रयोग असफल रहा और उसने घातक परिणाम प्रदर्शित किये। लेखकने इसके जो बुरे परिणाम बताये हैं वे तो कभी देखने में नहीं आये हैं। इसके विपरीत सेगाँवमें नीरा खूब पी जाती है और उससे लोगोंको स्वास्थ्य-लाभ भी हो रहा है। इसके अतिरिक्त उसका राव या गुड़ बनाया जाता है और उसका इस रूपमें मैं और अन्य बहुत-से लोग लगभग प्रतिदिन उपयोग करते हैं। गुड़के रूपमें इसे बहुत बड़ी मात्रामें बेचा जाता है। लोग इसे गन्नेसे बनाये गये गुड़से भी ज्यादा पसन्द करते हैं, क्योंकि यह कम मीठा होता है। जहाँतक नीरा पीने के कारण लोगोंकी मृत्यु होनेकी घटनाका सम्बन्ध है, यह बात सेगाँवकी नहीं बल्कि वर्धाकी है, लेकिन जाँच-पड़तालसे यह बात बिलकुल स्पष्ट हो गई है कि उनकी मृत्यु नीरा पीनेके कारण नहीं बल्कि हैजेसे हुई थी। इन लोगोंकी मृत्युका नीरा पीने से कोई सम्बन्ध था, ऐसा सिद्ध करनेवाली कोई बात जाँचमें सामने नहीं आई है। मान लें, उन लोगोंको नीरा पिये बिना ही हैजा हो जाता तो क्या यह कहना वाजिब होता कि उन्हें साधारण भोजनके कारण ही हैजा हुआ? यहाँ यह बता देना भी अनुचित न होगा कि जो नीरा वर्धामें पी गई, वही सेगाँवमें भी कई लोगोंने पी थी, लेकिन उनको कोई नुकसान नहीं हुआ।

यदि शेष तेरह आपत्तियाँ भी इसी (१३वीं) आपत्तिके-जैसे कमजोर आधार पर खड़ी हैं तो निश्चय ही मद्य-निषेधके विरुद्ध कोई बात सिद्ध नहीं होती। और मैं दावेके साथ कहता हूँ कि शेष आपत्तियाँ भी इससे कुछ अधिक सबल आधारपर खड़ी नहीं है। मैंने १३ वीं आपत्तिको ही उत्तर देनेके लिए चुना कि मेरे निजी

अनुभवपर आधारित साक्ष्य विरोधियोंको इस बातके लिए आगाह कर दें कि वे ऐसी बात न कहें, जिन्हें प्रमाणित न कर सकते हों। बुद्धिसंगत तर्कपर आधारित विरोध सदा सम्मानका पात्र होता है। इस विरोधमें उस आवश्यक गुणका अभाव नजर आता है।

वृन्दावन, ७ मई, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-५-१९३९

२४३. पत्र : वालजी गो० देसाईको

७ मई, १९३९

चि० वालजी,

चित्रे दस रुपयेकी कीमतका सूत काते तो उसे दस रुपये जरूर मिलेंगे। और अगर वह कातने में ध्यानावस्थित हो जाये तब तो उसका उद्धार हो जाये। वर्धाके भाव ऊँचेसे-ऊँचे है। मैं उस भाव उसके सूतकी कीमत लगाने को तैयार हूँ।

बापूके आशीर्वाद

श्री वालजी गोविन्दजी देसाई
गोंडल
काठियावाड़

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७४८४) से; सौजन्य : वालजी गो० देसाई

२४४. पत्र : अमतुस्सलामको

७ मई, १९३९

प्यारी बेटी,[1]

तेरे खत आये हैं। तुझे खत लिखे गये हैं। न मिले तो मैं क्या करूं? आज तार[2] भी भेजता हूं। १२ ता० को अहमदाबाद होकर राजकोट जाता हूं। सुशीला-बहन साथमें है ही। महादेवभाई भी होंगे।

तेरी तबीयत अच्छी होगी। तेरे बारेमें मृदुलाबहनसे भी बातें हुई थी।

कुरेशीका कुछ फैसला हो गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१८) से।

१. सम्बोधन उर्दू लिपिमें है।
२. यह ८ मई को भेजा गया था; देखिए पृ० २६६।

२४५. पत्र : लक्ष्मीनारायण गाडोदियाको

७ मई, १९३९

भाई लक्ष्मीनारायणजी,

बलवंतसिहजी सेगांव आश्रमके हैं। गोभक्त हैं। बचपनसे गो-सेवा की है। उनको डेरी बताने को किसीको भेज दीजीये और जो गवरमेंट फार्म है उसे भी देखने का प्रबंध कर दीजीये।

मस्जीदका झगडा मिटा क्या?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २६२७)से।

२४६. प्रश्नोत्तर : गांधी सेवा संघकी बैठक, वृन्दावनमें—३

७ मई, १९३९

कल जो मैंने शुरू किया था और खतम न हो सका वह राधाकृष्णका प्रश्न[1] ही लेता हूँ। ईश्वरके बारेमें जो प्रश्न है वह करीब खत्म हो गया है। बादमें उसपर बहस हो रही थी। श्री कृष्ण नायरने एक सूक्ष्म प्रश्न उठाया था। इसमें अधिक बहसकी गुंजाइश नही। मनुष्य उसे चाहे जिस नामसे या चाहे जिस विशेषणसे पहचाने इसकी मुझे दरकार नहीं। मैंने तो एक सामान्य वाक्यमें कह दिया था, जिसकी ईश्वरमें श्रद्धा नही है वह सत्याग्रहमें अन्ततक नहीं टिक सकता। मेरा मतलब यह था कि जबतक सत्याग्रही वैसा न मानें कि मेरे पीछे एक प्रचण्ड सूक्ष्म शक्ति है जो हर हालतमें मुझे बल देगी तबतक वह जुल्म, क्लेश और अपमान सहकर अपनी अहिंसा कायम नहीं रख सकता। आज तो हमें ऐसा कोई कष्ट होता ही नही जिसे हम पीड़ा कह सकें। कोई हमें अंगारमें थोड़े ही फेंक देता है या हमेशा थोड़े ही सुई भोंककर रखता है? यह तो पराकाष्ठाकी निर्दयता हुई। इतने क्लेश सहकर भी जालिमके लिए हमारे मनमें द्वेष न रहे यह अहिंसा है। ऐसी उच्च कोटिकी अहिंसा, यन्त्रणाओंको सहते हुए भी मनुष्य अपने पुरुषार्थसे नहीं रह सकता। जबतक किसी तत्वमें उसकी इतनी श्रद्धा न हो और वह ऐसा महसूस न करे कि मेरे पीछे एक प्रचण्ड शक्ति खड़ी है तबतक उसे ऐसी निर्दयता

१. देखिए पृ० २४७-८।

शान्तिसे सहने में बल नही मिलेगा। यह शक्ति जो मदद देती है उसीका नाम ईश्वर है। ऐसे मौकेपर भी जालिमपर दिलमें तनिक भी रोष न करने का नाम ईश्वर-निष्ठा है।

जो खादी आदतन पहनते हैं लेकिन कातते नहीं, न उनमें कातने की वृत्ति है, क्या वे सत्याग्रहमें लिये जा सकते हैं?

नही। ऐसे लोगोको सविनय अवज्ञामें नही लिया जा सकता। आप ध्यान दें। मै सविनय अवज्ञा कह रहा हूँ, सत्याग्रह नही। सत्याग्रह शब्द व्यापक है। सविनय अवज्ञाके लिए खास तैयारी की जरूरत है। सत्याग्रहमें तो रचनात्मक काम भी आ जाता है। जो कातते नही वे सत्याग्रही हो सकते है। लेकिन सविनय अवज्ञामें नही आ सकते।

जो लोग खादी नहीं पहनते लेकिन देशके लिए जिनके दिलमें जलन है, जो वकील वकालतपर लात मारने को तैयार हैं, जो भाई या बहनें निःस्वार्थ और खुशीसे कष्ट सहने के लिए आगे आना चाहती हैं, उनसे क्या कहा जाये?

करोड़ो लोग तो सविनय अवज्ञामें शामिल नही हो सकते। सविनय अवज्ञा उनके लिए है जिन्होने आत्मशुद्धि कर ली है और जिन्होनें नियमोका विनयपूर्वक पालन करने का इल्म हासिल किया है। वे ही जानते है कि किन नियमोकी कब और कैसे अवज्ञा करनी चाहिए। वे राज्यके ही नही, सभी तन्त्रोके नियमोंका इच्छापूर्वक पालन करते हैं। सजाके भयसे नही, जान बूझकर इच्छापूर्वक धर्म-भावनासे पालन करते हैं। तब नियम-भंगका अधिकार आता है। यह जहरकी मात्रा पीने की बात है। आदमी अगर ज्ञानपूर्वक जहरकी मात्रा न ले तो मर जाता है। मैं जितना ज्यादा विचार करता हूँ उतना यह पाता हूँ कि सविनय अवज्ञा मामूली शस्त्र नही है। प्रत्येक मनुष्य उसका उपयोग नही कर सकता। प्रत्येक मनुष्य सत्यका आग्रह तो रख सकता है। आज जो लोग सविनय अवज्ञा करते हैं वे सभी ऐसे नही है। जो सविनय अवज्ञाके अधिकारी हैं उनको छोड़कर बाकी लोग सविनय अवज्ञा नही करते है। क्रोधपूर्वक हिंसामय भंग करते है। हो सकता है कि वे अच्छे आदमी है। शायद हमसे श्रेष्ठ भी है। लेकिन हमारे ढाँचेमें नही आ सकते। इसलिए वे बाहर रहें।

सत्य और अहिंसापर पूर्ण विश्वासकी मर्यादा क्या मानी जाये? जिसकी सत्य-अहिंसामें वास्तविक श्रद्धा होगी उसका रोजका जीवन भी हिंसा और असत्यसे बहुत दूर[1] होना चाहिए। ऐसी स्थितिमें जिसके घर विदेशी या मिलके कपड़ेका व्यापार होता हो, या जो किसी भी तरह देशका धन परदेश जाने में मदद करता हो, या अपने दूसरे किसी कामसे देशका अहित करता हो, क्या वह सत्याग्रहमें लिया जा सकता है? अगर वह कह दे कि मेरा सत्य और अहिंसामें विश्वास है तो इतना ही काफी मान लिया जाये या अधिक जाँच की जाये?

१. साधन-सूत्रमें इसके बाद 'न' शब्द है, जो स्पष्टतः चूक है।

जिस मनुष्यका व्यवहार इस तरहका हो, मेरी रायमें वह सविनय भंगमें नही आ सकता। "सविनय भंग" में नही आ सकता यह फिर भी याद रखा जाय। इस बारेमें मैं खुद निर्बल रहा। जितनी चाहिए उतनी सख्ती नही की। उसका नतीजा मैं भी पाता हूँ और देश भी भुगत रहा है। ऐसा मनुष्य सविनय भंगमें शामिल नही हो सकता। दूसरी तरहसे मदद कर सकता है। जिसका व्यवहार ही इतना स्पष्ट है उसकी और जाँच क्या की जाय?

चारित्र्यकी जाँच कैसे की जाये?

इसका उत्तर ऊपरकी चर्चामें आ गया है।

निर्व्यसनकी मर्यादा क्या समझी जाये? बीड़ी, पान, चाय, इनको भी क्या व्यसन समझा जाये?

बहुत कठिन प्रश्न है। मैंने तो मादक पदार्थ-सेवनतक ही व्यसनकी मर्यादा मानी है। जो मादक पदार्थ-खाता-पीता है उसका बुद्धिभ्रंश हो जाता है। वह सत्यका आग्रह कैसे रख सकता है? इसलिए इस विषयमे तो मर्यादा स्पष्ट है। लेकिन एक मनुष्य बीड़ी पीता है पर बड़ा भगवद्भक्त है, तो उसे मैं हटा दूँ ऐसा मेरा मन नही कहता। अफीम, गाँजा, भंग, शराब आदिके निषेधमें तो मेरी हिम्मत चलती है। इसलिए उनके विषयमें तो मर्यादा बना ली है। मैं तो तम्बाकूका भी कट्टर शत्रु हूँ। चायको भी नही चाहता। जो दिन-भर जर्दा-पान चबाते रहते है उनको देखता हूँ तो मेरे दिलमें कुछ हो उठता है। लेकिन वह मेरी निजी बात हो गई।

जेलमें स्वाभिमानके विरुद्ध तो नहीं लेकिन अमानवताका व्यवहार होता हो, खाना-पीना खराब मिलता हो और ज्यादतियाँ की जाती हों तो उपवास आदि करना चाहिए या नहीं?

इस बारेमें कोई निरपवाद नियम बनानेमें कठिनाई है। सत्याग्रही हरएक प्रकारके कष्ट बरदाश्त करनेको पैदा हुआ है, बात-बातमें उसे मान और अपमानका ख्याल नही करना चाहिए। जिसका मिजाज इतना नाजुक हो या जो इतना नाजुक-बदन हो उसे जेलमें नही जाना चाहिए। सामान्य नियम तो यही हो सकता है कि जो सविनय अवज्ञा करता है वह जेलमें हर प्रकारके कष्टसहन करनेको तैयार रहे। अपने स्वाभिमान और ईमानके खिलाफ कुछ न सहे। जो नाजुक हृदयके हैं वे बाहर रहें। सामान्यतः अनशन न करें।

एक बार सत्याग्रह शुरू होने पर अखबार बन्द कर दिये जाते हैं। बुलेटिन बन्द कर दिया जाता है। प्रभात-फेरीमें जानेवाले गिरफ्तार किये जा सकते हैं। ऐसी हालतमें अपनी ओरसे जिनको सत्याग्रहके लिए मंजूरी दी गई है उनके सिवा दूसरे किसीको प्रभात-फेरीमें नहीं जाना चाहिए, बुलेटिन नहीं बाँटना चाहिए, या जिसमें गिरफ्तारी सम्भव हो ऐसा दूसरा कोई काम नहीं करना चाहिए, यह नीति रखी जाये तो प्रचार-कार्य बन्द-सा हो जायेगा?

मैं ऐसा नहीं मानता कि इस नीतिसे प्रचार-कार्य बन्द हो जायेगा। जबतक चन्द आदमी जेलमें जाते रहेंगे तबतक उनके जेल जाने से ही खूब प्रचार होता रहेगा। मैं तो मानता हूँ कि सविनय अवज्ञाका वही सच्चा प्रचार है। बुलेटिन, प्रभात-फेरी, अखबार आदि बन्द हो जायें तो कोई चिन्ताकी बात नहीं। मैंने देखा है कि जबरदस्ती उन्हें चालू रखने से चाहे जैसे आदमी सविनय अवज्ञामें आ जाते हैं। हिन्दुस्तानमें जब तीसका सत्याग्रह हुआ तो यरवडामें बहुत-से आदमी आ गये थे। उनमें से चन्द आदमियोंसे मैं मिल सकता था। और खुलकर बात भी कर सकता था। वे मुझे सुनाते थे कि पहले-पहले तो अच्छे-अच्छे आदमी आये। लेकिन अब जो सत्याग्रहमें आते हैं वे तो गुंडोंके जैसे हैं। वे जेलके नियमोंका भंग करते हैं, गालियाँ देते हैं, मारपीट करते हैं। सवाल यह नहीं है कि वे क्या करते हैं। सवाल यह है कि वे क्या-क्या नहीं करते? एकाध लड़का उठता है, बुलेटिन बाँटकर जेल चला जाता है। ऐसे लोगोंको लेकर सत्याग्रह चलाने से क्या फायदा? ऐसे जो प्रश्न उठते हैं उनमें मैं श्रद्धाका अभाव पाता हूँ, हिम्मतका अभाव पाता हूँ। हमें आदमियोंकी भीड़से क्या मतलब? हमारी मान्यता तो ऐसी है कि एक भी सच्चा सत्याग्रही रहा तो स्वराज्यको आना ही है। इतनी अधीरता क्यों रखनी चाहिए? स्वराज्य चाहे आज आये या कल आये।

उपर्युक्त शर्तोंके अनुसार बहुत थोड़े लोग ही जेलमें जा सकते हैं। लेकिन जो शर्तोंको पूरा नहीं कर सकते परन्तु सेवा करना चाहते हैं ऐसे दूसरे लोग क्या करें?

इसका उत्तर आ गया है।

यदि लोग हमसे कहे बिना ही प्रभात-फेरीमें जायें या दूसरा प्रचारका काम करें और पकड़ लिये जायें तो हम क्या करें?

हम तो ऐसे आदमियोंसे कहते रहें कि आप अपने कामोंसे सत्याग्रहको हानि पहुँचाते हैं। अगर वे हमारी न मानें तो हम क्या कर सकते हैं? उनका जो होना होगा सो होगा। ऐसे लोग जेलमें जायेंगे उनमें से कुछ माफी माँगकर भी चले आयेंगे, कुछ जेल काटते रहेंगे। इसके लिए हमारा क्या इलाज?

प्रचार-कार्यसे जो एक लोक-जागृति होती है वह प्रचार-कार्य और प्रदर्शनके अभावमें कैसे होगी?

अगर हम सच्चे हैं तो हमारे जेलमें जाने पर भी सच्चा प्रचार-कार्य होता ही रहेगा। जो प्रचार-कार्य बन्द हो जायेगा उसकी कोई परवाह नहीं। प्रचार-कार्यके भी दो विभाग होते हैं। एक हिंसक और दूसरा अहिंसक। प्रतिपक्षीके विरुद्ध कड़वी बातें लिखना, उसकी बुराई करना यह प्रचार-कार्य बन्द हो जाये तो कोई हर्ज नहीं है। हमारे विरुद्ध अगर हिंसक प्रचार होता हो तो उसके लिए हमें अपना प्रचार चलाने की जरूरत नहीं। मुझे सुनाया जाता है कि अखबार मुझे और सरदारको गालियाँ देते हैं, दूसरोंको भी गालियाँ देते हैं। तो क्या हम उनको उत्तर देने के लिए अखबार निकालें? उसमें द्रव्य, शक्ति और समय बरबाद करें? अपनी सफाईके लिए संघकी स्थापना करें? हरएक चीजका कहाँतक उत्तर देते रहेंगे?

यह सत्याग्रहीसे नहीं होगा। यह टीका तो आँधी-जैसी है। आँधी आती है, भूकम्प आता है। आता है तो आये। वह जैसे आता है वैसे उसको चले जाना है। यह आँधी उस आँधीसे भी तो बुरी है। लेकिन उसका सामना क्यों करें? उसे तो सहन ही करना है। बहुत होगा तो बरदाश्त करते-करते मर जायेंगे। इसी निश्चयसे अपना काम करते रहेंगे।

गांधी-इर्विन समझौतेके बाद लोगोंको साल-भर नमक बटोरने की इजाजत थी। हाल ही में सरकारने ऐसा हुक्म जारी किया है कि हर साल वह जो समय नियत करेगी उसीमें नमक बटोरा जा सकेगा। अबतक लोग नमक अपने सिरपर चाहे जहाँतक लेकर जा सकते थे। अब यह सहूलियत किनारेके गाँवों तक ही रखी गई है। नतीजा यह हुआ है कि लोग इस सहूलियतसे कोई फायदा नहीं उठा सकते। ऐसी हालतमें हमें क्या करना चाहिए?[1]

इसके बारेमें मैं आपसे साफ कह देना चाहता हूँ कि इस हुक्मके लिए हमारे ही लोग जिम्मेदार हैं। गांधी-इर्विन समझौतेमें जो मर्यादा रखी गई थी उसका पालन हमारे लोगोंने नहीं किया। इसलिए ये ज्यादतियाँ होती है। जैसा करते है वैसा भरते हैं। जहाँ लोग मर्यादामें रहते हैं वहाँ ऐसी रुकावटें नहीं होतीं। जहाँ नमकका व्यापार करने लगे हैं वहाँ ऐसी बातें चलती है।

क्या आप यह मानते हैं कि आर्य-समाजके तत्त्वज्ञानमें हिंसाका समर्थन है?[2]

यह मैंने कभी नहीं कहा। मैं तो इतना ही कहता हूँ कि मामूली सनातनी हिन्दू जिस तरह हिंसा और अहिंसा दोनोंके प्रयोगको उपयुक्त मानता है उसी तरह वे भी मानते हैं। वे ऐसा मानते हैं कि जब हिंसा करना धर्म हो जाता है तब अहिंसक रहने में दोष है। हम केवल अहिंसक प्रतिकारमें ही मानते हैं। यह हममें और उनमें अन्तर है।

लेकिन आपने भी तो बछड़ेको और कुत्तोंको मरवाना अपना धर्म समझा?[3]

तब तो तुम्हें यह कहना चाहिए कि अहिंसा धर्मकी बात मेरे मुँहमें शोभा नहीं देती। यह मुझे मंजूर है। इसके लिए मैं अपना कान पकड़ने को तैयार हूँ। बछड़े और कुत्तेवाली बात तो तुम जानते ही हो। उसके बारेमें मुझे जो-कुछ कहना था वह सब कह चुका हूँ।

हैदराबादके आर्यसमाज सत्याग्रहके बारेमें भी मुझे एक प्रस्ताव दिखाया गया था। मैंने अपनी राय इसके विषयमें स्पष्ट दे दी थी। मैंने यह भी स्पष्ट कह दिया था कि मैंने जो-कुछ कहा वह अखबारोंके लिए नहीं। मेरी दृष्टिमें वह सत्याग्रह धार्मिक नहीं है और न धार्मिक तरीकेसे चलाया जाता है। जो अहिंसाको परम धर्म नहीं मानते वे अहिंसाको एक खास हदतक ही स्थान दे सकते हैं।

१. यह प्रश्न प० वेदरत्नम् द्वारा पूछा गया था।
२. यह मूलचन्द अग्रवाल द्वारा पूछा गया था।
३. देखिए खण्ड ३७, पृ० ३२३-५।

जिनकी दृष्टि अहिंसक नहीं है वे अहिंसक सत्याग्रह नहीं कर सकते। मैं सविनय अवज्ञाकी मर्यादाको जानता हूँ। लेकिन ऐसी बुनियादी बात मैं अखबारोंमें कहूँ और मेरे वैसा कहने से किसीका काम बिगड़े तो काम ठीक नही होगा। मैं तो सत्याग्रहका पुजारी हूँ। जिस बातसे मेरा सम्बन्ध नही है उसके विषयमें मैं नाहक अपनी राय क्यों दूँ? हर जगह जो चल रहा हो उसका टीकाकार बनने की मुझे क्या जरूरत है? यह अहिंसाका तरीका नही है। ऐसा अप्रस्तुत व्यापार मैं नही करना चाहता। हाँ, जो मेरे साथ बैठनेवाले हैं उनको तो मैं समझाता हूँ कि वे उसे छोड़ दें। आज जो-कुछ चल रहा है उससे आर्यसमाज या धर्मकी प्रतिष्ठा नही बढ़ती है। सर अकबर हैदरीसे भी मैं विनय करता हूँ कि वे अपना रुख बदलें। मित्र-धर्मका जितना तकाजा है उतना मैं करता हूँ। इससे अधिक मैं नही करता। जिस दिन सार्वजनिक रूपसे बोलना मैं अपना कर्त्तव्य समझूँगा, उस दिन बोलूँगा। लेकिन जो गांधी सेवा संघके सदस्य हैं, उनसे तो मेरी बतलाई हुई मर्यादाका उल्लंघन नही होना चाहिए।

इस सम्मेलनके बारेमें अब एक आखिरी बात और है। प्रजापति बाबूने काफी काम किया। लेकिन पैसे भी बिना कारण काफी खर्च किये हैं। इससे हमारा कार्य कलुषित हो जाता है। यहाँ बिजलीकी बत्ती और किट्सन बर्नर भी आ गये हैं। इस तरह तो कोई मर्यादा नही रहेगी। हमें कुछ मर्यादा रखनी चाहिए। उधर शौचादिका प्रबन्ध जैसा होना चाहिए वैसा नही है। गांधी सेवा संघको मैंने जैसा माना है उस दृष्टिसे यह कोई वार्षिक उत्सव नही है। यह तो हमारा शिक्षणालय है। हमें तो यह नही भूलना चाहिए कि हमें हर रोज सादगी, देहातीपन, सफाई और शुद्धिकी तरफ कदम बढ़ाना है। हम यहाँ समारोह या सैलानीपनके लिए नही आते। यह सम्मेलन हमारी एक तालीमकी छावनी है। हमारे लिए यह आत्म-निरीक्षणका, एक-दूसरेके अनुभव जान लेने का और संयम और अनुशासनकी शिक्षा लेने का एक अद्भुत अवसर है। यहाँ सफाई और रहन-सहनकी व्यवस्था ऐसी अच्छी होनी चाहिए कि सात दिनके बदले सात महीने रहना पड़े तो भी जाने की इच्छा न हो। लेकिन मुझे तो छह दिनके बाद ही ऐसा लग रहा है कि जितना जल्दी भागूँ उतना अच्छा। भला ऐसा हमें क्यों लगना चाहिए? मैं यदि यहाँसे जल्दी न भागूँ तो मुझे डर है कि और भी अधिक अस्वच्छता दिखाई देने लगेगी। इसके लिए हमें बहुत-कुछ करना चाहिए क्योकि जो आदर्श मैंने सोच रखा है उससे अब भी हम बहुत दूर हैं।

यहाँ इतने बहुत-से लोग आ गये हैं यह उनके प्रेमका लक्षण है। प्रेमका प्रदर्शन एक हदतक अच्छा है। पर उसमें भी मर्यादा होनी चाहिए। वह यहाँपर नही है। यह भी एक अभ्यासका विषय है।

मेरे कहने का मतलब यह नही कि यहाँ तारीफके लायक कोई बात मुझे नही मिली। मैं अच्छी बातोंकी कद्र करता हूँ। आपने काफी काम किया है। काफी कष्ट उठाया है। लेकिन उसके लिए आपकी तारीफ करना मेरा काम नही है। आपने

सब प्रशंसाके लिए थोड़े ही किया है? प्रशंसाके लिए किया हो तो मेरी प्रशंसा ही आपके कामका फल हो जायेगी। मेरा काम तो टीका करना है। ये त्रुटियाँ कैसे दूर की जायें यह मैं नहीं बता सकता। मैं तो टीका ही कर सकता हूँ। हमारे सम्मेलनमें आदर्श स्वच्छता रहनी चाहिए। भोजनादिकी व्यवस्था स्वच्छ और शुद्ध होनी चाहिए। मैं जो-कुछ भी कहता हूँ उसका आप सीधा अर्थ लीजिए। अगले साल गांधी सेवा संघ जहाँ सम्मेलन करे वहाँ ये कमियाँ न रह जायें इसकी आप कोशिश करें।

गांधी सेवा संघके पंचम वार्षिक अधिवेशन (वृन्दावन, बिहार)का विवरण, पृ० ६३-९

२४७. भाषण: अखिल भारतीय ग्राम-उद्योग-संघके मण्डल, वृन्दावनमें

७ मई, १९३९

अगर संख्याकी दृष्टिसे देखें तो ग्राम-उद्योग-संघ एक निष्फल प्रवृत्ति है ऐसा आपको और दूसरे लोगोंको लगे, तो कोई आश्चर्य नहीं। किसी संस्थाकी वार्षिक सभाके लिए अठारहकी संख्या तो तुच्छ ही कही जायेगी। लेकिन अठारहसे भी कम संख्यापर आना पड़े या इन अठारहको भी छोड़ना पड़े, तो भी मुझे कोई आश्चर्य न होगा और न दुःख होगा। इस संघके बारेमें मेरी कल्पना ऐसी ही है। हमको इसका विधान और संगठन कुछ सख्त ही रखना चाहिए। उसके ढाँचेमें ज्यादा आदमी नहीं आ सकते। इसलिए नियमोंका ठीक-ठीक पालन न करने के कारण काफी नाम निकल गये। ऐसी संस्थाकी परीक्षा उसकी संख्यासे नहीं, बल्कि कामसे होनी चाहिए। यों इसका काम बहुत अधिक तो नहीं हुआ है। लेकिन जो थोड़ा काम हुआ है वह बहुत गहरा हुआ है और उसका गहरा परिणाम आप कुछ वर्षोंके बाद देखेंगे। लेकिन जो आदमी उसका संचालन करते हैं वे कर्त्तव्यनिष्ठ हैं। अपनी सारी शक्ति लगाकर काम करते हैं, इतना दावा मैं कर सकता हूँ।

लोगोंकी दृष्टि शहरोंकी तरफ है। इसलिए ग्राम-उद्योगका काम शिथिल है। आजकी परिस्थितिमें काफी कठिन भी है। थोड़े-से पैसे करोड़ों गरीबोंको मिलें इससे उनका पेट नहीं भर सकता। हम उनको इन उद्योगोंके द्वारा पेट-भर रोजी देना चाहते हैं। इस उद्देश्यसे यह काम चलाया जाता है।

संचालकोंके दिलमें यह श्रद्धा है कि हिन्दुस्तानका उद्धार ग्रामोंके उद्धारसे ही होगा और ग्रामका उद्धार होगा देहाती उद्योग-धन्धोंके उद्धारसे; बड़े-बड़े यन्त्रोंसे नहीं। ग्रामोंके उन्हीं पुराने उद्योगोंमें सुधार करके हम गरीबोंकी झोंपड़ियोंमें करोड़ों रुपये पहुँचा सकेंगे।

आपको ग्राम-उद्योग-संघका रूप चरखा-संघके मुकाबलेमें बहुत छोटा-सा लगेगा। उसका काम भी बहुत थोड़ा दीखेगा। इसका कारण है। चरखा-संघ अब कई साल पुरानी संस्था हो गई है। उसके कामका ढंग ठीकसे बैठ गया है। इसके सिवाय चरखा-संघको जो सफलता मिली उसका एक कारण यह भी है कि वहाँ एक ही उद्योगसे मतलब है। लेकिन ग्रामोमें तो इतने बहुत-से उद्योग पड़े है। ग्राम-उद्योग-संघमें इसीलिए अनेक प्रवृत्तियाँ है। चरखा-संघके काममें विशारद बनना इसके मुकाबलेमें आसान है। यहाँ अनेक विशारदोकी जरूरत होगी। जो शास्त्रीय ढंगसे इन धन्धोका विकास कर सकेंगे ऐसे अनेक विशारद हमारी यूनिवर्सिटियोंमें से आने चाहिए। आज हमें ऐसे विशारद नही मिलते। इसलिए कामकी वृद्धि करना कठिन है। देहातोमें जो तेली, बढ़ई वगैरह पड़े हुए है उन्हींमें से विशारद पैदा करने पड़ते हैं। कालेज, हाई स्कूलोंमें से नही आते। जबतक हमारे पास बुद्धिमान घानी-विशारद, कागज-विशारद होने के साथ-साथ ग्राम-उद्यागोंके अनन्य भक्त भी न होंगे तबतक बड़े पैमानेपर सफलता नहीं मिलेगी।

अब मैं यही चीज अहिंसाकी वृत्तिके साथ मिला देना चाहता हूँ। देखने में तो यह प्रवृत्ति नीरस है। पर धीरज रखें तो परिणाममें सरस है। जो गांधी-सेवा-संघमें है वे अगर अपना ध्यान राजनीतिसे खीचकर इसमें लगा दें, तो मै खुश हो जाऊँगा। आप लोग यह देखकर ऊपरसे खुश होंगे कि कार्य-समितिमें सब गांधीवादी-ही-गांधीवादी है। लेकिन मै खुश नही हूँ। हमारी तो जिम्मेदारी बढ़ गई है। हमारे सिरपर और भी बोझ लद गया है। इसमें खुश होने की क्या बात है? कल राजेन्द्र बाबू सुना रहे थे कि हमारे आदमियोके ही कारण ज्यादा परेशानी होती है। ज्यादा कष्ट-सहन करना पड़ता है। गांधीवादी आपसमें लड़ते है। चुनावमें एक-दूसरेके खिलाफ खड़े होते है। यह तो पाखण्ड हुआ। यह तो पागल-पन हुआ।

हम इससे कैसे बच सकते है, यह हमारे सामने सवाल है। मेरा उत्तर यह है कि यह चरखा-संघका काम पड़ा है, ग्राम-उद्योग-संघका काम पड़ा है, तालीमी संघका काम पड़ा है, इसमें जुट जाइए तो सारा पाखण्ड मिट जायेगा। उन चुनावोंको छोड़कर यह काम करने से स्वराज जल्दी आयेगा। आजकी राजनीतिसे हम स्वराज हासिल नही कर सकते। हमारे सामने हिंसाका पहाड़ खड़ा है। आज कई लोग गांधीका नाम ले-लेकर लड़ते है। यह कहता है, मै जाना चाहता हूँ; वह कहता है, मैं जाना चाहता हूँ। ऐसे लोग गांधीवादको हँसीका विषय बनाते हैं। अगर आपको इन बातोसे बचना हैं तो आपको राजनीतिसे निकल जाना चाहिए। आपके लिए ये प्रवृत्तियाँ पड़ी है। इनमें पड़ने से इन प्रवृत्तियोंकी ओर आपकी प्रगति जल्दीसे हो सकती है।

मेरी रायमें हिन्दू-मुसलमानोंके वैमनस्यका निपटारा भी इसीकी मददसे हो सकता है। ग्राम-उद्योगोंका उद्धार होने से करोड़ों देहातियोंको पूरी मजदूरी मिलेगी। यहाँ हिन्दू और मुसलमानोंके हितमें विरोध नहीं आता। राजनीतिमें जो लड़ाइयाँ

चलती हैं उनसे दोनों बच जायेंगे। इस श्रद्धासे अगर इस उद्योग-संघका संचालन होगा, तो हम अपना काम कभी नहीं छोड़ेंगे। बल्कि चौबीसों घंटे उसे चलाते रहेंगे। इसलिए मैंने आपसे शुरूमें कहा कि यह चीज देखने में छोटी-सी और निष्फल जान पड़ती है, लेकिन मैं तो उसमें कोई दोष नहीं देख सकता। मैं तो उसमें कुशल-ही-कुशल देखता हूँ।

हरिजन सेवक, ८-७-१९३९

२४८. भाषण: सार्वजनिक सभा, वृन्दावनमें[1]

७ मई, १९३९

कुछ दशक पहले तक न तो मैं हिन्दुस्तानसे परिचित था और न हिन्दुस्तान ही मुझसे परिचित था। १९१७ में मैं किसानोंकी शिकायतें दूर करवाने के लिए चम्पारन आया था, जो तब बागान-मालिकोंके हाथोंमें खिलौने बने हुए थे। मैं यहाँ खुले मनसे आया था और मेरे पास लड़ने के लिए सत्य और अहिंसाके शस्त्रके सिवा और कोई साधन नहीं था। आज आप मुझसे प्रेम करते हैं और मुझमें श्रद्धा रखते हैं। आपकी इस निष्ठाको मैं कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करता हूँ। परन्तु मुझमें असाधारण कुछ नहीं था। आपको आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक दलदलसे निकालने की लगन और निष्ठा मुझमें जरूर थी। मेरी केवल यही कामना है कि जिन सिद्धान्तोंपर मैं चलता हूँ उनपर आप भी चलें। जो-कुछ मैंने आपसे १९१७ में कहा था वह अभी भी ठीक बैठता है। नीलका अभिशाप इसलिए खत्म हुआ कि आप अहिंसक थे। वही हथियार आपके पास अभी भी है। उसकी जरूरत आज १९१७ से भी अधिक है।

अपना समय बेकार मत गँवाइए और विदेशी चीजें खरीदकर राष्ट्रीय धनकी बरबादी मत कीजिए। चरखेका चलन शुरू करके, जो सारी बुराइयोंके लिए रामबाण है, राष्ट्रीय सम्पत्ति बढ़ाने की कोशिश कीजिए।

अपने ऊपर विश्वास रखिए। अपनी जरूरतोंके लिए कांग्रेस सरकारके पास जाइए। कड़ी मेहनत कीजिए। सचके सिवा और कुछ न बोलिए। सदा अहिंसाका पालन कीजिए। सेवा और त्यागके लिए तैयार रहिए। अहिंसाके मंत्रको जपते हुए आगे बढ़िए।

मैं दरिद्रनारायणका एक प्रतिनिधि-मात्र हूँ। भारत करोड़ों भूखे-नंगे और निरक्षर लोगोंका गरीब और दीन देश है। हमने उन्हें ऊपर उठाने और भोजन व

१. *अमृत बाजार पत्रिका*की रिपोर्टके अनुसार तीसरे पहरकी इस सभामें कोई ५०,००० लोग उपस्थित थे और गांधीजी को चम्पारनकी ओरसे, उनके प्रति श्रद्धा और निष्ठाके प्रतीकस्वरूप, २०,००० रुपयेकी थैली भेंट की गई थी। महादेव देसाई द्वारा तैयार की गई भाषणकी एक संक्षिप्त रिपोर्ट २०-५-१९३९ के *हरिजन* में भी प्रकाशित हुई थी।

शिक्षा तथा सुख-समृद्धि देने का व्रत लिया है। जन-साधारणकी, दरिद्रनारायणकी इन मूर्तियोंकी उपेक्षा मत कीजिए। उनकी सेवा करते हुए, कष्टों और अभावोका सामना करने के लिए तैयार रहिए।

इस धनका उपयोग भूखोंको रोटी और नंगोंको कपड़ा देने के लिए होगा। यह धन चम्पारन और उसके आसपासके स्थानोंपर खर्च होगा। यह धन दरिद्र-नारायणकी सेवाके लिए खर्च होगा।

मुझे यह सुनकर कि किसान हिंसाका सहारा ले रहे हैं, दुःख होता है। वे जमींदारोंके साथ लड़ रहे है। यदि आप जमीदारीको खत्म करना चाहते है, तो यह एक अच्छी बात है। पर उसे अहिंसाके द्वारा खत्म कीजिए। आप जमीदारोंको आतंकित क्यों करते है? जमीदारोंके साथ सहयोग कीजिए और उन्हें बता दीजिए कि उन्हें किसानोंकी सेवा करनी है। किसानोंको गाली-गलौज नही करनी चाहिए। किसीपर कीचड़ नही उछालना चाहिए, हिंसा नही करनी चाहिए, अमलोको मारना-पीटना नही चाहिए। आपको एक-दूसरेसे प्रेम करना सीखना होगा। अहिंसाकी रक्षा और उसके उपयोगसे, जो-कुछ आपने खोया है, वह आपको वापस मिलेगा। मुसलमानों और हिन्दुओको मेल-मिलापसे रहना चाहिए। उन्हे भाइयोंकी तरह रहना चाहिए। उन्हें कताई करनी चाहिए। उन्हें अपनेमें सहनशीलता और सेवा तथा त्यागकी लगन पैदा करनी चाहिए। यदि ऐसा किया गया तो भारतकी स्व-तत्रता केवल एक दूरवर्ती सम्भावना नही रहेगी।[1]

मैं समझता हूँ, यह तो स्पष्ट है कि हिन्दू-मुसलमान एकता, मद्य-निषेध और अस्पृश्यताका उन्मूलन अहिंसाके बिना असम्भव है। अब रहा चरखा। तो वह अहिंसाका प्रतीक कैसे है? जैसा कि मैं पहले बता चुका हूँ, असली बात यह है कि आप चरखेको किस भावनासे देखते हैं, उसमें आप कौन-सी विशेषताएँ आरोपित करते हैं? यह कोई कुनैनकी गोली नही है कि जिसमें कोई अपने विशेष तत्त्व हो। इसमें उनसे अलग कोई चीज नही है जिनकी आप कल्पना करते है। मगर चरखेमें अपना कोई अलग अलग तत्त्व नही है। गायत्री मंत्र को लें। किसी गैर-हिन्दूपर इसका वह असर नही हो सकता है जो मुझपर होता है। कलमेकी जो प्रतिक्रिया मुसलमानो पर होती है वह मुझपर नही हो सकती। इसी प्रकार खुद चरखेमें ऐसा कुछ नही है जो हमें अहिंसा सिखा सकता हो या हमें स्वराज्य दिला सकता हो। लेकिन ज्यो ही आप इसके बारेमें उन आरोपित विशेषताओके साथ सोचते है त्यो ही इसका रूप बदल जाता है। इसका स्पष्ट मूल्य तो गरीबोंकी सेवामें निहित है, लेकिन इसका अर्थ जरूरी तौरपर यह नही है कि वह अहिंसाका प्रतीक है या स्वराज्यकी अनिवार्य शर्त है। लेकिन १९२० से ही हमने चरखेको स्वराज्य और अहिंसासे जोड़ रखा है।

१. आगेका अंश ग्राम उद्योग पत्रिकासे लिया गया है। पत्रिकाके अनुसार, इसके बाद गांधीजी ने इस प्रश्नका उत्तर दिया: "रचनात्मक कार्य और अहिंसामें क्या सम्बन्ध है?"

फिर आत्म-शुद्धिका कार्यक्रम है, जिसके साथ भी चरखा घनिष्ठ रूपसे जुड़ा हुआ है। घरकी बनी खुरदरी खादीका मतलब जीवनकी सादगी और इसलिए पवित्रता है।

चरखेके बिना, हिन्दू-मुस्लिम एकताके बिना और अस्पृश्यता-उन्मूलनके बिना सविनय अवज्ञा नहीं हो सकती। सविनय अवज्ञाकी पहली शर्त यह है कि हम स्वेच्छासे स्वीकार किये गये नियमोंका खुशी-खुशी पालन करें। इसके बिना सविनय अवज्ञा एक क्रूर उपहास होगी। राजकोटकी प्रयोगशालामें यह बात मेरे अन्तरमें दुगुनी शक्तिके साथ समा गई। अगर एक आदमी भी सभी शर्तोंको पूरा कर लेता है तो वह स्वराज्य प्राप्त कर सकता है। उस आदर्श सत्याग्रहीकी स्थितिसे मैं आज भी बहुत दूर हूँ। मैंने उस समय भी यही बात कही थी जब हम रौलट-अधिनियमके खिलाफ सत्याग्रहका संगठन करने को एकत्र हुए थे। जब वह शुरू किया गया तब हम लोग मुट्ठी-भर ही थे। लेकिन इन्हीं मुट्ठी-भर लोगोंको केन्द्र बनाकर हमने एक विशाल संगठन खड़ा कर दिया। मैं चूंकि अपूर्ण सत्याग्रही हूँ, इसलिए आपका सहयोग चाहता हूँ। आपका सहयोग संगठित और प्राप्त करने की प्रक्रियामें स्वयं मेरा भी विकास होता रहता है, क्योंकि मैं आत्म-निरीक्षणका क्रम कभी टूटने नहीं देता। अभी मैं आपको जो समय दे रहा हूँ वह भी जितना आपके हकमें है उतना ही मेरे हकमें भी है, या अगर आपके हकमें नहीं है तो भी कमसे-कम मेरे हकमें तो है ही। क्योंकि जब मैं खुद अपनी जाँच-परख कर रहा होता हूँ, उस समय मेरी वृद्धि होती है, मेरा विकास होता है। कोई भी कभी इतना जीर्ण नहीं होता कि उसका विकास न हो; कमसे-कम मैं तो ऐसा जीर्ण नहीं ही हूँ। सत्याग्रहका जन्म ट्रान्सवालमें हुआ था, लेकिन तब उसका प्रयोग करनेवाले, उस अस्त्रको धारण करनेवाले केवल चन्द हजार लोग थे। अब उसे लाखोंने धारण किया है। जो आवाज मैंने ६ अप्रैल, १९१९ को मद्राससे दी थी उसके उत्तरमें लाखों लोग एक व्यक्तिकी तरह उठ खड़े होंगे, ऐसा किसने सोचा था? लेकिन अन्तिम सफलताके लिए रचनात्मक कार्यक्रम आवश्यक है। सच तो यह है कि मैं मानता हूँ, यदि हम अहिंसाके प्रतीकके रूपमें चरखेके कार्यक्रमको — चाहे उसमें जितना समय लगे — पूरा नहीं करते तो हम अपने राष्ट्रके प्रति झूठे साबित होंगे।

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, ९-५-१९३९; ग्राम उद्योग पत्रिका, जून १९३९

२४९. बातचीत: राजेन्द्रप्रसाद तथा अन्य कार्यकर्त्ताओंके साथ[1]

वृन्दावन

[८ मई, १९३९ या उसके पूर्व][2]

गांधीजी: पटनाके पास होने से क्या आप लाभ मानेंगे? हम गाँवोंमें जाना चाहते हैं। क्या बिहार हमें इससे पीछे खीचना चाहता है?

राजेन्द्रप्रसाद: समय बहुत कम है; शहरमें अनेक सुविधाएँ हैं, खर्च कम होगा।

लेकिन इसका मतलब यह हुआ कि हम उस नीतिको बदल दें जो पिछले तीन सालसे अमलमें लाई जाती रही है? वृन्दावनको ही क्यों न रखें?

सोनपुरके बारेमें भी चर्चा हुई थी, लेकिन वह एक शहरनुमा गाँव है।

मैं गाँवके ठीक भीतर चाहता हूँ। हरिपुरा और फैजपुरकी नकल मत कीजिए। आपको चाहिए कि शान-शौकतसे मुक्ति और सादगीमें आप इन दोनोंसे आगे निकल जायें।

दर्शकोंकी एक समस्या है — खासकर बिहारमें। वहाँ लाखों दर्शक होंगे।

आपको उनके लिए उसी तरह प्रबन्ध करना चाहिए जैसे आर्यसमाजी करते हैं। वे हरएकको अपनी जरूरतकी चीजें, लालटेन आदि साथ लेकर आने को कहते हैं। वे उन्हें केवल रहने की जगह (पेड़ोंके नीचे) और पानी मुहैया करते हैं। पानीके लिए किसी बड़े वाटर वर्क्सकी जरूरत नहीं है। आप कुछ भी करें, लेकिन हार न मानें और पटना न भागें। बिजलीकी कोई जरूरत नहीं और चूँकि हम अपना सम्मेलन जाड़ोंमें कर रहे हैं, इसलिए पंखोंकी भी जरूरत नहीं होगी। ८ से ११ तक और २ या ३ से ७ तक काम कीजिए। जाड़ेकी थोड़ी-सी धूप भी सुखकर ही होगी। नहीं, आपको फुलवारीके बारेमें अपना निर्णय बदलने की पूरी कोशिश करनी ही होगी। हर व्यक्तिसे अपनी लालटेन लाने को जरूर कहा जाना चाहिए। आप पहलेसे ही कह सकते हैं कि आप इतना ही प्रबन्ध कर सकते हैं और अधिक नहीं।

१. महादेव देसाईके लिखे "गांधी सेवा संघ-४" से उद्धृत। महादेव देसाई कहते हैं: "बिहारमें होनेवाले आगामी कांग्रेस-अधिवेशनके स्थानके बारेमें गांधीजी की राजेन्द्र बाबू तथा बिहारके अन्य कार्यकर्ताओंसे बातचीत हुई। फुलवारी शरीफका सुझाव दिया गया था, जो पटनासे केवल ४ मील दूर है और कहा जाता है कि उस स्थानके अन्य कई लाभ भी हैं।"

२. ८ मईको गांधीजी वृन्दावनसे चल पड़े थे।

ऐसा भी हो, तब भी हमें कुटियों आदिके निर्माणपर काफी खर्च करना होगा। ठंडसे बचाने के लिए तो कुछ प्रबन्ध करना ही चाहिए?

नीचे और ऊपर, दोनों जगह गरमाहटके लिए आप घासका उपयोग क्यों नहीं करते? बीमार तथा दुर्बल लोगोंके अलावा अन्य लोगोंके लिए खाटोंकी कोई जरूरत नहीं होनी चाहिए।

और हमें पैसा भी नहीं मिलेगा। जमींदार और किसान दोनों ही हमारे खिलाफ हैं, और प्रवेश-शुल्कका पैसा बहुत कम होगा।

मैं इससे सहमत नहीं हूँ। कहीं भी कीजिए, लेकिन जगह शहरके पास न हो। और आप यहाँ 'ट्यूबवेल्स' बहुत सस्तेमें बनवा सकते हैं।

हम नलकूप बनवायेंगे, लेकिन हमें लगभग प्रति घंटे ६०,००० गैलन पानीकी जरूरत पूरी करनी पड़ेगी। हाँ, बिजलीकी रोशनीको छोड़ा जा सकता है।

उससे मुझे चिढ़ है। हमें जगमगाहटकी बात नहीं सोचनी चाहिए। दिनके समय उस स्थानको अन्य तरहसे आकर्षक बनाइए। जो बुरा है, उसकी नकल मत कीजिए। यदि आप कोई आतिशबाजी और कोई जगमगाहट नहीं करेंगे तो आपको कोई दोष नहीं देगा। हम सफाई चाहते हैं और साधारण जरूरतें पूरी करना चाहते हैं। सादासे-सादा भोजन दीजिए। लेकिन मैं मानता हूँ कि पानीके लिए आपको खर्च करना ही होगा। ७०,००० गाँवोंमें से हरएकसे प्रति व्यक्ति एक पैसा जमा कीजिए और अपनी जरूरतें पूरी कीजिए। तब वह जाकर देखने लायक कांग्रेस-अधिवेशन होगा। गाँवके सिद्धान्तको मानकर फैसला कीजिए। मुझे इसकी परवाह नहीं कि वह कहाँ होता है। और हर गाँवसे उसका विनम्र अंश पाकर हमारी ताकत बढ़ेगी। स्वयंसेवक-दल संख्यामें काफी और कुशल होने चाहिए। उन्हें सफाईका विशेषज्ञ होना चाहिए। कोई गंध और किसी भी प्रकारका कचरा नहीं रहने देना चाहिए। इसका संगठन शीघ्र प्रारम्भ किया जाना चाहिए।

स्वयंसेवक-दल हमें काफी महँगा पड़ेगा — करीब ५०,००० रु० लगेंगे।

मैं इसकी परवाह नहीं करता, लेकिन उससे अन्ततोगत्वा लाभ बहुत ज्यादा होगा। उनके प्रशिक्षणमें पैसा कतई बरबाद नहीं किया जाना चाहिए। हम वर्दी आदिको भूल सकते हैं, जो बरबाद जाती है, लेकिन राष्ट्रकी सेवाके लिए युवकोंका संगठन ऐसी मूल्यवान सम्पदा है जो हमेशा हमारे काम आयेगी। इसलिए पानी और स्वयंसेवकोंपर होनेवाले खर्चमें कमी की कोशिश मत कीजिए।

यहाँ बनाई गई साधारण झोंपड़ियोंपर भी हमारा काफी खर्च बैठ गया है।

मैं भी ऐसा ही सुन रहा हूँ। लेकिन अगर इसमें इतना खर्च हो गया है तो कहीं-न-कहीं बदइन्तजामी जरूर हुई होगी।

हमारी समस्या वर्षाकी है, जो बहुधा उस समय होती है। इस दृष्टिसे पटना सुविधाजनक रहता। जरूरत पड़ने पर वहाँ हम पक्की इमारतोंमें जा सकते थे।

अब इससे बचने का कोई उपाय नही है। किसी तरह प्रबन्ध कीजिए। गर्म पानी मत दीजिए, फल मत दीजिए, भोजनमें सुस्वादु व्यंजन मत दीजिए। फलका ठेका मुझे दे दीजिए। यदि मेरे पास कोई उसके लिए आता है तो मैं उसे बम्बई लौट जाने को कहूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-६-१९३९

२५०. तार : वीरावालाको

[८ मई, १९३९][1]

आपका तार[2] मिला। मेरा कथन परिषद्‌के लोगोंके बारेमें दिये आपके वक्तव्योंपर आधारित है, पर वह एक मामूली बात है। जिस चीजको लेकर मैं चिन्तित हूँ वह तो यह तथ्य है कि मेरी इच्छाका उपयोग आपने इस आग्रहके लिए किया कि ठाकुर साहबके आमन्त्रणके बिना मुझे राजकोट नहीं आना चाहिए। मैं अपने साथियोंको मझधारमें नही छोड़ सकता। आप मुझसे यह आशा रख सकते हैं कि मैं अपने नये प्रकाशको सभी सम्बन्धित लोगोंकी भलाईके लिए प्रयुक्त करूँगा। इसलिए इस महीनेकी १२ तारीख तक मुझे राजकोट पहुँचना ही होगा। कृपया क्षमा करें। यह तार प्रचारकी खातिर नही है। यह तो एक मित्रोचित अनुरोध है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १०-५-१९३९

१. द इण्डियन एनुअल रजिस्टर, १९३९, जिल्द १ से।

२. ५ मई, १९३९ का तार, जिसमें कहा गया था : "आपका तीन तारीखका तार मिला। मैं हैरान हूँ कि आखिर आपने यह किसलिए कहा कि परिषद्‌के लोगोंके साथ मेरा व्यवहार ठीक नहीं था। उनका सहयोग प्राप्त करने के मेरे सारे निश्छल हार्दिक प्रयास विफल रहे हैं, क्योंकि ढेबरका उन सबसे, जो ४ तारीखको मिले . . . मतभेद था। . . . मेरा व्यक्तिगत विचार और आपसे आग्रह . . . यह है कि . . . आपको ठाकुर साहबके निमन्त्रणपर ही राजकोट आना चाहिए, उससे पहले नहीं। अभी आपके आने से सीधे समझौतेपर बुरा असर पड़ेगा। यदि समझौता नहीं होना है, तो सर मॉरिस ग्वायरके पंच-फैसलेको अपने स्वाभाविक मार्गपर बढ़ने देना चाहिए। . . ."

२५१. तार: अमतुस्सलामको

वृन्दावन, चम्पारन
८ मई, १९३९

अमतुल सलाम
हरिजन आश्रम, साबरमती
अहमदाबाद

कई पत्र[1] लिखे। मैं स्वस्थ हूँ। १२ को सवेरे अहमदाबादसे गुजरूँगा। स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१९) से।

२५२. पत्र: मीराबहनको

८ मई, १९३९

चि० मीरा,

तुम्हारे दोनों लम्बे पत्र मिले। दोनों ही महत्त्वपूर्ण हैं।

खान साहबके साथ मेरी लम्बी बातचीत हुई। किशनचन्दकी योजनाके बारेमें उन्हें सन्देह है। उन्होंने कहा कि जबतक मैं सीमा-प्रान्त नहीं पहुँच जाता, उन्हें किसी भी चीजसे प्रसन्नता नहीं होगी। इसलिए तुम जल्दी मत करना। यदि किशनचन्द मेरा नाम इस्तेमाल किये बगैर खान साहबका अनुमोदन और उनकी सद्भावना प्राप्त कर सके तो तुम बेशक अपनी या उसकी योजना जारी रख सकती हो। यथासम्भव अधिकसे-अधिक स्पष्ट सहमति हो जानी चाहिए। हम जल्दीमें कोई काम न करें।

हम मालवीयजी से मिलने आज बनारस जा रहे हैं। १० को बम्बईके लिए रवाना हो रहे हैं। ११ को बम्बईसे राजकोट रवाना होंगे, कार्य-समितिमें भाग लेने के लिए ३ जूनको अहमदाबाद जायेंगे, और ७ को अहमदाबादसे राजकोट या सीमा-प्रान्तके लिए रवाना होंगे।

१. देखिए पृ० २५१।

मैं ठीक हूँ और मैंने इस श्रमको ठीक सहन कर लिया है। मुझे उम्मीद है कि मेरी सेहतके बारेमें सुशीला तुम्हें विस्तारपूर्वक बताती रही है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४३९) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० १००३४ से भी

२५३. पत्र : मिर्जा इस्माइलको[1]

राजकोटके पतेपर
८ मई, १९३९

प्रिय मित्र,

आपका अत्यन्त स्नेहपूर्ण निमन्त्रण स्वीकार कर सकता तो मुझे कितना अच्छा लगता। किन्तु अभी भी राजकोटने मुझे बाँध रखा है। राजकोटका काम समाप्त होते ही मैं सीमा-प्रान्त जाने के लिए बँधा हूँ। अतः कृपया आप मुझे क्षमा करेंगे और महाविभवसे भी मेरी लाचारीका इजहार कर देंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८१) से।

२५४. पत्र : रवीन्द्र रावजीभाई पटेलको

वृन्दावन
८ मई, १९३९

चि० रवीन्द्र,

तेरा पत्र मिला। तूने वहाँ रहने का निश्चय कर लिया, यह मुझे तो अच्छा लगा। अगर मन लगाकर उद्यम करेगा, तो वहाँ काफी सीखने को मिलेगा। ईमानदारीके साथ धन कमाने में कोई शर्म नहीं है, यह समझ लेना।

आशा है, तू विद्यार्थियों-जैसा अध्ययनपरायण जीवन बिताता होगा। एक क्षण भी व्यर्थ मत जाने देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४५६) से।

१. मैसूर-राज्यके दीवान

२५५. एक पत्र

[८ मई, १९३९][1]

मैं तो केवल तीर्थ-यात्रा करने की दृष्टिसे जा रहा हूँ। यदि उनकी[2] तबीयत ठीक होगी, तो हिन्दीके बारेमें कुछ बात करूँगा। बाकी सब तो तुम्हें करना पड़ेगा। तुम्हें किसीको तार करना हो तो कर देना।

काशीमें क्या होता है, सब उसपर निर्भर करेगा।

मैं कल १ बजे वहां पहुँचूंगा और सारी रात रहूँगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९७२) से।

२५६. पत्र : कृष्णचन्द्रको

८ मई, १९३९

चि० कृष्णचंद्र,

तुमको मेरे पत्र मिले होंगे। माताजी के लिये भी पत्र[3] भेजा था।

लीलावती बहनको जो मदद दे सकते हो देते रहो। धुनकीका समय न काटा जाय।[4]

हरीकी पत्नीको कुष्ट रोगकी अस्पताल जो चलती है वहां क्यों नहीं?

मेथ्युके बारेमें मैंने लिखा है।[5] वहां डाक नहीं भेजने का महादेवने गलतीसे लिखा। अब तार भेज दिया है। अखबार हमारे पास आने चाहिये। डाक भी आवेगी। उसमें से भेजने लायक चीज भेजा करो। सामाजिक क्रिया इतनी ही आवश्यक है जितनी व्यक्तिगत। हम निराली व्यक्ति हैं और सामाजिक प्राणी भी हैं। अगर समाज नहीं है तो हम भी कुछ नहीं हैं। इस कारण सामाजिक प्रार्थनामें, सामाजिक यज्ञमें हिस्सा लेने का धर्म हो जाता है।

१. पत्रमें दूसरे दिन "काशी" पहुँचने के उल्लेखसे। गांधीजी ९ मईको काशी पहुँचे थे।

२. मदनमोहन मालवीयकी; देखिए "पत्र : मीराबहनको", पृ० २२४।

३. देखिए "एक पत्र", पृ० २०५।

४. देखिए "पत्र : लीलावती आसरको" पृ० २७३।

५. देखिए "पत्र : मुन्नालाल गंगादास शाहको", पृ० २२५।

आज हम काशी जाते हैं वहांसे मुंबईसे राजकोट। जयाबहन सीधी वर्धा किसीके साथ आवेगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३१७) से। एस० जी० ७७ से भी

२५७. पत्र : रेहाना तैयबजीको

८ मई, १९३९

प्यारी बेटी रेहाना,

तेरा प्यारा खत मिला। मेरी हार भी तो जीत है ना। वीरावालासे हारा तो सही अब उसको जीतने का प्रयत्न चल रहा है। हा इतना सच्च है सही कि इतनी निराशा जीवनजभरमें कभी महसूस नही की थी। लेकिन मणीलाल कहा है न 'कोई लाखो निराशामां अमर आशा छुपाई छे' इसलिए तुझे निराश होने का कोई कारण नही है। ईश्वरमें जो मेरी श्रद्धा है वह तो कभी जानेवाली नही है।

तुमारी दोनोकी---तेरी और सरोजकी अजीब जोड़ी है। सरोज कहां पड़ी और तूं कहां। लेकिन दोनोंके नामसे लिख सकती है।

हां, मेरे पास पूरा दिल खोलने का तुझे हक्क है तेरा फर्ज है। अम्माजानको मेरे वहूत सलाम। आज राजकोट जाते हैं।

बापुके प्यार व आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६७३) से।

२५८. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

बनारस जाते हुए
९ मई, १९३९

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

आप दौरेपर थे और आंशिक अवकाश मना रहे थे, इसलिए आपको तकलीफ न देने के खयालसे मैंने जान-बूझकर अबतक आपको पत्र नही लिखा।

तालचरके बारेमें आपने जिस तत्परतासे उत्तर[1] दिया, उसके लिए बहुत धन्यवाद। वहांकी स्थिति तो समझमें ही नही आती। कभी तो बड़ी आशा जग जाती है, लेकिन फिर जल्दी ही वह छिन्न-भिन्न हो जाती है। अब जिस चीजकी कसौटी हो रही है, वह राजाका दिया हुआ वचन नही, बल्कि अधीश्वरी सत्ताके

१. देखिए पृ० १७२, पा० टि० १।

प्रतिनिधिका दिया हुआ वचन है। कोई अधिकारी कब अधिकारपूर्वक बोलता है और कब अनधिकारी तौरपर, इन दोनों स्थितियोंके सूक्ष्म अन्तरको जनता नहीं समझ पायेगी। मैं जानता हूँ कि आप स्थितिको ध्यानसे देख रहे हैं और मुझे पूरा विश्वास है कि आप तालचरके लोगोंको वर्षा ऋतु आरम्भ होने से पहले ही परेशानियोंसे मुक्ति दिला सकेंगे।

जयपुरका सामान्य-सा मामला अब भी अधर में लटक रहा है। अभी-अभी मुझे मालूम हुआ है कि कुछ कैदी रिहा हुए हैं। चूँकि सविनय अवज्ञा बन्द कर दी गई है, इसलिए लोगोंको कैदमें, और सो भी साँपोंसे ग्रस्त एक पुराने किलेमें, रखने का कोई कारण दिखाई नही देता। इसी तरह सेठ जमनालालजी को तनहाईमें कैद रखने का भी कोई मतलब नही है, क्योंकि उनकी नजरबन्दीका कोई कारण अब नही रह गया है। अधिकारियोंको भय था कि वे सविनय अवज्ञाको बढ़ावा देने के लिए जयपुर-राज्यमें प्रवेश कर रहे हैं। और लोगोंकी माँग तो प्राथमिक दर्जेसे भी कमकी है। अगर उन्हें नागरिक स्वतन्त्रताका आश्वासन मिल जाये तो इतनेसे ही वे सन्तुष्ट हो जायेंगे। मैं तो यही मानूंगा कि जयपुरके मामलेमें कोई कठिनाई नही होगी।[1]

अन्तमें राजकोटका सवाल लें। पंच-निर्णय मेरे गलेकी फाँसी बन गया है। स्थिति मेरी सारी शक्तिकी कसौटी करती रही है और अब भी कर रही है। अब मैं एक ऐसे उपायसे काम ले रहा हूँ जो मुझे नया और कठिन दीखता है। यद्यपि अधीश्वरी सत्ताका समर्थन नहीं त्याग रहा हूँ, लेकिन उसे यथासम्भव पृष्ठभूमिमें रखकर दरबार श्री वीरावालाके हृदयको छूने की कोशिश कर रहा हूँ। दिल्लीसे राजकोट वापस जाकर मैंने देखा कि इस पंच-निर्णयके कारण तो मेरे आगे कठिनाइयोंका पहाड़ खड़ा हो गया है। कठिनाइयाँ अब भी ज्यों-की-त्यों है। बल्कि वे बढ़ रही हैं। लेकिन मुझे लग रहा है कि और किसी कारण नहीं तो कमसे-कम शराफतकी खातिर ही मुझे हर प्रसंगपर आपके या आपके प्रतिनिधिके पास नही दौड़ना चाहिए। जब अनिवार्य हो जायेगा तब आऊँगा। फिलहाल, मैं दरबार श्री वीरा-वालाके हृदयको स्पर्श करने की कोशिश करूँगा और देखूँगा कि ठाकुर साहबकी अधिसूचनासे मिलती-जुलती कोई चीज हासिल कर पाता हूँ या नहीं। अगर आपके पास समय हो तो आप देखेंगे कि राजकोटमें क्या-कुछ हो रहा है। मुझे यह कहना पड़ेगा कि राजनीतिक विभागकी कार्य-पद्धतिका मेरा अनुभव सुखद नहीं है। मैं देखता हूँ कि जिस प्रकार कांग्रेस-अध्यक्ष अपने स्वयंसेवी विभागोंसे अपनी इच्छाके अनुरूप कार्य नहीं करवा सकता, उसी प्रकार वाइसराय भी, वह चाहे जितना शक्तिशाली हो, अपने इरादोंको अंजाम नहीं दिलवा सकता। आशा है, आप इस तुलनाका बुरा नही मानेंगे। मुझे लग रहा है कि मुझे तरह-तरहसे परेशान किया जा रहा है, लेकिन मुझे हमारी छोटी-छोटी कठिनाइयोंका जो एहसास है, उसके कारण मैं इन परेशानियोंके लिए आपको दोष देने के बजाय आपसे सहानुभूति रखता हूँ।

१. देखिए "जयपुरके राजबन्दी", पृ० २०५-६ भी।

कलकत्ता और फिर चम्पारन-जिलेमें मुख्य मार्गसे बहुत दूर बसे वृन्दावन नामक एक गांवका दौरा करके मैं राजकोट लौट रहा हूँ। इसी महीनेकी १२ तारीख तक वहाँ पहुँचने की आशा है।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे : लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

२५९. एक सन्देश

[९ मई, १९३९ या उसके पश्चात्][2]

ऐसी खबर देखने को मिली है कि सेनापति बापटने कहा है, मैंने उनके इस इरादेका अनुमोदन किया है कि चूंकि उनके द्वारा निर्धारित या अपेक्षित समयके अन्दर या जब उन्होंने सोचा था, तब भारत स्वराज्य नहीं प्राप्त कर सका इसलिए, वे डूब मरेंगे। यह खबर देखी तो मैंने इसपर विश्वास नही किया। लेकिन अब मुझे बहुत-से पत्र मिले हैं, जिनमें मुझसे पूछा गया है कि क्या मैंने इस योजनामें सहमति दी थी और दी थी तो किस आधारपर। मुझे कहना होगा, जो कदम वे उठाने का इरादा रखते है, उस पर मैंने सहमति दी हो, ऐसा मुझे याद नही आता। मुझे यह अवश्य याद है कि और बातोंके साथ उन्होंने इस योजनाकी भी मेरे साथ चर्चा की थी। लेकिन मैं तो यह कल्पना भी नही कर सकता कि किसी के स्वराज्य पाने की खातिर डूब मरने के विचारका मैं अनुमोदन करूँगा। यदि यह खबर सच्ची है और अगर सेनापति बापटपर मेरा कोई प्रभाव हो तो मैं उनसे आग्रह करूँगा कि वे यह घातक कदम न उठायें। मैं उनसे और उनके शिष्योंसे अनुरोध करूँगा कि वे स्वराज्यके लिए जियें और जब मृत्यु स्वाभाविक रूपसे और अपने समयसे आये, तब उसका वरण करे।

मूल अंग्रेजीसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. वाइसरायके उत्तर के लिए, देखिए परिशिष्ट ११।
२. यह सन्देश गांधीजी ने अपने नाम आये ९ मई, १९३९ के एक तारके पृष्ठ भागपर लिखा था।

२६०. तार: अमृतकौरको

कटनी
१० मई, १९३९

राजकुमारी अमृतकौर
मारफत डिप्टी कमिश्नर
लखनऊ

पढ़ लिया। समझ गया कि निर्णय गलत और अनावश्यक है। आशा है खाँसीमें सुधार होगा। स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९१५) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२२४ से भी

२६१. पत्र: हबीब केशवजीको

१० मई, १९३९

भाई केशवजी,[1]

मैंने तुम्हारा १३-८-३८ का पत्र सँभालकर रखा है। आज रेलगाड़ीमें पुरानी डाक देख रहा था कि तुम्हारा पत्र हाथमें आ गया।

तुमने ठीक लिखा है। यहाँका मामला विकट है। लेकिन इतना मान लेना कि मैं जो वहाँ था वही यहाँ हूँ। आज भी अगर मैं अपनी जान देकर हिन्दू-मुस्लिम एकता साध सकूँ तो जान दे दूँ। एक बार तो २१ दिनका उपवास[2] किया ही था। मेरा प्रयत्न जारी है।

वहाँके बारेमें क्या लिखूँ? यहाँ बैठा वहाँ आप भाइयोंका मार्ग-दर्शन नहीं कर सकता, इसलिए बस टुकुर-टुकुर देखता-भर रहता हूँ।

मुझे पत्र अवश्य लिखना। भगवान् तुम्हारा भला करे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७९) से; सौजन्य: हबीब केशवजी

१. दक्षिण आफ्रिकाके एक भारतीय। दक्षिण आफ्रिकामें वे बचपनमें गांधीजी से मिले थे।
२. देखिए खण्ड २५।

२६२. तार : मीराबहनको

बम्बई
११ मई, १९३९

मीराबहन
मारफत—प्रीमियर
पेशावर

वृन्दावनसे भेजे गये मेरे पत्रके[1] अनुसार काम करो। आज रात राजकोट जा रहा हूँ।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४४१)से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००३६ से भी

२६३. पत्र : लीलावती आसरको

बम्बई
११ मई, १९३९

चि० लीला,

तेरी शिकायत ठीक है। जितने पत्र तुझे लिखने चाहिए उतने मैं लिख नहीं पाया। अब ध्यान रखूँगा। जया वहाँ पहुँच गई होगी। महादेव मेरे साथ ही है। तू अपना अध्ययन ठीक-ठीक किये जा, यही तेरे लिए श्रेयस्कर है। मैथ्यू चला गया तो कोई चिन्ता नहीं, कृष्णचन्द्र जितनी अंग्रेजी सिखा सके[2] उतनी सीखना। हरिकी हालत दयनीय है। बा अपनी बीमारीके इलाजके सम्बन्धमें चार-पाँच दिन यहाँ रुककर राजकोट आयेगी। तू पत्र लिखती रहना।

जयासे कहना, अपने अनुभवोंका विवरण मुझे लिख भेजें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३७७) से। सी० डब्ल्यू० ६६५२ से भी; सौजन्य: लीलावती आसर

१. देखिए पृ० २६६-७।
२. देखिए "पत्र: कृष्णचन्द्रको", पृ० २६८-९ भी।

२६४. पत्र : कृष्णचन्द्रको

बम्बई
११ मई, १९३९

चि० कृष्णचंद्र,

तुमारा खत मिला। हां, पुस्तकोंका मोह छुट सके तो अच्छा ही है। कोई धर्म-पुस्तककी दरकार रहे तो मेरे तरफसे अवश्य ले सकते हो। अन्यके लिये भाईकी मदद। मेरा अभिप्राय यह है कि एक ही पुस्तक। पुस्तकसे सब ज्ञान खींचना। 'रामायण', 'गीता', 'इशोपनिषद्' से बढ़कर क्या चाहीये।

बालकृष्णके बुखारके बारेमें चिंता होती है। इस बारेमें सुशीला लिखेगी।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

महादेव मेरे साथ ही रहेंगे।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३१४) से। एस० जी० ७६ से भी

२६५. भेंट : समाचारपत्रोंको[1]

११ मई, १९३९

एक पत्रकारने जब गांधीजी के स्वास्थ्यके विषयमें पूछा तो उन्होंने कहा :

ठीक ही है। मैं यह नहीं कह सकता कि खाँसी पूरी तरह चली गई है।

प्रश्न : राजकोटके विषयमें आपका आगामी कदम क्या है?

गांधीजी : स्वाभाविक है कि वह काम वहीसे प्रारम्भ करना होगा जहाँ मैंने उसे छोड़ दिया था और जहाँ वह अभी पड़ा हुआ है।

१. साधन-सूत्रके अनुसार गांधीजी तीसरे प्रहर बिड़ला भवनके एक बड़े कमरेमें चारपाईपर, जिस-पर खादीका बिछावन बिछा हुआ था, विश्राम करते हुए पत्रकारोंके एक दलसे मिले। पत्रकारोंको आते देखकर उन्होंने प्रसन्नता-भरी मुस्कानके साथ अपनी आँखें नचाते हुए कहा : "यह लो, गिरोह आ गया।" पिछली रातकी कष्टप्रद यात्राके बावजूद गांधीजी बिलकुल स्वस्थ और प्रसन्नचित्त दिखाई दे रहे थे। जब पत्रकारोंने प्रवेश किया उस समय वे पत्रोंका एक पुलिन्दा पढ़ रहे थे। पत्रकार खाटके चारों ओर इकट्ठे हो गये, और भेंट-वार्ताका सिलसिला शुरू हो गया।

यह जानते हुए कि वाक्यके अन्तिम शब्द महत्त्वपूर्ण हैं एक पत्रकारने प्रश्नको दुहराया, "आपने कहाँ छोड़ा और वह कहाँ पड़ा हुआ है?" गांधीजी ने तुरन्त अपने शब्दोंको स्पष्ट किया :

आप सब जानते हैं कि जब मैंने राजकोट छोड़ा तबसे लेकर आजतक कुछ-न-कुछ तो हुआ ही है।

इस सन्दर्भमें उन्होंने राज्य प्रजा परिषद् और राजकोटके पदाधिकारियोंके बीच सुधार-योजनापर हुई चर्चा का उल्लेख किया। उन्होंने आगे कहा :

यह योजना अब भी प्रजा परिषद्को स्वीकार्य नही हो पाई है।

इसके बाद यह पूछा गया कि दरबार वीरावाला द्वारा प्रस्तावित सुधार-योजना क्या ठाकुर साहबकी पिछले २६ दिसम्बरकी अधिसूचनामें दिये गये इस वचनका उल्लंघन नहीं है कि वे 'जनताको व्यापक' अधिकार प्रदान करेंगे?

महात्माजी ने इसका नकारात्मक उत्तर दिया। उन्होंने कहा कि दरबार वीरावाला दिसम्बरकी अधिसूचनाकी दृष्टिसे कोई चीज नहीं दे रहे हैं। वह एक बिलकुल अलग प्रस्ताव है। वचन-भंग होने का कोई प्रश्न नहीं उठता, क्योंकि यह तो एक ऐसी योजना है जिसपर दो पक्षोंके बीच बातचीत चल रही है। यदि सम्बन्धित पक्षोंने उसे स्वीकार कर लिया तो वह एक आपसी समाधान होगा।

प्र० : क्या दरबार वीरावाला द्वारा अपने तारमें सुधार-समितिमें मुसलमानों और भायातोंके प्रतिनिधित्वके प्रश्नपर सुझाये विचारार्थ विषय आपको मंजूर हैं?

गां० : नही।

इस प्रश्नपर आगे चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि वादी और वे अपने-अपने पक्ष मुख्य न्यायाधीशके समक्ष प्रस्तुत करेंगे। पैरवीमें सम्बन्धित पक्षोंकी प्रार्थनाएँ शामिल होंगी। उन्होंने आगे कहा :

कदाचित् वे विचारार्थ विषयोंका उल्लेख किये जाने से बचने की कोशिश कर रहे हैं।[1]

आजके लिए इतना ही पर्याप्त है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १२-५-१९३९

१. साधन-सूत्रके अनुसार "पत्रकार जब जमकर प्रश्नोंका सिलसिला शुरू ही करनेवाले थे" कि महादेव देसाईने उन लोगोंको गांधीजी की कठिन यात्राकी याद दिलाकर कहा, "अच्छा हो कि बातचीत खत्म कर दी जाये।"

२६६. पत्र: शारदाबहन गो० चोखावालाको

१२ मई, १९३९

चि० बबुडी,

आज हम लोग राजकोट पहुँचे। तेरा पत्र मिला। तुझे चिन्ता नहीं करनी चाहिए, और न अपनेको जंग लगने देना चाहिए। कोविदकी परीक्षाकी तैयारी जरूर कर। तुझसे जो मदद माँगी गई है, वह देना। यदि तू रोज तैयारी करके जायेगी तो पाठ पढ़ा सकेगी। हिन्दी व्याकरणकी कोई पुस्तक प्राप्त कर लेना, और पाठ्य-पुस्तक तो कोई तैयार की हुई पढ़ानी पड़ेगी, इसलिए कोई अड़चन नही आनी चाहिए।

अभी तो मुझे राजकोटमें रहना पड़ेगा। जूनके महीनेमें दो-चार दिनके लिए मुझे बम्बई जाना होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००११)से; सौजन्य: शारदाबहन गो० चोखावाला

२६७. भाषण: प्रजा परिषद्के कार्यकर्त्ताओंकी सभामें[1]

राजकोट

१२ मई, १९३९

मैं समझ नही पाता हूँ कि मेरे २४ अप्रैलके वक्तव्यसे[2] आपमें से कुछ लोग क्यों उद्विग्न हो गये है। मैंने इसमें कोई नई बात नहीं कही थी। राजकोटसे रवाना होने से ठीक पहले मैंने आपसे विस्तारपूर्वक जो-कुछ कहा था,[3] यह उसीका संक्षेप था।

१. "न्यू लाइट" (नई रोशनी) से उद्धृत इस भाषणको प्यारेलालने संक्षिप्त रूपमें पेश किया था। लेखकका कहना है: "... गांधीजी को मालूम हुआ था कि ... परिषद्के कुछ कार्यकर्त्ता ... दरबार वीरावालासे समझौतेके लिए बातचीत चलाने के विचारको लेकर परेशान थे। ... कुछ लोगोंने ... 'अपने शत्रुका हृदय-परिवर्तन करने' के सिद्धान्तमें अपनी अश्रद्धा प्रकट की थी। कुछ अन्य लोगोंकी राय थी कि ... २६ दिसम्बरकी अधिसूचनापर आग्रह रखा जाये। ... राजकोट पहुँचने के दो घण्टेके अन्दर गांधीजी ने लोगोंके सामने अपनी स्थिति स्पष्ट की। ..."

२. साधन-सूत्रमें "२३" तारीख दी गई हैं; देखिए पृ० १८९-९३।

३. देखिए पृ० १८४-७।

जहाँतक वजुभाई[1] और उनके सहयोगियोंके वक्तव्यका सम्बन्ध है, मैं आपको यह बता दूं कि वह वक्तव्य मुझे अच्छा लगा है, क्योंकि इससे उनके दल और मेरे बीचके मौलिक मतभेद पूरी तरह सामने आ गये हैं। ऐसा कहा गया है कि परिषद् ने संघर्ष परिषद्का गठन विशेष रूपसे सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलानेके उद्देश्यसे किया था। अब यह उद्देश्य अनिश्चित कालतक के लिए स्थगित कर दिया गया है, अतः इसका काम समाप्त हो गया है। इसके नामपर समझौता-वार्त्ता चलाने पर जो आपत्ति की जा रही है उसे मैं समझ सकता हूँ। परन्तु मैं उसके नामपर बातचीत चला ही नहीं रहा हूँ।

मैं इस मामलेमें अपनी स्थिति स्पष्ट कर दूं। जब पहले-पहल निर्णयकी घोषणाकी गई उस वक्त उल्लासमें मेरे मुँहसे यह निकल गया कि मेरे राजकोटके उपवासका परिणाम तो आशातीत सिद्ध हुआ है। परन्तु अब मैं देखता हूँ कि मुख्य न्यायाधीशका निर्णय मेरे गलेकी फाँसी बन गया है।

मैं यहाँ आपके आमन्त्रणपर नहीं आया। मैं यहाँ इसलिए आया कि राजकोट मेरा बचपनका घर है और मैंने यह महसूस किया कि मैं यहाँके राजासे उनकी प्रतिज्ञाका पालन करवा सकूंगा। यहाँ पहुँचने के बादसे मैंने जो कदम उठाये हैं उनमें मैं मात्र अपने अन्तरके प्रकाश और परिस्थितियोंकी आवश्यकतासे ही प्रेरित हुआ हूँ। मेरे इस प्रयोगमें शामिल होना किसीके लिए अनिवार्य नहीं है। कोई भी व्यक्ति, जो मुझसे भिन्न मत रखता हो, अपने रास्तेपर चलने के लिए पूरी तरह स्वतन्त्र है, और यदि राजकोटके लोग दूसरे तरीके अपनाकर संघर्ष जारी रखने का निश्चय करते हैं तो इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। मुझमें इतनी नम्रता तो है ही कि यह समझ सकूं कि किसीका काम करने का मुझसे भिन्न कोई दूसरा तरीका भी हो सकता है और वह मेरे तरीकेसे बेहतर भी हो सकता है। मैं कभी यह देखना नहीं चाहूँगा कि हमारे लोग कायर बन जायें।

मैं इस सुझावका भी स्वागत करता हूँ कि परिषद्की बैठक बुलाई जाये और भविष्यमें की जानेवाली कार्रवाईके बारेमें उसका आदेश लिया जाये। परन्तु मैं चाहूँगा कि आप स्थितिकी वास्तविकताकी ओर से आँखें न मूंद लें। मैं दरबार वीरावाला के उदात्त भावोंको उभारकर उनसे समझौता करने की विषम तथा नाजुक विधि आजमा रहा हूँ। इसके साथ ही पंच-फैसलेमें जो-जो कदम उठाने की बात सोची गई है उन्हें कार्यान्वित कराने की कोशिश भी कर रहा हूँ। राजकोटका मामला जैसा पहली बार देखने पर लग सकता है वैसा आसान और सतही किस्मका नहीं है। इसके पीछे दूसरी जबरदस्त ताकतें हैं।

मैंने आपसे राजकोटके प्रश्नके प्रति नया रुख अख्तियार करने के बारेमें बातचीत[2] की थी, उस बातको आज अठारह दिन हो गये हैं। वक्तके गुजरने के

१. वजुभाई शुक्ल
२. देखिए पृ० १८४-७।

साथ मेरी राय और ज्यादा मजबूत हुई है। मैं यह मानता हूँ कि श्री गिब्सनको[1] अनन्त विलम्बके बारेमें और भायातोंको,[2] उन्हें मेरे दिये आश्वासनका अर्थ मुख्य न्यायाधीशसे करा लेने के उनके सुझावके बारेमें मेरा लिखना मेरी अधीरताका द्योतक था। ऐसी अधीरता मेरी अहिंसाको नही सुहाती। मेरी कानूनी स्थिति सही थी। परन्तु अहिंसा कानूनी अधिकारोंके आसरे नही चलती।

अब मैंने महसूस किया है कि मुझे अपना रास्ता असीम धीरज रखकर ही काटना होगा। यह कोई जादूका खेल नहीं है जो निमिष-मात्रमें किया जा सके। इसके लिए सविनय अवज्ञाकी शक्तिसे भी अधिक प्रवल शक्ति, अर्थात्, अहिंसाके मूलमें स्थित सक्रिय तत्त्व प्रेमका प्रयोग करना होगा। यह वह नया प्रकाश है जो, मैं समझता हूँ, मुझे दृष्टिगोचर हुआ है। परन्तु देखता हूँ, यह अभी बहुत स्पष्ट नही है। इसलिए मैं इसकी पूरी व्याख्या नही कर सकता।

मैं चाहूँगा कि दरबार श्री वीरावालाको सन्तुष्ट करने का प्रयत्न करने से पहले यदि सम्भव हो तो पंच-फैसलेका सहारा बिलकुल छोड़ दिया जाये। परन्तु उसके लिए साहस, निर्भयता और पर्याप्त मात्रामें आस्थाकी जरूरत है। यदि मुझमें ये सारी चीजें हों तो मैं जलती हुई आगमें कूदने में भी संकोच नही करूँ। परन्तु ऐसी आस्था यान्त्रिक तरीकोंसे नही आती है। इसके लिए हमें प्रतीक्षा एवं प्रार्थना करनी होती है। जब मैंने दक्षिण आफ्रिकामें सत्याग्रह आरम्भ किया उस वक्त मुझे इस बातका कोई ज्ञान नहीं था कि जेलका जीवन कैसा होता है। परन्तु एक बार जेलके अन्दर जाने पर यह जेल ही मेरे लिए एक महल, आश्रय-स्थान और तीर्थ-स्थल बन गया और वहाँ मैंने ऐसा बहुत-कुछ सीखा जो सम्भवतः मैं जेलके बाहर कभी न सीख पाता।

यदि मुझे अपने लिए ही ज्वालामें कूदना होता तो सम्भवतः मैं उसमें संकोच न करता। परन्तु लोगोंके हितोंके संरक्षकके नाते मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि मुझे ऐसा जोखिम उठाना चाहिए या नही। इस तरह सदसद्विवेककी आंतर बुद्धि ने मुझे कायर बना दिया और मैं सन्देह और विश्वासके बीच झूल रहा हूँ।

मेरी अहिंसा तो मुझसे कहती है कि पंच-फैसलेको फाड़कर फेंक दो। परन्तु मेरी बुद्धि इसे पूरी तरह स्वीकार नही करती। मैं अपने-आपसे तर्क करता हूँ कि 'जब तुम दरबार श्री वीरावाला और ठाकुर साहबका सहयोग पाने की कोशिश कर रहे हो तो सर्वोच्च सत्तासे सहायता न लेने में क्या तुक है? क्या वे सब एक ही यन्त्रके पुर्जे नही हैं?' इस तरह मैं अपने तर्क-जालमें स्वयं उलझ गया हूँ। मैं जानता हूँ कि यह मुझमें आस्थाकी कमी का द्योतक है।

जबतक मुझमें हृदय और बुद्धिके बीच यह संघर्ष चल रहा है तबतक मैं आपको अपने साथ चलने के लिए नहीं कह सकता; तबतक 'पथप्रदर्शक'के रूपमें आपके लिए ज्यादा उपयोगी नहीं हो सकता। मेरे पास ऐसा कोई बना-बनाया

१. देखिए पृ० १७५-७।
२. देखिए "पत्र: रणजितसिंहको", पृ० १६६-८।

सिद्धान्त नहीं है जो हमें ठीक मार्ग दिखाता चला जाये। मैंने सत्याग्रह-शास्त्रको अभी उसके समग्र रूपमें नहीं आजमाया है। मैं अभी टटोल ही रहा हूँ। यदि मेरी यह खोज आपको रुचिकर लगती हो और अपने भीतर आप उसकी पुकार महसूस करते हो तो आप भी इस खोजमें मेरे साथ शामिल हो जायें।

किसी भी प्रतिनिधिको अपने मालिकोंकी राय जानने की जरूरत होती है, उसे हर कदमपर उनसे अनुदेश प्राप्त करने होते हैं। परन्तु एक वैद्य अपने रोगियोंके बारेमें ऐसा नहीं कर सकता। उसे अपनी बुद्धि और समझसे ही निर्देश प्राप्त करना होता है और जैसे-जैसे समय-समयपर रोगके चिह्न प्रकट होते जायें उनकी जाँच करते हुए उसे अपने उपचारमें परिवर्तन करना होता है। वह रोगीका आदेश नहीं मान सकता। आपके साथ मेरा सम्बन्ध दोनों प्रकारका है। मैं आपका ऐसा प्रतिनिधि हूँ जिसे आपने अपना वैद्य भी मान लिया है। जबतक आपको अपने वैद्यपर विश्वास है, आपको उसके द्वारा बताया गया उपचार निःशंक भावसे चलाना चाहिए। अगर आपका विश्वास उठ गया हो तो आप उसकी जगह अपना विश्वासपात्र दूसरा वैद्य नियुक्त कर लें।

जो माँ बननेवाली होती है, गर्भ-धारणका कष्ट वही जानती है। देखनेवाले उसकी बीमारी देखते हैं और उससे सहानुभूति प्रकट करते हैं। किन्तु प्रसवकी पीड़ाका अनुभव अकेले वही करती है। सत्याग्रहकी कल्पना मैंने की है, इसलिए उसकी पीड़ा और कठिनाईका अनुभव मुझे ही है। मैं विनोद नहीं कर रहा हूँ। मैं अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक ऐसा कह रहा हूँ। मैं अकेला रह जाऊँ, तो भी मैं इस अग्निमय द्वारमें प्रवेश कर जाऊँगा और ध्येय-प्राप्तिकी दिशामें प्रयत्न करता रहूँगा। दरबार वीरावालामें परिवर्तन लाने के लिए सत्याग्रहके प्रत्येक साधनका उपयोग करने और उसे पूरी तरह काममें लाने का मैंने दृढ़ निश्चय किया है। यदि इसमें मैं सफल हो जाऊँगा तो इसके फलमें आप सब सहभागी बनेंगे। यदि मैं असफल हो जाऊँ तो सारा उत्तरदायित्व मेरा होगा और मैं जो-कुछ करूँगा उसका आपपर कोई प्रभाव नहीं होगा।

जब मैं छोटा बच्चा था, राजकोटमें दो अन्धे कलाकार थे। उनमें से एक संगीतज्ञ था। जब वह अपना वाद्य बजाता था उसकी अंगुलियाँ अपने-आप सहज प्रेरणासे तारोंपर अचूक फिरती और ऐसा नाद उत्पन्न करती थीं कि लोग उसे मन्त्रमुग्ध होकर सुनते थे। इसी तरह प्रत्येक मानव-हृदयमें तार हैं। यदि हम केवल यह जानते हों कि सही तार कैसे छूना है तो हम संगीत पैदा कर लेते हैं।

दरबार वीरावाला इस नियमका अपवाद नहीं हैं।

क्या मैंने दरबार वीरावालाको पूरी तरह निर्भय किया है? क्या मैंने उनके प्रति अपने व्यवहारमें शुद्ध सत्य और अहिंसाका ही प्रयोग किया है? क्या मैंने उन्हें पंच-फैसलेका भय नहीं दिखाया है?

हम राजकोटमें जनतन्त्र कायम करना चाहते हैं। जन्मजात जनतन्त्रवादी अनुशासनका जन्मजात पालन करनेवाला होता है। जनतन्त्रकी भावना सहज सिद्ध उसी

व्यक्तिको होती है जो सामान्यतः मानवीय एवं दैवी सभी तरहके नियमोंका स्वेच्छा-पूर्वक पालन करने का आदी होता है। मेरा दावा है कि मैं स्वभाव और शिक्षण, दोनोंसे जनतन्त्रवादी हूँ। जनतन्त्रकी सेवा करने की जिनकी अभिलाषा हो वे पहले जनतन्त्रकी इस कड़ी परीक्षामें उत्तीर्ण होकर अपने-आपको इसके लिए योग्य बनायें। इसके अलावा, जनतन्त्रवादीको पूर्णतः निःस्वार्थ होना चाहिए। उसे स्वार्थ या दलके हितके बारेमें नहीं, अपितु मात्र जनतन्त्रके बारेमें ही चिन्तन करना चाहिए, उसीके सपने देखने चाहिए। केवल तभी वह सविनय अवज्ञाका अधिकार प्राप्त कर सकता है। मैं नहीं चाहता कि कोई व्यक्ति अपने विश्वासोंको तिलांजलि दे दे या अपने-आपको दबाये। मैं नहीं मानता कि स्वस्थ एवं ईमानदारीसे प्रेरित मतभेदसे हमारे ध्येयकी हानि होगी। पर अवसरवादिता, प्रवंचना या मामलोंको येन-केन प्रकारेण रफा-दफा करने की नीतिसे निश्चित रूपसे हानि होगी। यदि आपका मतभेद है तो आपको ध्यान रखना चाहिए कि आपका मत आपके अन्तरतमके विश्वासोंका निदर्शक हो, अपने दलका बल बढ़ाने के लिए लगाया जानेवाला सुविधा-प्रेरित नारा नहीं।

आज पारस्परिक संघर्षसे हमारे जनतन्त्रका गला घुट रहा है। मतभेदोंने हमें छिन्न-भिन्न कर रखा है —— हिन्दू-मुसलमानोंके बीच मतभेद है, ब्राह्मणों और ब्राह्मणेतरोंमें मतभेद है, कांग्रेसजनों और गैर-कांग्रेसजनोंमें मतभेद है। इस तरहकी हुल्लड़बाजीमें से जनतन्त्रका विकास करना कोई आसान बात नहीं है। इसमें दल-गत भावनाका जहर मिलाकर स्थितिको हम बदतर न बनायें।

मैं व्यक्तिगत स्वतन्त्रताको महत्त्व देता हूँ, परन्तु आपको यह नहीं भूलना चाहिए कि आदमी मूलतः सामाजिक प्राणी है। वह वर्तमान स्तरपर व्यक्ति-स्वातन्त्र्यकी अपनी प्रेरणाका सामाजिक प्रगतिकी आवश्यकताओंके साथ मेल साधकर ही पहुँचा है। अप्रतिबन्धित व्यक्तिवाद तो जंगलके जानवरोंका कानून है। हमने व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और सामाजिक प्रतिबन्धके बीचका मार्ग निकालना सीखा है। सारे समाजके कल्याणके लिए स्वेच्छापूर्वक सामाजिक प्रतिबन्ध मानने से व्यक्तिका अपना कल्याण होता है एवं उस समाजका भी जिसका वह सदस्य है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-५-१९३९

२६८. भेंट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

राजकोट
१२ मई, १९३९

गांधीजी ने कहा, मुझे इस बातसे हार्दिक दुःख होता है कि एशियाइयोंके प्रति संघ-सरकारकी नीतिमें[1] कोई भी चीज अन्तिम रूपसे निश्चित नहीं लगती। पहले की गई घोषणाओंकी उपेक्षा की जा रही है और अपने ही आयोगोंकी कुछ सिफारिशोंकी भी अवज्ञा की जा रही है।

उन्होंने कहा, इस हालतमें यदि दक्षिण आफ्रिकाके कुछ ब्रिटिश भारतीय प्रवासियोंने इस नीतिके खिलाफ अपना रोष प्रकट किया है और वे निराश होकर सविनय अवज्ञा करने की सोच रहे हैं, तो इसमें हैरानीकी कोई बात नहीं है। मैं केवल यही आशा कर सकता हूँ कि समझदारीसे काम लिया जायेगा, संघ-सरकार अपनी कार्रवाइयाँ बंद करेगी और ब्रिटिश भारतीय प्रवासियोंके अधिकारोंका सम्मान करेगी।[2]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १३-५-१९३९

२६९. बातचीत: प्रजा परिषद्के कार्यकर्त्ताओंसे[3]

राजकोट
[१२ मई, १९३९ या उसके पश्चात्][4]

राजकोटसे चलने पर जो वक्तव्य मैंने दिया था वह मेरी मन स्थितिका सही द्योतक था। जो विचार मैंने व्यक्त किये थे वे अब और दृढ ही हुए हैं। मैं मानता हूँ कि मैं उतावला था। पच-फैसलेने, जो एक दूषित फल था, मुझे उतावला बना

१. देखिए पृ० १२८ पर पा० टि० १।

२. देखिए "सन्देश: दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंको", पृ० ३१७-८ भी।

३ और ४. महादेव देसाईके लिखे "ए मोमेन्टस डिसीजन" (एक महत्त्वपूर्ण निर्णय) से उद्धृत। लेखकके अनुसार "...दरबार वीरावालाके नाम १२ मईके अपने एक निजी पत्रमें गांधीजी ने... उनके द्वारा चली जा रही 'दुरंगी चाल' का जिक्र किया...जो गांधीजी को सख्त नापसन्द थी। अपने मनमें उठनेवाले विचारोंको अपने साथी कार्यकर्त्ताओंके समक्ष रखने का अवसर वे कभी नहीं खोते थे।"

दिया था। वह उतावलापन मेरी अहिंसापर एक दाग था। उसी उतावलेपनके कारण मैंने भायातों और मुसलमानोंसे यह कहा कि उन्होंने अपनी माँगोंके निर्णयके लिए जो आवेदन किया है, उसपर सर मॉरिस ग्वायरका पंच-फैसला आने तक ठहरने के लिए मैं तैयार नहीं हूँ; समितिका कार्य चलता रहना चाहिए। तब कोई समिति नहीं थी, पर उतावलेपनके ही कारण मैं यह कह गया।

मेरे मनमें इस विषयमें जरा भी सन्देह नहीं है कि पंच-फैसलेको त्याग देना चाहिए। यह कैसे हो सकता है कि मैं दरबार वीरावालाको समझाऊँ-मनाऊँ भी और पंच-फैसलेकी तलवार भी उनके सिरपर लटकाये रखूँ? परन्तु साहस कहाँ है? सत्याग्रहीको हृदयकी दुर्बलता शोभा नही देती। उसे तो केवल ईश्वरमें आस्था रखनी चाहिए कि वही उसे सहारा देगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-५-१९३९

२७०. पत्र : जमनालाल बजाजको

राजकोट
१३ मई, १९३९

चि० जमनालाल,

तुम्हारे जयपुर लाये जाने का समाचार मिला। तबीयत अच्छी तरह सुधार लेना। वजन ज्यादा नही घटना चाहिए। फल बराबर खाने ही चाहिए। सामान्य भोजनके सिवा और कुछ मत खाना। यदि वैद्यकी कोई दवा खानी हो तो खाना। मुझे राजकोट लिखना। अभी तो यही रहना होगा। यहाँकी चिन्ता करने-जैसी कोई बात नही है। महादेव साथ है। उसकी तबीयत ठीक रहती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३००३) से

२७१. पत्र : प्रभावतीको

राजकोट
१३ मई, १९३९

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। बीमारको देख आई, यह तूने बहुत अच्छा किया। मुझे उसकी खबर देती रहना। उसे लिखना कि मैं उसके स्वास्थ्यके बारेमें पूछता रहता हूँ। अपने स्वास्थ्यका भी उचित ध्यान रखना। इस बारेमें सुशीला तुझे ब्योरेवार लिखेगी। इस बीच उसका स्वास्थ्य भी काफी खराब रहा है।

बा चार-पाँच दिन बम्बईमें रुककर यहाँ आयेगी। मैं अच्छा हूँ। यहाँ रातें ठंडी होती हैं, इसलिए गरमी बहुत नहीं मालूम होती।

लड़ाई तो अभी लम्बी चलेगी। चिन्ताका कोई कारण नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५३२) से

२७२. पत्र : अमतुस्सलामको

राजकोट
१३ मई, १९३९

प्यारी बेटी,[1]

तेरा खत मिला। मैं तुझको वीरमगाम तेरे ही हितके लिए नहीं लाया। लेकिन इच्छा नहीं थी तो भी तूने बनाया था वह आमका रस तो तेरे ही खातिर पी गया। तू खामखा हैरान होती रहेगी, उसमें मैं क्या करूं? तेरा विश्वास न खुदापर है, न मेरेपर। दिलमें शक भरे हैं, वह तुझे खा जाते हैं, और तू परेशान रहती है। मैं तो कहता हूं कि जो काम तू कर रही है वह किया कर। उसीमें से सब कुछ हो सकेगा।

मुझे अच्छा है। हिन्दु-मुसलमानके बारेमें कुछ भी चिंता करने की नहीं है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१६) से

१. सम्बोधन उर्दूमें है।

२७३. तार : वल्लभभाई पटेलको[1]

राजकोट
१४ मई, १९३९

सरदार वल्लभभाई
भावनगर

किंकर्त्तव्य-विमूढ़ हूँ। ईश्वर हमारा मार्ग-दर्शन करेगा। आशा है नानाभाई[2] और अन्य सकुशल होंगे। अधिक जानकारीकी राह देख रहा हूँ।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

२७४. भेंट : त्रावणकोर राष्ट्रीय कांग्रेसके शिष्टमंडलको[3]

१३/१४ मई, १९३९

शिष्टमण्डलके सदस्योंने पहले महात्माजी को विस्तारसे यह बताया कि त्रावण-कोरकी चुनाव-पद्धतिमें सरकारने क्या-क्या परिवर्तन किये हैं।

महात्माजी ने कहा कि चुनाव-पद्धति पहले जैसी थी और उसमें अब जो परिवर्तन हुआ है उसे मैं समझता हूँ; और पूछा :

क्या आपको मेरे साथ इसीपर विचार-विमर्श करना है?

श्री कैनिक्कर बोले, हम त्रावणकोरकी राजनीतिक परिस्थितिसे सम्बन्धित हर चीजपर विचार-विमर्श करना चाहते हैं।

१. गांधीजी ने यह तार भावनगरमें वल्लभभाई पटेलकी हत्या करनेका जो असफल प्रयत्न किया गया था उसकी खबर पाकर भेजा था।

२. नृसिंहप्रसाद कालिदास भट्ट

३. यह त्रावणकोर राष्ट्रीय कांग्रेसके शिष्टमण्डलके तीन सदस्यों — कैनिक्कर पद्मनाभ पिल्लै, एम० एल० ए०, कोट्टर कुंजुकृष्ण पिल्लै, एम० एल० सी० और के० पी० कय्यलक्कल — द्वारा "गांधीजी की सहमति" से जारी किये गये वक्तव्यकी रिपोर्टसे लिया गया है। बातचीतके अवसरपर त्रावणकोर राज्य कांग्रेसके सदस्य ई० जॉन फिलिपोज भी उपस्थित थे।

गां० : आपपर जो आरोप लगाया गया है वह आपको मालूम है?

कैनिक्कर : हम यह जानते हैं कि हमारे बारेमें बहुत-सी गलत बातें कही गई हैं और हमारी प्रतिष्ठा कम हो गई है।

गां० : यह कहा गया है कि आपका संगठन, त्रावणकोर राष्ट्रीय कांग्रेस, एक जाली संगठन है। आप लोग कोई स्वतन्त्र दल नहीं हैं, आप सरकारके हाथोंमें एक कठपुतली हैं। आपको इस बारेमें क्या कहना है?

कैनिक्कर : हम इस आरोपका खण्डन करते हैं। हमें सिर्फ इतना ही कहना है कि त्रावणकोर राष्ट्रीय कांग्रेसके हमारे लोगोंमें से अधिकतर असहयोग आन्दोलनके दिनोंसे ही राजनीतिक क्षेत्रमें हैं, जबकि यह बात रियासत कांग्रेसके बहुत-से लोगोंके बारेमें नहीं कही जा सकती।

गां० : यदि ऐसा है, तो उस महिला, कुमारी एनी मैस्केरीनके साथ हुए व्यवहारके बारेमें आप क्या कहते हैं? सर सी० पी० रामस्वामी अय्यर उस मामलेकी जाँच कराने से आखिर क्यों इन्कार कर रहे हैं?

कैनिक्कर : कु० मैस्केरीनके बारेमें हम कुछ भी कहना नहीं चाहते। उसकी चर्चा हम नहीं करेंगे। . . . जाँचकी माँग हम इसलिए नहीं कर सकते कि रियासत कांग्रेसके अनुगामियों द्वारा जो अत्याचार किये गये हैं उनका हमें वास्तविक अनुभव है। . . .

महात्माजी ने हमसे पूछा कि क्या इसलिए सरकारने जो गिरफ्तारियाँ आदि की हैं, उन सबको आप न्यायोचित समझते हैं?

कैनिक्कर : नहीं, हम ऐसा नहीं समझते। कुछ गिरफ्तारियाँ सही हो सकती हैं और कुछ गलत भी हो सकती हैं। पर सारा दोष हम सरकारपर किस तरह डाल सकते हैं? यह बात सभी जानते हैं कि नेय्याट्टिन्कर रियासत कांग्रेसका गढ़ है। वहाँ . . . यातायातको रोकने के लिए बरगदके बड़े-बड़े पेड़ काटे गये थे और पुलों और पुलियाओंको तोड़ा गया था। . . . रियासत कांग्रेसके किसी भी कार्यकर्त्ताने यह न देखा हो, क्या कोई यह कह सकता है? . . . और कुछ नहीं तो कमसे-कम अपराधियोंको खोजने में उन्होंने मदद क्यों नहीं की? . . . सर सी० पी० रामस्वामी अय्यरके लिए जाँच करवाना बेहतर हो सकता है . . . पर हम लोग, जो अनुभवसे वास्तविक तथ्योंको जानते हैं, यह माँग नहीं कर सकते।

गां० : आपका कहना क्या यह है कि सरकारने जो कदम उठाये उन्हींसे पुनः शांति स्थापित हुई?

कैनिक्कर : नहीं, वह तो आपने स्थापित की। शांति स्थापित हुई सविनय अवज्ञा बंद करने से। यदि वह फिर शुरू कर दी जाये तो फिरसे सभी उपद्रव होने लगेंगे।

गां० : तब आप यह मानते हैं कि रियासत कांग्रेसकी गलती थी भी तो केवल यह थी कि अपने अनुगामियोंपर उसका नियंत्रण नहीं था।

कोट्टूर : नहीं, केवल यही नहीं। उसका पहला दोष यह है कि उसने अपने नियंत्रणके बारेमें आश्वस्त हुए बिना सविनय अवज्ञा शुरू की। उसका दूसरा दोष यह है कि अपनी वास्तविक स्थितिको जान लेने के बाद भी उसने उसे बंद नहीं किया, और उसका सबसे गम्भीर दोष यह है कि उसने अपने अनुगामियोंपर, इस डरसे कि कहीं वे उसे छोड़कर हट न जायें, कभी भी अंकुश नहीं रखा। . . .

तब महात्माजी ने हमसे पूछा कि रियासत कांग्रेससे आपका मूल मतभेद क्या है?

हमने उन्हें बताया कि हम पिछले बीस सालसे उत्तरदायी सरकारकी माँग कर रहे हैं। . . . उस समय ईसाई उत्तरदायी सरकारकी माँगका विरोध करते थे। १९३२ में साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वके लिए जो ईसाई-एलवा-मुस्लिम आन्दोलन चला, उससे त्रावणकोरकी राजनीतिमें एक नया मोड़ आया। . . . अब क्योंकि विधान-मण्डल निश्चित रूपसे साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वपर आधारित है और साम्प्रदायिक गुटपर ईसाइयोंका प्रभुत्व है, इसलिए वे उत्तरदायी सरकारकी माँग कर रहे हैं।

गां० : तो आपको ईसाइयोंकी नीयतपर संदेह है।

कैनिक्कर : हाँ है।

गां० : आरम्भमें मैंने आपके बारेमें एक तीखा सवाल पूछा था। अब मैं उनके बारेमें एक तीखा सवाल पूछ रहा हूँ। हम सचाईपर पहुँचने की कोशिश कर रहे हैं।

कैनिक्कर : हाँ, हमें ईसाइयोंकी नीयतपर संदेह है।

गां० : मान लीजिए, वे विधान-मण्डलको राष्ट्रीय रूप देनेके लिए सहमत हो जाते हैं, तब आपको क्या आपत्ति होगी?

कैनिक्कर : तब हमें कोई आपत्ति नहीं होगी।

अगले दिन हम प्रार्थनाके बाद रातको ८ बजे मिले। . . . महात्माजी ने रियासत कांग्रेसकी स्थिति, जैसी कि वे समझते थे, स्पष्ट की। उन्होंने कहा, रियासत कांग्रेस, जिसमें उसका ईसाई-वर्ग भी शामिल है, राष्ट्र-विरोधी नहीं है। दूरदर्शी ईसाइयोंने, जो कभी साम्प्रदायिक रहे हों उन्होंने भी, यह देख लिया है कि साम्प्रदायिक व्यवस्थाओं और समझौतोंसे उन्हें अंतमें लाभ नहीं होना है। इसे स्पष्ट करने के लिए उन्होंने बंगालके मुसलमानोंके अनुभवका उदाहरण दिया। उन्होंने कहा, इसलिए ईसाइयोंके खिलाफ बदनीयतीके आपके आरोपमें सचाई नहीं है। रियासत कांग्रेस राष्ट्रीय है और वह विधान-मण्डलकी रचनाको रूप देने के लिए तैयार हो जायेगी।

श्री फिलिपोज़ने बताया कि राज्य कांग्रेसके ईसाइयोंका दृष्टिकोण पूर्णतया राष्ट्रीय है। उन्होंने यह भी कहा कि यह संगठन साम्प्रदायिक नहीं है, और इसमें सभी समुदायोंके लोग शामिल हैं।

कैनिक्कर: हम अपनी स्थिति स्पष्ट और सुनिश्चित रूपसे रख दें, यही काफी है। हमारी स्थिति यह है: साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व और उत्तरदायी सरकार साथ-साथ हों, हम इसके विरुद्ध हैं। हम इसपर जोर देते हैं कि विधान-मण्डल विशुद्ध राष्ट्रीय आधारपर पुनर्गठित किया जाये। . . .

गां० : यह बात काफी युक्तियुक्त है। अब मुझे दूसरे लोगोंकी प्रतीक्षा करनी होगी। मेरी बड़ी इच्छा है कि आपमें से कमसे-कम एक उनके आने तक मेरे पास रहे।

कोट्टूर: महात्माजी, पर आपने हमें यह नहीं बताया कि चुनाव-पद्धतिमें परिवर्तनके बारेमें आपकी राय क्या है?

गां० : उसकी मुझे कोई बहुत फिक्र नही है। क्योंकि उससे आखिर कठिनाइयाँ तो दूर होती नहीं है।

कोट्टूर: फिर भी, मुझे आशा है कि आप इस परिवर्तनको राष्ट्र-विरोधी नहीं मानते हैं।

गां० : स्थिति यह है. पहलेकी व्यवस्था राष्ट्र-विरोधी थी। आप यह सोचते हैं कि इस परिवर्तनसे कमसे-कम एक बुराई तो दूर हो जाती है। पर मेरे विचारमें, जो अभी बाकी रहा है, वह भी राष्ट्र-विरोधी है। पूरी व्यवस्था ही बदली जानी चाहिए। उसे राष्ट्रीय बनाना चाहिए।

फिलिपोज: यदि चुनावके पहले ऐसा हो जाये तो यह बहुत ठीक होगा।

कैनिक्कर: तीन सप्ताहमें उत्तरदायी सरकार आ जायेगी, हमें ऐसा कोई भ्रम नहीं है।

गां० : उत्तरदायी सरकार जब आनी हो तब आये। यदि वर्तमान राष्ट्र-विरोधी व्यवस्था उससे पहले बदली जा सके तो वह भी एक बड़ी बात होगी।

श्री कव्यलक्कलने कहा कि एलवा लोग पिछले अनेक वर्षोंसे सामाजिक और धार्मिक असमानताओंको मिटाने की कोशिश कर रहे हैं। मेरे बहनोई श्री टी० के० माधवनने, यह महसूस कर कि यह समस्या मन्दिर-प्रवेशसे ही सुलझ सकती है, यह मामला महात्माजी के चरणोंमें रखा। महाविभव महाराजाकी कृपासे और महात्माजी के आशीर्वादसे वह अधिकार उन्हें अब मिल गया है। अब महात्माजी को इस चीजमें सहायक होना चाहिए और ऐसा आशीर्वाद देना चाहिए कि वे बाकी हिन्दुओंके साथ एक होकर रहें और पूरे हिन्दू समाजकी समृद्धि और कल्याणमें अपना योग दें।

गां० : आशीर्वाद आपको भरपूर प्राप्त है। सहायता मैंने दी है। अपनी सहायता अब आपको आप करनी है।[1]

१. आगेके दो अनुच्छेदोंमें हुई बातचीतका प्रेरणा-स्रोत ग्रे की "एलेजी रिटून इन ए कन्ट्री-चर्चयार्ड" शीर्षक कविताकी पंक्ति है।

तभी घड़ीने घण्टा बजाया और गांधीजी ने मुस्कराते हुए कहा: "यह बजा शामका घण्टा" और वाक्य पूरा करते हुए श्री कैनिककरने कहा, "दिनके अवसानकी सूचना देनेवाला।" गांधीजी ने पंक्तिको दोहराते हुए कहा:

हाँ, दिनके अवसानकी सूचना देनेवाला।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २-६-१९३९.

२७५. पत्र: अकबर हैदरीको

आनन्दकुंज, राजकोट
१५ मई, १९३९

प्रिय सर अकबर,

आपके गत महीनेकी ११ और २५ तारीखके पत्रोंके उत्तर में अबतक नहीं दे पाया।

जैसा कि आपको मालूम है, इस महीनेकी १२ तारीखसे पूर्व १८ दिन मैं कलकत्ता और चम्पारन जिला-स्थित वृन्दावन नामक स्थानमें व्यस्त रहा। इस अवधिमें मै आर्यसमाजी मित्रोंसे नहीं मिल पाया। लेकिन मैं राजकोट लौट रहा था कि रास्तेमें ही १० तारीखको वे मुझसे आ मिले। इसी कारणसे आपके इन महत्त्वपूर्ण पत्रोंकी प्राप्ति सूचित करने और उनका उत्तर देने में यह अनिवार्य विलम्ब हुआ। मैं गड़े मुर्दे नही उखाड़ना चाहता और न आर्यसमाजी मित्रों द्वारा दिये उत्तरकी ही विस्तारसे चर्चा करना चाहता।

आर्यसमाजियोंकी न्यूनतम माँगें निम्न प्रकार हैं:

१. अन्य धर्मोके अनुयायियोंकी भावनाका खयाल रखते हुए अपने वैदिक धर्म और संस्कृतिके आचरण और प्रचारकी पूर्ण स्वतन्त्रता।

२. रियासतके धार्मिक अथवा अन्य किसी विभागकी अनुमति लिये बिना आर्यसमाजकी नई शाखाएँ खोलने और नये आर्यसमाज मन्दिर, यज्ञ-शालाएँ और हवन-कुण्ड बनवाने तथा पुरानोंकी मरम्मत करवाने की पूरी छूट।

आपके पत्र पढ़कर मुझे लगता है कि इन माँगोंको स्वीकार करने में आपको कोई गम्भीर आपत्ति नहीं है। यदि मैंने पत्रोंको ठीक समझा है तो सुधारों अथवा धार्मिक अदालतकी स्थापनाकी प्रतीक्षा क्यों की जाये? यदि आप इतनी उदारता दिखा सकें तो इससे शान्तिकी स्थापनामें बड़ी मदद मिलेगी। फिर तो आर्यसमाजियों की सविनय अवज्ञा तत्काल बन्द हो जायेगी।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८०१६)से

२७६. पत्र : भवानराव श्रीनिवासराव पन्तको[1]

राजकोट
१५ मई, १९३९

प्रिय राजा साहब,

मुझे पूरी आशा है कि घटनाएँ सही मोड़ ले रही होंगी। संक्रमणकी अवस्थाएँ सदा कठिन होती हैं। आपने एक बड़ा कदम उठाया है। लेकिन हृदय बराबर बुद्धिकी गतिसे नहीं चलता। इसलिए मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि जो कदम आपने उठाया है उसके सही होनेमें कभी सन्देह न करें। कामको आगे बढ़ने दीजिए, भले ही वह ज्यादा तेज रफ्तारसे ही आगे बढ़ता क्यों न जान पड़े।

तो आप बदरीनाथ जा रहे हैं। आशा है, आध्यात्मिक दृष्टिसे वहाँ आपका समय अच्छा बीतेगा।

हृदयसे आपका,

औंधके राजा साहब

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

२७७. पत्र : विजयाबहन मनुभाई पंचोलीको

राजकोट
१५ मई, १९३९

तेरे समाचार नानाभाईने दिये थे। अच्छा हुआ तू वहाँ गई और मनुभाई[2] भी साथमें है। लौटते समय जरूर आना, लेकिन जल्दबाजी मत करना। बा अभी यहाँ नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१११)से। सी० डब्ल्यू० ४६०३ से भी; सौजन्य : विजया म० पंचोली

१. उर्फ बालासाहब पन्त प्रतिनिधि
२. विजया पंचोलीके पति

२७८. पत्र : अमतुस्सलामको

राजकोट
१५ मई, १९३९

बेटी अमतुल सलाम,[1]

तुमको एक पत्र[2] यहांसे भेजा है। देख भावनगरमें[3] क्या हुआ? उसमें से सीखना यही है कि तुझे अहमदाबादमें रहकर सेवा-कार्य करना है। उसमें से कोई दिन हि० म०[4] समझौता होगा।

मैं अच्छा हूँ।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२०)से

२७९. बातचीत : प्रजा परिषद्के कार्यकर्त्ताओंसे[5]

[१५ मई, १९३९][6]

वह कौन-सी चीज है जो मुझे इस पंच-निर्णयको बेझिझक त्याग देने से रोकती है? उसमें केवल हृदय-दौर्बल्य ही नहीं है, इससे कूटनीतिकी भी बू आती है। यदि मैं चाहता हूँ कि दरबार वीरावाला सीधी चाल चलें तो मुझे भी उनको निर्भय तो कर ही देना चाहिए। अपनी इच्छासे वे जो कर सकते है उसे करने के बजाय उन्हें अधीश्वरी सत्ताके भयसे आतंकित क्यों रहना चाहिए? मैं अहिंसाकी बातें तो बहुत कर रहा हूँ, लेकिन निर्भय होकर हिंसाके गह्वरमें प्रवेश नही कर रहा हूँ। सत्याग्रही बाहरी मददकी चाह नहीं रखता, वह दुनियाकी, अधीश्वरी सत्ताकी, किसी भी बाहरी

१. साधनसूत्रमें गांधीजी ने इसके आगे "हरिजन आश्रम" भी लिखा था।

२. देखिए पृ० २८३।

३. देखिए "तार : वल्लभभाई पटेलको" पृ० २८४।

४. हिन्दू-मुस्लिम

५ और ६. महादेव देसाईके लिखे "ए मोमेंटस डिसीजन" (एक महत्त्वपूर्ण निर्णय) शीर्षक लेखसे उद्धृत। लेखकने इस बातचीतका विवरण "अपने साथी कार्यकर्त्ताओं" से गांधीजी की बातचीत (देखिए पृ० २८१-२) के क्रममें ही दिया है। इस बातचीतकी पूर्वपीठिका देते हुए महादेव देसाई बताते हैं कि "तीन दिनोंमें गांधीजी कुछ कदम और आगे बढ़े।" तात्पर्य शायद १२ मईको उनके राजकोट पहुँचने के "तीन दिन" बादसे है।

शक्तिकी सहायताकी तलाशमें नही रहता। वह तो अपने विरोधीसे सीधा हिसाब करता है, उसे अपने प्रेम और ईश्वरके प्रति आत्म-समर्पणके बलपर जीतता है। इस पंच-निर्णयको कार्यान्वित करने की कठिनाईसे और फिर इस बातसे कि यह यूनानकी पुराण-कथामें वर्णित तरह-तरहके अनिष्टकारी तत्त्वोसे भरी पैंडोराकी पिटारी सिद्ध हुआ है, प्रकट होता है कि ईश्वरकी यही इच्छा है कि मैं इसे बेझिझक त्याग दूं, भले ही भावी फलकी दृष्टिसे यह चाहे जितना सम्भावनायुक्त नजर आता हो। मुझे तो लगता है मानो ईश्वर मुझे तीव्र स्वरमें आदेश कर रहा हो, 'तेरी जीत जीत नही थी; इसे त्याग दे।' आप जो चाहते है कि मैं इस निर्णयपर अमल करवाने के लिए आगे काम करूँ वह इसलिए कि यह आपको दिया गया है। लेकिन जब मेरी हिम्मत टूट रही है, मेरे हाथ काँप रहे है और मैं लड़खड़ा रहा हूँ तो मैं आगे कैसे बढ़ सकता हूँ? मेरे लिए यह एक नैतिक प्रश्न है। मैंने प्रारम्भमें जो कदम उठाया उसमें समाई हुई भूलका एहसास मुझे व्याकुल कर रहा है और आप चाहे जितना चाहें, मैं इस बोझके साथ आगे नही बढ़ सकता हूँ। ऐसे डगमगाते-लड़खड़ाते सेनापतिसे आपका क्या बननेवाला है? मुझे तो इस निर्णयको बेझिझक त्याग ही देना है और बदलेमें आप चाहें तो अपने सेनापतिको त्याग दें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-५-१९३९

२८०. तालचर

लगता है, तालचरकी समस्या राजकोटकी अपेक्षा कही ज्यादा खराब साबित होनेवाली है। राजकोटमें तो शासकके वचनका भंग हुआ था, पर तालचरमें वचन-भंग करनेवाली अधीश्वरी सत्ता है। राजकोटमें राज्य द्वारा किये गये अत्याचार जाँच-पड़तालके विषय नही थे। तालचरमें तो अगणित शरणार्थियोंकी दु:खद अवस्था ही तकरीबन सब-कुछ है। इसलिए तालचरके मामलेमें देरी होना एक अपराध है और इसका अर्थ है कई हजार किसानोंका एक सालकी फसलसे वंचित हो जाना। पॉलिटिकल एजेंट मेजर हेनेसीने जो रियायतें दिलाने का वचन दिया था वे जहाँतक तालचरके शासकका सम्बन्ध है, छोटी-मोटी मामूली बातें हैं, किन्तु प्रजाके लिए तो वे काफी गम्भीर हैं।

मेरे कानमें यह भनक पड़ी है कि वचन-भंगका आरोप करके मैंने मेजर हेनेसी के प्रति अन्याय किया है, और इस तरह अधीश्वरी सत्ताके प्रति भी अन्याय किया है, क्योंकि, कहा जाता है; मेजर हेनेसीने कोई वचन नहीं दिया था, उन्होने तो केवल प्रजाकी आकांक्षाएँ शासकतक पहुँचाने की जिम्मेदारी-भर अपने ऊपर ली थी। यह भी कहा जाता है कि अगर यह साबित भी कर दिया जाये कि उन्होंने ऐसा कोई वचन दिया था, तो उन्होंने बिना सत्ता या अधिकारके ऐसा किया था।

मैं इन दोनों बातोंमें से एक भी स्वीकार नहीं कर सकता। मेजर हेनेसीने दस्तावेजपर बगैर किसी प्रतिबन्धके दस्तखत किये थे। श्री हरेकृष्ण मेहतावने इस दुःखद प्रसंगका विस्तारसे वर्णन किया है, जो विश्वास करने को बाध्य करता है। उन्होंने जो-कुछ बयान किया है, वह खुद अपनी आँखोंसे देखा है। जहाँतक मुझे पता है, मेजर हेनेसीने अपने ऊपर लगाये गये आरोपोंसे अवतक इन्कार नहीं किया है या उन्हें करने का अवसर नही दिया गया है।

इसमें कोई सन्देह नही दिखाई देता कि तालचरका शासक अपनी प्रजाके साथ न्याय करने के लिए उस समयतक तैयार नहीं है, जबतक कि वह सनदके अनुसार, जिसे मैं इन स्तम्भों में पहले ही प्रकाशित कर चुका हूँ,[1] न्याय करने के लिए बाध्य न किया जाये। अधीश्वरी सत्ताका प्रतिनिधि उड़ीसाकी छोटी रियासतोंके शासकोंको अपनी प्रजाके हितमें कार्य करने पर बाध्य भी कर सकता है। क्या इसमें कोई शक है कि जिस आवेदन-पत्रपर मेजर हेनेसीने दस्तखत किये हैं उसमें उल्लिखित सभी अन्यायोंको दूर करना आवश्यक है? असलमें ये अन्याय बहुत पहले ही दूर हो जाने चाहिए थे। पॉलिटिकल विभाग द्वारा शासकके सर्वथा असमर्थनीय रवैयेमें उसके साथ ढील क्यों बरती जा रही है? हजारों शरणार्थियोंकी भलाईकी बातको महत्त्व क्यों नहीं दिया जा रहा है? क्या मानी हुई बुराइयोंको कायम रखने में अधीश्वरी सत्ताकी प्रतिष्ठाका उपयोग नहीं किया जा रहा है? निश्चय ही, इस सबमें कहीं-न-कही कुछ मौलिक गलती है।

राजकोट, १६ मई, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-५-१९३९

२८१. तार: कान्तिको

१७ मई, १९३९

कान्ति
के० पी० सी० सी० सदस्य
हुबली

जबरदस्तीको प्रश्रय देनेवाली कोई बात मेरे लेखनमें नहीं हो सकती।

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

१. देखिए पृ० १७१-२।

२८२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

राजकोट
१७ मई, १९३९

२४ अप्रैलको कलकत्तामें मैंने यह कहा था[2] कि राजकोट मेरे लिए एक प्रयोगशाला साबित हुआ है। इसका सबसे ताजा प्रमाण मेरी इस घोषणामें है, जो मैं अब कर रहा हूँ। सहयोगियोंके साथ चर्चाके बाद मैं आज शामको ६ बजे इस निर्णयपर पहुँचा हूँ कि भारतके मुख्य न्यायाधीश द्वारा दिये हुए निर्णयसे प्राप्त लाभोंका मैं परित्याग कर दूँ।

मैं अपनी गलती देख रहा हूँ। उपवासके अन्तमें मैंने कहा था कि मेरा यह उपवास जितना सफल हुआ है उतना इससे पहलेका और कोई उपवास सफल नहीं हुआ। लेकिन मैं अब देखता हूँ कि वह हिंसासे रंजित था। उपवास करके मैंने अधीश्वरी सत्ताकी दस्तंदाजी चाही, ताकि वह ठाकुर साहबको अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने के लिए प्रेरित करे। यह अहिंसाका, हृदय-परिवर्तनका मार्ग नहीं था, यह तो हिंसा तथा दवाव डालने का मार्ग था। मेरा उपवास शुद्ध तो तब होता जब वह केवल ठाकुर साहबको ही लक्ष्य करके किया गया होता और मैं उनके बल्कि उनके सलाहकार दरबार श्री वीरावालाके हृदयको द्रवित करने में असफल होनेपर मर जाने में ही सन्तोष मानता। मेरे रास्तेमें अगर अप्रत्याशित कठिनाइयाँ न आती, तो मेरी आँखें न खुलती। जो निर्णय मिला है उसमें दरबार श्री वीरावालाकी स्वेच्छापूर्ण सहमति तो थी नहीं। स्वभावतः उनकी नीयत मेरा रास्ता आसान करने की नही थी। इसलिए उन्होंने देरी लगाने के हरएक मौकेका लाभ उठाया। यह निर्णय मेरा मार्ग प्रशस्त करने के बदले मुसलमानों और भायातोंको मुझसे नाराज करने में बहुत बड़ा कारण बन गया। निर्णयसे पहले हम लोग दोस्तोंकी तरह मिले थे। अब मुझपर स्वेच्छासे और बगैर किसी शर्तके दिये हुए वचनको भंग करने का आरोप लगाया जा रहा है? मैं इस आरोपित वचन-भंगका दोषी हूँ या नही, यह मामला भी मुख्य न्यायाधीशके पास जानेवाला था। मुस्लिम कौंसिल और गरासिया संघके वक्तव्य मेरे सामने हैं। अब चूँकि मैंने निर्णयसे मिलनेवाले लाभको छोड़ देने का निश्चय कर लिया है; अतः अब उन दोनों मामलोंका जवाब देना मेरे लिए जरूरी नहीं रह गया है। जहाँतक मेरा ताल्लुक है, मुसलमान और भायात कोई भी चीज ठाकुर साहबसे, जो वे कृपापूर्वक दें, प्राप्त कर सकते हैं।

१. यह वक्तव्य "कन्फेशन एंड रिपेन्टेन्स" (स्वीकारोक्ति और पश्चात्ताप) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। यह वक्तव्य १८ मईके हिन्दुस्तान टाइम्स और हिन्दूमें भी प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए पृ० १९२-३। दरअसल गांधीजी कलकत्ता जा रहे थे।

अपने-अपने पक्ष तैयार करने की मैंने उनको जो तकलीफ दी, उसके लिए मैं उनसे क्षमा चाहता हूँ।

अपनी कमजोर मनःस्थितिमें मैंने वाइसरायको अनावश्यक कष्ट दिये, उसके लिए मैं उनसे भी क्षमा माँगता हूँ। मुख्य न्यायाधीशको भी मैंने कष्ट पहुँचाया इसलिए उनसे भी मैं क्षमा याचना करता हूँ। यदि तब मैंने ज्यादा समझदारीसे काम लिया होता तो उन्हें वह कष्ट न उठाना पड़ता, जो उन्होंने उठाया। और सबसे बढ़कर, मैं ठाकुर साहब और दरबार श्री वीरावालासे क्षमा चाहता हूँ। जहाँतक दरबार श्री वीरावालाका सम्बन्ध है, मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि अपने अन्य सहयोगियोंकी भाँति मैं भी उनके सम्बन्धमें बुरे विचार रखता था। मैं यहाँ इस बातपर विचार नहीं करना चाहता कि उनपर लगाये गये आरोप सही थे या गलत। उनपर चर्चा करने की यह जगह नहीं है। यह कहना ही काफी होगा कि वह अहिंसाका मार्ग नहीं था, और न अबतक उनपर अहिंसाका प्रयोग ही किया गया था।

और, मुझे अपने विरुद्ध यह बात भी कहने दी जाये कि मैं दुहरी चाल खेलने का गुनहगार था — यानी, एक ओर तो उनके सिरपर ग्वायर-निर्णयकी तलवार लटकाये रहता था और दूसरी ओर उनसे प्रार्थना करता था और आशा रखता था कि वे स्वेच्छासे ठाकुर साहबको उदार शासन-सुधार देने की सलाह देंगे।

मैं यह मानता हूँ कि यह तरीका अहिंसासे बिलकुल मेल नहीं खाता। जब मैंने १९ अप्रैलको एकाएक मि० गिब्सनके सामने वह तजवीज रखी जो खिलाड़ियों-जैसी उदारतासे युक्त तजवीज कही जाती है, तब मुझे अपनी कमजोरीका पता लगा। मगर तब मुझमें यह कहने का साहस नहीं था कि 'मैं पंच-निर्णयसे कोई मतलब नहीं रखना चाहता।' इसके बजाय, मैंने तो यह कहा — 'ठाकुर साहब अपनी कमेटी नियुक्त करें, उसके बाद परिषद्के आदमी निर्णयको ध्यानमें रखकर उसकी रिपोर्टकी जाँच करेंगे, और अगर वह दोषपूर्ण हुई तो वह फैसलेके लिए भारतके मुख्य न्यायाधीशके पास भेजी जा सकती है।' दरबार श्री वीरावालाको इसमें नुक्स दिखाई दिया, और उन्होंने वाजिब तौरपर यह कहकर मेरी तजवीजको खारिज कर दिया कि 'अब भी आप निर्णयकी तलवार मेरे सिरपर लटकाये हुए हैं, और ठाकुर साहबकी कमेटीके ऊपर अपील अदालत बनना चाहते हैं। अगर ऐसी बात है तो आप अपना ठीक पावना काट लीजिए, इससे अधिक आपको नहीं मिल सकता।' उनके एतराजमें जोर था, यह मैंने अनुभव किया। मैंने उनसे यह भी कहा कि निर्णयको ताकपर रख देने की हिम्मत तो मुझमें नहीं है, मगर मैं फिर भी आपसे पैरवी करूँगा कि आप प्रजाके साथ समझौता कर लें, और तदर्थ यह मान-कर चलें कि ग्वायर-निर्णय अस्तित्वमें नहीं है, और मैं तथा सरदार बीचसे हट गये हैं। उन्होंने वचन दिया कि वे प्रयत्न करेंगे। उन्होंने अपने तरीकेसे इसके लिए कोशिश की भी, मगर उदार हृदयसे नहीं। मैं उन्हें इसके लिए दोष नहीं देता। मैं उनसे उदारताकी आशा कैसे रख सकता था, जब कि वे जानते थे कि मैं बुजदिलीसे ग्वायर-निर्णयसे चिपटा हुआ हूँ?

विश्वास प्राप्त करने का एकमात्र साधन विश्वास करना है। मुझमें विश्वास करने का साहस नही था। लेकिन आखिरकार मैंने अपना खोया हुआ साहस फिर पा लिया है। भूल-स्वीकार और पश्चात्तापसे अहिंसाकी सार्वभौम शक्तिमें मेरी श्रद्धा और भी ज्वलन्त हो गई है।

मुझे अपने सहयोगियोंके साथ अन्याय नही करना चाहिए। उनमें से बहुतोंका मन शंका-संदेहोंसे भरा हुआ है। मेरी अहिंसाकी व्याख्या उनके लिए नई है। मेरे पश्चात्तापके लिए वे कोई वजह नही देखते। उनकी रायमें मै निर्णय द्वारा प्राप्त स्वर्ण संयोगको खो रहा हूँ। उनका यह भी खयाल है कि राजनीतिक नेताके नाते ७५,००० राजकोटवासियों, बल्कि शायद समस्त काठियावाड़की प्रजाके भाग्यके साथ इस तरह खिलवाड़ करने का मुझे कोई अधिकार नही है। मैंने उनसे कहा है कि उनका यह भय अकारण है, और शुद्धिके प्रत्येक कार्यसे, साहसकी प्रत्येक उपलब्धिसे, सत्याग्रह आन्दोलनसे प्रभावित प्रजाके पक्षकी शक्ति बढ़ती ही है। मैंने उनसे यह भी कहा है कि अगर वे मुझे अपना सेनापति और सत्याग्रहका विशेषज्ञ समझते है, तो उन्हें मेरी उन बातोंको, जो उन्हें मेरी सनक मालूम होती होंगी, सहने के लिए तैयार रहना चाहिए।

ठाकुर साहब और उनके सलाहकारको निर्णयके दबावसे मुक्त कर देने के बाद अब उनसे यह अपील करते हुए मुझे तनिक भी संकोच नहीं होता कि राजकोटकी प्रजाकी आशाओंको पूरा करके और उसकी तमाम आशंकाओंको दूर करके वे उसे सन्तुष्ट करें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-५-१९३९

२८३. बातचीत : महादेव देसाईसे[1]

[१७ मई, १९३९][2]

महादेव देसाई : अधीश्वरी सत्तासे हस्तक्षेप करने को कहना गलत किस प्रकार था? आपने अपनी अनशनकी प्रतिज्ञाके शब्दोंपर आग्रह नहीं रखा; अन्यथा आप कहते कि जबतक माँग पूरी नहीं होती उपवास नहीं टूट सकेगा। लेकिन आप मुख्य न्यायाधीशकी मध्यस्थतापर सन्तुष्ट हो गये। १९१८ की[3] अहमदाबादके मजदूरोंकी हड़तालके दौरान भी आपने मजदूरोंमें ३५ प्रतिशत वृद्धिपर जोर नहीं दिया बल्कि आप मिल-मालिकोंके पंच-फैसलेके लिए राजी हो जाने से सन्तुष्ट हो गये।

१ और २. "ए मोमेन्टस डिसीजन" (एक महत्त्वपूर्ण निर्णय) शीर्षकसे उद्धृत। महादेव देसाई बताते हैं कि यह बातचीत समाचारपत्रोंके नाम जारी किये जानेवाले वक्तव्यके "तैयार हो जाने के बाद . . . और टाइप होने के पहले" हुई; देखिए पिछला शीर्षक। चर्चामें वल्लभभाई पटेल भी शामिल थे।

३. साधन-सूत्रमें "१९१७" है; देखिए खण्ड १४।

सच तो यह है कि यदि ठाकुर साहब अधीश्वरी सत्ताके हस्तक्षेपके बिना आपकी माँगकी पूर्ति करते तो हो सकता था वे आपपर यह आरोप लगाते कि आपने उनपर दबाव डाला। किन्तु यहाँ तो पंच-फैसलेकी जो बात उपवासके कारण मानी गई वही उपवासके बिना भी मानी जा सकती थी।

गांधीजी : तुम ठीक कहते हो। किन्तु यह क्यों भूलते हो कि १९१८ में[1] पंच-फैसलेका प्रस्ताव मिल-मालिकोंकी ओरसे किया गया था? यदि ठाकुर साहबने पंच-फैसलेका प्रस्ताव अपनी ओरसे रखा होता तो बात बड़ी अच्छी होती, किन्तु यहाँ तो मैंने अधीश्वरी सत्तासे विनती की। यही कारण है कि यह मध्यस्थता किसी कामकी साबित नहीं हुई है। मुझे अधीर नहीं होना चाहिए था। बजाय इसके कि मैं ईश्वरपर भरोसा रखते हुए अपने उपवासको अपना असर दिखाने देता, मैंने बाहरकी मदद माँगी, जो एक भारी भूल थी।

लेकिन सर मॉरिस ग्वायरके नये मुद्देपर निर्णय देने तक आप प्रतीक्षा क्यों नहीं करते? मुसलमानों और भायातोंको यह कहने का बहाना क्यों दें कि मुख्य न्यायाधीश द्वारा नये मुद्देपर निर्णय दिये जाने की बातसे आप डर गये?

सही निर्णय लेने में मैं देर क्यों करूँ? एक क्षणका भी विलम्ब मुझे अखर रहा है। मै जानता हूँ कि जो नया मुद्दा पेश किया गया है वह कुटिलतासे प्रेरित है और विजय हमारी ही होगी। ऐसा हो तो मेरे त्यागका मूल्य और भी बढ़ जायेगा। किन्तु मैं इस पंच-निर्णयका त्याग इसलिए नहीं कर रहा हूँ कि संसार मेरे इस कार्यकी प्रशंसा करे। नहीं, मेरा दृष्टिकोण ऐसा कतई नही है। मैं तो एक भयंकर मानसिक सन्तापसे छुटकारा पाने के लिए ऐसा कर रहा हूँ। मैंने अपना निर्णय ले लिया है और अब मै एक पक्षीकी तरह मुक्त अनुभव कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-५-१९३९

२८४. बातचीत : साथी कार्यकर्त्ताओंसे, राजकोटमें[2]

[१७ मई, १९३९ के पश्चात्][3]

मैंने अपने व्यवहारसे ऐसा सिद्ध कर दिया कि ईश्वरमें मेरी निष्ठा सतही है। ठाकुर साहब और दरबार श्री वीरावालाके हृदयको द्रवित करने के लिए यदि

१. साधन-सूत्रमें "१९१७" है; देखिए खण्ड १४।

२. यह बातचीत तीन किस्तोंमें "द डिसीजन एण्ड आफ्टर" (निर्णय और उसके बाद) शीर्षकसे प्रकाशित महादेव देसाईके लेखसे ली गई है। पहले चार अनुच्छेद पहली किस्तसे, अन्तिम चार तीसरी किस्तसे और बीचके अनुच्छेद दूसरीसे लिये गये हैं।

३. ग्वायर पंच-फैसलेको अस्वीकार करने का "निर्णय" गांधीजी ने १७ मई, १९३९ को लिया था; देखिए पृ० २९२।

मैंने ईश्वरके प्रति अपनी निष्ठापर और उपवासकी शक्तिपर अपना सर्वस्व दाँवपर लगा दिया होता तो सबसे बुरी बात यही हो सकती थी कि मैं चल बसता। किन्तु वह चल बसना श्रेयस्कर ही होता। उस स्थितिमें यदि ठाकुर साहब और वीरावाला मुझे बचाना चाहते तो मुझे अपना मित्र समझकर मेरे पास आते और मैं जो चाहता था, मुझे देते। जो भी होता, इससे तो परिणाम अच्छा ही होता। अभी तो यह हुआ है कि मैंने ईश्वरमें अपने विश्वासका भंग किया और वाइसरायसे हस्तक्षेप करने के लिए, यहाँतक कि दरबार वीरावालाको बाहर निकालने के लिए भी कहकर मैंने उन्हें अपना शत्रु बना लिया। अपनी इस गलतीपर मैं चकित हूँ — एक ओर तो मैंने उन्हें अपना शत्रु बना डाला और फिर मैं उन्हें बदलने की भी आशा कर रहा हूँ। मुझे लगता है, मैंने उन्हें जितना नाराज किया है उसकी तुलनामें उनकी उदारता ज्यादा ही कही जा सकती है।

मेरे हाथ काँप रहे हैं और कदम लड़खड़ा रहे हैं।

इस पंच-निर्णयके हाथ आते ही मैं कायर बन गया हूँ और मुझे ऐसी आशंका है कि यदि मैं इसे अपने पास रखूँगा तो आप भी कायर बन जायेंगे। सत्याग्रही अपनी शक्तिके लिए बाहरी साधनोंपर निर्भर नहीं रहता। उसकी शक्तिका स्रोत उसका अन्तर है, ईश्वरके प्रति उसकी आस्था है। जब वह सांसारिक शस्त्रास्त्रोंका त्याग कर देता है, ईश्वर ही उसकी ढाल बन जाता है। लेकिन अगर वह पिस्तौल आदि कोई छोटा-सा हथियार अपनी जेबमें छिपा रखता है तो उसकी आत्मशक्ति जाती रहेगी, और वह अपने-आपको अजेय महसूस नहीं करेगा। यह पंच-निर्णय मुझ-जैसे अहिंसाके पुजारीकी जेबमें पड़ी पिस्तौलके ही समान था। वह मेरे और ईश्वरके बीच बाधा बनकर खड़ा था। उसने मुझे लज्जित किया और कायर बना दिया। जिस तरह ['पिल्ग्रिम्स प्रॉग्रेस' नामकी पुस्तकमें वर्णित] भक्तराजने अपने पापका बोझ फेंक दिया था उसी तरह मैंने भी इसे त्याग दिया है और अब फिर मुक्त और अजेय महसूस कर रहा हूँ और अपने सिरजनहारके साथ तादात्म्यका अनुभव कर रहा हूँ।

हमने पंच-फैसला क्यों छोड़ दिया, यह आपको अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। ऐसा समझिए कि कानूनकी भाषामें हमें "डिक्री" तो मिल ही गई थी किन्तु उसकी तामील कराना आप लोगोंके लिए लगभग असम्भव था। मैं यह करा सकता था, किन्तु इसके लिए मुझे बहुत मेहनत करनी पड़ती, बहुत समय देना पड़ता और वकालतकी जो भी प्रतिभा मुझमें बच रही है उसका उपयोग करना पड़ता। इस बीच आपकी शक्तियाँ बेकार पड़ी रहतीं और आपके हाथ अपनी ताकत खो देते। मेरे रास्तेमें प्रतिदिन जो नई-नई रुकावटें खड़ी की जातीं उनसे निबटने के लिए मैं जिस चतुराईका उपयोग करता उससे आप लोगोंको कुछ भी सीखने को न मिलता। मैंने अपने पापके बोझसे आप लोगोंको बचा लिया है। आपकी स्थिति यदि पहलेसे अच्छी नहीं है तो बुरी भी नहीं हुई है। यदि आप मूर्खतापूर्वक जेलोंमें जाना चाहते हों तो आप उसके लिए स्वतन्त्र हैं। किन्तु तब आपको मुझसे कोई

उम्मीद नहीं करनी चाहिए। मैं तो आपको अपने ही रास्तेसे आगे ले जा सकता हूँ। यह हो सकता है कि मुझमें आपका नेतृत्व करने की योग्यता न हो। तब आप मेरा त्याग कर सकते हैं और वैसा करने का आपको पूरा हक है। आपको इस बातका अधिकार है कि जो सेनापति लड़ने की अपनी रीत-नीतिमें बार-बार परिवर्तन करता हो उसे आप त्याग दें। किन्तु यदि आप मुझे चाहते हैं तो आपको मेरी शर्तें स्वीकार करनी होगी।

मैंने अभीतक ऐसे सेनापतिका नाम नही सुना जिसने अपने अभियानकी योजनाएँ बार-बार न बदली हों और अपने आदेशोंमें आखिरतक परिवर्तन न किये हों। लड़नेवाले आम सैनिकको इन योजनाओंकी कोई जानकारी नहीं होती। वस्तुतः उन्हें खूब छिपाकर रखा जाता है और सेनापतिके सिवा और कोई उन्हें नहीं जानता। इसीलिए टेनिसनने अपनी ये अमर पक्तियाँ लिखी थीं: "उन्हें सवाल नही करना है, उन्हें जवाब नहीं देना है, उन्हें सिर्फ करना या मरना है।" पर, यदि आपकी अनुमति हो तो मैं कहूँ कि ये शब्द आम सेनासे अधिक सत्याग्रही सेनापर ठीक बैठते हैं। कारण सशस्त्र सेनाका सेनापति, बदलती हुई परिस्थितिका खयाल कर, अपनी योजनाएँ रोज बदल सकता है। सैनिक रण-नीति शत्रुके बदलते हुए दाँव-पेचोंपर निर्भर करती है। सत्याग्रही सेनापतिको अपने अंतःकरणके आदेशका पालन करना होता है, क्योंकि बाहरकी परिस्थितिके अलावा, उसे लगातार अपनी भी जाँच करनी होती है और अंतरात्माके आदेशोंको सुनना होता है। किंतु सत्याग्रह और फौजी लड़ाई, दोनोंमें सैनिककी स्थिति बहुत-कुछ एक-सी होती है। उसके लिए आराम नहीं है। उसकी गतिविधियाँ निश्चित नही हैं। उसके बारेमें तो केवल यही निश्चित है कि उसे भारी कठिनाइयों और मौत तक का सामना करना है। अनुशासनमें रहने और सेनापतिके आदेशोंका पालन करने का अपना वचन उसे लड़ाई रुक जाने पर भी पूरा करना होता है। परंतु मैंने इस तरहके अनुशासनकी माँग नही की है। मेरी कोशिश तो हमेशा यह रही है कि साथी कार्यकर्त्ताओंको अपनी बातका विश्वास दिलाया जाये, उनके हृदय और विवेकको अपने पक्षमें किया जाये। मैं सदा यही करता रहूँगा। पर जहाँ बात आपकी समझमें न आये वहाँ आपको आस्था रखनी होगी। आम लड़ाईमें सैनिक यह नही कह सकता कि ऐसा मैं क्यों करूँ। हमारी लड़ाईमें तर्कके लिए काफी गुंजाइश है, पर फिर भी उसकी एक सीमा है। आपको जबतक विश्वास न हो जाये आप तर्क कर सकते हैं, पर जब अन्ततक विश्वास न हो तो आपको आस्थाका सहारा लेना पड़ेगा।

आपके सामने अब बातचीतका रास्ता खुला है। लेकिन अगर आप उसकी बात सोच ही न सकें तो आप लड़ने के लिए स्वतंत्र हैं। वस्तुतः, यदि मैं पंच-फैसलेको तिलांजलि न देता तो लड़ाईमें बहुत विलम्ब हो जाता। इस तरह कुछ महीनोंका समय मैंने आपके लिए बचा लिया है। लेकिन आप मेरे नेतृत्वको ठुकरा सकते हैं और आजाद हो सकते हैं। सत्याग्रहके दृष्टिकोणसे, इस निर्णयसे कुछ

भलाई ही होनी है। सेनापति यदि अपनी दुर्बलताको समझ लेता है और अपने पापका प्रायश्चित्त कर लेता है, तो यह उसके लिए कोई बुरी बात नहीं है। वस्तुतः पाप, अज्ञान, दुर्बलता — ये सब समानार्थक शब्द हैं, और वाइसरायसे हस्तक्षेपकी मांग करने और पंच-फैसलेसे चिपटे रहने में मैं तीनोंका दोषी रहा हूँ। कोई सेना-पति जब अपनेको शुद्ध करता है, जैसा कि मैंने किया है, तो उससे उसकी सेना कमजोर नहीं होती, बल्कि उसकी शक्ति बहुत बढ जाती है।

हम चाहे कितने भी अहिंसक हो जायें, पर दरबार वीरावालाका हृदय-परि-वर्तन नही हो सकता — इस तरहका रत्ती-भर भी संदेह आपके मनमें नही रहना चाहिए। आप क्या यह कहना चाहते हैं कि वे काठियावाड़की सारी बुराईके मूर्तरूप हैं? आप यकीन करें कि यदि हम उनकी स्थितिमें होते तो हमने भी ऐसा ही कुछ किया होता। हममें से हरएक भलाई और बुराईका मिश्रित रूप है। क्या हममें बुराई प्रचुर मात्रामें नही है? मुझमें वह काफी है और मैं ईश्वरसे सदा यही प्रार्थना करता हूँ कि वह मुझे उससे मुक्त करे। मनुष्योमें जो अन्तर है वह केवल मात्राका अन्तर है। जिस आदमीके बारेमें निर्णय करना हो, अपनेको सदा उसकी स्थितिमें रखकर देखने की कोशिश करनी चाहिए। नैतिक उच्चता तो इसमें है कि विरोधीमें भी जो-कुछ श्रेष्ठ है उसे खोजो और उसे प्रभावित करो।

यह इस बातपर निर्भर करता है कि कार्यकर्त्ता चारसूत्री रचनात्मक कार्यक्रम की पूर्तिके लिए एकाग्र चित्त होकर प्रयत्न करे और इस प्रकार मन, वचन और कर्ममें अहिंसाको विकसित करे। ज्यादासे-ज्यादा काम और कमसे-कम बातें — यह आपका आदर्श होना चाहिए। इस कार्यक्रमके केन्द्रमें चरखा है — कताईका जैसा-तैसा कार्य-क्रम नही, बल्कि हर ब्योरेकी, जिसमें उसका यंत्र-विज्ञान और गणित, रुई और उसकी किस्मोंका अध्ययन आदि भी शामिल है, वैज्ञानिक जानकारी होनी चाहिए। एक साक्षरताका कार्यक्रम है। आपको सारा ध्यान केवल उसीपर लगाना चाहिए और किसी और चीजकी चर्चा नही करनी चाहिए। काम व्यवस्थित रूपसे और कार्यक्रमके अनुसार चलना चाहिए। लोगोसे राजनीतिकी बात मत कीजिए — अहिंसा तककी बात मत कीजिए — उनसे केवल साक्षरताके लाभोंकी बात कीजिए। फिर शराब, मादक द्रव्यो और जुएके निषेधका काम है। स्वास्थ्य और सफाईके सरल नियमोंका प्रचार करके चिकित्सीय सहायता दी जा सकती है और रोगोंकी रोक-थामकी प्राथमिक कार्रवाइयाँ की जा सकती हैं। सस्ते घरेलू इलाज हैं, और समझदार ग्रामवासियोंको उनमें प्रशिक्षित किया जा सकता है।

राजकोटमें एक भी घर ऐसा नही रहना चाहिए जिसके साथ आपका विशुद्ध सेवाका सम्पर्क न हो। आपको मुसलमानोंपर ध्यान देना है, उनकी नि.स्वार्थ भावसे सेवा करनी है। फिर हरिजन हैं। उनके साथ जीवन्त सम्पर्क स्थापित कीजिए।

यह सब रचनात्मक कार्य रचनात्मक कार्यके लिए ही होना चाहिए। फिर भी, यह यकीन रखना चाहिए कि इससे उस गुणका विकास होगा जो अहिंसात्मक उत्तर-दायी सरकारके लिए आवश्यक है। दक्षिण आफ्रिकामें अपना कार्य मैंने इसी तरह

शुरू किया था। मैंने शुरुआत लोगोंकी सेवासे की। मैं तब यह नहीं जानता था कि मैं उन्हें सत्याग्रहके लिए प्रशिक्षित कर रहा हूं। मुझे खुद भी यह मालूम नहीं था कि इस तरह मैं अपने-आपको प्रशिक्षित कर रहा हूँ। परंतु अंतमें क्या हुआ, यह आप सबको मालूम है।

यह रचनात्मक कार्यक्रम अनन्त कालतक चल सकता है। आप इससे उकताते क्यों हैं? इंग्लैंडके सौ-साला युद्धकी बात आपको मालूम है? यदि वे सौ सालतक लड़ते रहे, तो हमें हजार सालतक लड़ने के लिए तैयार रहना चाहिए, क्योंकि हमारा तो एक महाद्वीप है। स्वतंत्रताकी लड़ाईमें हमने अपना योग दिया, यही हमारा पुरस्कार होगा।

आपसे मैं जो करने के लिए कह रहा हूँ वह यही सब सामूहिक रचनात्मक कार्यक्रम है, और यह वीरोचित अहिंसाके प्रशिक्षणका आधार है। यह पूर्ण और अविभाज्य है। जिनका इसमें पूरे दिल से विश्वास न हो उन्हें मेरा साथ छोड़ देना चाहिए और अपनी समझके अनुसार काम करना चाहिए।

प्र० : यदि परिस्थिति भिन्न हो, यदि किसी रियासतके लोग — सब-के-सब — बड़ेसे-बड़े त्यागके लिए तैयार हों, तो?

उ० : तो मैं उनसे कहूँगा — अपनेको खाकमें मिला दो। पर उसकी एक शर्त होगी और वह शर्त यह है कि आप मेरी परिभाषाकी अहिंसापर पहुँच गये हों। यदि मुझे यह विश्वास हो जाये, तो मैं कहूँगा, यद्यपि यह बराबरकी टक्कर नहीं है, फिर भी आप अधीश्वरी सत्ता और रियासतोंके विरुद्ध अकेले लड़ सकते हैं। तब मैं लोगोंके जोश और उत्साहपर पानी नहीं डालूंगा।

प्र० : लेकिन क्या यह काफी नहीं होगा कि कार्यकर्त्ता कार्यक्रमको पूरा करने की प्रतिज्ञा कर लें और उसे सच्ची निष्ठासे पूरा करें?

उ० : शायद ही हो। क्योंकि आपको इस तथ्यको साफ-साफ दिखाना होगा कि पूरी रियासत आपके अनुशासनको मानती है। आप उत्तरदायी सरकार आखिर सबके लिए चाहते हैं, केवल कार्यकर्त्ताओंके लिए तो चाहते नहीं हैं।

गांधीजी ने दो उदाहरण रखे। १९२२ में उन्हें जेल भेजा गया था। उस समय उन्होंने इस बातकी साफ हिदायतें दी थीं[1] कि कोई हड़ताल और प्रदर्शन नहीं होना चाहिए। काम बदस्तूर चलता रहना चाहिए। भारत-मंत्रीने उस स्थितिका मजाक उड़ाते हुए कहा था — "गांधीजी के जेल जाने पर कुत्तातक नहीं भौंका।" परंतु गांधीजी ने इसे प्रशंसा माना और कहा कि जो शांति बनी रही वह मेरे कारण ही बनी रही। लोगोंने मेरी हिदायतोंका अक्षरशः पालन किया। दूसरा उदाहरण: १९२१ में बम्बईमें दंगे हुए। गांधीजी ने घोषणा की कि जबतक दंगाई होशमें नहीं आयेंगे मैं उपवास रखूँगा।[2] मियाँ मुहम्मद हाजी जान मुहम्मद छोटानी तब जीवित

१. देखिए खण्ड २३, पृ० ८९ और ९३।

२. देखिए खण्ड २१, पृ० ४८९-९१।

थे। शरारती तत्त्वोंपर उनका पूरा नियंत्रण था। उन्होंने गांधीजी से कहा : "कृपया उपवास तोड़ दीजिए। मै इन आदमियोंको जानता हूँ, ये मेरे नियंत्रणमें है और मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि ये शांत रहेंगे।" गांधीजी ने आगे कहा :

आपमें सब लोगोके बारेमें, चाहे वे आपके दलके हों या न हों, ऐसा कह सकने की सामर्थ्य होनी चाहिए। ऐसा नियंत्रण पाने के लिए लोगोंको रचनात्मक कार्यक्रम, उसके सर्वांग-सम्पूर्ण रूपमें, पूरा करना चाहिए। अहिंसा उतनी ही असफल रही है जितना कि चरखा असफल रहा है। कुछ और कार्य है — मद्य-निषेध, हिन्दू-मुस्लिम-एकता, अस्पृश्यता-निवारण। इन कार्योमें अलग-अलग व्यक्तियोंको परखना मुश्किल है। वहाँ अपनेको धोखा देने की गुजाइश है। पर चरखेके मामलेमें ऐसी कोई गुजाइश नही रहती। वहाँ दिन-प्रतिदिनका काम मापा जा सकता है।

आपको धर्मप्रचारकोंके-से उत्साहसे इस कार्यक्रममें जुट जाना चाहिए। मै आपको कोई नया कार्यक्रम नही दे सकता। सविनय अवज्ञा उन थोड़े-से लोगोंके लिए है जो अहिंसाकी भावनासे ओतप्रोत है और बड़ेसे-बड़े बलिदानके लिए तैयार है। रचनात्मक कार्यक्रम सबके लिए है। सभीको इसे केवल जबानी नही, बल्कि सक्रिय रूपसे अपनाना है। इसे या तो अमलमें लाना है या नहीं लाना है। खादी या तो पहननी है या नही पहननी है। यह चारसूत्री कार्यक्रम आपके अनुगामियोंके लिए एक कसौटी होना चाहिए। अन्यथा, अनुगामी क्या सिनेमा कम्पनियों और सिगरेट-विक्रेताओंके भी बहुत नही होते? आपके गिर्द इकट्ठे होकर जो लोग 'इन्किलाब जिन्दाबाद' चिल्लाते है या इस या उस व्यक्तिको कोसते है, उनके कारण धोखेमें मत रहिए।

बेकारके सभी विचारोंको अपने दिलोंसे निकाल दीजिए और जो विचार रखने ही हैं, बस उन्हीपर ध्यान केन्द्रित कीजिए। इस तरह आप स्वयंपर और औरोंपर अद्भुत नियंत्रण रख सकेंगे। भले आदमीका विचार कभी बेकार नही जाता। विचार-संयमका अर्थ है कमसे-कम शक्तिसे ज्यादासे-ज्यादा काम। यदि वह संयम हममें हो तो जो जबरदस्त प्रयास हम करते है, वह हमें करना न पड़े। अहिंसात्मक कार्यका अर्थ है, चुपचाप खूब काम करना और बहुत ही कम बोलना या लिखना। इनकी जरूरत सदा रहेगी, क्योंकि विचार-संयम कोई आसान चीज नही है। फिर भी यदि हमें इस देशमें अहिंसाको सर्वोच्च स्थिति देनी है और विशुद्ध अहिंसा द्वारा उत्तरदायी सरकार स्थापित करनी है, तो हमें वैसी आदत डालनी होगी।

एक साथी कार्यकर्त्ताने कहा : हम कसौटीपर खरे उतरते है या नहीं, यह बात मात्र आप ही कह सकते है, हम नहीं।

गांधीजी : नहीं, मैं यह अधिकार अपने हाथोंमें लेने की धृष्टता नही कर सकता। यदि आप यह दावा कर सकते हैं कि आपका ईश्वर पर जीवन्त विश्वास है, चाहे आपकी ईश्वरकी कोई भी परिभाषा क्यों न हो, यह काफी होना चाहिए। आपका किसी सिद्धान्तमें विश्वास होगा ही — उसे जीवन्त मानिए और कहिए कि यही आपका ईश्वर है और आपका इसपर विश्वास है। मै सोचता हूँ मुझे मानना चाहिए

कि यह काफी है। मैंने प्रकटतः तो ईश्वरपर पूर्ण विश्वास रखकर ही उपवास किया। परन्तु ईश्वरके बजाय वाइसरायको अपनी सहायताके लिए बुलाया। सत्याग्रहीका ईश्वरके सिवा और कोई सहारा नही है। कुछ समयके लिए तो ईश्वरपर मेरा विश्वास समाप्त हो गया था।

प्र० : ब्रेडलॉ[1]-जैसे नास्तिकमें भी सर्वस्व-त्यागकी सामर्थ्य हो सकती है। सत्याग्रहीके रूपमें आप तो उसे स्वीकार नहीं करेंगे।

उ० : मैं समझता हूँ कि मैं उसे स्वीकार करूँगा। ऐसा व्यक्ति मेरे लिए मानका पात्र है। परन्तु ऐसा व्यक्ति स्वयं यह कहेगा कि वह मेरी परिभाषाके अनुसार सत्याग्रही नही है। लेकिन शायद मैं उनके प्रति अन्याय कर रहा होऊँ। उनसे मिलने का सौभाग्य मुझे कभी नहीं मिला। यद्यपि वे अपने-आपको नास्तिक घोषित करते थे, हो सकता है कि उनका किसी ऐसी स्वतः क्रियाशील शक्तिमें विश्वास हो जिसे किसी परिभाषामें नहीं बाँधा जा सकता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-६-१९३९, १०-६-१९३९ और १७-६-१९३९

२८५. भेंट : स्टीलको[2]

राजकोट
[१७ मई, १९३९ के पश्चात्][3]

स्टील : स्वाधीनताकी आपकी धारणा क्या है?

गांधीजी : स्वाधीनतासे मेरा आशय यह है कि ब्रिटिश सत्ता भारतसे बिलकुल हट जाये। किंतु समान और स्वतंत्र हैसियतवाले दो राष्ट्रोंकी साझेदारी, जो उनमें से किसीकी भी इच्छासे समाप्त हो सकती हो, उसमें वर्जित नहीं है। उसका औपनिवेशिक स्वराज्यसे भिन्न होना भी जरूरी नहीं है। परन्तु भारत-जैसे महाद्वीपके लिए, जो नृवंश-विज्ञान और राजनीतिकी दृष्टिसे दक्षिण आफ्रिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया आदि उपनिवेशोंसे भिन्न है, औपनिवेशिक स्वराज्य शब्दोंका प्रयोग शायद अच्छा नहीं रहेगा। लेकिन हो सकता है कि यह शब्द ब्रिटिश संविधान-जैसा ही लचीला हो। इन शब्दोंकी यदि इस तरह व्याख्या की जा सके कि उसमें भारत-जैसा देश आ जाये, और यदि भारतका इंग्लैण्डके साथ कोई सम्मानजनक समझौता हो जाये, तो मैं शब्दोंके लिए झगड़ा नहीं करूँगा। ब्रिटिश राजनेताओंको यदि उस

१. चार्ल्स ब्रेडलॉ (१८३३-१८९१), अंग्रेज स्वतन्त्र चिन्तक और आमूल परिवर्तनवादी।

२. *न्यूयार्क टाइम्स* के। बातचीत प्यारेलालके लिखे "नो क्वेरल एबाउट वर्ड्स" (शब्दोंपर कोई झगडा नहीं) शीर्षक लेखसे उद्धृत है।

३. स्टीलके अन्तिम प्रश्न और उसके उत्तरसे स्पष्ट है कि यह बातचीत गांधीजी द्वारा १७ मईको ग्वायर पंच-फैसलेके अस्वीकार कर दिये जाने के बाद हुई थी।

सम्मानजनक समझौतेके लिए किसी और शब्दकी बजाय इन्ही शब्दोका प्रयोग करने में सुविधा महसूस होती है, तो मै इसपर झगड़ा नही करूँगा।

स्टील : परंतु कांग्रेसमें सुभाष बोस और उनके दल-जैसे ऐसे तत्त्व हैं जो ब्रिटिश साम्राज्यके बाहर पूर्ण स्वाधीनता चाहते हैं।

गां० : यह केवल शब्दोंका सवाल है। इस मुद्देपर सुभाष बाबूमें और मुझमें कोई मतभेद है, मैं यह मानने को तैयार नही हूँ, यद्यपि यह हो सकता है कि हम अलग-अलग भाषाका प्रयोग करते हों। मान लीजिए, जिस तरहकी स्वतंत्र और समान साझेदारीकी मैंने माँग की है, वह सम्भव हो जाये, तो सुभाष बाबू उसके लिए 'न' न कहेंगे। परंतु इस तरहका प्रस्ताव उनके आगे यदि आज रखा जाये, तो शायद वे यह कहें, जैसा कि वे न्यायतः कह भी सकते हैं, कि वह उन्हें स्वीकार नही है। क्योंकि वे यह कहेंगे कि ब्रिटिश उतनी आसानीसे सत्ता छोड़नेवाले नही हैं जितनी कि कुछ लोग सोचते हैं। यदि वे मुझसे इस तरहकी बात कहें तो मैं उनसे झगड़ूंगा नही, बल्कि यह कहूँगा कि मैं इस तरहकी भाषा प्रयुक्त करना इसलिए पसन्द करता हूँ कि यह मेरे मिजाज और मानव-स्वभाव की मूल एकरूपतामें मेरी निष्ठाके अधिक अनुकूल है।

प्रश्नकर्त्ताने इसके बाद गांधीजी से यह जानना चाहा कि क्या 'संघ-व्यवस्था' (फेडरेशन) के सिलसिलेमें उनके और सरकारके बीच कोई बातचीत चल रही है।

गां० : बिलकुल नही। इस आशयके जितने भी संकेत समाचारपत्रोंमें आप देखते हैं वे सब कपोल-कल्पनाएँ हैं। वर्त्तमान वाइसरायका यह तरीका नहीं है, उनका गुप्त ढंगसे काम करने में विश्वास नही है। वे सब-कुछ खुलेआम करते हैं और जनताको सब-कुछ बता देना पसन्द करते हैं। कमसे-कम मेरा उनके बारेमें जो विचार है वह यही है। मेरे खयालसे, उनका यह विश्वास है कि खुली बातचीतसे किसी भी ध्येयको कोई क्षति नही पहुँचती।

परंतु मुझे यकीन है कि 'संघ-व्यवस्था' जबतक कांग्रेसको, मुसलमानोंको या नरेशोंको स्वीकार न हो, वह कायम नही रह सकती। मुझे ऐसा लगता है कि ब्रिटिश राजनेता 'संघ-व्यवस्था'को विमुख और असंतुष्ट भारतपर थोपेंगे नहीं, बल्कि सभी दलोंको राजी करने की कोशिश करेंगे। कमसे-कम मैं आशा तो ऐसी ही करता हूं।

यदि वह भारतपर थोपी जाती है तो वह एक बड़ी ही दुर्भाग्यपूर्ण बात होगी। रोष और विरोधके बीच संघीय ढाँचा खड़ा नही किया जा सकता। यदि एक भी पक्ष 'संघ-व्यवस्था'को नही चाहता, तो उसे थोपना बेहद नासमझी होगी।

स्टील : फिर विकल्प क्या है?

गां० : विकल्प कोई ऐसी चीज पेश करना हो सकता है, जो सभी, या तीनों पक्षोमें से हरएकको स्वीकार हो।

स्टील : लेकिन आप सुभाष बोसकी इस बातसे तो सहमत नहीं हैं कि सबसे अच्छा विकल्प अन्तिम चेतावनी देना होगा?

गां० : सुभाष बाबूमें और मुझमें मूल मतभेद यही है। अंतिम चेतावनी अपने-आपमें गलत हो, यह बात नहीं है। पर उसके पीछे प्रभावी शक्ति होनी चाहिए, जबकि आज ऐसी कोई अहिंसक शक्ति नही है। यदि सभी दल किसी सम्मानजनक समझौतेपर पहुँच जायें तो प्रभावी शक्ति आसानीसे पैदा हो सकती है।

इसके बाद श्री स्टीलने साम्प्रदायिक परिस्थितिकी चर्चा करते हुए गांधीजी से पूछा कि क्या आपकी रायमें हिन्दू-मुस्लिम परिस्थिति और खराब होती जा रही है।

गां० : देखने में तो शायद यही लगता है। परंतु मुझे पूरी आशा है कि अंतमें हममें अवश्य एकता होनी है। हमारे समान हित, जो हमें परस्पर जोड़ते हैं, इतने जबरदस्त हैं कि दोनों समुदायोंके नेताओंको आपसमें समझौता करना ही होगा। परिस्थिति उन्हें ऐसा करने को बाध्य कर देगी। आज हम एक-दूसरेसे जो बहुत अधिक अलग लगते हैं, यह हालमें ही आई जागृतिका स्वाभाविक परिणाम है। इसने मतभेदके मुद्दोंपर जोर दिया है, पूर्वग्रहों, पारस्परिक संदेहों और द्वेषपर बल दिया है। नये नेतृत्वके साथ रोज जो नई माँगें सामने आ रही हैं, उनसे स्थिति और ज्यादा गड़बड़ा गई है। पर मुझे आशा है कि इस अव्यवस्थामें से व्यवस्था उभरेगी।

स्टील : मुस्लिम लीग और कांग्रेसके बीच जो मतभेद हैं, क्या वे ऐसे नहीं हैं जो दूर नहीं हो सकते?

गां० : मतभेदोंमें कोई सार नहीं है।

स्टील : आपके खयालसे अभी आखिरी चेतावनीके लिए उपयुक्त समय नहीं आया है; फिर अगला कदम क्या होना चाहिए?

गां० : अपने घरको ठीक करना। ज्यों ही ऐसा करके हम विभिन्न तत्त्वोंको एकत्रित कर लेंगे, त्यों ही तैयार हो जायेंगे।

स्टील : अमेरिकासे आप किस तरहकी सहायताकी अपेक्षा रखते हैं?

गां० : अमेरिकासे मैं इस रूपमें भारी सहायताकी अपेक्षा रखता हूँ कि यदि उसे आलोचना ही करनी है तो मित्रोंकी तरह आलोचना करे। आज तो मैं यह देखता हूँ कि भारतके प्रयासकी या तो बेहद प्रशंसा की जाती है, या इतनी अज्ञान-भरी आलोचना की जाती है कि उसे देखकर निराशा होती है। आपके समाचारपत्रोंने अमेरिकी जनमतको सही ढंगसे प्रबुद्ध करने की बहुत ही कम कोशिश की है।

स्टील : पंच-निर्णयको त्याग देने का क्या यह अर्थ है कि आपने कोशिश छोड़ दी है?

गां० : कदापि नहीं। इसके विपरीत, गलतीके बोझसे अपनेको मुक्त कर लेने से, मैं आज अपनेको पक्षीकी तरह हल्का और भारतीय रियासतोंकी समस्याके समाधानके लिए कोशिश करते रहने को और ज्यादा आजाद महसूस कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-६-१९३९

२८६. पत्र : अन्नपूर्णाको

राजकोट
१८ मई, १९३९

चि० अन्नपूर्णा,

तेरी प्रसादी तो बहुत दिन पहले मिल गई थी, लेकिन तुझे पत्र लिखना हो ही नही पाता था। तू दीर्घायु हो और अपनेको आदर्श नारी सिद्ध करे। तेरा भेजा कच्छा पहन रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४२५) से।

२८७. बातचीत : कस्तूरबा गांधीसे[1]

[१८ मई, १९३९][2]

गांधीजी (हँसते हुए) : लेकिन बहनको मेरी ओरसे तू ही क्यो नही समझाती?

कस्तूरबा : मैं कैसे समझाऊँ? मै तो खुद ही नहीं समझ रही हूँ।

लेकिन तुझे तो समझना ही चाहिए। याद है न वह समय जब तू दक्षिण आफ्रिकामें मृत्यु-शय्यापर पड़ी हुई थी और डाक्टरने कहा था कि मुर्गीके शोरबेके बिना तू बच नही सकती?

याद है।

याद है तो यह भी याद है न कि हालाँकि मैंने तुझे जैसा ठीक समझे वैसा करने की पूरी छूट दे दी थी, लेकिन तूने कहा था कि भले ही मर जाऊँ, लेकिन मुर्गीका शोरबा नही लूँगी?

हाँ, यह भी याद है।

१. "ए मोमेंटस डिसीजन" (एक महत्त्वपूर्ण निर्णय) शीर्षकसे उद्धृत। महादेव देसाई लिखते हैं: "गांधीजी की वृद्ध, निरक्षर किन्तु प्रभुपरायण बहन उनके निर्णयसे बहुत अशान्त हो गई थीं और किसीसे यह सुनकर कि गांधीजी हार गये, वे बहुत चिन्तित हो उठी थीं। यह खबर सुनकर कस्तूरबाको भी बहुत आघात पहुँचा। शायद उनकी भावना भी वृद्धा बहनकी-सी ही थी। उन्होंने गांधीजी से बहनको दिलासा देने का अनुरोध किया।"

२. महादेव देसाईने अपने लेखमें सूचित किया है कि यह बातचीत उनके साथ हुई चर्चाके अगले दिन हुई थी। महादेव देसाईके साथ गांधीजी की चर्चा १७ मईको हुई थी। देखिए पृ० २९५-६।

उसका कारण यह था कि परमेश्वरमें तेरी दृढ़ श्रद्धा थी। तू जानती थी कि उसकी इच्छा होगी तो वह तुझे बचा लेगा, लेकिन मांसको न छूने की अपनी प्रतिज्ञाको भंग करके तू जीने को तैयार नहीं थी।

हाँ, ऐसा ही था।

इसी तरह मुझे भी तबतक उपवास करते रहना चाहिए था जबतक कि ठाकुर साहब और दरबार वीरावालाके हृदय द्रवित न हो जाते और वे आकर मुझसे यह नहीं कहते कि आप उपवास तोड़ दें, हम अपना वचन पूरा करेंगे। लेकिन इसके बजाय मैं डगमगा गया। मेरे मनमें आया कि मुझे ब्रिटिश सरकारकी सहायता लेनी चाहिए, अन्यथा शायद मुझे अपने प्राण गँवाने पड़ें। यह पाप था। और चूँकि यह निर्णय मैंने पापसे हासिल किया है, इसलिए इस पापके फलको तो मुझे त्याग ही देना चाहिए।

लेकिन ठाकुर साहब और वीरावाला तो मार्गमें विघ्न उपस्थित कर रहे हैं। अगर वे ऐसा न करें तो निर्णयपर ठीक अमल हो सके और सारा झगड़ा मिट जाये। ऐसे उत्पाती हैं वे लोग।

उत्पाती तो हैं ही, लेकिन यह मेरी आरम्भकी भूलका परिणाम है। मैंने उन्हें खिजा दिया और मुझे उनसे किसी बेहतर व्यवहारकी आशा करने का हक नहीं है। विघ्न वे नहीं खड़े कर रहे हैं, वह तो उनके माध्यमसे ईश्वर कर रहा है। लेकिन साथ ही ईश्वरने ही मेरी आँखें भी खोली हैं और उसीने मुझे रास्ता बताया है। इसलिए इस पापसे मैं जितनी जल्दी हाथ धो लूँ उतना ही अच्छा है। क्या तुझे ऐसा नहीं लगता?

हाँ, लगता तो है, लेकिन दमनकारी अध्यादेशों, जुर्मानों आदि का क्या होगा? हमने तो सब-कुछ छोड़ दिया है और उधर उनका तो वही पुराना रवैया है।

इससे क्या? हमें तो अपने धर्मका पालन करना है और यह विश्वास रखना है कि वे अपने धर्मका पालन करेंगे। तू यह क्यों नहीं समझती कि चूँकि मैं अपने कर्त्तव्यमें चूक गया और अपने उपवासका लाभ उठाने या उसे जल्दी ही तोड़ने के लिए अधीर हो उठा, इसलिए ईश्वरने मुझे दण्ड दिया है? लेकिन मैं हारा नहीं हूँ। बहनको समझा देना कि भूल स्वीकार करने में कोई दोष नहीं होता, बल्कि भूल की स्वीकृति तो अपने-आपमें जीत है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-५-१९३९

२८८. बातचीत : एक बालकसे[1]

[१८ मई, १९३९ या उसके पश्चात्][2]

गांधीजी : यह समझ ले कि वह पंच-निर्णय एक जहरीला नाग था। और जब हमारे घरमें जहरीला नाग होता है तो हमें कैसा लगता है?

बालक : डर लगता है।

ठीक है, तो इस तरह जबतक वह पंच-निर्णय कायम था तबतक दरबार श्री वीरावाला और मैं दोनों भयभीत थे और उसे झाँसा देने की कोशिश कर रहे थे, लेकिन वह झाँसेमें आ ही नहीं रहा था। सो अब मैंने आहिस्तेसे उसे उठाकर घरसे बाहर डाल दिया है और अब हम दोनो भय-मुक्त हैं।

यह तो समझ रहा हूँ कि उस निर्णयको त्यागना जरूरी था। लेकिन उस त्यागसे हमें मिला क्या?

जहरीले साँपसे और इस तरह भयसे छुटकारा मिल जाना क्या मामूली उपलब्धि है? वह हमारे घरमें बैठा एक जहरीला नाग था। अब हम अपने घरमें एक सुखी परिवारकी तरह रह सकते हैं। दरबार श्री वीरावाला और मैं न केवल उस नागको झाँसा देने की कोशिश कर रहे थे, बल्कि खुद भी एक दूसरेसे कतरा रहे थे। अब कमसे-कम हम एक-दूसरेसे मित्रकी तरह मिलते तो हैं।

लेकिन इससे क्या? दरबार श्री वीरावालामें ऐसा क्या है जिसे हम बाहर निकाल सकते हैं?

खुद तुझमें ऐसा क्या है? और यदि तुझमें कोई गुण है तो दरबार श्री वीरावालामें भी है। और अगर मैं तुझे अपने बच्चेकी तरह गले लगाता हूँ तो दरबार श्री वीरावालाको अपने परिवारके सदस्यकी तरह गले क्यों न लगाऊँ? मैं तुझे जानता हूँ, लेकिन दरबार श्री वीरावालाको नहीं जानता। लेकिन हमें उनको अपना मित्र बनाना है और उनके गुणोंका — और गुण तो उनमें हैं ही — अच्छेसे-अच्छा उपयोग करना है। जैसे तुझमें आत्मा है वैसे ही उनमें भी है। ऐसा कोई आदमी नहीं है जिसमें कुछ-न-कुछ मूल्यवान चीज नहीं हो, जिसमें आत्माका कोई गुण विद्यमान न हो। जरूरत सिर्फ पारखी नजरकी है जो उस चीजको उसमें से बाहर निकाल सके।

१ और २. "द डिसीजन एण्ड आफ्टर-१" (निर्णय और उसके बाद-१) से उद्धृत। महादेव देसाई लिखते हैं : "स्थितिपर जितना प्रकाश कस्तूरबाके साथ गांधीजी की बातचीतसे (देखिए पिछला शीर्षक) पड़ा उतना ही प्रकाश एक बालकसे पिछले दिनों हुई उनकी बातचीतसे भी पड़ा। बच्चेके मनमें पंच-फैसलेकी अस्वीकृतिके औचित्यके बारेमें कोई शंका नहीं थी। लेकिन उसकी समझमें यह बात नहीं आ रही थी कि अस्वीकृतिसे हमें मिला क्या?"

लेकिन उस नागके चले जाने के बाद हमें क्या करना है? उस नागके साथ तो, लगता है, हमारा घर भी — हमने जो-कुछ जीता था वह भी — चला गया है।

नहीं, उस नागके अलावा और कुछ नही गया है। अधिसूचना अभी कायम है। और गत तीन महीनोके अनुभवसे हममें सयानापन ही आया है। मैंने गलत रास्ता अख्तियार कर लिया था — अब वापस आ गया हूँ। हम समझते थे कि खरी-खोटी कहने से हमें बहुत-कुछ मिल जायेगा। हमें मालूम हो गया है कि उसका नतीजा उलटा ही हुआ। हमने अपना अहिंसाका माद्दा ठोक-बजाकर देख लिया। पाया कि वह बहुत कम है। जो हमारे विपक्षी थे उन्हें हमने अपना शत्रु बना लिया है। हमें उनको प्रेमसे जीतना है और अब हमारे लिए रास्ता साफ है। हमारी आजादीकी लड़ाई खत्म नही हुई है। खत्म हो भी नही सकती। लेकिन अब हमें उसे अपेक्षाकृत अच्छे वातावरणमें और अधिक अच्छे साधनोसे चलाने का अवकाश मिल गया है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-६-१९३९

२८९. सन्देश : भारतीय व्यापारी-संघको

[१९ मई, १९३९ या उसके पूर्व][1]

भारतीय व्यापारी-संघका नया भवन समूचे भारतके लिए सुख-समृद्धि देनेवाला सिद्ध हो। लालजी नारणजीकी[2] अनेक आनन्ददायी स्मृतियाँ मेरे मनमें हैं। मुझे खुशी है कि उनकी स्मृतिका सम्मान किया जा रहा है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-५-१९३९

२९०. राजकोट राज्य मुस्लिम परिषद्के अध्यक्षको लिखे पत्रका अंश

[१९ मई, १९३९ या उसके पूर्व][3]

नैतिक समस्याका समाधान कोई तीसरा व्यक्ति नहीं कर सकता। ऐसी समस्याका समाधान व्यक्ति अपने अन्तःकरणसे ही कर सकता है।

गांधीजी आगे लिखते हैं कि मुख्य न्यायाधीशको जिस बातका फैसला करना था वह यह कि गांधीजी द्वारा दिये हुए वचनके आधारपर वे अमुक अधिकार

१. यह सन्देश दिनांक "बम्बई, १९ मई" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।
२. एक प्रसिद्ध व्यापारी
३. यह पत्र दिनांक "राजकोट, १९ मई" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

पाने का जो दावा कर रहे हैं वह ठीक है या नहीं। लेकिन अब उन लोगोंके लिए माँगने को कुछ बचा नहीं है, क्योंकि गांधीजी ने ग्वायर-निर्णयको त्याग दिया है।

जहाँतक वादा-खिलाफीके आरोपका सम्बन्ध है, गांधीजी कहते हैं कि यदि मुझे वादा-खिलाफी करने का तनिक भी अंदेसा होता तो उन्हें पंचके पास नहीं जाना पड़ता। गांधीजी ने क्या-कुछ कहा था इसका उन्हें पूरा एहसास है। लेकिन अब तो यह सब अतीतकी बात बन चुकी है।[1]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-५-१९३९

२९१. तार: तंज़ीम-उल-मोमिनीनको[2]

[१९ मई, १९३९ या उसके पश्चात्][3]

मेरा मन साफ है। शिष्टमण्डल सोमवारके अलावा २४ तारीखके पहले किसी भी दिन आ सकता है।

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२९२. पत्र : अगाथा हैरिसनको

राजकोट
२० मई, १९३९

प्रिय अगाथा,

यह मत कहना कि मैंने तुम्हारी उपेक्षा की है। मैं गहरे सोच-विचारमें पड़ा हुआ था और पत्रादि लिख नहीं सकता था। अब क्योंकि मेरे मनपर से बोझ

१. उत्तरमें परिषद्के अध्यक्षने लिखा : "हमें यह देखकर दुःख होता है कि पत्रमें उठाये गये महत्त्वपूर्ण मुद्दोंको आप बड़ी चतुराईसे टाल गये हैं।... मुसलमानोंको दिये गये वचन-भंगके प्रश्नोंको नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता।"

२ और ३. यह तंज़ीमके १९ मई, १९३९ के तारके उत्तरमें भेजा गया था। संस्थाने अपने तारमें शियोंके एक शिष्टमण्डलके लिए गांधीजी से मुलाकातका समय माँगा था। शिष्टमण्डल ७ अप्रैलको लखनऊमें हुए शिया-सुन्नी दंगेके सिलसिलेमें गांधीजी से मिलना चाहता था। इसी तारीखको सार्वजनिक रूपमें तबर्राका पाठ करते हुए ६०० शिया मुसलमान लखनऊमें गिरफ्तार कर लिये गये थे। २४-५-१९३९ के हिन्दुस्तान टाइम्सके अनुसार एक शिष्टमण्डल, जिसमें "तंज़ीमकी कार्यकारिणीके अध्यक्ष, मंत्री और सदस्य" शामिल थे, २३ मईको राजकोट पहुँचा। देखिए "एक पत्र", पृ० ३१८-९ भी।

उतर गया है, मैं तुम्हें और अन्य साथी कार्यकर्त्ताओंको पत्र लिखने की बात सोच सकता हूँ।

संघ-व्यवस्थाके बारेमें मुझसे बहुत अपेक्षा मत रखो। मैं वहीं हूँ जहाँ था। जहाँतक विरोधका सम्बन्ध है, कहना चाहिए कि सुभाषमें और मुझमें व्यवहारतः कोई तात्त्विक अन्तर नहीं है। लेकिन मेरा खयाल है सिद्धान्ततः है।

रियासतोंके बारेमें मेरी राय अभी स्थिर नहीं हुई है। राजकोटपर मेरा नवीनतम वक्तव्य[1] तुम्हारी कुछ सहायता कर सकता है।

युद्धकी हालतमें मेरी स्थिति यह होगी कि व्यक्तिगत रूपसे मैं कोई भाग नहीं लूँगा। कांग्रेस क्या रास्ता अपनायेगी, यह कहना कठिन है। इसके पहुँचने से पहले शायद तुम्हें उसका पता चल जाये।

तालचरकी स्थिति बिगड़ रही है।[2] चार्ली यदि निराश नहीं तो दुःखी तो हैं ही। वहाँ विश्वासघात हुआ है। हमें आशा करनी चाहिए कि वाइसराय समस्याका समाधान कर देंगे।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५०८) से।

२९३. पत्र : किशनसिंह चावड़ाको

राजकोट
२० मई, १९३९

भाई किशनसिंह,[3]

पिछले दिनोंकी पीड़ाके बाद कुछ आलस आया है, इसलिए लेटे-लेटे पत्र लिखवा रहा हूँ।

तुम्हारा पत्र मिला। तुम जो लिखते हो, उससे मुझे आश्चर्य नहीं होता। लेकिन अहिंसाका यह लक्षण है कि अहिंसक हिंसककी भी हिंसा नहीं करता। इससे हिंसक या तो सुधर जायेगा, या फिर अपनी हिंसासे ही अपना नाश कर लेगा।

मैं जो प्रयोग कर रहा हूँ, उसका क्या नतीजा निकलेगा, यह तो अभी देखना है।

हरिलालकी मदद तुम्हें नहीं करनी चाहिए थी। वह बिलकुल बेशर्म हो गया है। यहाँ-वहाँसे भीख माँगता है, और शराब पीता है। भिक्षाका सदुपयोग करता, तो भी कुछ क्षम्य माना जाता।

१. देखिए पृ० २९३-५।
२. देखिए पृ० २९१-२ भी।
३. गुजरातीके एक प्रसिद्ध लेखक

भगवान्‌ने ही तुम्हें मरने से बचा लिया न? अब बहुत बरस जियो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९८३५) से।

२९४. बातचीत : साथी कार्यकर्त्ताओंसे[1]

[२० मई, १९३९ या उसके पश्चात्][2]

क्या जिंदगीमें कभी भी मुझे किसीकी खुशामद करते देखा गया है? क्या सार्वजनिक कार्यके निमित्त भी मैंने कभी खुशामदका सहारा लिया है? मैं वर्षों पहले यह घोषणा कर चुका हूँ कि मैं स्वराज्यके लिए भी सत्य और अहिंसाकी कीमत नही दे सकता, और तबसे इस बातको मैंने कई बार दोहराया है। जिस आदमीने ऐसी बात कही वह क्या खुशामदका सहारा लेगा? दरबार वीरावालाने जब मुझे दरबारमें आनेका निमंत्रण दिया, उस समय उन्होंने यहाँतक कहा कि मैंने ठाकुर साहबके लिए उनके पिताके समान होने का अपना दावा साबित कर दिया है और इसलिए वे खुद भी मुझसे मिलने खुशी-खुशी आयेंगे, लेकिन अगर मैं वहाँ जाऊँ तो उन्हें बड़ी प्रसन्नता होगी। उन्होने यह भी कहा कि मुझे दरबारमें शरीक होने की जरूरत नही है, बल्कि वे वहाँ आये लोगोंसे, जबतक मैं वहाँ पहुँच न जाऊँ तबतक, रुकने को कहेंगे। मै उनका आशय समझ गया, लेकिन मै तो यदि उन्होंने मुझसे दरबारमें उपस्थित रहने को कहा होता तो उसके लिए भी बिलकुल तैयार था। यदि मुझसे यह कहा गया होता कि यह दरबार ठाकुर साहबकी विजय और मेरी पराजय मनाने के लिए किया जा रहा है तब भी मैं उसमें शामिल हुआ होता। मैंने उनको बरतरफ़ करके पंच-निर्णय प्राप्त किया था और इस तरह उन्हें चोट पहुँचाई थी; इसलिए समारोहमें उपस्थित होकर उसका मार्जन करना उनके प्रति मेरा कर्त्तव्य था। वह मुझपर चढ़ा एक ऋण था और मेरी आन-इज्जतका यह तकाजा था कि वह ऋण मैं ब्याज-समेत चुका दूँ। उन्हें मुझसे कोई ऐसा कदम उठाने को कहने का भी हक था जो मेरे लिए अपमानजनक होता और इस दोष-मार्जनके लिए मैं सिर्फ अपने शील-सम्मानको बचाकर उनके कहे अनुसार सब-कुछ कर सकता था। लेकिन उन्होने मुझसे ऐसा कुछ करने को नहीं कहा। निमन्त्रण बड़ा स्वाभाविक और नम्रतापूर्ण था। दरबारका आयोजन दमनकारी कानून आदि रद्द किये जाने और सुधार-समितिके गठनकी घोषणा करने के

१ और २. महादेव देसाईके "द डिसीजन ऐंड आफ्टर-१" (निर्णय और उसके बाद-१) शीर्षक लेखसे उद्धृत। गांधीजी के दरबारके एक समारोहमें शामिल होने से प्रजा परिषद्के कुछ कार्यकर्त्ताओंको बड़ा क्षोभ हुआ था। उनको अपना दरबार जाने का मन्तव्य समझाते हुए गांधीजी ने ये बातें कहीं। गांधीजीनी दिनवारी के अनुसार गांधीजी २० मई, १९३९ को दरबारमें शामिल हुए थे।

निमित्त किया गया था। पापका प्रायश्चित्त करनेवाला हिसाब नही लगाता; वह तो अपने दग्ध हृदयका समस्त सार उँडेल देता है। आपको बता दूँ कि मेरा प्रायश्चित्त अभी पूरा नहीं हुआ है। मै जानता हूँ कि मैं वह भाषा बोल रहा हूँ, ऐसी बात कर रहा हूँ जो आपकी समझसे परे है। लेकिन अगर आपको सच्ची अहिंसाकी हलकी-सी झलक भी मिली हो तो आपको यह महसूस होना चाहिए कि अब मैं जो-कुछ कर रहा हूँ वह अत्यन्त स्वाभाविक है।

अहिंसक लड़ाई तलवारकी धारकी तरह तीखी होती है। इस तलवारकी धारको हृदयकी सान पर तेज किया जाता है। बराबरीके पक्षोके बीच सीधी लड़ाईमें भी कुछ बहादुरीकी जरूरत होती है, लेकिन उससे कहीं बड़ा शूरवीर वह है, जो यह जानते हुए भी मृत्युको ललकारता है कि वह ऐसी गैर-बराबरीकी लड़ाई लड़ रहा है, जिसमें प्रतिपक्षीके पाँच गिरेंगे तो उसके ९५ गिरेंगे। इसलिए हम प्रताप और शिवाजीके पराक्रमका गुणगान आज भी करते हैं। लेकिन सत्याग्रही तो अपना सर्वस्व होम देता है और हँसते-हँसते अपना बलिदान कर देता है — ऐसा बलिदान जो परम शुद्ध है। जो बलिदान स्वेच्छासे न किया गया हो, जो बलिदान शुद्ध न हो, वह व्यर्थ है। मै आपको भरोसा दिलाता हूँ कि मैंने वही किया है जो हर सच्चे सत्याग्रहीको करना चाहिए। "जो तुझसे एक मील चलनेको कहे उसके साथ तू दो मील जा।"

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-६-१९३९

२९५. पत्र : पृथ्वीसिंहको

राजकोट
२१ मई, १९३९

प्रिय पृथ्वीसिंह,[1]

तुम्हारा पत्र पाकर बड़ी खुशी हुई। बेशक, तुम्हारा पहला पत्र भी मिल गया था, और मैं तुम्हारी पुस्तकके[2] बारेमें शान्तिलालसे पत्र-व्यवहार करता रहा हूँ। पुस्तकके प्रकाशनार्थ दिये जानेके बारेमें एक बाधा जरूर है। लेकिन मैं समझता हूँ, उसके बारेमें अभी कोई जल्दी नहीं है।

देखता हूँ कि तुमने साल पूरा कर लिया है और आन्तरिक अनुभवकी दृष्टिसे काफी-कुछ प्राप्त भी किया है। मेरे हालके लेखोंसे तुमने देखा होगा कि अहिंसाकी भावनाके विकासमें सहायक तत्त्वके रूपमें मैं कताईको — यानी कि तब जब कताई

१. एक क्रान्तिकारी, जिन्होंने १६ वर्षतक गिरफ्तारीसे बचने के बाद गांधीजी के सामने आत्म-समर्पण किया था; देखिए खण्ड ७०, "पुराने क्रान्तिकारी", २५-९-१९३९।

२. पृथ्वीसिंहकी लिखी आत्मकथा *क्रान्ति पथका पथिक*

अहिंसाके प्रतीकके रूपमें की जाये — कितना अधिक महत्त्व देता हूँ। वैसे स्थूल रूपसे देखें तो भी जो आदमी लगातार घंटों कातता है और उसमें आनन्दका अनुभव करता है, वह सहज ही अपना धैर्य और सन्तुलन नहीं खो सकता। वह कातते हुए पूरे समय ध्यानस्थ रह सकता है, बशर्ते कि उसका चरखा बिलकुल दुरुस्त हो और उसका संगीत चिन्तनमें सहायक हो रहा हो। मेरी यही कामना है कि तुम्हारे दूसरे वर्षका शुभारम्भ इस संकल्पके साथ हो कि तुम अपने अन्दर अहिंसाकी भावनाके विकासमें एक सहायक तत्त्व की तरह कताईमें महारत हासिल करोगे। तुम्हारे अनुभव और प्रयोगसे मुझे काफी मदद मिलेगी, क्योंकि मैं मानता हूँ कि तुम्हें अपने हृदयकी ठीक पहचान है। ज्यादा लोग ऐसा नहीं कर सकते। आदमी दूसरोंको धोखा देने से अधिक खुद अपनेको ही धोखा देता है।

यह जानकर खुशी हुई कि राजकोटके सम्बन्धमें मेरा पहला वक्तव्य[1] तुम्हें अच्छा लगा। अब तो दूसरा वक्तव्य[2] भी तुमने देख लिया होगा। वह वक्तव्य देना कठिन लग रहा था, लेकिन अब मेरे सिरसे सारा बोझ उतर गया है।

महादेवकी तबीयत अब बिलकुल ठीक है और वह मेरे साथ है। जमनादास बम्बईमें है।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६३४) से। सी० डब्ल्यू० २९४५ से भी; सौजन्य : पृथ्वीसिंह

२९६. खेंगारजी सवाईको लिखे पत्रका अंश[3]

[२२ मई, १९३९ के पूर्व][4]

बताया जाता है कि गांधीजी ने अपने पत्रमें ऐसा उल्लेख किया है कि उनके कहने पर कच्छी प्रजाकीय परिषद्ने सत्याग्रह स्थगित कर दिया है, लेकिन अब उन्हें मालूम हुआ है कि परिषद्के दैनिक कार्यों में अब भी बाधा पहुँचाई जाती है।

पत्रमें गांधीजी ने आशा व्यक्त की है कि लोग विवेकसे काम लेंगे और वर्तमान तनावको कम करने की दिशामें कदम उठायेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २२-५-१९३९

१. देखिए पृ० १९०-३।
२. देखिए पृ० २९३-५।
३. कच्छके महाराव
४. यह पत्र दिनांक "कच्छ-भुज, २२ मई" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२९७. यहूदियोंका प्रश्न

न्यूयार्क शहरके २७५ सेवन्थ ऐवेन्यूसे छपनेवाले 'ज्यूइश फ्रंटियर' के प्रबन्ध सम्पादकने कृपाकर मुझे मार्चके अंककी एक प्रति भेजकर यह प्रार्थना की है कि मैंने जर्मनी और फिलस्तीनके यहूदियोंपर जो लेख लिखा था,[1] उसके उक्त पत्रमें प्रकाशित जवाबका मुझे उत्तर देना चाहिए। जवाब बड़ी योग्यताके साथ लिखा गया है। अगर जगह होती तो मैं वह पूरा ही यहाँ उद्धृत कर देता। किन्तु इसका सार पाठकोंको 'हरिजन' के इसी अंकमें अन्यत्र मिल जायेगा।[2]

मैं यह कहूँगा कि मैंने वह लेख आलोचकके रूपमें नहीं लिखा था। मैंने तो उसे अपने यहूदी मित्रों तथा पत्र-लेखकोंकी आग्रहपूर्ण प्रार्थनापर लिखा था। मैंने जब लिखने का निश्चय कर लिया, तो फिर मैं उसे किसी दूसरे तरीकेसे नही लिख सकता था।

पर मैंने जब यह लेख लिखा तब यह आशा नहीं की थी कि यहूदी तुरन्त मेरे मतके हो जायेंगे। अगर एक भी यहूदी पूरी तरह कायल हो गया हो और उसका मत बदल गया हो, तो मुझे संतोष मान लेना चाहिए।

न मैंने यह लेख केवल आजके लिए लिखा था। मैं मानता हूँ — फिर भले ही यह मेरी खामखयाली समझी जाये — कि मेरी मृत्युके बाद मेरे कुछ लेख जीवित रह जायेंगे, और जिन उद्देश्योंसे वे लिखे गये हैं, उनकी उनसे सेवा ही होगी। मुझे इससे कोई निराशा नहीं होती कि मेरे लेखने मेरी जानकारीमें एक भी यहूदीका मत-परिवर्तन नहीं किया।

अपने लेखके जवाबको एकसे अधिक बार पढ़नेके बाद भी मैं यह कहने पर मजबूर हूँ कि मैंने अपने लेखमें जो राय जाहिर की थी, उसे बदलनेकी मैं कोई वजह नहीं देखता। बहुत मुमकिन है कि जैसा कि लेखकने कहा है, "अगर जर्मनीमें कोई यहूदी गांधी पैदा हो जाये, तो वह लगभग पाँच मिनट ही काम कर सकेगा, और फौरन उसका सर उड़ा दिया जायेगा।" मगर इससे मेरा मामला खारिज

१. देखिए खण्ड ६८, पृ० १५३-५७।

२. "वी आर ट्रीटेड ऐज सबह्यूमन्स: वी आर आस्क्ड टु बी सुपरह्यूमन" (हमसे अमानवीय व्यवहार और अतिमानवीय अपेक्षाएँ) शीर्षकके अन्तर्गत दिये गये अपने उत्तरमें हाइम ग्रीनबर्गने कहा था: "...नये भारतके आध्यात्मिक नेताने...हमपर यह आरोप लगाये हैं कि जिन देशोंमें यहूदियोंपर अत्याचार किये जा रहे हैं उनमें हमने सक्रिय शान्तिवादियोंवाली बहादुरीका परिचय नहीं दिया।... वे हमपर यह दोष लगाते हैं कि फिलस्तीनमें हम आक्रामक राष्ट्रवादिताकी...नीतिपर चल रहे हैं और अरबोंको उनके स्वदेशसे वंचित करना चाहते हैं।...मेरे मनमें तो न चाहते हुए भी ऐसा संदेह उठ रहा है कि जहाँतक फिलस्तीनकी समस्याका सम्बन्ध है, गांधीजी कट्टर सर्व-इस्लामवादियोंके बीच किये जा रहे यहूदी-विरोधी प्रचारसे प्रभावित हो गये हैं।..."

नही हो जाता और न इससे अहिंसाकी शक्तिमें मेरी जो श्रद्धा है उसे कोई धक्का लगता है। जिन तानाशाहोका अहिंसामें कोई विश्वास नही उनकी भूख शान्त करने के लिए हजारो नहीं तो सैकड़ोके आत्म-बलिदानकी आवश्यकता तो होगी ही, यह मैं कल्पना कर सकता हूँ। बड़ीसे-बड़ी हिंसाके सामने ही अहिंसा अपनी अमोघ शक्ति दिखाती है — यह अहिंसाका सच्चा सूत्र है। ऐसे ही प्रसंगोंपर उसके गुणकी असल कसौटी होती है। कष्ट उठानेवालों को अपने जीवन-कालमें परिणाम देखने की जरूरत नही। उन्हें तो यही श्रद्धा रखनी चाहिए कि यदि उनकी मृत्युके बाद उनकी परम्परा जीवित रह जाये तो परिणामका आना निश्चित ही है। हिंसाका तरीका अहिंसा के तरीकेसे कोई बहुत बड़ी गारंटी नही दिलाता। वह तो इतनी कम गारटी दिलाता है कि जिसकी कोई हद नही। कारण यह है कि उसमें अहिंसाके पुजारीकी श्रद्धाका अभाव होता है।

लेखककी बहस इस बातपर है कि "मैंने यह लेख यहूदियोकी समस्यापर उस बुनियादी उत्कटता और सत्यको प्राप्त करने की आकुलताके बगैर लिख डाला जिससे अन्य समस्याओसे पेश आते समय मैं साधारणतया काम लेता हूँ।" इसपर तो मैं इतना ही कह सकता हूँ कि जहाँतक मुझे मालूम है, जब मैंने वह लेख लिखा तब न तो मुझमें एकाग्रताका अभाव था और न सत्यकी तीव्र शोधका ही। लेखकका दूसरा आरोप कहीं अधिक गम्भीर है। उनका खयाल है कि मेरी हिन्दू-मुस्लिम-ऐक्यकी हिमायतने मुझे अरबोंके दावेके प्रति पक्षपाती बना दिया, खासकर जब कि उस पहलूपर स्वभावत. हिन्दुस्तानमें जोर दिया गया है। मैंने अक्सर यह कहा है कि मुसलमानोकी मित्रता हासिल करने की तो बात ही क्या, हिन्दुस्तानकी मुक्तिकी खातिर भी मैं सत्यको नही बेचूँगा। लेखकका खयाल है कि जिस तरह मैंने खिलाफतके प्रश्नके सम्बन्धमें गलती की थी उसी तरह यहूदियोके प्रश्नके सम्बन्धमें मैं गलती कर रहा हूँ। मैंने जो खिलाफतका मसला हाथमें लिया था उसपर इतना अधिक समय गुजर जाने पर भी मुझे जरा भी अफसोस नही है। मैं यह जानता हूँ कि मेरा आग्रह यह साबित नही करता कि मेरा रुख सही था। जरूरत केवल इतना-भर जान लेने की है कि अपने १९१९-२० के कार्यके बारेमें मैं आज क्या विचार रखता हूँ।[1]

मैं इस बातको जानता हूँ और मुझे इसका दु.ख है कि मेरे इस लेखसे न तो 'ज्यूइश फ्रंटियर' के सम्पादकको ही सन्तोष होगा, और न मेरे अनेक यहूदी मित्रोको ही। फिर भी मैं यह दिलसे चाहता हूँ कि किसी-न-किसी तरह जर्मनीके यहूदियोंका उत्पीड़न खत्म हो जाये, और फिलस्तीनका सवाल इस तरह तय हो जाये जिससे सभी सम्बन्धित पक्षोको सन्तोष हो सके।[2]

राजकोट, २२ मई, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-५-१९३९

१. खिलाफत-सम्बन्धी गांधीजी के विचारोंके लिए देखिए खण्ड १६, पृ० ३५४-५।

२. देखिए अगला शीर्षक भी।

२९८. वापस लेता हूँ

२४ दिसम्बरके 'हरिजन' में मेरी उस बातचीतकी[1] एक लम्बी रिपोर्ट आई थी, जो ताम्बरम्के मिशनरी मित्रोंके साथ अहिंसा और विश्व-संकटपर हुई थी। बातचीतके सिलसिलेमें जब मैंने यहूदियोंका उदाहरण लिया, तब बयान किया गया है कि मैंने यह कहा था :

> यह सच है कि यहूदी अपने-आपमें सक्रिय रूपसे हिंसक नहीं रहे हैं। परन्तु, उन्होंने यह कामना की है कि जर्मनोंपर मानव-जातिका अभिशाप पड़े, और वे यह चाहते है कि अमेरिका और इंग्लैंड उनकी ओरसे जर्मनीसे लड़ें।

अन्तिम वाक्य पढ़ने पर एक प्रिय मित्रने मुझे एक कठोर पत्र लिखा और चुनौती दी कि मैं अपने इस कथनके लिए प्रमाण पेश करूँ। उन्होंने कहा कि मैंने वक्तव्य देने में जल्दबाजी की है। मैंने इस फटकारके महत्त्वको अनुभव नहीं किया। फिर भी, मैंने अपने वक्तव्यके समर्थनमें प्रमाण पेश करना चाहा। प्यारेलालको और फिर महादेवको मैंने इस कामपर लगाया। बोलते या लिखते वक्त दिलपर जो छाप पड़ी होती है उसे साबित करने का काम हमेशा आसान नहीं हुआ करता। इस बीच मुझे लॉर्ड सेम्युअलका एक पत्र मिला, जिसमें उक्त मित्रके खण्डनका समर्थन किया गया था। मैं खोजबीन करा ही रहा था कि इतनेमें सर फिलिप हार्टोगका नीचे लिखा पत्र मिला :

> क्या मैं आपसे यह कह सकता हूँ कि मेरे मित्र श्री पोलक और लॉर्ड सेम्युअलने जर्मनीके यहूदी शरणार्थियोंके बारेमें आपको जो-कुछ लिखा है उससे मैं सहमत हूँ? इनमें से हजारों शरणार्थियोंको मैं खुद १९३३ से देखता आ रहा हूँ। उनमें से मैंने किसीको भी सार्वजनिक रूपमें या खानगी तौरसे यह इच्छा प्रकट करते हुए कभी नहीं सुना है कि जर्मनोंके विरुद्ध प्रतिशोधका युद्ध छिड़ना चाहिए। वस्तुतः ऐसे युद्धसे तो जर्मनीके हजारों यहूदियोंको और भी आफतमें पड़ जाना पड़ेगा, और दूसरे लाखों निरपराध स्त्री-पुरुषोंको भी अवर्णनीय कष्ट उठाने पड़ेंगे।

मैंने अब और भी परिश्रमसे खोजका काम कराया। मगर शोधकोंके हाथमें कोई निर्णयात्मक लेख नहीं आया। 'हरिजन' के मैनेजरने खुद बम्बईके 'ज्यूइश-ट्रिब्यून' के सम्पादकको लिखा, जिन्होंने निम्नलिखित जवाब भेजा :

> यह कोई पहला मौका नहीं है जब मैं यहूदियोंके विरुद्ध यह आरोप लगाये जाते देखता हूँ कि वे जर्मनी द्वारा किये जानेवाले यहूदियोंके उत्पीड़नके

१. देखिए खण्ड ६८, पृ० २२२-९।

खिलाफ इंग्लैंड और अमेरिका-जैसे देशोंपर जर्मनीसे युद्ध करने के लिए जोर डालते हैं। यहूदियोंने जर्मनीके . . . विरुद्ध युद्धमें उतरने के लिए कभी प्रजातन्त्रीय देशोंपर दबाव नहीं डाला है। यह एक ऐसा शरारत-भरा झूठ है, जिसका फौरन भंडाफोड़ होना चाहिए। अगर युद्ध छिड़ गया तो और लोगोंकी अपेक्षा यहूदियोंको ज्यादा मुसीबत उठानी पड़ेगी। यह एक ऐसा तथ्य है, जिसे आप इतिहासके पन्ने उलटकर देख सकते हैं। और फिर यहूदी तो शान्तिके महान् प्रेमी और समर्थक हैं। मैं आशा करता हूँ कि यहूदियोंके खिलाफ अगर कोई ऐसा आरोप लगाया जाये, तो आप कृपाकर उसका खण्डन करेंगे।

'ज्यूइश ट्रिब्यून' के सम्पादक द्वारा जोरदार शब्दोंमें समर्थित गम्भीर प्रतिवादोंके सामने, साथ ही इस बातको देखते हुए कि मैंने जो विचार जाहिर किया था उसका समर्थन करनेवाली कोई चीज मेरे हाथमें नहीं आ सकी, मुझे वह कथन बगैर किसी शर्तके वापस ले लेना चाहिए। मैं केवल यह आशा करता हूँ कि मेरे उस कथनसे एक भी यहूदीको कोई क्षति नहीं पहुँची है। मैं जानता हूँ कि मैंने जो बात बिलकुल सद्भावसे कही थी उसके कारण मुझे बहुत-से जर्मन मित्रोंका कोपभाजन बनना पड़ा।

राजकोट, २२ मई, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-५-१९३९

२९९. सन्देश : दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंको[1]

राजकोट
२३ मई, १९३९

मुझे यह देखकर बहुत दुःख होता है कि ब्रिटिश भारतीयोंके प्रति अपने व्यवहारके सम्बन्धमें संघ सरकारने अपने ही किये हुए समझौतेका पालन नहीं किया है। एशियाइयोंके खिलाफ उन्होंने जो मुहिम छेड़ रखी है, उसमें उनकी नीति अधिकाधिक कड़ी होती गई है। आशा तो यही रखी जाती थी कि सन् १९१४ में[2] हुआ वह समझौता, जिसे स्मट्स-गांधी समझौता कहा जाता है, इस मामलेमें आखिरी निर्णय सिद्ध होगा। ऐसा भी सोचा जाता था कि भारतीयोंके प्रवेशपर प्रायः सम्पूर्ण रोक लग जाने के बाद अब वहाँ बसे हुए भारतीयोंकी दशामें क्रमशः सुधार

१. यह "द लेटेस्ट मीनेस" (ताजा खतरा) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। यह सन्देश २४-५-१९३९ के हिन्दूमें भी प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए खण्ड १२, परिशिष्ट २५।

होता जायेगा। किन्तु वह आशा बिलकुल भंग हो गई। उसके बाद भारतीयोंकी स्थिति काफी बिगड़ी है। बीचके कालमें गोल मेज सम्मेलन हुए हैं, दूसरे प्रकारके सम्मेलन भी हुए हैं। दोनों पक्षोंके बीच समझौते भी हुए हैं, किन्तु भारतीयोंको ऐसा कभी नहीं लगा कि समस्या अन्तिम रूपसे हल हो गई। जाहिर है कि संघ सरकार तबतक सन्तुष्ट नहीं होगी, जबतक वह भारतीयोंको, जिन्हें उसने कानूनी संरक्षण दे रखा है या तो देशसे निकाल नहीं देती या उनकी स्थितिको इतना असह्य नहीं बना देती कि कोई भी स्वाभिमानी भारतीय दक्षिण आफ्रिकामें रहना ही न चाहे। इसलिए शेष आबादीसे उन्हें अलग बसने के लिए बाध्य करने की दिशामें सरकारने अभी-अभी जो कदम उठाया है, उसके खिलाफ यदि आवश्यक हो तो सत्याग्रहकी लड़ाई छेड़ने का वहाँके भारतीयोंने जो निर्णय किया है, उसका मैंने कोई विरोध नही किया है। अलबत्ता, इसके लिए दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयों में, जो अभी अनेक गुटोंमें बँटे हुए है, सम्पूर्ण एकता होनी चाहिए। यह भी याद रखना होगा कि जो भी कष्ट आयें उन्हें शान्तिपूर्वक सहने के अपने संकल्पमें यदि वे दृढ़ नही है तो उनकी लड़ाई व्यर्थ सिद्ध होगी। मैं आशा करता हूँ कि भारतका जनमत, जिसमें मैं यहाँके यूरोपीयोंको भी शामिल करता हूँ, दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयोंको वे अपनेसे ज्यादा बलवान प्रतिपक्षीके खिलाफ जो लड़ाई लड़ रहे हैं, उसमें समर्थन देगा और भारत सरकारसे यह आग्रह करेगा कि वह दक्षिण आफ्रिकाकी संघ सरकारपर अपने प्रभावका उपयोग करे। अन्तमें मैं दक्षिण आफ्रिकाके प्रबुद्ध जनोंसे यह अपील करता हूँ कि वे इस बातकी कोशिश करें कि वहाँ बसे हुए भारतीयोंको, जिन्होंने उस देशके प्रति कोई अन्याय नही किया है, सामान्य न्यायसे वंचित न किया जाये।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-५-१९३९

३००. एक पत्र[2]

राजकोट
२३ मई, १९३९

प्रिय मित्रो,

शिया-सुन्नी-समस्याके सिलसिलेमें आप लोगोंको लखनऊसे यहाँतक आना पड़ा, इसका मुझे दुःख है। आपकी इच्छा है कि मैं इस मसलेका अध्ययन करूँ और फिर आपको अपनी राय दूँ। वैसे इस समय मैं और अधिक काम लेकर अपनी जिम्मेदारी बढ़ाने की हालतमें नहीं हूँ, फिर भी मैं आपकी अपील अस्वीकार नहीं

१. देखिए "भेंट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इण्डियाके प्रतिनिधिको" पृ० २८१।
२. यह पत्र सम्भवतः तंजीम के पदाधिकारियोंको भेजा गया था; देखिए "तार: तंजीम-उल-मोमिनीनको", पृ० ३०९।

कर सकता। दूसरे पक्षका क्या कहना है, यह जानने का भी मैं प्रयत्न करूँगा और जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी अपनी राय बता दूँगा। लेकिन मेरी कामना होगी कि आप लोग आपसमें ही किसी समझौतेपर पहुँच जायें और इस तरह मैं अपनी राय देने की जिम्मेदारीसे मुक्त हो जाऊँ।[1]

अंग्रेजीकी नकलसे. प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

३०१. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको[2]

राजकोट
२३ मई, १९३९

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र आज ही मिला। पढ़कर तुरन्त नारणदासको दे दिया। देवके बारेमें मैंने अखबारोंमें पढा था। इसका उपाय सहनशीलता और काल है। आक्षेपोंका उत्तर भी न दिया जाये। उनकी सभाओंमें भी न जायें। देव यदि उस सभामें न गये होते तो डॉ० खरे इतना न गरजते। प्रतिपक्षी न हो तो गाली देनेवाले को मजा नहीं आता।

तू देवका संग छोड़े इसकी मुझे आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। जबतक दोनोंके मन निर्दोष हैं और संग केवल सेवाके लिए ही है तबतक तेरे देवको छोड़ने की या काम बदलवाने की जरूरत मुझे महसूस नहीं होती। सम्भव है कि तेरा बाह्याचार बदलने की जरूरत हो, परन्तु यह तो तू ही सोच सकती है अथवा मुझसे तू मिले और मैं जी भरकर तुझसे बातें कर सकूँ तो पता चले।

मैं दूसरी तारीखको बम्बई पहुँचने की आशा रखता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३९९) से। सी० डब्ल्यू० ६८३८ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१. गांधीजी की रायके लिए देखिए खण्ड ७०, "पत्र : तंजीम-उल-मोमिनीनके अध्यक्षको", ४-८-१९३९ के पूर्व।

२. बापुना पत्रो–५ : कु० प्रेमाबहेन कंटकने में प्रेमाबहन कंटक बताती हैं कि मध्य-प्रान्त मन्त्रि-मंडलसे त्यागपत्र देने के बाद डॉ० खरे पूना चले गये थे और वहाँ उन्होंने एक सार्वजनिक भाषणमें कांग्रेस तथा कांग्रेस कार्य-समिति के सदस्य शंकरराव देव की ऐसी तीव्र आलोचना की कि श्रोताओंने उत्तेजित होकर शंकरराव देवके साथ दुर्व्यवहार किया। अगले दिन शंकरराव देव एक सार्वजनिक सभामें बोले। डॉ० खरेके समर्थकोंने सभामें गड़बड़ी पैदा करने की कोशिश की। श्रोताओंने प्रेमाबहन कंटक के चरित्रपर भी कीचड़ उछाली और शंकरराव देवके साथ उनके सम्बन्ध के औचित्य में शंका व्यक्त की।

३०२. भाषण: सार्वजनिक सभा, राजकोटमें[1]

२३ मई, १९३९

यहाँ मैं सिर्फ अपनी सफाई देने आया हूँ। परिषद्को ही नहीं, बल्कि सभी समुदायोंके राजकोट-निवासियोंको भी यह सफाई देना चाहता हूँ।

मैं श्री वीरावालाके प्रति मनमें कोई अच्छे विचार लेकर राजकोट नहीं आया था। मुझे लगा कि ठाकुर साहबने अपना वचन-भंग किया है और मेरी अन्तरात्माने मुझे उपवास करने का संकेत दिया। किन्तु मेरा मन कमजोर पड़ गया और दूसरे ही दिन मैंने वाइसरायको हस्तक्षेप करने के लिए लिखा। अब मैं देखता हूँ कि वह एक पापमय कृत्य था। उसका परिणाम हुआ पंच-निर्णय और फिर क्या हुआ उसके बारेमें तो आप लोग सब-कुछ जानते ही हैं। समय बीतने के साथ-साथ मैंने अपनी गलती महसूस की और तुरन्त पंच-निर्णयको त्याग दिया।

मुझे विश्वास है कि मैंने अपने प्रायश्चित्त द्वारा और अपनी असफलताको निःसंकोच भावसे कबूल करके राजकोटके इतिहासमें एक नया अध्याय आरम्भ किया है। इसमें मुझे आपकी सहायताकी आवश्यकता है। मैं अकेला इस कामको नहीं कर सकता। यदि शासक और शासित मिलकर अपने कर्त्तव्यका पालन करें तो असफलता-जैसी दिखनेवाली यह चीज सफलतामें बदल जायेगी। इसके लिए जन-एकताकी आवश्यकता है।

एकता शक्ति और उन्नतिका मूल है। परिषद्को समाजके प्रत्येक हिस्सेको अपनाकर उसका हृदय-परिवर्तन करना है। हो सकता है, कुछ लोग अपनी कमजोरीके कारण परिषद्के कार्यकर्त्ताओंका हाथ न बटायें और कुछ भिन्न मतावलम्बी होने के कारण सहयोग न दें, फिर भी वे हमारे साथ हैं।

मैं चाहता हूँ कि परिषद्के लोग अहिंसाके मर्मको समझें। अहिंसक व्यक्ति विरोधीपर विश्वास करता है। वह किसीपर बदनीयतीका आरोप नहीं लगाता। वह किसीके प्रति मनमें दुर्भावना नहीं रखता, जब कि मैंने दरबार श्री वीरावालाके प्रति अपने मनमें दुर्भावना रखी। उनके बारेमें जो-कुछ कहा जा रहा था, वे वैसे थे या नहीं, यह तो एक अलग बात थी। उनपर सन्देह करके मैंने अपनी अहिंसाको लज्जित किया। लेकिन वांछित तो यह था कि यदि मैं उन्हें बदलना चाहता था तो उनके प्रति मेरे प्रेममें निरन्तर वृद्धि होनी चाहिए थी। मुझे उनके लिए कड़े शब्दोंका प्रयोग करना ही था तो वे ऐसे शब्द होने चाहिए थे जिनका प्रयोग मैं अपने पिता, माता, पत्नी अथवा पुत्रके लिए ही कर सकता हूँ। और आप लोगोंका व्यवहार भी कोई

१. यह सभा शामको धार्य चौकमें हुई थी।

बेहतर नही था। परिषद्के कार्यकर्त्ताओंने अपनी जबानपर कोई रोक नही लगाई, और असंयत भाषाका पुष्कल प्रयोग किया। आपको अब एक नया अध्याय प्रारम्भ करना है। आपको अपनी असंयत भाषाके प्रयोगकी प्रवृत्तिको त्याग देना चाहिए। आपको अहिंसाको इतनी गहराईसे समझना है जितनी गहराईसे इसे आज तक आपने नही समझा हो। अहिंसाका अर्थ यह है कि जिन्हें आप अविश्वसनीय समझने लगे हैं, उनपर भी आप विश्वास करें। जबतक आप ऐसा नही करेंगे, आप उन्हें बदल नही सकेंगे। महादेव देसाई और मोहनभाई प्रतिदिन् दरबार श्री वीरावालाके साथ बातचीत करते रहे हैं। वे बताते हैं कि उनकी प्रवृत्ति पूर्ण-रूपेण बदल गई है। ऐसा मत कहिए कि यह परिवर्तन क्षणिक भी हो सकता है। यह क्षणिक परिवर्तन किसी दिन स्थायी बन सकता है। अहिंसाकी कोई मर्यादा नही है और धैर्यकी भी कोई मर्यादा नही है। उससे हमारा कोई नुकसान नही होता। मैंने जो-कुछ खोया, वह दरअसल तब खोया जब मैंने अपनी अहिंसा अथवा आत्माको कलंकित होने दिया। मैंने आत्मशुद्धिकी प्रक्रिया पंच-निर्णयके त्यागसे आरम्भ की। वह प्रक्रिया अब भी जारी है और मैं जो दरबारमें गया वह इस आत्मशुद्धिके सिलसिलेमें उठाया गया एक कदम-भर था।[1]

अगर आप मेरे रास्तेपर चलना चाहते हैं तो आपमें यह विश्वास होना चाहिए कि आप अहिंसाके द्वारा अपने विरोधीके हृदयमें अपने लिए स्थान बना सकते हैं। अगर आप स्वयंके प्रति सच्चे हैं और आपको अपने-आपमें भरोसा है तो आपको श्री वीरावालाके बारेमें बुरा नही सोचना चाहिए। अगर बुरा सोचते हैं तो इसका मतलब है कि आपकी अहिंसा पूर्ण नही है। मैं आपसे कहूँगा कि आप मुझमें, पचास वर्षोंसे अधिक समयसे अहिंसाके इस अनुरागीमें, विश्वास रखिए।

गांधीजी ने राज्य द्वारा जारी की गई उस विज्ञप्तिकी असंगतिका उल्लेख किया जिसमें समाचारपत्रोंपर प्रतिबन्ध जारी रखने की घोषणा की गई है। उस विज्ञप्तिको गांधीजी ने अवैध और लोगोंके लिए कष्टदायक बताया। गांधीजी ने लोगोंको ऐसी बातोंसे हतोत्साह न होने की सलाह दी। उन्होंने उनसे कहा कि हिंसक भाषाका प्रयोग करनेवाले अखबारोंको वे न पढ़ें और लोगोंको सलाह दी कि यदि वे ऐसी भाषाका प्रयोग करके उनके उद्देश्यके लिए कोई अटपटी स्थिति पैदा करें तो वे उन अखबारोंका बहिष्कार करें। उन्होंने अखबारोंसे भी अनुरोध किया कि वे कटुता को बढ़ानेवाली कोई भी चीज न छापें। गांधीजी ने राज्यसे भी जनताकी सुबुद्धि में विश्वास रखने का अनुरोध किया। उन्होंने आगे कहा :

इस संसारमें एक भी व्यक्ति ऐसा नही है जो हमारे स्नेहका पात्र न हो। मैं जिस परम पुरुषार्थको सिद्ध करने के लिए प्रयत्नशील हूँ वह है आत्मिक एकता। मैं चाहता हूँ कि राजकोटके शासक और शासित दोनों आपसमें किसी समाधान

१. यह अनुच्छेद हरिजनमें प्रकाशित महादेव देसाई के "द डिसीजन एण्ड आफ्टर-१" (निर्णय और उसके बाद-१) शीर्षकसे लिया गया है।

पर पहुँचकर सुख-चैनसे रहें। मैं चाहता हूँ कि आपका प्रशासन ऐसा हो जाये जो दूसरोंके लिए एक आदर्शका काम करे। स्व० ठाकुर सर लाखाजी राजने ऐसी मजबूत नीव रखी है जिसपर आप एक आदर्श ढाँचा खड़ा कर सकते हैं।

मैं आशा करता हूँ कि [सुधार-] समिति गत दिसम्बर महीनेमें प्रकाशित घोषणा क्रमांक ५० के आधारपर कार्य करेगी। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैंने सारे हथियार डाल दिये हैं। इसलिए मैं केवल विनती ही कर सकता हूँ। परिषद्के कार्यकर्त्ताओंको मेरी सलाह है कि वे समितिको अपना पूरा सहयोग दें और उसके समक्ष अपने साक्ष्य, अपनी आकांक्षाएँ रखें। अब भी मैं अँधेरेमें टटोल रहा हूँ। मुझे अभी पर्याप्त प्रकाश नही मिला है। जब मुझे प्रकाश मिल जायेगा और चीजें साफ-साफ दिखने लगेंगी तब मैं अपना कार्यक्रम आपके समक्ष रखूँगा और यदि आप चाहें तो आपका मार्ग-दर्शन करूँगा; नही तो मैं अपने घर ही भला।

गांधीजी ने कहा कि सभामें कुछ मुसलमान और भायात भी उपस्थित होंगे। उन्होंने मेरे विषयमें बहुत-सी बातें कहीं — कड़वी बातें भी।

फिर भी मैं चाहूँगा कि वे मेरे सन्देशको ग्रहण करें। शान्ति स्थापित करने के लिए कौन-सी बात मुझे राजकोट ले आई?

इसका उत्तर स्वयं देते हुए उन्होंने कहा कि राजकोट और राजकोटके राज-परिवारके साथ मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। मेरा लालन-पालन राजकोटमें हुआ। मेरे पिता राजकोट रियासतके दीवान थे और स्व० ठाकुर सर लाखाजी राजसे मेरा बहुत निकटका सम्बन्ध था। वे मुझे अपना गुरु मानते थे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २४-५-१९३९, और *हिन्दू*, २४-५-१९३९

३०३. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

आनन्द भवन, राजकोट
[२३][1]/२४ मई, १९३९

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

आपके इसी १५ तारीखके पत्रके[2] लिए धन्यवाद।

किसी प्रकारके विवादमें पड़ने की किसी इच्छाके बिना तालचरके बारेमें मैं कहना चाहूँगा कि श्री हरेकृष्ण महताब द्वारा प्रस्तुत और कुमारी अगाथा हैरिसन तथा अन्य लोगों द्वारा संपुष्ट किये गये पूरे साक्ष्यसे जाहिर होता है कि जहाँतक

१. पत्रके अन्तिम वाक्यसे।
२. देखिए परिशिष्ट ११।

प्रकट तथ्योंका सम्बन्ध है, यह बात यथासम्भव अधिकसे-अधिक स्पष्ट रूपसे मानी जा रही थी कि मेजर हेनेसी जो-कुछ कर रहे थे, अधिकारपूर्वक कर रहे थे। लेकिन तथ्य चाहे जो हो, आशा है, बेचारे रैयतोंको अधिक कालतक कष्ट नही सहना पड़ेगा।

लेकिन इस पत्रका मुख्य उद्देश्य आपको यह बात विधिवत् बताना है जो आपने मेरे सार्वजनिक वक्तव्यमें देखी होगी,[1] अर्थात् यह कि अपनी अन्तरात्माकी पुकारपर ग्वायर-पंच-निर्णयको अस्वीकार करने को मै विवश हो गया था। श्री गिब्सनसे आपको ४ मार्चका तार भेजने को कहकर[2] मैंने भूल की, इसका पता मुझे कुछ देरसे लगा। और एक बार भूलका पता लग जाने पर पंच-निर्णयके स्पष्ट लाभों तथा उसके समस्त फलितार्थोंको त्यागने का साहस जुटाने में मुझे कुछ और समय लग गया। लेकिन अन्तमें मैंने देखा कि यद्यपि मै जनहितके लिए काम कर रहा था फिर भी मुझे उस लाभको त्याग देना चाहिए जो नैतिक दृष्टिसे मुझे अनुचित जान पडा। उपवासको मैंने इतना पवित्र अस्त्र माना है कि उसका प्रयोग चंचलतापूर्वक नही किया जा सकता। उपवासको सामान्य रीतिसे चलने देने के बजाय आपकी सहायताकी गुहार करके मैंने अशोभनीय दुर्बलता, जो हिंसाका निश्चित लक्षण है, का परिचय दिया। मेरे ऐसा करते ही उपवास आध्यात्मिक कृत्य नही रह गया। यदि मै विशुद्ध सवैधानिक ढंगसे लड़ रहा होता तो आपकी सहायता माँगने में कोई बुराई नही देखता। सच तो यह है कि अपने कठिन दौरमें मैंने जो पुष्कल अनुभव प्राप्त किये है उनसे ज्ञात होता है कि अगर अधीश्वरी सत्ताको अपना कानूनी कर्त्तव्य निभाना है तो उसे देशी राज्योमें रैयतोंके अधिकारोंके सम्बन्धमें आजतक की अपेक्षा बहुत अधिक सक्रिय ढंगसे भाग लेना चाहिए। लेकिन यह तो मै प्रसंगवश कह गया। अभी मेरा उद्देश्य, आपको मैंने अपनी कमजोरीके कारण जितना कष्ट दिया उस सबके लिए क्षमा माँगना है। और क्या मै आपसे यह अनुरोध भी कर सकता हूँ कि आप सर मॉरिस ग्वायरको बता दें कि पंच-निर्णय देने के लिए जितना श्रम करना पड़ा उसके लिए मै उनसे भी क्षमा माँगता हूँ? मै जानता हूँ कि सही तरीका तो यह होता कि मैंने अपने दृष्टिकोणमें जो परिवर्तन किया उसकी जानकारी किसी औरको देने से पहले आपको देता। लेकिन मैं महादेव देसाईकी मारफत दरबार श्री वीरावालाके साथ वार्त्ता चला रहा था। हर घंटेकी देर मेरी व्यथाको बढ़ाती थी। मै उनके साथ किसी समझौतेपर पहुँचने के लिए व्याकुल था। जिस चीजको मैंने दुहरी चाल कहा है उससे अपनेको मुक्त किये बिना मै कुछ भी स्वीकार नहीं कर सकता था। इसके अलावा आपको यह सफाई भेजने में इसलिए भी देर हो गई कि विचार-परिवर्तनके बादकी स्थितिसे अपने इस कमजोर शरीरके सहारे मुझे निबटना था, जिससे मुझे यह पत्र लिखने का

१. देखिए पृ० २९३-५।
२. देखिए पृ० २४-५।

समय ही नहीं मिला। मैं इसके लिए कुछ अवकाश चाहता था; कुछ अवकाश तो पिछली रात निकाल लिया और कुछ आज सुबह।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे: लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

३०४. पत्र: चन्दन पारेखको

राजकोट
२४ मई, १९३९

चि० चन्दन,

तू क्यों बीमार पड़ गई? सुशीला तुझे पत्र लिख रही है, उसके अनुसार दवा लेना। लेकिन उसमें इतना परिवर्तन कर लेना। तुझे जो हुई है, वह पेचिश नहीं है, बल्कि तू यहाँसे जो छूत ले गई है, वह है।[1] उसे नेस्तनाबूद करने के लिए तुझे अभी केवल फलोंका रस और ग्लूकोज लेना चाहिए। फलोंमें अनन्नास, अनार, मोसम्बी, सन्तरे, अंगूर आदिका लगभग पचास औंस रस लेना चाहिए और दो से चार औंसतक ग्लूकोज। ऐसा करने से ताकत बनी रहेगी। इतना रस न ले सके, तो कम लेना। ग्लूकोज ज्यादा मालूम हो, तो वह भी कम लेना। रातको पेड़ूपर साफ मिट्टीकी गीली पट्टी रखना, उसे सूखे कपड़ेसे ढक देना और तब उसपर खादीका टुकड़ा लपेटना। रातमें जागे, तब खादीका टुकड़ा अलग कर देना। मुझे खबर देती रहना। झटपट अच्छी हो जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९५१)से; सौजन्य: सतीश द० कालेलकर

१. चन्दन पारेख बताती हैं कि राजकोटकी हालत उस समय इतनी खराब थी कि गांधीजी के साथ गये अधिकतर कार्यकर्ता किसी-न-किसी बीमारी की चपेटमें आ गये।

३०५. पत्र : कृष्णचन्द्रको

राजकोट
२५ मई, १९३९

चि० कृष्णचन्द्र,

बालकृष्णका जाना बरसों के लिए नही है। और मेरा वापिस आना तो जुलाईके मध्यमें ही हो सकेगा। इसलिये अगर तुमारा बा[लकृष्ण]के साथ जाना रहता तो भी कोई हरज नही थी। फिर भी तुमने निर्णय किया सो तो अच्छा ही था। बा[लकृष्ण]के जाने में इतनी देर हो रही है कि अगर वहां हवा ठंडी हो जाय तो जाने-जैसा रहेगा नही। जैसा अच्छा माना जाय वह किया जाय। मुझे शीघ्र खबर मिलनी चाहिये।

तुम्हारे पुस्तकके बारेमें मैंने जो लिखा है सो समझ-बुझकर ही लिखा था। सुशीला बुखारमें पड़ी है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

यहांसे मुंबई २ तारीखको, वहांसे सरहद ५ के आसपास।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३१६)से।

३०६. पत्र : अमृतकौरको

राजकोट
२६ मई, १९३९

प्रिय पगली,

तुम जो-कुछ भी समझाना चाहती हो उसे समझाने के लिए तुम्हें समय तो दूंगा ही। किन्तु तुम्हें व्यथित नही होना चाहिए। अपने साथ किये गये अन्यायोंपर रोना और उदासीसे सोचते बैठे रहना कोई गुण नही, बल्कि निश्चय ही एक गम्भीर दुर्गुण है। दूसरेके साथ अनजानमें भी कोई अन्याय करने के बजाय खुद खुशी-खुशी अन्याय सह लेना कहीं बेहतर है।

मैं तुम्हें यह बताना भूल गया कि मैंने जब सख्तीसे बातें की तो पी०का रवैया सुधर गया। उसके दोषसे तो उसे असीम प्रेम ही मुक्त कर सकता है। मुझमें वैसे प्रेमका अभाव है। मैं उसपर इतना नाराज होता हूँ, जितना किसीपर नहीं।

क्या मैंने तुम्हें यह बताया है कि छोटेलाल और प्यारेलालसे मैंने जब भी बातें कीं, नाराज होकर ही कीं? मेरे लिए आश्चर्य यह है कि छोटेलालने मेरे इस प्रकार बरसने का कभी बुरा नहीं माना। वह तो चला गया। मुझे लगता है, उसकी आत्महत्याके लिए मैं भी जिम्मेदार हूँ। वाई० के प्रति पी०के प्रेमका पता चलने पर उसके साथ मैंने जैसा कठोर व्यवहार किया, उसे अक्षम्य मानना चाहिए। यदि मैंने उसके साथ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार किया होता तो बातोंने कोई और मोड़ ले लिया होता। लेकिन हुआ यह कि उसे मैंने लगभग निष्कासित करके उड़ीसा भेज दिया। मेरी अहिंसाने मेरा साथ नहीं दिया। लेकिन न तो छोटेलालने और न प्यारेलालने ही कभी कोई शिकायत की। इसके विपरीत, उन्हें मेरे हर व्यवहारमें प्रेम ही दिखाई दिया। अगर महादेवके पास समय हुआ, तो वह तुम्हें समझायेगा ही कि मेरा आशय क्या है।

सस्नेह,

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६५५) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४६४ से भी

३०७. पत्र: शारदाबहन गो० चोखावालाको

राजकोट
२६ मई, १९३९

चि० बबुड़ी,

तू कैसे बीमार पड़ गई? खाने में कोई गलती हो गई क्या? शकरीबहन तुझसे मिली होगी। जितने दिन उसे अपने पास रखना हो, रख लेना।

सुशीलाबहन बीमार हो गई है। हलका ज्वर रहता है और दस्त लगते हैं।

हम पहली तारीखको यहाँसे रवाना होंगे और दूसरीको सवेरे बम्बई पहुँचेंगे। बम्बईमें तीन दिन रुकना पड़ेगा। इतने दिन साथ रहने की इच्छा हो, तो सूरत आकर साथ हो लेना। इस बीच तू ठीक हो चुकी होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००१२) से। सौजन्य: शारदाबहन गो० चोखावाला

३०८. पत्र : शामलदास गांधीको

राजकोट
२६ मई, १९३९

चि० शामलदास,[1]

'जन्मभूमि' की भाषा क्या तू सुधार नही सकता। यदि तू अहिंसाकी नीतिको स्वीकार करता हो, तो तुझे अपनी भाषामें प्रयत्नपूर्वक परिवर्तन करना चाहिए। चारो ओर हिंसा फैल रही है; उसमें से अहिंसाके लिए मार्ग निकालना हो, तो उन समाचारपत्रोंको, जो अहिंसाके मार्गमें विश्वास करते हैं, अपना रंगढंग अवश्य बदलना चाहिए। विचार करके देखना। मेरी खातिर तू कुछ करे, यह मेरी इच्छा नही है। हाँ, अगर तू हृदयसे मेरी बात स्वीकार कर ले, तो परिवर्तन करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ५८०२)से।

३०९. पत्र : प्रभावतीको

आनन्दकुंज, राजकोट
२६ मई, १९३९

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। सुशीलाको ज्वर आता है। उस विद्यार्थीके लिए और कुछ करना बाकी नही रहा। फिर भी, इस बारेमें राजेन्द्र बाबूसे पूछना या उन्हें लिखना। कह देना कि उनके लिए पैसा इकट्ठा करना तेरा काम नही है।

तू दवा कर रही है, यह बहुत अच्छा है। सुशीलाकी राय है कि तुझे अपने गुह्य अग किसी स्त्री डाक्टरको जरूर दिखाने चाहिए। उसके बिना सही इलाजका निदान नही किया जा सकता। इसलिए तू दिखा लेना। दूध और फल तो खाना ही। मै सेगाँव पहुँचूं, तब वहाँ आ जाये, तो बहुत अच्छा होगा। हम यहाँसे पहली तारीख को रवाना होंगे। वहाँ तीन-चार दिन रहकर सीमा-प्रान्त जायेंगे। कान्ति यहाँ है। सरस्वती तो है ही। अमतुस्सलाम अहमदाबादमें है। बा की तबीयत ठीक रहती है। मेरी तबीयत ठीक है।

१. गांधीजी के भतीजे, और बम्बईसे प्रकाशित गुजराती दैनिक जन्मभूमिके सम्पादक

तेरे अध्ययनका क्या हुआ?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५१३) से।

३१०. तार: कैन्टोनमेन्ट एसोसिएशनको

राजकोट
२७ मई, १९३९

कैन्टोनमेन्ट एसोसिएशन
इलाहाबाद

ब्रिजमोहनको बताओ उसका उपवास अनुचित है। उपवास तोड़ देना चाहिए।

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

३११. पत्र: कान्तिलाल गांधीको

राजकोट
२७ मई, १९३९

चि० कान्ति,

मैं तेरे पत्रको भी उद्दण्डतापूर्ण मानता हूँ। उसमें रोष भी है। तू माफी माँगता है, उसमें भी उद्धतता है। लेकिन अपने स्वभावको तू कैसे छोड़ सकता है? इस प्रकारसे विवाह करने को तू विवाह मानता है? इससे तू अपने-आपको धोखा दे रहा है। तूने अपने इस कर्मसे कितनोंको आघात पहुँचाया है, इसका तुझे भान नहीं है, न दुःख है। तूने मेरे आगे जो अपना खेद प्रकट किया था, वह भी, लगता है क्षणिक ही था। लेकिन थूककर फिर चाटा नही जाता। तू मुझे मुक्ति दे, तो मैं मुक्त होने को तैयार हूँ। मैं मानता हूँ कि देवदाससे पैसे तो मुझे मिलते ही रहेंगे, ये पैसे भी अभी तो मेरी मारफत मिलते है; लेकिन अगर वह तुझे सीधे भेजने लगे तो भी मुझे सुभीता होगा। तू लिखता है कि मैं तुझे भूल जाऊँ, इससे भी तेरा औद्धत्य सूचित होता है। तू जानता है कि मैं तुझे भूल नहीं सकता। हाँ, तेरे बारेमें जो आशाएँ की थीं, लगता है, वे अब मिट्टीमें मिल गई हैं। तू मेरा कितना ही तिरस्कार करे, लेकिन यह नही होगा कि मैं तेरा शुभचिन्तक न रहूँ। अब भी जाग, अपनी निर्दयता छोड़, सरल हो, नम्र हो, विनय सीख, और अपने भीतर भरा जहर निकाल फेंक। अपनी चापलूसी करनेवालों तथा मीठी-मीठी बातें करके तुझे खुश

करनेवालों को अपना दुश्मन जान। तूने अनेकोंको चोट पहुँचाई है। सरस्वतीको गुलाम बना लेने में अपना बड़प्पन मत मान। रामचन्द्रनके दुःखका विचार कर।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७३६०)से। सौजन्य: कान्तिलाल गांधी

३१२. पत्र : अमृतलाल तो० नानावटीको

राजकोट
२७ मई, १९३९

चि० अमृतलाल,

वाल-सम्बन्धी पत्र मिला था। काकाका तार मिला। मैं समझता हूँ, मामला आखिर खत्म हो गया। मैं बम्बईमें २ से ५ तक तो रहूँगा ही। उस बीच मुलाकात हो तो सकती है, लेकिन समय रहेगा या नहीं, भगवान् ही जानें। बम्बईसे फिर सीमा-प्रान्त।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७८८) से।

३१३. पत्र : मनु सूबेदारको

२७ मई, १९३९

भाई सूबेदार,[1]

आपका पत्र मिला। आपने बहुत कठिन मार्ग बताया है। परस्पर-विरोधी मतोंके बीच ऐक्य-साधन करके शासनतन्त्र चलाना लगभग असम्भव है। सभी प्रकारके मत-वालोंके साथ न्याय करना तथा अल्पमतवालों के प्रति उदारताकी वृत्ति अपनाना, यह एक बात है, और सभीको मन्त्रिमण्डलमें स्थान देना दूसरी और बिलकुल अलग बात है। विभिन्न मन्त्रिमण्डलोंकी कार्य-पद्धतिका अध्ययन मैंने नहीं किया है, न मैं उनकी कठिनाइयोंको जानता हूँ, फिर भी सोचता हूँ, आपका सुझाव बम्बईके मन्त्रिमण्डलके आगे रखूँगा। और उससे पहले तो आपका पत्र सरदारके सामने रखना चाहता हूँ। इसमें आपको कोई आपत्ति तो नहीं है न? आपका जवाब आने से पहले मैं आगे कुछ नहीं करूँगा।

मो० क० गांधीके वन्देमातरम्

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ५८०३)से।

१. एक अर्थशास्त्री

३१४. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

२७ मई, १९३९

बापा,

तुम्हारी भेजी कतरन मैं पढ़ गया। क्या मुझे कोमिल्ला आश्रमको नये सिरेसे व्यवस्थित करने दिया जायेगा? बंगालकी राजनीति विचित्र है: न खायें न खाने दें। ऐसेमें क्या किया जा सकता है?

तालचरका मामला[1] उलझ गया है। देखें क्या होता है।

बापूके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११८३)से।

३१५. पत्र : अमृतकौरको

राजकोट

प्रात: ६.२०, २८ मई, १९३९

प्रिय पगली,

बिना एक भी दिनके नागाके, यह मेरा चौथा पत्र है। जबतक मैं तुम्हारे दिमागमें यह नहीं बैठा दूंगा कि हम सब अपनी विपत्तिके आप ही जनक होते हैं, तबतक मुझे चैन नहीं मिलेगा। अहिंसाके मूल सिद्धान्तोंको यदि हमने हृदयंगम कर लिया है तो हमें अपने प्रियजनोंके वास्तविक अन्यायोंतक को बिना दु:खी हुए सहन करना सीखना होगा। जब हम प्रेम महसूस कर उसका प्रतिदान करते है तो हम कोई अनोखा काम नहीं करते। परन्तु हमारा प्रेम शक्तिशाली तभी होता है जब हम अन्यायको खुशीसे सहन करते हैं। इसका निष्कर्ष वस्तुत: वही निकलता है जिससे मैंने यह पत्र शुरू किया था, अर्थात् यह कि न्याय और अन्यायका हमारे महसूस करने से अलग कोई अस्तित्व नहीं है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि तुम अहिंसाके इस पहले पाठको हृदयंगम कर लो और मुझे यह आश्वासन दो कि तुम अब न तो रोओ-धोओगी और न अपने मनमें कोई गुप्त और मौन दु:ख-शोक ही पालोगी। मुझसे यदि तुम यह नहीं सीख सकतीं, तो फिर कुछ भी नहीं सीख सकती।

स्नेह।

तानाशाह

१. देखिए पृ० २९१-२।

[पुनश्च :]

प्रातः ७-३०

खुर्शेदने तुम्हें महिला सम्मेलनके बारेमें लिखा है। यदि यह विचार तुम्हें अच्छा लगे तो मैं इसे पसन्द करूँगा।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६५६)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४६५ से भी

३१६. पत्र : मणिलाल गांधीको

राजकोट
२८ मई, १९३९

चि० मणिलाल,

इस पत्रको लानेवाले मेरे पुराने मवक्किल शेख फरीद साहब हैं। इनकी दुकान पीटरमैरित्सबर्गमें थी। इनके भाई नहीं रहे, इसलिए इन्हें वहाँ जाना पड़ रहा है। लेकिन अब ये पीटरमैरित्सबर्गमें किसीको जानते-पहचानते नहीं। इनकी जरूरत समझकर किसीसे इनकी जान-पहचान कराई जा सके तो करा देना, अथवा जो उचित हो सो करना।

बापूके आशीर्वाद

श्री मणिलाल गाधी
'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८९६)से।

३१७. पत्र : हीरालाल शर्माको

राजकोट
२८ मई, १९३९

चि० शर्मा,

ऐसा कहाँ हमारा करार था कि जब २ तुमारे खत आवे तब २ मुझे लिखना ही था। मै ऐसी तरह फसा था कि कुछ दूसरा कर ही नहिं सकता था। मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। राजकोटसे १ ली तारीखको निकलेंगे। मुंबई ५-६ तक बादमें सरहद। उदर-विकार कैसे हुआ। और कच्चे दूधका उसके साथ संबंध क्या रहा?

तुमारे लिये फिजीयोलाजी वगैरेकी किताबें मंगवाई थी उसके नाम-ठाम भेजो। वे किताब अनुभवमें कैसी थी? सेगांवमें एक कार्यकर्ताके लिये ऐसी किताबकी दरकार है।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २७९-८० के बीच प्रकाशित प्रतिकृति से।

३१८. पत्र : रणजीतको

२८ मई, १९३९

भाई रणजीत,

तुमारा खत मिला। पश्चिममें बहुत पाठशालाओंमें लड़के नंगे बदन स्नान करते हैं। शायद तुमारी पाठशालामें कुछ पश्चिमका अनुकरण होगा। अगर ऐसा ही है तो उसे पापकांड न कहा जाय। सारा प्रश्न विचारणीय है। तुम्हारे ज्यादा शोध करना चाहिये।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

३१९. तार : मीराबहनको

राजकोट
२९ मई, १९३९

मीराबहन
मारफत मंगलसेन बैंकर्स
एबटाबाद

आशा है बम्बईसे ६ जूनको रवाना हो जाऊँगा।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४४३)से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० १००३८ से भी

३२०. पत्र : मीराबहनको

राजकोट
२९ मई, १९३९

चि० मीरा,

अप्रत्याशित विलम्बके बाद तुम्हारा पत्र आज पहुँचा। लेकिन मुझे फिक्र नहीं थी। यहाँ मेरे लिए काम बहुत है। यहाँ गरमी शत्रु है। बदबू और भीड़से कठिनाई और बढ़ जाती है। तुम्हारे तारसे मैंने यह निष्कर्ष निकाला कि तुम हजारामें खैरियतसे हो। आशा है वहाँ अधिक ठण्ड या यो कहें कि कम गरमी है। मुझे उम्मीद है कि मैं ६ तारीखको बम्बईसे सीमा-प्रान्तके लिए निकल जाऊँगा। परन्तु सब-कुछ ईश्वरके हाथ है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४४२)से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००३७ से भी

३२१. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

आनन्दकुंज, राजकोट
२९ मई, १९३९

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे साथ न्याय नहीं हो पाता, यह बात बिलकुल सच है। मैं स्वयं लिख नहीं पाता। अब कनुसे कहा है। योजनाएँ तो कई बनाई हैं, लेकिन जब मैं ही ढीला पड़ जाता हूँ, तो दूसरेको क्या दोष दूँ? देखता हूँ, आगे किसी नियमका पालन कर सकूँ तो।

वहाँके बारेमें जो हो सकता है, कर रहा हूँ।[1] वहाँसे समाचार मिलते रहें, तो अच्छा हो। आन्दोलन क्या ठीक-ठीक चलेगा?

एक सहायक रखने की भी अनुमति नहीं मिली, इससे क्या समझमें आता है? मैं तो समझता था, मणिलालके लिए यह बायें हाथका खेल होगा।

१. तात्पर्य दक्षिण आफ्रिका संघकी भारतीयोंके पृथक्करणकी नीतिसे है; देखिए "सन्देश: दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंको" पृ० ३१७-८।

मेरी तबीयत ठीक है। हम यहाँसे पहली जूनको बम्बई जायेंगे, और चार-पाँच दिन वहाँ रहकर फिर सीमा-प्रान्त।

बाकी तो कोई और लिखे तो लिखेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८९७)से।

३२२. पत्र : विनोदिनी और संयुक्ता गांधीको

राजकोट
२९ मई, १९३९

चि० विनोदिनी और संयुक्ता,[1]

तुम दोनोंका पत्र मिला। मुझे पत्र लिखा, यह तुमने अच्छा किया। जो डाक्टर कहे, वह तो करना ही चाहिए, लेकिन सच्चा आधार तो रामनाम है और वही सच्ची दवा है। मैं २ को बम्बई पहुँचूँगा।

जयाको अलगसे पत्र नहीं लिखता। उसमें ताकत आ रही होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/३) से।

३२३. पारसी मित्रोंसे

पारसी मित्र मुझे पत्र लिखकर मेरे प्रति कृपा दिखाते ही जा रहे हैं। कुछ पत्रोंमें तो लेखकोंने, शिष्टताके पालनका आग्रह भी नही रखा है। और कुछके लेखक मेरे प्रति अपने प्रेम और अपने स्वभावकी सरलताके कारण ऐसा मानते हैं कि मेरी क्षमताकी सीमा ही नहीं है — मैं चाहूँ तो चमत्कार कर सकता हूँ। इन्ही पत्र-लेखकोंमें से एकने मुझे अत्यन्त व्यथित मनसे लिखते हुए विभिन्न पत्रोंकी कुछ कतरनें भेजी हैं, जिनमें नितान्त झूठी बातें कही गई हैं। वे चाहते है कि मैं पारसी भाइयोंसे अपील करूँ ताकि वे अपने विरोधको कमसे-कम अभद्रताके दोषसे तो मुक्त रखें। कतरनोंमें जिस भाषाका प्रयोग किया गया है, उसका यहाँ अनुवाद नहीं किया जा सकता। लेखकोंने अपने रोषके पात्र व्यक्तियोंके कुटुम्बियोंतक को नही छोड़ा है। कुछ लेख तो ऐसे है कि उन्हें कुत्सित कहना भी काफी नहीं मालूम होता। एक लेखकने ऐसी हिंसक भाषाका प्रयोग किया है कि वह निःसन्देह

१. गांधीजी के भतीजे नथुखलाल गांधीकी पुत्रियाँ

दण्ड-विधियोंकी गिरफ्तमें आ जाता है। किन्तु लेखकोंको कानूनका कोई भय ही नही है। उनके ये लेख 'नागरिक' स्वातंत्र्यका बढ़िया नमूना पेश करते हैं। मै तो उन्हें अल्पसंख्यक समुदायोका आतंकवाद ही कहूँगा। एक लेखकने शराब-बन्दीकी हलचलको साम्प्रदायिक रूप देने की कोशिश की है और उसे यह कहने में भी कोई संकोच नही हुआ है कि कांग्रेसी हिन्दुओंने इस हलचलके द्वारा पारसियोंको बरबाद करने का कुचक्र रचा है।

कहने की जरूरत नही कि गालियाँ दलील नही हैं। जो पारसी शराब-बन्दीका विरोध करना चाहते हैं वे उसके लिए जो भी आन्दोलन ठीक समझें, अवश्य चलायें। लेकिन इसका खयाल तो रखें कि वह भद्रतापूर्ण, अहिंसक और सीमाके भीतर हो।

मजदूरोकी आबादी पारसियोंकी आबादीसे बहुत अधिक है। क्या यह ठीक होगा कि मात्र एक लाख पारसी एक ऐसे सुधारको, जिसे बहुत दिन पहले हो जाना चाहिए था और जिससे इतने सारे मजदूरोकी अन्धकारपूर्ण झोपड़ियोंमें आशाकी एक किरणका प्रवेश होगा, अपने विरोधके द्वारा रोक रखें। डॉ० गिल्डरने इस सम्बन्धमें जो भी उचित शिकायतें हो सकती थी उन सबको दूर कर दिया है। ऐसे किसी भी पारसीको, जिसे अपने स्वास्थ्यकी रक्षाके लिए शराबकी आवश्यकता है, उससे वंचित नही किया जायेगा। और यदि पारसियोकी धार्मिक क्रियाओमें मद्यकी आवश्यकता सचमुच होती है, तो उसके लिए वह उन्हें अवश्य मिलेगी। फिर, आर्थिक सवाल रह जाता है। यह बात सही है कि सुधारके कारण अनेक गरीब शराब-विक्रेताओकी रोजी छिन जायेगी और उन्हें मुसीबतका सामना करना पड़ेगा। मुझे मालूम हुआ है कि मन्त्री इस सवालके निराकरणका कोई समुचित उपाय खोजने की पूरी कोशिश कर रहे हैं। किन्तु शराब-बन्दीके विरोधी, उसके विरोधमें जो उग्र हलचल चला रहे हैं, वह यदि जारी रहती है और उनकी आतंकवादी कार्रवाइयाँ, जिनमें सिर्फ शारीरिक हिंसाकी कसर बाकी है, चलती रहती हैं तो उन मन्त्रियोंके लिए वैसा-कुछ कर सकना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो जायेगा। मेरे कहने का यह आशय नही है कि आतकवादी कार्रवाइयोके कारण मन्त्रियोंको न्याय नही करना चाहिए। किन्तु यह तो मानना ही होगा कि ऐसी कार्रवाइयोंसे प्रभावकारी कदम उठाने की उनकी शक्ति क्षीण हो जाती है। उदाहरणके लिए, पारसी पंचायतके प्रमुख लोगोको मन्त्रियोंसे मिलना चाहिए और उनके साथ सलाह-मशविरा करके ऐसी योजना ढूँढ़ निकालनी चाहिए जिससे बम्बईमें शराब-बन्दीका आरम्भ तो कमसे-कम कष्ट पहुँचाकर किया जा सके। यह तो तभी किया जा सकता है जब इस प्रश्नसे सम्बन्धित सारे पक्ष यह स्वीकार कर ले कि शराब-बन्दी अब टलनेवाली नही है।

मेरे पत्र-लेखकोंने मुझसे अनुरोध किया है कि मन्त्रियोंपर मेरा जो प्रभाव है उसका उपयोग मै शराब-बन्दीकी नीतिको वापस लिवाने के लिए करूँ। उन्हें जानना चाहिए कि मेरी अपनी सीमाएँ हैं। यदि मेरा कोई प्रभाव है तो वह इसी कारण है कि मैंने कभी भी सीमा-रेखाका उल्लंघन नही किया। उन्हें जानना चाहिए कि यद्यपि अधिकांश कांग्रेसी मन्त्री मेरे महत्त्वपूर्ण साथी-कार्यकर्त्ता रहे हैं और

है, तथापि मैंने कभी उनके काममें हस्तक्षेप नहीं किया है। कांग्रेससे अलग हो जाने के बाद तो ऐसा कुछ भी करना मेरे लिए अशोभनीय होगा। उससे कांग्रेससे अलग होने का मेरा उद्देश्य ही निष्फल हो जायेगा। और बड़ी बात तो यह है कि मैं स्वयं शराब-बन्दीमें सबसे ज्यादा दिलचस्पी रखता हूँ। शराब-बन्दीके लाभकारी परिणामोंको इस देशमें जितना मैं जानता हूँ उतना शायद और कोई नही जानता और इसलिए उसकी आवश्यकता भी मैं ही सबसे ज्यादा महसूस करता हूँ। मैंने अपनी आँखोंसे ऐसे व्यक्तियोंको, जो अन्यथा बहुत समझदार कहे जायेंगे, शराबके नशेमें नालियोंमें लोटते देखा है। मजदूरों से अपने घनिष्ठ सम्बन्धके कारण मैं जानता हूँ कि जिन मजदूरोंको शराब पीने की आदत है इस बुराईके कारण उनके घरोंकी कैसी भयंकर बरबादी हुई है। मैं जानता हूँ कि यदि शराब सुलभ न हो, उनकी पहुँचके भीतर न हो, तो वे उसे नही छुएँगे। फिर, हमारे पास अपने आजके अनुभवपर आधारित ऐसा प्रमाण भी मौजूद है कि कई पीनेवाले स्वयं ही शराब-बन्दीकी माँग कर रहे हैं। मेरे ही बड़े लड़केका उदाहरण लीजिए, जिसमें बुद्धि, वीरता, स्वदेशप्रेम आदिकी कोई कमी नहीं थी और जो त्याग भी कर सकता था। किन्तु इस घातक व्यसनने उसे बरबाद कर दिया है। अपने माता-पिता और समाजसे उसका नाता टूट गया है और वह उदार दाताओंकी अनुपयुक्त दयापर जी रहा है। यह कोई अपवाद नहीं है। समाजके तथाकथित ऊँचे वर्गके व्यक्तियोंके कई लड़कोंकी जानकारीके आधारपर मैं कह सकता हूँ कि मेरे लड़केका उदाहरण अपने प्रकारका अकेला नही बल्कि एक प्रातिनिधिक उदाहरण है। ये पंक्तियाँ लिखते हुए मुझे ऐसे कई किस्से याद आ रहे हैं, जिनकी प्रामाणिकतामें सन्देहकी कोई गुंजाइश ही नही है। इसलिए मैं इन पारसी पत्र-लेखकों और उनकी तरह सोचनेवाले अन्य लोगोंसे उत्तरमें यही कह सकता हूँ कि मन्त्रियोंके इस उदात्त और जन-कल्याणकारी कार्यमें वे उनकी मदद करें। क्योंकि मेरा निश्चित विश्वास है कि कांग्रेसी मन्त्रियोंने लोक-हितकी दृष्टिसे जो दूसरे कदम उठाये हैं, उनके पक्ष या विपक्षमें चाहे जो कहा जाये, किन्तु यदि वे शराब-बन्दीके अपने कार्यक्रमको सफलतापूर्वक कार्यान्वित कर सकें तो उनका यह कदम भविष्यमें निःसंशय उनके द्वारा किया गया उदात्ततम कार्य कहा जायेगा। इसे चुनावमें मत प्राप्त करने की युक्ति न माना जाये। शराब-बन्दी राष्ट्रीय आत्म-शुद्धिके कार्यक्रमका एक अविभाज्य अंग है। स्वेच्छासे किये गये प्रयत्नके द्वारा भी शराबकी दुकानें बन्द करवाने की दिशामें जनता क्या-कुछ कर सकती है, इसका परिचय वह इसके पहले दो बार दे चुकी है। अतः पारसी भाई-बहनोंसे मेरी प्रार्थना है कि गाली-गलौजका अशोभनीय रास्ता वे छोड़ दें, समयानुसार आचरण करें और इस महान् सुधार-आन्दोलनमें अपनी सहायता दें। हमें याद रखना चाहिए कि यदि यह आन्दोलन सफल हुआ तो उससे न केवल भारतकी नैतिक और भौतिक श्रीवृद्धि होगी बल्कि उससे पश्चिमी दुनियामें भी ऐसे प्रयत्नको बल और प्रेरणा मिलेगी। भारतके बाहर अनेक लोगोंकी आँखें हमारे इस प्रयोग की सफलताके लिए प्रार्थना करती हुई इसकी ओर निहार रही हैं।

मैं स्वीकार करता हूँ कि अनेक पारसी भाई परिमित मात्रामें शराब लेते हैं और इसका उनके स्वास्थ्यपर ऐसा कोई प्रत्यक्ष बुरा प्रभाव नहीं पड़ता। लेकिन यह ऐसी दलील नहीं है, जिसके आधारपर शराब-बन्दीका विरोध किया जा सके। यह दलील इस बातके लिए अवश्य ही दी जा सकती है कि यदि वे सिद्ध कर दें कि शराब स्वास्थ्यकी दृष्टिसे उनके लिए आवश्यक है तो वह उन्हें मिलनी चाहिए। मैं उनसे इतने स्वदेश-प्रेमकी अपेक्षा करता हूँ कि वे इस बातको स्वीकार करें कि उनके सीमित अनुभवके विपरीत यह सार्वत्रिक अनुभव है कि शराबकी आदतके अत्यन्त भयंकर परिणाम होते हैं।

राजकोट, ३० मई, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-६-१९३९

३२४. तार : अप्पासाहब पन्तको

राजकोट
३१ मई, १९३९

अप्पासाहब पन्त
औंध

सोमवारके सिवाय और किसी भी दिन दोसे छह तारीखके बीच बम्बईमें कुछ मिनटोंके लिए मिल सकते हैं।

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

३२५. भाषण : काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्, राजकोटमें[1]

३१ मई, १९३९

मेरे आगे यह चीज रोज अधिक स्पष्ट होती जा रही है कि हमें अपनी गति धीमी करनी होगी, पूर्ण उत्तरदायी सरकारकी अपनी माँग हमें कुछ समयतक स्थगित रखनी होगी — इसलिए नहीं कि वह हमारा अधिकार नहीं है, बल्कि इसलिए कि मैं यह स्पष्ट देख रहा हूँ कि उसके लिए हममें संकल्प नहीं है, उसकी कीमत चुकाने को हम तैयार नहीं हैं। जागृति तो है, पर वह वीरोचित सक्रिय अहिंसाकी जागृति नहीं है। ऐसा नहीं है कि यह चीज मैंने अचानक समझी हो। समझता तो मैं था, पर

१. यह महादेव देसाईके लेख "द डिसीजन एण्ड आफ्टर-३" (निर्णय और उसके बाद-३) से लिया गया है। गांधीजी कार्यकारिणी समितिकी बैठकमें बोल रहे थे।

उसके निष्कर्षका सामना करने का संकल्प मुझमें नही था। अपनी उसी दुर्बलताका फल अब मैं भोग रहा हूँ। बारडोलीके बादसे ही मुझमें इस सकल्पकी बराबर कमी रही है। परन्तु मेरे साथी-कार्यकर्त्ताओंने अपनेको इस भ्रममें रखा कि हममें आवश्यक अहिंसा आ गई है, और उनके इस भ्रमका मैं भी शिकार हो गया।

मुझे इसका पछतावा नही है। यदि हमने और तरहसे काम किया होता, तो जो जागृति आज हम देख रहे हैं वह शायद न आती। पर इससे कोई ऐसा निष्कर्ष निकाल सकता है जिसे भयानक ही कहा जायेगा, अर्थात्, व्यापक जागृतिके लिए अहिंसाको सकुचित करना आवश्यक था। पर निष्कर्ष वह नहीं है। निष्कर्ष यह है कि ईश्वर अपनी योजनाको कार्यान्वित करने के लिए अपनी सृष्टिके सबसे दीन और दुर्बल प्राणियोंको अपना साधन चुनता है।

जो प्रतीति मुझे हुई है उसे देखते हुए मैं आज एक और दांडी कूच करना नही चाहूँगा। नमक-कानूनोंको तोड़ने का प्रस्ताव बिलकुल ठीक था। पर मानसिक हिंसा प्राय: आरम्भसे ही आ गई थी। हमने तब जो-कुछ सीखा वह यह था कि शारीरिक हिंसाका प्रयोग न करना हमारे अभीष्टके अनुकूल है। यह एक हिसाबी बनियेकी अहिंसा थी, वीर क्षत्रियकी अहिंसा नही थी। हिसाबी बनियेकी यह अहिंसा हमें बहुत आगे नही ले गई है, ले जा भी नही सकती थी। यह स्वराज्य प्राप्त करने और बनाये रखने में, शस्त्रोंके उपयोगमें आस्था रखनेवाले विरोधीको अपने पक्षमें करने में हमारी सहायक नही हो सकती थी।

आज मै हर-कही हिंसा महसूस करता हूँ। कांग्रेसके अन्दर और बाहर मुझे उसकी गंध आती है। १९२१ में कांग्रेसके बाहरके गुण्डा तत्त्वोंपर भी हमारा थोड़ा-बहुत नियंत्रण था। पूर्ण अहिंसा कठिन है। उसमें दुर्बलताके लिए कोई गुंजाइश नही है। उस (दुर्बलता)ने ही मुझसे यह गलत कदम उठवाया कि मैंने अपना उपवास खत्म करने के लिए वाइसरायका सहारा लिया। वह कार्य एक ऐसे सेनापतिके लिए, जो अपनी सारी शक्ति ईश्वरसे प्राप्त करने का दावा करता हो, अक्षम्य है। परन्तु ईश्वरने मुझे उस भारी गलतीको सुधारने का साहस दिया; और हम उसके कारण अब अधिक शक्तिशाली और शुद्ध हो गये हैं।

मैं यह बात बार-बार दुहराते हुए थकता नही हूँ कि हमें मन, वचन और कर्ममें अहिंसक होना चाहिए। हम ऐसा कहते तो थे, पर इनमें से प्रथमपर जोर नहीं देते थे। दुराचारी आदमी कर्मकी अपेक्षा मनमें अधिक दुराचारी होता है। यह बात हिंसाके बारेमें भी सच है। वचन और कर्मकी हमारी हिंसा हमारे मनमें उफनती हिंसाकी एक हलकी प्रतिध्वनि-मात्र है।

क्या आप मेरे साथ इतनी दूरतक जाने को तैयार हैं? जो-कुछ मैं कह रहा हूँ क्या वह आपको ठीक लगता है? यदि ऐसा है तो हिंसाको हमें अपने अन्तरतम विचारोंमें से भी निकालना होगा। लेकिन यदि आप मेरे साथ नही चल सकते, तो अपने रास्तेपर चलिए। यदि आप किसी और रास्तेसे अपने लक्ष्यतक पहुँच सकते हैं, तो जरूर ऐसा कीजिए। उसमें आपको मेरी बधाइयाँ ही मिलेंगी। क्योंकि कायरता

मुझे किसी भी हालतमें सह्य नहीं है। मेरी मृत्युके बाद कोई यह न कहने पाये कि मैंने लोगोंको कायर होना सिखाया। यदि आपका यह खयाल है कि मेरी अहिंसाका मतलब वही है, या वह आपको उसीपर ले जाती है, तो आपको निस्संकोच उसका त्याग करना चाहिए। आप कुत्सित भयसे मरें, इससे अच्छा तो मैं यह मानूंगा कि आप बहादुरीसे प्रहार करते हुए और प्रहार सहते हुए मरें। मेरे सपनोंकी अहिंसा यदि असम्भव है, तो आप अहिंसाका दिखावा करने की बजाय इस सिद्धान्तको ही अस्वीकार कर सकते हैं।

युद्धसे भागना — पलायन — कायरता है, जो किसी योद्धाको शोभा नहीं देता। सशस्त्र योद्धाके बारेमें सुनते हैं कि जब उसके हथियार नष्ट हो जाते हैं या वे कारगर नहीं रहते तो वह नये हथियार ढूंढ़ता है। उन्हें लेने के लिए वह लड़ाईको छोड़कर चल देता है। परन्तु अहिंसक योद्धा लड़ाईको छोड़कर जाना नहीं जानता। वह मनमें कोई दुर्भावना रखे बिना, सीधे हिंसाके मुँहमें दौड़ता है। यदि यह अहिंसा आपको असम्भव लगती है, तो हमें अपने प्रति ईमानदार रहते हुए ऐसा कहना चाहिए और इसे छोड़ देना चाहिए।

मेरे लिए हथियार डालने का कोई सवाल नहीं है। मैं ऐसा कर ही नहीं सकता। मैं तो जैसा मैंने आपको बताया वैसा योद्धा बनने की कोशिश कर रहा हूँ, और यदि ईश्वरने चाहा तो मैं इस जन्ममें ही वैसा हो सकता हूँ। इस तरहका योद्धा अकेला भी लड़ सकता है।

दक्षिण आफ्रिकाके अपने निजी अनुभवकी कुछ बात मैं आपको बताऊँ। हजारों लोग आन्दोलनमें शामिल हो गये थे, पर मैंने उनसे बात नहीं की थी, उन्हें देखा तक नहीं था। समाचारपत्र वे पढ़ नहीं सकते थे। पर मेरा हृदय उनके साथ काम कर रहा था। आवश्यकता केवल जीवन्त आस्थाकी है। जाहिर है कि आज मुझमें लाखों लोगोंमें आस्था जगाने की क्षमता नहीं है। इसके लिए अहिंसामें और ईश्वरमें उच्चतर कोटिकी जीवन्त आस्था जरूरी है। यह आस्था अपने-आप काम करती है और मनुष्यके जीवनको दिन-प्रतिदिन अधिक आलोकित करती जाती है। अपने इस एकाग्र अन्वेषणमें मेरे कार्य आपको विचित्र लग सकते हैं। अपने विश्वासके प्रति ईमानदार रहते हुए यदि हर-कोई मुझे छोड़कर चला जाये, तो भी मुझे कोई शिकायत नहीं होगी। किसीको भी इस अन्धश्रद्धासे कि कुछ-न-कुछ होकर रहेगा, मुझसे चिपके नहीं रहना चाहिए। इस तरह [की श्रद्धासे] ध्येयमें सहायता मिलने की बजाय और बाधा ही पड़ेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-६-१९३९

३२६. बातचीत : एक मुसलमान मित्रसे[1]

[३१ मई, १९३९][1]

पिछले २० वर्षोंसे मैं अहिंसाकी बात करता आ रहा हूँ, किन्तु मैंने कई बार जो-कुछ स्पष्ट दिख रहा था उसकी ओरसे अपनी नजर हटाकर आत्मवंचना की है। मुझे खिलाफत-आन्दोलनके दिनोंकी याद हो आती है। उस समय हजारों मुसलमानोंसे मेरी मित्रता थी। १९२० में मुस्लिम लीगकी एक सभामें जब मैंने आखिरी कुरबानीकी बात की तो ख्वाजा साहब अब्दुल मजीदने दो या तीन नाम मुझे दिये। किन्तु मेरा विश्वास था कि समय आने पर अनेक बलिदानी सामने आयेंगे; और वे आये। लेकिन उन दिनोंका स्मरण करता हूँ तो पाता हूँ कि मैंने अहिंसाकी ठीक परवाह नहीं की। मैंने लोगोंके केवल शारीरिक हिंसासे दूर रहने से ही सन्तोष कर लिया।[3]

सही बात तो यह है कि मैंने विशुद्ध अहिंसा देशके समक्ष कभी रखी ही नहीं। यदि मैंने ऐसा किया होता तो आज हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच आपसमें पूरी एकता होती। मैं बार-बार यह तो अवश्य कहता रहा कि हिन्दू-मुस्लिम एकताके बिना पूर्ण स्वराज्य नहीं मिलेगा, लेकिन मुझे यह भी देखना चाहिए था कि हिन्दू-मुस्लिम एकता नहीं है तो इसलिए कि सब लोग हिन्दू हों या मुसलमान, विशुद्ध अहिंसापर आग्रह नहीं रख रहे हैं। फिर आश्चर्य क्या, यदि मेरा नया प्रयोग बहुतोंको उलझनमें डाले दे रहा हो। लेकिन मुझे आगे बढ़ना ही है। अगर मैं सही हूँ तो उलझनें अपने-आप दूर हो जायेंगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १७-६-१९३९

१ और २. महादेव देसाईके लिखे "द डिसीजन एण्ड आफ्टर-३" (निर्णय और उसके बाद-३) शीर्षक लेखसे उद्धृत। महादेव देसाई बताते हैं कि गांधीजी "एक अन्य अवसरपर बोल रहे" थे। उन्होंने अपने लेखमें इसे काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्की कार्यकारिणी समितिकी बैठकमें दिये गये भाषणके बाद रखा है; देखिए पिछला शीर्षक।

३. यहाँ महादेव देसाईने गांधीजी द्वारा दिये गये "उदाहरण" छोड़ दिये हैं।

३२७. सन्देश: नवानगर प्रजा परिषद्‌को[1]

मई, १९३९

और कुछ न कर सको, तो काठियावाड़की शुद्ध खादी धारण करके गरीबोंके साथ अपनी एकता साधना।

मो० क० गांधी

[गुजरातीसे]
सेवामूर्ति: श्री वीरचन्द पानाचन्द शाह, पृ० १२१

३२८. तार: वल्लभराम वैद्यको

राजकोट
१ जून, १९३९

वल्लभराम वैद्य
धन्वन्तरि भवन
रायपुर, अहमदाबाद

कृपया आज रात अहमदाबाद स्टेशनपर काठियावाड़ मेलमें[2] मिलें।

गांधी

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० २९०५) से; सौजन्य: वल्लभराम वैद्य

१. साधन-सूत्रके अनुसार परिषदका तीसरा अधिवेशन "मई, १९३९" में किसी दिन हुआ था।
२. इसी गाड़ीसे गांधीजी बम्बई गये थे।

३२९. पत्र : नृसिंहप्रसाद कालिदास भट्टको

रेलगाड़ीमें
१ जून, १९३९

भाई नानाभाई,

तुम्हारा तार मिलते ही लिखने का विचार किया, लेकिन नहीं लिख पाया। अब रेलगाड़ीमें लिख रहा हूँ। जो हर स्थितिमें अहिंसाकी पूजा करते है उनका रास्ता सीधा है। वे आत्मरक्षाके लिए भी हिंसाका सहारा नही लेंगे। लेकिन जिनमें यह शक्ति ही नहीं है वे यदि मारनेवाले को नहीं मारते है तो उनके लिए भाग खड़ा होना, यह नामर्दीका उपाय ही है। नामर्दी तो हिंसासे भी खराब है, क्योंकि नामर्द कभी अहिंसक नहीं बन सकते। इसलिए ऐसे लोगोंको अपना बचाव करना सीख लेना चाहिए। परिषद्के[1] लोग अपनी संस्थाके संविधानके अनुसार बँधे हुए कहला-येंगे। लेकिन यहाँ ऐसी अहिंसा किसी कामकी नही। अहिंसक मनुष्यको हथियार-बन्द मनुष्यकी अपेक्षा हजार गुना निर्भय होना चाहिए। ऐसी निर्भयता किसी संस्थासे जुड़ जाने से नहीं आती है। इसलिए परिषद्के हरएक सदस्यको अपने लिए स्वतन्त्र मार्ग ढूंढ़ लेना चाहिए। अहिंसाके नामपर नामर्दी न फैले, इसका ध्यान रखना हरएक अहिंसा-धर्मीका धर्म हो जाता है। इसलिए सामान्य नागरिकसे हमें साफ-साफ कहना चाहिए कि हम उनका मार्ग-दर्शन करने में असमर्थ है। वे हमारा मुँह जोहें, यह उचित नहीं है। यदि उन्हें स्वतन्त्र रूपसे अहिंसाका मार्ग दिखाई देता है तो उनके लिए हमसे पूछने को कुछ रह ही नहीं जाता और तब अगर वे हमसे कुछ पूछते भी हैं तो हम उन्हें एक ही सलाह दे सकते है कि वे कभी अशक्त न बनें। उन्हें अपने ऊपर हमला करनेवालों का सामना करना सीख लेना चाहिए। अगर ऐसा करते हुए वे मर्यादाका पालन करेंगे और अगर हममें से मुट्ठी-भर लोग खरी अहिंसाका परिचय दे सकें तो सम्भव है कि हमला करनेवाले लोग भी अहिंसक बन जायें।

यह सभी भाइयोंको समझाना। भावनगरमें गुप्त समझौतेके लिए बातचीत चल रही है, यह हानिकारक है। समझौता तो खरेपनसे ही हो सकता है। यहाँ खरेपन जैसी कोई बात नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्

३३०. बातचीत : त्रावणकोर राज्य कांग्रेसके शिष्टमण्डलसे[1]

रेलगाड़ीमें

[१ जून, १९३९][2]

प्रश्न : जिस स्वराज्यके लिए हम लड़ रहे है, उसका क्या होगा? गांधीजी का अहिंसामें अगाध विश्वास, जो पहले किसी समयकी अपेक्षा आज बहुत अधिक गहरा हो गया है, उन लोगोंको कैसे सहायता पहुँचायेगा जो जल्दी ही स्वराज्य चाहते हैं? गांधीजी अहिंसाको जिस रूपमें देखते हैं, उसी रूपपर इतना जोर देने से स्वराज्य क्या एक ऐसा स्वप्न नहीं बन जायेगा, जिसका पूर्ण होना ही कठिन हो?

गांधीजी : जैसा कि मैंने अक्सर कहा है, मेरे लिए तो यह सच है कि स्वराज्यसे पहले अहिंसा है। मैं अराजकता और खूनी क्रान्ति आदिके द्वारा शक्ति हासिल करने की जरा भी इच्छा न करूँगा, क्योंकि मैं सबसे कमजोर और छोटे मनुष्यके लिए भी स्वतन्त्रता चाहता हूँ। और यह तभी हो सकता है, जब हम अहिंसा से स्वतन्त्रता प्राप्त करें। यदि हम ऐसा नहीं करेंगे, तो कमजोर आदमी मर जायेगा, और सिर्फ ताकतवर ही सत्तापर अधिकार करेगा, उसका उपयोग करेगा।

फिर, आप लोग भी तो अगर दरअसल कुछ काम करना चाहते हैं, तो अहिंसाको और सब बातोंसे पहले रखे बगैर नहीं रह सकते। जब अहिंसाको मान लिया, तब उसे और सब बातोंसे पहले रखना ही होगा। केवल उसी हालतमें अहिंसा अदम्य होती है। अगर ऐसा न करेंगे, तो यह एक खोखली और प्रभाव एवं शक्तिसे रहित निस्तेज वस्तु हो जायेगी। कोई सिपाही जब अपनी जान हथेली पर रखकर लड़ता है, तभी उसकी अदम्य शक्ति होती है। अहिंसाके सिपाहीके लिए भी यही बात है।

प्र० : लेकिन इस तरह अपनी माँग कम करने से काम कैसे चलेगा? इससे हमें अपने उत्तरदायी शासनका ध्येय प्राप्त करने में किस तरह सहायता मिलेगी?

गा० : आज जब हम उत्तरदायी शासनकी बातें करते हैं, तो उससे रियासतोंके अधिकारी भयभीत हो जाते हैं। अधीश्वरी सत्ता भी इसे पसन्द नहीं करती। वे सोचते हैं कि इसका परिणाम होगा खून-खराबा और अराजकता। उनकी दलीलमें

१ और २. महादेव देसाईके लिखे "द डिसीजन एण्ड आफ्टर–४" (निर्णय और उसके बाद–४) से उद्धृत। २-६-१९३९ के बॉम्बे क्रॉनिकलके अनुसार शिष्टमण्डलके सदस्य पत्तम ताणु पिल्लै, वर्गीज और फिलिपोज राजकोटसे बम्बईतक की यात्रामें गांधीजी के साथ थे। देखिए "वक्तव्य : त्रावणकोरके", सम्बन्धमें पृ० ३५०-३।

वजन नहीं है, लेकिन फिर भी उन्हें ईमानदार तो समझना ही चाहिए। अगर आप मेरी सलाह मानें, तो आप कहेंगे कि 'कुछ समयके लिए हम स्वराज्यको भूल जाते हैं। हम जनताके प्राथमिक अधिकारोंको प्राप्त करने के लिए, भ्रष्टाचार मिटाने के लिए लड़ेंगे।' संक्षेपमें, आप अपना सारा ध्यान शासन-प्रबन्ध की तफसीली बातोंमें लगा देंगे। तब अधिकारी डरेंगे नहीं और इससे आपको उत्तरदायी शासनका सार-तत्त्व मिल जायेगा। भारतवर्षमें मैंने जो-कुछ काम किया है, उसका यही इतिहास है। यदि मैं सिर्फ स्वराज्यकी बात करता, तो मैं बिलकुल असफल रह जाता। तफसीलकी बातोंपर ध्यान देने से हम शक्ति ग्रहण करते गये हैं।

दांडी-कूचके समय मैंने क्या किया था? मैंने पूर्ण स्वराज्यकी अपनी माँगको कम करके सिर्फ ११ माँगों[1] तक सीमित कर दिया था। पहले-पहल तो मोतीलालजी मुझपर बहुत बिगड़े। "इस तरह झण्डा नीचा करने से आपका आखिर मतलब क्या है?" — उन्होंने कहा। लेकिन उन्होंने जल्दी ही देख लिया कि अगर उन माँगोंको मान लिया जाये, तो आजादी हमारा दरवाजा खटखटाने लगेगी।

मेरा दिमाग कैसे काम कर रहा है मैं आपको बता दूँ। जैसा कि आपको बता चुका हूँ, मैंने समझा था कि रियासतोंमें हम जल्दी ही उत्तरदायी शासन हासिल कर लेंगे। लेकिन अब हमें मालूम हुआ है कि हम सब लोगोंको अहिंसाके मार्गपर तुरन्त अपने साथ नहीं ले सकते। आप कहते हैं कि सिर्फ कुछ थोड़े-से गुंडे ही हिंसा करते हैं, लेकिन अहिंसात्मक स्वराज्य प्राप्त करने की शक्तिका अर्थ है कि उससे पहले हममें गुंडोंपर भी काबू पाने की ताकत आ जाये, जैसे कि असहयोगके दिनोंमें हममें अस्थायी तौरपर आ गई थी। अगर आपका हिंसाकी ताकतोंपर पूरा काबू हो, अगर आप अधीश्वरी सत्ताकी परवाह किये बिना या मेरी अथवा कांग्रेसकी बाहरी सहायताकी अपेक्षाके बिना आखिरी दमतक लड़ाई जारी रखने के लिए तैयार हों, तो आपको कुछ समयके लिए भी अपनी मांग कम करने की जरूरत नहीं। तब तो दरअसल आप मेरी सलाह की जरूरत ही न समझेंगे।

लेकिन जैसा कि आप भी मानते हैं, आपकी स्थिति ऐसी नहीं है। न किसी भी और रियासतकी ऐसी स्थिति है। यदि होती, तो मेरे बगैर कहे भी कई स्थानोंपर सविनय अवज्ञा स्थगित न की जाती।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-६-१९३९

१. देखिए खण्ड ४२, पृ० ४४९।

३३१. भेंट : मद्य-विक्रेता संघके शिष्टमण्डलको[1]

बम्बई
[२ जून, १९३९][2]

गांधीजी ने उनके निवेदनकी संयत भाषाके लिए उन्हें बधाई दी। उन्होंने कहा कि आप लोगोंको मेरे पास आने का पूरा अधिकार है, क्योंकि पारसियोंसे मेरा सम्बन्ध विशेष रूपसे घनिष्ठ है। [उन्होंने आगे कहा :]

आपके निवेदनसे मुझे यह पता चलता है कि सिद्धान्ततः शराब-बन्दीके आप कतई विरुद्ध नही है, उसे अमलमें लाने पर जो कठिनाइयाँ और मुसीबतें आयेंगी, केवल उन्हीको आपने पेश किया है। पर मुझे भय है कि आप एक गलत जगह आ गये है। मन्त्रियोंके काममें मैं कोई दखल नही देता, लेकिन इस शराब-बन्दीके सम्बन्धमें तो मै मन्त्रियोंसे भी अधिक उत्सुक और अधीर हूँ। मै यह स्वीकार करता हूँ कि मैंने इस प्रश्नके आर्थिक पहलूका अध्ययन नहीं किया है। मेरे सामने तो यह एक धर्मका प्रश्न है। अगर मेरी चले तो चाहे जितनी कुरबानी और कीमत देकर भी मै उसपर अमल कराकर ही रहूँ। मेरे हाथमें राज्यका शासन हो तो आपने जो आँकड़े दिये हैं उन सबका मै अध्ययन करूँ। मुझे विश्वास है कि मन्त्रियोंने उन सबका अध्ययन किया है, और आप लोगोंको उनके पास जाना चाहिए। वे बड़ी खुशीसे सारे प्रश्नपर आपके साथ चर्चा करेंगे और आपने जो कठिनाइयाँ बताई हैं उनसे निकलने का रास्ता बताने का भी प्रयत्न करेंगे।

शिष्टमण्डलने यह सवाल भी उठाया कि उन्हें काफी समय नहीं दिया गया है। उन्होंने कहा कि कांग्रेसने जो चुनाव-घोषणापत्र[3] निकाला था उसमें शराब-बन्दीके

१. यह और अगला शीर्षक "द एण्टी प्रोहिबिशन डेपुटेशन्स" (मद्यनिषेध-विरोधीशिष्टमण्डल) से उद्धृत है। इसमें महादेव देसाई लिखते हैं: "पहले शिष्टमण्डलमें ताड़ी, देशी शराब और विदेशी शराबके विक्रेताओंके प्रतिनिधि शामिल थे।" उनका निवेदन मुख्यतया शराबबन्दीके कारण बेरोजगार हो जानेवाले हजारों पारसी कुटुम्बोंकी मुसीबतोंके सम्बन्धमें था। उनका कहना था कि ऐसे परिवार कंगाल हो जायेंगे, दिवालिये हो जायेंगे; वे शराब गैर-कानूनी तरीकोंसे बेचेंगे और कानून भंग करेंगे; और १ अगस्तसे पहले ५०-६० लाख रुपयेका माल न बेच पाने की सम्भावना भी उन्होंने गांधीजी को बताई। उन्होंने यह भी बताया कि कीमती फर्नीचर बेच डालनेके कारण भी उन्हें काफी नुकसान उठाना पड़ेगा। ३-६-१९३९ के बॉम्बे क्रॉनिकलके अनुसार इस शिष्टमण्डलके नेता एम० वी० वारिया थे। उसमें आर० आर० पटेल, आर० डी० श्राफ, फीरोजशाह श्राफ, जे० डी० क्रॉफर्ड और एम० एम० सुर्वे भी शामिल थे। यह शिष्टमण्डल गांधीजी से तीसरे पहर मिला था।

२. बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-६-१९३९से; गांधी — १९१५-१९४८ से भी।

३. देखिए खण्ड ६५, परिशिष्ट ३।

कार्यक्रमका कोई उल्लेख नहीं था, अतः यह १ अगस्तसे शराब-बन्दी शुरू करने का निर्णय उनके लिए वज्राघात-जैसा है। गांधीजी ने इसका जवाब देते हुए कहा :

कांग्रेसका चुनाव-घोषणापत्र तो मुख्यतया एक राजनीतिक दस्तावेजके रूपमें जारी किया गया था, इसलिए स्वभावतः उसमें शराब-बन्दीके कार्यक्रमका उल्लेख नहीं था। किन्तु मद्य-निषेध तो कांग्रेसके कार्यक्रममें १९२० से ही चला आ रहा है। मेरे लिए तो जबसे मैं दक्षिण आफ्रिकाके प्रवासी भारतीयों और दक्षिण आफ्रिकियोंके सम्पर्कमें आया तभीसे यह एक उत्कट आकांक्षाके रूपमें रहा है। शराबकी लत कितना भयानक अभिशाप है, यह मैंने अपनी आँखों देखा है। इसने लोगोंका नैतिक, शारीरिक तथा आर्थिक सत्यानाश किया है, और घर तथा कुटुम्बकी सुख-शान्ति और पवित्रताको नष्ट कर दिया है। इसके कारण होनेवाले सर्वनाशपर जब मैं विचार करता हूँ, तो खूनके आँसू रोता हूँ, और शराब-बन्दीको तुरन्त लागू करने के लिए मैं व्याकुल होता रहा हूँ। जब कांग्रेसने पद-ग्रहण करने का निश्चय किया, तब मुझे ऐसा लगा कि उसे शराब-बन्दीको तुरन्त लागू करने का यह स्वर्ण अवसर मिला है। किन्तु मन्त्रियोंने ही कहा कि इसके लिए तीन सालका समय देना चाहिए। इस तरह मेरी दृष्टिसे थोड़े दिनोंके नोटिसका तो कोई सवाल ही नहीं उठता। मेरे हिसाबसे तो मद्य-निषेधका यह कदम बहुत बरसोंकी देरीके बाद उठाया जा रहा है। सैकड़ों-हजारों बहनोंने शराबकी दुकानोंपर धरना देने का कार्यक्रम चलाया है, तरह-तरहकी बेइज्जती बरदाश्त की है और उनपर हमलेतक हुए हैं। एक उदाहरण तो अब भी मुझे याद आ रहा है, जिसमें एक स्वयंसेविकाके सिरपर प्रहार किया गया था, और उस चोटका बुरा असर उनके ऊपर आज भी बना हुआ है। इस धरना देने के कार्यक्रममें कोई जोर-जबरदस्ती नहीं होती थी। सिर्फ शान्तिपूर्वक समझाने का कार्यक्रम था, और असर भी उसका इतना भारी हुआ कि कुछ प्रान्तोंमें आबकारीकी आमदनी शून्यवत् हो गई थी। इस देशमें शराबके जो बुरे परिणाम हुए हैं उन्हें ठीक तरहसे जानने के लिए मैं आपसे प्रार्थना करूँगा कि आप कल-कारखानोंके मजदूरोंकी स्थितिका अध्ययन करें। मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि अहमदाबाद शहरमें शराब-बन्दी कैसे उनके लिए एक महान् वरदान साबित हुई है।

शिष्टमण्डलके एक सज्जनने कहा कि शराब-बन्दीके फलस्वरूप १२ से लेकर १५ हजारतक ताड़ी निकालनेवाले कठिनाईमें पड़ जायेंगे, और ताजी ताड़ी दवाईकी दृष्टिसे तो एक बड़ी कीमती चीज है।

आप नीराके बारेमें कह रहे हैं। यह ताजगी देनेवाला पेय है, यह मैं मानता हूँ। हम इससे गुड़ भी बनाते हैं।[1]

अगर ताड़ी निकालनेवाले इससे इस तरहका गुड़ बनाने का धन्धा करने लगें तो बेकारीका सवाल रहता ही नहीं। बंगालमें नीरासे कितने ही टन गुड़ बनता है, और दक्षिण भारतमें इसके ताजे रसके गुड़से अरक तैयार किया जाता है।

१. यह कहकर गांधीजी ने ताड़ तथा खजूरके गुड़की थाली मँगाकर उन सज्जनोंके आगे रख दी।

पर उन सज्जनने कहा कि ताड़के किसी पेड़से मौसममें दससे अधिक बार नीरा निकालना असम्भव है, और यह गुड़ बनानेकी बात व्यावहारिक नहीं है। गांधीजी ने कहा, मेरे पास जो सबूत है, वह तो इसके विरुद्ध है। फिर भी मैं इस बारेमें और भी ज्यादा पूछताछ करूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-६-१९३९

३३२. भेंट : पारसियोंके शिष्टमण्डलको[1]

[२ जून, १९३९][2]

उनकी शिकायतोंका मुद्दा यह था कि पारसी कौम सदियोंसे शराब और ताड़ीका आजादीसे उपयोग करती चली आ रही है, और इसका उसके ऊपर कोई बुरा असर नहीं पड़ा। इसलिए शराब-बन्दी पारसियोंके साथ एक तरहका बलात्कार है। उन्होंने और भी बहुत-सी दलीलें पेश कीं — जैसे, शराब-बन्दीसे कइयोंका व्यापार-रोजगार चौपट हो जायेगा, प्रान्तकी आर्थिक स्थिति गड़बड़ हो जायेगी, शराब-विक्रेता और ताड़ी निकालनेवाले मुसीबतमें पड़ जायेंगे, और लोगोंकी धार्मिक क्रियाओंमें यह एक प्रकारकी दस्तन्दाजी होगी। उन्होंने कहा कि एशियायियों और गैर-एशियायियोंके बीच किया जानेवाला भेद-भाव भी बहुत अप्रिय चीज है। उन्होंने यह भी बताया कि सिर्फ पारसी ही नहीं, बल्कि मुसलमान और हिन्दू भी सरकारकी शराब-बन्दीकी नीतिके विरुद्ध हैं।

शिष्टमण्डलके कुछ सज्जन, खासकर सर कावसजी वर्षोंसे गांधीजी के मित्र रहे हैं। इससे उनका हमला खास जोरदार था। लेकिन इसके बावजूद सारे वाद-विवादके दौरान सद्भाव और अत्यन्त मैत्रीका वातावरण रहा।

कावसजी : पियक्कड़पन जरूर बहुत बुरा है, लेकिन पीने में कोई दोष नहीं। फिर, उन थोड़े-से लोगोंकी खातिर, जो शराब पीते हैं, सारी कौमको आप क्यों सजा देते हैं? मैं अपनी ही बात कहता हूँ। मैं रोज शेरीके दो या तीन प्याले पीता हूँ, और मैं दूसरे सैकड़ों लोगोंको जानता हूँ, जो शराब-बन्दीकी बात तो करते हैं, फिर भी पीते हैं, और शराब-बन्दी लागू होनेके बाद भी पियेंगे।

उनकी वाणीमें चुनौतीका स्वर था। पर गांधीजी ने सर कावसजीको यह याद दिलाकर शान्त कर दिया कि भूतकालमें कई नाजुक मौकोंपर उन्होंने उनकी (गांधीजी

१. महादेव देसाई लिखते हैं: "इस शिष्टमण्डलके नेता सर कावसजी जहाँगीर और इसके अन्य सदस्य सर जे० सी० कोयाजी, सर एच० पी० मोदी, श्री खारेघाट, श्री ए० डी० श्राफ और श्री सकलातवाला थे।" देखिए पिछला शीर्षक भी।
२. बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-६-१९३९ से।

की) कैसी-कैसी मदद की और इस समय भी उन्हें यह आशा थी कि वे (सर कावसजी) उनकी मदद करेंगे!

सर कावसजी खिलखिलाकर हँस पड़े।

श्री खारेघाट मद्य-त्यागका प्रचार करनेवाले एक चुस्त सुधारक हैं। उनकी सफेद दाढ़ी स्व० दादाभाई नौरोजीका स्मरण करा रही है, ऐसा गांधीजी ने कहा। श्री खारेघाटने एक बड़ी विचित्र दलील दी;

मैं शराब नहीं पीता, बेचता भी नहीं। पर आपकी यह शराब-बन्दी हजारों आदमियोंको तबाह कर देगी। मैं चाहता हूँ कि राजकोटके मामलेमें जिस तरह आपने अपनी गलती समझ ली उसी तरह इस शराब-बन्दीके बारेमें भी समझ लें। तब मैं अपने पूरे हृदयसे आपकी इज्जत करूँगा। हमारे धर्मके अनुसार मेजबानको अपने मेहमानको अच्छी रोटी और बढ़िया शराब देनी ही चाहिए।

गांधीजी : शराबका अर्थ यहाँ ऐसा पेय है जिसमें नशा न हो। चाहे जो हो, यह तो आश्चर्यकी बात मालूम देती है कि यह चीज धार्मिक कर्त्तव्यमें कैसे आ सकती है! कोई बेचारा गरीब आदमी हो तो वह क्या करे?

सकलातवाला : मैं शराब नहीं पीता, और ईश्वरकी कृपासे संपत्ति-कर देने के लिए मेरे पास सम्पत्ति भी काफी है। पर यह क्या बात है कि दूसरे लोग आकर मेरे जीवनका नियमन करें? मैं तो कहता हूँ कि हालाँकि मैं शराब नहीं पीता, फिर भी अगर कोई आकर मुझसे कहे कि आप शराब मत पीजिए, तो मेरा खून जरूर उबल उठेगा।

गांधीजी (हँसकर) : पर इस तरह तो चोरी करने के विरुद्ध भी कानून है, फिर भी आप चोरी नही करते। क्या कानूनकी अवगणना करने की खातिर आप चोरी भी करेंगे?

एच० पी० मोदी : हमारा शराब-बन्दीमें विश्वास नहीं है। कानून तोड़ने के लिए हम ललचाएँ, ऐसी स्थितिमें हमें आप क्यों रख रहे हैं? हमें आप छूट दे दें। शराब हमारे सामाजिक रहन-सहनका, हमारे दैनिक जीवनका एक भाग बन गई है और हम शराब पीना चाहते हैं।

गांधीजी : आपसे पहले जो शिष्टमण्डल आया था, उससे मैंने यह कहा था कि आप एक गलत जगह आ गये हैं।[1] आपके और मेरे बीचमें एक चौड़ी खाई है। मुझे शराब-बन्दीकी शिक्षा देनेवाले स्व० दादाभाई नौरोजी थे। मद्य-निषेध और मद्यत्यागके बीच भेद करना भी उन्होंने ही मुझे सिखाया था। व्यक्ति-स्वातन्त्र्य अमुक हदतक ही होता है। यह बात मनुष्य भूल नहीं सकता कि वह खुद समाज का एक अंश है, और इसलिए उसके व्यक्ति-स्वातन्त्र्यकी काट-छाँट करने के प्रसंग आते रहते हैं। एक ही बातपर विचार करने के लिए मैं आपसे प्रार्थना करूँगा। आपकी जन-संख्या कितनी है? ३५ करोड़में ज्यादासे-ज्यादा एक लाख। आप दुनिया-

१. देखिए पिछला शीर्षक।

भरमें फारसके निवासियोंके रूपमें नही, बल्कि बतौर हिन्दुस्तानियोके प्रसिद्ध हैं। एक लाखके हिसाबसे नहीं, बल्कि सारे हिन्दुस्तानके हिसाबसे, संकुचित हितकी दृष्टिसे नही, बल्कि सारे देशके विशाल हितकी दृष्टिसे विचार करने के लिए मैं आपसे कहता हूँ। यह चीज आपको कैसे शोभा दे सकती है कि देश तो एक महान् और उच्च प्रयोगको शुरू करे और आप उसे नष्ट कर देने की कोशिश करे? आप कहते हैं कि यह आदत आपसे छूट नही सकती; आपको इससे इतना ज्यादा लगाव है! मैं कहता हूँ कि ऐसा कहकर आप खुद अपने साथ अन्याय करते हैं। आपने कितनी सारी चीजें छोड़ दी हैं। आपने अपनी भाषा छोड़ दी और गुजराती भाषाको अपना लिया। आपने अपना पहनावा छोड़ दिया। अनेक रस्म-रिवाज आपने छोड़ दिये, तब एक इस कमजोरीसे आप किसलिए चिपटे रहें? अपनी कमजोरीको आप भले ही पेश करें, पर ईश्वरके लिए यह व्यक्ति-स्वातन्त्र्यकी दलील पेश न करें। ऐसा करके तो आप अपना सारा मामला ही हार जाते हैं। हिन्दुस्तानके लिए आपने बहुत-सी कुरबानियाँ की हैं। इस बुरी आदतकी भी कुरबानी कर दें। दक्षिण आफ्रिकामें अनेक स्त्री-पुरुषोको नालियोमें लुण्ठित होते और अनेक कुटुम्बोको पामाल होते मैंने देखा है।

एच० पी० मोदी : हिन्दुस्तानमें आप कहाँ पामाली देखते हैं?

[गाधीजी :] मैं आपसे कहता हूँ कि मैंने अपनी आँखोंसे लोगोको पामाल होते हुए देखा है। मेरे अपने लड़केकी करुण कहानी तो है ही। अहमदाबादके ६० हजार आदमी आज शराब-बन्दीको आशीर्वाद दे रहे हैं। मेरा यह दावा है कि आम जनताके अन्त:करणका नैतिक समर्थन मुझे प्राप्त है। हमारे झगड़ेका मुद्दा तो बिलकुल छोटा-सा है। थोड़े-से व्यक्तियोकी आन्तरिक आपत्तियोके प्रश्नपर क्या आप सारे देशकी पामाली जारी रखने की हदतक आग्रह रखना चाहते हैं?

लेकिन समाजमें क्या दूसरी बुराइयाँ नहीं हैं? मसलन, जुआ।

कोई भी बुराई इतनी नाशकारी नही है। और दूसरी बुराइयाँ इस मद्य-पानसे ही पैदा होती हैं। पर मैं तो जुए का भी नाश चाहता हूँ। किन्तु यह शराबखोरीकी बुराई तो मनुष्यके शरीर तथा आत्मा, दोनोंका नाश कर देती है।

पर मान लीजिए कि आप बेहिसाब खाना खाने की लत डाल लें, तो क्या उससे ऐसे ही दुष्परिणाम नहीं आयेंगे? आप अहमदाबादके ६० हजार मजदूरोंकी बात करते हैं, पर बम्बईके ५० हजार पारसियोंकी प्रार्थना क्यों नहीं सुनते? हम लोगोंमें पियक्कड़पन तो बिलकुल नहीं है।

थोड़ी देरके लिए मैं यह बात मान लेता हूँ तो इसका अर्थ इतना ही हुआ कि आपकी कौम संयमी है, एक हदके अन्दर रहनेवाली है। ठीक, तो फिर इस संयमको जरा और आगे ले जाकर हिन्दुस्तानके इस सबसे बड़े नैतिक सुधारको आप अपना सहयोग क्यो न दें? और फिर आपको यह भी नही भूलना चाहिए कि जिन्हें स्वास्थ्यके लिए अथवा धार्मिक क्रियाके लिए शराबका उपयोग लाजिमी है

उनके लिए तो पर्याप्त प्रबन्ध है ही। इसलिए मैं तो आपको यह सुझाऊँगा कि आप इसमें हमें इस रास्तेसे अपना सहयोग दें और इस सुधारको नष्ट करने की कोशिश छोड़ दें।

लेकिन यूरोपीयों और हिन्दुस्तानियोंके बीच आपने भेद क्यों रखा है?

इसे आप मेरी कमजोरी कह लीजिए, और सभीके ऊपर, यूरोपीयों पर भी शराब-बन्दी लागू करने का आप आन्दोलन कीजिए। शराब-बन्दीके सर्वसामान्य कानूनके नीचे आने से उन्हें (यूरोपीयोंको) भी लाभ ही होगा। उनके स्वास्थ्यको कोई धक्का नहीं पहुँचेगा, क्योंकि स्वास्थ्यके लिए उन्हें जितनी शराबकी जरूरत होगी उतनी तो मिल ही जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-६-१९३९

३३३. वक्तव्य: त्रावणकोरके सम्बन्धमें[1]

बम्बई
४ जून, १९३९

मुझे श्री पत्तम ताणु पिल्लै, श्री वर्गीज और श्री जे० फिलिपोजके साथ त्रावण-कोरकी परिस्थितिके बारेमें लम्बी बातचीत[2] करने का मौका मिला है। राजकोटमें मैंने जो बहुमूल्य अनुभव प्राप्त किया उससे मुझे यह मालूम हो गया है कि त्रावण-कोरमें चलनेवाले सविनय अवज्ञा आन्दोलनको ठीक समयपर रोका गया है। राजकोटकी भूल-स्वीकारसे मुझे यह शिक्षा मिली है कि सर सी० पी० रामस्वामी अय्यरके प्रति लगाये गये आरोपोंका वापस लिया जाना काफी नही है बल्कि इस बातकी भी आवश्यकता है कि त्रावणकोरकी प्रजा समझ ले कि उसे त्रावणकोरके महाराजासे ही नही, बल्कि उनके दीवानसे भी सम्बन्ध रखना पड़ेगा। मैं यह भी देखता हूँ कि त्रावणकोरके रहनेवाले कुछ आलोचकोंने यह कहा है कि वहाँ आन्दो-लन स्थगित कर दिये जाने के परिणामस्वरूप त्रावणकोरकी सरकार अब पहलेसे भी अधिक उग्र रूपसे प्रजाका दमन कर रही है। मगर इन आलोचकोंको यह पता नहीं कि मैंने जो आन्दोलन स्थगित करने की सलाह दी थी वह इसलिए नही कि ऐसा करने से दमनसे बचा जा सकेगा। मैंने ऐसा इस उम्मीदसे भी नहीं किया था कि ऐसा होने पर दमन-चक्र चलना बन्द हो जायेगा। त्रावणकोरके आन्दोलनको स्थगित करने की सलाह तो इसलिए दी गई थी कि वहाँके लोगोंकी सम्भावित

१. यह वक्तव्य *हरिजन*में "न्यू टेक्नीक इन ऐक्शन" (नये तरीकेका इस्तेमाल) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। वक्तव्य ४-६-१९३९ के *हिन्दू* और ५-६-१९३९ के *बॉम्बे क्रॉनिकल*में भी प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए पृ० ३४३-४।

हिंसाको, चाहे उसका जो कारण हो या उसे जो भी भड़कायें, रोका जा सके। इसके साथ ही, मानव-स्वभावको क्रूर बन जाने से बचाने के खयालसे भी आन्दोलनको स्थगित करने की सलाह दी गई थी। यह कहा जा सकता है कि इस आन्दोलनके स्थगित किये जाने से इन दोनों उद्देश्योंकी काफी पूर्ति हुई है। इस आन्दोलनको स्थगित करने की एक वजह यह भी थी कि इसके जरिये राज्यके अधिकारियोंके साथ सम्मानपूर्ण समझौता करने और राज्यकी प्रजाको अहिंसाके सच्चे रूपकी शिक्षा देने के मार्गको प्रशस्त किया जाये। इन उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए अभी भी काम करना है। मुझे धुंधले तौरपर जो नया प्रकाश मिला है उसीके बलपर मैं यह सलाह देने में अपनेको समर्थ पा रहा हूँ। उसके बिना मैं इतने विश्वासके साथ ऐसी सलाह नही दे सकता था जितने विश्वासके साथ कि इस समय दे रहा हूँ।

मुझे यह बात जँच गई है कि अधिकारियोंके साथ अब प्रत्यक्ष रूपसे समझौते की बातचीत चलानी चाहिए। अबतक त्रावणकोर राज्य कांग्रेसके लोग राज्यके अधिकारियोंपर और अधिकारीगण उन कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओंपर दोषारोपण करते रहे हैं। इसका नतीजा यह हुआ है कि उन दोनोंके बीचकी खाई और भी गहरी हो गई है। सत्याग्रहियोंके यह दलील करने से कोई लाभ नहीं निकल सकता कि समझौतेकी बातचीत पारस्परिक रूपसे होनी चाहिए। इससे तो यह अनुमान निकलता है कि राज्यके अधिकारियोंमें सत्याग्रहकी भावना है, जबकि सत्याग्रह उन लोगोंके खिलाफ किया जाता है जो सत्याग्रही होने का कोई दावा नही करते। इसलिए सत्याग्रहियोंका पहला और आखिरी फर्ज यह है कि वे सम्मानपूर्ण समझौतेके लिए सतत प्रयत्न करे। लेकिन जबतक लोगोंके मनमें इस तरहके समझौतेके औचित्य तो क्या, उसकी सम्भावनाके प्रति भी अविश्वास है, तबतक यह शक्य नही। अबतक लोग बगैर किसी सन्देहके इसे असम्भव समझते रहे हैं। मैं भी इसमें मूक भागीदार रहा हूँ। लेकिन अब मैंने अनुभवसे दूसरी बात सीखी है। अगर नेताओंमें सक्रिय अहिंसाकी भावना मौजूद है तो उनके लिए यह बहुत जरूरी है कि वे इस तरहके समझौतेकी पूरी सम्भावनाके प्रति अपने अन्दर विश्वास पैदा करें। उन लोगोंमें यदि ऐसा विश्वास पैदा हो जायेगा, तो उनके लिए समझौतेका दरवाजा खुला ही समझिए। जहाँतक खुद मेरा सम्बन्ध है, सभी जानते हैं मैं केवल इसी सिद्धान्तपर काम करता रहा हूँ। इसके लिए हमें अपना स्वर कुछ मद करना पड़ेगा। हमारा जो उद्देश्य है वह निश्चित रहना चाहिए, पर हम सम्पूर्ण अधिकारोंके बजाय कुछ कमके लिए भी समझौतेकी बात करने के लिए तैयार रहें, बशर्ते कि वह साफ तौरपर वैसा ही हो जैसा कि हम चाहते हैं और उसमें विस्तार की भी सम्भावना हो। मैंने देखा है कि एक औंध[1] राज्यको छोड़कर और कहीं भी कोई नरेश अपनी प्रजाको सम्पूर्ण अधिकार देने के लिए तैयार नही है। और न अंग्रेज सरकार ही इसके लिए चिन्तित है कि देशी राज्योंकी प्रजाको पूरी उत्तरदायी शासन-व्यवस्था

१. औंधका सुधार संविधान २१ जनवरीको कानून बन गया। इस संविधानका उद्देश्य सत्ताको प्रजाके हाथोंमें सौंप देना था।

मिले। ब्रिटिश साम्राज्यशाहीके सोचने का जो तरीका है यदि मैं उसे ठीक समझता हूँ, तो कोई भी महत्त्वपूर्ण रियासत अगर औंधका अनुसरण करती है तो साम्राज्य-शाहीको बुरा लगेगा। पर सबसे महत्त्वकी बात तो यह है कि देशी राज्योंकी सामान्य प्रजा खुद भी अधिकारोंकी प्राप्तिके लिए कीमत देने को तैयार नहीं है। इसमें कोई शक नहीं कि देशी राज्योंमें जागृति हुई है, पर जिस महान् उद्देश्यको प्राप्त करना है उसके लिए इतनी जागृति काफी नही। इस बातको स्वीकार कर लेने में हमारी भलाई है। अपनी सामर्थ्यसे ज्यादाके लिए कोशिश करने में सम्भव है, हम सब-कुछ खो बैठें। मै सब राज्योंमें किसी व्यक्ति या व्यक्तियोंके शासनकी अपेक्षा, फिर वे चाहे कितने ही अच्छे क्यों न हों, कानूनका शासन कायम करने के लिए बड़ी कीमत भी दे सकता हूँ। तब उस मजबूत बुनियादपर जिम्मेदार सरकार स्थापित करने की सम्भावना मैं ढूंढ़ सकता हूँ। पर जिस उत्तरदायी सरकारके पीछे प्रजाकी शक्ति या इच्छा नही, बल्कि जो केवल एक खैरात हो वह केवल कागज-पर दिया हुआ उत्तरदायित्व होगा, जिसकी कुछ भी कीमत नही है।

सविनय अवज्ञा रोकने के दूसरे उद्देश्यका सम्बन्ध ऊपर कही गई बातोंसे है। अगर यह सच है कि तत्काल उत्तरदायी सरकार देने के लिए वातावरण अनुकूल नही है, और प्रजा उसकी कीमत देने के लिए तैयार नहीं है, तो फिर इसका यह मतलब हुआ कि प्रजाको उचित शिक्षण मिलने की जरूरत है। मैं कहीं भी निकट भविष्यमें बहुत सोचे-विचारे बिना सामूहिक सत्याग्रह करने की सलाह देनेवाला नही हूँ। प्रजाको न तो इसके लिए काफी शिक्षण मिला है और न उसमें यथेष्ट अनुशासन ही है। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नही कि प्रजाको दो-एक कसौटियोंपर खरा उतरना चाहिए। केवल शारीरिक हिंसाके त्यागसे हमारा उद्देश्य हल न होगा। इस निश्चित कसौटीके कार्यक्रमके केन्द्रमें मैं बगैर किसी हिचकिचाहटके चरखेको, उसके पूर्ण फलितार्थ सहित, रखता हूँ। अगर प्रजाने तुरन्त ही इसकी ओर ध्यान दिया तो इससे उसका शिक्षण-क्रम छोटा हो जायेगा। पर अगर प्रजाने उत्साहके साथ उसे न अपनाया,.तो इस क्रममें लम्बा समय लग सकता है। मैंने १९२० में जो चारसूत्री रचनात्मक कार्यक्रम बताया था उसके सिवा मैं कोई दूसरा कार्यक्रम नही जानता। अगर प्रजाने हृदयसे इसे न अपनाया तो फिर यह साबित हो जायेगा कि प्रजामें अहिंसाकी भावना नहीं है, या जैसी अहिंसा मैं चाहता हूँ वैसी नही है, या फिर प्रजाका विश्वास वर्तमान नेतृत्वमें नही है। मैं १९२० से जो कसौटी बराबर राष्ट्रके सामने रखता आ रहा हूँ उसके सिवा मेरे सामने और कोई कसौटी नही है। नये प्रकाशसे मुझे यह मालूम हुआ है कि जनतासे इस अनुशासनका पालन करवाने में मुझे पहले की तरह कभी शिथिलता नहीं बरतनी चाहिए। जहाँ-कहीं भी सविनय अवज्ञा आन्दोलन करने की शर्तें ठीकसे पूरी होंगी वहाँ वैसा करने की सलाह मैं बेखटके दे सकता हूँ। यह सविनय अवज्ञा आन्दोलन व्यक्तिगत होगा। पर वह पहले की किसी भी सामूहिक सविनय अवज्ञासे कही ज्यादा कारगर होगा। मुझे यह जरूर मानना चाहिए कि पिछले आन्दोलनोंमें कम

या ज्यादा कुछ खराबियाँ थीं। मुझे उनके लिए अफसोस नही है, क्योंकि उस समय मुझमें उतनी ही समझ थी। जब-कभी मुझे गलती मालूम हुई, तब मुझमें इतनी बुद्धि और इतनी विनय रही है कि मैं अपने कदम पीछे हटा लूँ। इसलिए राष्ट्र बराबर कदम-बकदम आगे बढ़ता रहा है। पर अब इसमें बताई गई दिशामें आमूल परिवर्तन करने का समय आ गया है।

इस तरह त्रावणकोरके बारेमें अपनी राय देते हुए मुझे अपनी वर्तमान मानसिक स्थिति और त्रावणकोरकी स्थितिपर उसकी प्रतिक्रिया बताने का अवसर मिला है।

संक्षेपमें मुद्दा यह है : (१) सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन अनिश्चित काल तकके लिए रोक देना चाहिए। (२) राज्यके कांग्रेसी लोगोंमें यह इच्छा होनी चाहिए कि अधिकारियोंसे सम्मानपूर्ण समझौतेके लिए वे रास्ता तैयार करें। (३) जो सत्याग्रही इस समय जेलोंमें पड़े हुए हैं, या जो आगे कैद हों उनके लिए कोई चिन्ता नही होनी चाहिए। अगर सत्याग्रहकी भावना ठीक तरहसे ग्रहण की गई हो तो इन कैदों और अन्य बाधाओंसे प्रजाका हौसला बढ़ना चाहिए। (४) अगर जरूरत हो तो अपनी तात्कालिक माँगोको कुछ घटाना चाहिए, जिससे कि आखिरी लक्ष्यकी ओर कदम तेजीसे बढ़ें। (५) किसी भी सत्याग्रह-आन्दोलनको शुरू करने की पहली शर्त यह है कि आम प्रजा रचनात्मक कार्यक्रमकी कसौटीको पूरा करे, जो कमसे-कम इस बातका प्रमाण होगा कि प्रजाने राज्यकी कांग्रेसका अनुशासन स्वीकार कर लिया है।

मुझे यह बताने की जरूरत नही है कि कार्यकर्त्ता लोग मेरी सलाह अस्वीकार करने को स्वतन्त्र हैं। यह सलाह उनके दिल और दिमागको ठीक लगे, और स्थानीय परिस्थितिके अनुकूल लगे, तभी वे इसे स्वीकार करे, क्योंकि मैं मानता हूँ कि स्थानीय स्थितिके बारेमें वे ही बेहतर तय कर सकते हैं।[1]

बम्बई, ४ जून, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १०-६-१९३९

१. "द डिसीजन एण्ड आफ्टर-४" (निर्णय और उसके बाद-४) शीर्षक लेखमें महादेव देसाई बताते हैं कि त्रावणकोर राज्य कांग्रेसकी कार्य-समितिने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया: "हम गांधीजी की सलाह स्वीकार करते हैं और परिस्थितियोंको देखते हुए हमारा इसे स्वीकार करना बिलकुल ठीक है; लेकिन इसे स्वीकार करने की जिम्मेदारी पूरी तरह हमारी है।"

३३४. तार: सी० पी० रामस्वामी अय्यरको

बिड़ला भवन, बम्बई
५ जून, १९३९

सर सी० पी० रामस्वामी
त्रिवेन्द्रम

यदि राज्य कांग्रेस मेरी सलाह[1] मान ले तो आप उदारतापूर्वक उसका उत्तर देंगे, ऐसी आशा करता हूँ।

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

३३५. तार: अमृतकौरको

बम्बई
५ जून, १९३९

राजकुमारी अमृतकौर
शिमला

तीन दिनसे लिख तक नही पा रहा हूँ। सब ठीक है। प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९१६)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२२५ से भी

१. देखिए पिछला शीर्षक।

३३६. तार : फीरोजशाह दमरीको

बिड़ला भवन, बम्बई
५ जून, १९३९

फीरोजशाह दमरी
भावनगर

दैनिक समाचारपत्र और 'हरिजन' पढ़ो। मुझसे जितना हो सकता है कर रहा हूँ।

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

३३७. पत्र : अकबर हैदरीको

बिड़ला भवन, बम्बई
५ जून, १९३९

प्रिय सर अकबर,

गत माहकी ३० तारीखके पत्र और तारके लिए आपको बहुत-बहुत धन्यवाद।

मैं आर्यसमाजियोंसे अनुरोध कर रहा हूँ कि सविनय अवज्ञा छोड़ दें और आपसे मेरा अनुरोध है कि उन लोगोंकी न्यूनतम माँगको आप स्वीकार कर लें। यह दुर्भाग्यकी बात है कि श्री हॉलिन्ससे हो रही वार्त्ता भंग हो गई।[1] मैं अब भी आपको सुझाव दूँगा कि आप अपनी ओरसे कोई पहल करें। निस्सन्देह नया निर्माण-कार्य अनुमतिसे ही किया जाना चाहिए और यह अनुमति स्थायी नियमों एवं समयके अनुसार ही दी जानी चाहिए। सिर्फ आप ही इस व्यथाका अन्त कर सकते हैं। संवैधानिक सुधारकी प्रतीक्षा क्यों?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८४४) से।

१. देखिए "पत्र: अकबर हैदरीको", पृ० १४२-५।

३३८. पत्र : मीठूबहन पेटिटको

बम्बई
५ जून, १९३९

प्रिय बहन,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा समारोह सफल हो। हम दोनोंका आशीर्वाद तो है ही।

बापूके आशीर्वाद

मीठूबहन पेटिट
कस्तूरबा सेवाश्रम
मरोली

गुजरातीकी माइक्रोफ़िल्म (एम० एम० यू०/२) से।

३३९. पत्र : भोलानाथको

बम्बई
५ जून, १९३९

भाई भोलानाथ,

तुमारा पत्र मिला, उद्देशमें परिवर्तन अब न किया जाय। जयपुर इ० में क्या होता है देखा जाय।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १३७६) से।

३४०. तार : अमृतकौरको

बम्बई
६ जून, १९३९

राजकुमारी अमृतकौर
मैनरविल
शिमला वेस्ट

सीमा-प्रान्तकी यात्रा स्थगित कर दी गई। आठ तारीखकी सुबह सेगाँव पहुँच रहा हूँ। तुम्हारे वहाँ मिलने की आशा करता हूँ।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९१७)से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७२२६ से भी

३४१. तार : मीराबहनको

बम्बई
६ जून, १९३९

मीराबहन
मारफत पोस्ट मास्टर
मनसेहरा

फिर इस महीनेके अन्ततक रुकना पड़ रहा है।[1]

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४४४)से; सौजन्य मीराबहन। जी० एन० १००३९ से भी

१. यह गांधीजी की सीमा-प्रान्तकी यात्राके सन्दर्भमें है, जहाँ वे जानेवाले थे। देखिए पिछला शीर्षक।

३४२. भेंट : कोल्हापुर प्रजा परिषद्के शिष्टमण्डलको

बम्बई
६ जून, १९३९

गांधीजी ने शिष्टमण्डलसे कहा कि यदि किसी रियासतकी जनता उत्तरदायी सरकारकी स्थापनाके लिए सविनय अवज्ञाकी सीधी कार्रवाई करने को सचमुच तैयार हो तो मुझे उसमें कोई आपत्ति नहीं होगी। जो रियासतें तैयार हैं उन्हें मैं सत्याग्रहकी सलाह देता भी रहा हूँ। लेकिन जबतक मुझे तसल्ली न हो जाये कि कोई राज्य उसके लिए पूरी तरहसे तैयार है तबतक मैं उसे ऐसी सलाह नहीं दे सकता। शिष्टमण्डलके सदस्योंने गांधीजी से कई प्रश्न पूछे, जिनका उन्होंने उत्तर दिया। कुछ प्रश्नोत्तर इस प्रकार हैं :

प्रश्न : इस तथ्यके बावजूद कि अभी कोल्हापुर राज्यके अधिकारी परिषद्के कार्यकर्त्ताओंके साथ समझौता-वार्त्ता करने को तैयार नहीं हैं, क्या आपके हाल के ही त्रावणकोर राज्यके सम्बन्धमें दिये गये वक्तव्यको[1] ध्यानमें रखते हुए राज्य-अधिकारियोंके साथ समझौता-वार्त्ता शुरू करनी चाहिए ?

उत्तर : मेरा वक्तव्य केवल त्रावणकोर राज्यके लिए ही है। मैं यह बात औरों से ज्यादा अच्छी तरह जानता हूँ कि किसी भी रियासतके अधिकारी अपनी प्रजाके साथ समझौतेकी बातचीत कभी नहीं करना चाहते। यह बात मैंने राजकोटमें श्री वीरावालासे बातचीतके बाद समझ ली है। समझौता-वार्त्ता सदैव सम्मानजनक तरीकेसे शुरू करनी चाहिए और ऐसी वार्त्ताओंके लिए अनुकूल और उपयुक्त वातावरण होना चाहिए। यदि आपके राज्यमें ऐसा सम्भव न हो तो ज्यादा अच्छा होगा कि आप लोग समयसे पूर्व समझौता-वार्त्ता आरम्भ न करें। त्रावणकोरके सम्बन्धमें मुझे वैसा मौका दिखा और केवल त्रावणकोरके बारेमें मैंने उक्त वक्तव्य जारी किया।

प्र० : उन कार्यकर्त्ताओंको क्या करना चाहिए जिनपर दरबारकी तरफसे नोटिस जारी कर दिये गये हैं कि वे अदालतके सामने उपस्थित हों वरना उनकी जायदाद जब्त कर ली जायेगी।

उत्तर : अदालतके सम्मुख उपस्थित होने में कोई आपत्ति नहीं है। महानता इसीमें होगी कि जायदादको छोड़ दिया जाये और राज्यसे बाहर रहते हुए आदर्शों के लिए काम किया जाये, जैसा कि गैरिबाल्डी, मैजिनी आदि ने किया था। जिस राज्यमें कोई कानून ही न हो उस राज्यमें जायदाद रखना भी पाप है। आप शायद

१. देखिए पृ० ३५०-३।

सोचें कि लोग आपके राज्यसे बाहर रहने का गलत अर्थ लगायेंगे और वे हतोत्साह होंगे। किन्तु यदि आप वास्तवमें अपनी जायदादें खो देते हैं और यदि लोगोंको विश्वास है कि आप ईमानदारीसे उनके लिए कार्य कर रहे हैं तो आपको इस बातका भय नहीं होना चाहिए कि लोग किसी भी तरहसे निरुत्साह होंगे। आपको सदा विश्वास होना चाहिए कि आत्म-बलिदानको जनताका समर्थन प्राप्त रहता है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १०-६-१९३९

३४३. टिप्पणियाँ

नेता अवश्य नेतृत्व करें

कल कच्छके एक कार्यकर्त्ता आये और बोले :

> कच्छके कुछ नेता लोगोंसे कहते फिरते हैं कि अगर आपने सविनय अवज्ञा आन्दोलनको स्थगित न कर दिया होता तो आज उन्हें वहाँ उत्तरदायी सरकार या लगभग वैसा ही राजतन्त्र जरूर मिल गया होता।

मैं इस बातसे इन्कार करता हूँ कि मैंने कच्छमें या किसी भी दूसरी जगह सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द कराया है। मैंने तो केवल अपनी राय दी थी। श्री मूलराजसे, जो मुझसे सलाह-मशविरा करने आये थे, मैंने यह कहा था कि कार्यकर्त्ताओंको अपने जाती अनुभवकी दृष्टिसे ही मेरी रायपर गौर करना चाहिए, और उनके अपने अनुभवसे यदि वह मेल खाती हो तभी वे उसे स्वीकार करें। यह उल्लेखनीय है कि मैंने अपनी राय सार्वजनिक रूपमें नहीं दी थी। अगर वह स्थानीय नेताओंको अग्राह्य थी, तो उसे प्रकाशित करने की कोई जरूरत नहीं थी। दूसरी जगहोंकी तरह कच्छमें अब भी जिम्मेदार नेता अपने खुदके विवेक-बुद्धिके अनुसार काम कर सकते हैं। जबतक नेता मुझ-जैसे व्यक्तिकी सलाहके विपरीत अपनी जिम्मेदारीपर कदम उठाने और वैसा करते हुए गलतियाँ करने की भी हिम्मत नहीं करेंगे, तो हम नेतृत्वके लिए जरूरी गुणोंको कभी विकसित नहीं कर सकते। यहाँ अनुशासन-भंगका कोई प्रश्न नहीं है, क्योंकि मैं कहीं भी सक्रिय सूत्र-सचालन नहीं कर रहा हूँ। जब मुझसे पूछा जाता है, तब मैं बतौर एक विशेषज्ञके सलाह-भर दे देता हूँ। जो लोग मुझसे सलाह लेने आते हैं यदि वे लोग केवल इस कारण अपने निर्णयको दबायेंगे क्योंकि वह मेरी रायके विपरीत पड़ता है —खासतौर पर तब जब कि मेरी राय स्थानीय स्थितिकी प्रत्यक्ष जानकारीपर आधारित नहीं है— तो वे खुद अपने साथ और जिनका वे नेतृत्व करते हैं उनके साथ भी अन्याय करेंगे।

फिर जयपुर

जयपुरमें बहुत ही सुस्तीसे काम लिया जा रहा है। अखबारोंमें यह प्रकाशित हुआ था कि दरबार और प्रजाके बीच समझौता होनेवाला है और सेठ जमना-

लालजी तथा उनके साथी कार्यकर्त्ताओंको रिहा कर दिया जायेगा। जिस बातपर झगड़ा है वह तो बहुत ही मामूली मालूम पड़ती है। केवल नागरिक स्वाधीनताकी रक्षाके लिए ही वहाँ सविनय अवज्ञा करने का निश्चय किया गया था। उसका सहारा तभी लिया गया जबकि प्रजा मण्डल द्वारा लोगोंको वैध तरीकेसे राज्यके अन्दर स्थानीय उत्तरदायी शासनके लिए आन्दोलन करने की शिक्षा देने के अधिकार तकपर आपत्ति की गई। कुछ समय पूर्व दरबारकी ओरसे एक विज्ञप्ति निकली थी, जिसमें प्रजा मण्डलको मान्यता देने की शर्तें दी हुई थी। दरबारने चाहा होता तो निश्चय ही उनको ऐसे रूपमें रखा जा सकता था जिससे सविनय अवज्ञा आन्दोलनके नेता उन्हें मंजूर कर लेते। उदाहरणके लिए, यह शर्त कि स्थानीय संघका कोई पदाधिकारी ऐसा न होगा जो राज्यसे बाहर किसी राजनीतिक संस्थाका भी सदस्य हो, नाहक खीज पैदा करनेवाली मालूम पड़ती है। भला सेठ जमनालालजी को इस बिनापर प्रजा मण्डलका अध्यक्ष बनने के अयोग्य क्यों करार दिया जाये कि वे राष्ट्रीय कांग्रेसकी कार्य-समितिके सदस्य हैं? या खास उन्हीकी खातिर यह शर्त रखी गई है? इसका स्पष्टीकरण आवश्यक है। और भी ऐसी शर्तें हैं जिनके स्पष्टीकरणकी आवश्यकता है। आखिरी दो शर्तें ये हैं :

> १. मण्डल श्रीमान् महाराजा साहब बहादुर द्वारा स्थापित विधानके मातहत समय-समयपर उठ खड़ी होनेवाली जयपुर राज्यकी प्रजाकी आकांक्षाओं और शिकायतोंको उचित माध्यमसे पेश करने का उत्तरदायित्व लेगा; और
>
> २. जयपुर राज्यके अधिवासी लोग ही मण्डलके सदस्य हो सकेंगे।

ये दोनो ही शर्तें अस्पष्ट हैं। भला जो राज्य सुधार लागू करने के लिए तैयार है, उसमें आगे के सुधारोंकी हिमायत करने की आजादी प्रजाको क्यों न हो? लेकिन आखिरीसे पहलेवाली शर्त तो, मालूम पड़ता है, इस स्वाभाविक अधिकारपर बन्दिश लगाने के ही लिए है। और 'अधिवासी' शब्द तो ऐसा खतरनाक कानूनी शब्द है कि जिसका राजनीतिक क्षेत्रमें कोई उपयोग नही है। इसके बजाय अधिक प्रचलित 'निवासी' शब्दका प्रयोग क्यों न हो?

बम्बई, ७ जून, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १०-६-१९३९

३४४. पत्र : सत्यानन्दको

सेगाँव, वर्धा
८ जून, १९३९

प्रिय सत्यानन्द,[1]

जब-कभी मुझे अवसर मिले, तब पढ सकूँ, इस खयालसे प्यारेलालने बहुत-से पत्र मेरे लिए सँभालकर रखे थे। इनमें अभी-अभी मुझे तुम्हारा ३१ मार्चका पत्र मिला है। तुम्हारा पत्र होने-भरसे उसके मजमूनको अत्यधिक आतुरतासे पढ़ गया।

तुम वियना गये थे, यह मुझे मालूम नही था। आपरेशन किस चीजका था? क्या वह सफल नही रहा? वियनाके शल्य-चिकित्सोंकी जितनी प्रशंसा की जाती है, वह मेरी समझमें नही आई है। यह सब तो मै ऐसे ही लिख गया। तुम्हारी अक्षमता स्थायी नही है, ऐसी आशा करता हूँ।

अब तुम्हारे उठाये उस मुख्य प्रश्नकी बात करता हूँ। 'गीता' का मेरा अध्ययन और अहिंसाकी व्याख्या तुम्हारे अध्ययन और व्याख्यासे अलग है। मैं यह नही मानता कि युद्धमें बिना क्रोधके या हत्या-कार्यमें प्राप्त होनेवाले एक प्रकारके आनन्दके बगैर हत्या की जा सकती है। मैं विशुद्ध अहिंसामें विश्वास करता हूँ, इसलिए मै यह जानने की कोशिश कर रहा हूँ कि भारतका कर्त्तव्य क्या है। राष्ट्रीय समाधानसे मैं भाग रहा हूँ। मैं चर्चा तो करता हूँ, पर किसी निर्णयपर नही पहुँच पाता। हाँ, मेरा व्यक्तिगत आचरण निर्धारित है। लेकिन मै तुम्हारी इस बातसे सहमत हूँ कि राष्ट्रीय आचरण इसके ठीक विपरीत भी हो सकता है। अभी तो मेरी मन.स्थिति कार्य-समितिसे यह कह देने की है कि वह खुद ही निर्णय करे। ईश्वरने मुझे कांग्रेसकी चवन्निया सदस्यता भी छोड़ देने की प्रेरणा दी, यह अकारण नही था। इसलिए मुझपर किसी तरहकी राय देनेका नैतिक बन्धन नही है। साथ ही यदि मेरी अन्तरात्माका आदेश हुआ तो मै अपनी राय जाहिर करने में हिचकूँगा भी नही। अभी तो मैं प्रभुसे राह दिखाने की प्रार्थना कर रहा हूँ।

श्रीमती स्टोक्स कैसी है? बच्चे क्या कर रहे है? तुम कितने दिन बाहर रहे?

महादेव अस्वस्थ था, यह तो तुम्हें शायद मालूम ही होगा। अब बिलकुल ठीक है और मेरे साथ है। प्यारेलाल अपने दाँतोंका इलाज करवाने बम्बई ही रुक गया।

१. एस० ई० स्टोक्स, एक ईसाई मिशनरी, समाज-सुधारक और सी० एफ० एन्ड्रूयूजके निकट सहयोगी; जन्मसे अमेरिकी, जो भारतमें रहने के कारण ब्रिटिश प्रजा बन गये; एक भारतीय ईसाईसे विवाह कर शिमलाके निकट कोटगढमें बस गये; कांग्रेसके कार्यकर्त्ता; १९२१ में गिरफ्तार भी हुए थे।

हम सब २१ तारीखको वापस बम्बई चले जायेंगे।
स्नेह।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

३४५. पत्र: नरहरि द्वा० परीखको

सेगाँव
८ जून, १९३९

चि० नरहरि,

अमतुलबहन मुसलमान स्त्रियोंके कार्यमें फिलहाल वहाँ व्यस्त दिखाई देती है। उसका मार्ग-दर्शन करना और उसे जो मदद दी जा सके सो देना। पैसा तो वह स्वयं ही लाई है और वहाँ देगी भी। लेकिन पैसेके अभावमें काम नहीं रुकना चाहिए। पैसा या तो सरदार देंगे या मैं। सरदारके साथ मृदुलाबहन[1] बात करनेवाली है।

रामजीभाईसे मैंने कह दिया है कि यदि वह तुमपर भरोसा नहीं कर सकता तो मेरी ओरसे मार्ग-दर्शनकी उम्मीद न रखे।

उसका पत्र साथमें है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

हम २२ तारीखको बम्बई पहुँचेंगे।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९११६)से।

३४६. पत्र: कृष्णचन्द्रको

सेगाँव
८ जून, १९३९

चि० कृष्णचंद्र,

तुमको मुंबईसे तो कुछ लिख न सका। आज सेगांव आ गये। प्यारेलाल मंजुलाकी सेवाके लिये और अपने दाँतके लिये ठहर गया है। हम ता० २० को मुंबई वापस जाते है। वहाँसे शायद १ ली जुलाईको सरहद।

तुमको मैंने जो लिखा था[2] वह दोष निकालने के लिये नहीं। मैंने तो मेरे निजी भाव प्रगट करने के ही लिये लि[खा] था। मेरे साथ रहने का लोभ

१. मृदुला साराभाई
२. देखिए पृ० ३२५।

कोई बूरी चा[ह] तो है ही नही। हैं, ज[ब] ऐसा लोभ सेवामें हानिकर होवे तब सोचना पडता है। तुमारे बारेमें तो ऐसा कुछ था ही नही।

बालकृष्णको आराम रहे तो वहीं रहना है। बलवंतसिंह कहते हैं जब लगे तब पंचगनी जा सकते हैं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३१८)से।

३४७. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

सेगाँव, वर्धा
९ जून, १९३९

प्रिय सतीश बाबू,

आपका पत्र और साथके कागज पढ़कर अच्छा नहीं लगा। लोगोंमें कुछ हजार रुपये बाँट देना अन्तरात्माको झूठी सांत्वना देना होगा। आप जो काम दे सकते हैं वह सिर्फ धोखा होगा, क्योंकि लोग केवल रंगूनी चावल खायेंगे। हेमप्रभा थोड़े-से लोगोंके लिए अस्थायी किस्मके काम निकालने के पक्षमें नहीं बल्कि मिलके चावल और रंगूनी चावलको खत्म कर देने के लिए आन्दोलन चलाने के पक्षमें है। इस उद्देश्यसे आपको सुभाष बाबू, डॉ० राय और मुख्य-मन्त्रीसे मिलना चाहिए। जरूरत पड़ने पर अन्य मन्त्रियोंसे मिलने में भी संकोच मत कीजिए। आपको उनके सामने ग्रामवासियोंकी अवस्थाका सही चित्र पेश करके उनके कष्टोंका कारण बताना चाहिए। इतने ही जोरदार ढंगसे आप अपना समाधान भी पेश कीजिए। ऐसा होने पर आप शायद पायेंगे कि सभी पक्षोंने इस कार्यको अपना बना लिया है और इस तरह आपने इस पेचीदा प्रश्नको बिना किसी विशेष कठिनाईके हल कर लिया है। अगर ऐसा नहीं होता है तो भी यही माना जायेगा कि जो एकमात्र उपाय सम्भव था उसे आजमाकर आपने देख लिया। आपका निदान बिलकुल निर्दोष और उपाय सभी तरहसे पूर्ण होना चाहिए। क्या आप ग्रामवासियोंको माचिस बनाने की क्रियासे सम्बन्धित कोई काम, सड़क-निर्माण, तालाबकी खुदाई या सार्वजनिक उपयोगका कोई और काम दे सकते हैं?

और ग्रामीण लोग कौन हैं? अगर वे मुसलमान हैं तो आपका काम ज्यादा आसान रहेगा। अगर मेरा विचार आपको ठीक न लगे और आपको राहत-कार्य आरम्भ करने के लिए धनकी आवश्यकता हो तो आपको मारवाड़ी राहत समिति और घनश्यामदासजीसे बात करनी चाहिए।

हेमप्रभाको बता दीजिए कि अन्नदाके बारेमें उसके भेजे कागजात मैं पढ़ गया। उसे जो-कुछ भी कहना है, अन्नदाके पास उनमें से हरएकका उत्तर है।

स्नेह।

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

३४८. पत्र : विनोद कानूनगोको[1]

[९ जून, १९३९ या उसके पश्चात्][2]

असन्दिग्ध रूपसे अनुचित नियुक्तियोंके बारेमे मैं क्या कर सकता हूँ? कार्य-समितिके सामने यदि इसकी ठीक तरह शिकायत की जाये तो शायद कुछ सम्भव हो। जहाँ लोकमत भ्रान्तिपूर्ण और अस्तित्वहीन हो, वहाँ तुमने जो-कुछ लिखा है वैसा ही होगा।

तुम्हारा,

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

३४९. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव
१० जून, १९३९

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा तार न मिलने के कारण मैं तुम्हारी इन्कारीके लिए तैयार हो चुका था। हालाँकि कल शामको तुम्हारा आना निश्चित मानकर हम प्रतीक्षा कर रहे थे और मैंने तुम्हारे लिए हर तरहकी तैयारी कर ली थी, लेकिन तुम्हारे पत्रसे यह स्पष्ट हो गया कि तुमने यहाँ न आकर अच्छा ही किया है। यह इस कारण नही कि मेरे पास तुम्हारे लिए कोई काम नही है, बल्कि वहाँका काम तुम्हारे लिए सोचे गये यहाँके कामसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण है; और फिर वह भी तो मेरा ही काम है। तुम्हारे लिए ज्यादा बेहतर होगा कि अगस्तमें तुम मेरे पास रहो। अगस्तमें मै सीमाप्रान्तसे लौट आने की आशा करता हूँ।

जवाहरलाल आकर मुझे ले ही न जाये तबतक मैं कश्मीर नही जाऊँगा।

मैं चाहता हूँ कि तुम यह सोचना बन्द कर दो कि मैंने तुम्हें गलत समझा है। सचाई चाहे जो भी हो, तुम्हें खुश रहना ही चाहिए।

स्नेह।

तानाशाह

१ और २. यह पत्र विनोद कानूनगो और गुरुचन्द्र दासके ९ जूनके एक संयुक्त पत्रके जवाबमें लिखा गया था। उस पत्रमें उन्होंने कुछ लोगोंके उड़ीसा प्रदेश कांग्रेस समितिके निरीक्षकके पदोंपर नियुक्त किये जानेपर आपत्ति प्रकट की थी।

[पुनश्च :]

शारदा आज सूरतसे आ गई।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९१८) से, सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७२२७ से भी

३५०. शराबबन्दीका अर्थ

बम्बईके आर्चबिशपने एक पत्र[1] तथा अपने उस भाषणकी प्रति मेरे पास भेजने की कृपा की है जो उन्होंने शराबबन्दीके विरुद्ध रोटरी क्लबमें दिया था। मैंने उन दोनोंको उसी आदर और ध्यानसे पढ़ा है, जिसके कि आर्चबिशप साहब अधिकारी हैं।

आर्चबिशपका पत्र और भाषण पढने से मुझे एक भूल दिखाई दी है जिसके लिए मैं ही मुख्य रूपसे जिम्मेवार हूँ। शराबके व्यापारके सम्बन्धमें बम्बई सरकार या अन्य प्रान्तीय कांग्रेसी सरकारें जो कदम उठा रही है, उसे शराबबन्दीका नाम देना गलत है। दरअसल प्रान्तीय सरकारें जो-कुछ कर रही है, वह शराब पीने पर रोक नही है। वे तो सिर्फ शराबकी उन दुकानोको बन्द कर रही है, जो पूर्णतः उनके नियन्त्रणमें हैं। शराबके दुकानदारोंको जो कानूनी संरक्षण प्राप्त है, वह सिर्फ एक सालके लिए होता है, जो उन्हें हर साल ठेकेकी बोलीके समय दिया जाता है। इसके अलावा उन्हें और कोई संरक्षण नही मिलता। हरएक ठेकेदार जानता है कि बहुत मुमकिन है कि अगले साल उसे ठेका न मिले। अगर उसके पास देशी शराब या ताड़ीका ठेका है, तो बहुत मुमकिन है कि हर साल होनेवाली ठेकेकी नीलामीमें कोई उससे ज्यादा बोली बोलकर ठेका ले ले। इसलिए शराबके ठेकेदारोका यह कहना कि उनके हित नष्ट किये जा रहे है, गलत है। ठेकेदार लाइसेंससे सिर्फ एक सालके लिए बँधा हुआ है, और एक सालका हित भी उन सख्त शर्तोंके पालनपर निर्भर करता है, जिनसे कानून द्वारा वे बँधे हुए हैं। इसलिए मेरा दावा है कि शराबके ठेके बन्द करने का कानून "सार्वजनिक हितके लिए योग्य अधिकारियों द्वारा बनाया और घोषित किया गया एक बुद्धिसम्मत अध्यादेश है।" सरकार जो-कुछ करती है, वह महज इतना ही कि वह शराबीके सामनेसे शराबका प्रलोभन और शराब पीने की सुविधाको हटा लेती है, जो उसकी रायमें, सिवा औषधिके रूपमें, हानिकारक है।

आर्चबिशप साहब कहते हैं : "मनुष्य शरीर, मन और हृदयसे कानूनमें आस्था रखे . . . इसके लिए यह जरूरी है कि कानून उचित व न्याययुक्त हो" अर्थात् "लाखोकी अन्तरात्मा उसे उचित कहे।" मैं इस बातका समर्थन करने में कोई

१. आर्चबिशप टी० डी० रॉबर्ट्सका १ जूनका पत्र हरिजनके इसी अंकमें अन्यत्र प्रकाशित हुआ था।

कठिनाई नहीं देखता। जिस दृष्टिकोणसे मैं इस प्रश्नको देखता हूँ, उसके अनुसार सरकारके लिए लाखों आदमियोंका दिली समर्थन प्राप्त करने की जरूरत नहीं है। लेकिन मैं मानता हूँ कि संसारमें भारत ही एक ऐसा देश है जहाँ शराब एवं अन्य मादक पदार्थोंके सरकारी व्यापारपर पाबन्दी लगाने का करोड़ों आदमी समर्थन करेंगे। इसके लिए मत लेने की जरूरत ही नहीं है। इस कानूनके समर्थकोंका विधान-सभाओंमें भारी बहुमत ही अनुकूल जनमतका प्रमाण है। मैं आर्चबिशपको इस महान् सुधारके विगत इतिहासकी याद दिलाना चाहता हूँ। देशके पितामह दादाभाई नौरोजीने इसे शुरू किया था। १९२० में यह कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमका अंग बन गया। राजनीतिक सत्ताके अभावमें कांग्रेसने शराब तथा अफीमकी दुकानोंपर धरना देनेका कार्यक्रम बनाया। इस कार्यक्रममें देश-भरमें हजारों स्त्री-पुरुषोंने भाग लिया। सभी समुदायोंने, जिनमें पारसी भी शामिल थे, धरने के कार्यक्रममें भाग लिया। असहयोग आन्दोलनके दिनोंमें भी अधिकारियोंको प्रेरित कर शराबबन्दीका कानून बनवाने की कोशिश की गई। बिना किसी अपवादके सब अधिकारियोंने यही कहा कि आर्थिक कठिनाइयोंके कारण वे यह कानून नहीं बना सकते। किसीने यह नहीं कहा कि जनताको राज्य द्वारा शराब उपलब्ध कराने की व्यवस्था करने की अपेक्षा करने का अधिकार है, और नशाबन्दी कानून जनताके उस अधिकारमें हस्तक्षेप होगा। एक मन्त्रीने तो मुझसे यहाँतक कहा था कि यदि आप शराबबन्दीसे होनेवाली आर्थिक हानिको पूरा करने में मेरी सहायता करें, तो मैं एकदम शराबबन्दी लागू कर दूँगा। यह तो आज सब जानते हैं कि आर्थिक कारणसे ही इस सुधारको लागू नहीं किया गया। दूसरे शब्दोंमें, सरकारी आमदनी बढ़ाने के लिए लोगोंको शराब पीने का लालच दिया गया है। अफीमके व्यापारका काला इतिहास भी इसकी सत्यताका साक्षी है।

जो लोग व्यक्तिगत स्वाधीनताके नामपर बातें करते हैं, वे हिन्दुस्तानको नहीं जानते। किसीको अपनी विषय-वासना तृप्त करने के लिए राज्यसे वेश्या मुहैया करने की सहूलियतें माँगने का जितना अधिकार है, उतना ही अधिकार शराब पीने की सहूलियतें माँगने का है। मुझे उम्मीद है कि जो लोग अपने शराबके मितपान पर गर्व करते हैं, वे इस उदाहरणका बुरा नहीं मानेंगे। इस देशमें हम दुर्व्यसनोंको नियन्त्रणमें रखनेवाले कानूनोंके अभ्यस्त नहीं हैं। पर जर्मनी-जैसे देशमें वेश्यावृत्ति करनेवाली स्त्रियोंको अपने चकलोंके लिए लाइसेंस लेना पड़ता है। मैं नहीं जानता कि उन देशोंमें किस बातपर अधिक नाराजगी प्रकट की जायेगी। वेश्यालयोंके लाइसेंस बन्द करने पर, या शराबखानोंके लाइसेंस बन्द करने पर। जब महिलायें अपने गौरवको समझने लगेंगी, तब वह अपने सतीत्वको बेचने से इन्कार कर देंगी, और वे महिलाएँ, जिन्हें नारी-जातिके सम्मानका खयाल है, कानून-सम्मत व्यभिचारको खत्म कर देने के लिए जमीन-आसमान एक कर देंगी। तब क्या यह कहा जायेगा कि वेश्यागृहोंका लाइसेंस बन्द करने से वेश्याओंको हानि पहुँचेगी, क्योंकि उनके तथा उनके आश्रितोंके गुजारेका एकमात्र साधन यही था?

मेरी दलील यह है कि समाज-सुधारक तबतक अपने प्रचारमें सफल नहीं हो सकते, जबतक कि लाइसेंसशुदा शराबखाने शराबियोको अपनी ओर आकृष्ट करते रहेंगे। यह भी एक विचित्र बात है कि तमाम हिन्दुस्तानमें शराबबन्दीके खिलाफ सिर्फ पारसियोंने ही आवाज उठाई है। वे अपने मितपानपर अभिमान करते हैं और जिसे वे अपने व्यक्तिगत स्वातन्त्र्यपर आक्रमण कहते हैं, उसपर रोष प्रकट करते हैं। उनकी एक यह भी शिकायत है कि यूरोपीयोंको शराब पीने की सहूलियतें दी गई है और इस तरह एशियाइयोके विरुद्ध भेदभावपूर्ण प्रतिबन्ध लगाया गया है। मैं पहले ही पारसियोंसे अपील[1] कर चुका हूँ कि वे अपनी आदतपर विजय प्राप्त करें और अपने सक्रिय सहयोगसे इस महान् सुधारको आगे बढ़ायें। भेदभावपूर्ण प्रतिबन्धके बारेमें मैं एक ही बात कहना चाहता हूँ। और वह यह कि ऐसा प्रतिबन्ध बाहरसे लगाया जाता है। इस मामलेमें तो हम एशियावासी अपनी इच्छासे ही यूरोपीयोकी मर्यादा स्वीकार कर लेते हैं। लेकिन इन्हें भी छूटका परवाना लेना पड़ेगा और नियमोका पाबन्द रहना पड़ेगा। पारसी मित्र यदि चाहते हैं, तो उनके लिए उचित मार्ग यह है कि वे भेद-भाव हटाने के लिए आन्दोलन करें, न कि खुद भी वैसी ही छूट पाने की कोशिश करें।

आर्चबिशपने एक और दलील यह दी है कि यदि शराबबन्दीके जरिये शराबीके आगेसे प्रलोभन हटाने की कोशिशमें फायदेके मुकाबले नुकसान बेहद ज्यादा हो तो फिर नशाबंदीका सुधार हानिकारक है। उनकी यह दलील वजन रखती है। लेकिन यह तो अपनी-अपनी रायका सवाल है कि इस फायदेके लिए जो मूल्य चुकाया जा रहा है वह बेहद अधिक है या नहीं? मैंने यह दिखाने की कोशिश की है कि तमाम आबकारी-नीतिका आधार आमदनी बढ़ाना है, न कि कोई भारी जरूरत पूरी करना। मैं आर्चबिशपसे आबकारी-प्रशासनका इतिहास पढ़ने की प्रार्थना करूँगा। वे यह देखेंगे कि सभी प्रगतिशील विधायकोने इस नीतिकी कठोर निन्दा की है। अगर हम इस इतिहासको अपने सामने रखें, तो हमें मालूम होगा कि जिस महान् सुधारकी हम कोशिश कर रहे हैं, उसके मुकाबले हम बहुत थोड़ा मूल्य दे रहे हैं। और यह साधारण-सा मूल्य भी न देना पड़े, अगर आर्चबिशप तथा प्रभावशाली पारसी मित्र फौजपर होनेवाले भारी खर्चको, जिसे किसी भी तरह उचित नहीं ठहराया जा सकता, कम करने का व्यापक आन्दोलन करें, ताकि समस्त देशमें शराबबन्दी लागू करने के लिए रुपया बच सके। यह एक ऐसा सुधार है, जो बहुत दिन पहले हो जाना चाहिए था। उन्हें बम्बईके मन्त्रियोको बधाई देनी चाहिए कि उन्होने ऐसा कर लगाया जिसे आसानीसे बरदाश्त किया जा सकता है। लेकिन मुझे इस बातमें भी कोई शक नहीं है कि मन्त्रिमण्डल इस करको छोड़ देगा, अगर केन्द्रीय सरकार उसकी मदद करे। अलबत्ता, मन्त्रिमण्डल सुधारको तबतकके लिए टाल नहीं सकता जबतक कि वह अकेला ही केन्द्रीय सरकारसे टक्कर ले रहा है। सब पक्ष सुधारकी

१. देखिए पृ० ३४७-५०।

जरूरतको समझें और केन्द्रीय सरकारसे न्यायकी माँग करें। तब आर्चबिशप साहबने जो तकलीफ बताई है, वह जरा भी न रहेगी।

डॉ० गिल्डरसे[1] एक विचित्र प्रश्न किया गया है। आर्चबिशपके साथ न्याय करने के लिए उनका सवाल उन्हींके शब्दोंमें दे रहा हूँ।

> क्या वे यह मानते हैं कि बहुत-से ऐसे नशे भी हैं, जिनका पीने से कोई सम्बन्ध नहीं है? पियक्कड़पन बुद्धिको हर लेता है और घरोंको नष्ट कर देता है। लेकिन झूठे आदर्शोंका नशा आज सारे राष्ट्रों और संसारको तबाह कर रहा है। फिर क्या डॉ० गिल्डर यह भी मानते हैं कि ऐसा नशा छुतहे रोगोंकी तरह बहुत ज्यादा फैलनेवाला है? वे राष्ट्रोंका आधुनिक इतिहास जानते हैं और इसलिए इससे शायद ही इन्कार करें। तब क्या वे यह बतायेंगे कि क्या भारतवर्ष झूठे आदर्शोंके नशेकी छूतसे सर्वथा मुक्त है?

इसका अर्थ यह हुआ कि सरकार अगर शराबकी दुकानोंका- लाइसेंस बन्द करने के अपने असंदिग्ध अधिकारका प्रयोग करती है, तो यह भी एक झूठा आदर्श है। इससे भी आदमी मदोन्मत्त हो जाता है और डॉ० गिल्डर भी इस नशेके शिकार हैं। यह ठीक है कि संसारमें सब-कुछ सम्भव है, लेकिन मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि पिछली आधी सदीसे राष्ट्र शराबबन्दीकी जो पुकार कर रहा है उसका आधार झूठा, मादक और छूतकी बीमारियोंकी तरह फैलनेवाला आदर्श नहीं हो सकता। जो आदर्श झूठा, मादक और छुतहा हो, वह हमेशा अस्थायी ही होगा।

भाषणके अन्तिम अंशमें मुझे सम्बोधित करके एक सवाल पूछा गया है। करीब छह पंक्तियोंमें ऐसी बातें कही गई हैं, जो असली सवालोंको छूती भी नहीं हैं। दूसरे कथनोंके साथ आर्चबिशपने यह भी कहा है:

> शराबबन्दीके समर्थक इसे एक सम्भव मार्ग न कहकर एकमात्र सम्भव धर्म मानते हैं।

किसीने भी शराबबन्दीको धर्म नहीं कहा है। यह प्रस्तावना बाँधकर आर्चबिशप साहब कहते हैं:

> मुझे आशा है कि अहिंसा और सत्यके धर्मके प्रवर्त्तक इस अन्तिम प्रश्नका बुरा न मानेंगे: क्या अब भी उन्हें यह निश्चय है कि सब धर्म सच्चे हैं?

अगर किसी और व्यक्तिने यह सवाल किया होता तो मैं उसे माफ न करता। लेकिन बम्बईके आर्चबिशप-जैसे कार्य-व्यस्त प्रशासकसे मैं यह उम्मीद नहीं कर सकता कि वे मुझ-जैसे व्यक्तिकी कही हुई सभी बातोंको अच्छी तरह पढ़ेंगे या अपने उद्धरणोंकी सत्यता जानने की कोशिश करेंगे। मैंने जो-कुछ कहा है, उससे मेल खाने के लिए उनका सवाल यह होना चाहिए था: 'क्या गांधीको अब भी

1. बम्बईके स्वास्थ्य और आबकारी मन्त्री डॉ० डी० डी० गिल्डर

विश्वास है कि इस दुनियाके तमाम बड़े धर्म एकसमान सच्चे हैं?' इस संशोधित प्रश्नका मेरा उत्तर यही होगा, 'हाँ, निश्चित रूपसे।' यह जरूर है कि आर्चबिशपने जो विचार प्रतिपादित किये हैं उनसे संशोधित सवालका कोई सम्बन्ध नहीं है।

आर्चबिशपने अपने पत्रमें जो पहेली मेरे सामने रखी है, उसका अलगसे उत्तर देने की भी अब जरूरत नहीं है। जहाँतक मैं जानता हूँ, मन्त्री लोगोंकी आत्मा तनिक भी अशान्त नहीं है। वे किसीको लूट नहीं रहे हैं। सब व्यापारोंकी हालत अस्थिर होती है। शराबके व्यापारकी हालत सभी जगह और भी ज्यादा अस्थिर है। बम्बई सरकार इस बातकी पूरी कोशिश कर रही है कि छोटे-छोटे गरीब व्यापारियोको ऐसी तकलीफोंका सामना न करना पड़े जिन्हें दूर किया जा सकता है।

उनके पत्रमें एक वाक्य है, जिसने मुझे कुछ चिन्तामें डाल दिया है:

> पिछले कुछ महीनोंने मुझे कायल कर दिया है कि बम्बईमें दान-कार्योंको एक जबरदस्त धक्का पहुँचनेवाला है।

आर्चबिशपकी ये सब धारणाएँ भी — मेरा खयाल है, जैसा कि मैं सिद्ध कर चुका हूँ — अप्रमाणित कल्पनाओंपर आश्रित हैं। मैं उनके इस अमर्यादित आरोपका प्रमाण चाहता हूँ। यदि दान-कार्योंको दरअसल धक्का पहुँचने की बात है, जैसा कि कहा गया है, तो मैं उनसे निवेदन करूँगा कि वे मन्त्रियोंके सामने इसके प्रमाण पेश करें। मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि वे जल्दी ही इसका उपाय कर लेंगे।

आर्चबिशपके पत्रका आखिरी अनुच्छेद उनके उच्च पदके सर्वथा योग्य ही है। सिर्फ उसमें एक कमी है कि उन्होंने अपने सहयोगको शर्तोंसे बाँध दिया है।[1] उन्हें और उनके साथियों और शिष्योंको किसी शर्तके पूर्ण रूपसे मद्यपान त्याग देना चाहिए और शराबबन्दीके इस पुण्य कार्यमें हमारी सहायता करनी चाहिए। इस तरह वे कानूनको बनानेवालोंके कामको हलका कर देंगे और इस देशमें, जहाँ लाखों मूक भारतीयोंका अन्तःकरण शराबबन्दीके पक्षमें है और जो देश दरअसल शराबबन्दीका अधिकारी है, शराबके व्यापारके उच्छेदमें सहायता देंगे।

सेगाँव, ११ जून, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १७-६-१९३९

१. आर्चबिशपने कहा था: "...मैं खुशीसे यह वादा करूँगा — और वास्तवमें हजारों पादरियोंने यह वादा किया भी है — कि हमारी मान्यताके अनुसार जिन अवसरोंपर ईश्वरने स्वयं अपने मंदिरमें पीने का आदेश दिया है उनके अलावा और कभी हम मद्यपान नहीं करेंगे

३५१. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१२ जून, १९३९

प्रिय अमृत,

तुम्हारा पत्र मिला।

निस्सन्देह हर बातके लिए तुम्हें माफी है। सच तो यह है कि मैं तुमसे रुष्ट नहीं हूँ। मेरे मनमें तुम्हारे लिए वही प्रेमभाव है। मेरे प्यारका मूल्य ही क्या यदि वह प्रियजनों द्वारा निकाला दिलका गुबार भी न सह सके। मैंने केवल तुम्हारे पत्रोंके बारेमें अपनी प्रतिक्रिया[1] ही लिखी थी। तुम्हारी यहाँ उतनी ही आवश्यकता है जितनी हमेशा थी। तुम मुझे जरा भी बदला हुआ न पाओगी और यदि बदलाव हुआ भी होगा तो पहलेसे अच्छा ही होगा। अब मैं देखूंगा कि मैं तुम्हें जितना मानता था तुम उससे कितनी ज्यादा संवेदनशील हो।

नवीन बम्बईमें अपनी बहनकी सेवा-शुश्रूषा कर रहा है। उसका पता है: मारफत डॉ० शाह, पॉलिक्लिनिक, क्वीन्स रोड, बम्बई।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९१९)से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२२८ से भी

३५२. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१३ जून, १९३९

प्रिय पगली,

मुझे एक ही रोज तुम्हारे दो पत्र मिले। तीन दिनतक तुम्हें पत्र न लिख सकने के कारण मैंने तुम्हें हिन्दीमें तार भेजा है। मुझे आशा है कि उसे समझने में तुम्हें कोई दिक्कत नहीं हुई होगी।

निस्सन्देह मैं . . .[2] को शान्त करने की चेष्टा करूँगा। परन्तु उसे खुश कर पाना बहुत कठिन है। फिर भी मैं अपने ढंगसे प्रयत्न कर रहा हूँ।

१. देखिए पृ० ३२५-६, ३३० और पृ० ३६४।

२. साधन-सूत्रमें नाम अस्पष्ट है।

मैंने सर कैलाशको[1] पत्र लिख दिया है। उस पत्रकी प्रति महादेव इसके साथ भेज देगा।

मैं आशा करता हूँ कि तुम पहलेकी अपेक्षा अब ज्यादा प्रकृतिस्थ हो।

सैयद महमूद और उनके बच्चे सेगाँवमें तीन दिन रहे। वे आज शाम चले गये।

आज अब और नहीं लिखूँगा।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९२०) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७२२९ से भी

३५३. पत्र : अमतुस्सलामको

सेगाँव, वर्धा
१३ जून, १९३९

प्यारी बेटी,[2]

तेरा खत मिला। मैं नहीं जानता कैसे तुझे मैं राजी रखूं। मैंने कह दिया है कि पैसेकी जिम्मेदारी २००० तककी मेरे सर पै है। मैंने यह भी कहा है कि तू कह सकती है कि तू तो मुझे ही पहचानती है लेकिन मुझे अगर सरदार पैसे देवे तो मैं न लूं, ऐसा तो मैंने नहीं कहा न मैं समझा। ऐसी मनाई तो मैं कबूल भी कैसे करुं? मैं कुछ सरदारसे जुदा तो नहीं हूं ना? इतनी सादी चीज समजाने में इतना समय मुझे क्यों देना पड़े? मैंने कहा है कि दवामें मामूली खर्च कर सकती है। अब तो सब साफ है ना? छोटी बातको बड़ी मत बढ़ाओ।

मैं अच्छा हुं।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

डाकमें १४ को पड़ेगा।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२१) से।

१. कैलाशनारायण हक्सर, जम्मू व कश्मीरके महाराजाके निजी सलाहकार। गांधीजी ने हक्सरके अतिथिके रूपमें कश्मीर जाने की योजना बनाई थी। लेकिन यह यात्रा रद्द कर दी गई; देखिए खण्ड ७०, "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", २२-७-१९३९।

२. मूलमें सम्बोधन उर्दू में है।

३५४. भेंट: मैसूर कांग्रेसके प्रतिनिधियोंको[1]

सेगाँव
१३ जून, १९३९

अगर प्रस्तावित सुधार आपको स्वीकार्य नहीं होंगे, जैसा कि आपको भय है, तो आप उनको लागू करने में कोई भाग न लें। लेकिन उनका विरोध करने, न करने के बारेमें आखिरी फैसला आप ही सबसे अच्छा कर सकते हैं। त्रावणकोर-सम्बन्धी वक्तव्यमें[2] मैंने जो-कुछ कहा था, वह पूर्ण रूपसे किसी भी एक रियासतपर लागू नहीं होता। इस वक्तव्यमें मैंने जो सामान्य सिद्धान्त रखा है, उसे आप जरूर समझ लें, और उसके प्रकाशमें फिर जो उचित हो करें। मुझसे यह फैसला करने के लिए न कहें कि मैसूर अब अच्छी तरह सगठित है या नही। आप ही सबसे अच्छे निर्णायक हैं। तथ्य ही स्वयं सम्मतियाँ हैं। अगर आप तैयार हैं तो मैं चाहे जो कहूँ, आप तैयार तो हैं ही।

तैयारी दो प्रकारकी हो सकती है। आप बड़ा भारी प्रदर्शन करके सरकारको बुरी तरह परेशान कर सकते हैं जिसके परिणामस्वरूप या तो उसे गोली चलानी पड़े या लाचार होकर झुकना पड़े। लेकिन मेरी व्याख्याके अनुसार ऐसा प्रदर्शन शायद अहिंसात्मक न हो। मेरी व्याख्या बदल गई हो, यह बात नहीं है। सिर्फ बल देने का थोड़ा-बहुत अन्तर है। मैंने पहले इस खयालसे अहिंसाके मामलेमें शिथिलता बरती कि उससे हिन्दुस्तान अहिंसाके मार्गपर और अधिक प्रगति करेगा। लेकिन मेरी यह आशा पूरी नही हुई। इसी तरह सम्भव है कि जो अहिंसा आप दिखायें, वह प्रभावकारक प्रतीत होती हो, लेकिन वह मनसा, वाचा, कर्मणा शुद्ध न हो। यदि वह अहिंसा शुद्ध नही तो मैं उसे खारिज कर

१. यह भेंट-वार्ता महादेव देसाई के लिखे "द डिसीजन ऐंड आफ्टर-४" (निर्णय और उसके बाद-४) से ली गई है। हिन्दू की रिपोर्टके अनुसार, "मैसूर कांग्रेसके अध्यक्ष एच० सी० दासप्पाने गांधीजी को बताया कि वर्तमान राजनीतिक स्थिति कैसी है, राज्य किन संघर्षोंके दौरसे गुजरा है, सरदार पटेल और कृपलानीके बीच-बचावसे कौन-कौनसे समझौते हुए, किस प्रकार सरकार हालमें इस बातसे ही मुकर गई कि उसके साथ कोई समझौता हुआ था, और किस तरह राज्य कांग्रेसको मजबूर होकर सुधार-समितिसे अलग होना पड़ा। उन्होंने इस बातका भी उल्लेख किया कि सुधार-समिति ने कई तरहके भावी सुधारोंके बारेमें भविष्यवाणियाँ की हैं और वह एक ऐसी बेमानी द्वैध शासन-व्यवस्थाके बारेमें सोच रही है जो बहुत ही निराशाजनक और अस्वीकार्य है। श्री दासप्पा ने कहा: 'सभी परिस्थितियोंको ध्यानमें रखते हुए, संघर्षके बिना उत्तरदायी शासन प्राप्त करना असम्भव है और देश (अर्थात् राज्यकी प्रजा) संघर्षको सर्वथा शान्तिपूर्ण ढंगसे चलाने के लिए तैयार है'।"

२. देखिए पृ० ३५०-२।

दूंगा। मै किसे खारिज नही करूँगा, यह आज नही कह सकता। अभी मै वैदिक ऋषिकी भाषामें ही 'नेति नेति' (यह नही, यह नही) कह सकता हूँ पर मैं अभी यह कहने में असमर्थ हूँ कि 'यही है, यही है'। इसका कारण यह है कि मुझे अभीतक पूर्ण प्रकाश दिखाई नहीं दिया है।[1]

इस वर्गके लोग कहते है कि 'हम हिंसा और अहिंसा दोनोंमें विश्वास रखते है, क्योंकि कभी-कभी हिंसा ही कार्य-सिद्धिका सबसे अच्छा उपाय नजर आती है तब हम उसका सहारा लेते है।' लेकिन मेरे लिए तो साध्य और साधन पर्यायवाची शब्द है। इसलिए जबतक हम अपने उद्देश्यतक नही पहुँच जाते, सत्य और अहिंसा ही हमारे उद्देश्य है। लेकिन राजकोटमें मैंने साधनोंके बारेमें ढील दी थी। मैंने अपनी ही तराजूमें अपनेको तोला और हलका पाया। लेकिन इससे कोई नुकसान नहीं हुआ। क्योंकि ज्यो ही मुझे अपनी गलती मालूम हुई, मैं सँभल गया। मेरा समर्पण कमजोरीकी वजहसे नही था, बल्कि उसमें मेरी शक्तिकी पूर्णता थी। इसका जन्म उस अहिंसासे हुआ, जो मेरी दृष्टिमें सबसे बहादुरका हथियार है, न कि कमजोरका। मै कायरोंको बढावा देने या लोगोंको अहिंसाकी आड़में अपनी कमजोरी छिपाने की सुविधा देने का अपराध नहीं कर सकता।

आप कहेंगे कि हम अहिंसा, सत्याग्रह या सविनय अवज्ञाकी घोषणा नही करेंगे। लेकिन इसका अर्थ यह नही हो जाता कि आप हिंसक, असत्याग्रही या अभद्र अवज्ञाकारी हो गये। लेकिन आप तब कहेंगे, 'हमने गांधीजी के लिखे हुए या 'हरिजन' में लिखे गये सब लेखोंको भली-भाँति पढ़ लिया है और हम इस परिणामपर पहुँचे है कि हमें इन शास्त्रीय बारीकियोंपर बहस नही करनी चाहिए। आप चाहे इसे हिंसा कहें या अहिंसा, हम जो प्रतिरोध कर सकते है, और जिसे हमारे राज्यमें करने के लिए लोग तैयार हैं, वही करेंगे।' अगर आप आगे कुछ और निर्देश चाहते है तो आपको सरदार वल्लभभाई पटेलके पास जाना चाहिए, जो इस आन्दोलनका काम कर रहे है। आप पण्डित जवाहरलालके पास जाइए, जो देशी राज्य प्रजा परिषद्के अध्यक्ष है। मै सत्याग्रहके जनकके नाते बीचमें आता हूँ लेकिन इस समय मै दिवालिया हूँ। मेरी श्रद्धा पहलेसे भी सतेज है, लेकिन मै अबतक पूरा प्रकाश नही पा सका हूँ। मैं त्रावणकोर, राजकोट और कुछ हदतक तालचरको सलाह दे रहा हूँ, क्योंकि मैं उन्हें लगातार सलाह देता रहा हूँ। लेकिन यह उनका काम है कि मै उन्हें भी जो सलाह दे रहा हूँ उसे वे स्वीकार करें या न करें।

१. एक "बीचके रास्ते" का, जो न हिंसा है और न अहिंसा, उल्लेख करते हुए महादेव देसाई बताते हैं: "श्री केसने इसके लिए उपयुक्त शब्द दिया — नॉन-वायलेन्ट कोअर्शन ('अहिंसक दबाव')। उन्होंने अपनी पुस्तकका यही नाम रखा। . . . वास्तवमें भारतमें एक ऐसी विचारधारा है जो इस चीजको खुलेआम स्वीकार करती है और कहती है, 'गांधीजी द्वारा परिभाषित सत्याग्रह हमारे लिए नहीं है। हम तो नॉन-वायलेन्ट कोअर्शन — अहिंसात्मक दबाव — को ही समझ सकते है'।"

लेकिन मैं आपसे कहना चाहूँगा कि आप लोग सरदारसे मिलें, जिनमें नीर-क्षीर-विवेक की अद्भुत क्षमता है। वे मेरी अथवा जवाहरलालकी तरह स्वप्न-द्रष्टा नही है। वीरतामें उनका कोई सानी नही है। यदि उनमें भावुकता नामकी कोई चीज है तो उन्होंने उसे दबा दिया है। एक बार निश्चय कर लेने के बाद उनका मन फौलाद बन जाता है और उसपर किसी तर्कका असर नहीं होता। उनमें एक सैनिकके सभी गुण विद्यमान हैं। यहाँतक कि मैं भी उनसे तर्क-वितर्क नहीं करता, लेकिन इतना जरूर है कि अन्तिम निर्णय वे मुझपर छोड़ देते हैं। वे हमेशा जनताके आदमी रहेंगे। सत्तारूढ़ लोगोंके साथ उनकी नहीं बनती। आप उनसे मिलिए। उन्होंने स्थितिका अध्ययन किया है और वे संभवतः आपको ठोस सुझाव दे सकेंगे। आप योजना जवाहरलाल नेहरूसे लें और ठोस सुझाव सरदारसे।

मुझे मैसूर और मैसूरके लोगोंसे प्यार है। मैं बेल्लूर और हलेबीडूमें रहना पसन्द तो करता हूँ लेकिन मैं केवल सैरके लिए वहाँ नही जा सकता। मैं तभी जा सकता हूँ जब मुझे मेरा कर्त्तव्य वहाँ ले जाये।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-६-१९३९; हिन्दू, १६-६-१९३९ भी

३५५. पत्र : पृथ्वीसिंहको

सेगाँव, वर्धा
१४ जून, १९३९

प्रिय पृथ्वीसिंह,

२७ मईका तुम्हारा पत्र बहुत अच्छा है। इससे पता लगता है कि अहिंसा किस प्रकार अपना कार्य करती है; इसे समझने में तुम्हें कोई दिक्कत नहीं है। ऐसे बहुत-से लोग है जो अहिंसाकी दुहाई तो देते है, परन्तु मैंने जो कदम उठाया है उसको उन्होंने समझा नही है।

तुम्हारी पुस्तकको प्राप्त करने का प्रयास अभी मैंने छोड़ा नहीं है।

राजनीतिक कैदियोंकी रिहाईके प्रयत्न अभी जारी हैं। इस मार्गमें अभी बाधाएँ हैं किन्तु केवल अहिंसक तरीकोंको जाननेवाले लोगोंके लिए तो प्रयत्न मात्रमें ही उनकी सफलता निहित है। और जो बन्दी अहिंसामें विश्वास करते हैं उनके लिए तो जेलके अन्दर या जेलसे बाहरका जीवन बराबर है। वे लोग चाहे कैदमें हों या बाहर, समान रूपसे सेवा ही करते है।

१. यह अनुच्छेद हिन्दू से लिया गया है, जिसमें कहा गया है: "खबर है, मैसूरके दीवान सर मिर्जा इस्माइल ने भी गांधीजी को स्वास्थ्यकी खातिर मैसूर आने का निमन्त्रण दिया है, लेकिन गांधीजी के लिए उसे भी स्वीकार करना सम्भव नहीं हुआ।"

मैं जुलाईके आरम्भमें सीमा-प्रान्त जाने की आशा करता हूँ। उस समय प्यारेलाल एवं महादेव दोनों मेरे साथ होंगे। उनमें से कोई एक तुमसे अवश्य मिलेगा।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६३५) से। सी० डब्ल्यू० २९४६ से भी; सौजन्य : पृथ्वीसिंह

३५६. पत्र : चन्दन पारेखको

सेगाँव, वर्धा
१४ जून, १९३९

चि० चन्दन,

तेरा पत्र मिला। अब तो [अमृतलाल] नानावटी तेरे पास है, इसलिए तुरन्त अच्छी हो जाना।

हरभाईके बारेमें तूने अपनी दूरकी बहनको लिखकर ठीक ही किया। 'घर-शाला' के बारेमें पूरा ब्योरा मिलने पर मुझे लिख भेजना। यदि तू लड़कियोंको फिर पढ़ाने लगेगी तो मुझे निश्चय ही आश्चर्य होगा। इलाज करवाने के लिए यदि अहमदाबाद जाने की जरूरत महसूस हो तो चली जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९५२) से। सौजन्य : सतीश द० कालेलकर

३५७. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

सेगाँव
१४ जून, १९३९

यह बड़े अफसोसकी बात है कि श्री शरतचन्द्र बोस और श्री ललितचन्द्र दासको राजबन्दियोंकी रिहाई-सम्बन्धी सलाहकार समितिसे[2] इसलिए इस्तीफा देना पड़ा, क्योंकि उन्हें लगा कि उनके विचार समितिके अपने दूसरे साथियों और सरकारके विचारोंसे भिन्न हैं और रिहाईकी दिशामें वे आगे नहीं बढ़ सकते। उनके लिए इसके सिवा कोई चारा ही नहीं था। जब यह समिति बनी तो मैंने आशा की

१. "बंगाल पॉलिटिकल प्रिज़नर" (बंगालके राजनीतिक कैदी) शीर्षक लेखसे उद्धृत। साधन-सूत्रके अनुसार, बंगाल विधान-सभामें विपक्षके नेता शरतचन्द्र बोसके ३१-५-१९३९ के पत्रको प्रकाशनार्थ समाचार-पत्रोंको देते हुए यह वक्तव्य जारी किया गया था; देखिए परिशिष्ट १२।

२. बंगाल सरकार द्वारा नियुक्त इस समितिने दिसम्बर, १९३८ से काम करना शुरू किया था।

थी कि ऐसी कोई संयुक्त योजना बन जायेगी जिससे कि राजवन्दियोंकी रिहाईका मामला अखिल भारतीय आधारपर और निर्दलीय तरीकेसे हल हो जायेगा। प्रान्तीय स्वायत्तताके फलस्वरूप कमसे-कम इतना तो होना ही चाहिए था कि हिन्दुस्तान-भरके सब राजबन्दी रिहा हो जाते, खासकर तब जब कि सभी कैदियोंने नहीं, तो भी उनमें से अधिकांशने अहिंसामें अपने विश्वासको घोषित कर दिया है। अभीतक जितनी रिहाइयाँ हुईं उन्होंने यह बतला दिया है कि देशमें जिस प्रकारका उग्र आतंकवाद देखा जा चुका है, उसके पुनरुज्जीवित होने का कोई खतरा नहीं है। इसलिए मैं तो यह सुझाऊँगा कि श्री शरतचन्द्र बोस और श्री ललितचन्द्र दासको उक्त समितिकी सदस्यताके लिए फिरसे निमन्त्रित किया जाये और कोई ऐसा तरीका ढूँढ़ा जाये जिससे कि उनके दृष्टिकोणका समाधान हो जाये। जो मामला आपसमें तय किया जा सकता है, उसके लिए फिरसे कोई तूफानी आन्दोलन शुरू करना पड़े तो यह दुर्भाग्यकी ही बात होगी। इसलिए मैं उम्मीद करता हूँ कि राजवन्दियोंकी रिहाईके इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मामलेमें समझौतेकी जो नीति अपनाई गई है, उसे न छोड़ने की बंगाल-सरकारसे मेरी अपील[1] बेकार न जायेगी। उसके लिए यही काफी होना चाहिए कि बन्दियोंने अहिंसामें अपना विश्वास घोषित कर दिया है। मैं आशा करता हूँ कि राजवन्दी अधीर न होंगे और भूख-हड़ताल या ऐसी बातका सहारा लेकर रिहाईके मित्रतापूर्ण प्रयत्नोंमें कोई रुकावट नहीं डालेंगे। मैं उनसे कहूँगा कि बुद्धिमानीके साथ अबतक उन्होंने जो भव्य संयम रखा है, उसे अब भी कायम रखें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-६-१९३९

३५८. तार : मीराबहनको

वर्धागंज

[१५ जून, १९३९][2]

मीराबाई
मारफत बिड़ला भवन
नई दिल्ली

अठारहको सेगाँव आ जाओ या इक्कीसको बम्बई पहुँचो।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४४०) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० १००३५ से भी

१. देखिए खण्ड ६७, पृ० २२-३ और पृ० ४३९-४२; और खण्ड ६६, पृ० ३४०-२।

२. साधन-सूत्रमें डाक-मुहर बहुत अस्पष्ट है। तथापि देखिए अगला शीर्षक।

३५९. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१५ जून, १९३९

प्रिय पगली,

पता नहीं मैंने तुमसे अपने डेरीफार्मवाले मित्र सरदार दातारसिंहको पत्र लिखकर यह पूछने को कहा या नहीं कि क्या अब वह बलवन्तसिंहको अपनी लाहौरके पासकी दुग्धशालामें रखने और उसे उचित प्रशिक्षण देने को तैयार है। तुम्हें याद होगा, उन्होंने कहा था कि वे, जैसे ही लाहौरमें अपनी दुग्धशालाकी शाखाकी ठीक व्यवस्था कर लेंगे वैसे ही वे उसे अपने यहाँ रख लेंगे। तुम उन्हें बलवन्तसिंहके बारेमें सब-कुछ बता देना — यह कि उसे मवेशियोंकी सार-सँभाल करने का काफी व्यावहारिक अनुभव है, किन्तु उसे अंग्रेजीका कोई ज्ञान नहीं है। वह खुरजाका रहनेवाला है, अतः उसकी मातृभाषा हिन्दी है। अब उसे कुछकुछ उर्दू आने लगी है।

लीलावती[1] मैट्रिक करने के लिए आज बम्बई गई है। वह हिचकिचा रही थी, किन्तु मैंने उससे कहा कि इसे कर लेना ही सर्वोत्तम होगा। शारदा आ गई है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह ठीक चल रही है। वह शायद कुछ महीनेतक सेगाँवमें ही रहेगी। शंकरन् पूरी तरह ठीक नहीं है।

मीरा ऊँचाई पर रहने के कारण बीमार पड़ गई जान पड़ती है और कल बिड़ला भवन पहुँचनेवाली है। मैं उसे लिख रहा हूँ कि वह मुझसे बम्बईमें मिले।[2]

मैं आशा करता हूँ कि तुम ठीक-ठाक हो और शिक्षा-सम्मेलनमें तुम्हारा समय अच्छा गुजरा होगा।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९२१) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७२३० से भी

१. लीलावती आसर
२. देखिए पिछला शीर्षक।

३६०. पत्र : कपिलराय पारेखको

सेगाँव, वर्धा
१५ जून, १९३९

भाई कपिलराय,

तुम्हारा पत्र मिला। हमें उम्मीद करनी चाहिए कि बिहारमें पक्षपात नही होगा। लेकिन मैं बीचमें नही पड़ सकता। बम्बईमें तो तुम्हें ही मुंशीजी से सीधा सम्पर्क स्थापित करना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

श्री कपिलराय पारेख
गोरजीका बँगला
रायखड, अहमदाबाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९८२८) से। सौजन्य : कपिलराय पारेख

३६१. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

१५ जून, १९३९

नये करसे कितने पारसी प्रभावित होंगे? यह बात जो कही जाती है कि इससे दान-संस्थाओंको बहुत धक्का पहुँचेगा, उसमें कितना बल है? मैं देखता हूँ कि इसके आँकड़े तो तुम्हारे यहाँसे ही मिल सकते हैं। आँकड़े निकलवाना। इस दलीलका उपयुक्त उत्तर देना चाहिए। और यदि इसका हमारे पास कोई जवाब न हो तो हमें भूल सुधारनी चाहिए।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १७३

३६२. पत्र : अमतुस्सलामको

सेगांव, वर्धा
१५ जून, १९३९

प्यारी बेटी,[1]

तेरा खत मिला है। सब-कुछ अच्छा हो जाएगा। धीरज रख। पैसाकी फिकर मत कर। मु० लीगवालों से मिला कर। जब तुझे खाने को कहा तो खाना चाहिये था। दिलमें भी उन लोगोंसे खफा नही होना। हमारा तो काम ही खादी-प्रचार है। खादी पहनने की शर्त नही भूलना। भले अपने लिये बारीक काते और बारीक व रंगीन खादी बनवाये। अगर खादी पहनने की शर्तको हम छोड़ें तो हम हार जाये।

तबीयत अच्छी रखना।

शायद बा और कानम[2] मेरे सरहद जाने पर वहाँ आवेंगे। साथका लक्ष्मीदास भाईको।[3]

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०२) से

३६३. एक पत्र

१६ जून, १९३९

यदि अहिंसा जीवनके सभी क्षेत्रोंमें लागू नही होती तो मेरे लिए इसका कोई महत्त्व नही होगा। इसलिए मेरे प्रयोगोंमें यह उद्देश्य तो सामने रहना ही चाहिए। मुझे हजार बार भी सुधार करना पड़े तो भी मैं एक ऐसे प्रयोगको छोड़नेवाला नहीं जिसमें प्रत्यक्ष परिणाम उपलब्ध हो चुके हों। यह सांसारिक जीवन शरीर और आत्मा, जीवात्मा और भौतिक तत्त्वोंका सम्मिश्रण है। हमें आत्माकी जानकारी केवल शरीरके माध्यमसे ही है, और इसीलिए हम अपने दैनिक जीवनमें अहिंसाके प्रयोगके जरिये ही सच्ची अहिंसाको जान सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य : नारायण देसाई

१. मूल में सम्बोधन उर्दू में है।

२. रामदास गांधीके पुत्र, जो "काना" और "कानो" नाम से भी जाने जाते थे

३. लक्ष्मीदास आसर

३६४. पत्र : देवदास गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१६ जून, १९३९

चि० देवदास,

तेरे ३० तारीखके पत्रको मैंने सँभालकर रख लिया था, उसका उत्तर आज देता हूँ। मेरे प्रति जवाहरलालका प्रेम न रहे, ऐसा हो ही नहीं सकता। लेकिन जहाँ कुछ कहना कर्त्तव्य हो जाये वहाँ और किया ही क्या जा सकता है? जहाँ कुछ कहना जरूरी हो वहाँ यदि किसी व्यक्तिके कारण वह न कहा जाये तो वह असत्यके समान होगा। मैं जवाहरलालकी खातिर अपनी कलमपर काफी अंकुश रखता हूँ। ज० के साथ मैंने लम्बी बातचीत की थी और उसे तुम्हारी राय भी बताई थी। ऐसा कहा जा सकता है कि उस बातचीतके परिणामस्वरूप हम दोनों एक-दूसरेको ज्यादा समझने लगे हैं। बाकी मतभेद तो है ही। हम एक-दूसरेको सहन करेंगे। तू भी वैसा ही करना। और समय अपना काम करेगा।

मेरी मण्डलीके बारेमें तेरे जो विचार हैं सो मैं समझता हूँ। इन लोगोंके साथ तू मुझे मेरी इच्छानुसार व्यवहार करने देना।

प्रोग्राम यह है। २१ तारीख [जूनसे] १ जुलाई [तक] बम्बई, बादमें बहुत सम्भव है सीमा-प्रान्त।

बा और कानम बहुत करके हरिजन आश्रम, साबरमती जायेंगे। लीलावती आज[1] पढ़ने के लिए बम्बई गई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०३१) से।

१. लेकिन देखिए "पत्र: अमृतकौरको", पृ० ३७७।

३६५. पत्र : कृष्णचन्द्रको

सेगांव, वर्धा
१६ जून, १९३९

चि० कृष्णचन्द्र,

तुमारे सब खत पढ गया हूं। बालकृष्णको खोराक इ० अनुकूल होने के बाद ही पता चलेगा कि वहाकी हवा अनुकूल होगी या नही। वाइमें[1] पानी कम कुछ आता है। दूध शायद वहा अच्छा मिलता है। वाइ जाकर रहना अनुकूल हो तो वहां जा सकते हो। कहा तो जाता है कि पंचगनीमें पानी आता है तो भी क्षयके रोगियोको अच्छा रहता है। हमारे तो बालकृष्णके अनुभवसे चलना है। अगर वहां अच्छा नही रहा तो यही आ जाना। हम लोग २० तारीखको मुबई जाते है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३१९) से।

३६६. पत्र : अमृतकौरको

सेगांव, वर्धा
१७ जून, १९३९

चि० अमृत,

हां, मै जालीम तो हूं, लेकिन अहिंसक। मेरा जुल्म भी प्रेमसे पैदा होता है। इसलिए मजलुमका भला ही होता है ना?[2]

मै आशा करता हूँ कि मेरे तारका अर्थ समझने में तुम्हें कोई कठिनाई नही हुई। मैंने तार जान-बूझकर हिन्दीमें लिखा था, ताकि तुम्हारे अलावा उसे कोई न समझ सके। हिन्दीमें तार भेजने की यह मेरी पहली या दूसरी कोशिश थी। यदि ऐसा करना जुल्म था तो यह प्रेमपूर्ण जुल्म था।

बुनियादी शिक्षाके बारेमें मुस्लिम लीगके प्रस्तावका मसौदा[3] आँख खोलने-वाला है।

१. महाराष्ट्र में पंचगनी तहसील का एक गाँव

२. यह अनुच्छेद मूलमें भी हिन्दीमें है।

३. बुनियादी तालीमकी वर्धा योजनाको रद्द करनेवाला प्रस्ताव २ और ३ जुलाईको बम्बईमें हुई लीगकी कार्य-समितिकी बैठक में पास किया गया था।

यदि मैं सीमा-प्रान्त जाने में सफल हो सका, तो तुम मेरी वापसी यात्राके दौरान किसी स्टेशनपर मेरे साथ हो जाना और अपनी लाइनपर मेरे साथ तीसरे दर्जेमें यात्रा करने का आनन्द उठाना!

मैं . . .[1] का सन्देश समझता हूँ। मैं उसे लिख रहा हूँ।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९२२) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२३१ से भी

३६७. पत्र: अतुलानन्द चक्रवर्तीको

सेगाँव, वर्धा
१७ जून, १९३९

प्रिय अतुलानन्द,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं कोई सुझाव नहीं दे सकता। मेरा दिमाग एक भिन्न दिशामें ही चलता है। यह रोग इतनी जड़ पकड़ चुका है कि किताबें इसमें कोई मदद नहीं कर सकतीं। कोई बड़ी कारंवाई आवश्यक है, लेकिन वह क्या हो, यह मैं अभीतक नहीं जानता। काश, तुम इस अत्यन्त स्पष्ट बातको देख सको![2]

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्री अतुलानन्द चक्रवर्ती
१६६/ए, जतीन दास रोड
डाकखाना कालीघाट
कलकत्ता

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४८१) से। सौजन्य: ए० के० सेन।

१. साधन-सूत्रमें नाम पढ़ा नहीं जा सका।

२. लुई फिशरने अपनी पुस्तक द लाइफ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३३८ पर इस पत्रके एक अंशका उद्धृत करते हुए लिखा है: "अतुलानन्दने हिन्दू-मुस्लिम तनावकी तरफ सारा ध्यान देना जारी रखा और उसके बारेमें एक पुस्तक लिखने का सुझाव दिया।" देखिए खण्ड ६६, पृ० ९४-५

३६८. पत्र : वनमाला परीखको

सेगाँव, वर्धा
१७ जून, १९३९

चि० वनमाला,

तेरी सहेली मेरी बगलमें बैठी है और मैंने उससे तेरे विनोदी स्वभावकी बहुत बातें सुनी हैं। तू अपने इस विनोदी स्वभावमें उत्तरोत्तर वृद्धि कर रही है न? तेरा पत्र मिला। जरा बता तो तेरी यह सहेली कौन हो सकती है? उर्दू सुन्दर कर लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७८७) से

३६९. एक पत्र

१८ जून, १९३९

प्रिय मित्र,

मैं आपके गत १५ तारीखके कृपा-पत्रका उत्तर देने में यह सोचकर विलम्ब करता रहा कि शायद और ज्यादा उपयोगी उत्तर लिख सकूँ। किन्तु मैं इससे ज्यादा कुछ नहीं कह सकता कि आप अपनी समझके अनुसार कार्य करें। वहाँ की स्थितिके बारेमें आपको ही निर्णय करना चाहिए। यह देखते हुए कि हमारी अहिंसा केवल सतही ढंगकी सिद्ध हुई है, मैं आपके विचारार्थ कोई सुझाव देने का साहस नहीं कर सकता। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि अहिंसामें मेरी आस्थामें कुछ कमी आ गई है।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य : नारायण देसाई

३७०. पत्र : एस० सत्यमूर्तिको

सेगाँव, वर्धा
१८ जून, १९३९

प्रिय सत्यमूर्ति,

मैं तुमसे बिलकुल सहमत हूँ कि कांग्रेस-जन किसी और राजनीतिक संस्थासे सम्बन्ध नहीं रख सकते। लेकिन इस हदतक तो कोई भी नहीं जायेगा। तुम्हारे अन्य सुझाव भी विचारणीय हैं। मेरा प्रभाव सीमित ही है, जैसा कि इसे होना भी चाहिए। मैं संस्थाके कार्य-व्यापारसे अवगत तो नहीं हूँ न। मेरा सुझाव है कि तुम अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें[1] अपनी बातपर आग्रह करना। किन्तु तुम्हारे स्वास्थ्यको नुकसान पहुँचे तो मत आना। मैं तुम्हारा पत्र अपने पास ही रखे ले रहा हूँ। मैं यह राजेन बाबू और दूसरोंको पढ़वा दूंगा।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजीसे: एस० सत्यमूर्ति पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। (सी० डब्ल्यू० १०१९९)से भी; सौजन्य: तमिलनाडु सरकार

३७१. पत्र : ककलभाई कोठारीको[2]

१८ जून, १९३९

भाई ककलभाई,

राजकोटके बारेमें तुम्हारे प्रलापपूर्ण उद्‌गार मिले। मैं एक नजर उन्हें देख गया। मुझे शब्दाडम्बरके अलावा और कुछ नहीं मिला। लेकिन शब्दाडम्बर ही तो तुम्हारा जीवन है न? फिर तुम भी कर क्या सकते हो? यदि तुम धीरजसे काम लोगे तो तुम्हें किसी दिन मेरे इन शब्दोंकी सार्थकता दिखाई देगी।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य: नारायण देसाई

१. बम्बईमें २४ से २७ जूनतक होनेवाली बैठकमें।

२. सौराष्ट्रके एक कांग्रेसी कार्यकर्ता और अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती दैनिक प्रभातके सम्पादक।

३७२. पत्र : मूलराजको

१८ जून, १९३९

भाई मूलराज,

अंग्रेजीमें लिखा आपका पत्र मिला। मैं समझता था कि आप गुजरातीमें पत्र लिख सकते हैं। मुझे उम्मीद है कि आप इसे पढ़ सकेंगे अथवा पढ़वा लेंगे। मैं अपने मतपर दृढ़ हूँ। त्रावणकोर और जयपुरमें भी, जहाँ आन्दोलनपर मेरा अंकुश है, मैं छोटी-मोटी सलाह ही देता हूँ, तो फिर कच्छमें मुझसे और क्या हो सकता है? इसलिए कृपया यह समझ लीजिए कि कच्छमें सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द करने की जिम्मेदारी आप कार्यकर्त्ताओंपर ही है।[1] आप इस पत्रको प्रकाशित कर सकते हैं।

मो० क० गांधी

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य : नारायण देसाई

३७३. कहाँतक ?

रियासतोंकी प्रजाको यदि आवश्यक हो तो अपनी माँगें कम कर देने की मेरी सलाहका[2] उल्लेख करते हुए एक पत्र-लेखक पूछते हैं :

> लोगोंको कहाँतक बढ़ना चाहिए और उनकी माँगोंमें कहाँतक कमी करने का सुझाव दिया जा रहा है या सोचा जा रहा है? उदाहरणके लिए, जयपुरकी माँगको लें, जिसे असलमें आपने ही तैयार किया है।

यह सवाल ही न उठता, अगर मेरी भाषाको ठीक-ठीक समझने की कोशिश की जाती। पहली बात तो यह है कि मैंने 'यदि आवश्यक हो' की शर्त रखी है। इसे खूब साफ तौरसे सिद्ध हो जाना चाहिए और हरएक कमेटीको निर्णय करना चाहिए कि आवश्यकता है भी या नहीं, और है तो कमी कहाँतक करनी चाहिए। दूसरी बात यह है कि जहाँ लोग अपनी माँगोंको मनवाने के लिए आवश्यक शक्तिके संवर्द्धन और विकासके लिए जरूरी बलिदान करने को तैयार हो, वहाँ अपनी माँगें

१. देखिए "टिप्पणियाँ", का उपशीर्षक "नेता अवश्य नेतृत्व करें", पृ० ३५९।
२. देखिए पृ० ३५०-३।

कम करने का सवाल ही नही उठता। राजकोटका ही मामला ले लीजिए। सर मॉरिसका फैसला होता या न होता, अगर प्रजामें आवश्यक बलिदान करने की शक्ति होती और लोग स्वराज्यके लिए तैयार होते, तो उन्हे उनका लक्ष्य प्राप्त करने से कोई नही रोक सकता था।

यह कहना या मानना गलत है कि मेरी भूलकी वजहसे राजकोटकी प्रजाको वह चीज नही मिली जो वह चाहती थी। मेरी भूल मान ली गई है, लेकिन इसे प्रसिद्ध अधिसूचनाकी असफलताके लिए जिम्मेवार नही ठहराया जा सकता। मैंने स्थितिसे 'गलत ढंग'से निबटने की कोशिश की और इसलिए वहाँ पस्ती शुरू हो गई, यह कहना बिलकुल वाहियात है। सत्याग्रहमें पस्ती-जैसी कोई चीज नही होती। जो लोग सत्याग्रही, अहिंसक और बहादुर होते है, वे अपने नेताकी बेवकूफीके कारण इन गुणोंको छोड़ नही देते। इसके विपरीत, यदि लोग एक खास समयके लिए सत्य, अहिंसा और वीरता, इन तीन गुणोका जामा ओढ़ ले, लेकिन ठीक परीक्षाके समय वे असफल हो जायें, तो पस्ती आयेगी या यो कहिए कि असली पोल खुल जायेगी। जो लोग स्वभावसे ही बहादुर होते है वे कमजोर नेताको हटा देते हैं और आगे बढ़े चले जाते है, मानों उन्हें नेताकी जरूरत ही नही थी। अगर उन्हे नेताकी जरूरत होती भी है, तो वे शीघ्र ही एक बेहतर नेता चुन लेते है। रियासतोंके कार्यकर्त्ता अगर राजकोटके मामलेसे फायदा उठाना चाहते है, तो उन्हे इसे समझने की कोशिश करनी चाहिए। अगर यह उन्हें बहुत पेचीदा मालूम होता हो, तो इसको बिलकुल भुला दें, मानो राजकोटकी कोई घटना ही नही हुई, और आगे चले। कुछ लोग सोचते है कि राजकोटके मामलेको मेरे तथाकथित 'गलत ढंगसे निबटने' से पहले राजा लोग इतने भयभीत हो गये थे कि वे प्रजाके पक्षमें अपने सब अधिकार सौंपने को करीब-करीब तैयार हो चुके थे। लेकिन इस विचारसे अधिक भ्रामक और कोई विचार नही हो सकता। मेरे राजकोट जाने से पहले वे जो-कुछ कर रहे थे, वह यह था कि वे इस स्थितिका, जिसे वे अपने अस्तित्वके लिए खतरा मानते थे, मुकाबला करने के उपायों और साधनोपर आपसमें विचार-विनिमय कर रहे थे। हम जानते हैं कि लीम्बड़ीने[1] क्या किया। मुसलमानो, गरासियो, यहाँतक कि दलित जातियोंके भी मिलकर कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओंके विरुद्ध गुटबन्दी करने की बातें हम सुन रहे थे। मैंने जो-कुछ किया, उससे उनकी यह गन्दी गुटबन्दी प्रकाशमें आ गई है। रोगका सच्चा निदान तीन चौथाई इलाज होता है। आज रियासती कार्यकर्ता इस स्थितिमें है कि वे इस गुटबन्दीका मुकाबला करने के उपाय कर सकें। आज कुल आवश्यकता यह है कि कांग्रेसी या सत्याग्रही अपने विरुद्ध खड़ी हुई ताकतोंको काबूमें करने की कोशिश करे। वे अपने लिए जितनी स्वतन्त्रता चाहते है, उतनी ही स्वतन्त्रता उन्हें मुसलमानोके लिए, गरासियोंके लिए, दलित जातियोंके लिए, यहाँतक कि राजाओंके लिए भी लेनी है। सत्याग्रहियोको अपनी

१. देखिए खण्ड ६८, पृ० ४८१-४।

शान्त दलील और आचरणसे यह साबित करना है कि राजा लोग भी हमेशा निरंकुश शासक नहीं रह सकते; अपनी प्रजाका स्वामी बने रहने की अपेक्षा प्रजा का न्यासी बनने में ही उनका भी हित है। दूसरे शब्दोंमें यों कह सकते हैं कि राजकोटमें मैंने अपनी भूलको सुधारकर जो किया है, वह सत्याग्रहियोंको सच्चा मार्ग दिखाना-भर है। इसका अनुसरण करते हुए अपनी तात्कालिक माँगोंको कम करना उन्हें आवश्यक लग सकता है, लेकिन इसका उद्देश्य सिर्फ यह होना चाहिए कि लक्ष्यकी प्राप्ति ज्यादा आसान हो जाये। इसलिए अपनी कमजोरीके कारण माँगें कम करने का सवाल ही नहीं हो सकता। स्थानीय परिस्थितियोंकी आवश्यकता और उनका मुकाबला करने की कार्यकर्त्ताओंकी क्षमताको देखकर ही अपनी माँग कम करनी चाहिए। यहाँ पस्ती और पलायनकी कोई गुंजाइश ही नहीं है। जयपुरके-जैसे मामलेमें तो निःसन्देह माँग कम करने का सवाल ही नहीं उठता। वहाँ तो माँग पहले ही न्यूनतम है। इसमें और कमी करने की कोई गुंजाइश नहीं है। जयपुरकी माँगका सार है नागरिक स्वाधीनता। अहिंसा-पालनके साथ मेल खाती हुई नागरिक स्वाधीनता स्वराज्यकी दिशामें पहला कदम है। यह राजनीतिक और सामाजिक जीवनके लिए प्राण-वायुके समान है। यह स्वतन्त्रताकी बुनियाद है। इसमें समझौतेकी या इसे हलका करने की कोई गुंजाइश ही नहीं है। मैंने कभी पानीको और पतला करने की बात नहीं सुनी।

एक अन्य पत्र-लेखकने दूसरा ही सवाल उठया है। वे कहते हैं :

> **आप हमसे वार्त्ता द्वारा काम लेने की आशा करते हैं, लेकिन अगर दूसरी ओरसे बातचीतकी कोई इच्छा ही न हो, बल्कि वहाँ स्वतन्त्रता माँगने-वालों को केवल अपमानित करने की इच्छा ही काम कर रही हो, तब क्या किया जाये?**

तब वस्तुतः प्रतीक्षा करने, त्याग और बलिदानकी तैयारी करने और रचना-त्मक कार्यको आगे बढ़ाने के सिवा और कुछ नहीं करना चाहिए। अधिकारियोंमें वार्त्ताकी इच्छाके अभावका अर्थ है कि वे स्वराज्य चाहनेवालो पर अविश्वास करते हैं या उन्हें तुच्छ समझते हैं। इन दोनो स्थितियोंमें मूक रचनात्मक कार्य ही एकमात्र इलाज है। कानून-सम्मत अधिकारीकी—चाहे वह दीवान हो या अन्य कोई—उपेक्षा या तिरस्कारका स्थान वार्त्ता ले सकती है। और मैंने भी जिसकी सिफारिश की है, वह है वार्त्ताकी इच्छा या तैयारी। यह भी सम्भावना है कि वार्त्ताकी स्थिति ही न आने पाये, लेकिन अगर न आये तो इसका निमित्त सत्याग्रहियोंको नहीं होना चाहिए।

सेगाँव, १९ जून, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-६-१९३९

३७४. खादीका हनन खादी करेगी?

अ० भा० चरखा संघने कतैयोंकी मजदूरीकी दरोंमें वृद्धि करने का जब निश्चय किया, तब इस प्रस्तावका उत्साहपूर्वक समर्थन करने में महाराष्ट्र-शाखा सबसे आगे थी। इस शाखाको श्री विनोबाका सीधा मार्ग-दर्शन मिलता है। उसने जिस चौकसीसे दरें बढ़ाने का कार्यक्रम लागू किया है वहाँतक दूसरे प्रान्त नहीं पहुँच सके हैं। परिणाम यह हुआ है कि दूसरे प्रान्त, कताईकी दरोंमें महाराष्ट्र-शाखाके बराबर वृद्धि न करने के कारण, महाराष्ट्र-शाखाकी खादीकी अपेक्षा कम कीमतपर अपनी खादी बेच सकते हैं, और जो क्षेत्र महाराष्ट्र-शाखामें आते हैं, वहाँ अपना माल भेजने में उन्हें कोई हिचकिचाहट नहीं होती। नीति-नियम न माननेवाले व्यापारी इस स्थितिसे लाभ उठाने में देर नहीं करते। इस कारण नागपुर, वर्धा तथा दूसरी जगहोंमें कई अप्रमाणित खादी-भण्डार खुल गये हैं। असावधान जनसाधारण, जिसे कताईकी दरोंकी नई व्यवस्थाका पता नहीं, और जो सस्ती खादी खरीदने के लिए आतुर है, अप्रमाणित भण्डारोंको प्रश्रय देना ज्यादा पसन्द करता है, और इस तरह महाराष्ट्र-शाखाके भण्डारोंको भारी नुकसान पहुँचा रहा है। इसका नतीजा यह होगा कि महाराष्ट्र-शाखाको या तो कताईकी दरें घटा देनी पड़ेंगी, या अपना काम बन्द कर देना पड़ेगा। अगर ऐसा हुआ, तो यह कहा जायेगा कि खादीका हनन खादीने किया है। खादी-प्रेमियोंको यह मालूम होना चाहिए कि खादीका अर्थशास्त्र प्रतिस्पर्धाकी प्रथापर निर्मित सामान्य अर्थशास्त्रसे भिन्न और बहुधा उससे उलटा होता है। सामान्य अर्थशास्त्र सबका, अर्थात् दलितोंमें भी छोटे-से-छोटे व्यक्तिका, अधिकसे-अधिक हित-साधन करने के सिद्धान्तपर आधारित नहीं है। मैंने इस पत्रमें यह बताने का प्रयत्न किया है कि खादीको अगर अपना उद्देश्य पूरा करना है, तो —

१. कतैयोंकी मजदूरीकी दरोंमें तबतक उत्तरोत्तर वृद्धि होती जानी चाहिए, जबतक कि उन्हें प्रति घंटा कमसे-कम एक आना न मिलने लग जाये।

२. आदर्श तो यह है कि हरएक गाँवको खुद अपनी खादी तैयार करके उप-योगमें लानी चाहिए। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि आज कमसे-कम इतना तो करना ही चाहिए कि हरएक प्रान्त को अपनी आवश्यकताके लायक पर्याप्त खादी तैयार करनी चाहिए, इससे अधिक नहीं; और उसकी हदके बाहर ऐसी खादी बेचने की इजाजत देनी चाहिए, जो सिर्फ उस प्रान्तमें ही तैयार हो सकती है। मसलन, आंध्र अपनी हदके बाहर ८० अंकके सूतकी खादी भेज सकता है, पर मोटी खादीको, चाहे वह कितनी ही सस्ती हो, वह बाहर नहीं भेज सकता।

३. मुनाफे की खातिर मुनाफा हरगिज नहीं लिया जा सकता। आज चरखा संघ संसारमें सबसे बड़ी सहकारी संस्था है, जिसमें मजदूर और कारीगर ही

हिस्सेदार और मालिक है। इसलिए किसी एक सालमें अगर मुनाफा हो, तो उसका उचित उपयोग यह है कि जहाँतक बेकार कतैयोंको काम दिया जा सके, वहाँतक उनकी सख्या बढाने में, नही तो मौजूदा कतैयोंकी मजदूरीकी दरे बढ़ाने में उस मुनाफेका उपयोग किया जाये।

४. जो प्रान्त मजदूरी की दरे बढाने का प्रयत्न कर रहा हो, उसे दूसरी शाखाएँ और खादी-प्रेमी प्रोत्साहन दें।

५. अपने प्रान्तमें बननेवाली खादी अन्य प्रान्तोंकी खादीसे महँगी हो तब भी आम जनताको वही उपयोगमें लानी चाहिए। चरखा संघ हरएक प्रान्तके लिए जो-कुछ हो सकता है करने से नही चूकेगा, ऐसा विश्वास उन्हे रखना चाहिए।

६. चरखा संघकी नीति नि सन्देह ऐसी होनी चाहिए कि सारे हिन्दुस्तानमें मजदूरीकी दरें और खादीकी कीमत एक सरीखी हो जायें। किन्तु यह आदर्श स्थिति जबतक नही आती, तबतक इतना जानने की दया-भावना तो जनतामें होनी चाहिए कि खादी-कार्य करनेवाले अपने प्रान्तके मजदूर-कारीगरोके प्रति उसका कुछ कर्त्तव्य है। बाहरकी दुनियाके साथ प्रतिस्पर्धा करना जितना बुरा है, लगभग उतना ही बुरा अन्तर्प्रान्तीय प्रतिस्पर्धा करना भी है।

तत्काल जो काम करना चाहिए वह तो यह है कि तमाम अप्रमाणित भण्डार बन्द कर देने चाहिए। कांग्रेसजनो और दूसरे लोगोंको चाहिए कि वे ऐसे भण्डारोंसे खादी न खरीदने के लिए जनताको आगाह कर दें। और चरखा संघकी प्रान्तीय एजेंसियोंके कहे बगैर प्रान्तीय शाखाओंको बाहर किसीको भी माल नही बेचना चाहिए।

सेगाँव, १९ जून, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-६-१९३९

३७५. पत्र : अमृतकौरको

सेगाँव, वर्धा
१९ जून, १९३९

प्रिय पगली,

महादेव देसाईके नाम तुम्हारे पत्रमें लिखी मजेदार बातें मैंने पढ़ी। राजाओंके साथ क्या किया जाना चाहिए? देवता जिन्हें नष्ट करना चाहते है उनकी बुद्धि फेर देते है। हो सकता है कि उनके दिन गिने-गिनाये हो। हाँ, अहिंसामें आस्था रखने के कारण हमें इस तरहसे कार्य करना है कि हम प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे उनके नाशके साधन न बनें।

तुमने इस पत्रमें नही बल्कि इससे पहलेवाले पत्रोमें मुझसे कहा था कि मैं तुम्हारे लिए प्रार्थना करूँ। मै रोज यह प्रार्थना कर रहा हूँ। मैं तुम्हारी दलील,

या कहो, विचार-बुद्धिमें दोष नही निकालना चाहता। लेकिन जब हम मिलेंगे तब जी भरकर बातें करेंगे रोने-धोनेकी नौबत आनेकी भी परवाह किये बिना। इससे मन हलका और साफ हो जाता है। इसलिए तुम अपने आँसू सँभाल रखना। बन्द कमरेमें अकेले रोकर सारे आँसू खत्म मत कर देना। हंसाके बारेमें तुमने जो लिखा है, उसे पढ़कर मैं मन-ही-मन मुस्करा उठा। औरोंकी भाँति उससे भी अपना दुःख तुमने सफलतापूर्वक छिपा लिया। क्या मैं तुम्हें एक और उपाधि[1] प्रदान करूँ? अनुमान कर सकती हो कि क्या?

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६५७) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४६६ से भी

३७६. पत्र: मणिलाल और सुशीला गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१९ जून, १९३९

चि० मणिलाल और सुशीला,

अब तो तुम शिकायत नही कर सकते। अब तो मैं तुम्हें पत्र लिखता रहता हूँ। वहाँ झगड़ा-फसाद किस कारण हुआ? उसमें कौन-कौन थे? मेरा खयाल है, तुमने मुझे यह जानकारी दी होगी। यहाँसे तुम्हें मदद तो जरूर मिल सकती है, लेकिन यदि वहाँके भारतीय समाजमें बल हो तो।

मेरी तबीयत अच्छी रहती है। बा की ढीली रहती है। हम कल बम्बई जा रहे हैं। वहाँसे कदाचित् सीमा-प्रान्त जायें। बा उस बीच कदाचित् साबरमती जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८९८) से

१. देखिए "पत्र: अमृतकौरको", २९-६-१९३९।

३७७. इसके फलितार्थ

मुझे दुःख है कि देशी राज्योंके सम्बन्धमें मैंने जो वक्तव्य हालमें दिये हैं उनके कारण ऐसे लोग भी उलझनमें पड गये है जिन्हें आजतक मेरे लेखों या कार्योंको समझने में कोई कठिनाई नही हुई। किन्तु राजकोट-सम्बन्धी मेरे वक्तव्यों, राजकोटके मेरे कार्योंने और त्रावणकोर-सम्बन्धी मेरे वक्तव्यने, मिलकर उलझनको और ज्यादा पेचीदा वना दिया है। प्यारेलाल और बादमें महादेव 'हरिजन' के पाठकोको मेरे लेखों तथा कार्योका सच्चा अर्थ समझाने का साहसपूर्वक प्रयत्न करते रहे हैं। मै यह जानता हूँ कि वे अपने प्रयत्नसे गलतफहमीको कुछ हदतक दूर कर सके हैं। पर मैं देखता हूँ कि मुझे खुद भी कुछ समझाने की जरूरत है। इसलिए अपने हालके लेखो तथा कार्योंका जो फलितार्थ मै समझता हूँ, उसे जनताके समक्ष रखने का प्रयत्न मुझे करना ही चाहिए।

सबसे पहले तो इन लेखों और कार्योंका जो अर्थ नही है वह कह दूँ। एक तो यह कि व्यक्तिगत, समूहबद्ध या सार्वजनिक सविनय अवज्ञासे सम्बन्ध रखनेवाले मेरे विचारोमें कोई तब्दीली नही हुई है। इसी प्रकार, कांग्रेस और राजाओंके बीच अथवा राजाओ और उनकी प्रजाके बीच किस तरहका सम्बन्ध होना चाहिए, इस विषयमें मेरे विचारोंमें भी कोई परिवर्तन नही हुआ है। और मेरी इस रायमें भी कोई अन्तर नही पड़ा है कि ब्रिटिश अधीश्वरी सत्ताने इतने दिनोंतक देशी राज्योको प्रजाके प्रति अपने जिस कर्त्तव्यकी बुरी तरह अवगणना की है उसका पालन करना बहुत जरूरी है। मेरा भूल-स्वीकार तो एक ही बातके सम्बन्धमें था, और वह यह कि जिस ईश्वरके नामपर राजकोटमें मैंने अनशन किया था उसके प्रति मैंने अविश्वास को स्थान दिया, और वाइसरायके हस्तक्षेपसे प्रभुके कार्यकी पूर्ति करने का प्रयास किया। ठाकुर साहबको ठिकानेपर लाने के लिए ईश्वरपर आधार रखने के बजाय या उसपर आधार रखने के साथ ही मैंने वाइसरायपर भरोसा किया। मेरा यह काम शुद्ध हिंसाका था। इस प्रकारकी हिंसाका विचार या उसका उपयोग मेरे अनशनका अभिप्राय विलकुल नही था।

इस राजकोट-प्रकरणका मेरे जीवनमें जो ठोस फलितार्थ है वह यह कि मैंने देखा कि १९२० से लेकर आजतक राष्ट्रीय आन्दोलनके सम्बन्धमें जिस अहिंसाका हम दावा करते आ रहे हैं वह अद्भुत होते हुए भी सर्वथा विशुद्ध नही थी। अतः जो परिणाम आजतक निकले वे यद्यपि असाधारण कहे जा सकते हैं, तथापि हमारी अहिंसा यदि बिलकुल विशुद्ध होती, तो उसके परिणाम और भी मूल्यवान साबित होते। मन और वाणीकी अहिंसासे युक्त सम्पूर्ण अहिंसात्मक कर्मसे विरोधीमें स्थायी

हिंसा-वृत्ति कभी पैदा नही हो सकती। लेकिन मैंने देखा कि देशी राज्योंके आन्दोलनने राजाओं तथा उनके सलाहकारोंमें हिंसा-वृत्ति पैदा कर दी है। आज उनका मन कांग्रेसके प्रति अविश्वाससे भरा हुआ है। जिसे वे कांग्रेसकी दस्तन्दाजी कहते है, उस चीजको वे नहीं चाहते। कितने ही राज्योंमें तो 'कांग्रेस' एक अभिशप्त शब्द बन गया है। ऐसा होना नहीं चाहिए था।

इस जानकारीका महत्त्व मुझपर होनेवाली उसकी प्रतिक्रियामें निहित है। इससे भावी सत्याग्रहियोंके प्रति अपनी अपेक्षाओं और माँगोके सम्बन्धमें मैं सख्त बन गया हूँ। मेरी माँगकी सख्तीके कारण सत्याग्रहियोंकी संख्या घटकर बिलकुल नगण्य रह जाये, तो मुझे उसकी चिन्ता नही होनी चाहिए। यदि सत्याग्रह एक ऐसा व्यापक सिद्धान्त है जो सभी परिस्थितियोंमें लागू हो सकता है, तो मुट्ठी-भर साथियोंके जरिये लड़ाई लड़ने का कोई प्रभावकारी तरीका मुझे जरूर खोज लेना चाहिए। और मैं जो नये प्रकाश की धुँधली-सी झलक देखने की बात करता हूँ, उसका अर्थ यही है कि मुझे सत्यका दर्शन होते हुए भी अभी निश्चित तौरपर मालूम नही हो पाया है कि मुट्ठी-भर आदमी किस तरह प्रभावकारी अहिंसक लड़ाई लड़ सकते हैं। जैसा कि मेरे सारे जीवनमें होता आया है, सम्भव है कि पहला कदम उठाने के बाद ही अगला कदम सूझे। मेरी श्रद्धा मुझसे कहती है कि जब कार्य करने का समय आयेगा, तब उसकी योजना सामने तैयार मिलेगी।

मगर अधीर आलोचक कहेंगे, 'समय तो प्रस्तुत ही है, आप ही तैयार नही हो रहे है।' इस आरोपको मैं नही मानता। मेरा अनुभव इससे उलटा है। कुछ बरसोंसे मैं यह कहता आ रहा हूँ कि सत्याग्रह फिरसे शुरू करने का अभी मौका नहीं है।

कारण स्पष्ट है।

कांग्रेस आज राष्ट्रव्यापी सत्याग्रह आरम्भ करने का प्रभावकारी वाहन बनने-जैसी रही नहीं है। उसका कलेवर भारी हो गया है, उसमें भ्रष्टता आ गई है, कांग्रेस-जनोंमें आज अनुशासन नही है, नये-नये प्रतिस्पर्धी गुट खड़े हो गये हैं, जो बस चले और बहुमत प्राप्त कर लें तो कांग्रेसके कार्यक्रममें आमूल परिवर्तन कर दें। ऐसा बहुमत वे अबतक प्राप्त कर नही सके, यह चीज मुझे कुछ आश्वासन देनेवाली नहीं है। जिनका बहुमत है उनकी भी अपने कार्यक्रममें जीवन्त श्रद्धा नही है। जो भी हो, महज बहुमतके बलपर सत्याग्रह शुरू करना व्यावहारिक कार्य नहीं है। किसी भी देशव्यापी सत्याग्रहके पीछे कांग्रेसकी सारी ताकत होनी चाहिए।

इसके अलावा, साम्प्रदायिक तनातनी है, जो दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। जिन विभिन्न जातियोंसे मिलकर भारतीय राष्ट्र बना है उनके बीच सम्मानपूर्ण सुलह और एकताके बिना आखिरी सत्याग्रहकी लड़ाईकी कल्पना असम्भव है।

अन्तमें, प्रान्तीय स्वायत्त-शासनको लेता हूँ। मेरा अब भी यह विश्वास है कि इस सम्बन्धमें कांग्रेसने अपने सिरपर जिस कामको ले रखा है उसके प्रति हमने न्याय नहीं किया है। यह स्वीकार करना चाहिए कि गवर्नरोंने कुल मिलाकर

खरा खेल खेला है। मन्त्रियों द्वारा की जानेवाली कार्रवाइयोंमें उन्होंने बहुत कम हस्तक्षेप किया है। लेकिन कांग्रेस-जनों और कांग्रेस-सस्थाओंने हस्तक्षेप अवश्य किये हैं और कभी-कभी तो ये हस्तक्षेप खीज पैदा करनेवाले थे। जबतक कांग्रेसी मन्त्री कारोबार चला रहे हैं, तबतक जनताकी ओरसे हिंसा या दंगे तो होने ही नही चाहिए थे। मन्त्रियोंकी बहुत अधिक शक्ति कांग्रेस-जनोंकी माँगो और विरोधको निबटाने में खर्च होती रही है। अगर मन्त्री लोकप्रिय नही है, तो उन्हे बरखास्त किया जा सकता है, और कर देना चाहिए। इसके बजाय हो यह रहा है कि उन्हें काम तो करने दिया जाता है, पर बहुत-से कांग्रेस-जनोंका उन्हे सक्रिय सहयोग नही मिलता।

दूसरे सब उपायोंको आजमाये बगैर आखिरी कदम उठाना सत्याग्रहके हरएक नियमके विरुद्ध है। ऐसी जल्दबाजी तो स्वयंमें हिंसा-स्वरूप होगी।

इसके जवाबमें कुछ औचित्यके साथ यह जरूर कहा जा सकता है कि मैंने जो शर्तें बताई हैं उन सबको पूरा करने का अगर आग्रह रखा गया तो सविनय अवज्ञा लगभग असम्भव ही हो जायेगी। क्या यह आपत्ति उचित कही जा सकती है? हरएक कार्रवाईके साथ उसको स्वीकार करने की शर्तें तो उसमें रहती ही हैं। सत्याग्रह इसका कोई अपवाद नही है। पर मेरी अन्तरात्मा मुझसे कहती है कि मौजूदा असम्भव स्थितिसे छुटकारा पाने के लिए सत्याग्रहका कोई-न-कोई सक्रिय तरीका — यह जरूरी नही कि वह सविनय अवज्ञा ही हो — मिलना ही चाहिए। एक निश्चित समयके अन्दर या तो प्रभावकारी अहिंसक कार्रवाई की जानी है या हिंसा और अराजकताका राज्य कायम होना है। इस स्थितिपर और अधिक विचार फिर कभी करूँगा।[1]

सेगाँव, २० जून, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-६-१९३९

३७८. पत्र : द० बा० कालेलकरको

सेगाँव, वर्धा
२० जून, १९३९

चि० काका,

इसके साथ अमृतलालका पत्र है। यह और प्रस्क्रिप्शन आज ही मुझे वापस भेजना।

तुम्हारे आने के दूसरे ही दिन मैंने जीवणजीको अपनी ओरसे यह निर्देश किया कि 'आत्मकथा' को नागरीमें छपवाकर उसे एक आना कम कीमतपर बेचें।

१. देखिए "अहिंसा बनाम हिंसा", ४-७-१९३९।

सरदारका उत्तर नहीं आया। प्राप्त करके रहूँगा। आज चार बजे महिलाश्रम और साढ़े चार बजे जमनालालजी के बँगलेपर जाऊँगा। विनोवा वहाँ होंगे। क्या तुम प्रभुदयालको वहाँ रखने के लिए तैयार हो गये हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९२२) से।

३७९. तार: अमृतलाल टी० नानावटीको

बम्बई
२१ जून, १९३९

नानावटी
मारफत पारेख ब्रदर्स
भावनगर

मैंने सेगाँवमें सुशीलासे सलाह की थी। उसने कहा कि किसी भी हालतमें जीवराजको परेशान नही करना चाहिए। यदि निदान ठीक है तो इलाजमें वहाँसे फर्क होने की सम्भावना नहीं है। मेरी पक्की राय है कि चन्दनको आयुर्वेदिक इलाज करवाना चाहिए। अतः उसे अहमदाबाद रवाना हो जाना चाहिए। वहाँ कई आयुर्वेदिक चिकित्सक हैं। सभी उपादानों से सज्जित अस्पताल भी वहाँ हैं। इन दिनों मौसम भी अनुकूल होता है। अन्य दृष्टियोंसे भी बम्बई रहना उचित नही है। यहाँ व्यक्तिगत रूपसे ध्यान नही दिया जा सकता। बिड़ला भवनमें रखना ठीक नही। एलोपैथिक चिकित्साकी दृष्टिसे तो अस्पताल ही ठीक जगह है। सब बातोंका विचार करते हुए मेरी रायमें तो अहमदाबाद ठीक होगा। चन्दन और उसके पिताको प्राकृतिक चिकित्सामें विश्वास हो तो बात और है। उस हालतमें उसे दिनशा मेहतासे इलाज करवाने के लिए पूना भेज देना चाहिए जहाँ काकासाहब और बालका इलाज हुआ था।

बापू

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५३) से। सौजन्य: सतीश द० कालेलकर

३८०. पत्र : अमृतलाल सेठको

२१ जून, १९३९

भाई अमृतलाल,

तुम्हारा पत्र देखकर खुश हुआ। तुम कहाँ रहते हो और क्या करते हो, इसकी भी मुझे पूरी जानकारी न थी। उम्मीद है, तुम्हारी तबीयत अच्छी होगी।

लीम्बडी-काण्डमें मैं तुम्हारा मार्ग-दर्शन नही कर सकता। तुम्हारी आत्मा जो कहे वही करो, यही उचित होगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य : नारायण देसाई

३८१. पत्र : नाथालालको

२१ जून, १९३९

भाई नाथालाल,

तुम्हारा पत्र आज ही मेरे हाथमें आया है। मैं हमेशा डाक आनेके तुरन्त बाद उसे पढ नही पाता। तुम्हारा दु:ख बिलकुल काल्पनिक है। उस स्त्रीको भुला देना ही तुम्हारे लिए उचित है। भले ही वह पीहरमें रहे। यदि उसका भरण-पोषण करने की आवश्यकता हो तो उसे अमुक राशि भेज देना। उसके दुर्गुणसे तुम्हें क्यो दु:ख होता है? हम यह मानते है कि स्त्री हमारी मिल्कियत है। लेकिन वस्तुत: देखा जाये तो यह बात नही है। तुम्हारा उससे विवाह हुआ है तो इससे क्या? यदि तलाक लिया जा सकता हो और तुम ऐसा करना चाहो तो करना। समाजकी झूठी शर्म नही करना। माँ-बापकी आज्ञा भी यहाँ काम नही आती। इसलिए तुम दु:खको भूल जाना और अपना मन हलका करना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य : नारायण देसाई

३८२. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

बिड़ला भवन, मलाबार हिल
बम्बई
२२ जून, १९३९

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

१६ तारीखके पत्रके लिए आपको धन्यवाद।

हालाँकि यह एक दुःखद बात है कि पृथ्वीसिंह नामक कैदीको रिहा नहीं किया जा सकता, किन्तु आपके निर्णयको मैं आसानीसे समझ सकता हूँ। मुझे अगले मौकेकी प्रतीक्षा करनी चाहिए।

जयपुरका मामला अभी लटका ही हुआ है। पता नहीं, अब इस मामलेके हल की आशा की जा सकती है या नहीं। जहाँ तक मैं जानता हूँ, खुद महाराजा साहब तो सेठ जमनालालजी तथा अन्य कैदियोंको रिहा करने, प्रजा मण्डलको मान्यता प्रदान करने और पूर्ण नागरिक स्वतन्त्रता, बशर्ते कि वह अहिंसाकी सीमाका उल्लंघन न करे, प्रदान करनेको तैयार थे।

एक दूसरा विषय भी है, जिसका इस पत्रमें उल्लेख कर देना बेहतर होगा। मैं समझता हूँ कि कुछ ऐसे राजा हैं जो मुझसे मिलना चाहते हैं किन्तु इस भयसे कि कहीं राजनीतिक विभाग उसे नापसन्द करे, वे मुझसे बात करने में हिचकिचाते हैं। जैसा कि मैंने नई दिल्लीमें आपके साथ हुई बातचीतमें[1] कहा था, मेरे विचारसे उन्हें किसी भी व्यक्तिसे मिलनेको स्वतन्त्र होना चाहिए, बशर्ते कि वे यह सब खुले रूपमें करते हैं। यदि इस विषयमें आपकी नीति की गुप्त या खुली, जो भी ठीक लगे, घोषणा कर दी जाये तो यह एक अच्छी बात होगी। मैं महसूस करता हूँ कि मेरे-जैसे कुछ मामलोंमें ऐसी अनुमति दे देना काफी न होगा। यह देखते हुए कि देशी राज्योंकी जनताका भारत भरमें कांग्रेस व अन्य लोगोंके साथ घनिष्ठ राजनीतिक और सामाजिक सम्बन्ध है, क्या यह बुद्धिमत्तापूर्ण और उचित नहीं होगा कि राजाओंको अपने राज्यकी जनतापर प्रभाव रखनेवाले लोगोंके साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध कायम करनेके लिए प्रोत्साहित किया जाये? कांग्रेसियों व अन्य लोगोंके साथ बाहरी लोगों-जैसा व्यवहार करना इतना अस्वाभाविक लगता है कि यह दीवार ज्यादा देरतक टिक ही नहीं सकती। यदि यह दीवार संघर्ष और दुर्भावनाके उत्पन्न होनेके बाद गिरी तो दुःखकी बात होगी। पता नहीं, आपको मालूम है अथवा नहीं कि कुछ राज्योंने कांग्रेसका विरोध करनेवाले लोगोंको आमन्त्रित

१. ४ अप्रैल, १९३९ को

किया है, या उनके आगमनका स्वागत किया है। मैं इसकी कोई शिकायत नहीं करता। किन्तु अक्सर राजनीतिक विभागके उकसाने पर राज्योंमें कांग्रेस-जनोंके जाने पर जैसा विरोध प्रकट किया जाता है, उसको देखते हुए यह एक स्पष्ट विरोधाभास है।[1]

हृदयसे आपका,

वाइसराय महोदय
शिमला

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८२७) से। सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

३८३. पत्र : उमादेवीको

बम्बई
२२ जून, १९३९

प्रिय उमा,[2]

तुमने ऐसा क्यों सोचा कि मैं आशीर्वाद नहीं दूँगा? उस मित्रने बताया कि वह मेरी बातोंसे सन्तुष्ट था। और जो मैं कह रहा हूँ उसका सबूत बाजाब्ता दस्तखत किया हुआ यह कागज है। मुझे आशा है कि तुम खूब मजेमें हो। मेरा सीमा-प्रान्त जाना अभी अनिश्चित ही है।

स्नेह।

बापू

श्री० उमादेवी
ईशर हिल्स
श्रीनगर, कश्मीर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२०१)से। सी० डब्ल्यू० ५०९६ से भी; सौजन्य : उमादेवी

१. लॉर्ड लिनलिथगोके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट १३।
२. वाण्डा दिनोवस्का, एक पोलिश महिला

३८४. सलाह: कांग्रेस कार्य-समितिको

२२ जून, १९३९

समझा जाता है कि गांधीजी ने यह सलाह दी कि कांग्रेस-संविधानमें जो भी संशोधन किया जाये उसे देश-भरके कांग्रेसियोंका समर्थन प्राप्त होना चाहिए। उनकी यह राय जान पड़ती है कि ऐसे दूरगामी महत्त्वके परिवर्तनोंका निर्णय केवल बहुमतके आधारपर नहीं किया जाना चाहिए। जिम्मेदार कांग्रेसियोंके बीच गांधीजी की इस सलाहको फिलहाल इस धाराको[1] छोड़ देने का संकेत माना जा रहा है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-६-१९३९

१. तात्पर्य कांग्रेस-संविधानके खण्ड ५ (ग) में प्रस्तावित संशोधनसे है। २४ जूनको अ० भा० कां० क० के अपने अध्यक्षीय भाषणमें राजेन्द्रप्रसादने कहा: "कांग्रेस संस्थाको सुदृढ बनाने के उद्देश्यसे कांग्रेस-संविधानमें संशोधन करने के प्रयत्न किये गये हैं। इस उद्देश्यके लिए त्रिपुरी कांग्रेसने अ० भा० कां० क० को विशेष अधिकार दिये थे। . . . संविधान-उपसमितिने जो सिफारिशें की थीं उनमें संविधानके खण्ड ५ (ग) में कुछ शब्द जोड दिये जाने की सिफारिश भी की थी, जिससे कि साम्प्रदायिक संस्थाओंपर लागू होनेवाले नियमोंको अन्य राष्ट्र-विरोधी संगठनोंपर भी लागू किया जा सके। कार्य-समितिने इस सिफारिशको मान लिया। . . . कार्य-समितिको ऐसा लगा कि कुछ कांग्रेसियोंको यह आशंका है कि खण्ड ५ (ग) में जो संशोधन सुझाया गया है उसका उद्देश्य विरोधी मत व्यक्त करने के लिए दण्ड देना अथवा संस्थाओंको दबाना है। उनकी यह आशंका बिलकुल निराधार है। तथापि जब कोई संस्था दूसरी संस्था पर निरन्तर आक्षेप करती है अथवा उसकी आलोचना करती है तो किसी व्यक्तिके लिए दोनों संगठनोंकी कार्य-कारिणीका सदस्य बनना उचित नहीं है। इससे न केवल संगठनोंके बीच संघर्ष होता है, बल्कि इससे उनमें आन्तरिक संघर्ष भी जारी रहता है। संघर्ष न हो और संगठनोंमें भी परस्पर सौहार्द बढ़े, इस विचारसे खण्ड ५ (ग) में संशोधन करने का सुझाव दिया गया था। लेकिन कुछ सदस्योंके मनमें ऐसी आशंकाको देखते हुए कार्य-समितिने इस संशोधनके लिए दबाव न डालने का निश्चय किया है . . .।" *द इंडियन एनुअल रजिस्टर*, १९३९, जिल्द १, पृ० ३५५-६।

३८५. अ० भा० कांग्रेस कमेटीके प्रस्ताव

[२३ जून, १९३९][1]

१. लंकाकी सरकारने अपने भारतीय कर्मचारियोके सम्बन्धमें जो कदम उठाने का प्रस्ताव किया है उसपर अ० भा० काग्रेस कमेटी गहरी चिन्ता व्यक्त करती है और आशा करती है कि इन प्रस्तावित कदमोके परिणामस्वरूप भारत और लका-जैसे निकटवर्ती और प्राचीन पड़ोसियोके बीच जो अवाछनीय और गम्भीर सघर्ष पैदा होगा उससे बचनेका कोई उपाय निकालना सम्भव हो सकेगा।

इन दोनो देशोकी, जिन्हें जलकी एक मामूली पट्टी एक-दूसरेसे अलग करती है, एक ही सस्कृति है और ये दोनो चिरकालसे एक-दूसरेसे घनिष्ठ रूपसे सम्बन्धित रहे हैं। इन दोनो देशोके बीच किसी प्रकारके सघर्षकी सम्भावना से अ० भा० काग्रेस कमेटीको गहरी चिन्ता होना स्वाभाविक है। यह कमेटी सघर्ष बचाने के हर तरीकेका उपयोग करना चाहती है और इसलिए वह पडित जवाहरलाल नेहरूको नियुक्त करती है कि वे लका जायें और कार्य-समितिकी ओरसे वहाँके अधिकारियो और प्रतिनिधि संघो और व्यक्तियोसे मिलकर बातचीत करे और एक न्यायपूर्ण और सम्मानजनक समझौता कराने के लिए हर सम्भव प्रयत्न करे।

२. भारतीय प्रवासियोके प्रति [दक्षिण आफ्रिका] संघ सरकारके रुखपर अ० भा० काग्रेस कमेटी अपना खेद प्रकट करती है। वर्त्तमान सरकारका रुख उससे पहलेकी सरकारो द्वारा अपनाये गये उत्तरदायित्वोकी उपेक्षा का द्योतक है। हालमें प्रतिपादित की गई नीति[2] १९१४ के स्मट्स-गाधी समझौतेकी,[3] १९२७ के केपटाउन समझौतेकी,[4] १९३२के फीदम आयोगकी,[5] और सघ-सरकार द्वारा उसके बाद दिये गये आश्वासनोकी

१. इन प्रस्तावोंको गाधीजी ने इसी तारीखको तैयार किया था; देखिए अगला शीर्षक। ये प्रस्ताव बम्बईमें २४ से २७ जूनतक होनेवाले अ० भा० काग्रेस कमेटीके अधिवेशनमें पारित किये गये थे।

२. देखिए पृ० १२८, पा० टि० २।

३. देखिए खण्ड १२, परिशिष्ट २५।

४. देखिए खण्ड ३३, पृ० ६९-७० और १२७-८।

५. इसे 'ट्रान्सवाल एशियाटिक लैंड टेन्योर ऐक्ट कमीशन' भी कहा जाता है। दक्षिण आफ्रिका संघ सरकार द्वारा नियुक्त इस आयोगके अध्यक्ष जस्टिस फीदम थे। इस आयोगका काम "ट्रान्सवालमें घोषित भूमि पर रंगदार लोगोंके कब्जेकी जाँच करना था" चूँकि "आयोग आशाके विपरीत अपना काम ३० अप्रैल, १९३५ तक पूरा नहीं कर सका, इसलिए दक्षिण आफ्रिकाकी संघ सरकारने १९३२ के ट्रान्सवाल एशियाई भूमि-अधिकार अधिनियम में संशोधन करने का निश्चय किया ताकि उक्त अधिनियम द्वारा दी गई सुरक्षा ३० अप्रैल, १९३७ तक जारी रह सके" (इंडिया इन १९३१-३२, पृ० ८५ और इंडिया इन १९३४-३५, पृ० ९२-३)।

उपेक्षा करती है। दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंने जो दृढ़ स्थिति अपनाई है उसपर अ० भा० कांग्रेस कमेटी गर्व और सन्तोष प्रकट करती है। आत्मसम्मानपूर्ण और सम्मान-जनक अस्तित्वके लिए अपने संघर्षमें उन्हें सारे भारतीय राष्ट्रको सहानुभूति प्राप्त होगी। अ० भा० कांग्रेस कमेटी आशा करती है कि उनके बीच कोई मतभेद नहीं होगा और वे एक होकर लड़ेंगे। अ० भा० कांग्रेस कमेटी संघ सरकारसे अपील करती है कि वह अपने कदम वापस ले लेगी, और उसकी पूर्ववर्ती सरकारोंने दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए भारतीयोंके, जिनमें से ८० प्रतिशत लोग उसी उप-महाद्वीपमें पैदा हुए हैं और जिनके लिए दक्षिण आफ्रिका ही उनका एकमात्र घर है, दर्जेमें उत्तरोत्तर सुधार करने के जो वादे किये थे, उनको पूरा करेगी।

३. अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी यह बैठक निश्चय करती है कि सम्बन्धित प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी पूर्व अनुमति लिये विना कोई कांग्रेस-जन भारतके प्रशासनिक प्रान्तोंमें किसी प्रकारका सत्याग्रह नहीं कर सकता और न किसी प्रकारके सत्याग्रहका संगठन कर सकता है।

४. कार्य-समितिने कांग्रेस-मन्त्रिमण्डल, कांग्रेस संगठन और प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके बीच सहयोगपर बारम्बार जोर दिया है। इस सहयोगके विना गलतफहमियाँ पैदा होंगी और कांग्रेसका प्रभाव कम होगा। प्रशासनिक मामलोंमें प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीको कांग्रेस-मन्त्रिमण्डलके निर्णयमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, लेकिन प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी कार्यकारिणी अधिकारके किसी दुरुपयोग या किसी कठिनाईकी ओर सरकारका ध्यान खानगी तौरपर हमेशा आकृष्ट कर सकती है। नीतिके विषयमें यदि मन्त्रि-मण्डल और प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीमें मतभेद है, तो इसे संसदीय उप-समितिके पास भेजना चाहिए। सार्वजनिक रूपसे ऐसे मामलोंकी चर्चाको बचाना चाहिए।

५. यह कमेटी डिगबोईमें चलनेवाली लम्बी हड़तालपर[1] गहरी चिन्ता और हड़तालियोंके प्रति उनकी तकलीफोंमें सहानुभूति प्रकट करती है। कमेटीको इस बातका दुःख है कि असम ऑयल कम्पनीको यह नम्र सुझाव स्वीकार नहीं है कि वह हड़-तालियोंको पुनः नियुक्त करने के तरीके और समयका प्रश्न असम सरकार द्वारा नियुक्त किये जानेवाले सुलह बोर्डको सौंप दे।

इस कमेटीकी रायमें कोई भी निगम, भले ही वह कितना ही बड़ा या प्रभाव-शाली क्यों न हो, सार्वजनिक आलोचना या सरकारी देख-रेख और उचित नियन्त्रणसे ऊपर नहीं हो सकता। इसके अलावा, जैसा कि कराची अधिवेशनमें घोषित किया गया था, कांग्रेसकी नीति यह है कि बुनियादी उद्योगोंका स्वामित्व राज्यके हाथोंमें होना चाहिए। तेल-उद्योग निश्चय ही एक महत्त्वपूर्ण बुनियादी उद्योग है। अतः यह कमेटी आशा करती है कि कम्पनीको सद्बुद्धि आयेगी और कांग्रेसके अध्यक्ष द्वारा कमेटीकी ओर से दिये गये नम्र सुझावको उसके निदेशक स्वीकार कर लेंगे। यदि निदेशक लोग ऐसा नहीं करते तो कमेटी असम सरकारको सलाह देती है कि वह तुरन्त कानून बनाकर

१. असम ऑयल कम्पनी, डिगबोईके कर्मचारी ३ अप्रैलसे हड़तालपर थे, क्योंकि ६३ कर्मचारियोंको नौकरीसे अलग कर दिया गया था।

यह अनिवार्य कर दे कि सुलह्-बोर्डोंकी सलाहें स्वीकार करनी होंगी, और कम्पनीको यह नोटिस दे दे कि कम्पनीके ठेकेकी अवधि समाप्त होने पर उसका नवीकरण न करने को कमेटीको मजबूर होना पड़ सकता है। जहाँ कमेटी कम्पनीसे आग्रह करती है कि कमेटीने जो उचित सुझाव दिये हैं उन्हें वह स्वीकार करे, वही वह यह भी आशा करती है कि श्रमिक संघ कमेटीकी सलाह सुनने को तैयार होगा, और यदि वह जनता तथा कांग्रेसकी सहानुभूति प्राप्त करते रहना चाहता है तो कमेटी जो सलाह दे उस सलाहके अनुसार काम करने को तैयार रहेगा।

६. अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी जोरदार राय है कि पृथक् आन्ध्र प्रान्तकी स्थापनाके लिए तुरन्त कदम उठाये जाने चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-७-१९३९

३८६. पत्र : अमृतकौरको

बम्बई
२३ जून, १९३९

प्रिय पगली,

सुबहके ६ बजे हैं। अमतुस्सलाम सदाकी तरह बेकारके कामोंमें व्यस्त है और मेरा नाश्ता तैयार करने में अपना समय नष्ट कर रही है। वह उदास रहती है क्योंकि उसे मैं ज्यादा समय नही दे सकता। समझमें नही आता कि वह क्या चाहती है। वह मेरे लिए एक पहेली बन गई है। उसके प्रति मेरे व्यवहारमें ही कही कुछ गड़बड़ी है।

मीरा मही है — हर बातको चुपचाप ध्यानसे देखती रहती है। चूँकि उसे सीमा-प्रान्त नही जाना है अत उसके पास आजकल कोई काम नही है। मैं अब सोच रहा हूँ कि उसकी प्रतिभाका किस प्रकार उपयोग करूँ।

जवाहरलालको पूरा विश्वास है कि राजकोटमें मैंने जो गलतियाँ की हैं उनके कारण मैंने प्रगतिकी धाराको सौ-एक साल पीछे धकेल दिया है। मुझे भी उतना ही पक्का विश्वास है कि मैंने राजकोटमें अपने अच्छे कार्यों द्वारा महान् सेवा की है। हमें अभीतक कोई पंच नही मिल पाया है, इसलिए हम दोनों ही अपने-अपने दावेको ठीक समझ रहे हैं। वे सोचते हैं कि किसी संस्थाके लिए मेरे साथ मिलकर काम करना असम्भव है। उनका यह सोचना ठीक भी है, किन्तु मैं मजबूर हूँ। हाँ, एक चीज अवश्य सम्भव है और वह यह कि मैं स्वेच्छासे सभी कार्योंसे अवकाश ले लूँ। ऐसा हो सकता है, लेकिन तभी जब ईश्वरकी प्रेरणा हो। मैं ईश्वरसे प्रार्थना कर रहा हूँ।

इस खबरसे तुम्हें विचलित नहीं होना चाहिए। मैं हमेशाकी तरह प्रसन्न-चित्त हूँ। मतभेदोंकी मैं चिन्ता नहीं करता। मैं समितिके लिए प्रस्तावोंका[1] मसौदा तैयार कर रहा हूँ और जवाहरलाल एक वक्तव्य तैयार कर रहे हैं। हम दोनोंके आपसी सम्बन्धोंमें कोई खिंचाव नहीं है। हम दोनोंके बीच दृष्टिकोणका इतना अन्तर है, इस बातको जानने के बाद हम दोनों एक-दूसरेके शायद और निकट आ गये हैं।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६५८) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४६७ से भी

३८७. पत्र: पत्तम ताणु पिल्लैको

बिड़ला भवन
माउण्ट प्लेजेंट रोड, बम्बई
२४ जून, १९३९

प्रिय ताणु पिल्लै,

दीवान और मेरे बीच जितने भी तारोंका आदान-प्रदान हुआ, सबकी प्रतियाँ तुम्हारे पास हैं। मेरा सुझाव यह है कि तुम या तुममें से जो सबसे उपयुक्त समझा जाये वह इन तारोंका हवाला देते हुए सर सी० पी० को पत्र लिखकर उनसे मुलाकातका समय माँगे। यह उनके साथ सीधा सम्पर्क स्थापित करने की दिशामें पहला कदम होगा। ऐसा सम्पर्क स्थापित हो जाने पर ही हम उन आरोपोंके उत्तर दे सकेंगे और उनका निराकरण कर सकेंगे जो सर सी० पी० के तारोंमें कांग्रेसपर लगाये गये हैं। अगर तुमने नई कार्य-विधिको हृदयंगम कर लिया है तो ऐसा ही करोगे। नई कार्य-विधि — ये निरर्थक शब्द नहीं हैं। यह विधि महान् सम्भावनाओंसे आपूरित है। 'हरिजन' के स्तम्भोंको ध्यानसे पढ़ना। अगर तुमने उसे समझ लिया है तो निश्चय ही नई श्रद्धा, नया साहस और नई आशा प्राप्त हुई होगी।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकलसे: पत्तम ताणु पिल्लै पेपर्स। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. देखिए पिछला शीर्षक।

३८८. पत्र : चिमनलाल न० शाहको

बम्बई
२४ जून, १९३९

चि० चिमनलाल,

आज तो तुम्हें लिखूंगा ही। शारदा ठीक है, लेकिन जब वह सूरत जाये तब भले ही शकरीबहन उसके पास जाये अथवा यह देखकर लौट जाये कि सूरतमें शारदा कैसा अनुभव करती है। चिन्ता करने का कोई कारण नहीं देखता।

बलवन्तसिंहके बारेमें आज खबर मिलनी चाहिए थी। बलवन्तसिंहके लिए लाहौर जाने की अनुमति मिल गई है।

मुन्नालालका पत्र मिला है। किताब भले ही वहाँ रहे।

बा कमजोर है। आज ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५९७) से।

३८९. पत्र : दादाचानजीको

२४ जून, १९३९

दादाचानजी,

आप कल जो मासिक छोड़ गये थे उसे आज सवेरे ही देखा। बाबाका लेख पढ़ा। अन्य लेख भी सतही तौरपर देख गया। बाबाकी इच्छाका मतलब यही हो सकता है कि उनके लेखमें जो लिखा है यदि मैं उसे मानता हूँ तो मुझे ही उसका अनुवाद करना चाहिए। वैसे तो मेरी अपेक्षा अधिक अच्छा अनुवाद करनेवाले अनेक गुजराती हैं। मैं यह नहीं कह सकता कि 'मैं मानता हूँ', और 'नहीं मानता' यह भी नहीं कह सकता। ऐसा कहना उद्धतता होगी। इसलिए, तीसरे शब्दोंमें कहूँ तो 'मैं यह सब आश्चर्यचकित होकर देख रहा हूँ।' मुझे दूसरे अंक भी भेजिए। मैं यह जरूर कहूँगा कि बाबा और उनकी कृतियोंको समझने की मेरे मनमें जिज्ञासा बढ़ी है। बाबा यदि सहमत हों तो मैं अपने साथियोंमें से किसी एकको मेहराबाद भेजना चाहता हूँ। इस तरह अपने ढंगसे उनका परिचय प्राप्त करते हुए अगर मुझे तसल्ली हो जाती है तो मैं [उनके लेखका] अनुवाद अवश्य करूँगा। ईश्वर जिस तरह मेरा मार्गदर्शन करेगा, मैं उसके अनुरूप ही काम करूँगा। बाबासे

मिलने के बाद या अन्यथा भी पोस्टकार्ड द्वारा मुझे बताइएगा कि मैं अपने किसी साथीको मेहराबाद भेजूं अथवा नही?

वन्देमातरम्

दादाचानजी
सोराब भरूचा हाउस
विनसेंट रोड, दादर, बम्बई

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

३९०. पत्र : कृष्णचन्द्रको

बिड़ला भवन
माउंट प्लेजेंट रोड, बम्बई
२४ जून, १९३९

चि० कृष्णचंद्र,

तुमारा खत मिला है। मैंने तो बलवंतसिंहजी को पंचगनी भेजने का तार कर दिया है और शायद वह वहां पहोंच गये होंगे।[1] अगर वहां नही आये हैं और तुमारा विचार मेरे सेगांव आने तक वही रहने का है तो मुझे हर्ज नही है। जैसा तुमको उचित लगे वह किया जाय। आज तुमारे तरफसे कुछ डाक नही आई है।

सुशीला शायद कल यहां पहोंचेगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३२१) से

३९१. पत्र : प्रभावतीको

बिड़ला भवन
माउण्ट प्लेजेंट रोड, बम्बई
२५ जून, १९३९

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। महिला डाक्टरके पास जाने की कोई जरूरत नही है। तू शिक्षक रख लेना। उसका २५ रुपयेतक का खर्च मैं दूंगा। लेकिन इतना ध्यान रखना कि शिक्षक रखने के बाद अभ्यासमें पूरी तरह जुट जाना। शिक्षक रखने के बाद यहाँ-वहाँ घूमा नहीं जा सकता। यदि घरके काम-काजमें भी तेरा बहुत ज्यादा समय

1. तार न भेजे जाने के कारण बलवन्तसिंह पंचगनी नहीं पहुँचे थे; देखिए "पत्र : बलवन्तसिंहको", पृ० ४१२।

चला जाता है तो शिक्षक रखना बेकार होगा। शिक्षक एक घण्टा दे तो उसके बाद चार घण्टेकी अपनी पढ़ाई होनी चाहिए। तभी उसे रखने का फल मिलेगा। जो भी निश्चय करे, मुझे बताना। और जो भी निश्चय करे अपनी तबीयतको ध्यानमें रखकर करना।

मेरे सीमा-प्रान्त जाने की बात अभी तय नहीं हुई है। १ जुलाईतक तो यही हूँ। सुशीला सेगाँवसे कल आयेगी। अब ठीक रहती है। बा हालाँकि बीमार है। खाँसी आती है।

मैं ठीक हूँ। भोजन पहलेकी तरह ही है, डेढ पौंड दूध। अमतुस्सलाम मेरे साथ है। लीलावती हाई स्कूलमें पढ़ने के लिए दाखिल हुई है। तू दाखिल होगी?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४७६) से

३९२. पत्र : मणिलाल गांधीको

बिड़ला भवन
माउण्ट प्लेजेंट रोड, बम्बई
२५ जून, १९३९

चि० मणिलाल,

तूने प्रस्ताव[1] पढ़ा होगा। वहाँ जो झगड़ा-फसाद हुआ है उसकी मुझे कोई जानकारी नहीं है, यह उचित नहीं है। संघर्षकी भी कोई खबर नहीं। सब लोग यह समझते हैं कि मुझे खबर मिलती रहती है। लेकिन वहाँसे मुझे ऐसा कोई समाचार नहीं मिला है। दादू[2] कौन है? उसका तार आया था। बादमें कुछ नहीं आया। जो मदद दी जा सकती है उसका सामान तैयार तो कर रहा हूँ। लेकिन यदि मुझे वहाँसे जानकारी नहीं मिलती रहेगी तो कोई काम नहीं हो सकता।

बा मेरे साथ है। बीमार रहती है। रामदास और देवदास भी यहीं हैं। लक्ष्मी मद्रास जाने के लिए आई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८९९) से

१. भारतीय प्रवासियोंके प्रति संघ सरकारके रुखपर अ० भा० कां० कमेटी द्वारा पास किया गया प्रस्ताव; देखिए पृ० ३९९-४००।

२. दक्षिण आफ्रिकामें सविनय प्रतिरोध समितिके नेता; देखिए "पत्र : मणिलाल गांधीको", पृ० ३९०।

३९३. पत्र : छगनलाल गांधीको

बिड़ला भवन
माउण्ट प्लेजेंट रोड, बम्बई
२५ जून, १९३९

चि० छगनलाल,

कृष्णदासकी तबीयतके बारेमें आज ही कनुने मुझसे बात की और मैं तो सुनकर भौंचक्का ही रह गया। उसका कहना है कि वह राधाके साथ रहता है। वह बहुत क्षीण हो गया है और क्षय रोग होने का सन्देह किया जाता है। शरीर ऐसा कैसे हो गया? उसे राजकोट ले जाना जरूरी हो तो ले जाना। वहाँ डॉक्टर वरियावा बहुत भले और काबिल आदमी हैं। यदि वहाँ सभी प्रकारकी सुविधाएँ हों तो वह भले ही वहाँ रहे। क्षयरोग है, यह मानकर चलने में भी कोई हर्ज नहीं है। दूध बहुत ज्यादा मात्रामें ले, मक्खन जितना पच सके उतना ले। क्षयरोगमें लहसुनका महत्त्वपूर्ण स्थान है। यदि अहमदाबाद जाकर एक्सरे निकलवाकर जाँच करवा ले तो ठीक होगा। मुझे सारा ब्योरा लिख भेजना। १ जुलाईतक मैं यहाँ हूँ। आराम मुख्य चीज है, यह याद रखना। बोलचाल भी कमसे-कम होनी चाहिए। मनोज्ञा मजेमें होगी। तुम और काशी घबराना नहीं। बा मेरे साथ है। उसे थोड़ा बुखार रहता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००९०) से; सौजन्य : छगनलाल गांधी

३९४. टिप्पणियाँ

लंकामें भारतके शान्ति-दूत

कांग्रेस-महासमितिने राष्ट्रकी ओरसे अपना सबसे अच्छा आदमी[1] शान्ति-दूतके रूपमें लंका भेजने के लिए चुनने में बड़ी बुद्धिमानीका काम किया है। भारतवर्ष और लंका एक-दूसरेसे लड़ें-झगड़ें, यह नामुमकिन है — कमसे-कम नामुमकिन होना चाहिए। हम सबसे नजदीकी पड़ोसी हैं। विरासतमें हमें संस्कृति भी समान मिली है। दोनों देशोंमें रोजका सम्पर्क है। रामेश्वरम्‌से चलकर जब हम लंकाकी भूमिपर पैर रखते हैं, तब हमें ऐसा नहीं लगता कि वह कोई विदेशकी भूमि है। लेकिन जैसे बाज वक्त सगे भाइयोंके बीच भी मतभेद हो जाता है, उसी तरह कभी-कभी

१. जवाहरलाल नेहरू; देखिए पृ० ३९९।

नजदीकी पड़ोसियोंमें भी मतभेद हो जाया करते हैं। और, साधारण तौरसे भाइयोंकी तरह ही वे आपसमें ही अपना निपटारा भी कर लेते हैं, और अक्सर मतभेद साफ हो जानेके बाद उनका प्रेमका बन्धन और भी मजबूत हो जाता है। पंडित जवाहरलाल नेहरूके प्रयत्नोंसे लंका और भारतके सम्बन्धमें भी सम्भवतः यही होगा।

इस कामके लिए [पंडित जवाहरलालसे] बेहतर आदमी कोई चुना नहीं जा सकता था। हिन्दुस्तानका पक्ष स्पष्ट है। कई हजार आदमी, जो बरसोंसे सरकारी नौकरी करते आ रहे हैं — चाहे वे मुस्तकिल हों या दूसरी तरहके — बरखास्त किये जा रहे हैं। कसूर उनका इतना ही है कि वे हिन्दुस्तानी हैं! कहा जाता है कि खानगी पेढ़ियोंसे भी सरकारका अनुकरण करनेके लिए कहा गया है। यह कार्रवाई असाधारण, बेवजह और अन्याययुक्त मालूम होती है। लेकिन दूसरा पक्ष क्या कहता है, इसका हमें साफ-साफ पता नहीं। लंका सरकारके पक्षका अध्ययन, और अगर सरकारकी तरफसे न्यायतः कोई उज्र या दलील पेश की गई तो उसके लिए उचित गुंजाइश भी पंडित जवाहरलाल करेंगे। हमें आशा करनी चाहिए कि लंका सरकार और लंकामें बसनेवाले भारतीय, दोनों ही सम्मानपूर्ण समझौतेके लिए रास्ता आसान कर देंगे।

मुझे यह कबूल करना ही चाहिए कि जब मुझे इन तीव्र मतभेदोंका पता चला, तो बड़ा आश्चर्य हुआ। अपनी लंका-यात्राके[1] दिन मुझे खूब अच्छी तरह याद हैं। भारतीयों और लंकावासियोंके बीच अत्यन्त हार्दिक सम्बन्ध दिखाई देते थे। लंकाके बौद्ध भिक्षुओं और साधारण जनने मेरे ऊपर अपना अपार प्रेम बरसानेमें हिन्दुस्तानियोंके साथ होड़सी की थी। मुझे याद नहीं पड़ता कि किसी आदमीने मुझसे लंकावासियों और हिन्दुस्तानियोंके तीव्र मतभेदोंके बारेमें कोई शिकायत की हो। तब फिर लंकाकी आंशिक उत्तरदायी सरकारके कारण क्यों दोनोंमें इतने तमाम फर्क पड़ गये हैं, जो हम आज देख रहे हैं? इस रहस्यका उद्घाटन पंडित जवाहरलाल करेंगे।

राजकोट — क्या यह दगा था?

मैंने हमेशा यह अनुभव किया है कि जब-कभी गांधीजी ने आध्यात्मिक दृष्टिकोणसे कुछ किया है, तो वह व्यावहारिक तौरपर भी ठीक ही सिद्ध हुआ है। उनकी महत्ता इस कारण नहीं है कि उन्होंने विभिन्न देशोंके धर्मग्रन्थोंमें पाये जानेवाले आध्यात्मिक सिद्धान्तोंका प्रतिपादन किया है; उनकी संसारको जो देन है, वह यही है कि उन्होंने संसारको दिखा दिया है कि धर्मग्रन्थोंके उन आध्यात्मिक सिद्धान्तोंको अपने रोजमर्राके जीवनमें किस तरह अमलमें लाया जा सकता है। गांधीजी का आध्यात्मिक दृष्टिसे किया गया कोई काम

१. नवम्बर, १९२७ में; देखिए खण्ड ३५।

> यदि यह सिद्ध नहीं करता कि व्यवहारतः भी वही ठीक था, तो मैं समझूंगा कि गांधीजी वहाँतक असफल हुए। उन्होंने राजकोटमें जो-कुछ किया, उसे भी इसी कसौटीपर कसना चाहिए।
>
> जब गांधीजी ने यह अनुभव कर लिया कि वाइसरायसे हस्तक्षेपके लिए अनुरोध करने के कारण उनका उपवास दूषित हो गया है, तो उन्होंने ग्वायरके फैसलेके लाभको छोड़ दिया। इसका व्यावहारिक परिणाम तो यह हुआ कि वे राजकोटकी समस्यासे मुक्त हो गये। लेकिन क्या उनके इस परित्यागके कारण वाइसराय अपनी इस जिम्मेवारीसे मुक्त हो गये कि वे यह देखें कि राजकोटकी घोषणापर चीफ जस्टिसकी व्याख्याके अनुसार अमल होता है या नहीं? मेरी रायमें, गांधीजी द्वारा फैसलेके परित्यागके कारण तो वाइसरायपर दूनी जिम्मेवारी आ गई है। और अगर वाइसराय अपने इस कर्त्तव्यका पालन नहीं करते, तो राजकोटके लोगोंको अपनी इच्छानुसार कदम उठाने की स्वतन्त्रता मिल जाती है, और यदि घोषणा अकारथ गई, तो कांग्रेसको वाइसरायके विरुद्ध एक बड़ा जबरदस्त अभियोग लगाने का कारण मिल जायेगा।

एक प्रसिद्ध कांग्रेसीने 'हरिजन' में छपने के लिए एक लेख भेजा था। उपर्युक्त उद्धरण उसीका सारांश है। उन्होंने राजकोटमें उठाये गये मेरे कदमकी सफाई देते हुए मेरे विरुद्ध लगाये गये इस आक्षेपके जवाबमें कि मैंने राजकोटकी प्रजाको दगा दिया है, परिश्रमपूर्वक एक बड़ा भारी केस तैयार कर दिया है। इस टिप्पणीका शीर्षक वही है, जो पत्र-लेखकने दिया है। मैं पाठकोंको उनकी सारी दलीलें सुनाकर उबाना नहीं चाहता। आखिरकार, सिर्फ समय ही सबसे सच्ची कसौटी है। यह अन्तमें बता देगा कि मैंने जो-कुछ किया, वह ठीक था या गलत। लेकिन इस लेखका सारांश इसलिए दिया है, क्योंकि इसमें वाइसरायके कर्त्तव्यके बारेमें एक नया विचार पेश किया गया है। सर मॉरिस ग्वायरके फैसलेका त्याग करते समय मैंने परिणामका विचार नहीं किया था। ज्यों ही मैंने देखा कि वाइसरायका हस्तक्षेप प्राप्त करने की इच्छा रहने के कारण मेरा उपवास दूषित हो गया है, मैंने फैसलेका परित्याग कर दिया। लेकिन अब इस पत्रके लेखकने इसका जिक्र किया, इसलिए उनकी युक्तिमें जो बल है, उसे मुझे स्वीकार करना चाहिए। चीफ जस्टिसके फैसलेका मेरे द्वारा परित्याग वाइसरायकी इस जिम्मेवारीको दूना कर देता है कि वे यह देखें कि राजकोट सरकारकी घोषणा नं० ५० का चीफ जस्टिसकी व्याख्याके अनुसार पालन होता है या नहीं। जहाँतक मेरा खयाल है, मेरा फैसलेका परित्याग मुझे वाइसरायसे हस्त-क्षेपके लिए कहने से रोकता है। मैं पत्र-लेखककी इस बातसे भी सहमत हूँ कि अगर मेरा कोई ऐसा काम, जिसके आध्यात्मिक होने का दावा किया जाता है, अव्यावहारिक साबित होता है, तो उसे मेरी असफलता ही समझना चाहिए। मेरा

तो यह विश्वास है कि अत्यन्त आध्यात्मिक कार्य सच्चे अर्थोंमें अतिशय व्यावहारिक भी होता है।

बम्बई, २६ जून, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-७-१९३९

३९५. दक्षिण आफ्रिका-सम्बन्धी प्रस्ताव

यह प्रसन्नताकी बात है कि कांग्रेस महासमितिका दक्षिण आफ्रिका सम्बन्धी प्रस्ताव[1] विकृत होने से बच गया। विद्वान् डाक्टर लोहियाका संशोधन उसे बिलकुल बिगाड़ देता। पं० जवाहरलालकी सलाह मान लेने के लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ। उनकी सलाह यह थी कि गांधीजी दक्षिण आफ्रिकाके बारेमें विशेषज्ञ और अधिकारी व्यक्ति हैं। उनकी आयुका उत्तम भाग दक्षिण आफ्रिकामें ही बीता है और वहाँसे चले आने के बाद भी उस महान् देशसे उनका सम्बन्ध नहीं टूटा है। इसलिए उनकी सम्मतिका आदर करना चाहिए। यह छोटी-सी घटना इस बातका स्पष्ट प्रमाण है कि असली अनुभवके बिना महज विद्वत्ता और मानव-हित करने की इच्छा उस उद्देश्यके लिए खतरनाक भी हो सकती है, जिसकी हिमायत की जाती है। मेरे उस प्रस्तावमें डॉ० लोहियाका संशोधन उतना ही बिगाड़ कर सकता था, जितना कि समाजवाद-सम्बन्धी कठिनाईको दूर करने के लिए समाजवादके प्रामाणिक विद्वान् के नाते डॉ० लोहिया द्वारा तैयार किये गये प्रस्तावको मेरा संशोधन बिगाड़ सकता है। अगर मैं ऐसी कोई कोशिश करूँ, तो वे ठीक ही कह सकते हैं — 'यदि आप मेरे प्रस्तावको पसन्द नहीं करते, तो इसे पास मत कीजिए, लेकिन मेरे प्रस्तावको बिगाड़िए नहीं। इससे तो वह उद्देश्य ही विफल हो जायेगा, जिसके लिए यह प्रस्ताव बनाया गया है।' मैंने दक्षिण आफ्रिका-सम्बन्धी प्रस्तावके बारेमें जो-कुछ कहा है, वह प्राय. कार्य-समितिके सभी प्रस्तावोंपर लागू होता है। कांग्रेस-सम्बन्धी मामलोंमें कार्य-समिति ही विशेषज्ञ है। यदि कांग्रेस महासमितिके सदस्य कार्य-समितिको अपनी युक्तियों द्वारा परिवर्तनके औचित्यसे सहमत किये बिना उसके प्रस्तावोंमें परिवर्तन करते हैं, तो ऐसा प्रयत्न करना खतरनाक है। जब मैं कार्य-समितिका सदस्य था, तब मैंने यह सलाह कई बार दी थी। अगर इस व्यावहारिक सलाहको स्वीकार कर लिया जाये, तो राष्ट्रीय कार्य बहुत सुगमतासे निबटता जाये।

इतना कहने के बाद, मैं डॉ० लोहिया और उनके मानवजातिका हित करने की इच्छा रखनेवाले साथियोंको बता दूँ कि दक्षिण आफ्रिकाकी जूलू, बन्तू तथा दूसरी जातियोंका मेरे मनमें किसीसे कम खयाल नहीं है। इन जातियोंमें मेरे अनेक घनिष्ठ

१. देखिए पृ० ३९९-४००।

मित्र थे। मुझे उन्हें सलाह देने का सौभाग्य प्राप्त होता रहता था। दक्षिण आफ्रिकामें मैं निरन्तर भारतीयोंको यह सलाह दिया करता था कि इन भोले लोगोंको न कभी धोखा दें, न इनका शोषण करें। लेकिन दोनोंके हितोंको एक मानकर चलना सम्भव नहीं था वहाँके मूल निवासियोंके अधिकार और सुविधाएँ (यदि उन्हें यह नाम दिया जा सके) भारतीयोंके अधिकारों और सुविधाओंसे भिन्न हैं। इसी तरह उनकी कठिनाइयाँ और उनके कारण भी भिन्न हैं। लेकिन अगर मुझे यह मालूम हो जाये कि हमारे अधिकारों और उनके प्रधान हितोंमें विरोध है, तो मैं उन अधिकारोंको छोड़ देने की सलाह दूँगा। जिस तरह हम भारतके निवासी हैं, उसी तरह वे भी दक्षिण आफ्रिकाके निवासी हैं। यूरोपीय लोग निःसन्देह लुटेरे, शोषक या विजेता अथवा ये तीनों एकसाथ हैं। आफ्रिकावासियोंके लिए खास तौरसे बनाये हुए कायदे-कानून ही अलग हैं। दक्षिण आफ्रिकी संघ सरकारकी भारतीयोंको अलग बसाने की नीति और आफ्रिकी जातियोंसे सम्बन्धित नीतिमें कोई समानता नहीं है। इसकी तफसीलमें जाना मेरे लिए अनावश्यक है। इतना कहना ही काफी है कि आफ्रिकी जातियोंकी महान् समस्याके मुकाबले, जो उनकी प्रगतिको रोक कर खड़ी है, हमारा सवाल बहुत छोटा है। इसलिए एक ही साथ इन दोनोंकी चर्चा नहीं की जा सकती। महासमितिका प्रस्ताव सिर्फ हमारे देशभाइयोंसे सम्बन्धित एक सवालपर उनके सत्याग्रहसे ताल्लुक रखता है। अब यह हम आसानीसे समझ सकते हैं कि यदि डॉ० लोहियाका संशोधन भी रहता, तो वह प्रस्तावके लिए घातक होता। उससे सारा प्रस्ताव ही बिलकुल निरर्थक हो जाता और संघ सरकारसे की गई अपीलमें कोई जोर ही न रहता।

लेकिन बुराईमें से भी अक्सर भलाई निकल आती है। बुद्धिमत्तासे वापस लिया गया यह संशोधन आफ्रिकियोंको और सामान्यतया सारे संसारको यह बताता है कि भारतवर्ष संसारकी तमाम शोषित जातियोंके प्रति सहानुभूति तथा आदरकी भावना रखता है और उनमें से किसी के भी महत्त्वपूर्ण हितोंको हानि पहुँचाकर वह कोई लाभ नहीं उठाना चाहेगा। सच तो यह है कि साम्राज्यवादके विरुद्ध युद्ध तबतक पूरा सफल नहीं हो सकता जबतक कि सब प्रकारका शोषण बन्द नहीं हो जाता। उसको बन्द करने का एक ही तरीका है कि प्रत्येक शोषित जाति या राष्ट्र किसी दूसरेको नुकसान पहुँचाये बगैर स्वतन्त्रता प्राप्त कर ले।

यदि मैं दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंको यह चेतावनी न दे दूँ कि वे इस प्रस्तावके आधारपर हवाई महल न खड़े करें तो दक्षिण आफ्रिकावाले प्रस्तावका मेरा परीक्षण अधूरा रह जायेगा। यह प्रस्ताव तभी कुछ महत्त्व रख सकता है, जब वहाँके भारतीय अपना सोचा हुआ कदम उठायें। अगर वे अपने आत्मसम्मानकी रक्षाके लिए स्वयं ही तैयार नहीं हैं, तो उनकी मातृभूमि उसकी रक्षा नहीं कर सकेगी। इसलिए उन्हें इसके लिए सब प्रकारके कष्ट-सहनके लिए तैयार रहना चाहिए। सम्भव है कि संघर्ष बहुत लम्बा हो जाये और बहुत बलिदान भी करना पड़े। लेकिन उन्हें सम्पूर्ण भारतका नैतिक समर्थन अवश्य मिलेगा। इसमें हिन्दुओं, मुसलमानों और

यूरोपीयों-सहित सभी पक्ष एक हैं। भारत-सरकार अपनेको भले असमर्थ समझे। मेरा खयाल है कि वह इतनी असमर्थ है नहीं, जितना कि अपनेको समझती है। मुझे २४ जून के 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में पढ़ा यह प्रेरक वाक्य याद हो आता है —"हममें शक्ति अधिक और संकल्प कम है।" मैं जानता हूँ कि सरकारकी सहानुभूति भारतीयोंके साथ है। यदि उसमें संकल्पका बल भी हो, तो उनमें शक्ति भी आ जायेगी। दक्षिण आफ्रिकाके हमारे देशभाई सत्याग्रहकी शर्तोंको जानते हैं। सबसे बड़ी शर्त है—आपसमें एकता।

दक्षिण आफ्रिकाकी संघ सरकारसे भी मैं कहूँगा—"आपने कभी अपना पक्ष सिद्ध नहीं किया। आपके अच्छेसे-अच्छे आदमियोंने भी यह स्वीकार किया है कि आफ्रिका-जैसे महाद्वीपमें दो लाख भारतीयोंको खपाना कठिन नही है। वे समुद्रमें एक बूँदके बराबर है। याद रखिए कि उनमें से ८० फीसदी दक्षिण आफ्रिकामें ही पैदा हुए हैं। उन्होंने आपके रीति-रिवाज, रहन-सहन और वेश-भूषा अपना ली है। वे काफी समझदार हैं। उनके वे ही विचार और भावनाएँ है, जैसी कि आपकी हैं। वे अछूतोंकी तरह अलग बस्तियोंमें बसाये जाने की अपेक्षा ज्यादा अच्छे व्यवहारके योग्य हैं। आप उनके साथ न्याय नही बरत रहे हैं। आपको इसपर भी आश्चर्य नहीं करना चाहिए कि यदि अन्तमें भारतीय यह कहने लगें कि 'हम अलग बनाये हुए शिविरोंमें रहते हुए जीने की अपेक्षा आपकी जेलोंमें मरना पसन्द करेंगे।' मुझे निश्चय है कि इस हदतक जाना आप पसन्द नही करेंगे। ध्यान रखें, आपके बारेमें कोई यह न कह सके कि आप अपने वचनोंका भी निर्वाह नही करते।"

बम्बई, २६ जून, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-७-१९३९

३९६. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

बम्बई
२६ जून, १९३९

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र अभी-अभी मिला है। मेरे लिए तू दस वर्षकी बालिका ही है और हमेशा ऐसी ही रहेगी। मैं यहाँ डूबा हुआ हूँ। यहाँ १ तारीखतक हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४००) से।

३९७. पत्र : बलवन्तसिंहको

विड़ला भवन, बम्बई
२६ जून, १९३९

चि० बलवन्तसिंह,

तुमारा खत मिला। डेरीके बारेमें सम्मति चार दिन पहले आ गई। मैंने तो पंचगनी जाने का तार बनाकर प्यारेलालको दिया था लेकिन वह तार भेजा ही नही गया ऐसा आज ही जाना। क्या करूं? जैसा है ऐसा हमारा कुटुंब है। इस अव्यवस्थाके लिये मैं निजी जिम्मेदारी प्रतिक्षण महसुस करता हूं। लेकिन मेरा यह दोष अब निकल नहीं सकेगा।

अब तुमको पंचगनी नहीं भेजूंगा। लाहौर जाने की तैयारी करो। सरदार सर दातारसिंहने सब प्रबंध करने का कबूल कर लिया है।

कब जाओगे? मुझे तारीख भेजो तो मैं उनको खबर भेज दूंगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९२१) से।

३९८. राष्ट्रीय झण्डा

राष्ट्रीय झण्डेके इस्तेमालका सवाल आज भी लोगोंके दिलोमें हलचल मचा रहा है। जब असहयोग अपनी चरम सीमापर था, तब सबसे पहले इसे बनाया गया था।[1] उस समय बिना किसी विरोधके, बिना किसी हिचकिचाहटके सब जातियोंने इसे स्वीकार कर लिया था। मुसलमान और दूसरी जातियाँ भी इसे फहराने, ले जाने और इसकी इज्जत करने में हिन्दुओंसे होड़ करती थीं। मुझे अभीतक याद है कि मैंने अली-बन्धुओंको एकाधिक मंचोंसे उमंग के साथ उसकी प्रशंसा करते हुए सुना था। यह झण्डा साम्राज्यवादी शोषणके विरुद्ध एक अहिंसावादी देशके उस शान्तिपूर्ण विद्रोहका प्रतीक था जिसके लिए शुद्ध स्वदेशी और गरीबसे-गरीब वर्गके साथ तादात्म्यके सूचक चरखे और खादीके जरिये किये जानेवाले जबरदस्त, रचनात्मक और संगठित प्रयत्नका मार्ग चुना गया था। यह झण्डा अलग-अलग सम्प्रदायोंकी अटूट एकताका प्रतीक था। इसके रंग खास तौरपर सोच-समझकर चुने गये थे। कोई दूसरा झण्डा राष्ट्रीय झण्डेके तौरपर उससे होड़ नहीं कर सकता। राष्ट्रीय समारोहोंपर निर्विवाद

१. देखिए खण्ड १९, पृ० ५६८-७० खण्ड ३८, पृ० ३६१ भी।

रूपसे सबको इसकी इज्जत करनी चाहिए। लेकिन इसके साथ ही यह भी मानना चाहिए कि आज इसकी इतनी इज्जत नही है। सादगी, पवित्रता और एकताका और इनके द्वारा नैतिक, आर्थिक और राजनीतिक शोषणके विरुद्ध दृढ़ संकल्पयुक्त विद्रोहका प्रतीक होने के बजाय आजकल यह झण्डा साम्प्रदायिक झगड़ोंका कारण बन गया है। काग्रेसियोंने भी कभी-कभी तिरंगे झंडेकी अपेक्षा लाल झण्डेको तरजीह देनें की कोशिश की है। कुछ काग्रेसी तो इसकी निन्दा करने में भी नही हिचकिचाते।

ऐसी परिस्थितियोमें मेरी राय तो यह है कि जबतक लोग इसकी कमी महसूस करके इसे फिरसे पहले-जैसी प्रतिष्ठा प्रदान करने के लिए अधीरतापूर्वक माँग नही करते तबतक सार्वजनिक समारोहोसे इसे अलग रखना चाहिए और कभी फहराना नही चाहिए। लेकिन कांग्रेसियोकी बहुत बड़ी संख्या, जिसने इस सुपरीक्षित झण्डेके नीचे खड़े होकर बलिदान किया है और उससे शक्ति और प्रेरणा हासिल की है, उस हदतक नही जाना चाहेगी, जहाँतक मैं उसे ले जाना चाहता हूँ। इसलिए मेरी उन्हें यह सलाह है कि जहाँ मिली-जुली भीड़में इसका जरा-सा भी विरोध हो, वहाँ झंडा नही फहराना चाहिए। स्कूलो, कालेजो, स्थानीय बोर्डों, म्युनिसिपल कौंसिलो आदि इमारतोपर इसे फहराने के प्रसंगोपर ऐसा विरोध हो सकता है। जहाँ एक भी सदस्य विरोध करे वहाँ भी राष्ट्रीय झण्डा फहराने का आग्रह नही करना चाहिए। इसे एक आदमीका अत्याचार भी नही कहना चाहिए। बहुत-से आदमियोमें एक भी व्यक्ति जब विरोध करे और उस विरोधको स्वीकार कर लिया जाये तो यह बहुसख्य लोगोकी उदारता और दूरदर्शिताका सबूत है। मुझे इसमें जरा भी सन्देह नही कि इस समस्याको निबटाने का यह अत्यन्त प्रभावशाली अहिंसात्मक तरीका है। मेरी सलाह तो उन स्थानोंके बारेमें भी लागू होती है, जहाँ झण्डा पहलेसे फहराता है। जब समस्त राष्ट्र अबतक के इतिहासमें शायद सबसे बड़े पैमानेपर असहयोगका संग्राम चला रहा था, यह झण्डा विजयपूर्वक बहुत-से स्थानोंपर फहराया गया था। आज जमाना बदल गया है। जहाँ कही भी विरोध किया जाता है, वह साम्प्रदायिक झगडेका रंग पकड़ लेता है। जिन लोगोको झण्डे और साम्प्रदायिक एकतासे प्रेम है, उनके लिए बुद्धिमानी इसीमें है कि अल्पमत चाहे कितना ही नगण्य क्यो न हो, वे उसके विरोधको मान लें।

राष्ट्रीय झण्डेके बारेमें मैंने जो-कुछ कहा है, 'वन्देमातरम्'[1] के गायनपर भी वही लागू होता है। सवाल यह नही कि यह गीत किसने लिखा और कैसे एवं कब बना। बंग-भंगके दिनोमें यह हिन्दुओं और मुसलमानों, सभीका बहुत ही प्रभावशाली युद्धका नारा बन गया था। यह साम्राज्यवाद-विरोधी नारा था। जब मैं अपनी किशोरावस्था में 'आनन्दमठ' या उसके अमर लेखक बंकिमचन्द्रके बारेमें कुछ नही जानता

१. बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय लिखित आनन्दमठ नामक पुस्तकमें दिये गये इस गीतके प्रथम दो पद्यांशोंको राष्ट्र-गानके रूपमें गानेका सुझाव देते हुए १९३७ में काग्रेस कार्य-समितिने प्रस्ताव किया था कि लोग चाहें तो इसके साथ या इसके बदले और कोई राष्ट्र-गान भी गा सकते हैं।

था, तब भी 'वन्देमातरम्' ने मुझे अभिभूत कर लिया था। और जब मैंने सबसे पहली बार 'वन्देमातरम्' को गाते हुए सुना तब मैं मंत्रमुग्ध हो गया था। पवित्रतम राष्ट्रीय भावना इस गीतमें मैंने देखी। मुझे महसूस ही नहीं हुआ कि यह केवल हिन्दुओंका गीत है या सिर्फ हिन्दुओंके लिए रचा गया है। बदकिस्मतीसे आज हमारे बुरे दिन आ गये हैं। जो-कुछ पहले सोना था, आज वह खोटी धातु हो गया है। ऐसे वक्तमें अपने शुद्ध सोनेको बाजारमें लाना और उसे खोटी धातुके दामों बेचना बुद्धिमत्ता नहीं है। मैं यह खतरा नहीं उठाऊँगा कि मिली-जुली भीड़में 'वन्देमातरम्' का गायन हो और उसपर कोई झगड़ा करे। यदि इसका प्रयोग हम न करें, तो इस राष्ट्रीय गीतको कोई क्षति न पहुँचेगी। इसने लाखों भारतीयोंके दिलोंपर अधिकार कर रखा है। यह बंगालके अन्दर या बाहर लाखों लोगोंके हृदयकी गहराई तक पहुँचकर देशभक्तिके भावको आन्दोलित कर देता है। बंगालने देशको और जो देनें दी है, उनमें से इस गीतकी कुछ कड़ियाँ भी राष्ट्रको एक देन है। जबतक राष्ट्र जीवित है, तबतक यह राष्ट्रीय झण्डा और यह राष्ट्र-गीत भी अमर रहेंगे।

बम्बई, २७ जून, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-७-१९३९

३९९. पत्र : कृष्णचन्द्रको

२७ जून, १९३९

चि० कृष्णचंद्र,

अब तो सुशीलाबहन आ गई है। वह सब लिखेगी। बलवंतसिंहका खत इसके साथ है। अब उनको वहां नहीं भेजुंगा। हाल तो तुम रहो। किसीकी मदद चाहीये तो ले लो। मेरे वापस आने के बाद देखा जायगा, क्या किया जाय। रहो तो स्वस्थचित्त होकर ही रहना। पुस्तकके बारेमें उत्तर देना भूल गया हूं। मंगवा लेना।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३२०) से

४००. पत्र : पुरातन जे० बुचको

बम्बई
२८ जून, १९३९

चि० पुरातन,

मुस्लिम बहनोंमें अमतुलबहन काम कर रही है। उस काममें हरिजन-सेवाको व्याघात न पहुँचाते हुए जितनी मदद दी जा सके उतनी तुम दोनो देना।

आनन्दीके[1] साबरमती स्टेशनपर ही रह जाने की बात जरा भी अच्छी नही लगी। कुछ मिनटके लिए उसके साथ बातचीत करने की इच्छा तो मनमें ही रह गई।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१७३) से

४०१. पत्र : राधाकृष्ण बजाजको

विश्राम वाटिका, जुहू
२८ जून, १९३९

चि० राधाकिसन,

तुमारा खत तो मुझे मिला ही था, दूसरा अब मिला। जबतक वाइसरोयके तरफसे तनिक भी आशा है हम समझौताके टूट जाने का मनमें सोचें न लिखें।

वाइसरोयको जो खत मैंने भेजा[2] उसकी नकल उसी रोज भेजना तो था, लेकिन किसीकी शायद मैं कह नही पाया। अगर नही मिली है तो इसके साथ तो मिलेगी ही। प्राइम मिनिस्टरके लिए ठहरने की बात निकम्मी समझी जाय।

मुसलमानोके सत्याग्रहके हाल देते रहो।

जमनालालके गोड[3] की बात कुछ चिंता कराती है। इसमें मुख्य वस्तु आराम है। फल काफी लेते हैं? हरी पत्तियोंका शाक भी लेना आवश्यक है। तेल बंध होना चाहीये। वैद्यकी दवा होती थी, उसका क्या? वहाँ हस्पताल अच्छी है? पैरके [एक्सरे] फोटो सुशीलाको बताने के लिये भेजो।

मैं शायद दो तारीखको यहांसे सरहदी सूबेके लिये रवाना हूंगा। महादेवको राजकोट भेजा है। वहांका काम सुधर रहा था, वह बिगडने का अंदेशा है।

१. पुरातन बुचकी पत्नी
२. २२ जूनका देखिए, पृ० ३९५-६।
३. घुटना

वा कुछ बीमार पड़ गई है। अच्छी हो जायगी।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१२५) से

४०२. तार: सर जे० जी० लेथवेटको

२९ जून, १९३९

तालचरकी संशोधित घोषणा अभी-अभी मिली है। इसे ध्यानपूर्वक पढ़ जाने के बाद कहना पड़ता है कि इससे स्थितिका निराकरण नही होता। यह शरणार्थियोंको कोई आशा नही दिलाती। मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा कि वाइसराय महोदय राजासे इससे अधिक अच्छी चीज दिलवा भी नहीं सकते थे। अगर ऐसी बात है तो मुझे, चाहे जितने संकोचपूर्वक, शरणार्थियोंको यही सलाह देनी पड़ेगी कि जबतक वांछित राहत नहीं प्राप्त होती तबतक वे कष्ट-सहन करते रहें। लेकिन सार्वजनिक घोषणा करने के पूर्व अगर मैं यह जान सकूँ तो जानना चाहूँगा कि क्या वाइसराय महोदय राजनीतिक विभागके अधिकारियोंके हस्ताक्षरोंसे युक्त दस्तावेजोंमें दिलाई गई आशा पूरी कराने के लिए कुछ और कर सकते हैं।[1]

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे: लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. जे० जी० लेथवेटने २ जुलाईका इसका उत्तर देते हुए अपने तारमें लिखा था: "...वाइसराय महोदयकी सूचनाके अनुसार राजाकी पहली घोषणाको अनुपूरित करनेवाली उनकी सबसे ताजी घोषणा शरणार्थियोंको दिलाई गई सभी आशाओंको सारतः पूरा करती है। उड़ीसा सरकारके एक जिम्मेदार मन्त्रीके सामने स्थिति पूरी तरह स्पष्ट कर दी गई है और उसने यह वचन दिया है कि शरणार्थियोंको इन शर्तोंपर लौटाने के लिए वह भरसक प्रयत्न करेगा। परमश्रेष्ठ महसूस करते हैं कि शरणार्थियोंके सभी सच्चे शुभचिन्तकोंको साथ मिलकर उन्हें यह सलाह देनी चाहिए ताकि मौसम खराब होने के कारण उनकी कठिनाइयाँ और बढ़ जायें, इसके पहले ही वे अपने-अपने घर लौट जायें। कोई और रास्ता अख्तियार करने का मतलब एक ऐसे उद्देश्यके लिए उनके हितकी बलि दे देना होगा जिसको किसी भी तरह उचित ठहराना स्पष्ट ही असम्भव जान पड़ता है।"

४०३. पत्र : अमृतकौरको

विश्राम वाटिका, जुहू
डाकखाना सांताक्रूज, बम्बई
२९ जून, १९३९

प्रिय छलिया,[१]

तुमने अपने पत्रोंपर जो प्रतिबन्ध लगा रखा है, उसके कारण सारे प्रश्नोंका उत्तर दे पाना मेरे लिए असम्भव हो जाता है। वे या तो महादेवको दे दिये जाते हैं अथवा मेरे पढ़ चुकने के बाद तुरन्त नष्ट कर दिये जाते हैं।

जवाहरलाल नेहरूके निमन्त्रणके बारेमें मैं तुम्हें सूचित कर चुका हूँ। मेरे विचारसे वे योजना[२] बनानेमें जो श्रम कर रहे हैं, वह निरर्थक है। किन्तु वे किसी भी ऐसी चीजसे सन्तुष्ट नहीं हो सकते जो बड़ी न हो।

अब लिखनेमें बाधा पड़ गई है, और अगर इस पत्रको इसी डाकसे जाना है तो इसे यहीं समाप्त करना होगा।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६५९) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ६४६८ से भी

४०४. पत्र : एफ० मेरी बारको[३]

३० जून, १९३९

एक पंक्ति केवल इतना ही कहने के लिए लिख रहा हूँ कि तुम अपनी माताकी मृत्युपर शोक मत करना। परमात्मामें जीवन्त आस्थाकी परीक्षा ऐसे मौकोंपर ही होती है।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०७६) से। सी० डब्ल्यू० ३४०६ से भी; सौजन्य: एफ० मेरी बार

१. अमृतकौरको दी गई नई उपाधि; देखिए, पृ० ३९०।

२. जवाहरलाल नेहरू भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा १९३८ में नियुक्त की गई राष्ट्रीय योजना समितिके अध्यक्ष थे।

३. ये पंक्तियाँ ३० जून, १९३९ को मीराबहन द्वारा एफ० मेरी बारको लिखे गये पत्रपर गांधीजी ने लिखी थीं; देखिए "पत्र: एफ० मेरी बारको", पृ० ४२७।

४०५. पत्र : सैयद असगर हसनको

१ जुलाई, १९३९

प्रिय मित्र,

पिछले माहकी १९ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद। जैसे ही मुझे समय मिलेगा मैं आपका भेजा हुआ साहित्य पढ़ जाने की कोशिश करूँगा। वैसे यह मेरे लिए बहुत मुश्किल है। मेरे पास इतने अधिक काम हैं कि इसके लिए जितना अध्ययन अपेक्षित है उतना कर नहीं पाऊँगा। इस बीच यह जानकर मुझे दुःख होता है कि मामला[1] दोनों फिर्कोंके संयुक्त प्रयत्नसे आपसमें ही नही निबटाया जा सकता। एक बाहरी आदमीकी तरह मुझे तो मामलेको इस तरह आपसमें निबटा लेना आसान दिखता है।

आपके पत्रसे मालूम होता है कि मौलाना साहबसे आपकी मुलाकातका कोई नतीजा नही निकला।

जनाब सैयद असगर हुसन साहब
अवकाशप्राप्त सत्र न्यायाधीश
तजिमल एम० विक्टोरिया स्ट्रीट
लखनऊ, सं० प्रा०

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

४०६. बेल्जियन कांगोके भारतीय

बेल्जियन कांगोमें रहनेवाले हमारे भारतीय भाइयोंका मामला इतना आसान नहीं है कि फौरन सुलझ जाये। कुछ भारतीय प्रवासियोंपर गैर-कानूनी सोना रखने के आरोपमें प्राविधिक रूपसे तो वहाँके स्वर्ण-कानूनके मातहत किन्तु, कहा जाता है, वस्तुतः राजनीति से प्रेरित होकर मुकदमा चलाया जा रहा है। इस सम्बन्धमें जो पुस्तिका निकाली गई है उसमें यह बताया गया है कि अभियुक्तोंको बगैर उचित कारणके गिरफ्तार कर लिया गया था। कहा जाता है कि सरकारी पक्षके गवाहोंने भी झूठी गवाही दी। अभियुक्तोंका मुनासिब बचाव करनेकी तजवीजके रास्तेमें हर तरहके विघ्न डाले जा रहे हैं। कांगोमें रहनेवाले हमारे देशभाई यह आशा रखते हैं कि हम हिन्दुस्तानके किसी सुप्रसिद्ध वकीलको उनके बचावके लिए भेजें। भारत सर-

१. तात्पर्य शिया-सुन्नी मतभेदसे है; देखिए "एक पत्र" पृ० ३१८-९।

कारसे भी उनकी तरफसे प्रार्थनाएँ की गई हैं। यह मुकदमा चाहे जितना पेचीदा हो तो भी मूलतः यह ऐसा है जिसमें जनताकी तरफसे कोई प्रभावकारी कार्रवाई करना शायद ही सम्भव हो। अलबत्ता, भारत-सरकार इस सम्बन्धमें बहुत-कुछ कर सकती है। वह इंग्लैण्डके विदेश विभागके जरिये सच्ची स्थितिका पता लगा सकती है। कांगो-स्थित ब्रिटिश वाणिज्य-दूतको इस मुकदमेपर ध्यान देने और, यह देखने के लिए कि अभियुक्तोंको ठीक-ठीक न्याय मिला है या नहीं, आदेश भेजा जा सकता है। ऐसे उदाहरण मौजूद हैं कि ब्रिटिश वाणिज्य-दूतोंको ऐसे मुकदमोंमें अपने संरक्षितोंके हितोंकी रक्षा करने की दृष्टिसे वकील करने तकके आदेश मिले हैं। मुझे आशा है कि भारत सरकार बेल्जियन कांगोके इन भारतीयोंके इस दुःखद मामलेपर जरूर ध्यान दे रही होगी।

बम्बई, ३ जुलाई, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-७-१९३९

४०७. पत्र : विट्ठल ल० फड़केको

बम्बई
३ जुलाई, १९३९

चि० मामा,

हम बुधवार ५ तारीखको रवाना होंगे।[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८४१)से

४०८. पत्र : मंगलदास पकवासाको

बम्बई
३ जुलाई, १९३९

भाई मंगलदास,

चूँकि मैंने महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किये हैं, इसलिए मैंने मसौदेको फिरसे टाइप करवाया। असली मसौदा साथ भेज रहा हूँ। मैं यहाँ ५ तारीख तक तो हूँ ही। मिलना जरूरी हो तो मिल जाना। मैंने परिवर्तनोंको मूल मसौदेसे नहीं मिलाया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू ४६८३)से। सौजन्य : मंगलदास पकवासा

१. सीमा-प्रान्तके लिए।

४०९. पत्र : मुन्नालाल गंगादास शाहको

बम्बई
३ जुलाई, १९३९

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारे दोनों पत्र मिले। आखिरी पत्र सुन्दर है। मानापमानको भुला देना, यह तो पहला पाठ है। नियम बिना सूर्यादि नहीं चल सकते, नियम बिना रेलगाड़ी नहीं चलती और यदि चले तो लाखों व्यक्ति मर जायें। नियमके बिना इस जगत्‌में कुछ भी नहीं चल सकता। इसलिए जहाँ जाओगे वहाँ नियमका पालन तो करना ही पड़ेगा। और जहाँ हम अपने-आपको रजकणसे भी छोटा समझते हैं तो वहाँ कौन हमारा अपमान करता है अथवा हम किससे दु:खी हों? इतना लिखने के बावजूद तुम्हें जहाँ शान्ति मिल सकती हो वहीं रहने में मैं तुम्हारा कल्याण समझता हूँ। यदि सेगाँवमें तुम्हें शान्ति नहीं मिल सकती तो इतना निश्चित जानो कि मेरे साथ तुम सत्संग नहीं कर सकते। जहाँ सत्संग मिले वहाँ शान्ति अवश्य मिलनी चाहिए। इसीसे मैंने तुम्हें सुझाव[1] दिया है कि यदि तुम्हें सेगाँवमें शान्ति नहीं मिलती तो तुम अरविन्द आश्रम अथवा रमण आश्रम हो आओ। जिन लोगोंको मेरे पास शान्ति नहीं मिली है, मैंने देखा है कि उन्हें वहाँ मिली है। फिलहाल तो तुम्हारा कर्त्तव्य सेगाँवमें ही है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

शारदा कल अपने पतिके पास गई। अभी बम्बईमें है। आज शामको वे लोग सूरत जायेंगे। शकरीबहनसे कहना कि शारदाको यहाँ बहुत लाभ हुआ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५७३)से। सी० डब्ल्यू० ७०२९से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गं० शाह

१. देखिए पृ० २०२।

४१०. पारसी और शराबका व्यापार

क्या ही अच्छा हो कि पारसी अपना रोष छोड दें, और कांग्रेसकी शराब-सम्बन्धी नीतिको उसके सच्चे रूपमें देखें। यदि पूरी ताकतसे सरकारके शराबके परवानोंकी नीलामी या बिक्री बन्द कराने के असदिग्ध अधिकारका सामना करना ही उन्होंने अपना सिद्धान्त बना लिया हो, तब तो कहनेको कुछ रहता ही नही। यह तो सिद्धान्तके विरुद्ध सिद्धान्तके आग्रहवाली बात हुई। पर मुझे आशा है कि उन्होंने ऐसा कोई आग्रहपूर्ण रुख ग्रहण नही किया है। शराब-विक्रेताओं और भंडारियो का उस दिन जो शिष्टमण्डल आया था उसने कोई ऐसा रुख नही अपनाया था।

लेकिन सिद्धान्तका प्रश्न जाने दें, तब भी शराबबन्दी-नीतिको अमलमें लाने के विरुद्ध एतराज पेश किये गये हैं। वे मुख्यत· निम्नलिखित बातोसे सम्बन्ध रखते हैं .

(क) धार्मिक प्रयोजनके लिए शराबका उपयोग करने का अधिकार;

(ख) स्वास्थ्यके लिए शराब पीने का अधिकार;

(ग) प्रजातिगत भेद-भाव;

(घ) बेरोजगार हो जानेवाले, यानी ताड़ी निकालनेवाले भंडारी, ठेकेदार और शराब बेचनेवाले लोगोको मुआवजा,

(ङ) सम्पत्ति-करका परोपकार-कार्योपर पडनेवाला प्रभाव।

ये सब प्रस्तुत प्रश्न है, और इनके स्पष्ट उत्तर मिलने चाहिए। शराबबन्दी-नीतिको अमलमें लाने के विरुद्ध जो आपत्तियाँ उठाई जा रही हैं उनमें से प्रत्येक सही आपत्तिको दूर करने के लिए मन्त्री बँधे हुए हैं।

धार्मिक क्रियाओके सम्बन्धमें या स्वास्थ्यके कारण शराबके उपयोगका हक तो डॉक्टर गिल्डरने हमेशा स्वीकार किया है।

मुझे मालूम हुआ है, कानूनमें कोई प्रजातिगत भेद-भाव नहीं रहेगा। कानूनके प्रशासनमें भेद-भाव नजर आ सकता है। कमसे-कम कानूनको झांसा देनेकी राह बन्द करनेकी दृष्टिसे किसीको, यूरोपीयोंको भी, माँगते ही परमिट पा लेनेका हक नही होगा। हरएक प्रार्थना-पत्रके गुण-दोषके आधारपर उसकी जाँच की जायेगी। यूरोपीयोसे भी देशकी शराबबन्दी-नीतिका आदर करने, और जहाँतक बने शराबका परमिट न माँगनेकी आशा की जायेगी। बम्बईके आर्चबिशपने शराबकी दुकानें बन्द करने के खिलाफ जो बेतुका विरोध[1] किया था उसके बावजूद खुद वे तथा उनके नीचे काम

१. देखिए "नशाबन्दीका अर्थ" पृ० ३६५-९।

करनेवाले अनेक लोग अपने उपयोगके लिए शराबका परमिट नहीं माँगेंगे, ऐसा उन्होंने घोषित किया है, जो उनके लिए शोभनीय है। मुझे मालूम हुआ है कि प्रोटेस्टेंट सम्प्रदायके अनेक पादरियोंने भी ऐसे ही त्यागकी घोषणा की है। दुनियादार यूरोपीयोंमें से बहुत-से अगर इन पादरियोंका अनुकरण करें, तो मुझे कोई आश्चर्य नहीं होगा। तथापि इसमें कोई सन्देह नहीं कि कानूनके अमलमें उन लोगोंकी अपेक्षा, जिन्होंने पारसियोंकी तरह हिन्दुस्तानको सैकड़ों बरसोंसे अपना वतन मान लिया है, यूरोपीयोंके प्रति अधिक नरमी दिखाई जायेगी। पर मुझे कोई सन्देह नहीं कि हरएक सच्चे मामलेमें सहानुभूतिके साथ विचार किया जायेगा। तो फिर क्या मजदूर वर्गोंका सामाजिक तथा आर्थिक कल्याण चाहनेवाली इस आम भावनाको पारसी समर्थन नहीं देंगे? शिक्षित पारसियोंको तो शराबकी इस बुराईको समय रहते रोक देने की आवश्यकता साफ नजर आनी चाहिए।

(घ) और (ङ) मुद्दोंका हल उनसे सम्बन्ध रखनेवालों के हार्दिक सहयोगके बिना नहीं हो सकता। उदाहरणार्थ, पारमार्थिक-संस्थाओंको लें तो उनके ट्रस्टियोंको अपनी दलीलके समर्थनमें तथ्य तथा आँकड़े पेश करने चाहिए। थोड़ी-सी कठिनाइयाँ तो आयेंगी ही। यों तो हरएक करमें कठिनाई आती ही है। पर शराबबन्दीसे किसी पारमार्थिकसंस्थापर अगर बड़ा भारी असर पड़ा, तो मुझे सचमुच आश्चर्य होगा। कुछ भी हो, बम्बई शहरमें संपत्ति-करसे लगभग एक करोड़ रुपयेकी आमदनीका जो अन्दाजा लगाया गया है, वह इतने बड़े पैमानेपर विभक्त की जायेगी कि किसी व्यक्ति या संस्थाको कोई गहरा धक्का पहुँचने को नहीं। पर जिन्हें इसके विपरीत कुछ कहना हो उन्हें अपना पक्ष साबित करना चाहिए।

शराब-विक्रेताओंको अपना पक्ष पूरी तफसीलके साथ पेश करना चाहिए, जिससे सरकार कोई हल निकाल सके। मुझे मालूम हुआ है कि अधिकांश दुकानदारोंने सरकार द्वारा माँगी गई जरूरी जानकारी भी मुहैया नहीं की है। अगर वे रूठकर ऐसा जरूरी सहयोग करनेसे भी विमुख हो जाते हैं जिससे सरकार उनकी सहायता कर सके, तो सरकार उनके बारेमें क्या करे? मैं जानता हूँ कि जो साबित हो चुका है और टाला जा सकता है, ऐसे हर क्लेशप्रद मामलेको निबटाने का सरकार प्रयत्न कर रही है। "टाला जा सकता है" शब्दोंका मैं इरादतन प्रयोग कर रहा हूँ। ताज होटलपर जरूर असर पड़ेगा। पर इसका अर्थ इतना ही हुआ कि शराब की दुकानें रखनेवालों को धक्का पहुँचेगा। बम्बईका ताज होटल एक बहुत बड़ी शराब खपानेवाली पेढ़ी है। जिन अनेक बड़े-बड़े पारमार्थिक-संस्थानोंके लिए टाटाकी फर्म प्रसिद्ध है, उनको निभाने के लिए दूसरा और अधिक अच्छा मार्ग ढूंढ़ निकालने की उपाय-कुशलता उसके पास है। मैं तो यहाँतक कहूँगा कि शराबकी निंदनीय आय बन्द हो जाने से ये दान और भी फलेंगे। जो पारसी जाति सारे संसारमें अत्यन्त दानी और उदार जातिके तौरपर विख्यात है उसके बारेमें दुनिया यह न कहे कि गरीब मजदूर वर्गोंको सामाजिक तथा आर्थिक

विनाशसे उबार लेने के लिए जो सुधार तुरन्त होना चाहिए था उसे सम्पन्न कराने में पारसी पीछे ही नही रहे बल्कि उसके रास्तेमें उन्होंने सचमुच बाधा भी डाली।

बम्बई, ४ जुलाई, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-७-१९३९

४११. अहिंसा बनाम हिंसा

विगत सप्ताहके पहले मैंने राजकोटमें उठाये अपने कदमके सवालको जहाँ छोडा था वहींसे मुझे फिर उसपर विचार करना चाहिए।[1]

सिद्धान्तत तो यदि एक भी व्यक्तिमें अहिंसाका पर्याप्त विकास हो गया है, तो वह अपने क्षेत्रमें हिंसाका — चाहे वह जितनी व्यापक और उग्र हो — मुकाबला करने के साधन ढूंढ़ सकता है। मैंने बार-बार अपनी अपूर्णता स्वीकार की है। मैं पूर्ण अहिंसाका नमूना नहीं हूँ। मैं तो अभी विकास कर रहा हूँ। जितनी अहिंसाका विकास मुझमें अभीतक हुआ है, अबतक उत्पन्न परिस्थितियोंका मुकाबला करने के लिए वह काफी पाई गई है। लेकिन आज चारो ओरके हिंसामय वातावरणका मुकाबला करने में मैं अपनेको असहाय अनुभव करता हूँ। राजकोट-सम्बन्धी मेरे वक्तव्यपर 'स्टेट्समैन' में एक बहुत चुभता हुआ लेख निकला था। सम्पादकने उसमें बताया था कि अंग्रेज लोगोने कभी हमारे आन्दोलनको सच्चा सत्याग्रह नही समझा, लेकिन व्यवहार-कुशल होने की वजहसे उन्होंने इस भ्रमको जारी रहने दिया, हालाँकि वे जानते थे कि यह भी एक हिंसात्मक विद्रोह था। सिर्फ इस वजहसे वह कुछ कम हिंसात्मक नही था कि विद्रोहियोंके पास हथियार न थे। मैंने अपनी याददाश्तसे ही लेखका सार दिया है। जब मैंने यह लेख पढ़ा, मैंने महसूस किया कि इस दलीलमें वजन है। यद्यपि मैं उस आन्दोलनको विशुद्ध अहिंसात्मक प्रतिरोध बनाना चाहता था, फिर भी उन दिनोंकी घटनाओंपर गौर करने पर इसमें सन्देह नही रह जाता कि प्रतिरोधियोंमें हिंसा अवश्य मौजूद थी। मुझे यह भी स्वीकार करना चाहिए कि अगर अहिंसाके संगीतके साथ मैं पूर्ण एकतान होता, तो उसमें तनिक-से भी व्यतिक्रम का मुझे भान हो जाता और मेरी संवेदनशीलता उस बेसुरेपनके खिलाफ विद्रोह कर बैठती।

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि हिन्दुओं और मुसलमानोंको एक साथ मिलकर संघर्ष करते देखकर मैं धोखेमें पड़ गया और मैं उस हिंसाको नही देख सका, जो बहुत-से लोगोंके दिलोमें छिपी बैठी थी। अंग्रेज लोग बड़े कुशल राजनीतिज्ञ और प्रशासक हैं। वे तो वही रास्ता पसन्द करते है जिसमें कमसे-कम संघर्ष हो। उन्होंने जब देखा कि कांग्रेस-जैसी बडी सस्थाको बड़े पैमाने पर दमन-चक्र

१. देखिए पृ० ३९१-३।

चलाकर कुचलने की अपेक्षा उससे समझौता कर लेना ज्यादा फायदेमन्द है, तब वे वहाँतक झुक गये जहाँतक झुकना उन्होंने जरूरी समझा। लेकिन मेरी अपनी यह धारणा है कि हमारा पिछला संघर्ष कार्य-रूपमें प्रधानतः अहिंसात्मक था, और भविष्यके इतिहास-लेखक भी इसे इसी रूपमें ग्रहण करेंगे। लेकिन सत्य और अहिंसाके शोधकके नाते मुझे यदि अहिंसा हृदयसे उद्भूत नहीं है, तो सिर्फ कार्यमें उसे देखकर सन्तोष नहीं कर लेना चाहिए। मुझे चीख-चीखकर यह घोषणा करनी चाहिए कि उन दिनोंकी अहिंसा उस अहिंसासे बहुत निम्न कोटिकी थी जिसका वर्णन मैं प्रायः करता रहा हूँ।

दिल और दिमागके सहयोगके बिना किये गये अहिंसात्मक कार्यका वांछनीय परिणाम नहीं निकलता। हमारी अपूर्ण अहिंसाकी असफलता आज सबके सामने है। हिन्दुओं और मुसलमानोंमें आज जो लड़ाई-झगड़ा चल रहा है, उसे देखिए। दोनों एक-दूसरेसे लड़ने के लिए कमर कस रहे हैं। असहयोगके दिनोंमें जिस हिंसाको हमने अपने दिलोंमें आश्रय दे रखा था, आज वह पलटकर हमपर ही चोटकर रही है। वह हिंसात्मक शक्ति, जो जनतामें पैदा हो चुकी थी, किन्तु एक सामान्य उद्देश्यको पाने के प्रयत्नमें नियन्त्रणमें रखी गई थी, आज फूट निकली है और उसका हमारे बीच और हमारे खिलाफ इस्तेमाल होता है।

यही बात, भले ही कुछ कम उग्र रूपमें हो, कांग्रेसियोंके आपसी झगड़ोंमें और कांग्रेसी सरकारोंके उन दमनकारी उपायोंमें देखी जा सकती है जिन्हें वे अपने प्रान्तका शासन-प्रबन्ध चलाने के लिए लाचार होकर इस्तेमालमें ला रहे हैं।

यह कहानी साफ बता रही है कि किस तरह आजका सारा वातावरण हिंसासे पूर्ण है। मुझे आशा है, इससे यह भी साफ हो जाता है कि जबतक इस वातावरणको बिलकुल बदल न दिया जाये, तबतक अहिंसात्मक सार्वजनिक आन्दोलन चलाना असम्भव है। चारों ओर होनेवाली घटनाओंकी ओरसे आँखें बन्द कर लेना खुद आफत बुलाना है। मुझे यह सलाह दी गई है कि अगर मैं सार्वजनिक सविनय अवज्ञाकी घोषणा कर दूँ, तो सब अन्दरूनी झगड़े खत्म हो जायेंगे, हिन्दू-मुसलमान आपसी मतभेद दूर करके मिल जायेंगे, और कांग्रेसी आपसी ईर्ष्या-द्वेष और अधिकारोंकी लड़ाई भूल जायेंगे। लेकिन स्थितिका मेरा निदान इसके बिलकुल विपरीत है। यदि आज अहिंसाके नामपर कोई सामूहिक आन्दोलन शुरू कर दिया गया तो वह मुख्यतः असंगठित और कुछ मामलोंमें संगठित हिंसामें परिणत हो जायेगा। इससे कांग्रेस बदनाम हो जायेगी, कांग्रेसके स्वराज्य-प्राप्तिके संघर्षके लिए खतरा पैदा हो जायेगा और बहुत-से घर तबाह हो जायेंगे। यह मुमकिन है कि मैं जो चित्र खींच रहा हूँ, वह मेरी अपनी दुर्बलताका परिणाम हो और बिलकुल झूठा हो। अगर ऐसा है, तो जबतक मैं अपनी उस दुर्बलताको दूर न कर लूँ, मैं किसी ऐसे आन्दोलनका नेतृत्व नहीं कर सकता जिसमें महान् दृढ़ संकल्प और शक्तिकी जरूरत हो।

लेकिन अगर मैं कोई प्रभावकारी और विशुद्ध अहिंसात्मक उपाय नहीं ढूँढ़ पाता, तो हिंसाका विस्फोट भी निश्चित-सा है। जनता आत्माभिव्यक्तिके लिए

अवसर चाहती है। उसे सिर्फ उस रचनात्मक कार्यक्रमसे सन्तोष नही है जो मैंने बताया है और जिसे कांग्रेसने प्रायः सर्वसम्मतिसे स्वीकार कर लिया है। जैसा कि मैं पहले भी कह चुका हूँ, रचनात्मक कार्यक्रमकी ओर लोगोंका पूरा ध्यान न देना स्वयं ही इस बातका सबूत है कि कांग्रेसियोने अहिंसाको केवल सतही तौरसे स्वीकार किया है, वह उनके दिलकी चीज नही बनी है।

लेकिन अगर हिंसा फूट पड़ी, तो वह बिना किसी कारणके नही फूटेगी। हमारे सपनोका स्वराज्य अभी बहुत दूर है। केन्द्रीय सरकार, जो आमदनीका ८० फीसदी भाग खुद हड़प जाती है, लोगोको पीस रही है और उनकी आकांक्षाओंको कुचल रही है। उसकी गैरजिम्मेवारी अब दिन-ब-दिन असह्य होती जा रही है।

अधिकांश रियासतोंकी भीषण निरकुशताका भान बढता जा रहा है। मैं अपनी इस जिम्मेवारीको स्वीकार करता हूँ कि मैंने कुछ रियासतोमें सत्याग्रह आन्दोलनको स्थगित करा दिया है। इसका परिणाम हुआ है प्रजा और राजाओं, दोनोका नैतिक पतन। प्रजा तो पस्तहिम्मत हो गई है और सोचने लगी है कि सब-कुछ चला गया। राजाओका पतन उनके इस विचारमें है कि अब प्रजासे डरने की कोई जरूरत नही, उसे कोई असली अधिकार देने की जरूरत नही। दोनों गलतीपर है। इस परिणामसे मैं निराश नही हूँ। दरअसल, मैंने इन परिणामोकी पेशीनगोई पहले ही कर दी थी, जब मैं जयपुरके कार्यकर्त्ताओके साथ इस सम्भावनापर विचार कर रहा था कि वे सत्याग्रह आन्दोलन स्थगित कर दें, यद्यपि वह सत्याग्रह नियमो और नियन्त्रणोंमें रहकर चलाया जा रहा था। प्रजाकी पस्ती तो यह बताती है कि उनके विचार तथा वाणीमें अहिंसा नही थी, और जब जेल जाने और भारी प्रदर्शनोका जोश और नशा खत्म हुआ, लोगोंने यह समझा कि लड़ाई खत्म हो गई। राजाओने भी एकदम यह परिणाम निकाल लिया कि सत्याग्रहियोंके विरुद्ध कठोर उपाय बरतकर और भोले-भाले लोगोको दिखाऊ सुधारों द्वारा फुसलाकर वे अपनी निरकुशताको और भी दृढ कर सकते हैं।

लेकिन प्रजा और राजा दोनों इस तरह सही परिणामपर पहुँच सकते थे — प्रजा तो मेरी सलाहकी गहराईको पहचानती और शान्ति और दृढ संकल्पसे रचनात्मक कार्य करके अपनी शक्ति और क्षमताको बढ़ाती, और राजा लोग सत्याग्रह बन्द होने से उत्पन्न अवसरका लाभ उठाकर न्यायकी खातिर न्याय करते तथा अपनी प्रजाके बुद्धिमान किन्तु अग्रणी लोगोंको कुछ वास्तविक सुधार देकर सन्तुष्ट करते। लेकिन यह तभी हो सकता था, जब वे समयकी भावनाको पहचानते। आज भी प्रजाके लिए या राजाओंके लिए बहुत देर नही हुई है। वे अब भी इस सचाईको समझ सकते हैं।

इस सिलसिलेमें मुझे ब्रिटिश सरकारको भूलना नही चाहिए। लक्षणोसे प्रकट हो रहा है कि ब्रिटिश सरकार अपनी इस पिछली घोषणापर पछता रही है कि प्रजा जो सुधार चाहती है, उन्हें देने की राजाओको पूरी आजादी है। इस प्रकारकी कानाफूसी साफ सुनाई दे रही है कि घोषणाका अक्षरशः पालन करना लाजिमी

नही है। यह रहस्य सभी जानते हैं कि राजाओंमें ऐसा कोई भी काम करने का साहस नहीं है, जिससे उनके खयालसे अधीश्वरी सत्ता नाराज हो सकती है। वे ऐसे लोगोंसे बात भी करना नहीं चाहेंगे जिनसे बातचीत करना अधीश्वरी सत्ता पसन्द न करती हो। जब राजाओंपर अधीश्वरी सत्ताका इतना भारी प्रभाव है, तब यह स्वाभाविक ही है कि बहुत-सी रियासतोंमें शासकोंकी भीषण निरंकुशताके लिए अधीश्वरी सत्ताको भी जिम्मेवार माना जाये।

इसलिए यदि कभी इस अभागे देशमें हिंसा फूट पड़ी, तो उसकी जिम्मेवारी अधीश्वरी सत्तापर, राजाओंपर और सबसे ज्यादा कांग्रेसियोंपर होगी। अधीश्वरी सत्ता और राजाओंने कभी अहिंसक होने का दावा नहीं किया है। उनकी शक्तिका आधार और स्रोत बिना किसी दुराव-छिपावके हिंसाका प्रयोग है। लेकिन कांग्रेसने १९२० से अहिंसाको अपनी निश्चित नीतिके रूपमें स्वीकार कर रखा है और इसमें सन्देह नहीं कि उसने इसपर चलने की भी कोशिश की है। लेकिन चूँकि कांग्रेसियोंने अपने दिलोंमें अहिंसाको स्थान नहीं दिया, इसलिए उस दोषका फल भुगतना ही चाहिए, भले ही उसके पीछे कोई इरादा न हो। ऐन मौकेपर वह दोष ऊपर आ गया है और ऐसा लगता है कि किसी दोषपूर्ण उपायसे इस समस्याका हल नही हो सकता। अहिंसाका उद्देश्य दबाव किसी तरह भी नही हो सकता। उसका उद्देश्य तो हृदय-परिवर्तन है। हम राजाओंका दिल नही बदल सके, हम अंग्रेज शासकोका दिल नही बदल सके। यह कहना बेकार है कि शासकोंको अपनी इच्छासे अपना अधिकार छोड़ देने के लिए प्रेरित करना असम्भव है। मैंने यह दावा किया है कि सत्याग्रह एक नया प्रयोग है। जब कांग्रेसी इसे एक बार सच्चे दिलसे आजमायेंगे तभी उसकी सफलता-असफलता की घोषणा करना उचित होगा। अगर किसी भी नीतिपर ईमानदारीसे चलना हो, तो उसपर पूरे दिलसे चलना चाहिए। हमने ऐसा नही किया। इसलिए इसके पहले कि अधीश्वरी सत्ता और राजाओंसे हम यह उम्मीद करें कि वे न्याय करेंगे, हम कांग्रेसियोंको चाहिए कि हम स्वयं अपनेको बदलें।

लेकिन अगर कांग्रेसी अहिंसाकी दिशामें जितना आजतक बढ़ चुके हैं, उससे आगे न बढ़ सकते हों या न बढ़ना चाहते हों और अधीश्वरी सत्ता एवं राजाओंने भी अपनी इच्छा और अपने स्वार्थ को देखते हुए सही कदम न उठाया, तो देशको हिंसाके लिए तैयार रहना चाहिए, बशर्ते कि नई कार्यप्रणालीने अहिंसात्मक संघर्षका कोई ऐसा तरीका न निकाल लिया हो जो प्रभावशाली रूपसे हिंसाका स्थान ले सके और अन्यायका निराकरण कर सके। हिंसा सफल नही होगी, सिर्फ यह हकीकत हिंसाको फूट पड़ने से रोक नही सकती। महज वैधानिक आन्दोलनसे काम न चलेगा।

बम्बई, ४ जुलाई, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-७-१९३९

४१२. पत्र : एफ० मेरी बारको

बम्बई
४ जुलाई, १९३९

चि० मेरी,

मैंने तुम्हारे नाम मीराके पत्रमें कुछ पंक्तियाँ लिख दी थी।[1] अब मेरे पास ज्यादा विस्तारसे लिखने के लिए कुछ क्षणका समय है। यदि तुम अपने पिताके पास जाकर उनकी सेवा करना चाहो तो बेहिचक वैसा करो। मध्य प्रान्तमें आरम्भ किया गया काम जारी रहे, इसके लिए जो सम्भव हो वह तुम करना। मैं जानता हूँ कि तुम जहाँ भी रहोगी, हमेशा अच्छा काम करके दिखाओगी। पिताजी को भारत लाना जोखिमका काम होगा। उन्हें इस देशकी जलवायु माफिक नहीं आयेगी।

नारणदासके नाम तुम्हारा पत्र दिलचस्प है। यदि तुम जानेवाली नहीं हो, तो ग्रामोद्धार समितिका कार्य करना तुम्हारे लिए ठीक होगा। मैं कल सीमा-प्रान्तके लिए रवाना हो जाने की आशा रखता हूँ। बा शायद मेरे साथ जाये। वह बिलकुल ठीक है।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०७७) से। सी० डब्ल्यू० ३४०७ से भी; सौजन्य एफ० मेरी बार। बापू—कनवर्सेशन्स एण्ड कॉरसपॉण्डेन्स, पृ० १७८ से भी

४१३. पत्र : नारणदास गांधीको

बिड़ला भवन
माउण्ट प्लेजेंट रोड, बम्बई
४ जुलाई, १९३९

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरी बारको लिख रहा हूँ।

तुमने खादीके बारेमें जो टिप्पणी मुझे भेजी थी वह वैसी-की-वैसी ही पड़ी है। फुरसतके समय उसे निबटाऊँगा। वहाँ क्या-कुछ विशेष हो रहा है?

1. देखिए पृ० ४१७।

मंजुका पत्र इसके साथ है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

हम कल सीमा-प्रान्तकी ओर रवाना होंगे। बा के साथ जाने की सम्भावना है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५५७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

४१४. टिप्पणी: दर्शक-पुस्तिकामें[1]

४ जुलाई, १९३९

इस भारतीय उद्योगको देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ५-७-१९३९

४१५. प्रस्तावना: 'द लेटेस्ट फ़ैड' की

मैंने इस पुस्तिकाको शुरूसे अन्ततक पढ़ लिया है। पुस्तिका हमारी एक वास्तविक आवश्यकताकी पूर्ति करेगी। मेरी तथाकथित 'नवीनतम सनक'—और सो भी शिक्षाके क्षेत्रमें (!)—को लेकर जो अनेक शंकाएँ उठाई गई हैं, इस पुस्तकमें उनका उत्तर देने का प्रयत्न किया गया है। आचार्य कृपलानीने, जो कई वर्षतक शिक्षाके क्षेत्रमें काम कर चुके हैं, यह दिखाने की कोशिश की है कि इस 'सनक' का एक ठोस आधार है।

मो० क० गांधी

रेलगाड़ीमें
६ जुलाई, १९३९

[अंग्रेजीसे]
द लेटेस्ट फ़ैड

१. साधन-सूत्र के अनुसार गांधीजी, वल्लभभाई पटेल, देवदास गांधी और डॉ० सुशीला नैयर के साथ दोपहरको बम्बईमें केमिकल एण्ड इंडस्ट्रियल एण्ड फार्मास्यूटिकल लेबोरेटरीज लिमिटेड देखने गये थे।

४१६. पत्र : अमृतकौरको

रेलगाड़ीमें
६ जुलाई, १९३९

प्रिय छलिया,

साफ बात यह है कि मैं तुम्हे उतना नियमपूर्वक नही लिख सका जितना कि मैं चाहता था। 'लाइब्रेरी' में भी मुझे और बहुत-से काम करने पड़े। तुम्हारा कहना है कि तुमने मुझसे अहिंसाके बारेमें एक प्रश्न पूछा था। उसके बारेमें मुझे कुछ याद नही है। एक बार फिर लिखना। मेरा खयाल है कि महादेव जहाँतक हो सकता है प्रश्नोके उत्तर देता है, क्योंकि तुम्हारे पत्रोको पढ़ने के तुरन्त बाद मैं उसे दे देता हूँ। अगर तुम 'कोई पढे नही', इस टिप्पणीके साथ उन्हे रखने की इजाजत दे दो और भरोसा रखो कि फिर उन्हे कोई नही पढ़ेगा तो तुम्हारे प्रश्नोंके उत्तर देना मेरे लिए ज्यादा आसान होगा।

आशा है, सारे मरीज यदि अच्छे नही हो गये होंगे तो पहलेसे बेहतर तो होंगे ही और तुम्हारा फ्लू भी ठीक हो चुका होगा।

मैं दातार सिंहको लिख रहा हूँ। मुझे पहले ही लिखना चाहिए था। लेकिन चूँकि तुम मेरा बचाव कर रही थी, इसलिए मैंने इसमें जल्दबाजी नही की।

तुम्हें मुझे जवाहरलालको लिखे अपने पत्रकी प्रति भेजनी चाहिए थी।[1]

तुम जो बार-बार यह कहती हो कि तुम निर्जीव-सी हो गई हो सो मुझे अच्छा नही लगता। तुम निर्जीव-सी नही हुई हो। तुम्हें अभी मेरा बहुत काम करना है। मुझे किसी भी समय तुम्हें त्रावणकोर अथवा ऐसी ही किसी जगहपर भेजना पड़ सकता है। वैसे भी तुम वहाँ खादी और हरिजन-कार्य तो कर ही रही हो। शिक्षा बोर्डमें तुम्हारा योगदान काफी कारगर सिद्ध हुआ है। और यदि तुम चीजोंको अच्छी तरह समझती हो और यदि तुम यह महसूस करती हो कि मैंने तुम्हारे साथ जान-बूझकर कोई अन्याय नही किया है तब तो इस निर्जीवताकी अनुभूतिका निश्चय ही कोई कारण नही रह जाता।

हम सिर्फ चार व्यक्ति सफर कर रहे हैं — महादेव, बाबलो,[2] कनु और मैं। प्यारेलालके गलेका छोटा-सा आपरेशन हुआ है, जिसके कारण उसे तीन-चार दिनकी देर हो जायेगी। बा सुशीलाके बिना नही आना चाहती थी और सुशीला प्यारेलालको उसकी किस्मतके सहारे नहीं छोड़ सकती थी। यदि मुझे लगा कि सीमा-प्रान्तमें मुझे ज्यादा दिन ठहरना पड़ेगा तो ये तीनो बादमें आयेंगे।

१. देखिए पृ० ४१७ भी।
२. नारायण देसाई, महादेव देसाई के पुत्र

मेरे कार्यक्रमके बारेमें कुछ भी तय नहीं है। वैसे तो मुझे उस समय सेगाँव लौट जाना चाहिए जब तुम भी वहाँ आओगी। तालचरके बारेमें[1] कुछ तय नही है। वाइसरायकी ओरसे मुझे अभी हाल में ही जो पत्र[2] मिला है उसके अनुसार उन्होंने मेरे साथ सारे सम्बन्ध तोड़ लिये हैं। महादेव तुम्हें उनके पत्रकी एक प्रति और मेरा उत्तर,[3] यदि मैं उसका मसौदा आज तैयार कर लेता हूँ तो, भेजेगा।

मेरे अवकाश ग्रहण करने की बात फिलहाल निर्मूल सिद्ध हो गई है।

स्नेह।

तानाशाह

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९२३) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२३२ से भी

४१७. पत्र: एस० के० बोलेको

रेलगाड़ीमें
६ जुलाई, १९३९

प्रिय राव बहादुर,

मैंने मुख्य मन्त्रीको लिखा आपका पत्र[4] बड़े ध्यानसे पढ़ा। मेरा विचार है कि यदि आप मन्त्रालयकी मदद करते हैं तो आप देखेंगे कि ताड़ी उतारने का काम करनेवाले किसी भी व्यक्तिको अपना धन्धा छोड़ने की जरूरत नहीं है और कोई बेरोजगार भी नहीं होगा। जितना नीरा निकलता है उस सबका गुड़ बनाया जा सकता है। जो लोग मादक पेय लेने के आदी हैं वे मादकतारहित नीरासे सन्तुष्ट न होंगे।

आपके प्रार्थना-पत्रके अन्तिम अनुच्छेदमें जो धमकी दी गई है उसका मुझे अफसोस है। सहायताकी प्रार्थना करना और साथ ही धमकी देना शोभा नहीं देता।[5]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८७९) से

१. देखिए पृ० १७०-२ और पृ० २९१-२।

२. देखिए परिशिष्ट १३।

३. गांधीजी ने एक छोटा-सा उत्तर १२ जुलाई, १९३९ को भेजा था।

४. एस० के० बोले ४० भण्डारियोंके साथ गांधीजी से ५ जुलाई को बम्बई सेन्ट्रल स्टेशनपर मिले और उन्होंने मुख्य मन्त्रीको लिखे गये प्रार्थना-पत्रकी एक प्रति गांधीजी को दी; देखिए पृ० ४३२-३।

५. एस० के० बोलेने बादमें इसका स्पष्टीकरण भेजा; देखिए खण्ड ७०, "एक स्पष्टीकरण", ७-८-१९३९।

४१८. पत्र : कंचन एम० शाहको

रेलगाड़ीमें
६ जुलाई, १९३९

चि० कचन,

तुझे पत्र तो नही लिख पाता लेकिन तेरे बारेमें सोचता अवश्य रहता हूँ। मैंने जो तुझसे कहा था वह तुझे याद होगा। उम्मीद है, तू शान्त होगी। अध्ययन ठीकसे करना। अभी तुझे जो एकान्त मिला है उसका पूरा-पूरा उपयोग करना और अपने ज्ञानमें वृद्धि करना। आजकल प्रार्थना कौन करवाता है? सवेरे-शाम क्या चलता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२९२)से। सी० डब्ल्यू० ७०५१ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल गं० शाह

४१९. पत्र : अमतुस्सलामको

रेलगाड़ीमें
६ जुलाई, १९३९

प्यारी बेटी,[1]

तुझे सिर्फ अमदाबादमें जो आज कताई हो रही है उसे अच्छे पायेपर करना है। उस बारेमें जैसे लक्ष्मीदासभाई कहें ऐसा करना। २००० से अधिकका खर्च इस वक्त नही करना। मृदुलाबहनको जो मदद कर सकती है सो करना। लालच देकर किसीसे काम नही लेना। तबीयत अच्छी रखते हुए ही काम करना है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२२)से

१. मूल में सम्बोधन उर्दू में है।

४२०. शराबबन्दी और भण्डारी जाति

सीमा-प्रान्तके लिए रवाना होते वक्त स्टेशनपर राव बहादुर बोलेने बम्बईके भण्डारियों द्वारा मुख्य मन्त्रीको भेजी गई अर्जीकी एक प्रति मुझे दी। उसे पढ़कर उसका जवाब भेजने के लिए उन्होंने मुझसे आग्रह किया। गाड़ी में थोड़ा विश्राम करने के बाद अर्जीको मैंने पढ़ा और उन्हें उसका जवाब[1] भी भेज दिया।

अर्जी तत्त्वपूर्ण है और उसकी सार्वजनिक चर्चा होनी चाहिए, ऐसा मुझे लगा। उसके अनुसार, इस जातिने अंग्रेजी राज्यको जो सैनिक सेवाएँ दी थी उनके बदलेमें बतौर पुरस्कारके ताड़ी निकालने की छूट इन्हें सन् १६७२ में मिली थी। बादमें यह छूट उनके हाथसे निकल गई। पर उन्होंने अपना यह धन्धा जारी रखा, और आज करीब ८,००० आदमी इस धन्धेमें लगे हुए हैं।

अर्जी भेजनेवालोंका कहना है कि वे शराबबन्दीके विरोधी नहीं हैं, वे तो सिर्फ यह चाहते हैं कि यह काम धीरे-धीरे होना चाहिए; कुछ सालकी अवधि नियत कर देनी चाहिए।

लेकिन जहरीला डंक तो अर्जीके अन्तमें आता है। उसमें लिखा है:

> इन सब प्रार्थनाओंपर अगर सरकारने कान न दिया, और भण्डारियोंको उनके भाग्यपर छोड़ दिया, तो हताश होकर यह अपढ़ या अल्प शिक्षित जाति क्या करेगी, यह हम कह नहीं सकते। हमें भय है कि वे कांग्रेसके तरीकोंको ही नहीं बल्कि अपने रोषमें उनसे भी अधिक सख्त उपाय अपनाने की हद तक जा सकते हैं।

मेरी रायके अनुसार इस धमकीने प्रार्थियोंके अच्छे खासे मामलेको खराब कर दिया है, और हस्ताक्षरकर्त्ताओं की प्रामाणिकताके बारेमें सन्देह पैदा कर दिया है। सरकार अब दलील के वश हो या बरजोरी के?

भण्डारियोंका मामला अगर मजबूत है, तो वे आम जनताकी सहानुभूतिपर निर्भर क्यों नहीं करते? आम जनताको मैं यह बता देता हूँ कि उन धमकियोंके बावजूद मन्त्री लोग हर तरहका अन्याय दूर करने की भरसक कोशिश कर रहे हैं। आज-कल, जब कि मानसिक हिंसा देशमें बढ़ती ही चली जा रही है, मौजूदा लोकसत्ता-त्मक मताधिकारके मातहत चुने हुए मन्त्रियोंका नसीब ही ऐसा है कि ऐसी-ऐसी धमकियाँ उनके लिए रोजमर्राकी चीजें बन गई हैं। वे अपने पदों अथवा जीवनकी जोखिम होने पर भी जिसे वे अपना फर्ज समझते हैं उसे करने से पीछे नहीं हट सकते। इसी तरह, ऐसी बेहूदी धमकियोंके कारण, जैसी कि इस अर्जीके अन्तमें दी गई

१. देखिए पृ० ४३०।

है, न वे नाराज होंगे, और न न्याय करने से कदम पीछे हटायेंगे। जनताको यह जानकर खुशी होगी कि मन्त्री लोग हर ताड़ी निकालनेवाले व्यक्तिको इसी रोजगारमें लगाये रखने के लिए प्रयत्न कर रहे हैं। केवल ताड़ी निकालनेवालोंको मन्त्रियोंके ऐसा करने में सहायता देने की जरूरत है। नीरेके मौसममें नीरा निकालकर और उसका गुड़ बनाकर वे मदद कर सकते हैं। इसके लिए पूरी-पूरी सावधानीकी जरूरत है। घड़ोंको, जैसा कि इस पत्रके स्तम्भोंमें लिखा जा चुका है, चूने वगैरहसे अच्छी तरह चुपड़ना चाहिए। नीरा पीना कोई जरूरी नहीं। शुद्ध नीरा ताड़ीकी जगह नहीं ले सकता, क्योंकि ताड़ीमें अमुक प्रतिशत मद्यसार होता है, और इसीलिए उसके गुणमें तब्दीली हो जाती है। शुद्ध नीरा तो शक्करकी तरह आहारकी वस्तु है। ताड़ी तो मीठी ताड़ीके रूपमें भी नीरेकी तरह और उस हदतक आहार नहीं है। इसलिए नीरेका गुड़ बन सकता है, और मामूली और अक्सर गंदे, मिलावटी, कँकड़ीले गुड़से, जो बाजार में बिकता है, वह मजेमें स्पर्धा कर सकता है। ताड़गुड़ ईखके गुड़से अधिक स्वादिष्ट होता है। वह रूखा भी खाया जा सकता है, जब कि ईखका गुड़ अधिक मीठा होने के कारण इस तरह रूखा नहीं खाया जा सकता। फिर, ताड़गुड़, सरकारी देख-रेखमें बनेगा, तो उसकी शुद्धताकी भी गारंटी होगी। ताड़गुड़से बहुत-सी मिठाइयाँ भी बन सकती हैं। पर इस महान् कार्यके लिए भण्डारी जातिका सच्चा सहयोग जरूरी है। यदि वे सचमुच चाहते हैं, तो वे सरकारको इस काममें मदद देकर अपनी जातिकी मदद कर सकते हैं। प्रश्न यह होगा कि जब मौसम न होगा तब वे क्या करेंगे। आज जिन स्थितियोंमें ताड़ी निकाली जाती है, उसकी तफसीलका मैंने अध्ययन नहीं किया है। पर यह तो तफसीलकी और परिस्थितिके मुताबिक कुछ रद्दो-बदल करने की बात है।

पेशावर जाते हुए, ७ जुलाई, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-७-१९३९

४२१. तार: जनरल जे० सी० स्मट्सको[1]

एबटाबाद

[७ जुलाई, १९३९ या उसके पश्चात्][2]

१९१४ के समझौतेका उल्लंघन किया जा रहा है और आप उसके मूक दर्शक बने हुए हैं, ऐसा क्यों? क्या भारतीयोंके लिए आगमें से गुजरने के सिवा और कोई चारा नही है।[3]

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

४२२. युद्धके कारण नये यन्त्रका आविष्कार

२६ मईको चिक्यिांगमें कताईके एक क्रान्तिकारी यन्त्रके आविष्कारकी घोषणा की गई। इस चरखेका आविष्कार वित्त मन्त्रालयके श्रीयुत कान्या नीहने किया है, जो कॉर्नेल यूनिवर्सिटी तथा मैसाचुसेट्स इन्स्टिट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजीके स्नातक हैं। आज जो प्रत्येक चीनी कतैया प्रतिदिन केवल एक पौण्ड सूत ही कात पाता है, इस चरखेसे औसतन २० से ३० पौण्ड सूत कात सकेगा। इस चरखेका आविष्कार चीनकी युद्ध-कालीन अर्थव्यवस्थाकी माँगसे प्रेरित होकर किया गया और इसी कारण इसके आविष्कारमें जितना समय लगना चाहिए था उससे कम समय लगा। यह आविष्कार छह वर्षोंके अनुसन्धान और प्रयोगोंका फल है, जिनमें से पिछले बाईस महीनोंमें आविष्कारक बराबर देश-भरमें भटकता रहा है, क्योंकि राष्ट्रीय सरकारका देशके आन्तरिक हिस्सेमें स्थानान्तरण कर दिये जाने के कारण उसे भी उसके साथ वहाँ जाना पड़ा।...

श्रीयुत नीहके नये ढाँचे मोटे तौरपर चीनकी प्राचीन कताई-पद्धतिपर आधारित हैं। चरखा चलाने से सम्बन्धित सारी गतियोंका उन्होंने आधुनिक सिद्धान्तोंके अनुसार अध्ययन और विश्लेषण किया और उन्हें इस हदतक

१. जैन क्रिश्चियन स्मट्स (१८७०-१९५०); दक्षिण आफ्रिकी सेनानी और राजनयिक; प्रधान मन्त्री, १९१९-२४ और १९३९-४८

२. गांधीजी एबटाबाद ७ जुलाई, १९३९ को पहुँचे थे।

३. देखिए पृ० १२८, ३१७-८ और पृ० ३९९-४००।

कम कर दिया जितना कि वैज्ञानिक रीतिसे कताई के लिए अनिवार्य हो — फिर उन्होंने एक ऐसे चरखेका निर्माण किया जिसमें कताईकी प्राचीन प्रक्रियामें सन्निहित सभी उपयोगी क्रियाओंका समावेश है और उन सब क्रियाओंको निकाल बाहर किया गया है जिनसे केवल कर्तयेकी शक्ति और समयका ही अपव्यय होता है। श्री नीहने वैज्ञानिक विश्लेषणके इन सिद्धान्तोंके आधार पर जिस चरखेका निर्माण किया है वह मजबूत तो है ही, साथ ही वह बहुत सस्ता भी है। यह चरखा मूलतः लकड़ीका बना हुआ है और धातुओंमें मुख्यतः ताँबेका प्रयोग हुआ है। लोहे और इस्पातका प्रयोग केवल कुछ महत्त्वपूर्ण पुर्जोंमें हुआ है और दाँते कड़ी लकड़ीके हैं। यह नया चरखा करीब-करीब स्वचालित है और चालकको बहुत कम श्रम करना पड़ता है। इस मशीनकी संचालन-शक्ति ट्रेडलसे आती है, जिसे चालक लगातार चालू रखता है।

इस नये चरखेको जनतातक पहुँचाने का कार्य चीनकी औद्योगिक सहकारी समितियों और कुछ निजी पेढ़ियोंके जिम्मे पड़ेगा। चीनकी औद्योगिक सहकारी समितियोंकी आगामी वर्षके दौरान १०,००० से ऊपर सहकारी संस्थाओंकी स्थापना करने की योजना है, जिनमें से कमसे-कम तीस प्रतिशत कपड़ेके लिए होंगी। इन सहकारी समितियोंका विश्वास है कि इस समय स्वतन्त्र चीनमें जो प्रतिवर्ष १,००,००,००० कपड़ेकी गाँठोंकी खपत होती है उसमें से कमसे-कम ३०,००,००० गाँठे तो अगले बारह महीनोंमें सहकारी संस्थाएँ ही तैयार कर लेंगी। इस कपड़ेके उत्पादनमें कताईके नये यन्त्रोंका महत्त्वपूर्ण योग होगा। प्रत्येक परिवारमें दो नये चरखे देने का विचार है। आजकल देशके भीतरी भागोंमें जो सूत २.३० डालर प्रति पौंडके हिसाबसे बिक रहा है, वह अब बहुत कम दामपर मिलेगा।

उपर्युक्त सूचना[1] श्री आर्यनायकमको[2] चीनसे एक मित्रने भेजी है। मेरी कितनी इच्छा है कि इस आविष्कारके विषयमें मैं और अधिक ब्योरा दे पाता! मेरी दृष्टिमें तो महत्त्वपूर्ण बात यही है कि शहरी उत्पादनके स्थानपर चीनको ग्राम-उत्पादनकी आवश्यकता महसूस हुई है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-७-१९३९

१. यहाँ कुछ अंश ही उद्धृत किये गये हैं।
२. ई० डब्ल्यू० आर्यनायकम, हिन्दुस्तानी तालीमी संघके मन्त्री।

४२३. जयपुर

जो लोग जयपुरके मामलेमें दिलचस्पी रखते हैं, वे आजकल बड़ी दुविधाकी स्थितिमें पड़े हुए हैं, क्योंकि उन्हें मालूम हुआ था कि सेठ जमनालाल बजाज और रियासतके दीवानके[1] बीच कुछ बातचीत चल रही थी। उन्हें यह सूचित करते हुए मुझे दुःख होता है कि उस बातचीतका कोई फल नहीं निकला। इसलिए हमारी लड़ाई जारी है। सविनय अवज्ञा भी एक तरहसे जारी है, भले ही अब गिरफ्तार होनेवाले नये जत्थोंका संगठन स्थगित कर दिया गया हो। जो लोग सत्याग्रहके सिलसिलेमें गिरफ्तार हुए थे, वे अब भी जेलोंमें बन्दी हैं। उन्होंने अपनी रिहाईकी माँग नहीं की है। वे अपनी सजाकी मियाद पूरी करके ही बाहर आयेंगे। सेठजी अनिश्चित कालके लिए नजरबन्द हैं। वे रिहा होते ही रियासत छोड़ने का वचन देकर कभी बाहर नहीं आयेंगे और रियासतके अधिकारी, गिरफ्तारीके लिए नये जत्थोंका संगठन बन्द होने के बावजूद, उन्हें एक स्वतन्त्र व्यक्तिकी भाँति जयपुरमें नहीं रहने देंगे। इस तरह वे सेठजी को जयपुरके लोगोंमें रचनात्मक कार्यक्रम चलाने की इजाजत भी नहीं देंगे। वे जानते हैं कि इस बातका कोई भय नहीं है कि सेठजी किसी प्रकारका गुप्त प्रचार-कार्य करेंगे या कहें कुछ, करें कुछ की नीति अपनायेंगे। वे अपनी खरी ईमानदारीके लिए इतने प्रसिद्ध हैं कि उसमें सन्देहकी कोई गुंजाइश नहीं है।

सेठजी के घुटनोंमें दर्द रहने के कारण सवाल कुछ पेचीदा हो गया है। रियासत के मेडिकल अफसरने सेठजी को इलाजके लिए यूरोप या कमसे-कम किसी समुद्र-तट-वर्ती स्थानपर जाने की सलाह दी है। डॉक्टर खुद अपनी ओरसे भरसक प्रयास कर रहे हैं, लेकिन उनकी रायमें स्थान-परिवर्तनकी जरूरत है। इधर सेठजी जबतक नजरबन्द हैं, अपने इलाजके लिए भी जयपुरसे बाहर जाना पसन्द नहीं करेंगे। उनके खयालमें आत्मसम्मानका तकाजा है कि रिहाई बगैर किसी शर्तके हो। जबतक उनके ऊपर ऐसी पाबन्दी लगी हुई है जिसे वे किसी भी तरह जायज नहीं मानते तबतक वे स्थान-परिवर्तनकी बात नहीं सोच सकते। सविनय अवज्ञा भी स्थगित है, इसलिए जमनालालजी को नजरबन्द रखने का कोई कारण मालूम नहीं होता। क्यों नहीं रियासतके अधिकारी उन्हें अभी छोड़ देते और जब वे रियासतके कानूनोंका फिर भंग करें, तो उन्हें गिरफ्तार कर लें? कमसे-कम कहा जाये तो हमारी रायमें सेठ जमनालालजी के साथ किया जानेवाला व्यवहार कुछ रहस्यपूर्ण है। जयपुरके अधि-कारियोंका यह फर्ज है कि या तो वे उनकी अनिश्चित कालकी नजरबन्दीका औचित्य सिद्ध करें या उन्हें बिना किसी शर्तके रिहा कर दें।

१. सर बीकम सेंट जॉन

जयपुरके लोग मुझसे पूछते रहते हैं कि उनके सत्याग्रहपर कबतक पाबन्दी लगी रहेगी। मैं उन्हें सिर्फ यही जवाब दे सकता हूँ कि जबतक वातावरणकी दृष्टिसे उसका स्थगित रहना आवश्यक हो तबतक। इस अर्सेमें उन्हें रचनात्मक कार्य जारी रखना चाहिए। मेरी अब भी यही राय है कि ऐसा कोई भी व्यक्ति सविनय अवज्ञा करने का अधिकारी नहीं है जिसने उन शर्तोंको पूरा नहीं कर लिया है जो मैंने बताई है। लेकिन मेरी सब सलाहोंमें निष्कृति का मार्ग विद्यमान है। अर्थात्, जबतक किसीके दिल और दिमागमें मेरी बात बैठ नहीं जाती, वह उसपर अमल करने के लिए बाध्य नहीं है। यदि किसीको सत्याग्रह करने की आन्तरिक प्रेरणा होती है, तो उसे मेरी सलाहके कारण सत्याग्रह करने से रुकना लाजिमी नहीं है। दूसरे शब्दोंमें, यह उन्हींपर लागू होती है, जो आन्तरिक प्रेरणाका अनुभव नहीं करते और जिन्हें मेरे अधिक परिपक्व अनुभवपर तथा मेरी सलाहके सही होने में विश्वास है।

हालाँकि समझौतेकी बातचीत टूट गई है, तो भी रियासतके अधिकारी इस गुत्थीका हल ढूँढने की जिम्मेवारीसे मुक्त नहीं हो गये। सत्याग्रह न करने का यह अर्थ नहीं है कि स्वतन्त्रताके जिन प्रारम्भिक अधिकारोंके लिए लड़ाई शुरू की गई थी उन्हें प्राप्त करने के लिए किसी भी प्रकारका आन्दोलन न चलाया जाये। लोकमत अधिकारियोंको चैन नहीं लेने देगा। इसलिए जयपुरियोंको यह समझ लेना चाहिए कि जबतक उनमें दृढ़ संकल्प मौजूद है, उनके हाथमें शक्ति भी है। और इस शक्तिपर नियन्त्रण रखने की हर कोशिशसे यह सदा बढ़ती ही है। प्रत्येक शक्ति इसीलिए नहीं होती कि उसका एकदम इस्तेमाल किया जाये। शक्तिके पैदा होते ही उसे इस्तेमालमें लाने की अपेक्षा उसका संचय कर लेना प्रायः अधिक प्रभावकारी होता है।

एबटाबाद, ८ जुलाई, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-७-१९३९

४२४. राजाओंसे

रियासती मामलोंमें दिलचस्पी रखनेवाले अनेक व्यक्तियोंने मुझसे पूछा है कि मेरी रायमें रियासतोंको कमसे-कम कितना-कुछ करना चाहिए, जिससे वहाँकी स्थिति ब्रिटिश भारतके प्रबुद्ध लोकमत की दृष्टिसे सन्तोषजनक हो सकती है। कांग्रेसको यदि इस बारेमें कोई राय देनी पड़े, तो वह क्या कहेगी, यह मैं आज नहीं कह सकता। शायद कांग्रेसके लिए ऐसी राय बनाना या देना ठीक न होगा। एक प्रजातन्त्रात्मक संस्था घटनाओंपर ज्यों-ज्यों वे होती है त्यों-त्यों ही अपनी सम्मति घोषित कर सकती है। अब जो भी हो, मैं तो सिर्फ अपनी ही राय देना चाहता हूँ और इस रायको सिवा मेरे और किसीके लिए मानना लाजिमी नहीं है।

छोटी-बड़ी सब रियासतें जो कमसे-कम दे सकती हैं वह यह है:

१. उस हदतक पूर्ण नागरिक स्वतन्त्रता, जहाँतक कि इसका इस्तेमाल प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौरपर हिंसाको उभारने के लिए नही किया जाता। इसमें प्रेसकी स्वतन्त्रता और ऐसे अखबार पाने की स्वतन्त्रता भी शामिल है जो हिंसाका प्रचार नही करते।

२. रियासती प्रजाको अपने संगठन बनाने और अपनी रियासतोंमें उत्तरदायी शासन स्थापित करने के पक्षमें लोगोंको शिक्षित करने की स्वतन्त्रता।

३. रियासतोंसे बाहर रहनेवाले भारतीयोंको बिना किसी रुकावटके रियासतोंमें प्रवेश करने की स्वतन्त्रता, बशर्ते कि ऐसे लोगोंके कार्य-कलापका उद्देश्य उन रियासतोंका विध्वंस करना न हो।

४. राजाओंके निजी खर्चकी राशि इतनी सीमित कर दी जाये कि वह १० से १५ लाख रुपयेतक की वार्षिक आयवाली रियासतोंमें कुल आयके दसवें हिस्सेसे ज्यादा न हो और ३ लाख रुपये वार्षिकसे तो किसी भी हालतमें ज्यादा न हो। इसमें राजाके महल, मोटर, अस्तबल मेहमानों आदिपर होनेवाला सभी निजी खर्च शामिल होना चाहिए। हाँ, इसमें वे खर्च शामिल नहीं हैं, जो सार्वजनिक कर्त्तव्यके पालन या समारोहके लिए किये जाते है; लेकिन ऐसे खर्चोंकी व्याख्या स्पष्ट रूपसे पहले ही कर दी जानी चाहिए।

५. रियासतोंके न्यायालय बिलकुल स्वतन्त्र और स्थायी हों, उनमें किसी प्रकारकी दस्तन्दाजी न हो सके। सब रियासतोंमें अदालती कारंवाई की एकरूपता और पूरी निष्पक्षता कायम रखने के लिए रियासती प्रजाको उस प्रान्तके उच्च न्यायालयमें अपील करने का अधिकार भी हो, जिस प्रान्तमें वह रियासत है। उच्च न्यायालयके सचालनका नियम बदले बिना यह सम्भव नहीं है। लेकिन मेरा खयाल है कि अगर रियासतें सहमत हो जायें, तो उन्हें आसानीसे बदला जा सकता है।

मैंने संवैधानिक सुधारोंकी चर्चा जान-बूझकर नही की है। सुधार तो हरएक रियासतकी अपनी-अपनी परिस्थितिपर निर्भर रहेंगे। मुझे यह मान लेना चाहिए कि जिस रियासतका लोकमत शासन-सुधारोंकी माँग करता है, उस रियासतके राजाको वे सुधार देने ही चाहिए।

मेरी न्यूनतम माँगोंमें शायद सबसे अधिक विवादास्पद माँग है उच्च न्यायालयमें अपील करने का अधिकार। इसके विरुद्ध कितनी भी दलीलें क्यों न दी जायें, यह निश्चित है कि जबतक इस प्रकारका कोई इन्तजाम नही हो जाता, तबतक रियासतोंमें शुद्ध न्यायकी गारंटी नही हो सकती। यह एक ऐसी संस्था है, जिसे अंग्रेजोंने बहुत धैर्य और विचारपूर्वक बनाया है। इसमें सन्देह नही कि उच्च न्यायालयमें न्यायकी प्रक्रिया बहुत खर्चीली और बहुत देर लगानेवाली है। वह इस देशके गरीब लोगोंकी पहुँचके बाहर है। वहाँ पहुँचने का तरीका भी जटिल और तकलीफदेह है। बहुत बार ऐसे लोग जीत जाते हैं, जिनके कोई उसूल नही होते। लेकिन इन सब दोषोंके बावजूद उन मामलोंके सिवा, जिनमें राजनीतिक तत्त्व समाविष्ट हो जाते हैं, प्रायः सब

मामलोंमें उसके फैसले ठीक और निर्भीकतापूर्ण होते हैं। रियासतोंकी अदालतोंके स्वेच्छाचार और कभी-कभी कार्यकारिणीके सामने उनके दब्बूपनपर उच्च न्यायालयके सिवा मेरे खयालमें और कोई आसान एवं बना-बनाया नियन्त्रण नही लागू किया जा सकता। लेकिन मुझे अपने इस प्रस्तावपर बहुत आग्रह भी नही है। अगर इतना ही प्रभावकारी कोई दूसरा उपाय खोजा जा सके, तो मुझे एतराज न होगा।

एक बात मुझे साफ दीखती है। अगर राजाओंकी शासन-सत्ता बगैर किसी हिंसाके प्रजाके हाथोंमें जानी है और राजाओंको राजाओंकी स्थितिमें रहना है, तो उन्हें अपनेको बदली हुई हालतोंके मुताबिक ढालना होगा। बहुत कम लोग मेरी इस योजनामें विश्वास करते हैं कि राजा लोग खुद अपनेको सच्चे ट्रस्टी बनाकर अपने अधिकार प्रजाको सौंप दें। आलोचक कहते हैं कि यह मानव-प्रकृतिके विरुद्ध है, निरा आदर्शवाद है। लेकिन जबतक मैं इसकी व्यावहारिक सम्भावनामें विश्वास करता हूँ, मैं अपनी योजनाकी हिमायत करता रहूँगा। संसार या तो आत्मविनाशकी ओर या अपने नैतिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सभी दुःखोंके अहिंसात्मक उपचारकी ओर जा रहा है। आज विश्वव्यापी युद्धका खतरा है। यदि इस आसन्न भीषण सकटके बाद दुनियाका एक खासा बडा हिस्सा बच गया, तो यही विश्व-युद्ध हमें अपने मनोवाछित हलके अधिक नजदीक ला देगा। अतः जो व्यक्ति यह अनुभव करता है कि आसन्न संकटसे बचनेका एकमात्र तरीका यह है कि कोई अहिंसात्मक हल निकाला जाये, वह अपनी घरेलू, साम्प्रदायिक या दूसरे प्रकारकी समस्याओंके हल लिए अहिंसात्मक उपायका आश्रय लेगा। अहिंसा एक सार्वत्रिक नियम है, जो सब परिस्थितियोंमें काम करता है। इसकी उपेक्षा करना निश्चय ही विनाशकी ओर जाना है। सवाल सिर्फ यह है कि विनाशमें कितना वक्त लगेगा।

राजा लोग गरासियों, मुसलमानो, अनुसूचित वर्गो और अपनी प्रजाके भयभीत और इसलिए प्रतिरोध करनेमें अक्षम वर्गकी प्रस्तावित गुटबन्दीसे असली समस्याका हल करना चाहें तो नही कर सकते। यह गुटबन्दी अपने भारसे खुद टूट जायेगी। वह ऐसा विस्फोटक मिश्रण है, जो खुद भड़क उठेगा। और फिर यह गुटबन्दी किसके खिलाफ? कांग्रेसके खिलाफ, जो सभी हितोंका, जिनसे राजा भी बाहर नही हैं, प्रतिनिधित्व करनेका प्रयत्न करती है? कांग्रेस जिस दिन सच्चे अर्थोंमें सम्पूर्ण राष्ट्रका प्रतिनिधित्व करना छोड़ देगी, उस दिन वह अपनी मौत मर जायेगी। पिछले ५० सालोंकी ऐसी अटूट परम्परा इसके पीछे है। कांग्रेसमें चाहे कितनी भी तब्दीली क्यो न हो, यही एक संस्था[1] है जो ब्रिटिश साम्राज्यवादका स्थान लेगी। साम्राज्यवादके रूपमें ब्रिटिश सत्ताके दिन अब बहुत थोड़े रह गये हैं। ब्रिटिश राजनीतिज्ञ भी इसे अनुभव करते हैं। वे इसके रूपान्तरण या विनाशका

१. मूल में "कॉन्स्टीटयूशन" (संविधान) शब्द है, जिसे "इंस्टीटयूशन" मानकर अनुवाद किया गया है।

प्रतिरोध नहीं करेंगे और न करना चाहते हैं। और नहीं तो इसी कारण कि इस साम्राज्यवादका आधार अत्यन्त संगठित हिंसा है, यह आज खुद अपने-आपपर भारी बोझ बनता जा रहा है। राजा लोग कुछ वक्तके लिए कांग्रेसकी उपेक्षा कर सकते हैं, लेकिन हमेशाके लिए नहीं। कुछ यह कहते सुने गये हैं कि आखिर कांग्रेस तो बनियोंकी संस्था है। जहाँ ऊपर बताई गई ताकतोंके मजबूत गुटने कुछ बनियोंके सिरपर मुक्के लगाये, वे सुलहके लिए गिड़गिड़ाने लगेंगे। मैं आदरके साथ यह कहना चाहता हूँ कि कांग्रेस एक ऐसी संस्था है जिसमें बनियोंकी संख्या उँगलियोंपर गिने जाने से ज्यादा नहीं है। सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें जिन लाखों लोगोंने भाग लिया था, वे बनिये नहीं थे। इससे मेरा मतलब यह नहीं है कि वे थप्पड़के बदले थप्पड़ मारने के लिए उत्सुक थे। उनमें बहुत-से ऐसे थे जो ऐसा कर भी सकते थे, लेकिन उन्होंने हिंसासे दूर रहने की प्रतिज्ञा ले ली है। बहुत-से कांग्रेसियोंके सिर फूटे भी और वह भी मुक्केसे बहुत ज्यादा सख्त चीजोंके प्रहार से। मेरे कहने का मतलब तो सिर्फ यह है कि कांग्रेस महज कायरोंकी संस्था नही है। अहिंसा और कायरता कभी एक साथ नहीं चल सकतीं। मैं एक पूर्णतया सशस्त्र और दिलसे डरपोक आदमीकी कल्पना कर सकता हूँ। शस्त्र रखने में कायरता नहीं तो डरका भूत तो जरूर छिपा रहता है। लेकिन विशुद्ध निर्भीकताके बिना सच्ची अहिंसा असम्भव है।

मैं राजाओंसे प्रार्थना करना चाहता हूँ कि वे देशमें कांग्रेसकी जो शक्ति है, उसे कम आँकने की भूल न करें। आज भी इसकी नीति अहिंसाकी है। मैं मानता हूँ, यह बड़ी तेजीसे हिंसाकी ओर झुकती जा रही है। मैं और मेरे बहुत थोड़े साथी ऐसे हैं जो अहिंसाके लिए हर प्रकारकी कोशिश कर रहे हैं। मैं राजाओंसे कहता हूँ कि अपनी खातिर और जिस मातृभूमिने उन्हें जन्म दिया है उस मातृभूमिकी खातिर वे अपनी समस्त शक्ति अहिंसाके पक्षमें लगा दें। आज कांग्रेसकी स्थिति अनिश्चित दिखाई देती है। या तो यह संस्था उत्तरोत्तर अहिंसात्मक होती जायेगी अथवा जल्दी ही एक हिंसात्मक संगठनमें बदल जायेगी। यह जरूरी नही कि हिंसात्मक बन जाने पर भी वह एकदम हिंसात्मक कार्योंपर उतर आये, लेकिन तब यह आखिरी हिंसात्मक युद्धकी तैयारी अवश्य शुरू कर देगी। कायर इसमें आश्रय नहीं पा सकेंगे। अगर इसमें कायरोंको आश्रय मिला तो जो ताकत आज इसमें है वह नहीं रह जायेगी। हरएक बड़े या छोटे भारतीय (कांग्रेसके लिए कोई छोटा-बड़ा नही है) को अपने मार्गका चुनाव आप ही करना है।

एबटाबाद, ८ जुलाई, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-७-१९३९

४२५. तार : अमृतकौरको

एबटाबाद
८ जुलाई, १९३९

राजकुमारी अमृतकौर
मैनरविल, शिमला वेस्ट

कल शाम पहुँच गया। सब-कुछ ठीक-ठाक है। मौसम सामान्य है। स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९२४) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७२३३ से भी

४२६. पत्र : अमृतकौरको

एबटाबाद
८ जुलाई, १९३९

प्रिय छलिया,

मैंने आज तुम्हें एक तार भेजा है, क्योंकि पत्र देरसे पहुँचता। आशा है, मैंने जो पत्र[1] रास्तेसे लिखा था वह तुम्हें मिल गया होगा। मैं बलवन्तसिंहसे[2] दिल्लीमें मिला। वह कहे अनुसार चलेगा। हमें आशा करनी चाहिए कि प्रयोग सफल रहेगा। लीलावतीका प्रयोग शायद सफल न हो।[3] जहाँ वह ठहरी हुई है, वहाँ प्रसन्न नही है। वह किसी भी प्रकारकी असुविधा नही सहन कर सकती। फिर भी मैंने उससे बात की है और समझाया है कि वह बिना प्रयास किये ही हार न मान बैठे।

यहाँ हम सबके लिहाजसे मौसम उत्तम है। दिनके समय एक पंखा जरूरी हो जाता है। मैं नंगे बदन बैठता हूँ। रातको एक पतले कम्बलके अलावा और किसी कपड़ेकी जरूरत नहीं पड़ी।

१. देखिए पृ० ४२९-३०।

२. बलवन्तसिंह लाहौरके निकट स्थित दातारसिंह की डेरीमें काम शुरू करनेवाले थे; देखिए "पत्र : अमृतकौरको", पृ० ३७७।

३. वे मैट्रिक करने के लिए बम्बई गई थीं।

मुझे हक्सरका एक लम्बा पत्र[1] मिला, जिसमें आग्रह किया गया है कि मैं उनकी मौजूदगीमें कश्मीर जाऊँ। मैंने अभीतक इसका उत्तर नही दिया है। कल उत्तर देने की आशा करता हूँ। उत्तर देने के बाद पत्र[2] तुम्हें भेज दूँगा।

आशा है तुम्हें फ्लूसे छुटकारा मिल गया होगा और दूसरे मरीज भी ठीक होंगे।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९२५) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२३४ से भी

४२७. पत्र: प्रभावतीको

एबटाबाद
८ जुलाई, १९३९

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। हम कल यहाँ पहुँचे। महादेव, बाबलो और कनु मेरे साथ हैं। प्यारेलालने जीभके नीचेका तन्तु कटवाया है, इसीसे उसे बम्बईमें रुकना पड़ा। अतः बा और सुशीला भी रह गईं। प्यारेलालके अस्पतालसे छूटने के बाद तीनों यहाँ आयेंगे। मीराबहन पटना पहुँच गई होगी। वह अब वहीं काम करेगी। तू तो उससे मिलेगी ही। बहुत सम्भव है कि वह कांग्रेसके अधिवेशनमें आये। यहाँ कदाचित् एक महीना लगेगा। सुशीला अब अच्छी है। अमतुस्सलाम अहमदाबादमें खादीका काम करेगी। जयप्रकाश मिला था। बहुत करके यहाँ भी मिलने आयेगा। तेरे बारेमें बात हुई थी। उसके कहने के मुताबिक तू तो स्वयंसेविकाओंका नेतृत्व करेगी। ऐसा हुआ तो तेरी पढ़ाई खटाईमें पड़ जायेगी। खैर, ठीक है। जो कर्त्तव्य अपने-आप आ जाता है उसे पूरा करना ही चाहिए। और बातें तो हमारे मिलने के बारेमें हुईं। लेकिन वह खादीको स्वीकार नही करता और मैं खादीको कैसे छोड़ूँ? इसलिए इकट्ठे काम करना मुश्किल है। बा ठीक रहती है। मैं तो ठीक ही हूँ। खुराक वही है। ताकत भी है। यहाँ मौसम ठंडा नहीं कहा जा सकता। गरम भी नही है। संलग्न पत्र मीराबहनको पहुँचा देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५३३) से

१. देखिए पृ० ३७१, पा० टि० १।
२. देखिए "पत्र: अमृतकौरको", पृ० ४४७।

४२८. पत्र : अमतुस्सलामको

८ जुलाई, १९३९

चि० अ० स०,

आज चंद मिनिट ही है। मेरा एक खत[1] रास्तेमें से लिखा हूआ मिला होगा। हम सब अच्छे हैं। यहां कुछ ठंडी नही है। काफी गरमी है। गरम पवन नही है।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२३) से

४२९. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[2]

एबटाबाद

८ जुलाई, १९३९

मै देखता हूँ कि बंगालमें दमदम और अलीपुर जेलोंके राजनीतिक बन्दी अपनी बिना शर्त रिहाईके लिए भूख-हड़ताल करने पर तुले हुए हैं। मेरा उनसे प्रबल आग्रह है कि वे भूख-हड़ताल न करें। मुझे विश्वास है कि शरत बाबूका भी, जो इस कामको कर रहे हैं, यही विचार है। बन्दियोंसे मेरा यही अनुरोध है कि वे शरत बाबूके कथनानुसार चलें।[3]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-७-१९३९, हिन्दू, ९-७-१९३९ से भी

१. देखिए पृ० ४३१।

२. यह वक्तव्य हरिजनमें "बंगाल पॉलिटिकल प्रिज़नर्स" (बंगालके राजनीतिक बन्दी) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

३. देखिए "वक्तव्य: समाचारपत्रोंको", पृ० ३७५-६ और "तार: राजनीतिक कैदी रिहाई उपसमितिके मन्त्रीको", पृ० ४४५।

४३०. वक्तव्य: समाचारपत्रोंको[1]

एबटाबाद
८ जुलाई, १९३९

मैंने दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंको सलाह[2] दी थी कि वे गैर-यूरोपीयोंका कोई मिला-जुला मोर्चा न बनायें। सर रजा अलीने इस सलाहकी जो निन्दा की है उसे मैं सावधानीके साथ पढ़ गया हूँ। हो सकता है कि गुण-दोषके आधारपर देखने पर मेरी राय खराब हो, लेकिन वह इसलिए खराब नहीं हो जाती क्योंकि मैं पिछले २५ वर्षोंसे दक्षिण आफ्रिकासे बाहर रहा हूँ। मेरी सलाह ठोस है, इस बारेमें मुझे कोई सन्देह नहीं है। बन्टुओंके प्रति चाहे कितनी भी सहानुभूति क्यों न हो, लेकिन भारतीय उनके साथ मिलकर नहीं लड़ सकते। मुझे इसमें शक है कि खुद बन्टू लोग भी एक जातिके रूपमें ऐसे किसी प्रयत्नका समर्थन करेंगे। यदि वे भारतीयोंके उद्देश्यके साथ अपने उद्देश्यको मिला देंगे तो वे अपने जिस उद्देश्यको लेकर लड़ रहे हैं उसे नुकसान पहुँचायेंगे और वह और भी जटिल बन जायेगा और यदि भारतीय ऐसा करेंगे तो उससे उनके उद्देश्यको भी नुकसान पहुँचेगा। लेकिन यदि दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयोंको इस बातका पूरा-पूरा यकीन है कि वे इस तरह अपनी स्वतन्त्रता हासिल कर सकेंगे तो उन्हें अ० भा० कां० क० के प्रस्ताव अथवा मेरी सलाहसे गैर-यूरोपीय मोर्चा बनाने से विमुख नही होना चाहिए। सच तो यह है कि यदि उन्होंने ऐसा मोर्चा बनाना लाभकारी अथवा सम्भव माना होता तो वे कभी-का ऐसा कर चुके होते।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-७-१९३९, *हिन्दू*, ९-७-१९३९ भी

१. यह *हरिजन*में प्रकाशित "नोट्स" (टिप्पणियाँ) से लिया गया है। *हिन्दू*के अनुसार, गांधीजी ने यह वक्तव्य "दक्षिण आफ्रिकाके बारेमें अ० भा० कां० कमेटीके प्रस्तावपर सर रजा अलीका वक्तव्य दिखाये जाने पर" दिया; देखिए पृ० ३९९-४००।

२. देखिए "दक्षिण आफ्रिका-सम्बन्धी प्रस्ताव", पृ० ४०९-११।

४३१. सन्देश : रामेश्वरी नेहरूको

[८ जुलाई, १९३९ या उसके पश्चात्][1]

मीनाक्षी मन्दिर हरिजनोंके लिए खोल दिये जाने पर बधाई![2] आशा है, तुम सकुशल होगी।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ११-७-१९३९

४३२. तार : राजनीतिक कैदी रिहाई उप-समिति[3] के मन्त्रीको

एबटाबाद

[९ जुलाई, १९३९ या उसके पूर्व][4]

शरत बाबूके निर्देशानुसार काम करें। भूख-हड़तालको मैं हर तरहसे बुरा और नासमझीका काम मानता हूँ।[5]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ९-७-१९३९

१. मीनाक्षी मन्दिरके द्वार ८ जुलाईसे हरिजनोंके लिए खोल दिये गये थे। तारीख इसीके आधारपर निर्धारित की गई है।

२. देखिए "मीनाक्षी मन्दिर खुल गया", पृ० ४५९-६१।

३. बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस समितिकी।

४. यह तार दिनांक "कलकत्ता, ९ जुलाई" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

५. देखिए "वक्तव्य: समाचारपत्रोंको", पृ० ४४४ भी।

४३३. पत्र : सिकन्दर हयात खाँको

एब्टाबाद
९ जुलाई, १९३९

प्रिय सर सिकन्दर,[1]

पारसी मित्रोंने मुझे मुदित होकर बताया कि आपने बम्बई मन्त्रिमण्डलके नशा-बन्दी कार्यक्रमको 'सनक-भरी योजना' कहा है। क्या यह सच है? यदि सच है तो बतलाइए कि आप ऐसा क्यों मानते हैं?

मुझे ऐसे पत्र मिलते रहे हैं जिनमें बताया गया है कि नगरपालिकाओंके चुनावोंमें आप हरिजनोंको अलग निर्वाचक-मण्डल देने की बात सोच रहे हैं। पता नहीं, इस सूचनामें सचाई है या नहीं।

मैं देखता हूँ कि आपकी योजना[2] जनताके सामने आ गई है। मैं अभीतक उसका अध्ययन करने के लिए मिनट-भरका भी समय नहीं निकाल पाया हूँ। आशा है, अगले हफ्तेके आरम्भमें उसका और जो कागजात आप कृपापूर्वक यहाँ छोड़ गये थे उनका अध्ययन शुरू कर पाऊँगा।

उम्मीद है आपकी पीठका दर्द ठीक हो गया होगा। मैं तो आग्रहपूर्वक आपको सलाह दूँगा कि इससे स्थायी तौरपर छुटकारा पाने के लिए आप प्राकृतिक चिकित्सा कीजिए। प्राकृतिक चिकित्सामें नपा-तुला और निश्चित आहार, भाप-स्नान और ठंडे पानीसे कटि-स्नान शामिल है। पेटपर गीली मिट्टीकी पट्टी रखने से भी बहुत मदद मिलती है। राजकुमारी अमृतकौरको इस इलाजका कुछ अनुभव है। उसका प्रयोग उसने यदा-कदा खुद भी किया है। वह आपकी पड़ोसिन भी है। उससे जरूर चर्चा करें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. पंजाबके मुख्य-मन्त्री

२. संघ की वैकल्पिक योजना, जो अन्त में ३० जुलाई को प्रकाशित हुई; देखिए खण्ड ७०, "पत्र : सिकन्दर हयात खाँको", १७-७-१९३९।

४३४. पत्र : अमृतकौरको

एबटाबाद
९ जुलाई, १९३९

प्रिय छलिया,

मैंने कल लिखा था। लेकिन डाक अभी गई नही है, सो यह पत्र भी उसी पैकेटमें जायेगा।

जे० एल० का पत्र अच्छा है। उम्मीद है कि तुम 'हिन्द स्वराज' के बारेमें अपनी राय उसे बताओगी। जडता दूर होनी चाहिए। एक्जीमा और कण्ठशोथ तुम्हारे दो शत्रु हैं। तुम्हें उन्हें निकाल बाहर करना चाहिए। मेरे सेगाँव पहुँचने के साथ ही तुम्हें भी वहाँ पहुँचना है। दोनो बीमारियोंपर सेगाँवमें काबू पाया जा सकता है। तालचरके बारेमें कुछ तय नही है। आशा करता हूँ कि मुझे वहाँ जाना नही पड़ेगा। जे० एल० का पत्र साथमें है और हक्सरका भी। मैं उन्हे लिख रहा हूँ कि मैं कश्मीर आने की कोशिश करूँगा।[1] उनका पत्र अच्छा है, हालाँकि समझने में मुश्किल है।

वाइसरायके पत्रके बारेमें तुम कुछ नही कर सकती। अब जो हो सो होने दिया जाये। मुझे अभीतक नही मालूम कि बा कब आयेगी। मेरे तारका कोई उत्तर नही आया है। मीरा राजेन बाबूका तार मिलने पर पटना गई है। वह वहाँ खुश रहेगी। उसने कई अंग्रेज और भारतीय मित्र बना लिये हैं। यह दु:खकी बात है कि खान साहबके साथ वह निभा नही पाई और ऊँचाई भी उसे अनुकूल नही बैठी। फिर भी, हो सकता है, वह अक्तूबरमें वापस आ जाये। मैं इन इलाकोसे ५ अगस्तको रवाना होनेवाला हूँ।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९२६) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७२३५ से भी

१. देखिए पृ० ४४१-२ भी।

४३५. पत्र : शारदाबहन गो० चोखावालाको

एबटाबाद
९ जुलाई, १९३९

चि० बबुड़ी,

तेरी तबीयत अच्छी रहती है, यह खुशीकी बात है।

इस प्रदेशमें ज्यादासे-ज्यादा एक महीना लगनेकी सम्भावना है।

प्यारेलालने जीभके नीचे छोटा-सा चीरा लगवाया है, जिससे उसे थोड़े दिन बम्बईमें रहना पड़ेगा। बा और सुशीला भी रह गईं। तीन-एक दिनोंमें उन्हें यहाँ पहुँचना चाहिए। बा साबरमती नहीं जायेगी। मेरा स्वास्थ्य अच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००१३) से। सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

४३६. पत्र : चिमनलाल न० शाहको

एबटाबाद
९ जुलाई, १९३९

चि० चिमनलाल,

तुम्हारा ४ तारीखका पत्र आज यहीं पढ़ा। तुम्हारी शिकायत बिलकुल सच्ची है। सुशीलाका कोई पत्र नहीं आया, यह आश्चर्यकी बात है। शकरीबहन तो दुःखी होगी ही। तुम्हारी जगह यदि मैं होऊँ तो मुझे भी दुःख हो। ऐसी दुर्घटना मेरी अव्यवस्थाका नमूना है। मेरे आसपास जो अव्यवस्था हो उसकी जवाबदेही मैं अपनी ही मानता हूँ। शंकरन् बच गया। वह ठीक है। पूरी तरह चंगा होने में कदाचित् एक महीना लग जाये। वृद्ध पुरुषकी मरहम-पट्टीके बारेमें सुशीलाने कुछ नहीं लिखा है, इसे तो मैं बहुत बड़ा दोष मानता हूँ। ऐसी भूल तो उससे नहीं होनी चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि तुम्हें उसके पत्र मिलते रहेंगे। लीलावतीका पता है : न्यू एरा हाईस्कूल, बम्बई। वह वनिता विश्राममें रहती है, लेकिन वहाँ सुखी नहीं है। देखें, क्या होता है। अमतुस्सलाम साबरमती हरिजन आश्रममें है। वह कदाचित् ठीक काम करेगी।

प्यारेलालने गलेमें हलका-सा चीरा लगवाया है, इसलिए बा, प्यारेलाल और सुशीला चार-छह दिनमें आयेंगे। यहांका मौसम सेगाँवकी अपेक्षा अच्छा है। न सर्दी है और न गर्मी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८३५३) से। सी० डब्ल्यू० ७०५२ से भी; सौजन्य : चिमनलाल न० शाह

४३७. पत्र : बलवन्तसिंहको

एबटाबाद
९ जुलाई, १९३९

चि० बलवंतसिंह,

आज डेरी फार्म पर ठीक पहूंचे होंगे। तुमारे खर्चके बारेमें मैंने सरदार साहबको लिखा है कि जो-कुछ होगा मैं जिम्मेदार रहूंगा।

यहां भी गरमी तो है। गरम पवन नही है। मैं नंगे बदन बैठता हूं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९२२) से।

४३८. भेंट : एल० डब्ल्यू० जार्डीनको[1]

एबटाबाद
[९ जुलाई, १९३९][2]

गांधीजी : यही सच्ची स्थिति है। दूसरी कोई स्थिति सम्भव नही है। आपने मेरे लेखोंको अगर पढ़ा है, तो आपको यह मालूम होगा कि मैंने यह स्पष्ट तौरसे कहा है कि जिस मनुष्यकी ईश्वरमें जीवन्त आस्था नही है वह सत्याग्रह करने का अधिकारी नहीं है। पहले अपने साथियोंसे इतनी स्पष्टतासे इस बातको कहने की हिम्मत

१. सीमा-प्रान्तके राजस्व आयुक्त; ऑक्सफोर्ड मूवमेन्टके अध्यक्ष। यह भेंट-वार्ता महादेव देसाईके लिखे "द ऑक्सफोर्ड ग्रुप ऐंड मॉरल रिआर्मामेंट" (ऑक्सफोर्ड मण्डली और नैतिक पुनरस्त्रीकरण) शीर्षक लेखसे ली गई है। महादेव देसाई अपने लेखमें बताते हैं : "वे लोग बड़े साफगो है।...कुछ बुनियादी सिद्धान्तोंके सम्बन्धमें तो उनके साथ हमारा पूरा मतैक्य है।...गांधीजी से मुलाकात करनेवाले इस मित्रने इस आन्दोलनका उद्देश्य 'लोगोंको ईश्वरके मार्ग-दर्शनमें लाकर उन्हें निर्भीक बनाना' बताया।"

२. देखिए अगला शीर्षक।

मुझमें नहीं थी। मैं यह जानता था कि इसका सच्चा हार्दिक जवाब मिलना मुश्किल था। क्योंकि बहुत-से ऐसे लोग हैं जो यह कहते हैं कि उनमें जीवन्त श्रद्धा तो है, फिर भी वे धर्मभीरु नहीं; जब कि अन्य ऐसे लोग भी मौजूद हैं जो ईश्वरमें विश्वासकी बातको तो हँसीमें उड़ा देते हैं, फिर भी अन्तरकी गहराईमें धर्मभीरु हैं। पर मुझे लगा कि चाहे जितनी कठिनाई हो, फिर भी इस बातको जिस रूपमें मैं अनुभव करता हूँ उस रूपमें मुझे यह कहनी ही चाहिए।

[जार्डीन :] क्या इस निर्णयपर आप हाल में ही पहुँचे हैं कि इस शर्तका आग्रह रखना ही होगा?

गां० : हाँ, मुझे लगा कि मुझे इस चीजको एक लाजिमी शर्तके रूपमें रखना ही चाहिए। मैं स्वयं तो उसे जानता था, उसपर अमल भी करता था, पर सब उसे स्वीकार करें, इस बातको मैंने इतने दिनोंतक जाहिर नहीं किया था। मैं यह जानता था कि कुछ लोग इस वजहसे मुझसे रुष्ट थे मुझपर यह दोषारोपण भी करते थे कि उन्हें मैं चुने हुए लोगोंके दायरेसे बाहर रखना चाहता हूँ। पर मुझे लगा कि गलतफहमीकी जोखिम उठाकर भी मुझे सत्य तो जाहिर करना ही चाहिए। मैं यह नहीं जानता कि इस सारी चीजको व्यवहारमें किस तरह उतारा जाये।

जा० : यह तो गजबकी बात है। जब आप यह कहते हैं कि अमुक बात कठिन है, तो मुझे यह बहुत महत्त्वकी बात लगती है, क्योंकि उससे मुझे प्रोत्साहन मिलता है। कुछ लोगोंमें एक प्रकारकी जो वीर-पूजाकी वृत्ति है वह आपके अन्दर अति-मानवीय शक्तिका आरोपण करती है। इसलिए जब आपको मैं यह कहते हुए सुनता हूँ कि आप कठिनाइयोंका अनुभव करते हैं, आप भी अन्य मनुष्योंकी तरह ही हैं, तब मुझे आपके साथ अपनत्वका अनुभव होता है।

हालमें एक दूसरी चीजका भी बोध मुझमें जागा है। वह यह कि मनुष्यको लेने का नहीं, बल्कि कुछ-न-कुछ देने का ही हमेशा विचार करना चाहिए।

गां० : एक अर्थमें यह सही है। पर कुछ लिये बगैर तो हम दे ही नहीं सकते। और मनुष्य यही कहता रहे कि मैं तो हमेशा दिया ही करूँगा तो वह पाखण्ड होगा।

ईमानदारी, शुद्धि, स्वार्थहीनता और प्रेम उनके चार सिद्धान्त हैं, और इस मित्रने कहा कि जहाँ ईमानदारी और शुद्धि ये दोनों 'सत्य' के अन्तर्गत आयेंगी, स्वार्थहीनता और प्रेम 'अहिंसा या बहादुरी' में शामिल होंगी। . . . गांधीजी ने पूछा :

इस नियमके अन्तर्गत किसी सिविल अधिकारीकी स्थिति क्या होगी, जिसको शासितोंसे कोई मानवीय सम्पर्क स्थापित न करने का प्रशिक्षण दिया जाता है? शायद आप यह स्वीकार नहीं करेंगे कि उन्हें ऐसा प्रशिक्षण दिया जाता है?

जा० : नहीं, यह तो स्वीकार नहीं करूँगा।

गां० : लेकिन धीरे-धीरे करेंगे। मैं इसे कोई आरोपकी तरह नहीं रख रहा हूँ। सिविल सेवाका सगठन करनेवाले लोगोंने जो-कुछ किया, दुनियादारीके तकाजेपर ही किया। जिन लोगोंपर उन्हें शासन करना था उनके साथ वे घनिष्ठताका व्यवहार करें, ऐसा वे कैसे होने देते — खास तौरसे इसलिए कि शासितोंके मुकाबले शासक सिर्फ मुट्ठी-भर थे? लेकिन अगर आप ऑक्सफोर्ड मण्डलीके सिद्धान्तको स्वीकार करके चलते हैं तो आपको मेरे साथ मनुष्यताके स्तरपर सम्पर्क कायम करना होगा। और अगर आप मेरे साथ ऐसा करते हैं तो आपको दूसरोंके साथ भी करना चाहिए। आपको मेरे माध्यमसे सारे हिन्दुस्तानके साथ और मुझे आपके जरिये सभी अंग्रेजोंके साथ सम्पर्क स्थापित करना पड़ेगा। ऑक्सफोर्ड मण्डलीको कमसे-कम अपना ध्येय तो इसी बातको बनाना चाहिए, अन्यथा यह आन्दोलन भी इस तरहके अन्य आन्दोलनोंके ही समान बन जायेगा।

जा० : आप ठीक कहते हैं, और इसीलिए मैं फ्रीमेसन संस्थासे अलग रहा। हमें ईश्वरकी छत्रछायामें आपसमें मिलना है और हम दूसरेसे ऐसी माँगें नहीं करेंगे जो ईश्वरके मार्गदर्शनसे असंगत हों।

गां० : जो भी हो, मैंने तो अपनी कठिनाई बता दी है।

जा० : विश्वके लिए नैतिक पुनरस्त्रीकरणका कार्यक्रम सशस्त्र संघर्षके खतरोंको कुछ कम करने में अवश्य सफल होगा। ऐसे नैतिक पुनरस्त्रीकरणको विश्वव्यापी समर्थन मिलना चाहिए।

गांधीजी को राष्ट्रपति रूजवेल्टके सन्देशके[1] उत्तरमें तैयार किये गये एक कागज पर हस्ताक्षर करने को आमन्त्रित किया गया।

भारतमें जिन लोगोंने इस कागजपर हस्ताक्षर किये उनके प्रति यथेष्ट सम्मान व्यक्त करते हुए गांधीजी ने कहा कि मेरी अन्तरात्माको इसपर हस्ताक्षर करना मंजूर नहीं है। मैं एक झूठका अनुमोदन नहीं कर सकता। भारत अतीतकी जिम्मेदारी कैसे स्वीकार कर सकता है?

१. महादेव देसाई बताते हैं: "...अमेरिकामें कॉन्स्टीट्यूशन हॉलमें एकत्र चार हजार लोगोंके समक्ष राष्ट्रपति रूजवेल्टने विश्व-शान्ति कायम रखने के साधनके रूपमें नैतिक पुनरस्त्रीकरणकी हिमायतकी। उसके दो अनुच्छेद इस प्रकार थे:

'नैतिक पुनरस्त्रीकरणका सबसे पहला अर्थ तो हृदय-परिवर्तन है। इसका मतलब अतीतके लिए अपनी जिम्मेदारी की स्वीकृति है — राष्ट्रों तथा व्यक्तियों द्वारा ईमानदारी, शुद्धता, स्वार्थहीनता और प्रेमके मानकोंकी स्पष्ट स्वीकृति है और प्रतिदिन ईश्वरके निर्देशको सुनने और उसका पालन करने का प्रयत्न है।

'इस निर्णायकी घड़ीमें हम प्रतिज्ञा करते हैं कि हम अपनी श्रद्धा-भक्तिकी अन्तिम आहुति देकर — हृदय, मन और संकल्पके साथ अपनी सेवा अर्पित करके — हम अपने राष्ट्रको नैतिक तथा आध्यात्मिक शक्तिसे सज्जित करेंगे, कलकी दुनियाका निर्माण करेंगे — नये मानवोंकी दुनियाका, नये राष्ट्रोंका निर्माण करेंगे, जिनमें ईश्वरके नेतृत्वके अधीन मानव-प्रतिभाकी हर शक्ति समस्त मानव-समाजकी विरासतको समृद्ध बनाने के लिए स्वतन्त्र होगी'।"

यह सब मुझपर लागू नहीं होता। पूरा अनुच्छेद शोषक राष्ट्रोंपर लागू होता है, जब कि भारत एक शोषित राष्ट्र है। दूसरा अनुच्छेद भी पश्चिमके राष्ट्रोंपर ही लागू होता है, हमपर नहीं। पूरी अपील सरासर अवास्तविक है। मैं नैतिक शक्ति पुनः सँजोने के बारेमें सोच तो सकता हूँ, लेकिन वह दूसरे परिवेशमें होगा। मैं नैतिक शक्तिके पुनःसचयके माध्यमसे साम्प्रदायिक एकताकी बात सोच सकता हूँ। शोषित राष्ट्रके सदस्यके रूपमें मेरा नैतिक शक्तिके पुनःसंचयका कार्यक्रम अलग ढगका हो सकता है, और मैं उसमें शरीक होने के लिए चीनको निमन्त्रित कर सकता हूँ, लेकिन पश्चिमी देशों और जापानको कैसे कर सकता हूँ? और जिस प्रकार मेरे लिए पश्चिमको आमन्त्रित करना अवास्तविक होगा उसी प्रकार पश्चिमके लिए भारतको आमन्त्रित करना भी अवास्तविक होगा? पश्चिमके देश पहले शोषण-नीति और अपने अनैतिक लाभोंका त्याग करके दिखलायें।[१]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-८-१९३९

४३९. पत्र : मीराबहनको

एबटाबाद
१० जुलाई, १९३९

चि० मीरा,

मुझे तुम्हारा दूसरा पत्र मिल गया है। मैंने जार्डीनके साथ कल एक घंटेतक बातचीत की। वे काफी सन्तुष्ट दिखाई दिये। उन्होंने कहा कि यदि उन्हें जरूरत महसूस हुई तो वे फिर आयेंगे। उन्होंने तुम्हारी बहुत तारीफ की। यहाँके तुम्हारे मेजबान, जिनसे महादेव मिल चुके हैं, तुम्हें बहुत चाहते हैं। काजी साहब जानना चाहते थे कि तुम क्यों चली गईं और अबतक वापस क्यों नहीं आई हो। मैंने उन्हे आबोहवा और ऊँचाईके बारेमें भी बताया।[२] मैंने उनसे यह भी कहा कि यदि तुम्हारी जरूरत हुई तो तुम अक्तूबरमें वापस लौट आओगी। बातचीतके दौरान बादशाह खान भी उपस्थित थे। जहाँतक मैं उन्हे समझ सकता हूँ, वे तुम्हें खोना नहीं चाहते।

किसनचन्द भाटिया आज (सोमवार को) आये। बातचीत कल शुरू होनेवाली है। बादशाह खान किसीसे मिलने के लिए गये हैं। मुझे तो वे पहले की तरह प्यारे लगते हैं। लेकिन इसका कोई महत्त्व नहीं है। तुम जो समझो वही तुम्हारे लिए ठीक है।

१. बॉम्बे क्रॉनिकलके १३-७-१९३९ के अंकमें बताया गया है कि १२ जुलाईको "जार्डीनने गांधीजी से फिर भेंट की।"

२. देखिए "पत्र : अमृतकौर को", पृ० ३७७ और ४४७ भी।

महादेव देसाई नथियागलीका निरीक्षण करने के लिए गये हैं। मेजबान[1] चाहती हैं कि मैं वहाँ जाऊँ। लेकिन मैं परिवर्तन नहीं चाहता। मेरे लिए यह जगह काफी अच्छी और काफी ठंडी है।

प्यारेलालकी ओरसे कोई समाचार नहीं मिला है कि वे लोग कब आ रहे हैं।

मेरी तबीयत अभी तक ठीक है। मेरे बायें हाथसे लिखने से तुम अन्दाज लगा सकती हो कि मेरे दायें हाथको कितना लिखना पड़ा होगा। जयप्रकाश आज ही आया।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४४५) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० १००४० से भी

४४०. पत्र : वल्लभराम वैद्यको

एबटाबाद
१० जुलाई, १९३९

भाई वल्लभराम,

तुम्हारा पत्र मुझे उस समय मिला जब मैं बहुत ज्यादा व्यस्त था, इसलिए अम्बाशंकर वैद्यको बुलवा नहीं सका। वे अपने-आप आये हों तो मुझे मालूम नहीं। बा का साबरमती जाना तय हो गया था। लेकिन बादमें रद्द हो गया। मेरे साथ भी नहीं है, लेकिन अब हो जायेगी। बा के लिए मैं फिलहाल तुम्हें तकलीफ नहीं दूँगा।

चन्दनबहनको लाभ हो रहा है, इससे मुझे बहुत खुशी होती है। क्योंकि उसे तुम्हारी देख-रेखमें रखने का आग्रह मेरा ही था। अब उसे जबतक अपने पास रखना उचित समझो तबतक रखना और उसे बिलकुल चंगा करके भेजना।

विजयाकी तबीयत अभी पूरी तरह सुधरी नहीं जान पड़ती। उसकी जिम्मेदारी तुम्हारे ऊपर है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २९०६) से। सौजन्य : वल्लभराम वैद्य

१. श्रीमती परमानन्द

४४१. पत्र : अमृतलाल तो० नानावटीको

एबटाबाद
१० जुलाई, १९३९

चि० अमृतलाल,

उम्मीद है, चन्दनकी तबीयत सुधर रही होगी। उसका पत्र मुझे मिला था। शंकरकी तबीयत बहुत तेजीके साथ सुधर रही थी। वह और चन्दन दोनो भाग्य-शाली हैं न? अब तो शंकरको तुरन्त पहुँचना चाहिए।

तुमने काकाकी रायके बारेमें पूछा था, लेकिन उन्होंने तो निर्णय मुझे सौंप दिया है। अब यदि चन्दनको तुम्हारी जरूरत न हो और तुम्हें भी उसकी उपस्थिति जरूरी न लगे तो तुम वर्धा पहुँच जाना।

बा बिलकुल ठीक हो गई है। लेकिन चूँकि प्यारेलालने जीभके नीचे छोटा-सा चीरा लगवाया है, इसलिए सुशीला और बा को रुक जाना पड़ा। आज-कलमें उन्हें वहाँसे रवाना हो जाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७८९) से

४४२. पत्र : कृष्णचन्द्रको

एबटाबाद
१० जुलाई, १९३९

चि० कृष्णचंद्र,

बुधवारसे तुमारे तरफसे कुछ खबर नहीं है उसकी चिंता रहती है। यह खत मिलने तक अगर तुमने यहां कुछ नहीं लिखा है तो तार दे दो। आशा है बाल-कृष्ण अच्छा होगा। तुमारी चिंता भी दूर हुई होगी। इस वखत तो तुमारा धर्म वहीं रहने का है। मेरे नीचे उतरने पर देखा जायगा।

सुशीला, प्या०, बा अबतक तो मुंबई है।

तुमको अच्छा आदमी मिल गया होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३२२) से

४४३. पत्र : अमतुस्सलामको

एबटाबाद

१० जुलाई, १९३[९][1]

चि० अमतुलसलाम,

मैं तो लिखता हूं। तेरा क्या? तबीयत अच्छी होगी।

हम सब अच्छे हैं।

बा वगैरा अबतक नही आये हैं। आजकल निकलने का तार आना चाहीये।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २३७) से

४४४. तार : मीराबहनको[2]

एबटाबाद

११ जुलाई, १९३९

मीराबहन

मारफत खादी भण्डार

मधुबनी

अगर सेहत ठीक रहे तो तुम वही रह सकती हो।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४४६) से; सौजन्य . मीराबहन। जी० एन० १००४१ से भी

१. मूलमें गांधीजीके स्वाक्षरोंमें "१९३०" है; लेकिन १९३० में गांधीजी एबटाबादमें नहीं थे।

२. बापूज लेटर्स टु मीरामें मीराबहनने लिखा है: "बापूके सीमा-प्रान्त आने में बहुत ज्यादा विलम्ब हो जाने का मेरे स्वास्थ्यपर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा और अन्ततः मैं सेवाग्राम लौट आई। यह जानते हुए कि बापूकी इच्छा है कि मैं स्वतन्त्र रूपसे काम करूँ, मैंने साहस बटोरा और बिहार चली गई। इस बीच, बापूका सीमा-प्रान्त जाने का इतने दिनोंसे टलता आ रहा कार्यक्रम अंजाम पा गया और मेरे हृदयकी पीड़ा और भी घनीभूत हो गई।"

४४५. पत्र : शामलालको

एबटाबाद
११ जुलाई, १९३९

प्रिय लाला शामलाल,

आपके ६ अप्रैलके पत्रका उत्तर मैं आज दे पा रहा हूँ। मुझे खुशी है कि आप किसी निश्चयपर तो पहुँच सके। मुझे आशा है कि आप अपनी प्रतिज्ञाका पालन कर रहे हैं और ऐसा करना आपके लिए अच्छा सिद्ध हो रहा है।[1]

आपका,
बापू

लाला शामलाल, एम० एल० ए० (सेन्ट्रल)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२८८) से

४४६. पत्र : विद्यावतीको

एबटाबाद
११ जुलाई, १९३९

चि० विद्या,

तुमारा १३ जुनका खत मिला था। मैं उसके पहले उत्तर नहीं दे सका। मेरा स्वास्थ्य तो अच्छा रहता है। मैं सेगांव पहोंचु तब अवश्य आ जाओ। वहां हालत सब मुझे बता दो। राजेन्द्रबाबू इ०को लिखेगी तब वे सब तुमारी बात सुनेंगे।

लक्ष्मी आजकल कहां है? क्या करती है? तुमारा स्वास्थ्य ठीक हो गया क्या? इस मासकी आखर तक तो यहीं हूं।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्रसे : रानी विद्यावती फाइल। सौजन्य : राष्ट्रीय गांधी संग्रहालय और पुस्तकालय

१. इसके उत्तरमें शामलालके लिखे १३ जुलाई के पत्रकी पहुँच स्वीकार करते हुए प्यारेलालने लिखा (जी० एन० १२८९): "बापूको यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि आप नियमित रूपसे चरखा कातने लगे हैं और आपको इससे लगाव हो गया है। उनकी इच्छा है कि आप तकलीपर कातना सीखें।"

४४७. टिप्पणियाँ

प्रतिवाद

कच्छ प्रजाकीय परिषद्‌के अध्यक्ष जनाब यूसुफ मेहरअली लिखते हैं :

'हरिजन' के हालके एक अंकमें "नेता अवश्य नेतृत्व करें"[1] शीर्षकसे आपने कच्छका जिक्र किया है। उससे एक-दो ऐसे मुद्दे उठते हैं, जिनको स्पष्ट करने की जरूरत है। आपके लेखमें लिखा है कि कच्छके एक कार्यकर्त्ताने आपको यह सूचना दी कि "कच्छके कुछ नेता लोगोंसे कहते फिरते हैं कि अगर आपने सविनय अवज्ञा आन्दोलनको स्थगित न कर दिया होता तो आज उन्हें वहाँ उत्तरदायी सरकार या लगभग वैसा ही राजतन्त्र जरूर मिल गया होता।"

हम यह पढ़कर बहुत हैरान हुए, क्योंकि जहाँतक मेरी जानकारी है, हमारे किसी जिम्मेदार कार्यकर्त्ताने कच्छमें ऐसी बात नहीं कही। आपकी सलाहके मुताबिक हमने १ अप्रैलको सत्याग्रह स्थगित कर दिया, तबसे अकेले मैंने २०० से अधिक सभाओंमें भाषण दिये होंगे। मेरे अन्य सहकारियोंने भी कच्छमें इसी तरह काफी ज्यादा दौरा किया। लेकिन कहीं भी हमारे प्रमुख कार्यकर्त्ताओंने ऐसे खयालोंका इजहार नहीं किया। दरअसल, कच्छकी राजधानी भुजमें, जहाँ हमारा केन्द्रीय कार्यालय है, एक सभामें उपस्थित बड़ी भारी भीड़में मैंने पूछा कि क्या आपमें से किसीने भी ये या इस आशयके शब्द सुने हैं? सबका एक ही जवाब था: 'नहीं।' मैंने फिर पूछा कि क्या श्रोताओंमें से किसीको याद है कि उसने इससे मिलती-जुलती बात कभी सुनी है। एक भी ऐसा व्यक्ति वहाँ न था। मैं इस मुद्देको इससे आगे नहीं ले जाना चाहता। लेकिन यह देखकर कि आपने एक ऐसे वक्तव्यको अहमियत देनेके लिए अपना नाम उसके साथ जोड़ दिया जिसे ज्यादा जाँच करनेपर आप भी गलत पाते, हम दुःखका अनुभव किये बिना नहीं रह सके।

मैं बड़ी प्रसन्नताके साथ इस प्रतिवादको छाप रहा हूँ। लेकिन मैं यह जरूर कहना चाहता हूँ कि अध्यक्षको दुःखी होनेका कोई कारण नहीं था। यदि मैं किसीके नामका जिक्र करता, तो टिप्पणी लिखनेके पहले उनसे पूछताछ अवश्य कर लेता। लेकिन जब एक जिम्मेवार कार्यकर्त्ताने मुझसे कहा कि क्या आपने सत्याग्रह

१. देखिए पृ० ३५९।

स्थगित कराया है, और यदि हाँ, तो आपको इसकी सार्वजनिक घोषणा भी करनी चाहिए, तब मैं उत्तर देने से पहले उस बातकी सचाईकी जाँच करने की प्रतीक्षा नही कर सकता था। यह भी नही कि यह प्रतिवाद इस मामलेको उससे कुछ आगे ले जाता है जहाँ मैंने इसे अपनी टिप्पणीके माध्यमसे छोड़ा था। हाँ, इससे यह बात जरूर मालूम हुई कि जनाव मेहरअली और जिन अन्य लोगोंसे उन्होंने पूछा है, उन्होंने इस प्रकारका कोई बयान नही दिया। इसका तो सीधा तरीका यह है कि मुझे सूचना देनेवाले से कहा जाये कि या तो आप उनके नाम पेश करें जिन्होंने आपके मुताबिक यह बयान दिया है, या पूरी तरहसे अपना आरोप वापस लें। मैं पाठकोंको बता दूं कि मैंने इसके अनुसार स्वयं सूचना देनेवाले से कहा है कि या तो वे नाम बतायें या अपना आरोप वापस लें। इस बीच मेरी टिप्पणी कच्छमें नही तो दूसरी अनेक रियासतोंमें बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है। नेताओंने अपने उत्तरदायित्वको ज्यादा समझा है, और यह अनुभव किया है कि मेरी राय अगर उनके दिल और दिमागको नहीं जँचती, तो उसे बहुत महत्त्व नहीं देना चाहिए। वे जो भी कदम उठायेंगे, उसके लिए वे खुद जिम्मेवार होंगे। स्वभावतः होना भी यही चाहिए। अपने कार्य-क्षेत्रकी हालत प्रत्यक्ष रूपसे तो वही जानते है।

इसे करने का ढंग

नारणदास गांधीको खादीकी धुन लगी है। वे मेरे मनपसन्द ढंगके शिक्षक और योग्य लेखाविद् हैं। लेकिन वे वर्षोंसे पक्के खादीवादी हैं। वे प्रतिदिन लगभग चार घण्टे सूत कातते हैं। वे जितना सूत कातते है उससे उनके घर-भरकी खादीकी जरूरत पूरी हो जाती है। पाँच वर्ष पूर्व खादीको लोकप्रिय बनाने और सार्वजनिक सेवाके लिए चन्दा इकट्ठा करने का विचार उनके मनमें आया और मेरी वर्ष-गाँठके अवसरपर मेरी जितने वर्षकी आयु हो उतने दिन उन्होंने चरखा यज्ञ मनाने का निश्चय किया। उन्होंने मेरे ६६ वें जन्म-दिवससे शुरू किया। खादीके द्वारा अपनी दीन-सेवाको मैं अत्यधिक महत्त्व देता हूँ। मैं इसे किसी पागल मनुष्यका विचार नही मानता। अगर हम इस बातकी ओर ध्यान दें कि इस विचारके कारण हिन्दू और मुसलमान कतैयों एवं बुनकरोंकी जेबोंमें लगभग ५ करोड़ रुपये गये तो यह विचार पागलपन-भरा नहीं लगेगा। इसलिए हालांकि नारणदास गांधीका यह उपक्रम मेरे नामसे सम्बद्ध है तथापि हर वर्ष उसका प्रचार करने में मुझे कोई संकोच नहीं होता। नारणदासकी आकांक्षा हर वर्ष बढ़ती जाती है। और आजतक तो उन्हें इसमें सफलता ही मिली है। उन्होंने शुरूमें साथी कार्यकर्त्ताओंसे ६६ हजार गज सूत और जो देना चाहें उनसे ६६ सिक्के इकट्ठे करने के लिए कहा। सूत तो सारे हिन्दुस्तानसे इकट्ठे किया गया लेकिन पैसा सिर्फ राजकोटसे ही इकट्ठा किया गया, क्योंकि इसके लिए घर-घर जाकर पैसा माँगना था। इस बार नारणदास गांधी ७०,००० गज सूतके बजाय ७०,००,००० गज सूतकी उम्मीद लगाये बैठे हैं। क्या कोई ऐसी चीज है जिसे एक नेक व्यक्ति अपने दृढ़ निश्चयसे

प्राप्त नहीं कर सकता ?[1] यदि ७००[2] स्वयंसेवक २ अगस्तसे ७० दिन तक प्रतिदिन एक हजार गज सूत कातें तो इस लक्ष्यको प्राप्त किया जा सकता है। चरखा चलाने का कार्यक्रम २ अगस्तको शुरू होगा और १० अक्तूबरको समाप्त होगा। एक अच्छा कतैया भी तीन घण्टेमें एक हजार गज सूत कात लेगा। लेकिन एक सामान्य कतैया ४ घण्टेमें बडे मजेसे इतना सूत कात सकता है। और यदि नारणदासको ७,०००[3] स्वयंसेवकोंका सहयोग प्राप्त हो जाये तो प्रतिदिन १०० गज से ज्यादा सूत कातने की जरूरत नहीं है। इसका मतलब होगा प्रतिदिन आधे घण्टेसे भी कम समय सूत कातना। प्रति वर्ष स्वयंसेवकोंकी जितनी अधिक संख्या हो उतना ही अच्छा होगा। खादीकी खूबी कताईसे खादीका उपयोग करनेवाले लोगोंका यथासम्भव अधिकसे-अधिक निकटका सम्बन्ध कायम करने में निहित है। उधर कताई स्वेच्छया और उपयोगी सहयोगका सबसे अच्छा और आसान तरीका प्रस्तुत करती है। हिन्दुस्तानके पास मनुष्य-रूपी करोडों यन्त्र है, इसीलिए उसे बडे-बडे जड यन्त्रोंकी जरूरत नहीं है।[4] यदि करोडों लोगोंका इसमें सहयोग हो तो लोग खेल-खेलमें अपने वस्त्र बनायें और करोड़ो रुपये विदेश जाने से बच जायें और यह धन स्वतः करोड़ों लोगोंमें वितरित हो जाये। मैं आशा करता हूँ कि नारणदास गाधीको अपने इस उपक्रममें बहुत सारे स्वयंसेवकोंका सहयोग प्राप्त होगा। उन्हें जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी अपने नाम और पते नारणदासको भेज देने चाहिए। इस तरह जो पैसे इकट्ठे होंगे और सूत तथा खादीकी बिक्रीसे जो धन प्राप्त होगा वह नाम-मात्रको मुझे पेश किया जायेगा और मैं उसे काठियावाडमें हरिजन तथा खादी-कार्य और राजकोटकी राष्ट्रीय शालामें बराबर-बराबर बाँट दूंगा।

एबटाबाद, १२ जुलाई, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-७-१९३९

४४८. मीनाक्षी मन्दिर खुल गया

मेरे सामने श्रीमती रामेश्वरी नेहरूका वह भाषण है जो उन्होंने गत १३ जूनको मदुरामें होनेवाली तमिलनाड प्रान्तीय हरिजन मन्दिर-प्रवेश सम्मेलनमें दिया था। मुझे उनका एक पत्र भी मिला था। उसमें उन्होंने बताया है कि सभाओंमें भारी उपस्थिति और लोगो द्वारा प्रदर्शित उत्साहसे उन्हें लगता है कि उनका दौरा बहुत सफल रहा। उन्होंने यह आशा भी प्रकट की थी कि बहुत करके मीनाक्षीका सुप्रसिद्ध मन्दिर जल्दी ही हरिजनोंके लिए खुल जायेगा। उस समय मैं यह नहीं

१. यह वाक्य नारणदास गाधी द्वारा गुजरातीमें लिखे "रेंटिया बारसपर टिप्पणी" नामक पत्रकसे लिया गया है (सी० डब्ल्यू० ८५६६)।

२ और ३. स्पष्ट ही यह छपाईकी भूल है। तात्पर्य '१००' और '१०००' से है। देखिए खण्ड ७०, "टिप्पणियाँ", ६-८-१९३९ भी।

४, यह और इसके बादके दो वाक्य गुजरातीसे लिये गये हैं।

जानता था कि मन्दिर इतनी जल्दी खुलनेवाला है। किन्तु यह आश्चर्यजनक मांगलिक प्रसंग ८ जुलाईको ही उपस्थित हो गया।

अस्पृश्यता-निवारणकी लड़ाई और हरिजनोंके लिए मन्दिर-प्रवेशके आन्दोलनमें यह एक बहुत बड़ी घटना है। त्रावणकोरमें राज्य द्वारा मन्दिर-प्रवेशकी जो घोषणा की गई थी वह निस्सन्देह बहुत महत्त्वपूर्ण थी। लेकिन वह महाराजाके विशेषाधिकारकी बात थी। उनके दीवान एक बुद्धिमान सलाहकार थे। महाराजा, महारानी और दीवानने मिलकर यह महान् परिवर्तन किया। लेकिन मदुराके प्रसिद्ध मन्दिरका हरिजनोंके लिए खोला जाना इस दृष्टिसे और भी बड़ी घटना है कि यह जनताके संकल्पका ही शुभ फल है। इसका अर्थ है मीनाक्षीके मन्दिरमें जानेवाले लोगोंका निश्चित हृदय-परिवर्तन। लोकमतको प्रशिक्षित करने के लिए श्री वैद्यनाथ अय्यर और उनके साथियोंने जो अथक परिश्रम किया है उसके लिए उनकी जितनी प्रशंसा की जाये उतनी कम है।

हमें यह आशा करनी चाहिए कि इस मन्दिरके खुलने के बाद दक्षिण भारतके दूसरे बड़े-बड़े मन्दिर भी हरिजनोंके लिए खुल जायेंगे। इसमें जल्दबाजी करने और जनताको कोंचने की जरूरत नहीं है। मन्दिर जानेवालोंकी राय ही सबसे अधिक महत्त्वकी बात है। उन्हींकी राय निर्णायक होनी चाहिए। कार्यकर्त्ताओंको प्रत्येक लाभको पुख्ता करने की कोशिश करनी चाहिए ताकि फिर पीछे कदम न हटाना पड़े। हरिजनोंके लिए हर मन्दिरके खोले जानेका प्रसंग मन्दिरके आन्तरिक और बाह्य वातावरणको और अधिक पवित्र करनेवाला सिद्ध होना चाहिए। ऐसे मन्दिरोंकी शुचिता किसी भी तरह खंडित नहीं होनी चाहिए। यह विशुद्ध धार्मिक कृत्य है और इसका वही वांछित रूप है, इसलिए इससे कोई राजनीतिक प्रयोजन सिद्ध करने की कोशिश नहीं की जानी चाहिए।

हरिजनोंको भी यह समझाना चाहिए कि उनके लिए मन्दिर खुलने का धार्मिक महत्त्व क्या है?

इस सम्मेलनमें १५ उपयोगी प्रस्ताव पास किये गये थे, जिनमें से ये तीन प्रस्ताव खास ध्यान देने योग्य हैं :

> १. यह सम्मेलन इस बातपर गहरा खेद व्यक्त करता है कि मैसूर सरकारने श्रवण बेलगोलाके मन्दिरमें हरिजनोंके प्रवेशकी अपनी आज्ञा हाल में ही वापस ले ली है और उन्हें उस सीमातक भी जाने की अनुमति नहीं दी है जहाँतक गैर-हिन्दू जा सकते हैं।
>
> २. यह सम्मेलन निश्चय करता है कि हरिजन सेवक संघके सभी प्रान्तीय बोर्ड नीचे लिखे उद्देश्यसे प्रान्तीय सेवक-दलका संगठन करें :
>
> (क) हरिजन सेवक संघ द्वारा संचालित स्कूल, छात्रालय आदि हरएक संस्था पूरा समय देनेवाले एक कार्यकर्त्ताके नियन्त्रणमें रहे।
>
> (ख) सेवकोंको कमसे-कम ५ सालतक काम करने का वचन देना चाहिए।

(ग) उन्हें व्यक्तिकी आवश्यकता और स्थानकी परिस्थितियोंके अनुसार १५ रु० से ३० रु० तक भत्ता दिया जाये।

(घ) सेवक उस केन्द्रका काम देखेगा, जो प्रान्तीय बोर्ड उसे सौंपेगा।

(ङ) सेवककी योग्यता और जो प्रतिज्ञा उसे करनी होगी वह वही होगी जो केन्द्रीय बोर्डके सेवकोंकी होगी। उसमें इतनी योग्यता और भी होनी चाहिए कि वह कमसे-कम तीसरा दर्जा पास हो, तीन सालतक हरिजन-कार्य करता रहा हो और महात्मा गांधी व हरिजन सेवक संघके बताये हुए आदर्शोंमें पूर्ण विश्वास और आस्था रखता हो।

(च) सेवकोंके वेतनके लिए यद्यपि प्रान्तीय बोर्ड ही पूरे तौरपर जिम्मेवार है, तथापि जिस संस्थामें वह काम कर रहा है, उसे भी कमसे-कम आधा वेतन चुकाने की जिम्मेवारी लेनी होगी।

(छ) जिला या स्थानीय समितियोंकी सलाहसे इस योजनाके लिए सेवकोंका चुनाव प्रान्तीय बोर्ड करेगा। उन सेवकोंको वे सब शर्तें माननी होंगी जो प्रान्तीय बोर्ड समय-समयपर तय करेगा।

(ज) प्रत्येक प्रान्तीय बोर्डसे सम्बद्ध सब सेवक सालमें कमसे-कम एक बार आपसमें जरूर मिलेंगे।

३. यह भी निश्चय किया जाता है कि विभिन्न प्रान्तीय बोर्डोंको नीचे लिखे स्थानोंमें से कहीं भी कार्यकर्त्ताओंके लिए लघु प्रशिक्षण केन्द्र खोलने होंगे — रामकृष्ण विद्यालय, कोयम्बटूर; विनयाश्रम, गुंटूर और कंगेरी गुरुकुल, मैसूर। यह केन्द्र एक मासतक शिक्षण दे। सर्वश्री अविनाशलिंगम, रामचन्द्रन, बापिनीडू और गोपालस्वामीसे प्रार्थना की जाये कि वे इन केन्द्रोंमें प्रशिक्षणके लिए एक योजना बनाकर सब प्रान्तीय बोर्डोंको भेजें।

इनमें से पहला प्रस्ताव हैरानीमें डालनेवाला है और मैसूरके अधिकारियोंको उसका जवाब देना चाहिए। मै तो यही आशा करता हूँ कि कही कोई गलतफहमी हुई है। एक बार जो रियायत दे दी जाती है उसे बिना किसी खास कारणके वापस नही लिया जा सकता।

दूसरा प्रस्ताव बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसके द्वारा सम्मेलनने एक बड़ा कदम उठाया है। तीसरा भी एक ठोस प्रस्ताव है। हमें उम्मीद करनी चाहिए कि सम्मेलनने जो भी फैसले किये हैं, उनपर अमल किया जायेगा। हमारे प्रस्तावोंका आदि और अन्त अक्सर छपने और अखबारोमें प्रकाशित होने के साथ ही हो जाता है। उन्हें अमलमें लाया जाये, तभी उनका कोई मूल्य है।

एबटाबाद, १२ जुलाई, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-७-१९३९

४४९. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

एवटाबाद
१२ जुलाई, १९३९

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

इसी महीनेकी पहली तारीखके पत्र[1] और तालचरके मामलेके बारेमें भेजे गये तारके लिए बहुत धन्यवाद।

आपने मेरे स्वास्थ्यके बारेमे पूछा है, इसके लिए भी मैं आपका कृतज्ञ हूँ। मेरा स्वास्थ्य अब भी अच्छा चल रहा है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे : लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

४५०. पत्र : बलवन्तसिंहको

एवटाबाद
१२ जुलाई, १९३९

चि० बलवंतसिंह,

तुमारा खत बहूत अच्छा है। सब साफ-साफ लिखा है। ऐसा ही चाहीये। कुछ तो सीखोगे, लेकिन काफी सीखाओगे! थोडे ही दिनोंमें तुमारा मार्ग साफ हो जायगा। सरदार साहबका[2] मुझपर खत आज ही आया है। वह अपने बड़े फार्मपर भी तुमको भेजना चाहते हैं। गायका दूध अलग रखकर उसमें से मक्खन निकाल लेना। दही बनाकर शीघ्र ही निकालोगे। धैर्यसे सब-कुछ ठीक हो जायेगा।

तुमारा खत राजकुमारीको भेजुंगा, वहांसे आश्रम जायगा और वहांसे सुरेन्द्रको। सरदार साहबको तो कुछ भी नही लिखुंगा। बा और प्यारेलाल और सुशीला वहांसे शुक्रवारकी गाडीमें होंगे। यह खत उसके बाद मिलेगा।

बापुके आशीर्वाद

१. देखिए परिशिष्ट १३।
२. दातारसिंहका।

[पुनश्च :]

सरदार साहेबके हिसाबसे तुमको करीब २।। महीने लगेंगे। देखें क्या होता है।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९२३)से

४५१. पत्र : अमृतकौरको

एबटाबाद
१२ जुलाई, १९३९

प्रिय पगली,

आश्चर्य है कि पिछले तीन दिनोंसे तुम्हारा कोई पत्र नही आया। आशा है, तुम्हारी तबीयत ठीक होगी।

इसके साथ बलवन्तसिंहका एक पत्र है। इसे फुरसतमें पढ़ जाना। इससे पता चलता है कि चमकनेवाली हर चीज सोना नही होती। लेकिन उसे अपनी पहली राय बदलनी भी पड़ सकती है। वस्तुस्थिति उतनी बुरी नही हो सकती जितनी उसने चित्रित की है। यह कहने की जरूरत नही कि मैं नही चाहता इस सम्बन्धमें तुम सरदार साहबसे कुछ कहो। उन्होने मुझे एक मधुर पत्र लिखा है। मैंने उसका उत्तर दे दिया है। आखिरकार वे लोग स्टेशनपर नही मिले। बलवन्तसिंह फ्रंटियर मेलसे नही गया, क्योकि उसमें तीसरा दर्जा नही था।

मीरा पटना पहुँच चुकी है। उसका कांग्रेस-अधिवेशनके समाप्त होने तक वही ठहरने का विचार है।

बा आदि शुक्रवारको यहाँ आनेवाले हैं। यहाँ सब ठीक-ठाक है। महादेवको यहाँ दाँतोंका एक योग्य डॉक्टर मिल गया है—जो शायद बम्बईवाले विशेषज्ञसे भी बेहतर है।

स्नेह।

तानाशाह

[पुनश्च :]

बलवन्तसिंहके पत्रको निबटाने के बाद उसे सेगाँव भेज देना।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९२७) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२३६ से भी

४५२. पत्र : चिमनलाल न० शाहको

एबटाबाद
१२ जुलाई, १९३९

चि० चिमनलाल,

खाने की जगहपर फर्श डलवाना। शंकरकी खबर अच्छी है। बालकृष्णकी कोई खबर नहीं है। बा, प्यारेलाल और सुशीला परसों यहाँ पहुँचेंगे। आज रवाना होंगे।

मुन्नालालका पत्र मिला है। मैं चिन्ता नहीं करता। भणसालीभाईसे कहना कि वे लहसुन एक तोलेसे ज्यादा न खायें। मात्रा एक औंस [ही] है।

बापूके आशीर्वाद

श्री चिमनलालभाई
सेगाँव आश्रम
सेगाँव, वर्धा

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५९९) से

४५३. पत्र : लीलावती आसरको

एबटाबाद
१२ जुलाई, १९३९

चि० लीला,

तेरा पत्र मिला है। धीरे-धीरे सब ठीक हो जायेगा। लड़कियोंको तू प्रेमसे वशमें करना। उनसे विनती करना कि वे शोर न करें। वे तेरी बात अवश्य मानेंगी। यह पत्र उन्हें पढ़वाना। पढ़ाईमें अधीर मत बनना। दिलचस्पीके साथ पढ़ना जो ज्ञान प्राप्त होगा, वह व्यर्थ नहीं जायेगा। परीक्षा तो बहाना है। मुख्य बात तो यह है कि तुझे ज्ञान प्राप्त करना है। आगे बढ़ने के लिए परीक्षा भी होनी ही चाहिए। शान्त चित्त रहकर पढ़ना। फिर परीक्षामें सफल रहती है या असफल, सो देखा जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५९१) से। सी० डब्ल्यू० ६५६३ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

४५४. पत्र : अमतुस्सलामको

एबटाबाद
१२ जुलाई, १९३९

बेटी अ० स०,

तेरा खत मिला। तू शरीरकी रक्षा करती ही नहीं है। यह अच्छा नही है। विजीयाके वैद्यकी[1] दवा लेना है तो ले। तेरे कामके ही लिये तुझे अच्छी होना है।

बा वगैरा परसों आवेंगे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२४) से

४५५. पत्र : राधाकृष्ण बजाजको

एबटाबाद
१२ जुलाई, १९३९

चि० राधाकृष्ण,

तुमारा खत मिला है। जमनालालजी को जेल अनुकुल तो नही है। लेकिन जो हो सो वही दुरस्त होना है। अपने आप छोड देवे तो ठीक ही है। मेरा लेख देखोगे।[2] खाने-पीने में कुछ कहेना नही हैं। हजम हो सके इतना दूध फल लेवे। स्टार्च कम। सोडा जिस चीजमें जितना ले सके अच्छा ही है। ६० ग्रेन तक जा सकते हैं।

मुसलमानोंका समझा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१२६) से।

१. वल्लभराम वैद्य
२. देखिए "जयपुर", पृ० ४३६-७।

४५६. पत्र : शामलालको

एबटाबाद
१२ जुलाई, १९३९

भाई शामलाल,

लाला मोहनलालके खत बारेमें मैंने शरू कर दिया है। अगर ऐसा बिल आया तो हमारे विरोध करना ही होगा।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ११८०) से

४५७. सच्चा हमदर्द

पूनाके श्री ए० एस० वाडियाका एक पत्र मुझे मिला है। जैसा कि उससे मालूम पड़ेगा, वह उन गरीबोंके सच्चे हमदर्द हैं जो गरमीके मौसममें महाबलेश्वर जानेवालों के लिए नीचेके मैदानोंसे लकड़ियोंके गट्ठर ले जाकर जैसे-तैसे अपना निर्वाह करते हैं। नीचे श्री वाडियाके पत्रका एक अंश दे रहा हूँ.[1]

> मैं महाबलेश्वर इसलिए गया था कि दक्षिण रोडेशियाके बारेमें अपनी नई किताब लिखने के लिए जो एकान्त और शान्ति मैं चाहता था वह मिल सके। लेकिन यहाँ मुझे अपना ध्यान और शक्ति अप्रत्याशित रूपसे उन देहातियोंकी तकलीफ दूर करने में लगानी पड़ी जो नीचेकी घाटियोंसे सूखी घास और लकड़ियोंके भारी-भारी गट्ठर लादकर महाबलेश्वर आते हैं और नाम-मात्रके दामोंपर हमारे बाजारमें बेचते हैं। . . . जब-कभी मैं उनसे बातें करता, वे उन रास्तोंकी भयंकर हालतकी शिकायत जरूर करते जिनसे होकर वे आते-जाते थे, क्योंकि नुकीले पत्थरोंसे उनके पंजे कट जाते थे और तलवोंमें फफोले पड़ जाते थे। . . . पूछताछ करने पर मुझे पता लगा कि सौ साल पहले जब जनरल लॉडनिकने महाबलेश्वरका पता लगाया था तबसे अबतक कभी किसी आदमीका हाथ इन रास्तोंपर नहीं लगा, बल्कि लोगोंके बराबर आते-जाते रहने से ही ये बन गये हैं।

१. यहाँ कुछ अंश ही दिये गये हैं।

मुझे लगा कि गाँववालों की शिकायत ठीक है और इसपर तत्काल ध्यान देने की जरूरत है। अतः मैंने रोडेशियाके बारेमें किताब लिखना बन्द करके मजदूरोंको कामपर लगाया और रास्तोंको साफ और चौड़ा करने, अवरोधक पत्थरोंको हटाने तथा लकड़ीके गट्ठर लाने में दरख्तोंकी जो डालियाँ रुकावट डालती थीं उन्हें कटवाने का काम व्यवस्थित रूपसे शुरू कर दिया। कुछ अन्तराल देकर आठ सप्ताहतक यह काम जारी रहा; इस बीच मैंने कुल मिलाकर कोई एक हजार मजदूरोंको कामपर लगाया होगा। छोटे-बड़े मिलाकर एक दर्जन रास्ते उन्होंने बनाये, और ठीक व दुरुस्त किये होंगे।...

अब मैं उस मुख्य बातपर आता हूँ जिसके लिए मैं आपको यह सब लिख रहा हूँ। मैं आपसे पूछता हूँ कि क्या सरकार इस बातके लिए बाध्य नहीं है कि जैसे वह गाड़ियोंके आने-जाने के लिए सड़कोंको ठीक हालतमें रखती है उसी तरह गाँववालों के उपयोगके लिए मैंने जो रास्ते बनाये हैं उन्हें वह अच्छी हालतमें रखे?

इन गाँववालों से बातें करके मैंने कुछ और तथ्य भी मालूम किये हैं, जो शायद आपके लिए उपयोगी होंगे:

१. इन सबने इस बातकी शिकायत की कि उनके खेतोंकी जमीन साल-ब-साल खराब होती जा रही है, जिससे दस साल पहले जितनी उपज हुआ करती थी अब उससे लगभग आधी होने लगी है।

२. इनका कहना है कि कांग्रेस सरकारने प्रति मवेशी ४ आने कर फिर लगा दिया है, जिससे पिछले दो सालोंसे वे मुक्त थे।

३. गाँवोंके आसपास जो जमीनें परती पड़ी हुई हैं उन्हें काश्तके लिए दे दिया जाये और जो छोटे-छोटे जंगली इलाके सुरक्षित रखे गये हैं उन्हें उनके मवेशियोंके लिए खोल दिया जाये।

महात्माजी, मैं चाहता हूँ कि इन 'आदिजनों' की, महाबलेश्वरके आस-पासकी घाटियोंके इन गरीब ग्रामीणोंको मैंने यह संज्ञा दी है जिनकी भलाई और कल्याणमें मेरी निजी दिलचस्पी है, मददके लिए आप जरूर कुछ करें।

मैंने यह पत्र बम्बईके मन्त्रियोंके पास भेज दिया था, और पाठकोंको यह बताते हुए मुझे खुशी होती है कि उन्होंने इस बारेमें कार्रवाई करने का निश्चय कर लिया है। जिन पगडण्डियोंको श्री वाडियाने पहलेसे इतना ज्यादा समतल और निरापद बना दिया है उन्हें बम्बई सरकार मरम्मत कराकर अच्छी हालतमें रखा करेगी। साथ ही, दूसरी जिन बातोंका श्री वाडियाने जिक्र किया है उनकी भी वह व्यवस्था करेगी। श्री वाडियाने जो-कुछ किया उसका विस्तृत विवरण भेजने के लिए मैंने उन्हें लिखा था। ऐसा मालूम पड़ता है कि पगडण्डियाँ बनाने में मजदूरोंके साथ खुद उन्होंने भी काम किया और उनके रोड-इंजीनियर खुद वही बने। अपनी जेबसे उन्होंने २०० से ज्यादा रुपये खर्च किये और १२५ रुपये उनके दो मित्रोंने दिये। मुझे

इस बातका पक्का भरोसा है कि अपनी किताब लिखना स्थगित करके श्री वाडियाने कुछ खोया नहीं है, क्योंकि अब उनकी पुस्तकमें सम्भवतः उनकी अत्यन्त व्यावहारिक उदारताकी छाप भी आ जायेगी। अपने पास बची हुई रकममें से दानस्वरूप कुछ देने का तो फैशन बन गया है, लेकिन रुपयेके साथ अपना परिश्रम कम ही लोग देते हैं। जो ऐसा करते हैं वे अपने दानका सर्वोत्तम उपयोग करते हैं। आशा है कि पहाड़ोंपर जानेवाले दूसरे लोग भी श्री वाडियाके सुन्दर उदाहरणका अनुकरण कर उन गरीबोंकी हालतका अध्ययन करके उसे सुधारने की कोशिश करेंगे जो बिना कोई शिकायत किये अक्सर पेट भी न भरे इतनी कम मजदूरीपर ही काम करते हैं।

एबटाबाद, १३ जुलाई, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-७-१९३९

४५८. वक्तव्य: समाचारपत्रोंको[1]

एबटाबाद
१३ जुलाई, १९३९

बम्बईमें शराब-बन्दीके बारेमें सुभाष बाबूके वक्तव्यको[2] मैंने वेदना और दुःखके साथ पढ़ा है। जब मैं बम्बईमें था, तब उन्होंने इस प्रश्नपर मुझसे चर्चा की थी। मैंने उनसे बम्बई सरकारके मन्त्रियोंके साथ विचार-विनिमय करने के लिए कहा था। मुझे मालूम नहीं कि उन्होंने ऐसा किया या नहीं, लेकिन मैं उनके इस सार्वजनिक वक्तव्यके लिए तैयार नहीं था। उन्होंने शराब-बन्दीके विरोधियों द्वारा दी जानेवाली दलीलोंका उपयोग किया है। गत वर्ष वे कांग्रेसके अध्यक्ष थे, और दूसरे वर्षके लिए भी बाकायदा चुने जाने के बाद अपने सहयोगियोंके साथ मतभेद होने के कारण उन्होंने कांग्रेसके अध्यक्ष-पदसे इस्तीफा दे देना ठीक समझा।[3] बंगाल कांग्रेस-कार्यकारिणीके वे अब भी प्रधान हैं। कांग्रेसकी शराब-बन्दी-नीतिमें वे भी शरीक रहे हैं। इस समय अगर वे कार्य-समितिमें नहीं हैं, तो इससे उनकी जिम्मेदारी खत्म नहीं हो जाती। अगर वे कार्य-समितिके सदस्य होते, तो उन्होंने ऐसा वक्तव्य न दिया होता जैसा कि अब दिया है। उनकी स्थितिके कारण उनके इस वक्तव्यसे बम्बईके मन्त्रिमण्डलकी जैसी बदनामी हो सकती है, वैसी बदनामी तो शराब-बन्दीके जाने-माने विरोधी भी करने की कभी आशा नहीं रख सकते थे। इस मामलेमें मैं सिर्फ इतनी ही आशा कर सकता हूँ कि इस वक्तव्यमें सुभाष बाबूने केवल अपना

१. यह "ए डेंजरस गेम" (खतरनाक खेल) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। वक्तव्य *हिन्दू*के १३-७-१९३९ और *हिन्दुस्तान टाइम्स*के १४-७-१९३९ के अंकमें भी छपा था।
२. जुलाई १० का; वक्तव्यके संक्षिप्त अंशोंके लिए देखिए परिशिष्ट १४।
३. ३० अप्रैल, १९३९ को

मत व्यक्त किया है और किसी अन्य जिम्मेदार कांग्रेसीकी राय इससे प्रकट नहीं होती और यह भी कि आम जनता बम्बई मन्त्रिमण्डलकी नीतिका उसी उत्साहके साथ समर्थन करती रहेगी जिस उत्साहसे वह अबतक करती आई है।

मन्त्रियोंका कर्तव्य स्पष्ट है। उन्हें किसी विरोधकी परवाह किये बिना अपने कार्यक्रमपर अमल करते चले जाना चाहिए, बशर्ते कि उनकी उसमें श्रद्धा हो। मद्य-निषेध कांग्रेस-कार्यक्रममें शामिल सबसे बड़ा नैतिक सुधार है। पहलेकी सरकारोंने भी इसका जबानी समर्थन किया था, मगर उत्तरदायी न होने के कारण उसपर अमल करने का न तो उनमें साहस था, और न इच्छा ही। वे उस आमदनीको छोड़ने के लिए तैयार नहीं थीं जिसे वे बिना किसी प्रयासके प्राप्त कर सकती थीं। उन्होंने तनिक रुककर इस आमदनीके दूषित स्रोतकी जाँच करने की कभी फिक्र नहीं की। कांग्रेसी सरकारोंके पीछे लोकमत है। कार्य-समितिने बहुत सोच-विचारके बाद शराब-बन्दीके सम्बन्धमें अपना फरमान जारी किया। सभी स्थानोंमें मन्त्रियोंने अपनी सामर्थ्यके अनुसार इसे अपना लिया है। इसपर अमल करने का तरीका स्वाभाविक तौरपर मन्त्रिमण्डलों पर छोड़ दिया गया। बम्बईके मन्त्री साहसपूर्वक सफलताकी सम्भावनाके साथ अपने कार्यक्रमको अमलमें लाने का प्रयत्न कर रहे हैं। उनकी स्थिति बहुत कठिन है। किसी-न-किसी दिन उन्हें बम्बईका सवाल हाथमें लेना ही था। जिन्हें शराब-बन्दीकी नीतिसे सीधे हानि पहुँचने का डर है, उनकी ओरसे उन्हें कभी भी वैसे ही विरोधका सामना करना पड़ता, जिसका आज कर रहे हैं। किसी भी कांग्रेसीको यह स्वतन्त्रता नहीं है कि वह मन्त्रियोंको इस तरह अटपटी स्थितिमें डाले जैसा कि सुभाष बाबूने किया है।

साम्प्रदायिक प्रश्न तो इसमें कोई उठता ही नहीं। साम्प्रदायिक सवाल और अल्पसंख्यकोंका सवाल उठाकर सुभाष बाबूने कांग्रेसकी बहुत बड़ी कुसेवा की है। अल्पमतकी आवाजकी वेदीपर अगर बड़े या छोटे कार्य बदनाम और नष्ट किये जाते रहेंगे, तो भारतके लिए स्वाधीनता प्राप्त करना असम्भव है। शराब-बन्दी-जैसे विशुद्ध नैतिक सुधारके साथ साम्प्रदायिक प्रश्नको मिलाकर सुभाष बाबूने अत्यन्त खतरनाक खेल खेला है। अपने अभागे देशभाइयोंकी ओर, जो मजदूर-पेशा हैं और बदकिस्मतीसे मद्यपानके शिकार बन गये हैं, ध्यान देना जितना किसी हिन्दूका फर्ज है, उतना ही किसी मुसलमान, पारसी या ईसाईका भी है। बम्बईके जायदाद-मालिक एक करोड़ रुपये अतिरिक्त करके रूपमें इसलिए नहीं देंगे कि वे पारसी या मुसलमान हैं; बल्कि इसलिए कि वे जायदादके मालिक हैं। यह कहना सर्वथा भ्रामक है कि कर-दाता स्वयं शराब न पीते हुए भी शराबीको बचाने के लिए कर देगा। वह अपने बच्चोंकी शिक्षाके लिए कर देगा, जब कि अबतक उसके लिए शराबीसे कर लिया जाता रहा है। अतिरिक्त कर धनी लोगोंने गरीबोंके प्रति जो अन्याय किया है उसका बहुत विलम्बसे और सो भी अत्यल्प प्रमाणमें किया मार्जन होगा। गरीबोंकी कोई श्रेणी नहीं होती। जाति और धर्मके विभेदके बावजूद दलितोंके रूपमें वे सब एक ही श्रेणीमें आते हैं। उनकी गरीबी ही उनका धर्म है।

पारसी विश्व-विश्रुत दानशील और परोपकारी लोग हैं। फिर वे इस सबसे बड़े परोपकारके काममें किसीसे पीछे क्यों रहे? और यदि इसमें उनका सबसे अधिक योग होता है, तो यह उनकी सर्वोत्तम परम्पराके अनुरूप ही है। और वे इससे तीन तरह लाभ उठायेंगे। उनमें से बहुत-से लोग इस व्यापारसे विमुख हो जायेंगे, जो उनकी अपेक्षा कम भाग्यशाली स्थितिके उनके देशवासियोंके नैतिक जीवनको दूषित करता है। वे स्वतः भी शराब पीने की आदतसे बचेंगे। उनके निकट सम्पर्कमें रहने के कारण मैं यह जानता हूँ कि चाहे यह आदत कितनी ही मामूली क्यो न हो, शराब उनपर अपनी अमिट छाप छोड़ जाती है। इसके अलावा, उनमें से धनी-मानी लोगोंको चिर-प्रतीक्षित सुधारमें अपना योग देने का अवसर मिलेगा। अल्पसंख्यकोंकी दुहाई देना तो बिलकुल मिथ्या है। यह खुशकिस्मती एक पारसी मन्त्रीको मिली है कि वह शराब-बन्दी लागू करे। डॉ० गिल्डरका काम ऐसा है जिससे उनको कुछ आमदनी तो होती नहीं, उलटे इसके कारण उनको कड़ी मेहनत करनी पड़ती है और अपने अच्छे-खासे डाक्टरीके धन्धेसे उनको हाथ धोना पड़ा है। इन्हींके समान दूसरे एक निःस्वार्थ चिकित्सक बम्बईके शेरिफ[1] हैं। तीसरे सज्जन बम्बई विश्वविद्यालयके उपकुलपति[2] हैं और चौथे एक व्यवसायी और बम्बईके मेयर[3] हैं। मुझे नहीं मालूम कि बम्बईके इतिहासमें व्यक्तियोंका कभी ऐसा सुन्दर संयोग हुआ है। यदि कांग्रेस और कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल साम्प्रदायिक मनोवृत्तिके होते और अल्पसंख्यकोंके प्रति उपेक्षा-भाव रखते, तो यह अनुपम घटना न घटी होती।

और मैं यह भी कहना चाहता हूँ कि अगर बम्बईकी मुसलमान जनताने स्वेच्छापूर्वक सहयोग न दिया होता तो बम्बईमें शराब-बन्दी लागू नहीं की जा सकती थी। मुझे इस बातका पक्का यकीन है कि हिन्दुस्तानके सर्वोत्तम मुसलमान बम्बईकी इस योजनामें कांग्रेसके साथ हैं।

सुभाष बाबू द्वारा उछाले गये चरणबद्ध हलसे काम न चलेगा। पहली चीज तो यह कि इसमें मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमिका अभाव होगा। इसलिए मेरा सुभाष बाबूसे अनुरोध है कि वे अपना कदम पीछे हटायें और महान् पारसी जाति और इस सुधारका विरोध करनेवाले अन्य लोगोंसे अपील करने में मेरा साथ दें, और इस सुधारको जैसी सफलता मिलनी चाहिए इसे वैसी सफलता दिलाने में सहायक बनें। राजेन्द्र बाबूके पूर्वाधिकारी होने के कारण उनका फर्ज है कि वे बम्बई मन्त्रि-मण्डलकी सहायता करें, जो कांग्रेस द्वारा निर्धारित नीतिका बहादुरी और साहसके साथ अनुसरण कर रहा है।

एबटाबाद, १३ जुलाई, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-७-१९३९

१. डॉ० फीरोज सी० भरूचा

२. डॉ० आर० पी० मसानी

३. बहराम नौरोसजी करंजिया

४५९. पत्र : सी० ए० तुलपुलेको

एबटाबाद
१३ जुलाई, १९३९

प्रिय तुलपुले,

तुमने एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाया है। जब मैं इसका हल ढूँढने की कोशिश करता हूँ तो मेरा सिर चकरा जाता है किन्तु समय आने पर इसका हल खुद-ब-खुद सूझ जायेगा। इस बीच हमें धैर्य रखना चाहिए।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्री सी० ए० तुलपुले
तिलक रोड, पूना

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २९००) से। सौजन्य : सी० ए० तुलपुले

४६०. पत्र : अमृतकौरको

एबटाबाद
१३ जुलाई, १९३९

प्रिय पगली,

यदि आज तुम्हारा पत्र न आया होता तो मैं तुम्हें तार भेजता। इस लम्बी चुप्पी (तुम्हें देखते हुए तो यह लम्बी चुप्पी ही थी) का कारण जानने के लिए मैं अधीर हो रहा था। मुझे खुशी है कि दलीपके स्वास्थ्यमें सुधार हो रहा है। तन्दुरुस्ती हासिल करने के लिए तुम्हें सेगाँव आना पड़ेगा। मुझे उम्मीद है कि यहाँसे मैं रास्तेमें कहीं रुके बिना सीधे सेगाँव पहुँचूँगा।

मेरी सचमुच यह इच्छा है कि चाहे ताई कितना भी अनुरोध क्यों न करे, तुम सांगली[1] जाने का अपना कार्यक्रम दृढ़तापूर्वक रद्द कर दो। तुम्हें उनको बताना चाहिए कि तुम्हारा उपचार चल रहा है और उसमें कतई कोई व्यवधान नहीं पड़ना चाहिए। तुम्हें डाक्टरको अवसर देना ही चाहिए।

१. जहाँ २९ जुलाईको अखिल भारतीय महिला सम्मेलन होनेवाला था

हाँ, सेगाँव आते हुए तुम रास्तेमें जयपुर जा सकती हो। मेरा कार्यक्रम तय होने पर इसपर विचार किया जा सकता है। तालचरके अलावा ऐसी कोई चीज नही है जो मुझे सेगाँव जाने से रोक सके।

हम बुरी प्रणालियोंका नाश चाहते हैं, लेकिन उनके सर्जकों अथवा उनसे त्रस्त लोगोंका नहीं। जबतक साँस है तबतक आस रखनी चाहिए। यदि अचानक ही मैं अपना मानसिक सन्तुलन खो बैठता हूँ तो तुम मेरी मृत्युकी कामना नहीं करोगी, बल्कि तुम ईश्वरसे प्रार्थना करोगी कि मै ठीक हो जाऊँ और जीवित रहूँ। क्या इससे तुम्हारे प्रश्नका उत्तर मिल जाता है? मैंने डायरके बारेमें जो कहा था उसे याद करो।

रियासतों और त्रावणकोरके बारेमें तुमने जो जानकारी दी है वह दिलचस्प और उपयोगी है।

मैंने तुम्हें कल बलवन्तसिंहका पत्र[1] भेजा था। मैंने सरदार बहादुरको जो पत्र लिखा था उसके उत्तरमें उन्होंने मुझे फिर पत्र लिखा है। उनका कहना है, आपने बलवन्तसिंहको यहाँ भेजा, यही क्या उसके रहने-खाने के खर्चका पूरा भुगतान नहीं है? क्या यह पंजाबी शिष्टाचार है अथवा सिख शिष्टाचार है या उनकी स्वभावगत विशेषता? मैंने अपने पत्रमें खर्चा देने की जो बात लिखी थी, उसके उत्तरमें उन्होंने यह लिखा है।

बा और अन्य लोग कल आ रहे हैं। बा तो आने के लिए अधीर हो रही थी। वह सिर्फ इसलिए नहीं आ पाई थी, क्योंकि मै प्यारेलालको अकेले छोड़कर सुशीलाको अपने साथ नहीं ला सकता था। और बा को सुशीलाके बिना नही लाया जा सकता था। मैं खुद उसकी देख-भाल नहीं कर सकता और बा को समय-समयपर डाक्टरी सहायताकी जरूरत पड़ती रहती है और बा सुशीलाकी आदी हो गई है। बा इस बार कानमको अपने साथ नही ला रही है। वह अपने मामाके साथ रहेगा। निर्मलाके शीघ्र ही वर्धा जाने की सम्भावना है। उस हालतमें कानम यहाँ आ जायेगा। और लो, अब व्यवधान आ पड़ा है।

स्नेह।

तानाशाह

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९२८) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२३७ से भी

१. देखिए पृ० ४६३।

४६१. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

एबटाबाद
१३ जुलाई, १९३९

प्रिय चार्ली,

लिखने का मन है इसलिए लिख रहा हूँ। कभी-कभी मुझे अपने-आपको यह छूट देनी ही चाहिए।

लंकाके लिए मुझे सहज ही किसी कांग्रेसीको भेजने की बात सूझी और मेरा ध्यान अनायास ही जवाहरलाल नेहरूकी ओर गया। लेकिन दक्षिण आफ्रिका लंका नहीं है। सरोजिनीसे वह काम नहीं हो सकता। यदि तुम मॉट और अन्य लोगोंको साथ कर सको तो कदाचित् अकेले तुम्ही एक ऐसे व्यक्ति हो जो यह काम कर सकते हो। हमें तो बोअर लोगोंके मनको छूना है। अभी तुम्हें इस कामके लिए भेजा जा सकता है। कदाचित् समुद्र-यात्रासे तुम्हें लाभ हो। और शायद तुम आपसमें झगड़ रहे भारतीयोंमें मेल करवा सको।[1] लेकिन यदि तुम्हारा मन गवाही न दे अथवा तुम्हारा स्वास्थ्य इस बोझको बरदाश्त न कर सकता हो तो मत जाना।[2]

कलम हाथमें लेने पर ये सारी बातें दिमागमें आईं, जब कि मैं केवल प्रेम-पत्र ही लिखना चाहता था। महादेव मेरे साथ हैं। प्यारेलाल, सुशीला और बा कल आ रहे हैं।

तुम्हारा,
मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२९८)से

१. देखिए पृ० ३१७-८।

२. पत्रके अन्तमें सी० एफ० एन्ड्रयूजने स्वयं लिखा है: "इसका साफ मतलब है कि मानसून खत्म होते ही मुझे जाना चाहिए।"

४६२. पत्र : पी० जी० मैथ्यूको

एबटाबाद
१३ जुलाई, १९३९

प्रिय मैथ्यू,

मुझे अफसोस है कि तुम उतनी शीघ्रतासे स्वास्थ्य-लाभ नहीं कर रहे हो जितनी तुम्हें आशा थी। इस बीमारीसे तुम्हें धीरज रखना सीखना चाहिए। मैं यहाँ कमसे-कम इस माहके अन्ततक तो हूँ ही।

स्नेह।

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :]

प्यारेलाल, वा और सुशीला कल यहाँ आ जायेंगे।

श्री पी० जी० मैथ्यू
ग्रामउद्योग लॉज
नाथमहाल, नागपुर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५४१)से

४६३. टिप्पणियाँ

वन्देमातरम्

हैदराबादके कुछ विद्यार्थियोंने शिकायत की है कि 'वन्देमातरम्' पर मेरी जो टिप्पणी[1] निकली है, उसने उनके मनमें उलझन पैदा कर दी है। कुछ स्थानीय अखबारोंमें उन्होंने उसका एक अवतरण पढ़ा है, जिसमें से "मिली-जुली भीड़" ये शब्द उड़ा दिये हैं, ताकि पाठकके मनपर यह छाप पड़े कि यह गीत उनके अपने मजमोंमें भी न गाया जाये, हालाँकि उसकी यह व्याख्या बिलकुल बेतुकी है। मेरी उक्त टिप्पणी इस तर्कके समर्थनमें उद्धृत की जा रही है कि विद्यार्थियोंको 'वन्देमातरम्' का गायन अपने निजी कमरों या उनके उस वर्गके लिए निर्धारित प्रार्थना-भवनमें भी नहीं करने देना चाहिए, जिसमें से किसीको उसपर न केवल कोई आपत्ति नहीं है,

१. देखिए "राष्ट्रीय झंडा", पृ० ४१२-४।

वल्कि जो उसे गाना अपनी प्रार्थनाका एक अंग समझता है। मेरी टिप्पणी बिलकुल स्पष्ट है। अगर किसी मिली-जुली भीड़में कोई व्यक्ति कांग्रेस द्वारा स्वीकृत रूपमें भी 'वन्देमातरम्' गीत गाने पर आपत्ति करता है, तो उसे नही गाया जाना चाहिए। पर मेरा यह कभी इरादा न था कि इस टिप्पणीको उन मजमोंपर भी लागू किया जाये, जिनमें कोई आपत्ति न उठाई जाती हो। इस तरहकी आपत्ति तो गैरकानूनी और असहिष्णुतापूर्वक दस्तन्दाजी कही जायेगी। अगर आपत्ति यहाँतक की गई, तब तो धार्मिक पूजा करना भी असम्भव हो जायेगा। और मैं यह जानता हूँ कि बहुत-से देशभक्तोंके लिए 'वन्देमातरम्'का गायन एक धार्मिक कर्त्तव्य हो गया है।

हठीली व्याधि

हरिजनोंसे अत्यधिक प्रेम करनेवाले श्री ताताचार लिखते हैं :

> कुछ समय हुआ कि नल्लथुर चेरीमें एक दंगा हुआ था। सवर्ण हिन्दुओंने आदि द्रविड़ भजनाई पर आक्रमण किया और उसकी मण्डलीके कुछ सदस्योंको घायल कर दिया। इस दंगेमें सवर्ण हिन्दुओंको कुछ चोटें आईं। आदि द्रविड़ोंने पुलिससे दंगेकी शिकायत की। पुलिसने इस शिकायतपर कोई ध्यान नहीं दिया। सवर्णोंने पाँच आदि द्रविड़ोंके विरुद्ध अदालतमें निजी दावे दायर कर दिये। इन पाँचोंको दोषी मानकर अदालतने २५-२५ रुपया जुर्माने और जुर्माना न देने पर एक-एक मासकी सख्त कैदकी सजा दी। इस फैसलेके विरुद्ध अपील की गई और २६ मईको अदालतमें पेशी हुई। फैसला उस समय स्थगित रखा गया और आज अपील करनेवाले अभियुक्तोंके हकमें सुना दिया गया। अपील अदालतकी हिदायतोंके मुताबिक अपील करनेवालों ने २० मईको अदालतसे, जिनमें उनका मुकदमा चला था, यह दरख्वास्त की कि जबतक अपीलका फैसला नहीं हो जाता, तबतक जुर्मानेकी वसूली मुल्तवी रखी जाये। निचली अदालतने उन्हें समय देने से इन्कार कर दिया और जेल भेज दिया। . . . इस घोर अन्यायसे आप यह जरूर समझ जायेंगे कि अस्पृश्यताकी समस्या अपने-आप हल होनेवाली नहीं।

उन्होंने मुझे और भी बहुत-सी बातें लिखकर भेजी हैं, जिन्हें मैंने दुःखके साथ पढ़ा है। जिस पत्रसे मैंने ऊपर केवल मुख्य तथ्योंका उद्धरण दिया है, वह पुलिस और उस निचली अदालतकी तीव्र निन्दासे भरा हुआ है, जिसने अपीलके मंजूर होने तथा अपील अदालतकी सिफारिश किये जाने के बावजूद सजा मुल्तवी करने से इन्कार कर दिया था।

मैंने श्री ताताचारसे और विस्तारसे लिखने को कहा है। पुलिसका हरिजनोंकी शिकायत लिखने से इन्कार करना, जब कि उनके विरुद्ध निजी शिकायतोंपर एकदम कार्रवाई हुई, और मुकदमेकी सुनवाई करनेवाले मजिस्ट्रेटका सजा स्थगित करने से इन्कार करना — ऐसे गम्भीर आक्षेप हैं, जिनकी विभागीय जाँच अवश्य की जानी

चाहिए। इसमें जरा भी सन्देह नही कि यदि अस्पृश्यताके जहरको मिटाना है, तो केन्द्रीय अधिकारियोंके लिए लगातार चौकसी रखना जरूरी है।

एबटाबाद, १४ जुलाई, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-७-१९३९

४६४. प्रान्तीय स्वायत्तता या प्रान्तीय विद्वेष

श्री जमशेदजी मेहता लिखते हैं:

> यह देखकर बड़ा दु:ख होता है कि प्रान्तीय स्वायत्तता लागू होने के बाद छोटे और बड़े सभी मामलोंमें प्रान्तीयताकी भावना या प्रान्तोंके बीच पारस्परिक ईर्ष्याका भाव बढ़ रहा है। मैं तो अक्सर यह सोचने लगता हूँ कि प्रान्तीय स्वायत्तता हमारे लिए वरदान न होकर अभिशापके रूपमें आई है। लगता है राष्ट्रीय भावनाके विकासके बजाय प्रान्तीयताकी भावना ही बढी है। प्रान्तीय स्वायत्ततासे पहले 'मेरा देश' कहने का मतलब होता था 'हिन्दुस्तान'। लेकिन आज इसका अर्थ है 'मेरा प्रान्त'। यह खतरा इतनी गहरी जड़ जमा ले कि उसे उखाड़ना कठिन हो जाये, इससे पहले ही क्या आप देशको चेतावनी नहीं देंगे?

यह पत्र स्वभावत: गुजरातीमें लिखा गया है। मूल पत्रमें जो विचार और दु:ख प्रकट किया गया है, उसका बिलकुल स्वतन्त्र रूपसे अनुवाद किया गया है। श्री जमशेदजीकी शिकायत सही है। स्वस्थ प्रान्तीयताकी भावना होती है, वह तो हमेशा रहेगी। अगर आपसमें भेद — स्वस्थ भेद — नही हैं, तो *अलग-अलग* प्रान्त रखने का कोई अर्थ ही नही। लेकिन हमारी प्रान्तीयता संकुचित और ऐकान्तिक नही होनी चाहिए। यह उस समूचे राष्ट्रका हित-साधन करनेवाली होनी चाहिए जिसके सब प्रान्त अंग हैं। प्रान्तोंकी तुलना एक महान् नदीकी सहायक नदियोंसे की जा सकती है। सहायक नदियाँ बड़ी नदीकी विशालताको बढ़ाती हैं। इन नदियोंकी शक्ति और शुद्धता बड़ी नदीमें प्रतिबिम्बित होती हैं। यही बात प्रान्तोंपर लागू होनी चाहिए। प्रान्त जो-कुछ भी करें, वह समस्त राष्ट्रकी गौरव-वृद्धिके लिए होना चाहिए। यदि रवीन्द्रनाथ ठाकुरकी देनसे बंगालका गौरव बढ़ता है, तो भारतका भी गौरव बढ़ता है। क्या उनका प्रभाव सारे भारतमें नही है? दादाभाई नौरोजी सिर्फ पारसियों या बम्बईके लिए नही जिये थे, उनका जीवन तो सारे हिन्दुस्तानके लिए था। अगर हिन्दुस्तानको आपसमें लड़नेवाले ऐसे राज्योंमें विभक्त नही कर देना है जो सिर्फ अपने लिए जीते हों और यदि सम्भव हो तो दूसरेके हितोंकी कीमतपर जीते हों तो प्रान्त-प्रान्तके बीच ईर्ष्या और ऐकान्तिका की भावनाकी कोई गुंजाइश नही है। अगर ऐसी विपत्ति देशपर आ गई, तो कांग्रेसका

अबतक का सारा काम व्यर्थ ही माना जायेगा। अतः हिन्दुस्तानको अलग-अलग टुकड़ोंमें बाँटने के प्रयत्न-मात्रका विरोध करना आवश्यक है। भारतका भवितव्य एक ऐसा सशक्त और स्वतन्त्र राष्ट्र बनना है जो विश्वकी प्रगतिमें अपना अनुपम योगदान दे सके। हमारी देशभक्ति किसी भी अवस्थामें ऐकान्तिक नहीं होनी चाहिए। दुनियाके अन्य देशोंको हानि पहुँचाकर हम समृद्ध नहीं होना चाहते। ऐसा वक्त जरूर आना चाहिए, जब हम यह कह सकें कि 'जैसे हम भारतके नागरिक हैं वैसे ही सारी दुनियाके भी नागरिक हैं'। लेकिन ऐसा वक्त तभी आ सकता है जब हम स्वाधीन भारतके नागरिक बनने की कला सीख लें। जहरीली प्रान्तीयताकी भावनाको अगर हमने बढ़ाया तो यह कला हम नहीं सीख सकते। सही राष्ट्रीय जीवन तो व्यक्तिके साथ ही शुरू होता है। मैं सशक्त और स्वतन्त्र इसलिए होना चाहता हूँ कि अपनी शक्ति और स्वतन्त्रताका न केवल मैं लाभ उठाऊँ, बल्कि उससे पड़ोसियोंको भी लाभ पहुँचे। व्यक्तियों या प्रान्तोंके रूपमें हमें अपने सर्वोत्तम फलोंकी भेंट मातृभूमिकी वेदीपर अर्पित करनी चाहिए।

एबटाबाद, १४ जुलाई, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-७-१९३९

४६५. तार: ए० वैद्यनाथ अय्यरको

एबटाबाद
१४ जुलाई, १९३९

वैद्यनाथ अय्यर
हरिजन सेवक संघ
मदुरा

वर्णाश्रम संघके नटेश अय्यरका हृदय-विदारक तार मिला। तारसे सूचित करें कि स्थिति कैसी है।[1]

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

१. देखिए अगला शीर्षक भी।

४६६. तार : नटेश अय्यरको

ऐबटाबाद
१४ जुलाई, १९३९

अध्यक्ष, वर्णाश्रम संघ
मदुरा

आपका तार अविश्वसनीय। वर्णाश्रम संघ द्वारा अतिरंजित और सिद्ध न किये जा सकने लायक आरोप लगाये जाने के दुःखद अनुभव मुझे पहले भी हो चुके हैं। हिन्दू लोकमत पूर्ण रूपसे हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें जान पड़ता है।[1] आपसे अनुरोध है कि उस सुधारके मार्गमें, जो बहुत पहले ही सम्पन्न हो चुकना चाहिए था, बाधा न डालें।[2]

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

४६७. पत्र : अमृतकौरको

एबटाबाद
१४ जुलाई, १९३९

प्रिय पगली,

मैं कलके पत्रमें[3] एक प्रश्नका उत्तर देना भूल गया था। बेशक, तुम्हारी हिन्दी बहुत अच्छी है। अक्षरोंकी बनावट बहुत अच्छी है। तुम इसी तरह लिखना जारी क्यों नही रखती? यदि तुम पूर्णतः हिन्दीमें नही लिखना चाहती तो आधा हिन्दी और आधा अंग्रेजीमें लिखो।

सर मिर्जाका उत्तर सर्वथा निराशाजनक है। फिर भी, हमें तो उनकी सद्वृत्तियोंको जगानेकी कोशिश जारी रखनी ही चाहिए। इसमें कोई सन्देह नहीं कि राज्यके कांग्रेसियोंने दीवानके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया।

१. तात्पर्य मदुरा के मीनाक्षी मन्दिर से है; देखिए पृ० ४५९-६१।

२. तार द्वारा १५ जुलाई को उत्तर देते हुए नटेश अय्यर ने दावा किया कि तारका एक-एक शब्द सच है और गांधीजी चाहें तो मन्त्री रामनाथन तथा अन्य लोगों से पूछताछ कर सकते हैं; देखिए पृ० ४८३।

३. देखिए पृ० ४७१-२।

दूसरा पत्र उनके स्वभावके अनुरूप है। मैंने अभीतक सर सिकन्दर हयात खाँकी योजनाका[1] अध्ययन नहीं किया है। दिन-भरके कार्यसे निबटने के बाद समय ही नहीं रहता। मुझे वक्त तो निकालना ही होगा।

बाकी समाचार महादेवसे।

स्नेह।

तानाशाह

[पुनश्च .]

सर गोकुलचन्द अभी अन्दर आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। मैं पहले पुस्तकालय [शौचालय] जाऊँगा और तब उनसे मिलूँगा। सरदार दातारसिंहका पत्र साथमें है। इसे पढ़कर मेरे लिए रख छोड़ना।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९२९) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७२३८ से भी

४६८. पत्र : उमादेवीको

एबटाबाद
१४ जुलाई, १९३९

प्रिय उमा,

तुम जब चाहो यहाँ आ सकती हो। तुम किसीपर भार नहीं होगी। लेकिन यहाँ काफी गर्मी है, और मैं यहाँ कबतक रहूँगा, यह भी अनिश्चित है। सम्भव है कि मैं यदि पहले नहीं तो २३ तारीखके बाद कश्मीर आऊँ।[2] अब जैसा तुम चाहो, वैसा करो।

तुम्हें पोलैंड जाने की कोई आवश्यकता नहीं है। यदि तुम अपनी सारी रकम मेरे नाम अन्तरित कर दो तो तुम्हारी माँकी हिफाजतके बारेमें आश्वस्त किया जा सकता है। दूसरे उपाय भी निकाले जा सकते हैं। उनके बारेमें मिलने पर विचार करेंगे।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२०२ और ८०५६) से। सी० डब्ल्यू० ५०९७ से भी; सौजन्य: उमादेवी

१. देखिए खण्ड ७०, "पत्र: सिकन्दर हयात खाँको", १७-७-१९३९।

२. तथापि यह यात्रा रद्द हो गई थी; देखिए खण्ड ७०, "वक्तव्य: समाचार-पत्रोंको", २२-७-१९३९।

४६९. पत्र : ग्लैडिस ओवेनको

एबटाबाद
१४ जुलाई, १९३९

प्रिय ग्लैडिस,

अपनी बीमारीसे छुटकारा पाने में तुमने बहुत समय लिया। निःसन्देह तुम जब भी सेगाँव आना चाहो, तुम्हारा स्वागत है। तथापि वहाँका जीवन तुम्हारी महत्त्वकांक्षाकी पूर्ति कर सकेगा या नहीं सो मैं नहीं कह सकता। किन्तु तुम्हारा क्षेत्र विस्तृत है। तुम वहीं रहोगी जहाँ तुम्हें सबसे ज्यादा आत्माभिव्यक्तिका अवसर मिलेगा।

तुम अपना पत्र वर्धा भेजना। मुझे आशा है कि मैं अगस्तके शुरूमें इधरसे रवाना हो जाऊँगा।

तुम्हें और अन्य सबको प्यार।

[पुनश्च :]

महादेव मेरे साथ है और अब उनकी तबीयत बिलकुल ठीक है।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१९५) से

४७०. पत्र : जी० वी० गुरजलेको

एबटाबाद
१४ जुलाई, १९३९

प्रिय गुरजले,

तुम्हारा पत्र पाकर प्रसन्नता हुई। तुम्हें पीछे नहीं हटना चाहिए। यदि तुम्हारा डाक्टरीका धन्धा चल निकले. तो. यह एक अच्छी बात है, अन्यथा पड़ोसी जो दें उसीमें तुम्हें निर्वाह करना चाहिए। तुम अपने यहाँ कोई बाड़ मत लगाओ और न बाग़बानी करो। लोगोंको पता चलने दो कि तुम उनकी लूटपाट का बुरा नही मानते।

तुम्हारा,
बापू

स्वामी निर्मलानन्द भिक्षु
गांधीकुप्पम
डाकघर तिरुवननल्लूर, भारत

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३८७) से

४७१. नीरा-विषयक टिप्पणियाँ

अलेम्बिक केमिकल वर्क्स, बड़ौदाके चीफ केमिस्ट और टेक्निकल सुपरिंटेंडेंट श्री आई० एस० अमीन नीरेके संग्रह और परिरक्षणके प्रश्नपर पिछले दो वर्षोंके महत्त्वपूर्ण अध्ययन और उसपर किये गये प्रयोगोंके बाद कुछ निष्कर्षोंपर पहुँचे हैं। उन्होंने अब मुझे अपने परिणाम लिख भेजे हैं। लेकिन वे इतने सूक्ष्म हैं कि पाठकोंकी समझमें नहीं आ सकते। उन्होंने परिणामोंके साथ कुछ उपयोगी टिप्पणियाँ भी भेजी है, जो नीचे दी जा रही है।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-७-१९३९

१. टिप्पणियाँ यहाँ उद्धृत नहीं की जा रही हैं।

४७२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

एबटाबाद
१५ जुलाई, १९३९

बंगालके भूख-हड़ताली बन्दियोंके सम्बन्धमें कुछ महिलाओंने मुझपर तारों और पत्रोंकी बौछार ही कर डाली है। एक तारमें मुझे आदेश दिया गया है कि भूख-हड़तालमें शामिल होकर मुझे अपना उत्तरदायित्व निभाना चाहिए। एक अन्य तारमें आन्दोलनके नेतृत्वकी पूरी जिम्मेदारी मुझपर डाली गई है और उसका कारण यह बताया गया है कि बन्दियोंने मेरे आश्वासनपर ही भूख-हड़ताल स्थगित कर दी थी। जहाँ मुझे आवश्यक लगा वहाँ मैंने उचित उत्तर भेज दिये हैं, किन्तु यह मामला इतना महत्त्व-पूर्ण है कि व्यक्तिगत पत्रोंसे काम नहीं चल सकता। मुझे भय है कि ये तार और पत्र भेजनेवाली महिलाएँ मुझसे ऐसे कार्यकी अपेक्षा रखती हैं जो मैं नहीं कर सकता और इस तरह वे अपने उद्देश्यको हानि ही पहुँचा रही हैं। और वे भूख-हड़तालियोंको बढ़ावा देकर भी अपने उद्देश्यको नुकसान पहुँचा रही हैं। भूख-हड़ताल गलत है, इसमें मुझे कोई शंका नहीं। किसी भी व्यक्तिको खाने से इन्कार करके जेलसे छूटने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। मुझसे पत्र-व्यवहार करनेवाली तथा अन्य महिलाएँ जो बन्दियोंकी रिहाईके लिए आन्दोलन कर रही हैं, उन्हें कैदियोंको समझाना चाहिए कि वे उपवास छोड़ दें। लोकमत द्वारा दबाव डालना एक उचित तरीका है और यदि इसका बुद्धिपूर्वक प्रयोग किया जाये तो यह अवश्य कारगर भी होगा। आजकल कोई भी सरकार लोकमतके प्रति उदासीन नहीं रह सकती। अतएव जो लोग लोकमतका संगठन कर रहे हैं उनसे मेरा अनुरोध है कि उन्हें बन्दियोंको उपवास तोड़ने के लिए समझाना चाहिए और मुझसे असम्भव कार्य करने की अपेक्षा रखकर जनताको गुमराह नहीं करना चाहिए।

साथ ही मैं बंगाल सरकारसे अनुरोध करूँगा कि वह बन्दियोंको रिहा करके इस आन्दोलनको समाप्त कर दे, हालाँकि जैसा कि मैं पहले ही स्वीकार कर चुका हूँ, बन्दियोंने भूख-हड़ताल करके अपनेको गलत स्थितिमें डाल लिया है। उनकी रिहाई तो बहुत पहले ही हो जानी चाहिए थी। जनताको यह उम्मीद थी कि उत्तरदायी विधान-सभाके हाथोंमें सत्ता आने पर बन्दियोंकी तत्काल रिहाई हो जायेगी। यह आशा उचित हो या अनुचित — मेरी दृष्टिमें तो उचित ही है — इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। यह आशा बहुत पहले ही पूरी हो जानी चाहिए थी। राजनीतिक

१. "नोट्स" (टिप्पणियाँ) से उद्धृत। वक्तव्य १६-७-१९३९ के हिन्दूमें भी प्रकाशित हुआ था।

बन्दियोंकी रिहाईके इस मामलेमें लोकमतके आगे सिर झुकाने से सरकारको कोई हानि नहीं होगी, बल्कि इससे उसे काफी लाभ ही होगा।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-७-१९३९

४७३. तार: रामनाथनको

एबटाबाद
१५ जुलाई, १९३९

रामनाथन, मन्त्री
सचिवालय
मद्रास

मदुरैके नटेश अय्यरका कहना है[2] कि आप उनके इस आरोपकी पुष्टि करेंगे कि मीनाक्षी मन्दिरमें चोरी-छिपे प्रवेश हुआ और उनके अनुसार मन्दिरके द्वार लोकमतकी अवहेलना करके खोले गये। तार द्वारा सही स्थिति सूचित करें।[3]

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

१. देखिए पृ० ४४५ भी।
२. देखिए पृ० ४७८ की पा० टि० २।
३. उत्तरमें मन्त्रीने आरोपको गलत बताया; देखिए खण्ड ७०, "तार: नटेश अय्यरको", १७-७-१९३९।

४७४. पत्र : लीलावती आसरको

एबटाबाद
१५ जुलाई, १९३९

चि० लीला,

तेरे सब समाचार मिले हैं। तनिक भी घबराये बिना अपनी सभी मुश्किलोंको दूर करना। उतनी ही पढ़ाई करना जितनी समझमें आये। उचित आराम लेना। लड़कियोंके खेल-कूदमें भाग लेना। इतना अध्ययन नहीं करना चाहिए जिससे दिमाग थक जाये। तू पैदल स्कूल जाती है, यह तो अच्छा ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५९२) से। सी० डब्ल्यू० ६५६४ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

धर्मेन्द्रसिंहका पत्र[1]

अमरसिंहजी सचिवालय
राजकोट रियासत
३ मार्च, १९३९

प्रिय महात्मा गांधीजी,

मुझे आपका पत्र कल मिला और उसमें लिखी गई बातोंको मैंने अत्यन्त खेद के साथ पढ़ा। आपको पहले ही आश्वस्त कर दिया गया है कि अधिसूचना सं० ५०, जिसे मैंने २६ दिसम्बरको प्रकाशित किया था, कायम रहेगी, इसलिए आपने समितिके सदस्योंके बारेमें जो सुझाव रखे हैं वे अधिसूचनाकी शर्तोंके अनुरूप नहीं हैं और मैं उन्हें अथवा आपके अन्य सुझावोंको स्वीकार करना उचित नहीं समझता। राजकोटके शासकके नाते इस बातकी जिम्मेदारी मुझपर है कि समितिमें ऐसे उपयुक्त सदस्य हों जो राज्यके विभिन्न हितोंका सच्चा प्रतिनिधित्व करते हों, और यह ऐसी जिम्मेदारी है जिससे मैं अपनेको मुक्त नहीं कर सकता। राज्य और अपनी प्रजाके हितोंको ध्यानमें रखते हुए मैं ऐसे महत्त्वपूर्ण मामलोंमें किसी अन्य व्यक्तिको अन्तिम निर्णय नहीं करने दे सकता। जैसा कि मैं आपको पहले भी आश्वस्त कर चुका हूँ, मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि समिति जितनी जल्दी हो सके, उतनी जल्दी शान्त वातावरणमें काम करना शुरू कर दे, ताकि जो सुधार जरूरी पाये जायें उन्हें लागू करनेमें देर न हो।

हृदयसे आपका,
धर्मेन्द्रसिंह

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-३-१९३९

1. देखिए पृ० २, ११, १४, १५, १९ और २६।

परिशिष्ट २

ई० सी० गिब्सनका पत्र[1]

रेजीडेन्सी, राजकोट
६ मार्च, १९३९

प्रिय श्री गांधी,

आपने अपने ४ मार्चके पत्रमें जो लिखा था वह मैंने तार द्वारा वाइसराय महोदयको बता दिया था और अब मुझे उनकी ओरसे आपको निम्नलिखित सन्देश भेजने का निर्देश मिला है :

> आज आपका सन्देश पाकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई और मुझे इस बातका सचमुच बड़ा दुःख है कि जो निर्णय आपने लिया है उसे लेने से पहले आपने मुझसे सम्पर्क नहीं किया। आपने मुझे जो कागजात भेजे थे उनके आधारपर मेरा खयाल था कि आपकी जिन दो मुख्य बातोंमें दिलचस्पी है, वे ये हैं :
>
> (क) पुलिसका कथित दुर्व्यवहार आदि,
>
> (ख) राजकोटके ठाकुर साहब द्वारा कथित वचन-भंग।
>
> मेरा विश्वास है कि स्वयं आपने जो जाँच-पड़ताल की उससे आपको इस बातका सन्तोष हो गया है कि पहले मुद्देके सम्बन्धमें कोई खास बात नहीं है। मैं समझता हूँ, आपकी मुख्य कठिनाई अब दूसरे मुद्देको लेकर है। उसके बारेमें, मुझे यकीन है, आपको यह जानकर खुशी होगी कि ठाकुर साहबको समितिकी अध्यक्षता करनी है। उसकी व्यवस्था मैं अविलम्ब कर दूंगा, और मैं मानता हूँ, उससे आपकी मुख्य चिन्ता — जो निस्सन्देह यह है कि ठाकुर साहबकी २६ दिसम्बरकी अधिसूचनापर अमल करने में ईमानदारीसे काम लिया जाये — दूर हो जायेगी। लेकिन बहरहाल मैं चाहता हूँ कि जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी आपसे बातचीत करके इन बातोंको तय कर दूं और इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप मुझसे अपनी सुविधानुसार जल्दसे-जल्द आकर मिलेंगे।
>
> मैं सोमवार, ६ तारीखको सवेरे दिल्ली पहुँचने की आशा रखता हूँ और यदि आप मुझे बता देंगे तो ६ तारीखके बाद किसी भी समय आपसे मिलकर मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। मुझे स्वयं यह उम्मीद है कि यदि कोई गलतफहमी है तो हमारी आपसकी बातचीतसे उसे दूर करने में मदद मिलेगी;

१. देखिए पृ० ३२-३।

और व्यक्तिगत रूपसे भी यह मेरे लिए बड़े दु:खकी बात होगी कि ऐसी किसी गलतफहमीके कारण आप उपवास को, जिसका आपके स्वास्थ्यपर बुरा असर होना लाजिमी है, जारी रखें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१३८)से। सौजन्य: द० बा० कालेलकर

परिशिष्ट ३

ई० सी० गिब्सनका पत्र[1]

रेजीडेन्सी, राजकोट
७ मार्च, १९३९

प्रिय श्री गांधी,

मैंने आपका उत्तर कल तार द्वारा वाइसराय महोदयको भेज दिया और अब मुझे उनकी ओरसे आपको निम्नलिखित सन्देश भेजने का आदेश मिला है:

> आपका सन्देश मुझे अभी-अभी मिला है। उसके लिए बहुत धन्यवाद। मैं आपकी स्थितिको समझता हूँ। आपने मुझे जो-कुछ बताया, उससे स्पष्ट है कि आपके लिए इस मामलेमें मुख्य चीज आपका यह एहसास है कि वचन-भंग हुआ है। मैं यह महसूस करता हूँ कि इस सम्बन्धमें सन्देहकी गुंजाइश हो सकती है कि ठाकुर साहबकी अधिघोषणाका, जिस रूपमें उसे बादमें सरदार पटेलके नाम लिखे उनके पत्रमें पल्लवित किया गया है, क्या अर्थ लगाया जाये, और मुझे लगता है कि इस सन्देहको दूर करने का सबसे अच्छा तरीका यही हो सकता है कि उसकी व्याख्याका दायित्व देशके उच्चतम न्यायाधिकरण, अर्थात् भारतके मुख्य न्यायाधीशको सौंप दिया जाये। इसलिए मैं ठाकुर साहबकी सहमतिसे, जो मैं समझता हूँ कि मिलने ही वाली है, इस सम्बन्धमें इस उच्चाधिकरणसे परामर्श करना चाहूँगा कि अधिसूचनाकी शर्तों और ठाकुर साहबके उपर्युक्त पत्रको ध्यानमें रखते हुए समितिका गठन किस तरहसे किया जाना चाहिए। इसके बाद तदनुसार समितिका गठन किया जायेगा और यह व्यवस्था भी की जायेगी कि अगर समितिके सदस्योंमें अधिसूचनाके किसी ऐसे भागके अर्थको लेकर, जिसपर वे अपनी सिफारिशें देनेवाले हैं, परस्पर मतभेद उत्पन्न हो जायें तो इस मामलेको भी उसी उच्चाधिकरणको सौंपा जायेगा और उसका निर्णय अन्तिम होगा। मुझे पूरा विश्वास है कि यह बात, अपनी अधिसूचनामें दिये वचनका पालन करने का ठाकुर साहब द्वारा दिया गया आश्वासन, और ठाकुर साहबसे उनके वचनका पालन करवाने के लिए उनपर अपने प्रभावका उपयोग करने का स्वयं मेरा आश्वासन — ये

१. देखिए पृ० ३२-३, ३५, ६४, और १०९।

सब मिलकर आपका मन जिन आशंकाओंसे ग्रस्त रहा है, उन सबका निराकरण करने के लिए पर्याप्त होंगे। मुझे यह भी विश्वास है कि इन बातोंको देखते हुए मेरी तरह आप भी यह महसूस करेंगे कि न्यायपूर्ण व्यवहार सुनिश्चित करने के लिए पूरी सावधानी बरती गई है और आप [उपवास द्वारा] अपने स्वास्थ्यपर और ज्यादा दवाव नहीं डालेंगे तथा इस तरह अपने मित्रोंको चिन्तासे मुक्त करेंगे। जैसा कि मैं आपसे पहले ही कह चुका हूँ, मुझे आपसे यहाँ मिलकर और इस सम्बन्धमें बातचीत करके बड़ी प्रसन्नता होगी, क्योंकि यदि कोई गलतफहमी हो तो उसे इस तरह दूर किया जा सकता है।

हृदयसे आपका,
ई० सी० गिब्सन

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१४०)से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर। हरिजन, ११-३-१९३९ से भी

परिशिष्ट ४

बातचीत: अगाथा हैरिसनसे[1]

५ मार्च, १९३९

मैंने गांधीजी से "अगले कदम" के बारेमें प्रश्न किया और पूछा कि गतिरोध को दूर करने के लिए क्या किया जा रहा है। सम्बन्धित पक्षोंमें जो पत्र-व्यवहार हुआ, उसके बादसे ऐसा लगता है कि अधिकृत रूपसे कुछ नहीं किया जा रहा है। आम राय है कि इस मामलेमें अब जो भी कार्रवाई होनी है वह दिल्ली की ओरसे ही होनी चाहिए।

इसके उत्तरमें गांधीजी ने सरदारके प्रश्नको लिया। उन्होंने कहा कि यदि निष्पक्ष जाँच किये जाने पर उन्हें इस बातका निश्चित प्रमाण मिल जाता है कि समझौतेपर ठाकुर साहबकी सहमति प्राप्त करने के लिए सरदारने कुत्सित तरीकोंसे काम लिया है तो वे सरदारको त्याग देंगे और अपनी माँगें भी छोड़ देंगे। उन्होंने सरदारके चरित्रकी बात की और कहा कि वे कूटनीतिज्ञ नहीं हैं और उन्हें अक्सर गलत समझा जाता है। तब हमने इस बातको वहीं छोड़ दिया और इस मुख्य प्रश्न पर आ गये कि वे किन शर्तोंपर अपना उपवास तोड़ेंगे।

मैंने गांधीजी से पूछा कि इंग्लैण्डमें जेटलैण्डने और यहाँ वाइसरायने जो वक्तव्य दिये हैं, क्या उनसे स्थितिमें कोई फर्क पड़ता है। इन वक्तव्योंको ध्यानमें रखते हुए यदि अधीश्वरी सत्ता समझौतेपर अमल कराने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले लेती है और समितिके सदस्योंके सवालपर जो विवाद चल रहा है उसकी परवाह किये

1. देखिए पृ० ३४-५। यह बातचीत अगाथा हैरिसन द्वारा तैयार किये गये नोट्स से ली गई है।

बिना अपनी ओरसे एक समिति नियुक्त कर देती है तो क्या इससे वे सन्तुष्ट हो जायेंगे?

इसपर गांधीजी ने "हाँ" कहते हुए बताया कि यदि अधीश्वरी सत्ता उन्हें [गांधीजी को] २६ दिसम्बरकी अधिसूचनाके अनुरूप संविधान दिलाने का आश्वासन दे दे और समितिमें ऐसे सदस्योंकी नियुक्ति करे जो उन्हें [गांधीजी को] स्वीकार्य हों तो वे ठाकुर साहबको लिखे पत्रमें सुझाये गये नामोंपर आग्रह नहीं करेंगे। लेकिन यह आश्वासन सार्वजनिक तौरपर और लिखित रूपमें दिया जाना चाहिए।

विकल्पके रूपमें गांधीजी ने सुझाव दिया कि वे ठाकुर साहब द्वारा नामजद किसी विश्वसनीय और प्रतिष्ठित व्यक्तिके साथ मिलकर संविधानका मसौदा तैयार करने के कामको अपने हाथमें लेने को तैयार हैं। यदि किसी बातको लेकर मतभेद उठ खड़ा होता है तो उसे मध्यस्थको सौंपा जा सकता है।

मैंने गांधीजी से पूछा कि यदि उपर्युक्त ढंगका कोई कदम उठाया जाता है तो गिब्सनको कल लिखे अपने पत्रमें उन्होंने वीरावाला के हटाये जाने की जो माँग की है, उसे क्या वे छोड़ देंगे। उत्तरमें गांधीजी ने कहा कि यदि अधीश्वरी सत्ता न केवल २६ दिसम्बरकी अधिसूचनाके अनुरूप संविधान तैयार कराने की, बल्कि समिति जो सिफारिशें करे उनपर पूरी तरहसे अमल कराने की जमानतदार बन जाये तो वीरावालाके हटाये जाने की अपनी माँगको वे छोड़ सकते हैं।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०१९३) से। सौजन्य: द० बा० कालेलकर

परिशिष्ट ५

एस० सत्यमूर्तिका पत्र महादेव देसाईको[१]

नई दिल्ली
२० मार्च, १९३९

प्रिय महादेव,

मैंने महात्माजी से कहा था कि मैं उन्हें कांग्रेस-संविधानके संशोधनोंपर एक टिप्पणी भेजूँगा। वह टिप्पणी मैं इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। मैं यह भी चाहता हूँ कि पिछली बार बिड़ला भवनमें हुई हमारी मुलाकातके दौरान इस मामलेपर हमने जो चर्चा की थी उसके मुताबिक आप महात्माजी को यह भी बता दें कि मद्रासके हिन्दुस्तानी-विरोधी आन्दोलनका मद्रास सरकार द्वारा निराकरण किये जाने की अविलम्बनीय और महत्त्वपूर्ण आवश्यकताके विषयमें मेरे क्या विचार हैं। मैं यह मानता हूँ कि आन्दोलन कृत्रिम है और इस अर्थमें अवास्तविक है कि आन्दोलनकारी एक ऐसी चीजके लिए लड़ रहे हैं जिसके लिए लड़ने की कोई

१. देखिए पृ० ७८।

जरूरत ही नहीं है और बेईमान लोग इस आन्दोलनका मन्त्रिमण्डलके विरुद्ध नाजायज उपयोग कर रहे हैं। इसके साथ ही मेरी राय है, जैसा कि आपने 'हरिजन' के स्तम्भोंमें भी कहा है कि सत्य और अहिंसाको ध्यानमें रखते हुए इस तरहके मामलेमें फिलहाल, और जबतक लोकमत अधिक व्यापक रूपसे इसके पक्षमें नहीं हो जाता तबतक, बाध्यताका प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। यदि कोई एक अन्त:करण-सम्बन्धी धारा स्वीकार कर ली जाये, तो मुझे यकीन है कि दस प्रतिशतसे अधिक लोग इसका लाभ नहीं उठायेंगे और वह भी केवल चन्द जिलोंमें ही; और मेरा विश्वास है कि निरन्तर और जोरदार प्रचार के फलस्वरूप यह दस प्रतिशत भी जल्द ही घटकर एक प्रतिशत हो सकता है। सच तो यह है कि मद्रास सरकारने एक रियायत भी कर दी है कि हिन्दी लेनेवाले विद्यार्थियोंके लिए हिन्दी की परीक्षामें बैठने की बाध्यता नहीं है। उसके इस कदमसे, मेरे विचारमें, बाध्यताका महत्त्व ही खत्म हो जाता है। इसके बजाय मेरा आग्रह तो इस बात पर होगा कि हिन्दीकी परीक्षामें उत्तीर्ण होने पर ही विद्यार्थी ऊँची कक्षामें प्रवेश कर सकता है, और हम ऐसी अन्त:करण-सम्बन्धी धारा रख सकते हैं।

इसके अतिरिक्त, चुनावके दौरान दिये गये इस स्पष्ट वचनको ध्यानमें रखते हुए कि कांग्रेसका ध्येय सभी दमनकारी कानूनोंको रद्द करवाना है, मुझे दण्ड-विधान संशोधन अधिनियमका[1] उपयोग पसन्द नहीं है। इस अधिनियमको भारतीय विधान-सभाके स्पष्ट विरोधके बावजूद गवर्नर-जनरलके आदेशपर विधि-पुस्तिकामें समाविष्ट किया गया था। इस मामलेपर तुरन्त कार्रवाई की जानी चाहिए और मैं चाहूँगा कि आप महात्माजी के दिल्लीसे रवाना होने से पहले उनके सामने इसे रखें। यदि वे इसपर मुझसे आगे बातचीत करना चाहें तो बातचीत करने को मैं सहर्ष तैयार हूँ।

अब सिर्फ एक और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मामला है, और मुझे यकीन है कि उसको लेकर महात्माजी के मनमें ऊहापोह चल रही है। कांग्रेसमें इस समय जो गतिरोध है उसे जारी नहीं रहने देना चाहिए। कार्य-समितिका गठन होना ही चाहिए और तुरन्त होना चाहिए। ऐसे कई प्रान्त हैं जहाँ कांग्रेसका काम बिलकुल रुका पड़ा है और कार्य-समितिके कार्य शुरू करने पर ही इन सब प्रादेशिक और अन्य समस्याओंका समाधान हो सकेगा। मैं आशा करता हूँ कि महात्माजी श्रीयुत सुभाष-चन्द्र बोसको अपनी इच्छाके अनुरूप कार्य-समितिके सदस्योंको नामजद करने के लिए राजी कर लेंगे। लेकिन यदि इसमें कोई कठिनाई हो तो मेरा सुझाव है कि बहुत जल्द ही अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक बुलाई जाये। कांग्रेस-संविधानके अनुसार उसे नई स्थितिसे निबटने का अधिकार है और उससे निबटने का तरीका यह होगा कि वह महात्माजी की सिफारिशके मुताबिक कार्य-समिति नियुक्त कर दे।

यह पत्र मैं आपको अभी तुरत भेज रहा हूँ और आज शाम (सोमवार, २० तारीखको) साढ़े ६ बजे मैं बिड़ला भवनमें हूँगा। शामको साढ़े पाँच और आठ बजेके बीच कोई भी और समय मेरे लिए सुविधाजनक रहेगा। उत्तरमें दो पंक्तियाँ पत्र-

१. १९०८ का, जिसके तहत कुछ संगठनोंको अवैध घोषित कर दिया गया था।

वाहकके हाथों ही लिख भेजिए, ताकि मैं आकर आपसे थोड़ी बातचीत कर सकूँ। आपके उत्तरके लिए पत्रवाहक रुका रहेगा। मुझे यकीन है कि आपके लिए मुझसे उस समय मिलना सम्भव हो सकेगा।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित,

हृदयसे आपका,
एस० सत्यमूर्ति

श्रीयुत महादेव देसाई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०८८८)से। सौजन्य: सी० आर० नरसिंहन्

परिशिष्ट ६

सुभाषचन्द्र बोसके पत्र[1]

जीलगोड़ा डाकघर
२९ मार्च, १९३९

प्रिय महात्माजी,

गत २४ तारीखको गाड़ीसे लिखा आपका पत्र और संलग्न कागजात भी मिले।

पहली बात तो यह है कि मेरे भाई शरतने आपको अपनी ही इच्छा और प्रेरणासे पत्र लिखा। उनके पत्रसे आप देख सकते हैं कि आपका तार उन्हें यहाँसे कलकत्ता लौटने पर मिला और उसके बाद उन्होंने आपको लिखा। अगर उन्हें आपका तार न मिलता तो वे आपको लिखते, इसमें मुझे सन्देह है।

बेशक, उनके पत्रमें कुछ ऐसी बातें हैं जो मेरी भावनाओंको प्रतिध्वनित करती हैं। लेकिन यह तो एक अलग् बात है। मुझे मुख्य समस्या यह प्रतीत होती है कि क्या दोनों पक्ष अतीतको भुलाकर एक साथ काम कर सकते हैं। यह बात पूरी तरहसे आपपर निर्भर है। यदि आप सच्चे अर्थोंमें निष्पक्ष रुख अपनाकर दोनों पक्षोंका विश्वास प्राप्त कर लें तो आप कांग्रेसको बचा सकते हैं और राष्ट्रीय एकता फिर से कायम कर सकते हैं।

मेरा स्वभाव ही ऐसा नहीं है कि मनमें बदलेकी भावना रखूँ या किसीके खिलाफ शिकायतको पोसूँ। एक तरहसे मेरी मनोवृत्ति घूँसेबाजवाली है — घूँसेबाजी खत्म होते ही प्रतिपक्षीसे मुस्कराते हुए हाथ मिलानेवाली और परिणामको खिलाड़ीकी वृत्तिसे उदारतापूर्वक स्वीकार करनेवाली।

दूसरे, मुझसे लोग जो-कुछ कहते रहे हैं उस सबके बावजूद मैं पन्त प्रस्तावको कांग्रेस द्वारा पारित रूपमें ही लेता हूँ। हमें इसपर हर हालतमें अमल करना चाहिए।

१. देखिए पृ० ८९-९० और १०७-१०।

प्रस्ताव पेश किये जाने और उसपर बहसकी अनुमति भी खुद मैंने दी थी, हालाँकि उसमें वह अवैधानिक धारा मौजूद थी। अब मैं उससे पीछे कैसे हट सकता हूँ?

तीसरे, आपके सामने दो रास्ते हैं: (१) या तो नई कार्य-समितिके गठनके बारेमें हमारे विचारोंको स्थान दीजिए, या (२) पूरे तौरपर अपने ही विचारों पर आग्रह रखिए। यदि आप अपने ही विचारोंपर आग्रह रखते हैं तो हो सकता है, वहाँसे हमारे रास्ते अलग हो जायें।

चौथे, जल्दीसे-जल्दी नई कार्य-समितिके गठन तथा कार्य-समिति और महासमिति की बैठकें बुलाने के लिए मेरे लिए जो-कुछ भी करना सम्भव है, सो सब करने को मैं तैयार हूँ। लेकिन मुझे बड़ा अफसोस है कि अभी दिल्ली आना मेरे लिए मुमकिन नही है। (डॉ० सुनीलने आज सुबह इस सम्बन्धमें आपको तार दिया है। आपका तार मुझे कल ही मिला।)

पाँचवें, आपके पत्रसे यह जानकर मुझे आश्चर्य हुआ कि महासमिति कार्यालय ने आपको पन्त प्रस्तावकी नकल नहीं भेजी। (अब तो भेज दी गई है।) उससे भी ज्यादा आश्चर्य इस बातसे हुआ कि आपके इलाहाबाद आने से पहलेतक प्रस्ताव आपको दिखाया ही नहीं गया था। त्रिपुरीमें तो यह अफवाह बहुत गरम थी कि प्रस्तावको आपका पूरा समर्थन प्राप्त है। हमारे त्रिपुरीमें रहते हुए ही दैनिक समाचार-पत्रोंमें इस आशयका एक वक्तव्य भी प्रकाशित हुआ था।

छठे, पदपर बने रहने की मेरी तनिक भी इच्छा नही है, लेकिन मुझे अपनी बीमारीकी वजहसे त्यागपत्र दे देने का भी कोई कारण दिखाई नही देता। उदाहरणके लिए, जेलमें रहते तो किसी अध्यक्षने त्यागपत्र नही दिया। मैं आपको बता दूँ कि मुझपर त्यागपत्र देने के लिए बहुत दबाव डाला जा रहा है। मैं अड़ा हुआ हूँ— इसलिए कि मेरे त्यागपत्रका मतलब कांग्रेसकी राजनीतिमें एक नये चरणका आरम्भ होगा, और मैं इस स्थितिको अन्ततक बचाना चाहता हूँ। मैं पिछले कुछ दिनोंसे महासमितिके ज़रूरी काम-काज देखता रहा हूँ।

कल या परसों मैं आपको फिर लिखूँगा।

मेरा स्वास्थ्य सुधर रहा है। आशा है, आपका रक्तचाप शीघ्र ही फिर कम हो जायेगा।

प्रणामपूर्वक,

स्नेहाधीन,
सुभाष

पुनश्च:

यह पत्र ठीक-ठीक आपके पत्रका उत्तर नही है। बस, मेरे मनमें जो बातें थीं और जो मैं आपको बताना चाहता था उन्हींको यहाँ दर्ज कर दिया है।

महात्मा गांधी
बिड़ला भवन
नई दिल्ली

जीलगोड़ा
३१ मार्च

प्रिय महात्माजी,

मेरे स्वास्थ्यके बारेमें सुनीलके लम्बे तारके उत्तरमें भेजा आपका तार[1] देखा। जब आपने मेरे दिल्ली आने का सुझाव देते हुए तार भेजा तो मैंने सोचा कि इस सम्बन्धमें डाक्टर ही अपनी बात कहें, यही बेहतर होगा। निदान सुनीलने आपको तार दिया।

गाड़ीसे मेरे नाम लिखे आपके इसी २४ तारीखके पत्र और उसी दिन शरतको लिखे आपके पत्रके विभिन्न मुद्दों और आमतौरपर पूरी स्थितिपर मैं विचार करता रहा हूँ। यह मेरे लिए सचमुच बड़े दुर्भाग्यकी बात है कि ऐसे नाजुक समयमें मैं बीमार हो गया। लेकिन एकके-बाद-एक घटनाएँ इतनी तेजीसे घटित होती रही है कि मुझे जल्दी स्वस्थ होने का अवसर ही नही मिला। इसके अतिरिक्त, त्रिपुरी कांग्रेसके पहले और बादमें भी कुछ हलकोंमें (आपको स्पष्ट कर दूँ कि इनमें आप शामिल नही है) मेरे साथ वैसा व्यवहार नही किया जाता रहा है जैसेका मैं पात्र हूँ। लेकिन अपनी बीमारीकी वजहसे मेरे त्यागपत्र दे देने का कोई कारण नही है। जैसा कि मैंने अपने कलके पत्रमें[2] (वह आपके नाम मेरा दूसरा पत्र था) बताया, मेरी जानकारीमें तो लम्बे अर्सेतक जेलमें रहने पर भी किसी अध्यक्षने त्यागपत्र नही दिया। हो सकता है, आखिर मुझे त्यागपत्र देना ही पड़े। लेकिन अगर देना पड़ा तो उसके कारण सर्वथा भिन्न होंगे।

मेरा खयाल है, अपने दूसरे पत्रमें मैंने कहा है कि यद्यपि त्यागपत्र देने के लिए मुझपर दबाव डाला जा रहा है, लेकिन मैं अड़ा हुआ हूँ। मेरे त्यागपत्रका मतलब कांग्रेसकी राजनीतिमें एक नये चरणका आरम्भ होगा, और मैं इस स्थितिको अन्त तक बचाना चाहता हूँ। अगर हमारे रास्ते अलग हुए तो भारी गृह-कलह आरम्भ हो जायेगी, और उसका अन्तिम परिणाम चाहे जो हो, कांग्रेस कुछ कालके लिए कमजोर पड़ जायेगी और इसका लाभ उठायेगी ब्रिटिश सरकार। उस विपत्तिसे कांग्रेस और देशको बचाना आपके हाथमें है। विभिन्न कारणोसे सरदार पटेल और उनके गुटका कट्टर विरोध करनेवाले लोगोंका भी आपमें अबतक विश्वास है और वे मानते हैं कि आप मामलोंको नि.संग और निष्पक्ष भावसे देख सकते हैं। उनके लिए आप दलों और गुटोंसे ऊपर एक राष्ट्रीय व्यक्तित्व है, और इसलिए आप आपसमें झगड़ रहे तत्त्वोंके बीच फिरसे एकता कायम कर सकते है। यदि किसी कारण उक्त विश्वास हिल गया — भगवान् न करे, ऐसा हो — और आप किसी पक्ष-विशेषसे जुडे हुए माने जाने लगे तो फिर हमारा और कांग्रेसका मालिक भगवान् ही है।

१. देखिए पृ० ९१।

२. तात्पर्य २९ मार्चके पिछले पत्रसे है।

इसमें सन्देह नहीं कि आज कांग्रेसके दोनों पक्षों (या दोनों गुटों)के बीच भेदकी बहुत चौड़ी खाई है। लेकिन यह खाई अब भी पाटी जा सकती है — और सो भी आपके द्वारा। अपने राजनीतिक विरोधियोंकी मनोवृत्तिके बारेमें मैं कुछ नहीं कह सकता। त्रिपुरीमें हमें उनका बहुत बुरा अनुभव हुआ, लेकिन मैं अपने पक्षके लोगोंके बारेमें कुछ कह सकता हूँ। हममें बदलेकी भावना नहीं है और हम अपने मनमें किसीके प्रति शिकायतें नहीं पोसते। हम बातोंको दरगुजर करके, भारतकी राजनीतिक और आर्थिक मुक्तिके सामान्य उद्देश्यके निमित्त एक बार फिर मिलकर काम करने के लिए तैयार हैं। जब मैं 'हमारे पक्ष' की बात करता हूँ तो उसमें अधिकृत कांग्रेस समाजवादी पक्षको शामिल मत मानिए। हमें पहले-पहल त्रिपुरीमें इस बातका पता चला कि इस पक्षके साथ कितने कम लोग हैं। अब इस पक्षमें भी विभाजन हो गया है — आम सदस्यों तथा कई प्रान्तीय शाखाओंने अधिकृत नेताओंकी ढुलमुल नीतिके खिलाफ विद्रोह कर दिया है। कांग्रेस समाजवादी पक्षका एक बहुत बड़ा हिस्सा भविष्यमें हमारे साथ होगा — चाहे उसके चोटीके नेता जो करें। अगर इस सम्बन्धमें आपको कोई सन्देह हो तो कुछ दिन इन्तजार करके देख लीजिए।

आपके नाम मेरे भाई शरतके पत्रसे प्रकट होता है कि उनका मन कड़वाहटसे भरा हुआ है। मेरा खयाल है, इसका कारण मुख्यत: त्रिपुरीका उनका अनुभव है, क्योंकि कलकत्तासे त्रिपुरी जाते समय उनके मनमें ऐसी कोई भावना नहीं थी। स्वाभाविक है कि त्रिपुरीकी घटनाओंके बारेमें मेरी अपेक्षा उन्हें ज्यादा मालूम है, क्योंकि वे वहाँ बेझिझक घूम-फिरकर लोगोंसे मिल-जुल सकते थे और हर तरहकी जानकारी हासिल कर सकते थे। मैं यद्यपि रोग-शय्यापर पड़ा हुआ था, फिर भी कई स्वतन्त्र और निष्पक्ष वृत्तियोंके लोगोंसे — हमसे राजनीतिक प्रतिद्वन्द्विता रखनेवाले जिम्मेदार व्यक्तियोंके रुखके बारेमें — मुझे इतनी सारी और ऐसी जानकारी मिली कि सारे मामलेसे मेरा जी भर गया। मैं यह भी बता दूँ कि जब मैं त्रिपुरीसे चला उस समय कांग्रेसकी राजनीतिके प्रति मेरा मन ऐसी अरुचि और जुगुप्सासे भर उठा जैसा पिछले उन्नीस वर्षोंमें कभी नहीं हुआ था। प्रभुकी कृपासे अब मैं उस एहसाससे छुटकारा पा चुका हूँ और मैंने फिर अपनेको सन्तुलित कर लिया है।

जवाहरने अपने किसी पत्रमें (और सम्भवतया समाचारपत्रोंमें प्रकाशित किसी वक्तव्यमें भी) कहा है कि मेरी अध्यक्षतामें महासमिति कार्यालयकी हालत बिगड़ गई है। मैं इस कथनको अनुचित और अन्यायपूर्ण मानता हूँ और मुझे वह सख्त नापसन्द है। शायद उन्होंने यह नहीं सोचा कि मेरी निन्दा करके वे कृपलानीजी और महासमितिके सारे कर्मचारियोंकी निन्दा कर रहे हैं। कार्यालय तो मन्त्री और उसके कर्मचारियोंके हाथोंमें है और अगर उसकी हालत बिगड़ती है तो उसकी जिम्मेदारी उन्हींपर है। इस सम्बन्धमें मैं जवाहरको विस्तारपूर्वक लिख रहा हूँ। यह सब आपको इसलिए बता रहा हूँ कि शरतके नाम अपने पत्रमें आपने अन्तरिम व्यवस्थाके बारेमें कुछ लिखा है। कार्यालयकी सहायता करने का एकमात्र उपाय यह है कि हम कोई स्थायी मन्त्री तत्काल नियुक्त कर दें — भले ही कार्य-समितिके बाकी

सदस्योंकी नियुक्तिमें विलम्ब हो। लेकिन अगर कार्य-समितिकी नियुक्ति शीघ्र होनेवाली हो तो फिर हमें महामन्त्रीकी नियुक्ति पहले करनेकी जरूरत नहीं है।

पन्त प्रस्तावपर आप अपनी प्रतिक्रिया बतायें तो कृपा होगी। आपकी स्थिति इस अर्थमें विशेष सुविधाजनक है कि अगर आपको त्रिपुरीका सारा किस्सा मालूम हो जाये तो आप वस्तुस्थितिके प्रति सन्तुलित और निष्पक्ष दृष्टिकोणसे काम ले सकते हैं। अखबारोंसे तो लगता है कि अबतक जो भी लोग आपसे मिले हैं, उनमें से अधिकांश एक ही विचारधाराके — अर्थात् पन्त प्रस्तावके समर्थक गुटके — हैं। लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। आपसे जो भी मिले, आप वस्तुस्थितिका सही मूल्यांकन आसानीसे कर सकते हैं। पन्त प्रस्तावपर खुद मेरे विचारका भी आप सहज ही अन्दाजा लगा सकते हैं। लेकिन सार्वजनिक हितकी बातोंके सन्दर्भमें मेरी व्यक्तिगत भावनाओंका कोई महत्त्व नहीं है। जैसा कि मैंने पहलेके एक पत्रमें कहा है, विशुद्ध संवैधानिक दृष्टिकोणसे पन्त प्रस्तावके बारेमें कोई चाहे जो सोचे, जब उसे कांग्रेसने पारित कर दिया है तो मैं उससे बँधा हुआ हूँ। अब आप ही बताइए कि क्या आप उस प्रस्तावको मुझमें अविश्वासकी अभिव्यक्ति मानते हैं और क्या आपको लगता है कि उसके फलस्वरूप मुझे त्यागपत्र दे देना चाहिए? इस सम्बन्धमें आपकी रायका मेरे लिए बहुत महत्त्व होगा।

शायद आपको मालूम हो कि त्रिपुरीमें पन्त प्रस्तावके पक्षमें मत तैयार करनेवालों ने ऐसी अफवाह फैलाई कि राजकोटमें आपसे फोनपर बातचीत हुई है और प्रस्तावको आपने अपना पूरा आशीर्वाद दिया है। इस आशयकी एक खबर दैनिक समाचारपत्रोंमें भी प्रकाशित हुई थी। खानगी बातचीतमें यह बात भी कही गई कि सम्पूर्ण पन्त प्रस्तावसे कम कोई भी चीज आपको और आपके कट्टर अनुगामियोंको सन्तुष्ट नहीं कर सकती। खुद मैंने इस तरहकी खबरोंमें न तो विश्वास किया और न अब करता हूँ, लेकिन वे प्रस्तावके पक्षमें मत दिलानेमें मददगार तो हुईं ही। जब सरदारने पन्त प्रस्ताव मुझे पहली बार दिखाया तो मैंने कहा (उस समय राजेन बाबू और मौलाना आजाद भी वहाँ थे) कि अगर उसमें कुछ परिवर्तन कर दिये जायें तो संशोधित रूपमें कांग्रेस उसे सर्वसम्मतिसे पारित कर सकती है। प्रस्तावका संशोधित प्रारूप भी सरदार पटेलको भेजा गया, लेकिन उनकी ओरसे कोई जवाब नहीं मिला। उन लोगोंका रुख तो यह प्रतीत होता था कि उसका एक शब्द, कोई विराम-चिह्न भी न बदला जाये। मेरा खयाल है, राजकुमारी अमृतकौरने आपको संशोधित प्रस्तावकी प्रति दे दी है। यदि पन्त प्रस्तावका उद्देश्य आपके सिद्धान्तोंमें, आपके नेतृत्व और मार्गदर्शनमें फिरसे विश्वासका इजहार करना था तो उसकी व्यवस्था तो संशोधित प्रस्तावमें भी थी, लेकिन अगर उसका उद्देश्य अध्यक्षके चुनावका बदला लेना था तो अलबत्ता संशोधित प्रस्ताव पर्याप्त नहीं था। खुद मेरी समझमें तो नहीं आता कि पन्त प्रस्तावसे आपकी प्रतिष्ठा, प्रभाव और सत्तामें कैसे वृद्धि हुई है। विषय-समितिमें आपके खिलाफ एक सौ पैंतीस मत पड़े, और पक्षपातपूर्ण रुख रखनेवाले लोग चाहे जो कहें, विभिन्न स्वतन्त्र और निष्पक्ष स्रोतोंसे

मुझे तो यह जानकारी मिली है कि कांग्रेस समाजवादी पक्षकी तटस्थता के बावजूद खुले अधिवेशनमें २,३००[1] में से कमसे-कम ८०० मत आपके खिलाफ पड़े (या पड़े होंगे)। और अगर कांग्रेस समाजवादी गुटने विषय-समितिकी तरह खुले अधिवेशनमें भी मतदान किया होता तो प्रस्ताव गिर जाता। जो भी हो, उस हालतमें मतदानका परिणाम, कमसे-कम, समस्यामूलक तो होता ही। प्रस्तावमें थोड़ा-सा फेर-बदल कर देने से उसके खिलाफ एक भी मत नहीं पड़ता, और आपके नेतृत्वको सभी कांग्रेसजनोंका समर्थन प्राप्त हो जाता। ब्रिटिश सरकार और सारी दुनियाके समक्ष आपकी प्रतिष्ठामें चार चाँद लग जाते; इसके बजाय हुआ यह कि हमसे बदला लेने की वृत्तिसे चालित लोगोंने आपके नाम और आपकी प्रतिष्ठाका नाजायज लाभ उठाया। फलतः आपकी प्रतिष्ठा और प्रभावकी अभिवृद्धि करने के बजाय वे उसे जाने कितने गहरे गर्तमें घसीट ले गये — क्योंकि आज सारी दुनिया यह जानती है कि यद्यपि आपने और आपके अनुगामियोंने त्रिपुरीमें जैसे-तैसे बहुमत प्राप्त कर लिया, तथापि एक सशक्त विरोध-पक्षका अस्तित्व कायम है। अगर मामलेको यों ही अपने भाग्यपर छोड़ दिया गया तो निश्चय ही इस विरोधकी शक्ति और आयाममें वृद्धि होगी। परिवर्तन-कामी, युवा और प्रगतिशील तत्त्वोंसे रहित दलका भविष्य भला क्या होगा? उसका भविष्य वैसा ही है जैसा इंग्लैण्डकी लिबरल पार्टीका हुआ।

पन्त प्रस्तावपर अपनी प्रतिक्रियाकी जानकारी आपको देने के लिए अब मैं काफी-कुछ कह चुका हूँ। अब अगर आप अपनी प्रतिक्रिया बतायें तो बड़ी कृपा होगी। क्या आप पन्त प्रस्तावको पसन्द करते हैं, या यदि वह हमारे सुझाये गये ढंगसे संशोधित रूपमें पारित किया होता तो वह आपको ज्यादा अच्छा लगता?

अपने पत्रमें एक और बातकी चर्चा करना चाहूँगा। मेरा मतलब हमारे कार्य-क्रमके सवालसे है। वर्धामें १५ फरवरीको मैंने आपको अपने विचार बता दिये थे। तबसे जो-कुछ हुआ है, उससे मेरे विचारोंकी, मेरे अनुमानकी पुष्टि हुई है। महीनों-से मैं मित्रोंसे कहता आ रहा हूँ कि यूरोपमें वसन्त ऋतुमें एक संकट आयेगा, जो ग्रीष्मतक चलेगा। अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति तथा हमारी घरेलू स्थितिने मुझे लगभग आठ महीने पहले इस बातका कायल कर दिया था कि समय आ गया है जब हमें पूर्ण स्वराज्यके प्रश्नपर पूरी शक्तिसे आग्रह करना चाहिए। किन्तु हमारे और देशके दुर्भाग्यसे आप मेरी इस आशावादितामें शरीक नहीं हैं। आपका मन कांग्रेसके भीतरी भ्रष्टाचारके विचारसे बुरी तरह ग्रस्त है। इसके अलावा, आप हिंसाके भयसे त्रस्त हैं। यद्यपि कांग्रेससे भ्रष्टाचारको निर्मूल करने के आपके संकल्पमें मैं भी पूरी तरह शरीक हूँ, मैं नहीं समझता कि सम्पूर्ण भारतको ध्यानमें रखकर देखें तो आज पहलेकी अपेक्षा अधिक भ्रष्टाचार है; और जहाँतक हिंसाका सम्बन्ध है, मुझे पूरा यकीन है कि पहलेकी अपेक्षा आज उसका जोर कम है। पहले बंगाल, पंजाब और संयुक्त प्रान्तको संगठित क्रान्तिकारी हिंसाकी आशाका आधार माना जा सकता था।

१. क्रॉसरोड्समें यह संख्या "२२००" बताई गई है।

आज वहाँ अहिंसाकी भावना पहलेकी अपेक्षा बहुत अधिक है। और बंगालकी बात लें तो मैं पूरे प्रमाणके साथ कह सकता हूँ कि यह प्रदेश जितना अहिंसक आज है उससे अधिक पिछले ३० वर्षोंके दौरान कभी नहीं रहा। इन और अन्य कारणोंसे हमें ब्रिटिश सरकारके सामने अपनी माँगें अन्तिम चेतावनीकी शक्लमें रखने में देर नहीं करनी चाहिए। अन्तिम चेतावनीका विचार न तो आपको और न पण्डित जवाहरलालको ही रुचता है। लेकिन अपने पूरे राजनीतिक जीवनके दौरान आप सत्ताधारियोंको जाने कितनी अन्तिम चेतावनियाँ देकर जन-हितको आगे बढ़ाते रहे हैं। अभी पिछले दिनों राजकोटमें आपने यही किया। तब राष्ट्रीय माँगको अन्तिम चेतावनीके रूपमें पेश करने पर क्या आपत्ति हो सकती है? अगर आप ऐसा करें और साथ ही आगामी संघर्षकी तैयारी भी करें तो मुझे पूरा विश्वास है कि हम शीघ्र ही पूर्ण स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे। ब्रिटिश सरकार या तो हमसे लड़े बिना हमारी माँग स्वीकार कर लेगी, या अगर संघर्ष हुआ तो वर्तमान परिस्थितियोंमें वह लम्बा नहीं खिंचेगा। इस सम्बन्धमें मुझमें इतना अधिक आत्मविश्वास और आशा है कि मुझे लगता है, यदि हम पूरे साहसके साथ आगे बढ़ चलें तो अधिकसे-अधिक १८ महीनेके अन्दर स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं।

इस सम्बन्धमें मेरी भावना इतनी प्रबल है कि इसके लिए मैं कोई भी कुर्बानी करने को तैयार हूँ। अगर आप संघर्ष आरम्भ कर दें तो मैं खुशी-खुशी आपकी भरसक सहायता करूँगा। अगर आपको लगता हो कि दूसरे अध्यक्षके अधीन कांग्रेस ज्यादा अच्छी तरह लड़ सकेगी तो मैं अध्यक्षता छोड़ने को सहर्ष तैयार हूँ। यदि आपको यह महसूस होता हो कि कांग्रेस आपकी पसन्दकी कार्य-समितिके परामर्शसे अधिक सफलतापूर्वक लड़ सकती है तो मैं आपकी इस इच्छाको भी खुशी-खुशी मंजूर करूँगा। मैं केवल इतना ही चाहता हूँ कि इस नाजुक घड़ीमें आपको और कांग्रेसको कमर कसकर स्वराज्यकी लड़ाई फिर शुरू कर देनी चाहिए। यदि आत्म-विलोपनसे राष्ट्र-हितकी सिद्धि होती हो तो मैं आपको अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक वचन देता हूँ कि मैं पूर्ण आत्म-विलोपनके लिए तैयार हूँ। मेरा खयाल है, मैं अपने देशको इतना प्यार अवश्य करता हूँ कि ऐसा कर सकूँ।

मैं क्षमा-याचनापूर्वक कहना चाहूँगा कि हालमें आप रियासतोंकी प्रजाकी लड़ाईका संचालन जिस रीतिसे करते रहे हैं, वह मुझे ठीक नहीं लगती। राजकोटके लिए आपने अपने अमूल्य जीवनको खतरेमें डाला, लेकिन राजकोटकी प्रजाके लिए लड़ते हुए आपने अन्य रियासतोंमें संघर्ष स्थगित करवा दिया। आपने ऐसा क्यों किया? भारतकी छह सौसे भी अधिक रियासतोंमें राजकोट एक छोटी-सी रियासत है। यदि मैं राजकोट-संघर्षको सर्वथा नगण्य चीज कहूँ तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। क्यों नहीं हम सारे देशमें एक ही साथ संघर्ष चलायें और इस प्रयोजनसे एक व्यापक योजना अपनायें? आपके करोड़ों देशभाई महसूस तो ऐसा ही करते हैं, हालाँकि आपका खयाल करके भले ही वे ऐसा न कहें।

अन्तमें, मैं यह कह सकता हूँ कि मुझ-जैसे बहुत-से लोग हैं, जिन्हें राजकोट समझौतेकी शर्तोंपर कोई खुशी नहीं हो सकती। हम लोगोंने और राष्ट्रवादी समाचार-

पत्रोंने भी इसे महान् विजय माना है, लेकिन इससे हमें क्या मिला है? सर मॉरिस ग्वायर न हमारे आदमी हैं और न वे कोई स्वतन्त्र व्यक्ति ही हैं। वे सरकार के आदमी हैं। उन्हें पंच बनाने की बात समझमें नही आती। हम ऐसी उम्मीद किये हुए हैं कि वे निर्णय हमारे पक्षमें देंगे। लेकिन यदि उन्होंने निर्णय हमारे विरुद्ध दे दिया तो हमारी क्या स्थिति होगी? और फिर, सर मॉरिस ग्वायर उस संघ-योजनाके अभिन्न अंग हैं जिसे हम अस्वीकार करना निश्चित कर चुके हैं। ब्रिटिश सरकारसे संघर्ष होने पर यदि हम उच्च न्यायालयके किसी न्यायाधीश या सत्र न्यायाधीशको पंच बनाना तय करें तब तो ब्रिटिश सरकारसे हम बराबर समझौता कर सकते हैं। लेकिन ऐसे समझौतेसे हमें क्या मिलेगा? फिर, यह भी बहुत-से लोगोंकी समझमें नही आता कि वाइसरायसे मिल लेने के बाद आप दिल्लीमें क्यों रुके हुए हैं। शायद अपने स्वास्थ्यकी कमजोर हालतके कारण अगली लम्बी यात्राके पहले कुछ आराम करना आपके लिए बहुत जरूरी था। लेकिन ब्रिटिश सरकार और उसके समर्थकोंको ऐसा लग सकता है कि आप संघीय मुख्य न्यायाधीशको जरूरतसे ज्यादा महत्त्व दे रहे हैं और इस तरह उनकी प्रतिष्ठामें वृद्धि कर रहे हैं।

मेरा पत्र काफी लम्बा हो गया है, इसलिए अब इसे समाप्त करना चाहिए। अगर मैंने कोई ऐसी बात कही है जो आपको गलत लगती है तो आशा है उसके लिए मुझे क्षमा करेंगे। मैं यह जानता हूँ कि आप लोगोंका स्पष्ट और बिना लाग-लपेटके बात करना पसन्द करते हैं। इसीलिए मैं आपको यह लम्बा और स्पष्ट पत्र लिखने का साहस कर पाया हूँ।

मैं निरन्तर, हालाँकि धीरे-धीरे, अच्छा हो रहा हूँ। मुझे आशा है, आप भी पहलेसे अच्छे होंगे और आपका रक्तचाप भी पहलेसे बहुत कम हो गया होगा।

सादर प्रणामपूर्वक,

स्नेहाधीन,
सुभाष

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९, **क्रॉसरोड्स**, पृ० १३४-४० भी

परिशिष्ट ७

धर्मेन्द्रसिंहका पत्र[1]

पैलेस राजकोट
१० अप्रैल, १९३९

प्रिय महात्मा गांधीजी,

इसी महीनेकी ९ तारीखको लिखा आपका पत्र मुझे मिल गया है। आपका यह मानना सही है कि जिन चार सज्जनोंकी नियुक्ति मैंने मुसलमानों, भायातों और दलित वर्गोंके प्रतिनिधियोंके रूपमें की थी उन्हें समितिमें शामिल करवाने की मेरी इच्छा होगी। मैं इस बातको बहुत महत्त्वपूर्ण मानता हूँ कि इन समुदायोंका कारगर प्रतिनिधित्व हो और ये प्रतिनिधि-विशेष पूरी सावधानीसे विचार करके चुने गये थे। लेकिन साथ ही आपकी सुझाई यह युक्ति कि श्री पटेल द्वारा नामजद सदस्योंका बहुमत हो, इस खयालसे समितिका विस्तार किया जाये, अब व्यावहारिक नहीं है। अब तो जो करना है वह यह कि भारतके माननीय मुख्य न्यायाधीश महोदयके पंच-निर्णयको, जिसमें उन्होंने कहा है कि अधिसूचनाके मुताबिक समितिके सदस्योंकी संख्या दससे ज्यादा नहीं हो सकती, ध्यानमें रखकर २६ दिसम्बर, १९३८ की अधिसूचना ५० की शर्तोंपर अमल करने के लिए कार्रवाई की जाये। जैसा मैं ऊपर कह चुका हूँ, यह बात बेशक अत्यन्त आवश्यक है कि महत्त्वपूर्ण मुसलमान और भायात समुदायोंको अन्य समुदायोंकी ही तरह उचित प्रतिनिधित्व मिले। इसी उद्देश्यको ध्यानमें रखते हुए मैंने २१-१-१९३९ की अधिसूचना ६१ में प्रकाशित सूची में मुसलमानोंके दो उपयुक्त प्रतिनिधियोंके और भायातोंके एक प्रतिनिधिका नाम शामिल कर लिया था। २८ फरवरीको आपसे मुलाकात करनेवाले मुसलमानों और भायातोंके शिष्ट-मण्डलोंको आपके दिये आश्वासनों और ११ मार्चको गरासिया संघके अध्यक्षको लिखे आपके पत्रसे स्पष्ट है कि मेरे इस विचारसे आप भी सहमत थे। आपको याद होगा कि ये आश्वासन इस आशयके थे कि उन समुदायोंकी ओरसे पहले ही नामजद कर दिये गये प्रतिनिधि निश्चित रूपसे समितिमें शामिल किये जायेंगे। मुझे इसका पूरा भरोसा है कि इन आश्वासनोंको ध्यानमें रखते हुए आप श्री पटेलको सलाह देंगे कि भारतके मुख्य न्यायाधीशके निर्णयके अनुसार अब उन्हें जिन सात गैर-सरकारी सदस्योंके नामोंकी सिफारिश करनी है उनकी सूचीमें वे इन नामोंको भी सम्मिलित कर लें।

१. देखिए पृ० १३८-९ और १५१-३। यह पत्र "राजकोट इवेंट्स" (राजकोटकी घटनाएँ) शीर्षक लेखसे उद्धृत है।

मुझे इस बातकी भी पूरी आशा है कि श्री मोहन मदनका नाम उनकी सूचीमें जरूर होगा। ये सज्जन सिर्फ दलित वर्गोंके प्रतिनिधि ही नहीं हैं, बल्कि पिछले सात वर्षोंसे राजकोट नगरनिगमके निर्वाचित अध्यक्ष रहे हैं और इसलिए स्पष्ट ही समितिमें सम्मिलित किये जाने योग्य व्यक्ति हैं।

मुझे यकीन है, आप मेरी इस बातसे सहमत होंगे कि अभी असली महत्त्वकी बात किसी खास पक्षको बहुमत दिलवाना नहीं, बल्कि इस बातको सुनिश्चित करना है कि राज्यके विभिन्न हितोंका कारगर प्रतिनिधित्व करनेवाली ऐसी सच्ची प्रातिनिधिक समितिकी स्थापना हो जाये जिसके सदस्य अपने सिर आनेवाले बहुत ही दायित्वपूर्ण कर्त्तव्योंको निभाने के लिए पूर्णतः योग्य हों।

मैं श्री पटेलकी सिफारिशोंकी राह देख रहा हूँ। सिफारिशें प्राप्त हो जाने पर मैं तीन सरकारी सदस्योंकी नियुक्ति करूँगा, जिन्हें निस्सन्देह मत देने और यह तय करने का अधिकार होगा कि समितिका अध्यक्ष कौन हो।

हृदयसे आपका,
धर्मेन्द्रसिंह

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-४-१९३९

परिशिष्ट ८

सुभाषचन्द्र बोसका पत्र[1]

जीलगोड़ा
६ अप्रैल, १९३९

प्रिय महात्माजी,

मँझले दादा यानी मेरे भाई शरतको लिखे पत्रमें आपने सुझाव दिया है कि भविष्यमें एकजुट होकर काम करने के लिए रास्ता साफ करने के खयालसे दोनों पक्षोंके नेताओंके बीच दिल खोलकर स्पष्ट बातचीत होनी चाहिए। यह विचार उत्तम है और अतीतमें जो-कुछ भी हुआ है उसे भूलकर, मैं इस विषयमें जो कर सकता हूँ वह करने को पूरी तरह तैयार हूँ। इस सम्बन्धमें यदि मुझे कुछ करना है और करना है तो क्या, क्या आप यह बताने की कृपा करेंगे? व्यक्तिगत तौरपर मुझे ऐसा लगता है कि आपका प्रभाव और व्यक्तित्व एकता स्थापित करने के इस प्रयासमें बहुत मदद कर सकता है। इससे पहले कि हम एकताकी सारी आशाएँ छोड़ बैठें, क्या आप एक बार पूरी शक्तिसे सबको इकट्ठा करने का प्रयत्न नहीं करेंगे? मैं आपसे एक बार फिर विनती करता हूँ कि आप याद रखें कि आज भी देश आपको

१. देखिए पृ० १४०-२।

कितने सम्मानकी दृष्टिसे देखता है। आप किसी पक्ष-विशेषसे जुड़े हुए नही है और इसलिए लोग अब भी आपसमें जूझ रहे तत्त्वोंमें एकता स्थापित करने के लिए आपसे आशा लगाये हुए है।

कार्य-समितिके गठनके बारेमें आपने मुझे जो सुझाव दिया है, उसपर मैं गम्भीरतापूर्वक विचार करता रहा हूँ। मुझे ऐसा लगता है कि यह हताशासे उत्पन्न सलाह है। इससे तो एकताकी आशा पूरी तरह ध्वस्त हो जाती है। यह कांग्रेसको विभाजित होने से नही बचा सकेगी — बल्कि इससे तो फूटकी सम्भावनाके लिए रास्ता साफ हो जायेगा। आजकी परिस्थितिमें समरूप कार्य-समितिके गठनका मतलब होगा दोनो पक्षोंको अभीसे अलग हो जानें की सलाह देना। क्या यह एक बड़ी जिम्मेदारी नही होगी? क्या आपको पूरा यकीन है कि एक साथ काम करना असम्भव है? हमारा पक्ष ऐसा नही सोचता। हम तो "पिछली बातें भूलने" और एक ही उद्देश्यके निमित्त मिलकर काम करने के लिए हर सम्भव प्रयत्न करने को तैयार है। और सम्मानजनक समझौता कराने की हम आपसे आशा कर सकते है। मैं आपसे इस विषयपर बात कर चुका हूँ और आपको लिख भी चुका हूँ कि आज कांग्रेसका जैसा गठन है — और जिसमें निकट भविष्यमें किसी महत्त्वपूर्ण परिवर्तनकी सम्भावना नजर नही आती — उसको देखते हुए सबसे अच्छा तरीका यही होगा कि एक ऐसी मिली-जुली कार्य-समिति बनाई जाये जिसमें यथासम्भव हरएक पक्षका प्रतिनिधित्व हो।

मुझे मालूम हुआ है कि आप मिली-जुली कार्य-समितिके विरुद्ध हैं। क्या आपका यह विरोध सैद्धान्तिक है (यानी आपके विचारसे एक साथ काम करना असम्भव है), या आप ऐसा महसूस करते है कि "गांधीवादियों" को (मैं इसका प्रयोग इससे अधिक उपयुक्त शब्दके अभावमें कर रहा हूँ और इसके लिए आपसे क्षमा चाहता हूँ) कार्य-समितिमें और अधिक प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए? अगर बात कार्य-समितिमें "गाधीवादियों" को और अधिक प्रतिनिधित्व देने की हो तो मुझे वैसा बतायें, ताकि मैं इस मामलेपर फिरसे विचार कर सकूँ। और अगर विरोध सिद्धान्तको लेकर हो तो इस पत्रमें मैं जो-कुछ निवेदन कर रहा हूँ उसको ध्यानमें रखते हुए आप अपनी उस सलाहपर पुनर्विचार करें जो आपने पहले दी है। हरिपुरा अधिवेशनके वक्त जब मैंने समाजवादियोंको कार्य-समितिमें सम्मिलित होने के लिए बुलाने का सुझाव दिया था, तब आपने स्पष्ट शब्दोंमें मेरे इस सुझावका समर्थन किया था। क्या अब स्थिति तबसे इतनी अधिक बदल चुकी है कि आप कार्य-समितिमें समान विचारोंवाले लोगोंके ही रखे जाने का आग्रह करने लगें?

आपने अपने पत्रोंमें एक-दूसरेके "इतने विरुद्ध" दो पक्षोंका उल्लेख किया है। मगर आपने इस बातका खुलासा नही किया है, और इसलिए यह स्पष्ट नही है कि जिस स्थितिका आपने उल्लेख किया है, वह कार्यक्रमपर आधारित है या व्यक्तिगत सम्बन्धोंपर। व्यक्तिगत सम्बन्ध तो, मेरी रायमें, अस्थायी और परिवर्तन-शील होते हैं। हम आपसमें झगड़ सकते है, लेकिन फिर हम आपसमें मिलकर अपने

मतभेद दूर भी कर सकते है। उदाहरणके लिए, कांग्रेसके हालके इतिहासमें स्वराज्यवादी प्रकरणको ही लें। जहाँतक मुझे याद है, कुछ कालके विरोधके बाद देशबन्धु दास और पण्डित मोतीलालजी के सम्बन्ध आपसे जितने मधुर हो सकते थे, हो गये। ग्रेट ब्रिटेनमें किसी आपात्-स्थितिके उत्पन्न होने पर प्रमुख दल एक साथ होकर एक मन्त्रिमण्डलमें बराबर काम कर सकते हैं। यूरोपीय देशोंमें — जैसे कि फ्रान्समें — आम तौरपर मिले-जुले मन्त्रिमण्डलका ही चलन है। क्या हम अंग्रेजों और फ्रान्सीसियोंकी तुलनामें कम देशभक्त हैं? अगर नही तो हम मिली-जुली कार्य-समितिमें कारगर ढंगसे काम क्यों नहीं कर सकते?

यदि आप ऐसा मानते हों कि आपके विरोधका आधार व्यक्तिगत नही, कार्यक्रम आदि है तो मैं इस बारेमें आपके विचार जानना चाहूँगा। आपकी रायमें, हमारे कार्यक्रमोंमें अन्तर कहाँ है, और वह भी इतना बुनियादी कि मिल-जुलकर काम करना सम्भव ही न हो? हमारे बीच मतभेद हैं, यह मैं जानता हूँ, लेकिन जैसा कि मैंने कार्य-समितिके भूतपूर्व साथियोंके त्यागपत्रोंका जवाब देते हुए उन्हें लिखा था, मेरे विचारसे, जिन बातोंपर हमारे बीच मतभेद है उनकी संख्या उनसे कम है जिनपर हममें मतैक्य है। मैं अब भी — त्रिपुरीमें जो-कुछ हुआ उसके बावजूद — इस रायपर कायम हूँ।

अपने एक पत्रमें स्वराज्यके लिए अन्तिम चेतावनी देने के मेरे विचारके सम्बन्ध में आपने कहा है कि अभी अहिंसक सार्वजनिक कार्रवाईके लिए अनुकूल वातावरण नही है। लेकिन, क्या राजकोटमें अहिंसक कार्रवाई नही की गई? कुछ अन्य राज्यों में भी आज क्या यही नही हो रहा है? इन राज्योंके निवासियोंको सत्याग्रह करने का अपेक्षाकृत कम प्रशिक्षण मिला है। हम ब्रिटिश भारतके निवासी कमसे-कम तुलनात्मक दृष्टिसे अधिक प्रशिक्षित और अनुभवी होने का दावा कर सकते हैं। यदि रियासतोंकी प्रजाको नागरिक स्वतन्त्रता और उत्तरदायी शासनके अपने संघर्षमें सत्याग्रहका सहारा लेने की अनुमति दी जा सकती है तो हम ब्रिटिश भारतके निवासियोंको क्यों नही?

अब त्रिपुरी कांग्रेसमें गांधीवादियोंके समर्थनसे पारित किये गये राष्ट्रीय मांग-सम्बन्धी प्रस्तावको लें। यद्यपि उसमें कई सुन्दर किन्तु अस्पष्ट मुहावरोंका प्रयोग हुआ है और कई ऊँची-ऊँची लेकिन खोखली बातें कही गई हैं फिर भी उसमें एक अर्थमें अन्तिम चेतावनी देने और आगामी संघर्षकी तैयारीके मेरे विचारसे मिलती-जुलती बहुत-सी बातें हैं। क्या आप इस प्रस्तावका अनुमोदन करते है? यदि करते है तो फिर एक कदम आगे बढ़कर मेरी योजनाको भी स्वीकार करने में आपको क्या आपत्ति है?

अब मैं पण्डित पन्तके प्रस्तावकी चर्चा करूँगा। उसके महत्त्वपूर्ण हिस्सेमें (मेरा मतलब अन्तिम भागसे है) दो मुद्दे हैं: पहला यह कि कार्य-समितिको आपका विश्वास — पूर्ण विश्वास — प्राप्त होना चाहिए; दूसरा यह कि उसका गठन आपकी इच्छानुसार ही होना चाहिए। यदि आप समान विचारोंवाले सदस्योंकी कार्य-समिति गठित करने का सुझाव देते हैं और यदि उसका गठन हो जाता है तो शायद ऐसा कहा जा सकेगा

कि इसका गठन "आपकी इच्छानुसार हुआ है।" लेकिन क्या इस बातका दावा किया जा सकेगा कि इसे आपका विश्वास प्राप्त है? क्या मुझे अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकमें खड़े होकर सदस्योंको यह बता सकने की छूट होगी कि आपने समान विचारोंवाले सदस्यों की नियुक्तिकी सलाह दी है और इस नई समितिको आपका विश्वास प्राप्त है? दूसरी ओर यदि आप ऐसी कार्य-समितिके गठनका सुझाव देते हैं जिसे आपका विश्वास प्राप्त नही है तो क्या यह माना जायेगा कि आपने पन्त प्रस्तावको कार्यान्वित किया —— आपके विचारसे, क्या यह सही कदम होगा? मेरा निवेदन है कि आप प्रश्नके इस पहलूपर भी गौर करें। अगर आप पन्त प्रस्तावको ध्यानमें रखेंगे तो न केवल आपको नई कार्य-समितिके सम्बन्धमें अपनी इच्छा बतानी पड़ेगी, बल्कि साथ ही ऐसी समितिके गठनकी भी सलाह देनी होगी जिसे आपका विश्वास प्राप्त हो।

पन्त प्रस्तावके गुण-दोषोंके बारेमें आपने अभीतक कुछ नही कहा है। क्या आपको वह पसन्द है? या इसके बजाय आप यह चाहेंगे कि न्यूनाधिक हमारे सुझाये ढंगपर एक सर्वसम्मत प्रस्ताव पास करके आपके सिद्धान्तो और मार्गदर्शनमें पुनः विश्वास प्रकट किया जाये और विवादास्पद धाराओंको छोड़ दिया जाये? फिर, इस प्रस्तावके पास हो जाने के बाद कार्य-समितिकी नियुक्तिके सिलसिलेमें अध्यक्षकी स्थिति क्या है? मैं यह प्रश्न फिरसे इसलिए कर रहा हूँ कि वर्त्तमान संविधान लगभग आपका ही बनाया हुआ है और आपकी राय मेरे लिए काफी महत्त्वकी होगी। इस बारेमें एक और प्रश्न मैं आपसे पूछता रहा हूँ। क्या आप इस प्रस्तावको मेरे विरुद्ध अविश्वास-प्रस्ताव मानते हैं? यदि ऐसा है, तो मैं अविलम्ब त्यागपत्र दे दूँगा —— और वह भी बिना किसी शर्तके। मैंने समाचारपत्रोंके लिए जो वक्तव्य दिया था उसमें मेरे पूछे इस प्रश्न की कुछ समाचारपत्रोने यह कहकर आलोचना की है कि इस प्रस्तावका महत्त्व मुझे खुद ही आँकना चाहिए। मुझमें इस प्रस्तावकी अपनी व्याख्या करने लायक समझ तो है, पर कई बार व्यक्तिगत व्याख्या व्यक्तिकी एकमात्र मार्गदर्शिका नही होती। साफ-साफ कहूँ तो मुझे ऐसा लगता है कि अध्यक्षके चुनावके परिणामसे मेरी स्थितिका औचित्य सिद्ध हो गया है। इस पदपर रहकर अगर मैं सार्वजनिक उद्देश्यको, जैसा मैं उसे समझता हूँ, आगे नही बढ़ा सकता तो इसपर एक दिन भी बने रहने की इच्छा मुझमें नही है। जो हिचक या देरी मेरी ओर से हुई है उसका कारण यही है कि इस मामलेमें निर्णय लेना इतना आसान नही है। मेरे समर्थकोंमें दो विचारधाराओंके लोग हैं: एकका कहना है कि एकता बनाये रखने के लिए मुझे अन्ततक प्रयत्न करते रहना चाहिए। दूसरी विचारधाराके लोग मानते हैं कि मुझे बातचीत एकदम समाप्त कर देनी चाहिए, क्योंकि यह सर्वथा निरर्थक प्रयत्न है, और इसके बजाय इस्तीफा दे देना चाहिए। दूसरी विचारधाराके लोग त्यागपत्रके लिए बहुत जोर डालते रहे हैं, पर मैं इसका प्रतिरोध कर रहा हूँ। मैं चाहता हूँ, बादमें मेरे मनमें कोई ऐसा क्लेश न रह जाये कि अपने दलकी एकता कायम रखनेके लिए मैंने अन्ततक प्रयास नही किया।

इसके सिवाय, वर्त्तमान स्थितिमें मेरे त्यागपत्रका क्या अर्थ होगा और उसके क्या परिणाम होंगे, यह मैं जानता हूँ। यहाँ मैं इतना और बताना चाहता हूँ कि पहली विचारधाराके लोग — अर्थात् जो समझौतेके लिए हर सम्भव प्रयत्न करवाना चाहते हैं — मानते हैं कि आप स्थितिको सर्वथा निष्पक्ष दृष्टिसे देख सकेंगे और इस तरह दोनों पक्षोंको एक कर सकेंगे।

अब मुझे स्पष्ट कर देना चाहिए कि यह मैं क्यों कहता हूँ कि यदि आप ऐसा संकेत दें कि पन्त प्रस्ताव अविश्वासका द्योतक है तो मैं स्वयं ही त्यागपत्र दे दूँगा। आप यह अच्छी तरहसे जानते हैं कि अन्य कई देशवासियोंके विपरीत मैं, आप जो-कुछ कहते हैं या जो मानते हैं, उसका आँख मूँदकर अनुसरण नहीं करता। फिर आपके यह संकेत देने पर कि प्रस्ताव अविश्वासका द्योतक है, मुझे त्यागपत्र क्यों दे देना चाहिए? इसका कारण बिलकुल साफ है। यदि आज भारतकी सबसे बड़ी हस्ती यह मानती हो — चाहे वह यह बात खुलकर न कहे — कि इस प्रस्तावके पास होते ही मुझे अपने-आप त्यागपत्र दे देना चाहिए था, तो भी मैं अपने पदपर बना रहूँ, यह बात मुझे अपने अन्तःकरणके लिए घोर त्रासदायी लगती है। इस रुखके पीछे आपके प्रति और इस मामलेमें आपकी रायके प्रति मेरे व्यक्तिगत लिहाज की शायद अधिक प्रेरणा है।

जैसा कि कुछ समाचारपत्रोंने संकेत दिया है, शायद आपका कुछ ऐसा विचार है कि पुराने महारथियोंको फिरसे पदारूढ़ कर देना चहिए। ऐसी स्थितिमें मैं निवेदन करूँगा कि आप फिरसे सक्रिय राजनीतिमें आ जायें, कांग्रेसके चवन्निया सदस्य बन जायें और कार्य-समितिका भार प्रत्यक्ष रूपसे सँभाल लें। किसीका दिल दुखाने का कोई मंशा रखे बिना मैं एक बात कहना चाहूँगा, जिसके लिए आप भी क्षमा करेंगे। मतलब यह कि आपके और आपके लेफ्टिनेंटोंके बीच — चुनिन्दा लेफ्टिनेंटोंके बीच भी — भारी अन्तर है। कुछ ऐसे लोग हैं जो आपके लिए कुछ भी करने को तैयार हो जायेंगे — लेकिन आपके लेफ्टिनेंटोंके लिए नहीं। क्या आप मेरी इस बातपर विश्वास करेंगे कि अध्यक्षीय चुनावके समय कई प्रान्तोंमें बहुत-से गांधीवादियोंने पुराने महारथियोके निर्देशके विरुद्ध मुझे अपने मत दिये? यदि आपका व्यक्तित्व बीचमें न लाया जाये तो मुझे उनका सहयोग मिलता रहेगा — पुराने महारथियोंके विरोध के बावजूद।

त्रिपुरीमें पुराने महारथी बड़ी चतुराईसे खुद तो सामनेसे हट गये और मुझे आपसे भिड़ा दिया। (लेकिन मेरे और आपके बीच कोई झगड़ा था ही नही।) बादमें उन्होंने कहा कि त्रिपुरीमें उन लोगोंकी महान् विजय और मेरी पराजय हुई। सच तो यह है कि वह न उनकी विजय थी और न मेरी पराजय। वह तो आपकी विजय थी (आपसे संघर्षका कोई कारण न होते हुए भी), लेकिन वह एक सर्वनाशी विजय थी — किसी हदतक प्रतिष्ठाकी बलि चढ़ाकर प्राप्त की गई विजय।

लेकिन यह तो विषयान्तर होता जा रहा है। मैं आपसे अपील करना चाहता था कि आप आगे आकर सीधे और खुलेआम कांग्रेसका सूत्र-संचालन करें। इससे

बात आसान हो जायेगी। पुराने महारथियोंके प्रति व्याप्त अधिकांश विरोध — उनके प्रति विरोध तो है ही — अपने-आप समाप्त हो जायेगा।

यदि आप ऐसा नही कर सकते तो एक दूसरा सुझाव है। जैसी कि हम माँग करते रहे है, स्वतन्त्रताके लिए राष्ट्रीय संघर्ष फिरसे शुरू कर दीजिए, और इसका श्रीगणेश ब्रिटिश सरकारको अन्तिम चेतावनी देकर कीजिए। ऐसी स्थितिमें यदि आपकी इच्छा होगी तो हम सब प्रसन्नतापूर्वक अपने-अपने पदोसे अलग हो जायेंगे। हम इन पदोंको आप जिनको चाहेंगे या जिनपर भी विश्वास करेंगे, उनको खुशीसे सौंप देंगे। लेकिन सिर्फ एक शर्तपर — कि स्वतन्त्रताके लिए संघर्ष फिरसे आरम्भ किया जाये। मुझ-जैसे लोग ऐसा मानते है कि आज जैसा अवसर हमें मिला है वैसा किसी राष्ट्रके जीवनमें विरल ही मिलता है। और इसी कारण हम कोई भी ऐसा बलिदान करनेको तैयार है जिससे संघर्ष फिरसे आरम्भ किया जा सके।

यदि आप अन्ततक इसी बातपर आग्रह रखेंगे कि मिली-जुली कार्य-समिति अव्यावहारिक है और हमारे पास समान विचारोवाले लोगोंसे बनी कार्य-समितिके सिवाय दूसरा कोई विकल्प नही है और यदि आप मुझे मेरी इच्छानुसार कार्य-समिति बनाने देना चाहते हो तो मै आपसे उत्कटतापूर्वक अनुरोध करूँगा कि कांग्रेसके अगले अधिवेशनतक के लिए मुझपर पूरा भरोसा रखें। यदि इस बीच हम लोग अपनी सेवा और कष्ट-सहनके बलपर कसौटीपर खरे नही उतरे तो हम कांग्रेसकी निगाहमें गिर जायेंगे, और तब हमें पद-च्युत कर देना स्वाभाविक और उचित ही होगा। वर्त्तमान परिस्थितियोंमें आपका विश्वास प्राप्त करनेका मतलब होगा अ० भा० का० कमेटीका विश्वास प्राप्त कर लेना। यदि आप हमें अपना विश्वास नहीं देते — लेकिन साथ ही हमसे समान विचारोवाले लोगोकी कार्य-समिति बनानेको कहते है — तो इसका मतलब यह होगा कि आपने पन्त प्रस्तावपर अमल नही किया।

मै एक बार फिर आपसे यह बतानेको कहूँगा कि मिली-जुली कार्य-समितिके प्रति आपका विरोध सैद्धान्तिक आधारपर है या आप यह चाहते है कि अपने २५ मार्चके पत्रमें मैने कार्य-समितिमें पुराने महारथियोको जितना प्रतिनिधित्व देनेका प्रस्ताव किया था, उन्हें उससे अधिक प्रतिनिधित्व दिया जाये।

पत्र समाप्त करने से पहले मै एक-दो व्यक्तिगत बातोंका उल्लेख करना चाहूँगा। आपने अपने एक पत्रमें आशा व्यक्त की है कि चाहे कुछ भी हो, "हमारे निजी सम्बन्धोंपर कोई आँच नही आयेगी।" मैं भी हृदयसे यही कामना करता हूँ। इस सन्दर्भमें मै यह कहने की इजाजत चाहूँगा कि जीवनमें मैंने यदि किसी चीजपर गर्व किया है तो वह यह है कि मै एक सज्जनका पुत्र हूँ और इसलिए खुद भी सज्जन हूँ। देशबन्धु दास हमसे अकसर कहा करते थे, "जीवन राजनीतिसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।" मैंने उनसे यह सबक सीखा है। जिस दिन मुझे ऐसा लगेगा कि राजनीतिमें रहने से मैं सज्जनताके उन आदर्शोंसे च्युत हो जाऊँगा, जिनकी छाप शैशवावस्थासे ही मेरे मनपर पड़ी है और जिन्हें मै अपनी रगोंमें महसूस करता हूँ, उसी दिन मैं राजनीतिसे

अलग हो जाऊँगा। एक व्यक्तिके रूपमें आप मुझे कैसा मानते हैं, यह जानने का कोई साधन मेरे पास नहीं है। एक तरहसे देखें तो आपने मुझे बहुत कम देखा-जाना है। और फिर मेरे राजनीतिक विरोधी मेरे खिलाफ बहुत-से किस्से आपको बताते रहे हैं। हालके महीनोंमें मुझे मालूम हुआ है कि पिछले कुछ महीनोंसे मेरे खिलाफ लोग कानोंकान एक सूक्ष्म किन्तु दुष्टतापूर्ण प्रचार करते रहे हैं। मैं यह बात आपको और भी पहले बता देता, पर तब मैं इस बातके ठोस प्रमाण पर्याप्त मात्रामें नहीं प्राप्त कर सका था कि मेरे खिलाफ ठीक-ठीक क्या कहा जा रहा है और कौन लोग यह सब कह रहे हैं। अभी थोड़े दिन हुए मुझे यह तो मालूम हो गया है कि मेरे बारेमें क्या कहा जा रहा है, लेकिन ऐसा प्रचार करनेवाले कौन हैं, इससे मैं अब भी अनभिज्ञ हूँ।

एक बार फिर मैं जो कह रहा था उससे हट गया हूँ। अपने एक पत्रमें आपने कामना की है कि मैं जो-कुछ भी करूँगा, उसमें "भगवान् तुम्हारा मार्ग-दर्शन करे।" महात्माजी, मेरी बातका विश्वास कीजिए कि पिछले दिनों मैं निरन्तर ईश्वरसे यही प्रार्थना करता रहा हूँ कि मुझे ऐसी राह दिखाये जो मेरे देश और मेरे देशकी स्वतन्त्रताके लिए सर्वोत्तम हो। मैंने प्रभुसे ऐसी शक्ति और प्रेरणा देने की प्रार्थना की है कि यदि आवश्यकता पड़े और प्रसंग आये तो मैं अपने-आपको पूरी तरह मिटा दूँ। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि कोई राष्ट्र तभी जीवित रह सकता है जब उसके सदस्य आवश्यकता पड़ने पर उसकी खातिर जान दे देने को तैयार रहें। यह नैतिक (या आध्यात्मिक) हाराकीरी (आत्मघात) कोई आसान चीज नहीं है। लेकिन प्रभुसे यही प्रार्थना है कि जब भी देशके हितमें वह आवश्यक हो जाये तब वैसा करने की वह मुझे शक्ति दे।

आशा है, आपके स्वास्थ्यमें सुधार जारी रहेगा। मेरा स्वास्थ्य धीरे-धीरे सुधरता जा रहा है।

सादर प्रणामपूर्वक,

स्नेहाधीन,
सुभाष

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-५-१९३९

परिशिष्ट ९

सत्याग्रहका मार्ग[1]

मुसलमान भाइयोंके साथ पाँच दिनतक, अक्सर आधी-आधी राततक, गांधीजी की हार्दिक बातचीत चलती रही और इसी तरह भायातोंसे भी उनकी बातचीत हुई, हालांकि उतनी लम्बी नहीं। किन्तु वे उन्हें अपनी बात नहीं समझा पाये, और अन्तमें ठाकुर साहबके नाम उस पत्रपर[2] उन्होंने अपने हस्ताक्षर कर दिये जिसमें सरदारके सात प्रतिनिधियोंके नाम पेश किये गये हैं। हस्ताक्षर करते समय उनका हाथ काँप गया। तब उन्होंने सपनेमें भी नहीं सोचा था कि उस पत्रको भेजने के छत्तीस घंटेके अन्दर ईश्वर और अहिंसामें उनकी आस्थाको कसौटीपर चढ़ना पड़ेगा। अपने शान्ति-स्थापनाके कार्यके सिलसिलेमें गांधीजी जब यहाँ पहुँचे, तभीसे उन्होंने राष्ट्रीय शालाके प्रांगणमें प्रतिदिन सायंकाल सामूहिक प्रार्थना करने का नियम बना लिया था। यह नियम उपवासके दौरान भी चलता रहा।

इसी १६ तारीखकी शामको गांधीजी को बताया गया कि राजकोटके भायात और मुसलमान शामकी प्रार्थनाके अवसरपर काले झण्डोंका प्रदर्शन करनेवाले हैं। यह भी बताया गया कि इस मौकेके लिए जूतोंका एक हार भी तैयार किया गया है। गांधीजी ने खबर लानेवालों के भयको मजाकमें उड़ा दिया। उनका कहना था कि मुसलमान और भायात नेताओंपर, जिनसे पिछले पाँच दिनोंके दौरान उनकी काफी मित्रतापूर्ण बातचीत होती रही, उन्हें पूरा भरोसा था। लेकिन यदि बुरा होना ही था तो वे उसके लिए भी तैयार थे। तदनुसार उन्होंने कड़ा निर्देश दिया कि हर व्यक्तिको — चाहे उसका मंशा कुछ भी हो — उनके पास बेरोक-टोक आने दिया जाये।

रोजकी तरह गांधीजी मोटर गाड़ीसे राष्ट्रीय शालाके प्रार्थना-प्रांगणमें पहुँचे। लगभग उसी समय करीब ६०० प्रदर्शनकारी प्रार्थना-स्थलपर काले झण्डे और नारे लिखी हुई तख्तियाँ लिये हुए पहुँची। उनमें से कुछ नारे घोर आपत्ति-जनक थे। ये प्रदर्शनकारी मुख्य सड़क और प्रार्थना मैदानके बीचकी बाड़को घेरकर खड़े थे। सरदार यह प्रदर्शन नहीं देख पाये, क्योंकि वे अमरेली गये हुए थे।

प्रार्थनाके लिए बैठने से पूर्व गांधीजी ने अपनी आदतके अनुसार प्रदर्शनकारियोंको भी नमस्कार किया। प्रार्थना रोजकी तरह चली। लेकिन उसके दौरान प्रदर्शनकारी बहुत अशोभनीय ढंगसे नारे लगाते रहे और चीखते-चिल्लाते रहे। अभी दो-चार

१. देखिए पृ० १६०-१।
२. देखिए पृ० १५१-२।

रोज पहले जिन भायात और मुसलमान प्रतिनिधियोंने उनके साथ बैठकर बातचीत की थी उन्हींके सामने प्रार्थनाके समय ऐसा उपद्रव किया गया, इस बातसे गांधीजी को "अत्यधिक गहरी व्यथा" पहुँची। प्रार्थना समाप्त होते ही वे जाने के लिए उठे। अबतक प्रार्थना-स्थलतक पहुँचने के सँकरे रास्तेके प्रवेश-द्वारसे होकर प्रदर्शनकारियोंका रेला अन्दर आने लगा था। गांधीजी ने रोजकी तरह कारसे जाने के बजाय पैदल ही भीड़में से गुजरने का फैसला किया, ताकि प्रदर्शनकारियोंको अपनी बात कहने या वे उनके साथ जो करना चाहें वह करने का पूरा मौका मिल जाये। प्रवेश-द्वारपर भीड़ इतनी थी कि आगे बढ़ना सम्भव नही था। उस संकरे रास्तेके दोनों ओर पीछेसे प्रदर्शनकारियोंकी धक्का-मुक्की बढ़ती जा रही थी। शोर-गुलके कारण स्थिति और खराब हो गई थी। मित्रोंने गांधीजी के चारों ओर घेरा बनाकर उनकी सुरक्षाकी व्यवस्था करनी चाही। लेकिन गांधीजी ने उन्हें इशारेसे अलग कर दिया और कहा, "मै उन लोगोंके बीच अकेला जाऊँगा या फिर यही बैठ जाना पसन्द करूँगा।" अचानक उनकी कमरके एक हिस्सेमें बहुत जोरका दर्द उठा और उन्हें लगा कि वे बेहोश हो जायेंगे। गांधीजी को जब-कभी गहरा मानसिक आघात लगता है तब उन्हें ऐसी ही पीड़ा उभर आती है। ऐसा बहुत दिनोंसे होता आ रहा है। धक्का-मुक्की करती इस भीड़के बीच गांधीजी कुछ देरतक अपनी आँखें बन्द करके अपनी लाठीके सहारे मौन और निश्चल खड़े रहे, और उन्होंने मूक प्रार्थना करके शान्ति प्राप्त करने का प्रयत्न किया। ऐसे अवसरोंपर यह उपाय सदा उनके काम आया है। दर्द ठीक होते ही गांधीजी ने प्रदर्शनकारियोंके बीचसे अकेले निकलने का अपना इरादा फिर दुहराया। उन्होंने सामने खड़े एक भायातको, जिसके बारेमें उन्हें बादमे पता चला कि वह सादी पोशाकमें एक पुलिस-अधिकारी भी था, बुलाकर कहा, "मैं अपने सहयोगियोंके संरक्षणमें नही, केवल आपके संरक्षणमें जाना चाहता हूँ।" कुछ भायातोंने उनकी अवस्था लक्ष्य कर ली थी। अब उन्होंने बाकी लोगोंसे गांधीजी के निकलने के लिए रास्ता बनाने को कहा। गांधीजी उक्त भायात मित्र के कंधेका सहारा लेकर इन्तजार करती कारतक पहुँचे। जब गाड़ी चली तो गांधीजीने कहा, "बिना किसी प्रतिरोधके अपना सिर 'शत्रु' की गोदमें डाल देना और वह जीवित रखे या मार डाले, यह बात उसीकी इच्छापर छोड़ देना — यही सत्याग्रहका मार्ग है। यह अचूक उपाय है, और मेरे पचास वर्षके विविध अनुभवोंके दौरान इसने मुझे कभी निराश नही किया है।"

इस घटनाके थोड़ी देर बाद सिविल स्टेशनसे दो मुसलमान प्रतिनिधि, जो मुलाकातका समय पहले ही ले चुके थे, गांधीजी से मिलने आये। उन्होंने शामकी प्रार्थना-सभामें जो-कुछ हुआ उसके सन्दर्भमें गांधीजी से कहा, "अपने-आपको इस तरह खतरेमें डालकर आपने खुदके साथ और हमारे साथ न्याय नही किया। अनियन्त्रित भीड़में कुछ भी हो सकता है।"

गांधीजी ने जवाब देते हुए बताया कि ऐसी जोखिमें उठाना उनके जीवनका अभिन्न अंग रहा है। उन्होंने कहा कि दक्षिण आफ्रिका और भारतको मिलाकर

कमसे-कम आधा दर्जन अवसर ऐसे आ चुके होंगे जब उन्होंने इस तरह अपने जीवनको खतरेमें डाला होगा, लेकिन इसपर पश्चात्ताप करने का प्रसंग उनके सामने कभी नहीं आया। ऐसे सभी मामलोंके आक्रमणकारी या सम्भाव्य आक्रमणकारी उनके मित्र बन गये। अन्तमें गांधीजी ने कहा, "लेकिन यदि अनहोनी हो ही जाती है तो एक सत्याग्रहीके लिए इससे बढ़कर और क्या हो सकता है कि वह उन लोगोंके लिए हृदयसे प्रार्थना करते हुए मृत्यु प्राप्त करे जिनकी वह सेवा करना चाहता है लेकिन जो उसे भ्रमवश अपना 'शत्रु' मानते हैं?"

प्यारेलाल

[अंग्रेजीसे]
राजकोट, १८ अप्रैल, १९३९
हरिजन, २२-४-१९३९

परिशिष्ट १०

रणजितसिंहका पत्र[1]

१७ अप्रैल, १९३९

प्रिय महात्माजी,

इसी १७की सुबह लिखा हुआ आपका पत्र मिला। पत्रसे मालूम हुआ कि आपने राजकोटके भायातों और गरासियोंकी समिति द्वारा जारी किया गया परचा देखा है और वचन-भंग-सम्बन्धी आरोपोंको आपने बहुत गम्भीर माना है।

आपने इसका हल यह सुझाया है कि ऐसे सभी मामलोंका निर्णय किसी पंचको सौंप दिया जाना चाहिए। इस सिलसिलेमें मैं यह सलाह देना चाहूँगा कि आपका ११ मार्चका पत्र व्याख्याके लिए सर मॉरिस ग्वायरको सौंप दिया जाना चाहिए। यदि इस मामलेमें आप पंच-फैसलेके लिए राजी हों तो मुझे तो पंचका काम करने के लिए सर मॉरिस ग्वायरसे अधिक उपयुक्त व्यक्ति और कोई नहीं सूझता। यदि आपको मेरा प्रस्ताव मान्य हो तो मैं इस बारेमें जो भी प्रबन्ध करना होगा, सब करके आपको जल्दीसे-जल्दी सूचित करूँगा।

अगर आपने जलूसके नेताओंको कारके बजाय पैदल जाने का अपना उद्देश्य पहलेसे बता दिया होता तो वे जरूर आपकी बात सुनते। इस बारेमें आपको रत्ती-भर भी सन्देह नहीं करना चाहिए। इसके विपरीत, हमारी सभी प्रवृत्तियाँ

१. देखिए पृ० १६६। यह "द करेक्ट रेंडरिंग इन इंग्लिश ऑफ द कॉरस्पॉन्डेंस" (पत्र-व्यवहारके सही अंग्रेजी रूपान्तरण) के रूपमें प्रकाशित हुआ था। सम्बोधन और हस्ताक्षर हिन्दुस्तान टाइम्ससे लिये गये हैं।

अहिंसात्मक और शान्तिपूर्ण हैं और सदा रहेंगी। यदि किसीने आपके मनमें सन्देह पैदा कर दिया है कि हम लोग आपको किसी भी तरह शारीरिक क्षति पहुँचाने की बात सोचते हैं तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ, इस बातका कोई सिर-पैर ही नहीं है। मैं तो इससे भी आगे जाकर कहना चाहता हूँ कि यदि आप या और किसीके मनमें इस तरहकी धारणा हो तो आपके पूरे राजकोट-प्रवासके दौरान भायातों और गरासियोंमें से पचास या पच्चीस स्वयंसेवक आपके साथ रहेंगे।

राजकोटके भायातोंके परचेमें प्रजा-परिषद्की जगह कांग्रेसका उल्लेख लिखाई की चूक-भर है। जहाँ-कहीं भी "कांग्रेस" शब्दका उल्लेख है, वह प्रजा-परिषद्के लिए ही किया गया है। आपने जो छपी हुई अपील भेजी है वह हमें मिल गई है।

आपका,
रणजितसिंह

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १९-४-१९३९; हिन्दुस्तान टाइम्स, १९-४-१९३९ भी

परिशिष्ट ११

लॉर्ड लिनलिथगोका पत्र[1]

वाइसरीगल लॉज, शिमला
१५ मई, १९३९

प्रिय श्री गांधी,

आपके ९ मईके मैत्रीपूर्ण पत्रके लिए धन्यवाद। इस पत्रकी कद्र मेरे लिए इस कारणसे और भी बढ़ जाती है कि मैं यह महसूस करता हूँ कि आप कितने दबावके बीच काम कर रहे हैं; और फिर आपने यह पत्र रेलगाड़ी से लिखा है। मैं आपको इसलिए भी धन्यवाद देना चाहता हूँ कि मेरे छुट्टीपर रहते आपने अपनी हदतक तो मुझे काम-काजसे मुक्त रखा।

२. आपने जिन तीन समस्याओंका जिक्र किया है उनके सम्बन्धमें लिखी आपकी बातें मैं ध्यानसे पढ़ गया हूँ, और मेरा खयाल है, शिष्टताका तकाजा है कि अपनी समझके अनुसार वर्तमान परिस्थितिके बारेमें आपसे दो शब्द कहूँ, हालांकि मैं आपको सिर्फ अपना दृष्टिकोण बताने के लिए ऐसा कर रहा हूँ, और मेरा यह आशय बिलकुल नहीं है कि आप मेरी बातोंपर मुझे अपनी राय लिखें, और न मैं यही समझता हूँ कि इन मामलोंके बारेमें लम्बे पत्र-व्यवहारसे कोई प्रयोजन सिद्ध होगा।

१. देखिए पृ० २६९-७१ और ३२२-४।

३. तालचरमें जो-कुछ हो रहा है, उसे मैं ध्यानपूर्वक देखता रहा हूँ। मुझे पूरा विश्वास है कि अंगुलके शरणार्थियोसे भेंटके समय सहायक राजनीतिक एजेन्टने स्पष्ट कर दिया था कि वह किसी तरहका वादा करने या कोई समझौता करने की स्थितिमें नहीं है। लेकिन यह तो बीती बात हो चुकी है, और जैसा कि आपने सुना होगा, राजा साहबने अभी हालमें एक घोषणा की थी। उसे देखकर मुझे लगा था कि इससे शरणार्थियोंकी शेष सभी महत्त्वपूर्ण शिकायतें दूर हो जायेंगी। इसका वाछित परिणाम नही हुआ, इससे जितने निराश आप है उतना ही मै भी हूँ। लेकिन आगे और भी छानबीन शुरू कर दी गई है, और मुझे उम्मीद है कि समस्या शीघ्र ही हल हो जायेगी।

४. जहाँतक जयपुरका सम्बन्ध है, आपने सुना ही होगा कि हालमें ही जयपुरके अधिकारियों और सेठ जमनालाल बजाजके बीच बातचीत हुई है, और इस मामलेमें भी निकट भविष्यमें कठिनाइयोंका उपयुक्त हल निकल आने की मुझे आशा है।

५. राजकोटमें आपको जिन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ रहा है उनके बारेमें जानकर मुझे बहुत दुःख हुआ है। विभिन्न वर्गोंके परस्पर-विरोधी हितोंके कारण यह मामला गम्भीर रूपसे उलझ गया प्रतीत होता है। लेकिन मै उम्मीद करता हूँ कि किसी और समाधानके अभावमें समितिकी नियुक्तिमें खास देर नही की जायेगी। मुझे मालूम हुआ है कि न्यायिक आयुक्तने इस बातका फैसला अब कर दिया है कि सरदार द्वारा नामजद अमुक सदस्य राज्यकी प्रजा है या नही, और केवल एक ही प्रारम्भिक मुद्दा तय करने को रह गया है कि आपने मुसलमानों और भायातोंको जो आश्वासन दिये वे सशर्त थे या बिना शर्त। मुझे मालूम हुआ है कि इस बात पर सहमति हो चुकी है कि इस मामलेको स्वतन्त्र न्यायिक अधिकरणको सौंप दिया जाये और अब केवल तय यह होना है कि वह न्यायिक अधिकरण कौन हो और उसके विचारार्थ सौंपे जानेवाले मामलेकी ठीक-ठीक शब्दावली क्या हो। कहने की जरूरत नही कि मै राजकोटकी घटनाओंपर पूरा ध्यान रखूँगा।

६. आपने जो सहानुभूतिपूर्ण बातें कही है, उनका मैंने तनिक भी बुरा नहीं माना है, और हम दोनोंकी अपनी-अपनी कठिनाइयाँ तो है ही। लेकिन यह कहना सर्वथा उचित होगा कि राजनीतिक विभाग मेरी हिदायतोंका वफादारीके साथ पालन करेगा, इसमें मुझे कोई शका नही है।

शुभेच्छापूर्वक,

हृदयसे आपका,
लिनलिथगो

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे : लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

परिशिष्ट १२

शरतचन्द्र बोसका पत्र[1]

३१ मई, १९३९

प्रिय महात्माजी,

समाचारपत्रोंसे शायद आपको मालूम हुआ होगा कि मुझे और मेरे सहयोगी श्रीयुत ललितचन्द्र दासको विवश होकर कैदी रिहाई सलाहकार समितिसे त्यागपत्र देना पड़ा। गृह-मन्त्रीको हमने इसका जो कारण बताया वह यह है कि सजायाफ्ता कैदियोंकी रिहाईके प्रश्नपर समितिके अधिकांश सदस्योंसे हमारे विचार बुनियादी तौरपर भिन्न हैं। पिछले कुछ सप्ताहोंके दौरान — और खासकर ६, ७, ८ और ९ मईको कुछ कैदियोंके साथ मुलाकातके बाद हमारे बीच हुई चर्चासे — यह बात हमारे सामने स्पष्ट हो गई। उन चर्चाओंसे पता चला कि अपेक्षाकृत गम्भीर अपराधोंके लिए दण्डित कैदियोंके प्रति समितिके ज्यादातर सदस्योंका रुख बहुत कड़ा है, और वे लोग न तो आपके १३ अप्रैल, १९३८ के पत्रमें दिये गये आश्वासनके आधारपर और न कैदियों द्वारा, आपसे भेंटके समय उन्होंने आपको जो वचन दिया था, उसके दोहराये जाने के आधारपर ही उनकी रिहाईके लिए तैयार हैं। यह बात हमें बिलकुल स्पष्ट हो गई कि अपनी सजाकी मियाद पूरी या लगभग पूरी किये बिना उन कैदियोंके छूटने की कोई सम्भावना नही है। शेष कैदियोंके बारेमें यह स्पष्ट था कि अधिकांश सदस्य कुछकी सजाओंकी मियाद कम करने तथा कुछके सशर्त रिहा किये जाने या निश्चित वचन देने पर रिहा किये जाने की सिफारिश करने से अधिक कुछ भी करने को तैयार नही हैं।

गृह-मन्त्रीको हमने अपने त्यागपत्रके कारण सामान्य रीतिसे ही बताये। लेकिन लगता है, मुझे आपको सब-कुछ और विस्तारसे बताना चाहिए, और समितिमें रहते हुए हमने क्या-क्या किया, उसका ब्योरा भी संक्षेपमें देना चाहिए।

शायद आपको याद होगा कि जब राजनीतिक कैदियोंकी रिहाईके लिए सलाहकार समिति बनाने का प्रस्ताव रखा गया था और सर नाजिमुद्दीनने कांग्रेस पार्टीके सदस्योंके नाम सुझाने के लिए मुझसे अनुरोध किया था, तबतक हमें क्या करना है, इस बारेमें मैं कोई निश्चित राय नहीं बना पाया था। मैंने सुभाषसे कहा कि आपसे सलाह ले, और जब वह सितम्बरके अन्तमें या अक्तूबरके आरम्भमें आपसे दिल्लीमें मिला था तब उसने आपसे इस बारेमें बात की थी। आपकी राय थी कि मुझे समितिकी सदस्यता स्वीकार कर लेनी चाहिए। तदनुसार, मैंने सर नाजि-

1. देखिए पृ० ३७५-६।

मुद्दीनको राजनीतिक कैदियोंकी रिहाईके प्रश्नपर कांग्रेस पार्टीकी स्थितिसे पूरी तरह अवगत करा दिया था और यह भी बतला दिया था कि हम लोग समितिमें इस आशासे काम करनेको तैयार हैं कि सरकार जल्दी ही कैदियोंको रिहा कर देगी। २३ अक्तूबर, १९३८ को मैंने सर नाजिमुद्दीनको जो पत्र लिखा था, उसकी नकल निम्न प्रकार है:

> श्री आर० एच० हॅचिन्सने मेरे नाम अपने २६ सितम्बरके अर्ध-सरकारी पत्र, सं० ३८१० में आपकी ओरसे मुझसे कहा है कि मैं कांग्रेस पार्टीकी ओर से बंगाल विधान-सभा तथा बंगाल विधान-परिषद्के एक-एक सदस्यका नाम सुझाऊँ, जिन्हें सरकार राजनीतिक कैदियोंकी रिहाईसे सम्बन्धित सलाहकार समितिमें शामिल होनेको आमन्त्रित कर सकती है।
>
> महात्मा गांधी और कांग्रेस अध्यक्षसे बातचीतके बाद आप यह अच्छी तरह जान चुके हैं कि कांग्रेस पार्टी राजनीतिक कैदियोंके बारेमें सरकारकी नीतिमें न तो शरीक हो सकती है और न उससे सहमत ही हो सकती है। आपको लिखे १३ सितम्बरके पत्रमें[1] महात्मा गांधीने भी आपको यह साफ-साफ बता दिया है।
>
> लेकिन साथ ही मुझे ऐसा भी लगता है कि इन कैदियोंकी रिहाईके लिए किये जा रहे किसी भी प्रयत्नमें हमें बाधक नहीं बनना चाहिए। आपने जो सहायता माँगी है वह मैं इसी भावनाके वशीभूत होकर दे रहा हूँ। मुझे पूरी आशा है कि सरकार सभी राजनीतिक बन्दियोको शीघ्रातिशीघ्र रिहा कर देने का रास्ता निकालेगी।
>
> मैं विधान-परिषद्में कांग्रेस पार्टीकी ओर से श्रीयुत ललितचन्द्र दास, एम० एल० सी०का नाम सुझाता हूँ। जहाँतक कांग्रेस विधान-सभाई दलका सम्बन्ध है, उसका प्रतिनिधित्व करनेको मैं खुद तैयार हूँ। आप श्रीयुत ललितचन्द्र दासको और मुझे समितिमें शामिल होनेका निमन्त्रण भेज सकते हैं।

इसके बाद समितिने काम शुरू किया और हमने उसमें कुछ प्रगति भी की। जैसा कि स्वाभाविक था, आपेक्षाकृत कम कठिन मामले पहले पेश किये गये और इसलिए हम अपने आपत्ति या संकोच करनेवाले सहयोगियोंको अपनी बात समझाकर मनवाने में सफल हो गये। इसके फलस्वरूप कैदियोंकी बिना शर्त रिहाईकी सिफारिशें सरकारको भेजी गईं, और ११२ कैदियोंको, जिनमें सभी महिला कैदी भी शामिल थीं, रिहा कर दिया गया। लेकिन जब हम और आगे बढ़े तो मतभेद स्पष्ट हो गया। यह साफ हो गया कि सरकार सभी मामलोंमें समितिकी सिफारिशें मंजूर करनेको तैयार नहीं है। स्वयं अध्यक्षके (जो निरन्तर जरूरतसे कम नहीं, बल्कि ज्यादा ही सावधानी बरत रहे थे) पहल करने पर जो सर्वसम्मत सिफारिश पेश की गई उसे समितिके पुनर्विचारके लिए वापस भेज दिया गया। मेरे कानमें यह बात भी पड़ी कि कुछ मामलोंमें सरकार शर्तों (जिनकी सिफारिश समितिने नहीं

[1] देखिए खण्ड ६७, पृ० ३६७-९।

की थी) लागू कर रही है, हालाँकि यह बात सुविदित थी कि कैदियोंने जो वचन या आश्वासन आपको दिये उनके अलावा वे और कोई शर्तें मानने या कोई आश्वासन देने को तैयार नहीं हैं।

सरकारके इस रुखकी समितिके सदस्योंपर प्रतिक्रिया हुई। एक तो कैदियोंके रुखके बारेमें सन्तुष्ट होने पर भी वे कोई सिफारिश करने में झिझकने लगे। अन्तर-प्रान्तीय षड्यन्त्रके सिलसिलेमें दण्डित श्रीयुत पूर्णानन्द दासगुप्तका मामला इसका एक अच्छा उदाहरण है। समितिके सदस्योंकी आम राय थी कि उन्होंने आतंकवादका परित्याग करने के बारेमें काफी सन्तोषजनक बयान दिया है। तथापि समितिके बहुमतने उनकी रिहाईके लिए आवश्यक सिफारिश करनेकी हिम्मत नहीं की, बल्कि समितिके सरकारी सदस्यका यह सुझाव स्वीकार कर लिया कि सरकारसे उनके बारेमें और भी जानकारी मँगवाई जाये। दूसरे, इस बातपर आग्रह रखा जा रहा था कि हर कैदी एक घोषणा-पत्रपर हस्ताक्षर करे। इसपर हस्ताक्षर करने का मतलब लगभग उचित आचरण करनेका वचन देना ही था। अधिकतर कैदी आपके सामने की गई घोषणाको तो दुहराने के लिए तैयार थे, और वास्तवमें उन्होंने उसे दुहराया भी, लेकिन नये सिरेसे अलग-अलग वचन देनेकी बात उन्हें बहुत नागवार गुजरी और वे उसके लिए तैयार नहीं थे। मेरा और ललित बाबूका विचार था कि आपके सामने दिये गये अपने बयानोंमें कैदियोंने काफी-कुछ कह दिया है, और उन बयानोंपर कायम रहनेका इरादा फिरसे जाहिर करके उन्होंने अपने हृदय-परिवर्तनका ठीक संकेत दे दिया है। उनसे मिलने के बाद मैंने समितिसे कहा कि मुझे पूरा यकीन है कि उन्होंने सदाके लिए हिंसाका त्याग कर दिया है और उन सबको रिहा कर देना चाहिए। लेकिन समितिके अधिकतर सदस्य मेरे विचारसे सहमत नहीं थे। वे उस तरहकी घोषणाको सन्तोषजनक मानने को तैयार नहीं थे।

कैदियोंसे की जानेवाली मुलाकातों और उनसे अपेक्षित आश्वासनोंके बारेमें भी मैंने कैदियोंमें बढ़ती हुई क्षोभकी भावनाको लक्ष्य किया। क्षोभ और अधैर्य न्यूनाधिक मात्रामें आरम्भसे ही विद्यमान थे। लेकिन हमने स्थितिको चतुराईसे सँभाला और इस भावनाको अपने काममें बाधक नहीं बनने दिया। मगर जब कैदियोंने देखाकि उनसे बहुत कठोर किस्मकी गारंटी माँगी जा रही है तब उनकी अनिच्छा इतनी बढ़ गई कि उसपर काबू पाना हमारे लिए असम्भव हो गया। इन्हीं परि-स्थितियोंमें, समितिकी कार्यवाहीके प्रति उनका विरोध उभरकर सामने आ गया, और हमें पूरा यकीन हो गया कि देर-सवेर उसके काममें गतिरोध आना ही है।

समितिके सदस्योंके रूपमें हमने जो-कुछ देखा-सोचा, संक्षेपमें वह यही है। इसके अतिरिक्त, बाकी सजायाफ्ता कैदियोंके बारेमें सरकारके आम रुखका भी विचार करना था। हमें स्पष्ट हो गया कि वातावरण चाहे जितना अनुकूल हो, सरकार सभी कैदियोंको रिहा करनेको तैयार नहीं है। इन परिस्थितियोंमें मुझे यह ठीक नहीं लगा कि हम समितिके सदस्य बने रहें।

हमारे त्यागपत्रके बाद सरकारने एक विज्ञप्ति जारी की, जिसकी नकल निम्न प्रकार है:

आतंकवादी कैदियोंकी रिहाईके मामलेमें सलाह देने के लिए नियुक्त समितिने १८३ मामलोंपर विचार किया। समितिकी सिफारिशपर सरकारने ११२ मामलोंके सम्बन्धमें आदेश जारी कर दिये हैं और ६८ मामलोंके सम्बन्धमें समितिकी सिफारिशें सरकारके सामने अब पेश की जानेवाली हैं। सरकार तीन मामलोंपर विचार कर रही है, और ५६ मामले समितिके विचारार्थ पड़े हुए हैं। कैदियोंके मामलोंका निबटारा करने के पूर्व समितिने हालमें बहुत-से सम्बन्धित कैदियोंसे अलग-अलग मुलाकात की। सभी महिला कैदी समितिके समक्ष उपस्थित हुईं और उनके द्वारा भविष्यमें ठीक आचरण करने का आश्वासन दिये जाने पर उन्हें रिहा कर देने की सिफारिश की गई। अब उन्हें रिहा कर भी दिया गया है। सरकारको खेदपूर्वक घोषणा करनी पड़ रही है कि समितिके दो सदस्य, श्री शरतचन्द्र बोस और श्री ललितचन्द्र दासने त्यागपत्र दे दिये हैं, जो स्वीकार कर लिये गये हैं। इन दोनों सदस्योंने अपने त्यागपत्रका कारण यह बताया है कि सजायाफ्ता कैदियोंकी रिहाईके प्रति उनका दृष्टिकोण समितिके अन्य अधिकतर सदस्योंके दृष्टिकोणसे बुनियादी तौरपर भिन्न था।

अब सवाल यह है कि बाकी कैदियोंकी रिहाईके लिए क्या किया जाये? हम आगे क्या करें, इसके सम्बन्धमें मैं आपकी राय जानना चाहूँगा। मुझे आशंका इस बातकी है कि कैदी कहीं भूख-हड़ताल न आरम्भ कर दें। अगर वे वैसा करते हैं तो स्थिति बहुत उलझ जायेगी। साथ ही, मेरी समझमें यह भी नहीं आता कि मैं उन्हें क्या आशा दिलाऊँ।

आशा है, अब आपका स्वास्थ्य बेहतर होगा। मेरा तो अब भी जैसा होना चाहिए वैसा नहीं हो पाया है।

प्रणामपूर्वक,

स्नेहाधीन,
शरतचन्द्र बोस

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-६-१९३९

परिशिष्ट १३

लॉर्ड लिनलिथगोका पत्र[1]

वाइसरीगल लॉज, शिमला
१ जुलाई, १९३९

प्रिय श्री गांधी,

आपके २२ जूनके पत्रके लिए धन्यवाद। उसमें एक-दो ऐसे मुद्दे उठाये गये हैं जिनके सम्बन्धमें उत्तरमें मुझे अपनी बात कहनी ही पड़ेगी।

२. जहाँतक जयपुरका सम्बन्ध है, मुझे पूरा यकीन है कि दरबारका इरादा, जितना जरूरी है, उससे जरा भी ज्यादा देरतक सेठ जमनालाल बजाजको नजरबन्द रखने का नहीं है। जैसा कि आपको याद भी होगा, सच तो यह है कि आरम्भमें ही दरबारको इस बातकी बहुत फिक्र थी कि उन्हें नजरबन्द न करना पड़े तो अच्छा। सेठ जमनालालको वे शर्तें भली-भाँति बता दी गई हैं जिनपर उनके और अन्य कैदियोंके सम्बन्धमें वांछित कार्रवाई करने के लिए अब दरबार तैयार है, और जहाँतक मैं जानता हूँ, महाराजा साहबके जाने के बादसे स्थितिमें कोई अन्तर नहीं आया है।

३. अपने पत्रके अन्तिम अनुच्छेदमें आपने जो-कुछ लिखा है, उसे मैं बहुत ध्यानपूर्वक पढ़ गया हूँ और इस बातके लिए आपका बड़ा आभारी हूँ कि आपने मुझे अपने विचार बताये। मैं समझता हूँ कि यह कहना अनुचित न होगा कि राजनीतिक विभागने, जिन्हें आपने "कांग्रेस विरोधी व्यक्तित्व" कहा है, उन लोगोंको कांग्रेस-समर्थक व्यक्तित्वोंकी अपेक्षा देशी नरेशों और उनके प्रजाजनोंसे सम्पर्क स्थापित करने का कुछ अधिक प्रोत्साहन नहीं दिया है।

आशा है, आप स्वस्थ होंगे।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी
बम्बई

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे: लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार। अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८२८) से भी; सौजन्य: घ० दा० बिड़ला

१. देखिए पृ० ३९६-७ और ४९२।

परिशिष्ट १४

सुभाषचन्द्र बोसका वक्तव्य[1]

क्रमिक मद्य-निषेध एक व्यावहारिक योजना है। इससे जनता तथा आबकारी विभागको भी मद्य-निषेध लागू करने से उत्पन्न समस्याओंके हल ढूँढ़ने का अनुभव प्राप्त होगा। इसके अलावा, आर्थिक दृष्टिसे भी यह सफल रहेगी, और सम्पत्ति-कर, बिक्री-कर आदि अतिरिक्त करोंसे प्राप्त राजस्वको राष्ट्र-निर्माणकी प्रवृत्तियोंमें लगाये जाने के लिए मुक्त कर देगी।

मोटे तौरपर कहें तो जिन मन्तव्योंसे प्रेरित होकर बम्बई सरकारने यह कदम उठाया है वे प्रशंसनीय हैं, लेकिन सम्पत्ति-कर और बिक्री-करकी समस्याओंके बारेमें अबतक वह जिन तरीकोंसे काम लेती रही है या भविष्यमें काम लेनेका इरादा रखती है, वे न तो वैज्ञानिक हैं और न उस उद्देश्यके लिए ही लाभदायक हैं जो सरकारके सामने है। . . .

मद्य-निषेध योजनाके दोष अनेक हैं। . . . अवैध रूपसे शराब बनाने की प्रवृत्ति बढ़ेगी और लोग हर शामको, और खासकर सप्ताहान्तकी शामको, उन इलाकोंकी ओर भागेंगे जहाँ मद्य-निषेध लागू नहीं है।

मद्य-निषेध एक सामाजिक सुधार है और . . . जनताकी सद्भावना प्राप्त किये बिना . . . कोई भी ऐसा सुधार सफलतासे सम्पन्न नहीं किया जा सकता। . . . समाजके कुछ प्रभावशाली वर्ग इसका विरोध कर रहे हैं, इससे प्रकट होता है कि सरकार अबतक आम लोगोंका अनुमोदन-समर्थन प्राप्त नहीं कर पाई है।

महात्मा गांधीने यह राय व्यक्त करके बिलकुल ठीक किया कि भारतमें यूरोपीयोंपर मद्य-निषेध लागू नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि वे इसमें विश्वास नहीं करते और इसे उनपर लागू करने का मतलब जोर-जबरदस्ती करना होगा। अहिंसाका यही नियम एशियाइयों और भारतीयोंपर भी सिद्धान्ततः तथा व्यवहारतः दोनों रूपोंमें लागू किया जाना चाहिए। अगर हम मद्य-निषेधको जबरदस्ती यूरोपीयोंपर लागू नहीं करते तो उन गैर-भारतीय एशियाइयोंपर क्यों लागू करें जिनका इसमें विश्वास नहीं है? यूरोपीयों और एशियाइयोंके बीच इस मामलेमें कानूनी अथवा प्रशासनिक भेद-भाव बरतना गलत होगा।

अब प्रश्नके आर्थिक पहलूको लें। इस सम्बन्धमें कह सकता हूँ कि आबकारीकी आयमें होनेवाली कमी को पूरा करने के लिए अकेले बम्बईपर एक करोड़ रुपयेका अतिरिक्त कर थोप देनें के तरीकेको वाजिब मानना मुश्किल है। जिस देशमें करोड़ों लोगोंको आधेपेट खाकर गुजारा करना पड़ता है, जहाँ हर साल लाखों लोग ऐसे

१. देखिए पृ० ४६८-७०। वक्तव्य आंशिक रूपमें ही यहाँ दिया जा रहा है।

रोगोंके ग्रास बन जाते हैं जिन्हें रोका जा सकता है और जहाँ ९२ प्रतिशत लोग आज भी पढ़-लिख नहीं सकते, वहाँ भारी कर लगाकर अतिरिक्त राजस्व एकत्र करना मैं कोई राजनयिक सूझबूझका काम नहीं मानता, जबकि उस आमदनीमें से एक रुपया भी खाली पेटोंको भरने या मनुष्यके जीवनको बचाने अथवा हमारे कुछ और लोगोंको शिक्षित बनाने पर खर्च नहीं किया जानेवाला है। इसलिए मैं समझता हूँ चरण-बद्ध मद्यनिषेध अधिक वैज्ञानिक और उपयुक्त तरीका है। इस विधिको अपनाया जाये तो मद्य-निषेधके सिलसिलेमें होनेवाले खर्चको पूरा करने के लिए भारी कर नहीं लगाने पड़ेंगे, लोगोंकी कर देने की क्षमताके एक अंशको भावी आवश्यकताओंके लिए सुरक्षित रखा जा सकेगा, और हमारी राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में सहसा कोई परिवर्तन नहीं करना पड़ेगा।

जिसके पास ठीक दृष्टि है वह बम्बईमें सरकारी नीतिके एक महत्त्वपूर्ण पहलूको देखने से भी चूक नहीं सकता। दुर्भाग्यसे बम्बईकी एक छोटी जातिपर, जो गत कई वर्षोंसे व्यापक स्तरपर शराबके व्यापारमें लगी हुई है, इस नीतिका सीधा असर पड़ रहा है। पारसी जाति छोटी, लेकिन बहुत प्रभावशाली है। कौन नहीं जानता कि उन्होंने जाने कितनी पारमार्थिक संस्थाओं और प्रवृत्तियोंका सूत्रपात किया है और वे उनका संचालन करते रहे हैं? इस जातिका बहुत बड़ा बहुमत इस नीतिका विरोध करता रहा है और एक अल्पसंख्यक जातिके लोगोंके रूपमें उनके प्रति हमारा यह फर्ज है कि हम उनकी बातपर कान दें। मुझे मालूम हुआ है, पारसियोंको ऐसी आशंका है कि बम्बईमें अचानक पूर्ण और अविलम्ब मद्य-निषेधकी नीति आरम्भ कर दिये जाने के फलस्वरूप बहुत-से परिवार निराश्रित हो जायेंगे और उन पारमार्थिक ट्रस्टोंकी आयपर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा जिनमें से बहुतोंका लाभ न केवल पारसियोंको बल्कि सामान्य रूपसे सभी भारतीयोंको प्राप्त होता है।

पारसियोंके अतिरिक्त, बम्बईके मुसलमानोंका भी इस कार्यक्रमसे नुकसान होनेवाला है। सिद्धान्तके आधारपर वे मद्य-निषेधके विरुद्ध नहीं हैं, लेकिन १० प्रतिशत सम्पत्ति-कर पर, जो मद्य-निषेधका खर्चा पूरा करने के लिए अपेक्षित है, उन्हें आपत्ति है। उनकी ओरसे यह कहा जा रहा है कि १० प्रतिशत सम्पत्ति-करका मतलब तो उनकी आबादीको देखते हुए उनपर उनकी औकातसे ज्यादा कर लगाना है, और उन्हें इस बातपर आपत्ति है कि गैर-मुसलमानोंको परहेजगार बनाने के लिए उनपर कर लगाया जा रहा है।

मद्य-निषेधका हमारी सामान्य अर्थ-व्यवस्थापर पड़नेवाला प्रभाव तो पारसी और मुसलमान जातियोंपर पड़नेवाले असरसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। एक छोटा-सा उदाहरण ही लें — बहुत-से होटलों और रेस्तराँओंपर इसका बहुत खराब असर होगा और सम्भव है, उन्हें बन्द करना पड़ जाये। इससे न केवल उनके मालिकोंको नुकसान होगा, बल्कि उनमें काम करनेवाले कर्मचारी भी बेरोजगार हो जायेंगे। यह भी असम्भव नहीं है कि लोग मद्य-निषिद्ध क्षेत्रको छोड़कर अन्यत्र बसने लगें और बम्बईके बन्दरगाहपर भी इसका बुरा असर पड़े। सचाई यह है कि जहाँ चरणोंमें बाँटकर आंशिक मद्य-निषेध लागू करना सम्भव है, चरणबद्ध पूर्ण निषेध प्रायः असम्भव है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ११-७-१९३९

सामग्रीके साधन-सूत्र

गाधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली: गांधी साहित्य और गांधीजीसे सम्बन्धित कागज-पत्रोंका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली।

साबरमती संग्रहालय, अहमदाबाद: पुस्तकालय तथा संग्रहालय जिसमें गाधीजीसे सम्बन्धित दस्तावेज सुरक्षित हैं; देखिए खण्ड १, पृ० ३५५।

'अमृतबाजार पत्रिका': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'ग्रामोद्योग-पत्रिका': जे० सी० कुमारप्पा द्वारा सम्पादित, कुमारप्पा मेमोरियल ट्रस्ट, ११२ मेट होम हाई रोड, मद्रास।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'स्टेट्समैन': कलकत्ता और नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हरिजन' (१९३३-५६): हरिजन सेवक संघके तत्त्वावधानमें प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक: इसका प्रथम अंक ११ फरवरी, १९३३ को पूनासे प्रकाशित हुआ था, इसके बाद २७ अक्तूबर, १९३३ से मद्राससे प्रकाशित होने लगा; १३ अप्रैल, १९३५ से पुन: पूनासे प्रकाशित होने लगा; तदनन्तर अहमदाबादसे प्रकाशित होता रहा।

'हरिजनबन्धु' (१९३३-५६): हरिजन सेवक संघके तत्त्वावधानमें प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक जो १२ मार्च, १९३३ को पहली बार पूनासे प्रकाशित हुआ था।

'हरिजन सेवक' (१९३३-५६): हरिजन सेवक संघके तत्त्वावधानमें प्रकाशित हिन्दी साप्ताहिक जो २३ फरवरी, १९३३ को पहली बार नई दिल्लीसे प्रकाशित हुआ था।

'हितवाद': नागपुरसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स': नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'क्रॉस रोड्स' (अंग्रेजी): सुभाषचन्द्र बोस, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९६२।

'गांधीजी और राजस्थान': शोभालाल गुप्त द्वारा सम्पादित; राजस्थान राज्य गांधी स्मारक निधि, भीलवाड़ा, राजस्थान, १९६९।

गांधी सेवा संघके पंचम वार्षिक अधिवेशन (वृन्दावन, बिहार) का विवरण': आर० पी० धोत्रे द्वारा प्रकाशित, वर्धा।

'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद': द० बा० कालेलकर द्वारा सम्पादित, सस्ता

साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, १९५३।
प्यारेलाल पेपर्स: श्री प्यारेलाल, नई दिल्लीके पास सुरक्षित कागजात।
'बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स' (अंग्रेजी): जवाहरलाल नेहरू द्वारा सम्पादित, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९५८।
'बापुना पत्रो—२: सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती): मणिबहन पटेल द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५२।
'बापुना पत्रो—४: मणिबहेन पटेलने' (गुजराती): मणिबहन पटेल द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।
'बापुनी प्रसादी' (गुजराती): मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।
'बापू—कन्वर्सेशन्स एण्ड कॉरिसपोंडेंस विद महात्मा गांधी' (अंग्रेजी): एफ० मेरी बार, इन्टरनेशनल बुक हाउस लि०, बम्बई, १९४९।
'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, १९३२-४८': हीरालाल शर्मा द्वारा सम्पादित; ईश्वरशरण आश्रम, इलाहाबाद, १९५७।
'बापूज़ लेटर्स टु मीरा' (अंग्रेजी): मीराबहन द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।
महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी: स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमें सुरक्षित।
'लेटेस्ट फैड': जे० बी० कृपलानी, हिन्दुस्तानी तालीमी संघ, सेवाग्राम, वर्धा, १९४८।
'सरदार वल्लभभाई पटेल', खण्ड—२ (अंग्रेजी): नरहरि द्वा० परीख द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५६।
'सेवामूर्ति: श्री वीरचन्द पानचन्द शाह', (गुजराती): जगन्नाथ देसाई, विनोद वीरचन्द शाह और प्रमोद वीरचन्द शाह, 'चेतन' द्वारा सम्पादित; शिवरोड, बम्बई, १९६०।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१ मार्च, १९३९ — १५ जुलाई, १९३९)

१ मार्च . गाधीजी राजकोटमें थे, एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इडियाके प्रतिनिधिको भेंट दी।

२ मार्च : एक प्रेस विज्ञप्तिमें गाधीजीने घोषणा की कि ठाकुर साहबने उनकी प्रार्थना नही सुनी तो वे अनशन करेंगे।

३ मार्च : गांधीजी ने उपवास शुरू किया; समाचारपत्रोमें एक वक्तव्य जारी किया और ठाकुर साहबको लिखा गया पत्र प्रकाशनके लिए दिया; फतेह मोहम्मद खानसे बातचीत की।

४ मार्च : समाचारपत्रोंको वक्तव्य जारी करते हुए कांग्रेसजनोसे उनके "अपने ही घरोंमें जो गन्दगी और सड़ाध असन्दिग्ध रूपसे पैदा हो गई है, उसे साफ करनेके प्रयत्नमें पूरे प्राणपणसे जुट" जानेकी अपील की।

६ मार्च : अगाथा हैरिसनसे बातचीत की।

७ मार्च · उपवास समाप्त किया; समाचारोको वक्तव्य जारी किया।

८ मार्च : अगाथा हैरिसनसे बातचीत की।

९ मार्च : जवाहरलाल नेहरू और सुभाषचन्द्र बोसको तार भेज कर "कांग्रेसको भीतरी भ्रष्टाचारसे मुक्त करने" का प्रस्ताव पास करनेकी आवश्यकता पर बल दिया। राजकोटकी जनतासे "उत्तरदायी शासन" को सम्भालने के योग्य बननेकी अपील की।

११ मार्च : समाचारपत्रोको वक्तव्य जारी करते हुए त्रावणकोरमें पुनः सत्याग्रह करने के सम्बन्धमें अपनी "निश्चित राय देने" में असमर्थता प्रकट की।

१४ मार्च : जयपुर सत्याग्रहके सम्बन्धमें हरिभाऊ उपाध्याय तथा अन्य कार्यकर्त्ताओसे बातचीत की।

१५ मार्च : दिल्लीमें दो घटे तक वाइसरायसे मुलाकात की, दिल्ली जेलमें कैदियोसे अनशन समाप्त करनेका आग्रह किया।

१६ मार्च : वाइसरायसे पुनः मुलाकात की; गोविन्द बिहारी लालको भेंट दी; हैदराबाद सत्याग्रहके सम्बन्धमें गाधीजीने हैदराबादके आर्यसमाजी नेताओंसे बातचीत की।

१८ मार्च : लक्ष्मी नारायण मन्दिर और बौद्ध विहारके उद्घाटन समारोहमें बोले।

१९ मार्च : जयपुर सत्याग्रह परिषद्से जयपुरके लिए सत्याग्रही भेजना स्थगित करने के लिए निवेदन किया।

२० मार्च : समाचारपत्रोंको वक्तव्य जारी करते हुए पत्तम ताणु पिल्लै तथा अन्य कांग्रेस नेताओंको गिरफ्तार करनेके कारण, त्रावणकोर राज्यके दीवानकी भर्त्सना की। त्रावणकोरसे सत्याग्रहियों तथा जयपुरके सत्याग्रहियोंसे अलग-अलग बातचीत की।

२३ मार्चसे पूर्व : 'न्यूयार्क टाइम्स' के प्रतिनिधिको भेंट दी।

२३ मार्च : गांधीजीने त्रावणकोर सत्याग्रहको स्थगित करनेकी सलाह देते हुए वक्तव्य जारी किया।

२४ मार्च : इलाहाबादमें अबुल कलाम आजाद से मुलाकात की; दिल्लीके लिए रवाना हुए।

२५ मार्च : आर० के० झा० को भेजे गये तारमें स्पष्ट किया कि त्रावणकोर सत्याग्रह स्थगित करनेमें नादगाँव सत्याग्रह स्थगित करनेकी भी तजवीज है।

२६ मार्च : बम्बई सरकार द्वारा १ अगस्त, १९३९ से मद्य-निषेध लागू करनेके निर्णय पर 'हरिजन' में लिखकर हर्ष प्रकट किया।

२९/३० मार्च : अगाथा हैरिसनसे बातचीत की।

३० मार्च : सुभाषचन्द्र बोसको पत्र लिखकर अपने बीच हुए पत्र-व्यवहारको प्रकाशित करनेकी इजाजत दी।

३१ मार्च : बिड़ला भवनकी 'घरेलू मंडली' से इलाहाबादकी साम्प्रदायिक स्थिति के सम्बन्धमें चर्चा की।

३ अप्रैल : सर मॉरिस ग्वायरने वल्लभभाई पटेलके पक्षमें निर्णय दिया।

४ अप्रैल : गांधीजीने बम्बई मद्यनिषेध कार्यक्रमके सम्बन्धमें समाचारपत्रोंको वक्तव्य दिया; एक अन्य वक्तव्यमें त्रावणकोरके दमनकी निन्दा की।

६ अप्रैल : वाइसरायसे मुलाकात की।

७ अप्रैल : राजकोटके लिए रवाना हुए।

९ अप्रैल : राजकोट पहुँचे।

११ अप्रैल : ई० सी० गिब्सनसे मुलाकात की।

१४ अप्रैल : वल्लभभाई पटेलकी ओरसे धर्मेन्द्रसिंहको पत्र लिखकर गांधीजीने सुधार-समितिके सात लोगोंके नाम सुझाये।

१५ अप्रैल : सुधार-समितिके लिए सात लोगोंकी नामजदगीके सम्बन्धमें समाचारपत्रों को वक्तव्य जारी किया।

१६ अप्रैल : प्रार्थनाके अवसर पर मुसलमानों और गरासियोंने प्रदर्शन किया; गांधीजी ने वक्तव्य जारी किया।

१७ अप्रैल : १४ मईको 'केनिया दिवस' मनाने पर असहमति प्रकट करते हुए सत्य-मूर्तिको तार द्वारा सूचित किया।

१८ अप्रैल : लॉर्ड लिनलिथगोको तार भेजकर उन्हें २०,००० तालचरके शरणार्थियोंके सम्बन्धमें याद दिलाया।

१९ अप्रैल : गांधीजी 'गैस्ट्रिक फ्लू' से पीडित।

२० अप्रैल : २६ दिसम्बरके समझौतेकी शर्तोंके अनुसार "परिषद् प्रस्तावित समितिसे बिलकुल अलग हो जाये और ठाकुर साहब अपनी समिति . . . मनोनीत कर लें" इस "उदारतापूर्ण प्रस्तावके साथ" गिब्सनसे मुलाकात की।

२२ अप्रैल : वीरावालासे मिले, एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको वक्तव्य दिया।

२३ अप्रैल : गिब्सनको पत्र लिखकर वीरावाला द्वारा "उदारतापूर्ण सुझाव" को अस्वीकार करनेकी सूचना दी; प्रजा परिषद्के कार्यकर्त्ताओंकी सभामें भाषण दिया।

२४ अप्रैल : बम्बई रवाना हुए; राजकोटमें अपनी हार होने पर समाचारपत्रोंको वक्तव्य जारी किया।

२५ अप्रैल : बम्बई पहुँचे; कलकत्ताके लिए रवाना हुए।

२७ अप्रैल : रेलगाड़ीमें खड़्गपुर और कलकत्ताके बीच 'स्टेट्समैन' के प्रतिनिधिको भेंट दी।

२९ अप्रैल : सुभाषचन्द्र बोसको लिखे पत्रमें गांधीजीने कहा ". . . यह जानते हुए कि तुममें और अधिकांश सदस्योंमें बुनियादी बातोंके विषयमें मतभेद है . . . ऐसी हालतमें तुम अपनी कार्य-समितिका चुनाव करनेके लिए स्वतन्त्र हो।" अ० भा० का० क० की सभामें गांधीजीका पत्र पढ़ने पर सुभाष बाबूने कांग्रेसके अध्यक्षपदसे त्यागपत्र दे दिया।

१ मई : गांधीजी वृन्दावन (बिहार)के लिए रवाना हुए।

३ मई : ग्रामोद्योग प्रदर्शनीके उद्घाटन-समारोहके अवसर पर भाषण दिया।

४ मई : शिक्षक-प्रशिक्षण शिविरमें भाषण दिया।

५ मई : गांधी सेवा संघकी सभामें प्रश्नोंके उत्तर दिये।

६ मई : गांधी सेवा संघकी सभामें प्रश्नोंके उत्तर दिये।

७ मई : गांधी सेवा संघकी सभामें प्रश्नोंके उत्तर दिये, अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघमें भाषण दिया; एक सार्वजनिक सभामें भी भाषण दिया।

८ मई : मदनमोहन मालवीयसे मिलने बनारसके लिए रवाना हुए।

११ मई : बम्बईमें समाचारपत्रोंके प्रतिनिधियोंको भेंट दी।

१२ मई : गांधीजी राजकोट पहुँचे; प्रजा परिषद्के कार्यकर्त्ताओंकी सभामें भाषण दिया।

एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको एक भेंटमें संघ-सरकारकी एशियाई-विरोधी नीति पर दुःख प्रकट किया।

वीरावालाको लिखे एक व्यक्तिगत पत्रमें उनकी 'दोहरी चाल' चलनेका उल्लेख किया।

१२ मई या उसके पश्चात् : प्रजा परिषद्के कार्यकर्त्ताओंसे बातचीत करते हुए भायातों और मुसलमानोंकी समस्याके सम्बन्धमें अपने "उतावलेपन" को स्वीकार किया।

१३/१४ मई : त्रावणकोर राष्ट्रीय कांग्रेसके शिष्टमण्डलको भेंट दी।

१५ मई : प्रजा परिषद्के कार्यकर्त्ताओंसे बातचीत करते हुए गांधीजीने ग्वायर-निर्णयको अस्वीकार करनेकी इच्छा व्यक्त की।

१७ मई : समाचारपत्रोंको वक्तव्य जारी करते हुए ग्वायर-निर्णयको अस्वीकार किया। महादेव देसाईसे बातचीत की।

१७ मईके पश्चात् : पंच-फैसलेको अस्वीकार करनेके अपने निर्णयपर साथी कार्य-कर्त्ताओंसे बातचीत की; 'न्यूयार्क टाइम्स' के स्टीलको भेंट दी।

१८ मई : गांधीजीने कस्तूरबा गांधीसे बातचीत की।

२० मई : राजकोटके दरबारके एक समारोहमें शामिल हुए।

२० मई या उसके पश्चात् : उन साथी कार्यकर्त्ताओंसे बातचीत की जो गांधीजीके राजकोट दरबारके समारोहमें शामिल होने पर दुःखी थे।

२३ मई : एक संदेश द्वारा दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंको सलाह दी कि वे, संघ सरकारने "एशियाइयोंके खिलाफ जो मुहिम छेड़ रखी है" और जिसमें "उसकी नीति अधिकाधिक कड़ी होती गई है", के विरुद्ध संगठित होकर लड़ें; सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

३१ मई : काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्की कार्यकारिणी समितिकी बैठकमें भाषण दिया।

१ जून : गांधीजी कस्तूरबा गांधी, महादेव देसाई, प्यारेलाल और डॉ० सुशीला नैयर के साथ काठियावाड़ मेल द्वारा राजकोटसे बम्बईके लिए रवाना हुए; रेलगाड़ी में त्रावणकोर राज्य कांग्रेसके शिष्टमण्डलसे बातचीत की।

२ जून : बम्बई पहुँचे। बम्बई मद्य-विक्रेता संघके शिष्टमण्डलको, तथा इसके बाद कावसजी जहाँगीरके नेतृत्वमें आये पारसी शिष्टमण्डलको भेंट दी।

४ जून : गांधीजीने त्रावणकोरके सम्बन्धमें एक वक्तव्य जारी करके अपनी नई कार्यपद्धति पर प्रकाश डाला।

६ जून : कोल्हापुर प्रजा परिषद्के शिष्टमण्डलको भेंट दी।

७ जून : बम्बईसे सेगाँवके लिए रवाना हुए।

११ जून : बम्बईके आर्चबिशपके पत्रके उत्तरमें 'हरिजन' में "शराबबन्दीका अर्थ" नामक लेख लिखा।

१३ जून : मैसूर कांग्रेसके प्रतिनिधियोंको भेंट दी।

२० जून : गांधीजी महादेव देसाई, प्यारेलाल और डॉ० सुशीला नैयर सहित सेगाँव से बम्बईके लिए रवाना हुए।

२३ जून : बम्बईमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके लिए प्रस्तावका मसौदा तैयार किया।

२७ जून : 'हरिजन' में "राष्ट्रीय ध्वज" पर लेख लिखा।

४ जुलाई : बम्बईमें केमिकल इंडस्ट्रीयल एण्ड फार्मास्यूटिकल लेबोरेटरीज देखने गये।

५ जुलाई . सीमाप्रान्तकी ओर रवाना होनेसे पूर्व बम्बई सेन्ट्रल पर चीनी भिक्षुसे 'एम ऑफ जापान्स एक्सपेंशन इन चाइना' प्राप्त की।

फ्रंटियर मेलमें सवार होनेसे पूर्व एस० के० बोलेसे, जो कि चालीस भंडारियों के शिष्टमण्डलका नेतृत्व कर रहे थे, बम्बईके प्रधानके नाम लिखा प्रार्थनापत्र स्वीकार किया और उन्हें विश्वास दिलाया कि उन्हें "भूखों नहीं मरने दिया जायेगा।"

पेशावरके लिए रवाना हुए। महादेव देसाई उनके साथ थे। कस्तूरबा गांधी, प्यारेलाल और डॉ० सुशीला नैयर साथ नहीं गये।

७ जुलाई : गांधीजी शामको ऐबटाबाद पहुँच गये।

८ जुलाई : समाचारपत्रोंको वक्तव्य जारी करते हुए बंगालके राजनीतिक कैदियोंसे "भूख-हड़ताल न करनेकी" प्रार्थना की; मदुरैमें हरिजनोंके लिए मीनाक्षी मन्दिरके द्वार खोले गये।

९ जुलाई : एम० आर० ए० के एल० डब्ल्यू० जार्डीनको भेंट दी।

१० जुलाई : गांधीजीने जयप्रकाश नारायणसे बातचीत की, उन्होंने बिहारमें किसान सभा और कांग्रेसके सम्बन्धमें तथा फॉरवर्ड ब्लॉकके प्रति सोशिलिस्ट पार्टीके रवैयेके सम्बन्धमें भी चर्चा की।

गांधीजीने वक्तव्य जारी करके सुभाषचन्द्र बोस द्वारा बम्बईमें शराबबन्दी योजना का विरोध करने पर दुःख प्रकट किया।

१४ जुलाई : कस्तूरबा गांधी, प्यारेलाल और डॉ० सुशीला नैयर ऐबटाबाद पहुँचे।

१५ जुलाई : समाचारपत्रोंको वक्तव्य जारी करते हुए गांधीजीने बंगाल सरकारसे राजनीतिक कैदियोंको रिहा कर देनेकी प्रार्थना की।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

इ

ई

उ

ए

ओ

औ

क

प

ल

व

श

ह